समर्पण और साधना

X8(A)·· M3A
15213

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

X8(A)..MJA

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

X8(A)wMJA
152L3
15263

कृपया यह ग्रन्थ नीचे निर्देशित तिथि के पूर्व अथवा उक्त तिथि तक वापस कर दें। विलम्ब से लौटाने पर प्रतिदिन दस पैसे विलम्ब शुल्क देना होगा।

मुमुक्षु भवन वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय, वाराणसी।

मुमुक्षु भवन वेद वेदाङ्ग विद्यालय
आगत क्रमांक...... 1606
CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समर्पण और साधना

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समर्पण

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

और साधना

श्रीमती जानकीदेवी बजाज की
८०वीं वर्षगांठ के अवसर पर प्रणीत ग्रंथ

१९७३

सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

परामर्शदाता-मंडल

काका सा० कालेलकर
दादा धर्माधिकारी
सीताराम सेकसरिया
श्रीमन्नारायण
शांताबाई रानीवाला
देवेन्द्रकुमार गुप्त
राधाकृष्ण बजाज

संपादक-मंडल

बनारसीदास चतुर्वेदी
मदालसा नारायण
मुकुटबिहारी वर्मा
विजयेन्द्र स्नातक
क्षेमचंद्र 'सुमन'
रमाबाई रुइया
रामकृष्ण बजाज

•

संपादक
भवानीप्रसाद मिश्र
यशपाल जैन

X8(A)wMJA
15243

•

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली

•

पहली बार : १९७३

मूल्य
सजिल्द : चालीस रुपये
विशेष : पचास रुपये

मुमुक्षु भवन वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय
आगत क्रमांक........ 1926....
दिनांक..........

मुद्रक
संतोषकुमार अग्रवाल
रूपक प्रिंटर्स
नवीन शाहदरा, दिल्ली-३२

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सेवा के लिए सर्मपित

जानकीदेवी बजाज

को

अस्सीवीं सालगिरह पर

•

७ जनवरी १९७३

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निवेदन

श्रीमती जानकीदेवी बजाज देश की प्रमुख महिलाओं में से हैं। सर्व-सामान्य से लेकर समाज के सभी स्तरों में उनकी सेवा को स्नेह और आदर प्राप्त हुआ है। भारत सरकार ने उन्हें 'पद्मविभूषण' की उपाधि से विभूषित करके उनके प्रति इस मान्य धारणा को ही स्वीकार किया है। सार्वजनिक क्षेत्र में श्रीमती जानकीदेवी 'जानकी मैया' या 'माताजी' कहलाती हैं। यह भी उनके प्रति हमारे आदरभाव को व्यक्त करता है। श्रीमती जानकीदेवी को अनेक महापुरुषों के सान्निध्य में रहकर समाज तथा राष्ट्र की सेवा के लिए अपना जीवन समर्पित करने का दुर्लभ अवसर प्राप्त हुआ है। फलतः उनका जीवन त्याग और तपस्या की एक कहानी बन गया है।

कुछ दिनों पूर्व जब उनकी अस्सीवीं वर्षगांठ को समारोह-पूर्वक मनाने का विचार सामने आया तो सोचा गया कि उनके निमित्त एक ऐसा ग्रंथ तैयार किया जाय, जिसमें अन्य बातों के साथ प्राचीनकाल से लेकर अबतक के नारी-समाज द्वारा की गई प्रगति की झांकी रहे। यह काम कठिन था, फिर भी हमने मित्रों की सहायता से ग्रन्थ की एक रूपरेखा बनाई और उसका परिणत स्वरूप आज आपके हाथों में देते हुए हमें हर्ष हो रहा है।

ग्रन्थ में प्रमुख रूप से समस्त भारतीय नारी-समाज का प्रगति का लेखा-जोखा होने के कारण ग्रन्थ का नाम उन्हीं गुणों का बोध कराने वाला है, जो भारतीय नारी-जीवन में विशेष रूप से देखे जाते हैं। समर्पित और साधनामय जीवन हमारे मातृ-समाज की विशेषता रही है। भारतीय नारी ने सदा-सदा से इन्हीं दो क्षेत्रों में अपना सर्वोत्तम योग प्रदान किया है।

ग्रन्थ की सामग्री को छः खण्डों में विभाजित किया गया है। पहले खंड 'नारी : विकास चिंतन' में कतिपय मनीषियों, चिंतकों तथा समाज-सेवियों द्वारा प्रकट किये गए नारी-विषयक उनके विचारों का संकलन किया गया है। इस संकलन में श्री ति० ना० आत्रेय ने जो सहयोग दिया है, उसके लिए हम उनके आभारी हैं।

दूसरा खंड 'नारी : प्रगति के सोपान' विशेष रूप से तैयार कराया गया है। श्री इन्द्रनाथ आनंद ने कतिपय तरुण मित्रों की सहायता से बड़े अध्यवसायपूर्वक इस खंड को अन्य ग्रन्थों की सहायता से तैयार किया है। इस खंड को तैयार करने में जिन पुस्तकों से सहायता ली है, उनमें श्री रामकृष्ण मिशन द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'ग्रेट वीमेन आफ इंडिया' उल्लेखयोग्य है। हम इस ग्रन्थ-रत्न के संपादकों के प्रति अपना हार्दिक आभार प्रकट करते हैं।

तीसरे खंड में स्वयं जानकीदेवी के शब्दों में उनका जीवन-वृत्त दिया गया है। 'सस्ता-साहित्य मंडल' से प्रकाशित 'मेरी जीवन-यात्रा' में जानकीदेवीजी ने विस्तार से अपनी जीवन-गाथा दी है। जीवन-वृत्त को संक्षिप्त और अद्यतन बनाने में हमें श्री रिषभदास रांका का जो सहयोग प्राप्त हुआ है, उसके लिए हम उनके आभारी हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चौथे खंड में जानकीदेवी द्वारा उनसे संबंधित कुछ विभूतियों के संस्मरण तथा स्वयं उनके विषय में दूसरों के द्वारा लिखे गये संस्मरण दिये गए हैं। हमने इस खंड को 'मलय-प्रसंग' नाम दिया है। पावन और सुगंधित क्षणों को इस प्रकार लेखनीबद्ध कर देने के लिए हम खंड के सभी लेखकों के प्रति अपना आभार प्रकट करते हैं।

पांचवें खंड में महात्मा गांधी, विनोबा और जमनालालजी के जानकीदेवी के नाम और जानकीदेवी के अपने निकटस्थ व्यक्तियों के नाम चुने हुए पत्रों का 'आशीष और प्रणाम' शीर्षक से संग्रह किया गया है।

छठवें खंड में पुरातन समय से लेकर भारतीय स्वतंत्रता की प्राप्ति के समय तक प्रमुख नारियों का संक्षिप्त परिचय देने का प्रयत्न किया गया है। इस खंड को तैयार किया है श्री अमिताभ मिश्र ने। अल्प समय में ऐसा उत्तम चरित-कोष तैयार कर देने के लिए हम उनके प्रति हृदय से आभार प्रकट करते हैं। हमारी इच्छा थी कि हम आधुनिक चरित-परिचय के लिए केवल प्रकाशित पुस्तकों पर अवलंबित न रहें, बल्कि स्वयं समाज में काम कर रही प्रमुख नारियों से पत्र-व्यवहार करके उनके विषय में सामग्री प्राप्त करें, पर पर्याप्त पत्र-व्यवहार करने के बाद भी इसमें हमें विशेष सफलता प्राप्त नहीं हुई।

ग्रन्थ के लिए कुछ सामग्री विशेष रूप से प्राप्त हुई है। श्रीमती मदालसा नारायण ने माता आनंदमयी से आशीष-वचन प्राप्त करके इस ग्रंथ को महिमा दी है। हम माता आनंदमयी के प्रति अपने आभार को किन शब्दों में प्रकट करें। पूज्य श्री विनोबा ने इस विशिष्ट अवसर के लिए अलग से समय देकर माताजी के प्रति जो सहज आत्मीयता व्यक्त की, वह उनके तत्संबंधी छोटे-से वक्तव्य में भलीभांति प्रकट है। हम इस कृपा के लिए विनोबाजी को प्रणाम करते हैं।

ग्रन्थ को समय पर निकालने और सुंदर बनाने में मुद्रक श्री संतोषकुमार, 'रूपक प्रिंटर्स' तथा कलाकार श्री तूलिकी से हमें तत्पर सहयोग मिला। हम उनके प्रति आभार प्रकट करते हैं।

समय की सीमाओं में ग्रंथ को जैसा निकाल सकना था, वैसा नहीं निकाला जा सका। फिर भी प्रयास पूरा-पूरा किया गया है कि पाठकों को हम अधिक-से-अधिक उपयोगी सामग्री दे सकें। इसमें कितनी सफलता प्राप्त हुई है, इसका निर्णय हमारे विज्ञ पाठक ही करेंगे।

'सस्ता साहित्य मंडल' ने ऐसे ग्रंथों की एक माला प्रकाशित की है। गांधीजी, राजेन्द्र-बाबू, जवाहरलाल नेहरू, विनोबा, काका सा० कालेलकर, बनारसीदास चतुर्वेदी प्रभृति के प्रेरणादायक संस्मरणों तथा उदात्त विचारों का बड़ा ही उद्‌बोधक संग्रह इन ग्रंथों में हो गया है। हमें हर्ष है कि इस शृंखला में एक और नई कड़ी जुड़ गई है।

श्रीमती जानकीदेवी की वर्षगांठ इस अनुष्ठान की निमित्त बनी, यह हमारे लिए बहुत संतोष और आनंद की बात है। इस मंगल अवसर पर हम उनका हार्दिक अभिनन्दन करते हुए प्रभु से प्रार्थना करते हैं कि वह दीर्घायु हों और भविष्य में उनके द्वारा और भी उत्तम सेवा हो।

संपादक-मंडल की ओर से—

भवानीप्रसाद मिश्र

यशपाल जैन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विषय-सूची

आशीर्वचन	१३	श्रीमां आनंदमयी
जानकीदेवी का नया प्रेरणा-मंत्र	१४	काका सा० कालेलकर
भारतीय नारी का सबसे बड़ा मसला	१५	इंदिरा गांधी

नारी : विकास चिंतन

भारतीय नारी	१९	स्वामी विवेकानंद
त्याग और तपस्या की मूर्ति	२८	मो० क० गांधी
नवसृजन का युग और नारी	३७	रवीन्द्रनाथ ठाकुर
नारी का भविष्य, आत्मनिष्ठा में	४४	विनोबा
मातृरूप पृथिवी—पृथिवीरूप नारी	५२	वासुदेवशरण अग्रवाल
स्त्री शक्ति का आह्वान	५६	सरला बहन
नये युग की नारी	६१	दादा धर्माधिकारी
समन्वय-शक्ति और नारी	६९	काका कालेलकर

नारी : प्रगति के सोपान

प्राचीन भारत में नारी की स्थिति : १	८१	इन्द्रनाथ आनंद
प्राचीन भारत में नारी की स्थिति : २	९३	इन्द्रनाथ आनंद
मध्य युग में नारी की स्थिति	१०६	नंदिता मिश्र
ब्रिटिश काल में नारी की स्थिति	११९	सत्येन्द्र त्रिपाठी
स्वतंत्र भारत में नारी की स्थिति	१३५	हरिशंकर शर्मा

जीवन-यात्रा

आत्म-चरित	१४७	जानकीदेवी बजाज

मलय-प्रसंग

अपनों की दृष्टि में : जानकीदेवी

त्याग की प्रतिज्ञा	२२७	मो० क० गांधी
उनकी एक विशेषता : बाल-वृत्ति	२२८	विनोबा
सच्ची शिक्षा और सेवा की प्रतिनिधि	२२९	काका साहेब कालेलकर
सेवा और त्याग का जीवित आदर्श	२३१	हरिभाऊ उपाध्याय
उनके स्वभाव की कुछ विशेषताएं	२३४	दादा धर्माधिकारी
मंगल स्मरण	२३६	बालकोबा भावे
सादगी और सच्चाई की मूर्ति	२३७	रं० रा० दिवाकर
निस्स्वार्थ समाज-सेवी और साध्वी	२३७	मोहनलाल सुखाड़िया

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उनके असामान्य गुण	२३८	कृष्णचन्द्र
स्पष्टवादी तथा जिज्ञासु	२३९	सत्यभक्त
तप, त्याग और सेवा की त्रिवेणी	२३९	काशिनाथ त्रिवेदी
उनके रचनात्मक कार्य	२४२	रिषभदास रांका
जीवित सती	२४७	बलवंत सिंह
उनका अद्भुत वात्सल्य	२५०	मा० म० शाह
उनके जीवन का आध्यात्मिक पहलू	२५१	सिद्धराज ढड्ढा
चरैवेति-चरैवेति	२५२	देवेन्द्रकुमार गुप्त
उनकी सहज ऋजुता	२५३	दत्तोबा दास्ताने
समर्पण-योगिनी	२५४	दामोदरदास मूंदड़ा
उदारचेता, करुणामयी तथा कर्मनिष्ठ	२६०	प्रभुदास गांधी
सर्मपित जीवन	२६५	जेठालाल जोषी
धुन की पक्की	२६७	रामेश्वर दयाल दुबे
उनके दुर्गुण दीखनेवाले गुण	२७०	यशपाल जैन
अंतर्मुखी क्रांति की प्रतीक	२७३	जमनालाल जैन
कुछ न भूलनेवाली घटनाएं	२७५	उमाशंकर शुक्ल
मां ने क्या खोया, क्या पाया ?	२७६	रामकृष्ण बजाज

अपने : जानकीदेवी की दृष्टि में

बापू	२७९	मेरे श्वसुर
जमनालालजी	२८९	मेरे पतिदेव
विनोबा	३०८	मेरे भाई
राजेन्द्रबाबू	३१७	सादगी और सरलता की मूर्त्ति
महादेवभाई	६१९	बापू के गणेश
खान अब्दुल गफ्फार खां	३२१	सरहदी गांधी
कस्तूरबा	३२३	प्रेम की प्रतिमा
रामदासभाई	३२५	बापू के तीसरे पुत्र
भणसालीभाई	३२७	हठयोगी

आशीष और प्रणाम

पत्र-व्यवहार	३३३	महात्मा गांधी, जमनालालजी आदि
"सौ साल जीवें"	३६५	विनोबा
"मेरे साथ आप सब सौ वर्ष जीवो"	३६६	जानकीदेवी बजाज

प्रमुख नारियाँ

प्रसिद्ध भारतीय नारियां	३६९	संक्षिप्त जीवन-परिचय

●

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समर्पण और साधना

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीमां के आशीर्वचन

श्रीमां ने कहा :

जानकी मां का तो जन-जनार्दन सेवा में समग्र जीवन अर्पण है।

प्राण-स्पर्शी यही आदर्श ग्रहण करणीय।

समझो, हमारी मां की शक्ति सबमें है। सबको मां मय होकर देखें। भगवान मां भी है—परमपिता, परम माता भी है। परम बंधु, सखा, स्वामी भी है।

तुम्हारी मां ने सतत सेवामय क्रिया-योग किया है।

ये जो क्रिया-योग है न, जितनी क्रियाएँ हैं, भगवान की प्राप्ति के लिए हैं। इसलिए इसे क्रिया-योग कहा है।

उनके (जानकी मां के) आनंद में कोई बाधा न दे। अपने आनंद में, शांति में मगन होकर रहे। उसीमें उनको मगन होकर रहने दो। रामायण का पाठ, सत्संग बहुत अच्छी बात है। मोह-मुक्त होने की सदा कोशिश करना। मोह-युक्त न हो।

मां को लिखो, तुम जैसी मां हुई है, वैसी दुनिया में सब मां हों, ऐसी भगवान से प्रार्थना करो।

सत्य में निष्ठा हो, तत्त्वचिंतन हो। भगवत्‌चिंतन का यही फल है कि वह सद्‌भावनात्मक मार्ग खोल देते हैं। लेकिन सच्चाई होनी चाहिए।

(श्रीमां आनंदमयी की मदालसाबहन से हुई वार्ता)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जानकीदेवी का नया प्रेरणा-मंत्र

काका सा० कालेलकर

जानकीदेवी का त्याग इतना शीतल है कि शायद ही वैसा अन्यत्र देखने को मिलेगा। वह पढ़ी-लिखी नहीं हैं, ऐसा माना जाता है। लेकिन कृति तो अपना प्रभाव डाल ही देती है। भले ही जानकीदेवी अपने को अशिक्षित मानें, भगवान ने उनके ही मुंह से आज के भौतिक विज्ञान के युग के लिए यह नवीन प्रेरणा दी है :

"मानव-संरक्षण मानव मात्र का
स्वयंसिद्ध अधिकार है।"

पुराने लोग कर्त्तव्य की बात करते थे। आजकल का युग मेजिनी के दिनों से अधिकार को ही विशेष समझने लगा है और इसी में इस युग की खूबी भी है। कर्त्तव्य तो बाहर की प्रेरणा है, अतः किसी के आदेश से हम उसे समझने लगते हैं और अमल में लाने की कोशिश करते हैं, जबकि अधिकार तो आंतरिक प्रेरणा से खड़ा होता है और भगवान को आशीर्वाद देना ही पड़ता है।

मैं मानता हूं कि स्वराज्य के बाद हम गांधीजी के नाम का तो जय-जयकार करते हैं, लेकिन गांधीजी की मूल प्रेरणा को भूल गये हैं। गांधी जन्म-शताब्दी के साल में सब नेताओं के व्याख्यान पढ़े, लेकिन सत्याग्रह की बात किसी के मुंह से नहीं निकली, और सत्याग्रह को छोड़ दें तो गांधीजी शून्य हो जाते हैं। जहां-जहां मानव-संरक्षण की आवश्यकता खड़ी हो, मानव मात्र को उसके लिए तैयार होना ही चाहिए। 'मानव-संरक्षण मानव मात्र का स्वयंसिद्ध अधिकार'—इस मंत्र में गांधीजी के सत्याग्रह की संपूर्ण भावना आ ही जाती है। अगर हम इस एक चीज को जाग्रत रखें तो पिछले पच्चीस वर्ष में हमने जितनी गलतियां कीं या शिथिलता धारण की, वह सब दूर हो जायगी।

•

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भारतीय नारी का सबसे बड़ा मसला

इंदिरा गांधी

हम भारत की स्त्रियां वास्तव में सौभाग्यशाली हैं कि हमारे पक्ष की रहनुमाई के लिए राममोहन राय, विद्यासागर, महात्मा गांधी, मेरे पिता और महर्षि कर्वे जैसी विभूतियां हमें उपलब्ध रहीं। आजादी मिलने के बाद नेहरूजी के उदार मस्तिष्क में समाज के नव-निर्माण की कल्पना आई और उन्होंने सामाजिक परिवर्तन को एक दिशा दी, जिससे स्त्रियां आर्थिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में आगे आईं। मेरा विश्वास है कि ऐसा महज भावुकता के कारण नहीं हुआ, बल्कि भारतीय नारी की योग्यता तथा कार्य की स्वीकृति के रूप में हुआ। भारत की स्त्रियों ने पुरुषों के विरुद्ध कोई आंदोलन नहीं किया। समान ध्येय में मददगार होने के लिए वे पुरुषों के साथ कंधे-से-कंधे मिलाकर काम करती रहीं।

यह मेरे लिए बड़े भाग्य की बात थी कि इस तूफान को मैंने देखा और उसमें हिस्सा लिया। मुझे अब भी याद आता है कि भारत की स्त्रियों की मुक्ति के लिए मेरी मां की कितनी तीव्र इच्छा थी और उसके लिए उन्होंने लगातार कितनी मेहनत की, जिससे स्त्रियों को अधिक भरी-पूरी और काम की जिन्दगी बिताने का ज्यादा-से-ज्यादा मौका मिले। उस जमाने में और उन परिस्थितियों में प्रतिक्रियावादी गढ़ का मोर्चा लेना आसान बात नहीं थी।

इस तरह भारतीय नारी-समाज के अधिकार एक विद्रोही, आग्रही तथा विस्तारवादी स्त्रीत्व द्वारा पुरुष के संस्थापित अधिकार के विरुद्ध संघर्ष के नतीजे के रूप में नहीं मिले, जैसाकि पश्चिमी देशों में हुआ। भारत में ये अधिकार डेढ़ सौ वर्ष की सामाजिक क्रांति की उपज थे।

जिन देशों में स्त्रियों को अपने अधिकारों के लिए लड़ना पड़ा, उन देशों में पुरुषों के लिए यह आसान था कि वे स्त्रियों की स्वतंत्रता के तथ्य को स्वीकार कर लेते। भारत में हालांकि स्त्रियों की आजादी से बड़ी सामाजिक शक्ति पैदा हुई है, फिर भी लोगों ने अभीतक इस बात को नहीं माना कि स्त्रियों का दर्जा बराबरी का है। हमारे रास्ते में यह एक बड़ी रुकावट है। दूसरी बाधा यह है कि हमारी स्वतंत्र स्त्रियों तक के मन पर चुपचाप कष्ट-सहन करने वाली सीता का आदर्श छाया हुआ है।

आज भारतीय नारी के सामने सबसे बड़ा मसला यह है कि कानून ने उन्हें जो अवसर दिया है, उसके अनुरूप बनें। भारत की स्त्रियों ने राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक अधिकार प्राप्त कर लिये हैं, लेकिन उन अधिकारों को अमली जामा पहनाने के लिए हमने क्या किया है? विधान सभाओं, संसद, कमेटियों और कमीशनों के जरिये जो काम होता है, उससे हमें कोई बहुत बड़ी उपलब्धि नहीं होती। आज तो सबसे ज्यादा जरूरत इस बात की है कि पढ़ी और

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बेपढ़ी स्त्रियों के बीच समाज-हित की भावना पैदा करने के लिए उचित संगठन बनाये जायं और घर-घर जाकर काम किया जाय, जिससे वे राष्ट्रीय ध्येय की पूर्ति के लिए मिल-जुलकर काम कर सकें।...

अपने पूरे इतिहास में और शायद सारे देशों के इतिहास में हमने देखा है कि जिस समय स्त्रियां आजाद नहीं थीं, उस समय भी ऊंचे पाये की ऐसी स्त्रियां थीं, जिन्होंने समाज पर और कभी-कभी पूरे जमाने पर अपनी छाप डाली। लेकिन ऐसे नाम इने-गिने ही थे। हम चाहेंगी कि स्त्रियों का प्रभाव और गहराई से अनुभव हो और यह मौका उन्हें किसी भी आदमी की अपेक्षा अधिक-से-अधिक मिले, क्योंकि ज्योंही बच्चा जन्म लेता है, स्त्रियां शिक्षक का काम करती हैं। उन्हें अपनी देख-रेख में एक नये मस्तिष्क, एक नये शरीर और एक भावी नागरिक को ढालना होता है और यह ढालने का काम, जैसाकि हम कभी-कभी सोचते हैं, महज अच्छी सलाह दे देने मात्र से पूरा नहीं हो जाता।...

हम देखते हैं कि कठिनाई के समय भारतीय नारियों ने हमेशा बेजोड़ साहस दिखाया है और वे कसोटी पर खरी उतरी हैं। देश और समाज के गौरव की रक्षा के लिए उन्होंने बड़े-से-बड़े बलिदान दिया है। मेरे विचार से आज देश स्त्रियों से फिर वैसे ही मार्ग-दर्शन की अपेक्षा रखता है। इसका मतलब यह नहीं कि सचमुच कोई अपने प्राणों की ही बलि चढ़ा दे या अपना पूरा समय ही इसमें लगा दे। इसका मतलब यह है कि कोई कुछ भी काम करता हो, उसमें यह निगाह रक्खे कि वह काम देश का है, उसके द्वारा देश का विकास करना है, अच्छे नागरिक तैयार करने हैं और बढ़िया वातावरण बनाना है।...

●

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

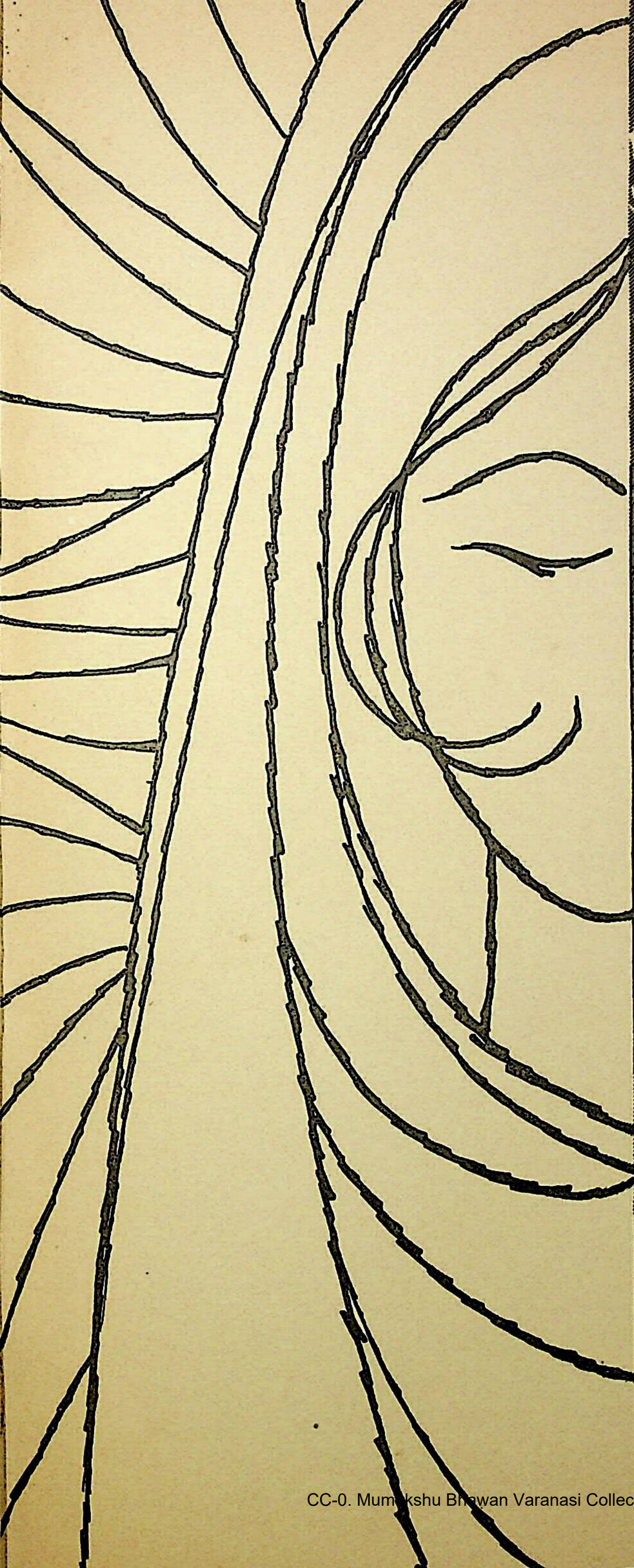

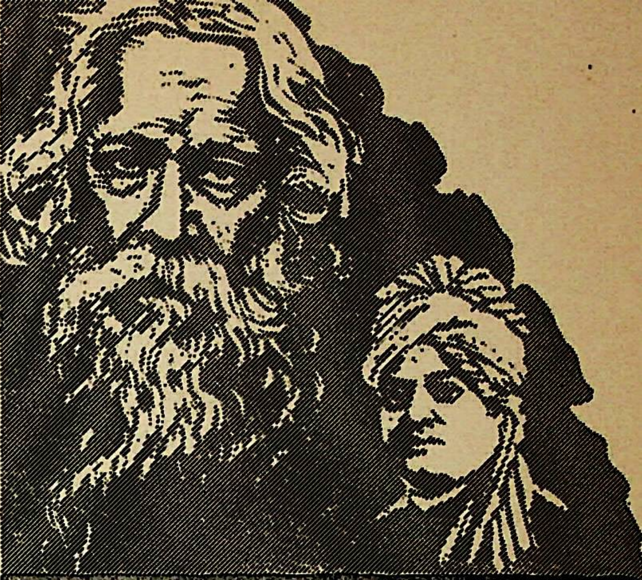

नारी: विकास-चिन्तन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भारतीय नारी

स्वामी विवेकानंद

प्रारंभ में ही मेरा यह कह देना ठीक होगा कि संन्यासी होने के कारण स्त्रियों का प्रत्येक दृष्टिकोण से—माता, स्त्री, कन्या और बहन के रूप में—मेरा ज्ञान अन्य लोगों की तरह पूर्ण नहीं हो सकता। फिर, भारतवर्ष एक विशाल महादेश है, केवल एक देश नहीं है। वहाँ विभिन्न मानव-वंश वास करते हैं। यूरोप के विभिन्न राष्ट्र भारतवर्ष के मानव-वंशों की अपेक्षा एक-दूसरे के अधिक निकट और अधिक समान हैं। इसके अतिरिक्त, इन विभिन्न मानव-वंशों के आचार, रीति-रिवाज, खान-पान, वेशभूषा और विचारों में भी बहुत अन्तर है।

इसके बाद फिर जातियाँ हैं। प्रत्येक जाति मानो एक पृथक् प्रजाति बन गई है। यदि कोई बहुत दिनों तक भारतवर्ष में रहे, तो वह शक्ल देखकर बता सकता है कि अमुक व्यक्ति किस प्रजाति का है। जातियों के आचार और रीति-रिवाजों में अंतर है। ये सभी जातियाँ पृथक्-पृथक्-सी रहती हैं, अर्थात् वे सामाजिक ढंग से आपस में मिलती-जुलती अवश्य हैं, पर ये आपस में खान-पान या विवाह नहीं करतीं।

मैं भारत में बराबर एक स्थान से दूसरी जगह घूमा ही करता हूँ और समाज के हर श्रेणी के लोगों से मिलता-जुलता हूँ। उत्तर भारत की स्त्रियाँ पुरुषों के सामने नहीं आतीं, पर वे कहीं-कहीं धर्म के लिए इस नियम को तोड़कर हमारे सामने आती हैं, हमारे उपदेश सुनती हैं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

और हमसे बातें करती हैं। अतएव मैं आप लोगों के[1] सामने भारतीय स्त्रियों के आदर्श को रखने का प्रयत्न करूँगा।

प्रत्येक राष्ट्र में पुरुष या स्त्री किसी एक आदर्श को व्यक्त करते हैं और वे उसकी पूर्ति ज्ञात या अज्ञात भाव से करते रहते हैं। व्यक्तिविशेष अभिप्रेत आदर्श का बाह्य रूप मात्र है। व्यक्तियों के ऐसे समूह को राष्ट्र कहते हैं। राष्ट्र भी किसी ऐसे महान् आदर्श का प्रतीक होता है, जिसकी ओर वह बढ़ता रहता है। इसलिए यह कहना बिलकुल ठीक है कि किसी राष्ट्र को समझने के लिए पहले उसके आदर्श को समझना आवश्यक है। कोई राष्ट्र अपना आदर्श छोड़कर किसी दूसरे आदर्श से जाँचा जाना स्वीकार नहीं करता।

उन्नति, प्रगति, भलाई, अवनति—सभी बातें सापेक्ष होती हैं। वे किसी आदर्श का निर्देश करती हैं; व्यक्ति या राष्ट्र की पूर्णता को समझने के लिए उसे उसी आदर्श से जाँचना होगा। जिसे एक राष्ट्र अच्छा समझता है, संभव है, उसे दूसरा अच्छा न समझे। चचेरे भाई-बहिनों में विवाह इस देश में[2] पूर्ण रूप से वैध है, किंतु भारतवर्ष में यह केवल गैर-कानूनी ही नहीं है, अपितु व्यभिचार-सदृश एक बड़ा अपराध समझा जाता है। विधवा विवाह यहाँ सर्वथा न्यायसंगत है, किंतु भारतवर्ष की उच्च श्रेणी की स्त्रियों के लिए दूसरी बार विवाह करना उनका सबसे बड़ा पतन है। अतः आपने देखा, विचारों की इतनी अधिक विभिन्नता में रहनेवाले हम लोगों का एक के आदर्श से दूसरे को जाँचना न तो उचित है और न संभव ही।

भारत में स्त्री-जीवन के आदर्श का आरंभ और अंत मातृत्व में ही होता है। प्रत्येक हिंदू के मन में 'स्त्री' शब्द के उच्चारण से मातृत्व का स्मरण हो आता है, और हमारे यहाँ ईश्वर को 'माँ' कहा जाता है। पश्चिम में स्त्री पत्नी है। वहाँ पत्नी के रूप में ही स्त्रीत्व का भाव केंद्रित है। भारत में जनसाधारण समस्त स्त्रीत्व को मातृत्व में ही केंद्रीभूत मानते हैं। पाश्चात्य देशों में गृह की स्वामिनी और शासिका पत्नी है, भारतीय गृहों में घर की स्वामिनी और शासिका माता है। पाश्चात्य गृह में यदि माता हो भी, तो उसे पत्नी के अधीन रहना पड़ता है, क्योंकि घर पत्नी का है। हमारे घरों में पत्नी अनिवार्यतः माता के अधीन होती है। आदर्शों की इस भिन्नता पर ध्यान दीजिए।

अब मैं चाहता हूँ कि आप इनकी तुलना करें। मैं आपके समक्ष कुछ तथ्य उपस्थित करूँगा, जिससे आप स्वयं इन दोनों की तुलना कर सकें। यदि आप पूछें, "पत्नी के रूप में भारतीय स्त्री का क्या स्थान है ?' भारतीय पूछ सकता है, "माता के रूप में अमेरिकन स्त्री कहाँ है ?" उस तपस्विनी एवं ओजस्विनी माता का, जिसने हमें जन्म दिया, तुमने क्या सम्मान किया है ? जिसने हमें अपने शरीर में नौ मास तक वहन किया, वह माता कहाँ है ? जो हमारे जीवन के लिए यदि प्राणों की आहुति देने की आवश्यकता हो, तो बीस बार भी ऐसी आहुति देने को उद्यत है, वह माता कहाँ है ? कहाँ है वह माता, जिसका प्रेम कभी नहीं मरता—मैं कितना ही दुष्ट और अधम क्यों न हो जाऊँ ? साधारण-सी बात को लेकर तलाक के लिए न्यायालय

१. अमरीका निवासी।
२. अमरीका में।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

का द्वार खटखटानेवाली आपकी पत्नी के सामने उसका स्थान कहाँ है ? हे अमेरिका की स्त्रियो, वह माता कहाँ है ? उसे मैं आपके देश में नहीं पा सकूँगा। मुझे यहाँ वह पुत्र दिखाई नहीं देता, जो कहता है कि माता का पद प्रथम है। हमारे देश में तो कोई भी पुरुष यह इच्छा कभी नहीं करता कि उसकी मृत्यु के उपरान्त भी उसकी पत्नी और उसका पुत्र उसकी माता का स्थान लें। हमारी माँ !—यदि हमारी मृत्यु उसके पहले हो, तो हम चाहते हैं कि मृत्यु के समय पुनः एक वार हमारा सिर उसकी गोद में हो। क्या 'स्त्री' संज्ञा केवल भौतिक शरीर मात्र को ही दी जाने के लिए है ? हिन्दू मन उन आदर्शों के प्रति सशंकित रहता है, जिनमें यह कहा जाता है कि देह को तो अपना धर्म ही साधना चाहिए। नहीं, नहीं, देवि ! देह से संवद्ध किसी भी वस्तु से तुम्हें संलग्न नहीं किया जायगा। तुम्हारा नाम तो सदा ही अध्यात्म का प्रतीक रहा है, विश्व में 'माँ' नाम से अधिक पवित्र और आध्यात्मिक दूसरा कौन-सा नाम है, जिसके पास वासना कभी फटक भी नहीं सकती ? यही भारत का आदर्श है।

मैं उस आश्रम का हूँ, जिसके सभी लोग प्रत्येक स्त्री को 'माँ' कहकर पुकारते हैं। प्रत्येक स्त्री को क्या, हम तो किसी छोटी लड़की को भी 'माँ' ही कहकर पुकारते हैं[1]; यह नियम ही है। पाश्चात्य देशों में आने पर भी वही संस्कार वना रहा। जब मैं यहाँ स्त्रियों से कहता, "हाँ, माता !" तो वे दहल उठतीं। पहले तो मैं नहीं समझ सका कि उनके इस प्रकार आश्चर्य प्रकट करने का क्या कारण है। बाद में मुझे उसका कारण मालूम हुआ कि उस कथन का अर्थ होता है कि वे वृद्धा हैं। भारतवर्ष में स्त्रीत्व मातृत्व का ही वोधक है, मातृत्व में महानता, स्वार्थ-शून्यता, कष्टसहिष्णुता और क्षमा-शीलता का भाव निहित है। पत्नी तो छाया की तरह पीछे चलती है, उसे माता के जीवन का अनुकरण करना पड़ता है, यही उसका कर्त्तव्य है। किंतु माता प्रेम का आदर्श होती है। वह परिवार का शासन करती है और उस पर अधिकार रखती है। भारतवर्ष में यदि बालक कोई अपराध करता है, तो पिता ही उसे दण्ड देता है। माता सदा पिता और बालक में बीच-बचाव करती है। यहाँ पर ठीक उल्टा है। इस देश में बच्चों को मारना-पीटना आदि माताओं का कर्तव्य वन गया है और पिता बीच-बचाव करता है। आप समझ सकते हैं कि आदर्शों की कितनी भिन्नता है। इसे मैं आलोचनात्मक ढंग से नहीं कहता। आप लोग जो करते हैं, अच्छा ही करते हैं; पर हम लोगों को जो सदा से सिखाया गया है, हमें तो उसी का अभ्यास है। कोई भी माता कभी अपने बच्चों का अभिशाप नहीं देती, वह सदा क्षमा ही करती रहती है। 'हमारे स्वर्गस्थ पिता' के बदले में हम सदा 'जगत् माता' आदि ही कहते हैं। हिंदू के लिए इस शब्द और भाव में अनन्त प्रेम भरा है। इस नश्वर संसार में ईश्वर के प्रेम के समीपतम पहुँचाने वाला प्रेम माता का ही है। "हे माता ! दया करो, मैं तो कुपुत्र हूँ ! माँ, कुपुत्र तो अनेक हुए हैं, किंतु माता कुमाता कभी नहीं हुई।"—साधु रामप्रसाद ने यही कहा है।[2]

१. बंगाल में बेटी को भी माँ कहकर संबोधित करने की प्रथा है.
२. 'कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति।' शंकराचार्य के इसी प्रसिद्ध वचन को बंगला में साधु रामप्रसाद ने दोहराया है.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यह हिन्दू माता है। पुत्र की पत्नी घर में आती है; माता की दृष्टि में वह अपनी उस पुत्री के समान आती है, जो विवाहित होकर अपनी माता के घर से अन्यत्र चली गई है। उसे घर की सम्राज्ञी, माता की आज्ञा के अनुसार चलना आवश्यक है। यद्यपि संन्यास-आश्रम में प्रवेश करने के कारण मेरे लिए विवाह करना निषिद्ध है, फिर भी कल्पना कीजिए—यदि मैं विवाह कर सकता और यदि मेरी पत्नी मेरी माता को किसी कारण अप्रसन्न रखती, तो ऐसी पत्नी से मुझे बड़ी ग्लानि होती। क्यों ? क्या मैं अपनी माता की पूजा नहीं करता ? फिर पुत्रवधू माता की पूजा क्यों न करे ? मैं जिसकी आराधना करता हूँ, वह भी उसकी आराधना क्यों न करे ? उसे क्या अधिकार है कि मेरे सिर पर चढ़कर मेरी माता पर शासन करे ? उसको अपने स्त्रीत्व की निष्पत्ति होने तक प्रतीक्षा करनी होगी; और वह वस्तु जो नारीत्व को पूर्ण करने के लिये तथा नारी को नारी बनाने के लिए अपेक्षित है—मातृत्व है। मातृपद प्राप्त होने तक उसे प्रतीक्षा करनी चाहिए, तदुपरान्त उसे अधिकार प्राप्त होगा। हिन्दू-संस्कृति के अनुसार स्त्री-जीवन का महान् उद्देश्य माता का गौरवमय पद प्राप्त करना ही है, किंतु इसका भी अंतर समझिए। मेरे माता-पिता ने कितने दिनों तक भगवान् से प्रार्थना की थी और व्रत रखा था कि उन्हें संतान प्राप्त हो। भारत में माता-पिता प्रत्येक बालक के जन्म के लिए ईश्वर से प्रार्थना-याचना करते हैं। 'आर्य' की परिभाषा लिखते हुए हमारे स्मृतिकार मनु कहते हैं—वही संतान आर्य है, जो प्रार्थना के द्वारा जन्म लेती है; बिना प्रार्थना के उत्पन्न प्रत्येक संतान मानो अधर्म से उत्पन्न संतान है। प्रत्येक बच्चे के लिए माता-पिता को प्रार्थना करनी चाहिए। इस प्रकार की संतानों से इस संसार में अधिक क्या आशा की जा सकती है, जो अभिशापों के साथ जन्म लेते हैं, जो दुर्बलता के एक क्षण में, संसार में इसलिए सरक आते हैं कि उससे बचना संभव नहीं था ?

मातृत्व से आपका उत्तरदायित्व अत्यंत महान् हो जाता है। क्यों ? क्योंकि हमारे शास्त्रों के अनुसार जन्म-पूर्व-प्रभाव बालक को शुभ या अशुभ प्रवृत्तियुक्त बनाता है। आप सैकड़ों महाविद्यालयों में अध्ययन करें, लाखों ग्रन्थ पढ़ डालें, संसार के समस्त विद्वानों के संसर्ग का लाभ उठायें, किंतु यदि आपने शुभ संस्कार लेकर जन्म लिया है, तो आप इन सबसे अच्छी रहेंगी। शुभ या अशुभ के निमित्त आप जन्म लेती हैं। शास्त्रों का मत है कि बालक जन्म से ही देव या असुर पैदा होता है। शिक्षा आदि का स्थान बाद में आता है—उनका प्रभाव नगण्य होता है। रहतीं आप वही हैं, जो जन्म से होती हैं। यदि आपको माता ने रोगी शरीर दिया है, तो कितने ही औषधि-भण्डारों को निगल डालिए, आप अपने को स्वस्थ नहीं रख सकतीं। क्या आप एक भी स्वस्थ पुरुष बता सकती हैं, जिसे रोगी, दुर्बल और विषैले रक्तवाले माता-पिता ने जन्म दिया हो ? हम प्रचंड सुप्रवृत्ति या कुप्रवृत्ति के साथ जन्म लेते हैं, हम जन्मजात देव या असुर होते हैं। शिक्षा आदि का प्रभाव नगण्य ही होता है।

आप पाश्चात्य लोग व्यक्तिवादी हैं। आप कोई कार्य इसलिए करते हैं कि वह आपको प्रिय है। आपके मतानुसार मैं इस स्त्री से क्यों विवाह करता हूँ ?—क्योंकि इससे मुझे प्रसन्नता होती है। क्यों ? इसलिए कि वह मुझे अच्छी लगती है। यह स्त्री मुझसे क्यों विवाह करती है ? —क्योंकि मैं उसे प्रिय हूँ। बस, बात खत्म। इस अनन्त विश्व में मैं और मेरी पत्नी, बस, ये ही

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दो प्राणी हैं; वह मुझसे विवाह करती है, और मैं उससे—इससे किसी का कुछ विगड़ता नहीं, इसके लिए अन्य कोई उत्तरदायी नहीं। आपके जॉन और जीन्स जंगल में जाकर रह सकते हैं और मनमाना जीवन बिता सकते हैं; परन्तु जव उन्हें समाज में रहना होगा, तव उनके विवाह का समाज के जीवन पर अत्यन्त शुभ या अशुभ प्रभाव पड़ सकता है। संभव है, उनके बच्चे दानव बनें, सर्वत्र लूट-पाट करें, डाका डालें, आग लगाएँ, हत्या करें और मद्य-पान आदि नीच कर्मों में रत रहें।

तो फिर भारतीय समाज का आधार क्या है? वह है जाति-नियम। मैं जाति के लिए पैदा हुआ हूँ, और जाति के लिए जीवित हूँ। जाति में पैदा होने से सारा जीवन जाति के नियमानुसार बिताना होगा। दूसरे शब्दों में, आपके देश की वर्तमान भाषा में यह कहा जा सकता है कि पश्चिमी देशों में मनुष्य जन्मना व्यक्तिपरक होता है, और हिन्दू समाजपरक—नितान्त समाजपरक। अब शास्त्रों का कहना है, यदि हम तुम्हें उस स्त्री से विवाह करने की आज्ञा देते है, जिसे तुम पसंद करते हो, और स्त्री को उस पुरुष से विवाह करने की, जिसे वह पसंद करती है, तो इसका परिणाम क्या होता है? यदि उस स्त्री का पिता किसी मानसिक रोग या क्षय से पीड़ित हो, तव? स्त्री उस पुरुष की शक्ल देखकर मुग्ध हो जाती है, जिसका पिता एक भयानक शराबी था। तव नियम क्या कहता है? उसका कहना है कि ऐसी परिस्थिति में ये सभी विवाह अनियमित माने जाएँगे। शराबी, पागल और क्षयरोगी पुरुषों के बच्चों का विवाह नहीं किया जा सकेगा। लूले, लँगड़े, कुबड़े, और पागलों का विवाह नहीं हो सकेगा, यही शास्त्रों की आज्ञा है।

विवाह होता है। स्त्री अपने पति के साथ घर आती है। फिर पिता के यहाँ 'द्विरागमन' तक के लिए वापस चली जाती है। छोटी उम्र का विवाह पहला विवाह समझा जाता है। जब यह बालिग़ हो जाती हैं, तो दूसरा धार्मिक कृत्य होता है, जिसे द्विरागमन या 'गौना' कहते हैं। तब से वे साथ रहते हैं, पर पति के माता-पिता के साथ एक ही मकान में।

इसके बाद दूसरा विचित्र भारतीय नियम आता है। प्रथम दो या तीन वर्ण-जातियों की विधवाओं को पुनर्विवाह करने की आज्ञा नहीं है। यदि उनकी इच्छा हो, तो भी वे ऐसा नहीं कर सकतीं। अवश्य यह बहुतों पर अत्याचार जैसा है। सभी विधवाएँ इस नियम को पसंद करती हों, ऐसा तो नहीं कहा जा सकता; क्योंकि विवाह न करने से ब्रह्मचारिणियों की भाँति जीवन बिताना उनके लिए आवश्यक हो जाता है। हमारा साधुओं का देश है, हम सदा तपस्या करते रहते हैं, और यह हमें पसन्द भी है। हमारे यहाँ स्त्री न तो शराब पीना पसंद करती है और न मांस खाना। कुछ जातियों के पुरुष कभी-कभी मांस खा लेते हैं, किंतु स्त्रियाँ नहीं खातीं। फिर भी मैं मानता हूँ कि पुनर्विवाह की आज्ञा न पाना अनेक स्त्रियों के लिए जुल्म हो सकता है।

किंतु हमें इसके मूल तत्त्व की ओर ध्यान देना चाहिए। वे विशेष रूप से समाजपरक हैं। प्रत्येक देश के उच्च वर्गों में, जैसा आँकड़ों से पता चलता है, पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की संख्या बहुत अधिक होती है। उच्च वर्गों में स्त्रियाँ पीढ़ी-दर-पीढ़ी (केवल घर के हल्के से काम करते हुए) सुख से जीवन व्यतीत करती हैं। हमें आँकड़ों से पता लगता है कि लड़कियाँ बहुत

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

थोड़े समय में लड़कों से संख्या में आगे बढ़ जाती हैं। आज भले ही ऐसा न हो, क्योंकि आजकल वे भी लड़कों की भाँति कठिन से कठिन काम कर रही हैं। तो उच्च वर्णों में लड़कियों की संख्या निम्न वर्णों की अपेक्षा बहुत अधिक है। निम्न वर्णों की परिस्थिति बिलकुल भिन्न है। वे सभी कठिन परिश्रम करते हैं, स्त्रियों को तो और भी कठिन परिश्रम करना पड़ता है, क्योंकि उन्हें घर के सब काम-काज के सिवा जीविका कमाने में भी हाथ बँटाना पड़ता है।

विधवाओं के विवाह न करने का जो प्रश्न है, उसके संबंध में मेरा कहना है कि प्रथम दो वर्णों में स्त्रियों की संख्या पुरुषों की संख्या से बहुत अधिक है, इससे एक दुविधा उत्पन्न हो गयी है। या तो विवाह न करनेवाली विधवाओं की समस्या है अथवा पति न पानेवाली नवयुवतियों का प्रश्न है—विधवाओं की समस्या या वयस्क कुमारियों की समस्या! इन्हीं दोनों में से किसी एक पर विचार करना होगा। अब पुनः इस बात को स्मरण कीजिए कि भारतीयों का मन समाजपरक है। उनका कहना है कि हम विधवाओं की समस्या को गौण मानते हैं।

अब देखें, धर्म इस संबंध में क्या कहता है। हिंदू धर्म सांत्वना लेकर आता है। आप एक बात स्मरण रखें, यथार्थ धार्मिक स्त्री या पुरुष तो कभी विवाह ही नहीं करेगा। धार्मिक स्त्री विधवा होने पर सोचने लगती है, 'परमात्मा ने मुझे यह अवसर दे दिया है। अतः मैं अब ईश्वर की पूजा-अर्चना करूँ'। अवश्य उनमें से सभी ईश्वर पर ध्यान नहीं लगा सकतीं। कुछ के लिए तो यह सर्वथा असंभव होता है और इसलिए उन्हें कष्ट होता है।

इसके बाद हम स्त्री को एक पुत्री के रूप में लेंगे। भारतीय घरों में कन्या एक समस्या है। कन्या और जाति-विभाग मिलकर बेचारे हिन्दू को पीस डालते हैं; क्योंकि कन्या का विवाह अपनी ही जाति में या यों कहिए, अपनी ही जाति के अन्तर्गत एक ही उपजाति में होना चाहिए। और इसीलिए लड़की का विवाह करने के लिए कभी-कभी तो पिता को भिखारी बन जाना पड़ता है। वर का पिता अपने पुत्र के लिए बहुत अधिक मूल्य माँगता है। इसलिए कन्या के पिता को कभी-कभी अपना सब कुछ बेचकर अपनी कन्या का विवाह करना पड़ता है। यही कारण है कि कन्या हिन्दू-जीवन की एक बड़ी समस्या है। आश्चर्य की बात तो यह है कि संस्कृत में कन्या को 'दुहिता' कहते हैं। इस शब्द की मूल उत्पत्ति इस प्रकार है कि प्राचीनकाल में कन्याएं ही गायें दुहा करती थीं। इसलिए 'दुह' क्रिया से 'दुहिता' संज्ञा बन गयी। अतएव दूध दुहनेवाली को 'दुहिता' कहते हैं। इसके पश्चात् लोगों ने 'दुहिता' का नवीन अर्थ लगाया—जो घर का सारा दूध दुह ले जाती है, उसे दुहिता कहते हैं।

समाज में भारतीय स्त्रियों के ये ही विभिन्न संबंध हैं। जैसा मैंने आप लोगों को बताया है, माता का स्थान सबसे उच्च है, दूसरा स्थान पत्नी का है, उसके बाद कन्या का स्थान आता है।

हमारे स्त्री-पुरुषों के सामाजिक जीवन और संबंध का तारतम्य जाल के समान जटिल है। हम अपने बड़ों के सामने अपनी पत्नी से बात नहीं कर सकते; केवल अपने छोटों के सामने या अकेले में ही हम उससे बातें कर सकते हैं। यदि मेरा विवाह हुआ होता, तो मैं अपनी पत्नी से अपने छोटे भाई, भतीजे और भानजी के सामने बात कर सकता, किन्तु अपनी बड़ी बहन,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

माता और पिता के सामने नहीं। मैं अपनी वहनों से उनके पति के संवंध में कोई बात नहीं कर सकता। बात यह है कि हिंदू धर्म के अनुसार समाज-संस्था का अंतिम आदर्श संन्यास ही है। इस सर्वोच्च एवं पवित्रतम आदर्श की तुलना में विवाह निम्न कोटि की चीज है; यद्यपि सापेक्षिक दृष्टि से सर्वोच्च आदर्श की ओर ले जानेवाला वह एक सोपान है। इसीलिए कुटुम्ब में दाम्पत्य-प्रेम संवंधी बातें करना निषिद्ध माना गया है। मैं अपनी वहन, अपने भाई, अपनी माता या दूसरों के सामने उपन्यास नहीं पढ़ सकता, मुझे पुस्तक वन्द कर देनी पड़ती है।

शिक्षा और संस्कृति की बात पुरुषों पर अवलंबित है, अर्थात् जहाँ के पुरुष शिक्षित और सुसंस्कृत हैं, वहाँ की स्त्रियाँ भी शिक्षिता और सभ्य हैं; जहाँ पुरुष सभ्य और शिक्षित नहीं, वहाँ स्त्रियाँ भी वैसी ही हैं। आप लोग जानते हैं कि पुराने जमाने से हिंदुओं के प्राचीन रीति-रिवाज के अनुसार, प्राथमिक शिक्षा ग्राम-पंचायत के अधीन है। अति प्राचीन काल से सारी भूमि राष्ट्र या राजा की समझी जाती है। भूमि पर व्यक्तिविशेष का कोई अधिकार नहीं होता। भारत में सारा राजस्व भूमि के लगान से ही आता है; क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति सरकार से ही भूमि पाता है। यह भूमि पाँच, दस, बीस या सौ परिवारों की साधारण सम्पत्ति के रूप में रहती है। वे ही भूमि की सारी व्यवस्था करते हैं, सरकार को मालगुजारी देते हैं, बीमारों की चिकित्सा के लिए एक वैद्य और वालक-वालिकाओं की शिक्षा के लिए एक शिक्षक का प्रबंध करते हैं, आदि, आदि।

एक वयोवृद्ध अध्यापक द्वारा पढ़ाई गई एक सदाचार की पुस्तक में से हमें एक पाठ कंठस्थ कराया गया था, जो मुझे आज तक स्मरण है :

"गाँव की भलाई के लिए मनुष्य अपने कुल को छोड़ दे।
देश की भलाई के लिए मनुष्य अपने गाँव को छोड़ दे।
मानव-समाज की भलाई के लिए मनुष्य अपने देश को छोड़ दे।
आत्म-कल्याण के लिए मनुष्य अपना सर्वस्व छोड़ दे।[1]

आजकल यूरोपीय ढंग पर उच्च शिक्षा देने की ओर लोगों का विशेष ध्यान है। स्त्रियों को भी ज्यादातर लोगों का मत यह उच्च शिक्षा देने के पक्ष में है। हाँ, भारत में कुछ ऐसे भी लोग हैं, जो यह पसन्द नहीं करते; पर प्रवल मत स्त्री-शिक्षा के पक्षपातियों का है। यह आश्चर्य की बात है कि आक्सफोर्ड और कैम्ब्रिज विश्वविद्यालयों के दरवाजे स्त्रियों के लिए आज भी वंद हैं। यही हालत हार्वर्ड और येल के विश्वविद्यालयों की हैं; पर हमारे यहाँ ऐसा नहीं है। मुझे स्मरण है, जिस साल मैं बी० ए० में उत्तीर्ण हुआ, उस साल कई लड़कियाँ भी बी० ए० में उत्तीर्ण हुई थीं। उनके लिए पाठ्य पुस्तकें और अन्यान्य विषय लड़कों के ही समान थे, फिर भी वहुत-सी लड़कियाँ बड़ी सफलतापूर्वक उत्तीर्ण हुईं। हमारे धर्म में तो स्त्रियों को शिक्षा देने का निषेध है ही नहीं। लड़कियों को इसी प्रकार पढ़ाना चाहिए, उन्हें इसी प्रकार शिक्षा देनी चाहिए। और पुराने ग्रंथों में तो हमें यह भी लिखा मिलता है कि विद्यापीठों में लड़के-लड़कियाँ दोनों ही जाते थे। पर बाद में सारे राष्ट्र की ही शिक्षा उपेक्षित हो गई।

१. त्यजेदेकं कुलस्यार्थे ग्रामस्यार्थे कुलं त्यजेत् ग्राम जनपदस्यार्थे आत्मार्थे पृथिवी त्यजेत् ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भारत का आदर्श है—आत्मा की मुक्ति। यह संसार असार है। यह केवल एक कल्पना है। एक स्वप्न है। यह जीवन ऐसे कई लाख जीवनों में से एक है। यह सारा विश्व ब्रह्मांड केवल माया है, मरीचिका है, मरीचिकाओं के कीड़ों का घर है। यही हमारा दर्शन है। बच्चे जीवन को देखकर प्रसन्न होते हैं और समझते हैं कि यह बड़ा सुन्दर और अच्छा है, किन्तु कुछ ही वर्षों के बाद उनका वह सुख-स्वप्न टूट जाता है। उन्होंने जीवन का आरम्भ किया था रोते हुए, और रोते ही हुए वे जीवन को छोड़ेंगे भी। राष्ट्र अपनी जवानी के जोश में समझते हैं कि हम सब कुछ कर सकते हैं—'हमीं पृथ्वी के देवता हैं, हमें ही ईश्वर ने चुना है।' वे सोचते हैं कि परमात्मा ने उन्हें संसार पर शासन करने, परमात्मा के कार्यों को आगे बढ़ाने, जो मन चाहे सो करने तथा दुनिया को उलट देने तक का अधिकार दिया है—लूटने, मारने और कत्ल करने की उन्हें छुट्टी दे दी है। वस्तुतः वे ऐसा इसलिए सोचते हैं कि वे केवल नासमझ बच्चे हैं। कितने साम्राज्यों पर साम्राज्य उठे, चमके और महिमान्वित हुए, और बाद में कहाँ विलीन हो गए, कौन जानता है ? सम्भवतः वे ध्वंस का एक विराट् स्तूप मात्र रह गये हों। "कमल के पत्ते

नलिनी दलगतजलमतितरलम्
तद्वज्जीवनमतिशयचपलम् ।

पर पड़ी हुई पानी की बूंद इतस्ततः डोलती हुई एक क्षण में जैसे गिर जाती जाती है, बस, वही हाल इस मृत्युशील जीवन का भी है।[१] जिस ओर हम घूमते हैं, नाश ही दिखाई पड़ता है। जहाँ आज जंगल है, वहाँ किसी जमाने में अनेक नगरों से पूर्ण कोई साम्राज्य रहा होगा।[२] भारतीयों के प्रधान भाव, विचार आदि इसी प्रकार के होते हैं। हम जानते हैं कि आप पाश्चात्यों की नसों में नौजवानी का खून दौड़ रहा है। किन्तु हम जानते हैं कि मनुष्यों की भाँति राष्ट्रों का भी समय होता है। इस समय यूनान कहाँ है, ? रोम कहाँ है, ? कल के शक्तिशाली स्पेन वाले आज कहाँ हैं ? इन सबको देखते हुए, कौन जानता है, भारत का आगे क्या होगा ?

भगवान् लंबी-चौड़ी बातों द्वारा नहीं मिलता। बौद्धिक शक्ति द्वारा भी वह नहीं मिलता विजेता की अतुल शक्ति द्वारा भी वह नहीं प्राप्त होता। पर जो व्यक्ति विश्व के मूल रहस्य को जानता है और यह समझता है कि उस परमात्मा के अतिरिक्त अन्य सभी कुछ नाशवान है, केवल उसी के पास परमात्मा प्रकट होता है, दूसरों के पास नहीं। भारत ने कई युगों की अनुभूति से यह पाठ सीखा है। उसने परमात्मा की ओर अपनी दृष्टि रखी है। अवश्य उसने बहुत-सी गलतियाँ की हैं, कूड़ों का ढेर उस जाति पर लदा है। किन्तु जिन जातियों में अच्छी-अच्छी संस्थाएँ हैं, वे भी तो मर जाती हैं। फिर पाँच दिनों में बनने वाली और छठवें दिन टूट जाने वाली इन दिखावटी पश्चिमी संस्थाओं की भला क्या बिसात ! इन मुट्ठी-भर राष्ट्रों में से एक भी तो दो शताब्दियों तक जीवित नहीं रह सकता। किन्तु हमारी जाति की संस्थाएँ युगों की कसौटी पर खरी उतरी हैं। हिंदुओं का कहना है—"हमने पृथ्वी के समस्त पुराने राष्ट्रों को दफना दिया है और सभी नये राष्ट्रों को भी दफना देने के लिये यहाँ खड़े हैं; क्योंकि हमारा

१. शंकराचार्यकृत 'मोहमुद्गर'.
२. पुरायत्र स्रोतस् पुलिनमधुना भवभूति।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लक्ष्य यह जगत् नहीं, वरन् जगदातीत है।" जैसा आपका आदर्श है, आप वैसे ही हो जाएँगे। यदि आपका आदर्श अनित्य है, पार्थिव है, तो आप वैसे ही हो जायेंगे। यदि आपका आदर्श जड़ है, तो आप भी जड़ हो जायंगे। स्मरण रहे, हमारा आदर्श है परमात्मा। एकमात्र वही अविनाशी है—अन्य किसी का अस्तित्व नहीं है; और उन अविनाशी परमात्मा की भाँति हम भी सदा जीवित रहेंगे।[२]

२. १८ जनवरी १९००, कैलीफ़ोर्निया के मेसेडेना स्थित शेक्सपियर क्लब में भारतीय नारी सम्बन्धी प्रश्नों के उत्तर में दिये गए भाषण के अंश

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

त्याग और तपस्या की मूर्ति

मो० क० गांधी

मैंने लिखा है कि स्त्री अहिंसा का अवतार है। अहिंसा का अर्थ है अनंत प्रेम। और अनंत प्रेम का अर्थ होता है कष्ट उठाने की असीम क्षमता। स्त्री को छोड़कर, जो पुरुष की माता है, इस प्रकार की क्षमता इतनी मात्रा में और कौन दिखाता है। नौ महीने तक बच्चे को पेट में रखकर और उसे अपना रक्त पिलाकर वह अपनी क्षमता प्रदर्शित करती है और इस कष्ट-सहन में आनंद मानती है। प्रसव-वेदना में जो पीड़ा होती है, उससे बढ़कर और कौन-सी पीड़ा हो सकती है; मगर वह संतान को जन्म देने की खुशी में उसे भूल जाती है। और फिर दिन-प्रतिदिन बच्चे को बड़ा करने में जो कष्ट वह उठाती है, सो और कौन उठा सकता है। आवश्यकता इस बात की है कि वह अपना प्रेम मानव जाति को बाँट दे, यह भूल जाय कि वह पुरुष के भोग की वस्तु थी अथवा हो सकती है। और तब वह पुरुष से बढ़कर—उसकी माता, उसका निर्माण करने वाली और उसका मूल पथप्रदर्शक होने का गौरवपूर्ण पद धारण कर लेगी। युद्ध में फँसी हुई दुनिया को शांति की कला सिखाने का काम भगवान ने स्त्री पर सौंपा है। सारी दुनिया शांति-रूपी अमृत के लिए तड़प रही है। वह सत्याग्रह की नेत्री बन सकती है, उसके लिए पुस्तकों के अर्जित ज्ञान की आवश्यकता नहीं है, बल्कि कष्ट-सहन और श्रद्धा से निर्मित बलवान हृदय की आवश्यकता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बरसों पहले सैसून अस्पताल पूना में जब मैं बीमार पड़ा था, तब मेरी चारुशीला नर्स ने एक स्त्री की कहानी सुनाई थी जिसने क्लोरोफार्म लेने से इंकार कर दिया था, क्योंकि उसके पेट में बच्चा था और वह उसकी जान खतरे में नहीं डालना चाहती थी। उस स्त्री को एक कष्टप्रद चीरा लगवाना था। उसके लिए बेहोशी की दवा आवश्यक थी। अपने बच्चे को बचाने के लिए वह बड़े से बड़ा कष्ट सहने को तैयार थी।[1]

यह आवश्यक है कि हम समझ लें कि स्त्रियों के सुधार की जो बातें हम करते हैं, उनका अर्थ क्या है। इनका अर्थ हैं कि हम पहले से मान लेते हैं कि स्त्रियों का पतन हुआ है। अगर यह सही है तो हमें इससे आगे विचार करना चाहिए कि यह पतन किस कारण हुआ और किस प्रकार हुआ। इन बातों पर गंभीर रूप से विचार करना हमारा प्राथमिक कर्तव्य है। सम्पूर्ण हिंदुस्तान की यात्रा करके, मुझे यह अनुभव हुआ है कि सारा वर्तमान आन्दोलन हमारे देशवासियों के एक बहुत ही नगण्य भाग तक सीमित है। यह भाव इस विस्तृत नभोमण्डल में एक बिंदु के समान है। हमारे देश के करोड़ों स्त्री-पुरुषों का जीवन इस आंदोलन की जरा-सी भी जानकारी के बिना बीतता है। इस देश के ८५ प्रतिशत लोग दुनिया से अलग रह कर अपना जीवन बिताते हैं। इन्हें पता नहीं रहता कि इनके चारों ओर दुनिया में क्या हो रहा है। पर ये स्त्री और पुरुष, अशिक्षित होते हुए भी, अपना जीवन सुचारु और समुचित रीति से बिताते हैं। इन्हें लगभग एक समान शिक्षा मिलती है अथवा यह कहना ठीक होगा कि समान रूप से ये शिक्षा से दूर रहते हैं। लेकिन जीवन में दोनों एक-दूसरे की सहायता करते हैं, जैसा कि उन्हें करना चाहिए। यदि उनका जीवन किसी भी अंश में अपूर्ण है तो इसका कारण बाकी १५ प्रतिशत लोगों के जीवन की अपूर्णता में खोजा जा सकता है। अगर शिक्षित समाज की हमारी बहनें हमारे देशवासियों के ८५ प्रतिशत लोगों के जीवन का अध्ययन करें तो उन्हें समाज के सुंदर कार्यक्रम चलाने के लिए यथेष्ट सामग्री मिलेगी।

मैं जो विचार प्रकट करने जा रहा हूँ, वह केवल उपर्युक्त १५ प्रतिशत लोगों तक सीमित रखूंगा। ऐसा करने पर मेरे लिए स्त्री और पुरुषों की समान कठिनाइयों पर कुछ विचार करना अप्रासंगिक होगा। हमारे सामने विचारणीय विषय है, पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों का सुधार। कानून बनाने में अधिकतर पुरुषों का हाथ रहा है और पुरुष इस स्वनियोजित कार्य को पूरा करने में सदा न्यायशील और विवेकशील नहीं रहा है। स्त्रियों के सुधार में, हमारी सबसे अधिक कोशिश यह होनी चाहिए कि हमारे शास्त्रों में 'स्त्रियों का जातीय स्वभाव' कहकर उनपर जो दोषारोपण किये गये हैं, उन्हें हम दूर करें। यह उद्योग कौन करेगा और किस प्रकार करेगा ? मेरी नम्र सम्मति में, इस प्रकार का उद्योग करने के लिए हमें सीता, दमयंती और द्रौपदी-जैसी पवित्र, दृढ़ और आत्मसंयमी स्त्रियाँ उत्पन्न करनी होंगी। यदि हम ऐसी स्त्रियाँ उत्पन्न करेंगे तो हमारी आधुनिक बहिनों की भी हिंदू समाज में उसी प्रकार प्रशंसा होगी जिस प्रकार उनकी प्राचीन प्रतिमूर्तियों की होती है। उनके वचन उसी प्रकार प्रामाणिक माने जायेंगे, जिस प्रकार शास्त्रों के वचन प्रामाणिक माने जाते हैं। हमारे स्मृति-शास्त्रों में उन पर

१. हरिजन, २४-२-१७४०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यदा-कदा जो आक्षेप किये गए हैं, उनपर हमें लाज आयेगी, और हम शीघ्र ही उन्हें भूल जायेंगे। इस प्रकार की क्रांतियाँ हिंदू-धर्म में अतीत काल में भी हो चुकी हैं और भविष्य में भी होगीं, जिससे धर्म में हमारा विश्वास मजबूत होगा। मेरी ईश्वर से प्रार्थना है कि यह समाज शीघ्र ही ऐसी स्त्रियाँ उत्पन्न करे।

हम स्त्रियों के पतन के मूल कारण पर विचार कर चुके। हम उस आदर्श पर भी विचार कर चुके, जिसे पूरा करके हम अपने देश की स्त्रियों की वर्तमान अवस्था में सुधार कर सकते हैं। अवश्य ही ऐसी स्त्रियों की संख्या, जो उस आदर्श को पूरा कर सकेंगी, थोड़ी होगी; इसलिए अब हम इस बात पर विचार करेंगे कि यदि कोशिश की जाए तो साधारण स्त्रियाँ क्या कर सकती हैं। पहिले कोशिश यह की जानी चाहिए कि जहाँ तक हो सके अधिक से अधिक संख्या में स्त्रियों को उनकी वर्तमान अवस्था का बोध कराया जाय। मैं उन लोगों में नहीं हूँ, जिनका विश्वास है कि यह कोशिश शिक्षा-द्वारा ही हो सकती है। इस आधार पर काम करने का अर्थ यह होगा कि हम अपने ध्येय की पूर्ति अनिश्चित काल तक के लिए स्थगित कर देंगे। मैंने पग-पग पर अनुभव किया है कि इतने काल तक प्रतीक्षा करना आवश्यक नहीं है। हम स्त्रियों को शिक्षा दिये बगैर भी भलीभाँति समझा सकते हैं कि उनकी वर्तमान अवस्था कितनी शोचनीय है। स्त्री-पुरुष की सहभागिनी है। वह बुद्धि में पुरुष से तुच्छ नहीं है, उसे पुरुष के हर छोटे-बड़े काम में भाग लेने का अधिकार है। उसे पुरुष की ही भाँति समानता स्वाधीनता और स्वतंत्रता पाने का अधिकार है। उसे अपने कार्यक्षेत्र में उसी प्रकार पूर्ण अधिकार प्राप्त है, जिस प्रकार पुरुष को अपने कार्यक्षेत्र में पूर्ण अधिकार प्राप्त है। यह एक साधारण-सी बात होनी चाहिए, केवल पढ़ी और लिखी होने के फलस्वरूप नहीं केवल एक दूषित प्रथा के बल पर मूर्ख-से-मूर्ख और अयोग्य-से-अयोग्य पुरुष तक स्त्रियों के ऊपर श्रेष्ठता पर प्राप्त करते आये हैं, गोकि इसके वे अधिकारी नहीं हैं और ऐसा अधिकार उन्हें नहीं मिलना चाहिए। हमारे बहुत से आन्दोलन स्त्रियों की शोचनीय अवस्था के ही कारण पूरी तौर से सफल नहीं हो पाते। हमारे बहुत से कामों का इच्छित फल नहीं होता। हमारी स्थिति 'अशर्फियाँ लुटें पर कोयले पर मुहर' का अनुकरण करने वाले व्यापारी की तरह है, जो फिजूल बातों में तो धन लुटाता है पर छोटी आवश्यक बातों में कंजूसी कर जाता है और अपने व्यापार में, अपने व्यवसाय में यथेष्ट पूंजी नहीं लगाता।

यह ठीक है कि लिखना और पढ़ना जाने बिना भी बहुत-सा उत्तम और लाभप्रद काम किया जा सकता है, फिर भी मेरा पक्का विश्वास है कि आप लिखना और पढ़ना सीखे बिना ज्यादा कुछ नहीं कर सकतीं। लिखना-पढ़ना सीख लेने से बुद्धि पैनी हो जाती है और सत्कार्यों के करने का उत्साह मिलता है। मैंने कभी लिखने और पढ़ने की जानकारी को अनावश्यक रूप में महत्त्व नहीं दिया है किन्तु मैं उनको उसका उचित स्थान देता रहा हूँ। मैंने बार-बार कहा हैं कि पुरुषों के लिए यह उचित नहीं है कि वे अशिक्षा के आधार पर स्त्रियों को समानाधिकार से वंचित रखें; लेकिन स्त्रियों के लिए शिक्षा आवश्यक है, जिससे वे इन प्राकृतिक अधिकारों को बनाए रखने, इनमें सुधार करने तथा इनका प्रचार करने में समर्थ हो सकें। शिक्षा आवश्यक इसलिए भी है कि इसके बिना सच्चा आत्म-ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता। यह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कहने में अत्युक्ति न होगी कि शिक्षाविहीन मनुष्य से पशु में वहुत थोड़ा अंतर रहता है। इसलिए शिक्षा स्त्रियों के लिए भी उतनी जरूरी है, जितनी पुरुषों के लिए है। यह जरूरी नहीं है कि दोनों की शिक्षा-प्रणाली समान हो। पहले तो सरकारी शिक्षा-प्रणाली गलतियों से भरी है और कितनी ही बुराइयाँ उत्पन्न करने वाली है। स्त्री और पुरुष, दोनों को, यह त्याग देनी चाहिए। यदि इस प्रणाली में वर्तमान बुराइयाँ न भी होतीं, तब भी मैं इसे स्त्रियों के लिए सभी दृष्टियों से उचित न समझता। स्त्री और पुरुष का दर्जा बरावर है, पर दोनों एक समान नहीं हैं। दोनों की एक सुंदर जोड़ी है, वे एक दूसरे की पूरक हैं। दोनों एक दूसरे की सहायता करते हैं, अतः एक के बिना दूसरे की सत्ता की कल्पना नहीं की जा सकती। इन वातों से यह सिद्धांत स्वभावतः निकलता है कि ऐसी कोई भी चीज, जो उनमें से किसी के पद को क्षीण करेगी, दोनों के लिए समान रूप से घातक होगी। स्त्रियों की शिक्षा की कोई भी योजना तैयार करते समय, यह प्रधान सत्य सदैव ध्यान में रखना चाहिए। पुरुष सांसारिक कार्यक्षेत्र में प्रधान रहता है, इसलिए यह उचित ही है कि उसे संसार की अधिक जानकारी चाहिए। दूसरी ओर गृह जीवन पूर्णरूप से स्त्रियों का क्षेत्र है, इसलिए घरेलू काम-काज के संबंध में, बच्चों की शिक्षा और उनके पालन-पोषण के संवंध में स्त्रियों को अधिक जानकारी होनी चाहिए। यह बात नहीं है कि ज्ञान को ऐसे विभागों में बाँट दिया जाय कि एक का संबंध दूसरे से न रहे, अथवा ज्ञान की कोई शाखा किसी के लिए वंद रखी जाय, लेकिन जव तक शिक्षा का क्रम इन मूलभूत सिद्धांतों के आधार पर न होगा, पुरुष और स्त्री का पूर्ण विकास नहीं हो सकेगा।

मैं थोड़े से शब्द इस संवंध में कहूँगा कि हमारे देश की स्त्रियों के लिए अंग्रेजी शिक्षा आवश्यक है अथवा नहीं। मैं इस विचार पर पहुँचा हूँ कि साधारण जीवन में, न हमारे देश के पुरुषों को और न स्त्रियों को अंग्रेजी की जानकारी की आवश्यकता है। यह सच है कि आज जीविका के लिए तथा राजनीतिक आंदोलनों में सक्रिय भाग लेने के लिए अंग्रेजी आवश्यक है। मैं स्त्रियों के जीविका उपार्जित करने पर अथवा व्यवसाय करने पर विश्वास नहीं करता। थोड़ी-सी स्त्रियाँ हो सकती हैं जिन्हें अंग्रेजी की शिक्षा आवश्यक होगी, अथवा जो अंग्रेजी शिक्षा चाहेंगी।[१]

किन्तु जिसके लगती है वही जानता है कि पीड़ा कहाँ हो रही है। इसीलिए अंततोगत्वा स्त्रियों को ही अधिकारपूर्वक निर्णय करना होगा कि वे क्या चाहती हैं। मेरी अपनी राय यह है कि जैसे मूल में स्त्री और पुरुष एक हैं वैसे ही उनकी समस्या भी तात्त्विक रूप में एक ही है। दोनों में एक ही आत्मा है। दोनों एक ही प्रकार का जीवन बिताते हैं, दोनों में एक ही प्रकार की भावनाएँ होती हैं। दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं, एक की सक्रिय सहायता के बिना दूसरा जी नहीं सकता। मगर, किसी न किसी उपाय तरह पुरुष दीर्घकाल से स्त्री पर आधिपत्य रखे है और इसलिए स्त्री में हीनता की भावना आ गई है। पुरुष ने स्वार्थवश स्त्री को यह सिखाया है कि वह उससे नीची है और स्त्री ने इसे सच मान लिया है। पर ज्ञानी पुरुषों ने उसका बराबर का दर्जा स्वीकार किया है।

१. स्पीचेज एंड राइटिंग्ज ऑफ़ महात्मा गांधी; २०-२-१६१०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फिर भी इसमें कोई शक नहीं कि दोनों एक जगह पहुँच कर अलग-अलग हो जाते हैं। जहाँ यह बात सच है कि दोनों मूल में एक हैं, वहाँ यह बात भी उतनी ही सच है कि दोनों की शरीर-रचना में बहुत अंतर है। इसलिए दोनों के कार्य भी अलग-अलग होने चाहिए। मातृत्व के कर्त्तव्यों को पूरा करने को, जिसके लिए अधिकाँश स्त्रियाँ सदा तैयारी रहेंगी, जिन गुणों की आवश्यकता है उनका पुरुषों में होना जरूरी नहीं है। स्त्री निष्क्रिय (पैसिव) होती है और पुरुष सक्रिय (एक्टिव) होता है। स्त्री स्वभाव से घर की स्वामिनी होती है। पुरुष कमाता है, स्त्री उस कमाई का उपयोग करती है और घर के लोगों को रोटी देती है। वह हर तरह से पालनहार है। मानवजाति के दुधमुँहे बच्चों को पाल-पोसकर बड़ा करना उसका विशेष और एकमात्र अधिकार है। वह सार-संभाल न करें तो मानवजाति नष्ट हो जाय।

मेरे मत में स्त्री को घर छोड़कर घर की रक्षा के निमित्त कंधे पर बन्दूक धरने के लिए आह्वान करने अथवा इसके लिए उसे प्रोत्साहित करने में स्त्री और पुरुष, दोनों का ही पतन है। वह तो फिर से जंगली बनना और विनाश का आरम्भ हुआ। जिस घोड़े पर पुरुष सवार है, उसी पर स्त्री भी सवार होने का प्रयत्न करके अपने को तो गिराती ही है, पुरुष को भी गिरा देती है। पुरुष यदि अपनी सहचरी को अपना विशेष क्षेत्र छोड़कर भागने का प्रलोभन दिखाएगा अथवा इसके लिए उसे मजबूर करेगा तो इसका पाप उसीके सिर होगा। अपने घर को सुव्यवस्थित और सुदशा में रखने में भी उतनी ही वीरता है, जितनी बाहर से उसकी रक्षा करने में है।

मैं करोड़ों किसानों को उनके स्वाभाविक वातावरण में देख चुका हूँ और छोटे गाँव में भी जब उन्हें रोज देखता हूँ तो मेरा ध्यान बरबस उनके कार्यक्षेत्र के स्वाभाविक विभाजन की ओर जाता है। कोई भी स्त्री लुहार अथवा बढ़ई नहीं। लेकिन खेतों में स्त्री और पुरुष दोनों काम करते हैं।[1]

यों स्त्रियों के अधिकारों के बारे में मैं ज़रा भी झुकने को तैयार नहीं हूँ। मेरे मतानुसार कानून को स्त्री और पुरुष के बीच किसी भी प्रकार की असमानता नहीं रहनी चाहिए। हमें लड़के और लड़की के बीच किसी तरह का भेदभाव नहीं करना चाहिए। जैसे-जैसे स्त्री जाति को शिक्षा-द्वारा अपनी शक्ति का भान होता जायेगा, वैसे-वैसे उसके साथ, आज जो असम व्यवहार किया जाता है उसका अधिकाधिक उग्र विरोध होगा। लेकिन पक्षपात से भरे कानूनों के सुधार से इस स्थिति में बहुत थोड़ा परिवर्तन होगा। इस व्याधि की जड़ जैसा कि लोग समझते हैं उससे कहीं अधिक गहरी है। पुरुष का सत्ता और कीर्ति के लिए लोलुप होना इसका मूल कारण है और इससे भी बढ़कर कारण स्त्री-पुरुष की परस्पर विषय-वासना है। दूसरे, पुरुष मरने के बाद अपनी कल्पित अमरता की अपेक्षा रखता है, अतएव अगर सब सन्तानों में समान रूप से सम्पति का बंटवारा हो जाय तो वह टुकड़े-टुकड़े हो जाय और इस कारण पुरुष का नाम अमर न रह सके। इसी भय से बड़े लड़के को सारी सम्पति नहीं तो उसका बड़ा भाग विरासत में अवश्य मिलना चाहिए। अधिकाँश स्त्रियाँ विवाहिता होती हैं और कानून उनके विरुद्ध

१ हरिजन २४-२-१६४०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होते हुए भी वे अपने पतियों की सत्ता और अधिकार में पूरी तरह हाथ बँटाती हैं तथा अपने को अपने श्रीमान् पति की श्रीमती अमुक कहलाने में आनंद और गर्व का अनुभव करती हैं। अतएव सैद्धान्तिक चर्चा के समय पक्षपात भरे कानून के संबंध में क्रांतिकारी परिवर्तनों के लिए भले ही वे अपना मत दें, लेकिन जब तदनुसार आचरण का अवसर आता है तब वे भी अपनी सत्ता और अपने अधिकार को छोड़ना नहीं चाहतीं।

इस कारण यद्यपि मैं इस बात का हमेशा समर्थक रहा हूँ कि स्त्री-जाति पर से कानून के सारे बंधन हटा दिये जाने चाहिए तथापि जब तक भारत की पढ़ी-लिखी सुशिक्षित बहनें इस व्याधि के मूल कारण को मिटाने के लिए प्रयत्न नहीं करतीं, तब तक हल मुश्किल ही है। मैं उनसे नम्रतापूर्वक प्रार्थना करता हूँ कि वे इसके लिए प्रयत्न करें। मेरे मत में तो स्त्री त्याग और तपश्चर्या की साक्षात् मूर्ति है। सार्वजनिक जीवन में उसके प्रवेश के दो फल होने चाहिए, एक वातावरण की पवित्रता और दूसरा, पुरुष के सम्पत्ति-संग्रह के लोभ पर अंकुश का रहना। उन्हें जानना चाहिए कि लाखों के पास तो विरासत में छोड़ जाने योग्य कोई संपति नहीं होती। इन लाखों से श्रीमंत-वर्ग की स्त्रियों को यह सीखना चाहिए कि संपति की विरासत स्वेच्छा से छोड़ने और अपने उदाहरण द्वारा दूसरों से छुड़वाने में उनका श्रेय है। माता-पिता अपनी संतान को जो चीज समान रूप से विरासत में दे सकते हैं वह तो सिर्फ चारित्र्य और शिक्षा के साधन ही हैं अतएव माता-पिता को चाहिए कि वे अपनी सन्तान को स्वावलंबी बनायें, जिससे स्वयं परिश्रम करके वे पवित्र जीवन बिता सकें।[1]

नियमतः मैं स्त्री के लिए पति से स्वतंत्र आजीविका की कल्पना नहीं करता। बच्चों का पालन-पोषण और गृहस्थी की देखभाल उसकी सारी शक्ति के व्यय कर डालने के लिए काफी है। एक सुनियमित समाज में उस पर गृहस्थी के खर्च का प्रबंध करने का अतिरिक्त भार नहीं पड़ना चाहिए। पुरुष को गृहस्थी के खर्च का प्रबंध करना चाहिए और स्त्री को गृहस्थी का प्रबंध करना चाहिए। इस प्रकार दोनों एक-दूसरे के श्रम की पूर्ति करेंगे।

इसमें मैं स्त्री के अधिकार पर किसी प्रकार का आक्रमण अथवा उसकी स्वाधीनता का दमन नहीं देखता। मनु के नाम पर जो उक्ति प्रचलित है कि "स्त्री को कभी स्वाधीनता नहीं मिलनी चाहिए", उसे मैं अनुल्लंघनीय नहीं मानता। उससे केवल यही प्रकट होता है कि जिस समय वह कही गयी थी उस समय स्त्रियाँ पराधीन रखी जाती थीं। हमारे ग्रंथों में पत्नी के लिए अर्धांगिनी और सहधर्मिणी विशेषण प्रयुक्त हुए हैं। पति अपनी पत्नी को देवी संबोधित करता है, जिससे प्रकट होता है कि उसका दर्जा नीचा नहीं था। पर अभाग्य से, एक ऐसा समय आया, जब स्त्री अपने बहुत से अधिकार और विशेषाधिकारों से वंचित कर दी गयी और नीचे के दर्जे में उतार दी गयी। लेकिन उसके वर्ण के पतित होने का कोई सवाल ही नहीं उठता, क्योंकि वर्ण से अधिकारों तथा विशेषाधिकारों की किसी राशि का बोध नहीं होता, वर्ण तो कर्तव्यों तथा स्वधर्म का निर्देश करता है। और हमें कोई भी अपने कर्तव्यों से वंचित नहीं कर सकता, जब तक हम स्वयं उनसे पीछे न हट जायें। जो स्त्री अपने कर्तव्यों का ज्ञान रखती है और

१. हिन्दी नवजीवन ७-१-१९२९

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उनका पालन करती है, वह अपनी गौरवमयी अवस्था को भली-भाँति समझती है। वह जिस गृहस्थी को चलाती है, उसकी स्वामिनी होती है, दासी नहीं।[१]

हिंदू संस्कृति ने स्त्री को अत्यधिक बंधन में डालकर और उसे पति के सर्वथा अधीन रखकर बड़ी भारी भूल की है। इसके कारण पति कभी-कभी अपने अधिकार का दुरुपयोग करता है और पशुवत् व्यवहार करने पर उतारू हो जाते हैं। इस तरह के अत्याचार का उपाय कानून का आश्रय लेने में नहीं बल्कि विवाहिता स्त्रियों को सच्चे अर्थ में सुशिक्षित बनाने और पतियों के अमानुषी अत्याचार के विरुद्ध लोकमत जाग्रत करने में है। ऐसे मामलों में जिस उपाय से काम लेना चाहिए वह अत्यन्त सरल है। किसी संकट ग्रस्त बहिन और उसके पुत्र को देखकर रोने या अपनी बेबसी का अनुभव करने के बजाय उसके भाई और दूसरे रिश्तेदारों को चाहिए कि वे उसकी रक्षा करें, उसे यह समझायें सिखायें और विश्वास दिलायें कि एक पापी-दुराचारी पति की खुशामद करना या उसकी संगति की आशा रखना पत्नी का कर्तव्य नही है। यह तो स्पष्ट है कि ऐसा पति उसकी जरा भी चिंता नहीं करता, तनिक भी परवाह नहीं रखता। अतएव कानूनी बंधन को तोड़े बिना ही वह अपने पति से अलग रह सकती है और अपने आप यह अनुभव कर सकती है कि उसका व्याह कभी हुआ ही नहीं। अवश्य ही एक हिंदू पत्नी के लिए जो तलाक नहीं दे सकती, इस संबंध में कानून की रू से भी दो मार्ग खुले हैं, एक मारपीट करने के कारण पति को सजा दिलाने और दूसरा उससे जीविका के लिए आजीवन सहायता पाने का। लेकिन अनुभव से मुझे पता चला है कि सर्वथा नहीं तो बहुधा अवश्य ही ये उपाय निरर्थक से भी बुरे सिद्ध हुए हैं। उनके कारण किसी भी सती स्त्री को कभी सुख नहीं मिला, उल्टे पति का सुधार असंभव नहीं तो कष्टसाध्य अवश्य बन गया है। समाज को इस रास्ते कदापि नहीं जाना चाहिए, पत्नी को तो किसी भी हालत में नहीं। ऐसे मामले में यदि लड़की के माता-पिता उसका निर्वाह करने में सब तरह समर्थ न हों, सताई हुई स्त्रियों को यह आश्रय प्राप्त न हो, तो उन्हें भी आश्रय देने वाली अनेक संस्थायें देश में दिन-दिन बढ़ रही हैं। एक और प्रश्न रह जाता है, वे युवती स्त्रियाँ, जो अपने क्रूर पति का साथ छोड़कर अलग हो जाती हैं, या जिन्हें पति स्वयं घर से निकाल देते हैं और जो तलाक से मिलनेवाली सुविधा प्राप्त नहीं कर सकतीं, अपनी विषयेच्छा कैसे तृप्त करेंगी। मेरे विचार में यह कोई इतना गंभीर प्रश्न नहीं है, क्योंकि जिस समाज ने युगों से तलाक की प्रथा को त्याज्य मान रखा है, उस समाज की स्त्रियाँ एक बार वैवाहिक जीवन का कटु अनुभव पा लेने पर दुबारा विवाह करना ही नहीं चाहतीं। दूषित कल्पना के कारण शोक और दुख का जो साम्राज्य समाज में फैला हुआ है वह थोड़े से मौलिक विचार और नया दृष्टिकोण पाते ही नष्ट हो जायेगा।[२]

यह सोचकर दुख होता है कि स्मृतियों में ऐसे श्लोक हैं, जिन पर उन पुरुषों की श्रद्धा नहीं हो सकती जो अपनी ही भाँति स्त्री की स्वाधीनता की कामना करते हैं और उसे समस्त जाति की माता मानते हैं। दुख यह सोचकर और बढ़ जाता है कि सनातनियों की ओर से प्रकाशित

२. हरिजन १२-१०-१९३४
१. हिन्दी नवजीवन, ३-१०-१९२४

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पत्रों में ये श्लोक इस प्रकार छपते हैं जैसे वे धर्म के अंग हों। वेशक स्मृतियों में ऐसे श्लोक भी हैं जो स्त्री को उसका उचित स्थान प्रदान करते हैं और उसे आदर की दृष्टि से देखते हैं। प्रश्न उठता है कि उन स्मृतियों का क्या किया जाय, जिनमें ऐसे श्लोक हैं जो उसी में दिये हुए अन्य श्लोकों के विपरीत और नैतिक भावना के विरुद्ध हैं। मैं अनेक वार लिख चुका हूँ कि धर्मग्रंथों के नाम पर जो कुछ छपता है, उसमें सभी को ईश्वर की वाणी अथवा देववाणी के रूप में नहीं लेना चाहिए। लेकिन हर कोई यह तय नहीं कर सकता कि कौन-सी बात अच्छी और प्रामाणिक है तथा कौन बात बुरी और प्रक्षिप्त है इसीलिए एक ऐसी अधिकारी संस्था की आवश्यकता है जो धर्मग्रंथों के नाम पर जो सब छपा है, उसका संशोधन करे, ऐसे श्लोकों को काट-छाँट दे जिसका कोई मूल्य नहीं है और जो धर्म और नीति के मूल के विरुद्ध हैं तथा ऐसा संस्करण हिंदुओं के पथ-प्रदर्शन के लिये उपस्थित करे। यह विचार इस पवित्र कार्य के मार्ग में बाधक न होना चाहिए कि सर्वसाधारण हिंदू और धार्मिक नेता माने जाने वाले व्यक्ति ऐसी संस्था की बात प्रामाणिक नहीं मानेंगे। जो काम सचाई से और सेवा भाव से किया जायेगा वह समय बीतने पर, अपना प्रभाव डालेगा और निश्चय ही उन लोगों की सहायता करेगा जिन्हें इस प्रकार की सहायता की बड़ी ज़रूरत है।[1]

अनेक लोग इस दिशा में, व्यक्तिगत रूप से भी और सामूहिक रूप से भी, बहुत काम कर रहे हैं। पर इस बुराई की जड़ ऊपर से देखने में जितनी मालूम पड़ती है उससे कहीं अधिक गहरी है। केवल स्त्रियों की शिक्षा का ही दोष नहीं है, हमारी सारी शिक्षा-प्रणाली दूषित है। इसलिए इस या उस प्रथा की निन्दा की आवश्यकता नहीं है। आवश्यकता इस बात की है कि बुराई को स्वीकार करते हुए भी उसे दूर करने की चेष्टा न करने की जो जड़ता इसमें आ गई है, वह दूर की जाय। और अन्त में जिन कुरीतियों की निन्दा की गई है वे मध्यम वर्ग तक, नगर-निवासियों तक अर्थात् भारत की करोड़ों की आबादी में मुश्किल से १५वीं सदी लोगों तक, सीमित हैं। गाँव में रहने वाली अधिकांश जनता में न तो बाल-विवाह है और न विधवा-विवाह का निषेध है। सच यह है कि उसमें अन्य बुराइयाँ हैं, जो उसकी उन्नति में बाधक हैं। पर जड़ता दोनों में एक-सी है। आवश्यकता इस बात की है कि शिक्षा-प्रणाली में काया-पलट हो और ऐसी शिक्षा-प्रणाली तैयार हो जो सार्वजनिक हो। जिस शिक्षा-प्रणाली में बालकों के ही समान प्रौढ़ों की शिक्षा पर ज़ोर नहीं दिया जायेगा वह असफल होगी। जिस शिक्षा-प्रणाली में मातृभाषा को अपना स्वाभाविक अग्रस्थान नहीं मिलता उसने, कहना चाहिए, शिक्षण-समस्या को छुआ तक नहीं है। यह काम आज का जैसा भी शिक्षित वर्ग है उसी के द्वारा हो सकता है। इसलिए बड़े पैमाने पर सुधार होने से पहले शिक्षित वर्ग की मनोवृत्ति में परिवर्तन होना जरूरी है। और मैं कह देना चाहता हूँ कि भारत में जो थोड़ी-सी शिक्षित स्त्रियाँ हैं, उन्हें पाश्चात्य सभ्यता की चोटी से उतरकर भारत के मैदानों में आना पड़ेगा। स्त्रियों की उपेक्षा के लिए, या कहो कि स्त्रियों के दुरुपयोग के लिए, निस्सन्देह पुरुष दोषी हैं और इसके लिए उन्हें उचित प्रायश्चित करना चाहिए, लेकिन सुधार का रचनात्मक

१. हरिजन, २८-११-१९३६

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कार्य तो उन बहिनों को ही करना होगा जिन्होंने मिथ्या विश्वासों का उतार फेंका है और जो जानती हैं कि स्त्रियों के साथ क्या अत्याचार हुए हैं। स्त्रियों की आजादी का, भारत की आजादी का, छूआछूत दूर करने का, लोगों की आर्थिक अवस्था सुधारने आदि का कोई भी सवाल ले लीजिए, सब सवाल एक ही सवाल में मिल जाते हैं और वह सवाल गाँव में घुसने और ग्रामीण जीवन का पुनर्संघटन अथवा सुधार करने का है।[१]

मैं सीता को आदर्श पत्नी और राम को आदर्श पति मानता हूँ। सीता राम की गुलाम नहीं थीं। अथवा दोनों एक-दूसरे के गुलाम थे। राम सदा सीता का ध्यान रखते हैं। जहाँ सच्चा प्रेम होता है वहाँ यह प्रश्न उठता ही नहीं है। और जहाँ सच्चा प्रेम नहीं होता, वहाँ किसी प्रकार का वंधन कभी रहा ही नहीं है। आजकल की हिन्दू गृहस्थी एक जटिल पहेली है। पति और पत्नी, विवाह हो जाने के बाद भी, एक-दूसरे के बारे में कुछ नहीं जानते। शास्त्राज्ञा, रीति-रिवाज तथा दम्पतियों की निष्कंटक जिन्दगी अधिकांश हिन्दू घरों में शान्ति बनाए रखती है। लेकिन जब पति अथवा पत्नी में से किसी के विचार साधारण प्रचलित विचारों से भिन्न होते हैं तो खटपट हो जाने का भय रहता है। पति की बात यह है कि उसे कर्तव्याकर्तव्य की चिन्ता नहीं सताती। वह यह नहीं सोचता कि अपनी जीवन-सहचरी से भी परामर्श ले लेना उसका कर्तव्य है। वह अपनी भार्या को अपनी सम्पत्ति मानता है। और बेचारी पत्नी, जो अपने पति के दावे पर विश्वास करती है, बहुधा अपने को दबा लिया करती है। पर मैं समझता हूँ कि इस स्थिति से उबरने का रास्ता है। मीराबाई ने यह मार्ग दिखा दिया है। जब पत्नी अपने को सही समझे और कोई महत् उद्देश्य लेकर पति का विरोध करे तव उसे पूरा अधिकार है कि वह अपने चुने हुए मार्ग पर चले और परिणाम का नम्रता और वीरता के साथ सामना करे।[२]

२. हिन्दी नवजीवन, ३० मई, १९२९

२. हिन्दी नवजीवन, २२. १०. १९२६

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नवसृजन का युग और नारी

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

मानव-सृष्टि में नारी का आविर्भाव बहुत प्राचीन है। मनुष्य-समाज में नारी-शक्ति को आद्या शक्ति कहा जा सकता है। यही वह शक्ति है जो जीव लोक में प्राण को वहन करती है और उसका पोषण करती है।

पृथ्वी को जीवों के रहनेयोग्य बनाने को लिए प्रकृति को ढलाई-पिटाई करते अनेक युग बीत चुके थे। यह काम अभी आधा ही हुआ होगा कि प्रकृति ने जीवों की सृष्टि करना आरम्भ कर दिया और धरती पर वेदना उतर आयी। प्रकृति ने प्राण-साधना की वेदना की वही आदिम वृत्ति नारी के रक्त और हृदय में भर दी है। उसने जीव के पालन के समूचे प्रवृत्ति-जाल को प्रबलतापूर्वक नारी के मन और देह के प्रत्येक तन्तु के साथ जोड़ दिया है। उक्त प्रवृत्ति को स्वभावतः चित्तवृत्ति की अपेक्षा हृदय की वृत्ति में ही गम्भीर और प्रशस्त भाव से स्थान मिला है। नारी के भीतर की यह प्रवृत्ति वही है जो प्रेम, स्नेह और सकरुण धैर्य के साथ स्वयं उसे और अन्य को जकड़े रहने के लिए बन्धन-जाल बुनती है। मानव-संसार का पालन-पोषण करने, उसे बाँधे रखने का यह बंधन आदिम है। यह वही संसार है जो सभी समाजों, सभी सभ्यताओं का मूल आधार है। यदि संसार को बाँधे रखने वाला यह बंधन न होता तो मनुष्य आकार-प्रकारहीन वाष्प की भाँति बिखर जाता; वह भली-भाँति केन्द्रीभूत होकर कहीं मिलन-केन्द्र

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्थापित न कर पाता। समाज को बाँधने का यह पहला काम नारियों का है।

प्रकृति की सम्पूर्णसृष्टि-प्रक्रिया अथाह रूप से गोपनीय है, उसकी स्वतः प्रवर्त्तन की क्रिया द्विधाहीन है। आदिप्राण की यह सहज प्रवर्त्तना नारी के स्वभाव में है। इसीलिए मनुष्य ने नारी-स्वभाव को 'रहस्यमय' की संज्ञा दी है। इसी कारण कई बार अकस्मात् नारी के स्वभाव में जो संवेगात्मक प्रबल भावावेग दिखाई देता है वह तर्क के परे है—वह आवश्यकतानुसार यथाविधि खोदे गये जलाशय की तरह नहीं, बल्कि उत्स की तरह है जिसका कारण उसके अपने अहैतुक रहस्य में निहित है।

प्रेम का, स्नेह का रहस्य बहुत प्राचीन और दुर्गम है। उसे अपनी सार्थकता के लिए तर्क की अपेक्षा नहीं है। इसलिए ज्योंही लड़की विवाहित होकर घर में प्रवेश करती है त्योंही कहीं से गृहिणी अवतीर्ण हो जाती है और ज्योंही शिशु उसकी गोद में आया कि तुरन्त माँ उपस्थित हो जाती है। जीवलोक में परिपक्व बुद्धि के लोग तो बहुत बाद में आये हैं। बहुत ढूंढ़ने और संघर्ष करने के बाद वे अपनी जगह खोज पाये। द्विधा को छोड़कर चलने में मनुष्य को समय लगा। इस द्विधा रूपी तरंग के उठने-गिरने में शताब्दी पर शताब्दियाँ बीतती चली गयीं और भारी भ्रम फैलता रहा और उसके कारण मानव के इतिहास में उथल-पुथल भी होती रही। कदाचित् पुरुष की सृष्टि विनाश के गर्भ में विलीन हो गयी और उसे नये सिरे से अपनी कीर्ति की भूमिका बाँधनी पड़ी। इस बार-बार की परीक्षा के कारण पुरुष का कर्म केवल अपनी देह ही बदलता रहा। अभिज्ञता की इस नित्य प्रदक्षिणा के कारण यदि वह आगे बढ़ पाया तो बच जाएगा और यदि उसे अपनी भूल को सुधारने का मौका नहीं मिला तो जीवन-निर्वाह में पड़ी दरारें बढ़ते-बढ़ते फिर उसे विनाश के गर्त में खींच लेंगी। पुरुष द्वारा रची गयी सभ्यता आदि-काल से इसी प्रकार बनती-बिगड़ती चलती रही है। इस बीच नारी में प्रेयसी और जननी, प्रकृति के दूत के रूप में अपना काम करती जा रही है। और प्रबल आवेगपूर्ण संघर्ष के द्वारा अपने संसार-क्षेत्र में बीच-बीच में अग्निकांड भी करती आ रही है। यह प्रचंड आवेग मानो विश्व-प्रकृति की प्रलय लीला, झंझा और दावाग्नि की तरह आकस्मिक और आत्मघाती है।

पुरुष अपनी दुनिया के लिए अपनी दुविधा के कारण हर बार नवागन्तुक है। आज तक कितनी ही बार उसने अपना विधि-विधान बनाया है। विधाता ने उसका जीवन-पथ निर्धारित नहीं किया है। कितने देशों और कितने कालों में उसे अपना मार्ग बनाना पड़ा है। किसी काल में उसका पथ विपथ हो गया और किसी अन्य काल में उसका इतिहास उलट गया, यहाँ तक कि अन्तर्धान हो गया।

नई-नई सभ्यताओं की उथल-पुथल के बीच नारी-जीवन की मूल धारा एक प्रशस्त पथ पर चल रही है। प्रकृति ने उसे हृदय-संपन्नता दी है, किंतु उसकी नित्य कौतूहलप्रवण बुद्धि के द्वारा नये-नये अध्यवसायों की परख उसे नहीं करने दी गयी।

पुरुष को नौकरी के लिए एक आफिस से दूसरे आफिस में दरवाजे-दरवाजे चक्कर काटने पड़ते हैं। अधिकांश पुरुष जीविका के लिए ऐसे कामों को स्वीकार करने को विवश हो जाते हैं जिन्हें करने को उनका मन गवाही नहीं देता और न उनमें उतनी क्षमता ही होती है। कठोर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

परिश्रम के द्वारा विभिन्न प्रकार के काम करने की क्षमता उन्हें प्राप्त करनी पड़ती है। इन ऐसे कामों में तीन चौथाई पुरुष सफलता प्राप्त नहीं कर पाते। किंतु गृहिणी और जननी के रूप में नारियों का काम उनका अपना काम है, वह उनके स्वभाव के अनुरूप है और सहज है, इसलिए सधा हुआ ही है।

विभिन्न विघ्न-बाधाओं को पार कर, प्रतिकूल परिस्थितियों को अपने पौरुष से अनुकूल बनाकर, पुरुष महत्ता प्राप्त करता है। ऐसी असाधारण सफलता प्राप्त करने वाले पुरुषों की संख्या कम ही है। किंतु हृदय की रसधारा से अपनी गृहस्थी को शस्यशाली बना देने वाली नारियाँ प्रायः घर-घर में दिखाई देतीहैं। प्रकृति से उन्हें मिली है बिन सीखी पटुता। माधुर्य का ऐश्वर्य उन्हें सहज ही प्राप्य है। जिस नारी के स्वभाव में दुर्भाग्य से उक्त सहज रस नहीं होता वह किसी प्रकार की शिक्षा या अन्य किसी कृत्रिम उपाय से सांसारिक क्षेत्र में सफलता प्राप्त नहीं कर पाती।

जो संबल अनायास मिल जाता है उसमें मुसीवत भी है। मुसीवत का एक कारण यह है कि वह अन्य पक्ष के लिए लोभनीय वस्तु होती है। सहज ऐश्वर्यशाली देश को बलवान राष्ट्र सर्वथा निजी स्वार्थ के लिए दवोचे रखना चाहता है। अनुर्वर देश के लिए स्वाधीन बने रहना आसान है। जिस पक्षी के डैने सुन्दर और कंठ-स्वर मधुर होता है उसे पिंजरे में कैद करके मनुष्य गर्व का अनुभव करता है; संपत्तिलोलुप इस वात को भूल जाते हैं कि उस पक्षी का सौंदर्य पूरी वनभूमि का है। नारी-हृदय की मधुरता और कुशल सेवा-परायणता को पुरुष ने लंबे समय से कड़े पहरे के भीतर बाड़ में बंद करके अपने व्यक्तिगत अधिकार में रखा है। नारियों के अपने स्वभाव में ही बंधन को सह लेने की प्रवृत्ति होती है इसीलिए वह सर्वत्र इतने सहज रूप में रूढ़ हो गया है।

वास्तव में जीव के पालन-पोषण का काम ही व्यक्तिगत है। वह नैर्व्यक्तिक तत्त्व के हिस्से में नहीं आता, इसीलिए उसका आनन्द बृहत् तत्त्व का आनन्द नहीं है; यहाँ तक कि नारियों की निपुणता यद्यपि रस को वहन करती है किन्तु सार्वजनिक निर्माण आदि के कार्य में वह आज भी बहुत सार्थक नहीं हुई है।

उसकी बुद्धि, उसके संस्कार और आचरण निर्दिष्ट सीमा में बँधे होने के कारण युग-युग से प्रभावित हैं। उसकी शिक्षा और विश्वास को बाहरी बृहत् अभिज्ञता के बीच सत्य को प्राप्त करने का पूरा सुयोग नहीं मिला। इसीलिए बिना सोचे-विचारे सभी अपदेवताओं को वह अमूलक भय और अयोग्य भक्ति का अर्घ्य देती आ रही है। यदि हम सम्पूर्ण दृष्टि से देखें तो पता चलेगा कि इस मोह-मुग्धता के कारण जो क्षति हुई है यह कितनी विनाशक है; उस भारी बोझ को ढोते हुए उन्नति के दुर्गम पथ पर चलना कितना दुष्कर है। ऐसा नहीं कि कलुषित बुद्धि, मूढ़मति पुरुष इस देश में कुछ कम हैं। वे शैशव काल से ही नारी के हाथों पले-बढ़े हैं और वही नारियों पर सबसे अधिक अत्याचार करते हैं। ये जो कलुषित मन के केन्द्र देखते-देखते चारों ओर उठ खड़े हुए हैं सो सब मुख्यतः नारियों की विचार-बुद्धि पर ही निर्भर हैं। मानसिक कारागार इसी तरह देश में फैलता जा रहा है और प्रतिदिन उसकी नींव मजबूत होती जा रही है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दूसरी ओर दुनिया के सभी देशों की नारियाँ अपने व्यक्तिगत संसार की सीमा को लाँघती जा रही हैं। आधुनिक एशिया में भी इस बात के लक्षण दिखाई पड़ रहे हैं। उसका मुख्य कारण यह है कि सभी जगह सीमा-बंधनों को तोड़ने का युग आ गया है। वे सब देश जो अपनी-अपनी भौगोलिक और राष्ट्र की प्राचीरों के भीतर बिलकुल बँधे हुए थे उनकी वह बाड़ आज उन्हें उस तरह घेरकर रह नहीं सकेगी—वे एक-दूसरे के सामने खुल गए हैं। जिससे बहुत-कुछ देखने-सुनने का क्षेत्र प्रशस्त हो गया है, दृष्टि चिरकाल से अभ्यस्त दिगन्त की सीमा को पार कर गई है। बाहरी दुनिया के साथ घना मेल-मिलाप होने से हालत बदलने लगी है। नई-नई आवश्यकताओं के साथ-साथ विचारों में परिवर्तन होना आवश्यक हो गया है।

हमारे बचपन में आवश्यकतावश घर से बाहर आने-जानेवाली लड़कियों के लिए वह पालकी-युग था। सम्भ्रान्त परिवारों में उन पालकियों पर घटाटोप डाल दिया जाता था। जिन लड़कियों ने बेथून स्कूल में सबसे पहले प्रवेश लिया उनमें मेरी बड़ी दीदी अग्रणी थीं। वे खुले दरवाजे वाली पालकी में स्कूल जाया करती थीं। उस युग के सम्भ्रान्त परिवारों के आदर्श को इससे कुछ कम आघात नहीं पहुँचा था। उस जमाने में जब एक वस्त्र पहना जाता था, लड़कियों का शैमीज पहनना निर्लज्जता का लक्षण था। और शालीनता के इस प्रचलित रिवाज की रक्षा करते हुए रेलगाड़ी में आना-जाना कोई आसान काम नहीं था।

आज परदेवाली पालकी का युग बहुत दूर चला गया है। वह हलके कदमों से नहीं गया, तेज कदमों से ही गया है। बाहरी परिवर्तनों के साथ-साथ अपने-आप यह परिवर्तन हुआ है—इसके लिए किसी को सभा-समिति का आयोजन नहीं करना पड़ा। देखते-देखते लड़कियों की विवाह की आयु बढ़ गई और यह भी सहज ही हो गया। प्राकृतिक कारणों से नदी की जलधारा का परिमाण यदि बढ़ जाये तो उसके तट की सीमा अपने-आप हट जाती है। नारियों के जीवन में भी आज सभी दिशाओं से स्वतः ही उनके तट की सीमा दूर हटती जाती है। नदी महानदी का रूप लेती जा रही है।

व्यवहार में ये जो बाहरी परिवर्तन होते हैं वे बाहर तक ही सीमित नहीं रह जाते। आन्तरिक प्रवृत्ति में भी उनका काम चलता रहता है। नारियों का जो मनोभाव उनकी बँधी-बँधाई दुनिया के लिए उपयोगी होता है, खुली हुई दुनिया में तो वह स्थिर रह नहीं सकता। जीवन की विस्तृत भूमिका में वह स्वयं ही आकर उसके मन को प्रोत्साहित कर सोच-विचार करना आरंभ कर देता है। उसके पूर्व संस्कारों की कसौटी का काम स्वयं ही आरंभ हो जाता है। ऐसी स्थिति में अनेक प्रकार की भूलें हो सकती हैं, किंतु बाधाओं का सामना करते-करते उन भूलों से उबरना होगा। संकीर्ण सीमा के भीतर मन पहले जिस ढंग से सोचने-विचारने का आदी था, उस आदत को पकड़े रहने से सभी के साथ पग-पग पर असंगति उत्पन्न होती रहेगी। इस आदत को बदलने में दुख है, मुसीबतें भी हैं; किंतु इस बात से डरकर काल के स्रोत को पीछे की तरफ को मोड़ा नहीं जा सकता।

घर-गृहस्थी की छोटी-सी सीमा के भीतर जब नारियों का जीवन बंधा हुआ था तब नारीसुलभ मन की स्वाभाविक प्रवृत्तियों को लेकर उनका काम आसानी से चल जाता था। इसके लिए उन्हें किसी प्रकार की विशेष शिक्षा की जरूरत न होने के कारण एक समय तो स्त्री-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शिक्षा को लेकर जबर्दस्त विरोध और प्रहसन की सृष्टि हुई थी। उस समय पुरुष स्वयं जिन सब संस्कारों की उपेक्षा करता था, जिन सिद्धान्तों पर उसका विश्वास नहीं था, जिन बातों पर वह आचरण नहीं करता था, उन सबका उसने नारियों के मामले में हठपूर्वक समर्थन किया। इसके मूल में उसकी मनोवृत्ति वही थी जो एकतन्त्री शासकों की होती है। वे जानते हैं कि अज्ञान और अंधसंस्कार की आब-हवा में इच्छानुसार शासन करने का सुयोग मिल जाता है; मानवोचित स्वाधिकार छोड़ देने के बावजूद मन से संतुष्ट रहने के लिए यह मुग्ध करनेवाली अवस्था एक अनुकूल अवस्था है। हमारे देश के बहुत-से मनुष्यों के मन में आज भी यही भाव है। किंतु काल के साथ संग्राम में उन्हें हार माननी ही पड़ेगी।

काल के प्रभाव से यह जो नारियों का जीवन-क्षेत्र अपने-आप ही फैलता जा रहा है, विश्व के समाज में नारियाँ यह जो स्वयं ही पहुँच गई हैं, इससे आत्मसम्मान और आत्मरक्षा की खातिर उनके लिए बौद्धिक चर्चा और विचारविमर्श सर्वथा आवश्यक हो उठे हैं। इसलिए ये बाधाएँ भी गति से दूर होती जा रही हैं। भले घर के लड़कियों के लिये निरक्षर होना ही आज सबसे ज्यादा शर्म की बात है, गुजरे जमाने में छाते और जूते का व्यवहार करने में लड़कियों को जितनी शर्म लगती थी यह उससे भी ज्यादा शर्म की बात है और अब कूटने-पीसने के मामले में चतुर न होने की बदनामी इसके सामने कुछ भी नहीं है। अर्थात् गृहस्थी की बाजार-दर के अनुरूप ही लड़कियों की दर होती थी। किंतु आज जिस विद्या का मूल्य सार्वभौमिक है, जो तात्कालिक प्रयोजन के अनन्य दावे को पीछे छोड़ जाती है, आज लड़की की अधिकतम कीमत को जाँचने के लिए बहुत हद तक उसी विद्या की कसौटी का उपयोग किया जाता है। इसीलिए हमारे देश की लड़कियों का मन घर में ही सीमित समाज को छोड़कर दिन-दिन विश्व समाज के पास का होता जा रहा है।

आदि युग में एक-दिन पृथ्वी अपनी तप्त निश्वासों के कुहासे में मुँह छिपाए हुए थी, उस समय विराट् आकाश के ग्रह-मण्डल के बीच वह अपना स्थान ही प्राप्त नहीं कर सकी। आखिरकार एक दिन सूरज की किरण को उसके भीतर प्रवेश करने का रास्ता मिला। तभी से उस मुक्ति के द्वारा धरती का गौरवपूर्ण युग आरंभ हो गया। इसी प्रकार कभी सजल हृदय की उदारता की वाष्प के घने आचरण से हमारी नारियों के मन को अपने बहुत ही पास की दुनिया ने अभिभूत कर रखा था। आज उस आवरण को भेदकर प्रकाश की वह किरण प्रवेश कर रही है जो मुक्त आकाश या सर्वलोकों से आ रही है। बहुत दिनों से जिन संस्कारों की जड़ता के जाल में उनका मन बँधा हुआ था, यद्यपि वह जाल पूरी तरह से कटा नहीं है फिर भी उसमें बहुत बड़ा छेद हो गया है। कितना बड़ा छेद हुआ है, यह तो वही जानते हैं जो मेरी तरह पुरानी उम्र के हैं।

आज संसार में सभी जगह नारियाँ घर की चौखट को लाँघकर विश्व के उन्मुक्त आँगन में आ खड़ी हुई हैं। अब इस बृहत् संसार के दायित्व को उन्हें स्वीकार करना ही होगा, अन्यथा उन्हें लज्जित होना पड़ेगा और यह उनकी असफलता होगी।

मुझे लगता है कि धरती पर नवयुग आ गया है। सुदीर्घ काल से मानव-सभ्यता की व्यवस्था करने का अधिकार पुरुषों के हाथ में था। इस सभ्यता का राष्ट्रवाद, अर्थनीति और

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सामाजिक शासन-पद्धति पुरुषों की बनाये हुए थे। नारियों ने उनके पीछे ओट में रहकर, जहाँ प्रकाश भी नहीं पहुँचता था, केवल घर का काम किया था। इस सभ्यता का झुकाव एकतरफा था। उक्त सभ्यता में मनुष्य की मानसिक संपत्ति का पर्याप्त अभाव हो गया है; वह संपत्ति नारियों के हृदय-भण्डार में कंजूस के जिम्मे अटकी पड़ी थी। आज उस भण्डार का द्वार खुल गया है।

तरुण युग की मनुष्यविहीन पृथ्वी पर कीचड़ की परत के ऊपर जो विस्तृत जंगल था वह जंगल लाखों वर्षों तक लगातार सूर्य के तेज को इकट्ठा करता रहा और वह वृक्षों की मज्जा तक पहुँच गया। ये सब जंगल, भूमि के गर्भ में समा गए और परिवर्तित अवस्था में युगों-युगों तक दबे पड़े रहे। जिस दिन पाताल का द्वार खुला उस दिन मनुष्य ने अचानक हजारों सालों के सूर्य के अव्यवहृत तेज को पत्थर के कोयले के रूप में पाकर उसे अपने काम में लिया, और नवशक्ति को लेकर आनेवाले विश्वविजयी आधुनिक युग के दर्शन हुए।

जिस प्रकार कभी सभ्यता की बाहरी सम्पत्ति को लेकर यह सब हुआ उसी प्रकार आज आन्तरिक संपत्ति की एक विशेष खान ने अपने भीतर संचित वस्तु को बाहर प्रकाशित किया है। घरों से बँधी हुई नारियाँ प्रतिदिन विश्व नारियाँ बनती दिखाई दे रही हैं। इस उपलक्ष्य में मनुष्य के सृजनात्मक मन के साथ यह सब नये मन का योग है, जिसने सभ्यता को एक अन्य प्रकार का तेज दिया है। आज प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से इसकी प्रक्रिया चल रही है। केवल पुरुषों द्वारा गढ़ी गई सभ्यता में संतुलन का जो अभाव प्रायः प्रलयारम्भ के लक्षण उत्पन्न कर देता है, अब आशा की जा सकती है कि वह क्रमशः समानता की ओर जायेगा। पुरानी सभ्यता की नींव पर बार-बार प्रचण्ड भूकम्प के धक्के लग रहे हैं। इस सभ्यता के लिए विपत्ति के कारण बहुत दिनों से इकट्ठे हो चुके थे, इसलिए इस ध्वंसात्मक कार्य को कोई रोक नहीं सकेगा। भरोसे की एक बात है तो यह है कि महाप्रलय की भूमिका में नई सभ्यता को गढ़ने के काम में स्त्रियाँ भी आकर सम्मिलित हो गई हैं—संसार-भर में सभी जगह वे तैयार हो रही हैं। ऐसा नहीं कि उनके चेहरे परसे केवल घूंघट ही हटा हो, बल्कि जिस घूंघट के कारण वे अधिकाँश जगत् की ओट में पड़ी हुई थीं, उनके मन का वह घूँघट भी हट गया है। जिस समाज में उन्होंने जन्म लिया है वह समाज आज सभी तरफ से उनकी नजरों के सामने अच्छी तरह स्पष्ट हो उठा है। अब अंधसंस्कार के कारखाने में बनी हुई गुड़ियों से खेलना उन्हें शोभा नहीं देगा। प्राणी का पालन करनेवाली उनकी सहज स्वभाविक बुद्धि न केवल घर के लोगों को बल्कि सभी लोगों की रक्षा में तन-मन से जुट जायेगी।

आदिकाल से ही पुरुषों ने अपनी सभ्यता के दुर्ग की ईटें निरन्तर नरबलि के रक्त से तैयार की हैं—अपनी किसी साधारण नीति की प्रतिष्ठा के लिए उन्होंने नितान्त विशिष्ट व्यक्तियों को मारा है। धनिकों ने धन पैदा किया श्रमिकों के प्राणों का शोषण करके; प्रतापियों के प्रताप की अग्नि जलाई गई है असंख्य दुर्बलों के रक्त की आहुति देकर और राष्ट्रीय स्वार्थ के रथ में जनता को रस्सी से बाँधकर उस रथ को चलाया गया है। शिकार के आमोद को विजय मानकर यह सभ्यता असंख्य निरीह-निरुपाय प्राणियों का वध करती रही है; सभ्यता ने प्राणिजगत में मनुष्यों को मनुष्य के प्रति, अन्य जीवों की अपेक्षा सबसे अधिक कठोर बना दिया

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है। कोई बाघ बाघ से इतना परेशान नहीं होता, किंतु इस सभ्यता के कारण दुनिया-भर के मनुष्य, मनुष्य के भय से काँप रहे हैं। इस तरह की अस्वाभाविक अवस्था में ही सभ्यता अपने नाश के साधनों को स्वयं ही संवारती रहती है आज भी यही हो रहा है। इसके साथ-साथ मनुष्य शांति की मशीन बनाने में भी लगा हुआ है, किंतु जिनके मन में शांति का उपाय नहीं है, मशीन की शांति उनके काम नहीं आयेगी। व्यक्ति का हनन करनेवाली सभ्यता टिक नहीं सकेगी।

सभ्यता की सृष्टि के नूतन कल्प की आशा की जा सकती है। यदि यह आशा साकार हो उठे तो इसमें संदेह नहीं कि इस बार उक्त सृष्टि में नारियों का काम पूरी तरह नियोजित होगा। नवयुग का यह आह्वान यदि हमारी नारियों के मन तक न पहुँच पाया तो कहीं ऐसा न हो कि उनका रक्षणशील पुराना मन युग-युग की अस्वास्थ्यकर गंदगी को सर्वथा मोहवश छाती से चिपकाए रहे। वे अपने हृदय को उन्मुक्त करें, अपनी बुद्धि को चमकायें; और ज्ञान की तपस्या में निष्ठा का प्रयोग करें। वे यह याद रखें कि विचारहीन रक्षणशीलता सृजन की विरोधी है। नव सृजन का युग सामने आ रहा है। यदि उस युग पर अधिकार प्राप्त करना है तो मोह-मुग्ध मन को हर तरह से श्रद्धा के योग्य बनाना होगा। अज्ञान से उत्पन्न जड़ता एवं नीचे गिरानेवाले सभी प्रकार के काल्पनिक और वास्तविक भय के आकर्षण से मुक्त होकर स्वयं को ऊपर उठाना होगा। फल-प्राप्ति की बात तो बाद की है—हो सकता है, यह बात सामने ही न आये— योग्यता प्राप्त करने की बात सबसे पहले है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नारी का भविष्य, आत्मनिष्ठा में

विनोबा

गृहसंगोपन का कार्य स्त्रियों के पास ही रहने वाला है, यह तो दैव ही बोल चुका है, फिर वह प्रगतिशील अमेरिका हो या पिछड़ा हुआ भारत। लेकिन अब तक इस बात का ठीक-ठीक विचार नहीं हो पाया है कि मुख्य प्रश्न कहाँ अटका है। हिन्दूधर्म में स्त्रियों को कुछ अपात्रता है। उन्हें जायदाद में हक नहीं मिलता और वह उन्हें पुरुषों के बराबर मिलना चाहिए—ऐसा कहा जाता है। इस विचार के प्रति मेरी सहानुभूति है। किंतु वस्तुत: जिस समान अधिकार की आवश्यकता है, वह कोई नहीं माँगता। स्त्रियों को हिंदू धर्म ने संन्यास और ब्रह्मचर्य का अधिकार नहीं दिया है। यह अधिकार देने पर सैकड़ों स्त्रियाँ संन्यासिनी होंगी, ऐसी बात नहीं है। यह जो आध्यात्मिक अपात्रता है, उससे स्त्रियों में हीन भावना आई है। हिंदू समाज में उसी को मिटाने के लिए गृहस्थाश्रम को महत्त्व देकर 'सहस्रं पितृन् माता गौरवेणातिरिच्यते'—अर्थात् हजार पिता की अपेक्षा एक माता श्रेष्ठ है, ऐसे उद्‌गार निर्माण किये गए हैं। किंतु जिस मनुस्मृति का यह वचन है, उसी में दूसरा श्लोक इस प्रकार है—

"पिता रक्षति कौमारे, भर्ता रक्षति यौवने।
पुत्रो रक्षति वैधव्ये, न स्त्री स्वातंत्र्यमर्हति॥"

ऐतिहासिक दृष्टि से यह श्लोक बाद का भी हो सकता है। कदाचित् यह सब एक ही लेखक की

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लिखी बातें भी न हो; तो भी यह एक पुस्तक हिंदूधर्म ने अपने सिर चढ़ाई है।

लड़की का बाप की जायदाद में हक नहीं रहना चाहिए, ऐसा कहने वाले दलील देते हैं कि उसको दोनों ओर का हक क्यों चाहिए ? विवाह होने पर उसे पति की ओर से कुछ न कुछ मिलेगा ही; अर्थात् ऐसी पोजीशन कोई लेने को ही तैयार नहीं कि एकाध लड़की बिना ब्याही रह सकेगी। उनको लगता है कि लड़की को तो यहाँ से वहाँ जाना ही है। इसका यह अर्थ है कि स्त्रियों को केवल गृहस्थाश्रम का ही अधिकार था, अन्य आश्रमों का अधिकार नहीं था। प्राचीन ब्राह्मणमंत्र में कहा गया है कि 'दुहिता पंडिता जायेत्' अर्थात् जो यह चाहते हों कि उनकी कन्या पंडिता बने, उन्हें अमुक अमुक करना चाहिए। अब इसका अर्थ शंकराचार्य ने शांकरभाष्य में क्या किया है, उसे देखिए। जिन शंकराचार्य के प्रति आदर से मेरा आपाद-मस्तक भरा है, उन्होंने उसका अर्थ यह कियाहै कि "पंडिता गृहकार्यकुशला इत्यर्थः"। पंडिता यानी गृहकार्य में कुशल। वे इस बात की कल्पना भी नहीं कर सकते थे कि लड़की स्वतंत्र रूप से पंडिता हो सकती है। लड़की के संन्यासिनी होने की कल्पना भी वे नहीं कर सके। इसीलिए उन्होंने वैसा अर्थ किया। स्त्रियाँ गृहकार्य-कुशला हों, इसमें मेरा कोई विरोध नहीं है। ये वैसी नहीं होंगी, तो देश को कोई लाभ नहीं होगा। किंतु गृहकार्य-कुशलता में ही उनके पांडित्य की परिसमाप्ति हो, यह ठीक नहीं है। यह जो आध्यात्मिक अनधिकार एक समय स्त्रियों और शूद्रों पर लादा गया था, वह दूर होना चाहिए।

मेरी माँ बचपन में एक मजेदार कहानी सुनाती थी कि 'विन्या, बच्चा पालना कितना कठिन है, यह तू नहीं जान सकता। पहले यह काम शंकरजी के पास था। पर वे ऊब गए और पार्वती से कहा कि वह चार दिन के लिए यह काम सँभालें। तब से यह काम उसके सुपुर्द हुआ और उसी के गले पड़ गया है। अब शंकर यह काम सँभालते ही नहीं हैं।' इस तरह चूंकि यह कार्य स्त्रियों के गले पड़ गया है, उन्हें गृह कार्य में प्रवीण होना ही चाहिए, इसमें शक नहीं; परन्तु उनपर जो आध्यात्मिक अनधिकार लाद दिया गया है, वह हटना ही चाहिए। यह विधानसभा के कानून से नहीं हटेगा। इसीलिए मैं हमेशा कहता हूँ कि जब तक एकाध शंकराचार्य जैसी तेजस्वी, ज्ञानी, वैराग्य सम्पन्न स्त्री नहीं पैदा होगी, तब तक स्त्री-जाति का उद्धार नहीं होगा।

दूसरी बात यह है कि आज पुरुषों ने समाज का जो कारोबार चला रखा है, वह ठीक से चल नहीं रहा है। आजकल तो, पुरुषों को भी अहिंसा सिखाना तो दूर, समानता के नाम पर स्त्रियों की ही पलटनें बनाई जा रही हैं, यानी स्त्रियों का पुरुषीकरण चल रहा है। पुरुषों ने जो संहार मचा रखा है, उसमें जब स्त्रियाँ भी योग देने लगेंगी, तब फिर विश्व को कौन बचाएगा ? समुद्र अगर गंगा को स्थान नहीं देगा तो वह किसके पास जाएगी ? जगत् की रक्षणशक्ति जिन स्त्रियों के पास है, वे ही अपने कंधों पर बंदूक धरने लगेंगी, तब संसार को कौन बचाएगा ? इसलिए स्त्रियों को चाहिए कि वे पुरुषों को मर्यादित बनाने का प्रयत्न करें। पुरुष टाइपिस्ट बनते हैं, तो स्त्रियाँ भी टाइपिस्ट बनें, इसमें कोई बड़ा सार नहीं है। स्त्रियों को, अहिंसा शक्ति प्रकट करके संसार को बचाने का पराक्रम करना चाहिए।

तीसरी बात यह है कि जैसे शहर के लोग देहात के धंधों को हथिया रहे हैं, वैसे ही

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पुरुषों ने स्त्रियों के धंधे हथिया लिए हैं। पहले पुरुष खेती करते थे और स्त्रियाँ बुनाई करती थीं। वेदों में जहाँ-जहाँ बुनाई का उल्लेख आया है, वहाँ-वहाँ 'बुनने वाली'[१] शब्द ही आया है। अंग्रेजी में भी पुरुष के लिए 'हसबेंड' यानी किसान, और स्त्री के लिए 'वाइफ' यानी 'बुननेवाली' ये शब्द हैं। परंतु आगे चलकर बुनाई पुरुषों ने शुरू कर दी और स्त्रियों को काँडी भरने का काम दे दिया। यानी मुख्य कार्य पुरुषों के हाथ में आ गया और गौण काम स्त्रियों के हाथ में रह गया। काँडी भरने के लिए अधिक स्त्रियों की जरूरत होती है, इसलिए बुनकरों में एक से अधिक पत्नी रखने की प्रथा चल पड़ी। इस तरह स्त्रियाँ वहाँ गौण हो गईं। पहले सिलाई का काम स्त्रियों के हाथ में था, परन्तु अब सिलाई की मशीन आने के बाद वह कार्य भी पुरुषों की तरफ ही चला गया है। यंत्र के बारे में मेरी कोई आपत्ति नहीं है; परन्तु स्त्रियों का यह काम स्त्रियों के ही हाथ में रखना चाहिए था। यों, भोजन बनाने का काम स्त्रियों का माना जाता है, परंतु होटलें निकलने के बाद यह धंधा भी पुरुषों के हाथों में चला गया है। मेरा मत है कि जो काम स्त्रियों के लिए करना शक्य है, वे उन्हीं के लिए रहने चाहिए। इससे उनकी स्वतंत्र प्रतिष्ठा रहेगी। अन्यथा सारे काम पुरुषों के हाथ में चले जाएँगे और स्त्रियों को सदा के लिए पराधीन, पुरुषाधीन रहना होगा। स्त्रियों का पराधीन रहना उचित है, ऐसा अगर आप मानते हैं, तो मैं पुरुषों से कहूँगा कि 'आप एक गारंटी दें कि समस्त बच्चों के बड़े होने तक हम मरेंगे नहीं।' लेकिन आप लोग चाहे जब मर जाते हैं और फिर सारी जवाबदारी स्त्रियों पर आ पड़ती है। ऐसी स्थिति में, जैसे देहात के लोगों के लिए कुछ धंधे छोड़ देने पड़ते हैं, वैसे ही स्त्रियों के लिए भी कुछ धंधे छोड़ देने चाहिए।

मेरे विचार में प्राथमिक शालाएँ स्त्रियों के हाथ में ही रहनी चाहिए। उनमें लड़के और लड़कियाँ एक साथ पढ़ेंगे। अगर सारा प्राथमिक शिक्षण स्त्रियों के हाथ में रहेगा, तो बच्चों का विकास ठीक-ठीक होगा, वे ठीक रास्ते पर भी लगेंगे। समाज को मर्यादा में रखने की भी शक्ति स्त्रियों में आयेगी। आज अगर स्त्रियों में उतनी योग्यता या शिक्षण नहीं है, तो आपको वैसी व्यवस्था करनी चाहिए।

सेना हटा देने की माँग स्त्रियों को करनी चाहिए। जब तक देश का संरक्षण सैन्य-शक्ति से होता है, अहिंसा शक्ति से नहीं होता, तब तक पुरुषों का दर्जा ऊँचा ही रहने वाला है। पुरुष उजड्ड होता है और स्त्रियों की शरीर-रचना ऐसी होती है कि उन्हें गर्भ धारण करना पड़ता है, इसलिए स्वभावतः उनके लिए हिंसा कठिन है। इसलिए अगर रक्षण का साधन हिंसा ही रहेगा, तो जीवन पुरुष-प्रधान रहेगा ही। इसलिए मेरी माँग है कि समाज का संरक्षण अहिंसा-पद्धति से करने की शक्ति पैदा होनी चाहिए। इसके लिए स्त्रियों को शिक्षित बनाना सहज काम है।

स्त्रियाँ, सुरक्षित नहीं, स्वरक्षित होनी चाहिए। छोटे बच्चों का सुरक्षित रहना ठीक है, परंतु स्त्रियों को पुरुषों की तरह स्वरक्षित होना चाहिए। यह कहना मिथ्या है कि स्त्रियों में रक्षण सामर्थ्य नहीं है। विज्ञान का कहना है कि स्त्रियों का शरीर पुरुषों के

१. पुनः समव्यद् विततं वयन्ती। (ऋ०)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शरीर से अधिक रक्षण समर्थ है। बीमार की सेवा-शुश्रूषा में अगर पुरुष को दो-तीन महीने जागना पड़े तो वह स्वयं बीमार पड़ जाता है; परंतु स्त्रियाँ यह सब करके और घर के काम करके भी टिकती हैं। मतलब यह कि उनके शरीर में टिकाव ज्यादा है, तनाव सहने की शक्ति अधिक है।

नीति की हमारी कल्पना के कारण स्त्री शुरू से ही घर के बाहर कदम नहीं रख सकती। तब क्या किया जाए, ऐसा पूछा जाता है। नीति के संबंध में स्त्रियों में 'सुपीरियारिटी काम्प्लैक्स' है, लगता है कि उनमें यह पुरुषों ने ही पैदा किया है। किसी माँ को अपने लड़के के बिगड़ने की खबर से जितना दुःख होगा, उससे अधिक लड़की के बिगड़ने की खबर से होगा। अर्थात् पुरुषों के बारे में स्त्रियों के मन में 'हीनकल्पना' होती है। पुरुष के बुरा काम करने पर स्त्रियाँ प्रायः कह देती हैं कि 'वह पुरुष ही तो है।' स्त्रियों को नीतिमत्ता का जो अभिमान है, वह सही है। जैसे हम किसी जानवर के बारे में कह देते हैं कि 'वह जानवर ही तो है', वैसे ही स्त्रियाँ भी पुरुषों के बारे में कह देती हैं। हिंदुस्तान में बीड़ी पीने का चलन है, फिर भी कितनी बहनें बीड़ीपीती हैं? कानूनन कितनी ही छूटरहे, स्त्रियाँ पुरुषों जितनी व्यसनी नहीं होतीं। कुछ जातियों में ऐसी प्रथा है कि पुरुष मांस खाते हैं, पर स्त्रियाँ नहीं खातीं और पकाकर भी नहीं देतीं। जो पुरुष कभी भी रसोई नहीं बनाते उन्हें ऐसी स्थिति में कहीं अन्यत्र जाकर स्वयं मांस पकाकर खाना पड़ता है। इस प्रकार स्त्रियों में एक प्रकार की धर्मरक्षण की वृत्ति है। पश्चिम की शिक्षण पद्धति में कुछ गुणों के होते भी उसमें समत्व की मूढ़ कल्पनाएँ हैं। वस्तुतः भारतीय संस्कृति में ऐसी बात नहीं है और आनेवाली भी नहीं है। स्त्रियों के पास जो नैतिक अधिकार हैं, उन्हें गँवा देने में उनका लाभ नहीं है।

वर्णव्यवस्था में भी, अनजान में ही सही, एक प्रकार की विषमता मान ली गई थी। पुरानी कल्पना के अनुसार अनुलोभ विवाह हो सकता था यानी उच्च वर्ण का पुरुष अपने से निम्न वर्ण की स्त्री से संबंध कर सकता था। प्रतिलोभ विवाह नहीं हो सकता था। यानी उच्च वर्ण की स्त्री अपने से निम्न वर्ण के पुरुष के साथ विवाह नहीं कर सकती थी। इसमें भी स्त्रियों की श्रेष्ठता ही मान्य की गई है। ऐसी मान्यता थी कि ब्राह्मण सबसे श्रेष्ठ, क्षत्रिय उनसे जरा नीचे, वैश्य उनसे नीचे, और शूद्र उनसे भी नीचे हैं। लेकिन स्त्री तो पुरुष से भी श्रेष्ठ थी। यानी कोई स्त्री ब्राह्मण हो तो वह अत्यन्त श्रेष्ठ होगी। ऐसी हालत में वह क्षत्रिय पुरुष से विवाह नहीं कर सकेगी। किंतु कोई क्षत्रिय स्त्री हो, तो वह श्रेष्ठ होने से ब्राह्मण पुरुष से विवाह कर सकती थी। इस मान्यता में स्त्री की श्रेष्ठता गृहीत है। इसमें कहीं गलती नहीं हुई है। संतान का संगोपन करने और कोख में रखने की जवाबदारी जिस व्यक्ति पर है, जवाबदारी-रहित व्यक्ति से वह श्रेष्ठ है ही। स्त्रियों को अपनी श्रेष्ठता का अभिमान रखना चाहिए, पर उसे जानना चाहिए और पुरुष-वर्ग को मर्यादा में लाना चाहिए।

कुछ समाजशास्त्रियों के स्थूल विचार होते हैं। उनका आध्यात्मिक विचारों से यानी मूलभूत मूल्यों से कोई संबंध नहीं होता। मिसाल के लिए, स्त्रियों और पुरुषों की संख्या का विचार लीजिए। हिंदुस्तान में स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों की संख्या अधिक है। इसलिए समाज-शास्त्रकारों ने कहा कि स्त्रियाँ यदि ब्रह्मचारिणी रहने लगेंगी, तो अधिक पुरुष स्त्री-विहीन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रहेंगे और फिर समाज में विपत्ति आयेगी। अतः स्त्रियों को विवाह करना ही चाहिए। इस तरह वे स्त्रियों के ब्रह्मचर्य के प्रतिकूल और पुरुषों के ब्रह्मचर्य के अनुकूल हैं। पुरुषों का ब्रह्मचारी रहना ठीक ही है, क्योंकि स्त्रियों की संख्या कम है। अगर सारे पुरुष विवाह करने लगेंगे, तो उनमें स्पर्धा निर्माण होगी, इसलिए समाजशास्त्र की दृष्टि से कुछ पुरुषों का ब्रह्मचारी रहना इष्ट ही है। हिंदुस्तान में जो बहुपत्नीत्व आया, वह धंधों के कारण आया, हिंदू धर्म ने उसे उत्तम कभी नहीं माना।

स्त्रियों ने पुरुषों को निम्न कोटि का इसलिए भी माना कि गलत पाँव रखने का परिणाम स्त्रियों को ही अधिक भुगतना पड़ता है, वह स्त्री और पुरुष को समत्व से नहीं भुगतना पड़ता। अतः स्त्रियों ने यह तय किया कि हमें ज्यादा सावधान रहना चाहिए।

स्त्रियों को वे सारे क्षेत्र थी अपने हाथ में लेने चाहिए जो सांस्कृतिक माने जाते हैं। आज तक इन क्षेत्रों में प्रकट रूप में ज्यादातर पुरुषों का हाथ रहा है, अप्रकट रूप से स्त्रियों का हाथ रहा है। दुनिया के महान काव्य, जिनका दुनिया पर असर है, चाहे वह बाल्मीकि की रामायण हो, व्यास का महाभारत हो, होमर, दाँते, मिल्टन आदि के काव्य हो, सब के सब पुरुषों ने लिखे हैं। वेद में थोड़ी स्त्रियाँ भी ऋषि हैं, जिन्होंने मंत्र निर्माण किए हैं। फिर बीच में कर्नाटक की अक्कमहादेवी, राजस्थान की मीराबाई आदि दो-चार नाम आते हैं। परन्तु कुल साहित्य पर स्त्रियों का ज्यादा असर नहीं रहा है। अभी यूरोप आदि में कुछ स्त्रियाँ लिखने लगी हैं; यह उनका सामाजिक कार्य माना जाता है। आज का बच्चों की तालीम का काम भी पुरुषों के हाथ में है। वस्तुतः पुरुषों में बच्चों को तालीम देने लायक कोई अक्ल दिखती नहीं है। बड़े होने पर भले ही पुरुष उन्हें तालीम दे सकें, परन्तु प्राइमरी स्कूल के बच्चों के साथ कैसा व्यवहार किया जाए, यह पुरुष क्या जानें? यह सारा का सारा क्षेत्र स्त्रियों के हाथ में आना चाहिए यह कहा जा चुका है। साहित्य, तालीम, धर्म का आयोजन आदि क्षेत्रों में स्त्रियों को स्थान मिलना चाहिए।

स्त्रियों को एक विशेष काम यह करना चाहिए कि वे आश्रमों की रचना करें। गांधी जी ने आश्रम खोले, जिनमें स्त्री-पुरुष दोनों रहते थे। परन्तु किसी स्त्री ने ऐसा आश्रम नहीं खोला, जिसमें दोनों रहते हों। पाण्डिचेरी की माताजी हैं, परन्तु वह आश्रम श्री अरविंद ने खोला, माताजी ने नहीं। स्त्रियाँ स्वयं भक्त पहले भी हुई हैं; आज भी हैं। गांधीजी के आश्रम ने देश को बनाया। उन्होंने आश्रम के जरिये हिंदुस्तान पर असर डाला। हिंदुस्तान के कोने-कोने में ऐसे लोग मिलते हैं जो साबरमती या सेवाग्राम में दो-चार महीने या साल दो साल रहे हैं और वहाँ से स्फूर्ति लेकर काम कर रहे हैं। स्वामी श्रद्धानंद के गुरुकुल ने, रवींद्रनाथ के शांतिनिकेतन ने, श्री अरविंद के आश्रम ने भारत पर जो असर डाला, वैसा असर डालने वाली स्त्रियाँ क्यों नहीं निकल सकतीं? इसलिए अब वह पुराना बँटवारा नहीं चलेगा। अब स्त्रियों को हिंदुस्तान पर असर डालने का काम उठा लेना चाहिए। अगर वें उसे उठाएँगी तो बहुत असर डाल सकती हैं।

मैंने एक बुनियादी विचार आपके सामने रखा है। स्त्री और पुरुष में जो भेद है उसे तो दुनिया जानती है। उसको मिटाने की न किसी की इच्छा है, न शक्ति। लेकिन उस बाह्य भेद का स्वरूप लोगों में जिस तरह का हो गया है, वह वैसा नहीं है। वह केवल एक दृष्टि से की गई योजना

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है। उसके मूल में एक पवित्र भावना है। विवाह संतान का एक साधन मात्र है। लेकिन इस विषय का मनुष्य ने अत्यन्त दुरुपयोग किया है। वास्तव में तो वह एक शास्त्रीय वस्तु है। लेकिन आज वह एक शर्म का विषय हो गया है; उस विषय में खुले तौर पर बातचीत तक नहीं हो सकती। समाज जब शास्त्रीय बनेगा, तभी इस विषय की सारी गलत धारणाएँ समाप्त हो सकेंगी। आज जैसा, इस विषय का दुरुपयोग हो रहा है, वैसा तब नहीं होगा। इसलिए मैं कहता हूँ कि बाह्य भेद को तो हमें भूल ही जाना चाहिए। मानव-दृष्टि से आंतरिक अभेद की बुनियाद पर ही हमें अपने जीवन की रचना करनी चाहिए।

लोग पूछते हैं कि "तब, क्या स्त्री और पुरुष के शिक्षण में आप कुछ भी भेद नहीं करेंगे ?" मैं कहता हूँ कि यों भेद तो पुरुषों के शिक्षण में भी होगा। पुरुष-पुरुष में भी योग्यता-भेद होता है। उसके अनुसार विशेष शिक्षण, विभिन्न प्रकार का शिक्षण दिया जाता है। लेकिन सर्व सामान्य शिक्षण-दृष्टि में उससे फर्क नहीं पड़ता। वैसे ही स्त्रियों के बारे में समझना चाहिए।

मूल वस्तु तो यह है कि स्त्री-पुरुष के संबंध की तरफ देखने की हमारी आज की दृष्टि में आमूलाग्र परिवर्तन की आवश्यकता है।

एक मिसाल लीजिए। रामायण में हम पढ़ते हैं कि सीता के आभूषण पहचानने के लिए लक्ष्मण के सामने रखे गए, तो लक्ष्मण बोले :

"नाहं जानामि केयूरे, नाहं जानामि कुंडले।
नूपुरे त्वभिजानामि नित्यं पादाभिवंदनात्"

मैं न केयूर पहचानता हूँ, न कुंडल; हाँ, नूपुर पहचानता हूँ क्योंकि प्रतिदिन चरण वंदन करता रहा हूँ।

क्या हम इसका स्थूल अर्थ ही करेंगे ? और उस अर्थ को आदर्श मानेंगे ? स्थूल अर्थ तो यह हुआ कि जिसकी पवित्र भावना है, जैसी लक्ष्मण की थी, उसको किसी स्त्री के चेहरे की ओर देखना ही नहीं चाहिए !

अगर बाल्मीकि का यही अर्थ है, तो मैं कहूँगा कि यह उत्तम आदर्श नहीं है। बहुत ही गौण आदर्श है। लेकिन मैं जानता हूँ कि बाल्मीकि का अर्थ यह नहीं रहा। चरण वंदना की बात का जिक्र करके लक्ष्मण ने केवल अपनी पूज्य भावना ही प्रकट की है। क्योंकि जब हम किसी देवता का ध्यान करते हैं, तो अकसर चरणों का ध्यान करते हैं। राम के बारे में सवाल होता तो भी शायद लक्ष्मण यही उत्तर देता, क्योंकि रामचन्द्र के विषय में भी उसकी वही भावना थी।

यहाँ एक बात और भी सोचने लायक है। सौंदर्य के दर्शन से तो बुद्धि पवित्र होनी चाहिए, न कि मलिन। सूर्योदय को देखने से, बहती हुई नदी के निर्मल जल के दर्शन से बुद्धि पावन होती है। जहाँ सौंदर्य के दर्शन से बुद्धि मलिन होती है, वहाँ समझना चाहिए कि विकृत बुद्धि का लक्षण प्रकट हो रहा है।

हमारे यहाँ तो स्त्री-पुरुषों के साथ रहने के बारे में भी काफी सवाल उठते हैं। वातावरण पवित्र कैसे रहेगा ? यही उसमें फिक्र होती है। पवित्रता की फिक्र तो मुझे भी है। जितनी आज है, उससे सहस्रगुनी पवित्रता मैं चाहता हूँ। क्योंकि मैं जानता हूँ कि आज जो पवित्रता हममें

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है, वह ऊपर-ऊपर की है। मैं यह नहीं कहता कि समाज ने पवित्रता का कुछ भी रक्षण नहीं किया है। कुछ किया है; परंतु दीवारें खड़ी करके। इससे तो पवित्रता का आभासमात्र निर्माण हो सकता है।

पवित्रता तो आंतरिक वस्तु है। मैं तो मानता हूँ कि स्त्री-पुरुषों के एकत्र रहने से पवित्र बनने में मदद मिलनी चाहिए। लेकिन आज का वातावरण इसके विपरीत है। इसका कारण है हमारा साहित्य। मैं केवल अर्वाचीन साहित्य की बात नहीं कर रहा हूँ। वह तो शायद उसका परिणाम है। प्राचीन साहित्य, जिसमें धार्मिक माने गये साहित्य का भी समावेश करता हूँ, उसके लिए जिम्मेदार है, साहित्य की दृष्टि ही कलुषित हो गई है। यह सब साहित्य हमें फेंक देना होगा। दृष्टि में ही अंजन डालना होगा। बुद्धि शुद्ध करनी होगी।

संस्कृत कवियों ने स्त्री को भीरु कहा है। भीरु यानी पापभीरु होता तो वह एक उत्तम विशेषण होता। लेकिन भीरु यानी कायर का विशेषण उन्होंने प्रशंसा के रूप में स्त्रियों को भेंट किया है। देने वाले ने भले ही इसे प्रशंसा के रूप में स्त्रियों को भेंट किया है, परंतु लेनेवाले ने स्वीकारा क्यों ? उसने स्वीकारा है, इतना ही नहीं सहर्ष स्वीकारा है।

अगर मैं स्त्री होता, तो न जाने कितनी बगावत करता। मैं तो चाहता हूँ कि स्त्रियों की तरफ से बगावत हो। लेकिन बगावत तो वह स्त्री करेगी जो वैराग्य की मूर्ति होगी। वैराग्यवृत्ति प्रकट होगी तभी तो मातृत्व भी सिद्ध होगा। इसलिए मैं मानता हूँ कि स्त्रियों में कोई शंकराचार्य जैसी तेजस्वी स्त्री प्रकट होगी, तभी स्त्रियों का उद्धार होगा। स्त्रियाँ स्वतंत्रता चाहती हैं, तो उन्हें वासना के बहाव में बहना नहीं चाहिए।

बगावत करने की वृत्ति में और विनयशीलता में कोई विरोध नहीं है। विनयशीलता से तो बगावत बलवान बनती है। समझ बूझकर और उचित समझकर किसी उचित आज्ञा को मानना विनयशीलता है; अनुचित आज्ञा को न मानना बगावत है और विनयपूर्वक वह हो सकती है। उसी में स्वतंत्रता है।

स्त्री और पुरुष को खतरनाक बताते हुए अग्नि-घृत का दृष्टान्त दिया जाता है। परंतु दृष्टान्त तो उससे उलटा भी दिया जा सकता है। स्त्री-पुरुष एक दूसरे के रक्षक भी बन सकते हैं। स्त्री पुरुष को बचाये, पुरुष स्त्री को। आवश्यक है कि स्त्री पुरुष दोनों अपनी-अपनी कमियों की पूर्ति करते हुए परिपूर्ण स्त्री-पुरुष बनें। यानी पुरुष को स्त्री बनना होगा, स्त्री को पुरुष और दोनों को परिपूर्ण।

परिपूर्ण बनने की पद्धति ही ऐसी है। उसमें पुरुष को स्त्री बनना पड़ता है और स्त्री को पुरुष। मजदूर को शिक्षित होना होता है, शिक्षित को मजदूर।

इसलिए जब बहनें मुझसे पूछती हैं कि "हम अपना रक्षण कैसे करें," तो मैं कहता हूँ। "इसमें आपको कुछ सोचना ही नहीं है। हमें स्त्री और पुरुष में फर्क नहीं करना है, दानों को परिपूर्ण बनना है। इसलिए अपने हृदय में ऐसी श्रद्धा रखें कि जैसे पुरुष अपनी रक्षा करने में सहज ही समर्थ माना जाता है यद्यपि कई दफा वैसा वह कर नहीं पाता है, वैसे ही हम भी अपना रक्षण स्वयं कर सकती हैं।" तब बहनें कहती हैं कि पुरुषों के पास तो तलवार होती है, तो मैं कहता हूँ, "अगर वही आपकी कमी है तो आप भी तलवार रख सकती हैं। जो हक पुरुषों

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

को है, वह आपको भी होना ही चाहिए। लेकिन हर हालत में आपको निर्भय बनना ही होगा। मुझे विश्वास नहीं है कि तलवार से निर्भयता आ सकती है। निर्भय आदमी के हाथ में तलवार भी काम दे जाए, यह दूसरी बात है। लेकिन जिनका विश्वास है कि पुरुष हो या स्त्री, हाथ में तलवार लेकर अपना नूर बताएँ, और अगर वे समझते हैं कि तलवार के आधार पर ही समाज की रचना होनी चाहिए, तो फिर स्त्री पुरुष दोनों के लिए यह क्षेत्र खुला रहना चाहिए, जैसे कि पश्चिम में है। अहिंसा का प्रयोग करने में स्त्रियाँ अग्रसर हो सकती हैं; लेकिन वैसा करने में अगर वे अपने को असमर्थ पायें, तो भी दोनों में हमें फर्क तो करना ही नहीं चाहिए।"

मैं तो स्त्री और पुरुष की भाषा में भी फर्क करना नहीं चाहता। हिंदी, मराठी आदि भाषाओं में यह एक व्यर्थ का भेद पड़ गया है। हर वाक्य में बताते जाते हैं कि मैं पुरुष हूँ, मैं पुरुष हूँ, मैं पुरुष हूँ, मैं स्त्री हूँ, मैं स्त्री हूँ, मैं स्त्री हूँ। दोनों में अगर 'जाने' की क्रिया ही है, तो वह तो समान ही है। परन्तु यह कहेगा, मैं गया, 'वह कहेगी 'मैं गई।' इसकी जरूरत क्या है ? जीवन में आई हुई कृत्रिमता का ही यह लक्षण मानना चाहिए। हमें इस भाषा में भी सुधार करना होगा। यह मैं हवा की बात नहीं कह रहा हूँ। यह जमीन की बात है। जहाँ स्त्री-पुरुष बराबरी की बात करते हैं, वहाँ रूढ़ भाषा में लिंग-भेद होते हुए भी वे उठ जाते हैं, जैसे ग्रामीण मराठी में स्त्री भी पुरुष के समान 'मी जात आहे,' (मैं जा रहा हूँ) कहती है।

अंत में, सारांश के तौर पर मैं इतना ही कहना चाहता हूँ कि हर एक बहन को आत्मनिष्ठ होना चाहिए। मुझे तो 'निर्भय' शब्द भी उतना पसंद नहीं है। उसमें भी 'भय' की बू आती है। भय से अपरिचित बालक 'निर्भय' शब्द को नहीं समझेगा। इसलिए मैंने 'आत्मनिष्ठ' शब्द का प्रयोग किया। बहनों लोगों में आत्मनिष्ठा बढ़े, यही मेरी भावना है। यह बढ़ने वाली है, ऐसी श्रद्धा रखना मुझे प्रिय लगता है।

X8(A)WMJA
15263

मुमुक्षु भवन वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय
वाराणसी।
आगत क्रमांक....... ......1926......
दिनांक...............................

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मातृरूप–पृथिवी, पृथिवीरूप–नारी

वासुदेवशरण अग्रवाल

विश्व-रचना में माता की ही तरह "द्यौः पिता पृथिवी माता" का वैदिक सूक्त महत्त्वपूर्ण है। पृथिवी सच्चे अर्थों में सबका भरण-पोषण करने वाली माता है। वह वृक्ष, वनस्पति, कीट-पतंग, पशु-पक्षी और मानव सबकी पालन-कर्त्री शक्ति है। माता और पृथिवी माता ब्रह्मांड का अभिन्न अंग हैं। वहाँ यूयं-वयं की सीमा-रेखाएँ नहीं हैं। इनके वरदानों के स्रोत सबके लिए समान रूप से उन्मुक्त हैं। माता के मन और पृथिवी के स्वभाव के साथ देश और राष्ट्र की स्पर्धा का संयोग करना उचित नहीं। उस प्रकार की मनोवृत्ति वैषम्य और संघर्ष का द्वार है। पृथिवी को जो क्षमा-धात्री जननी कहा गया है; सो इसलिए कि उसके साथ तो केवल एक वही संबंध हो सकता है जो बालक का माता के साथ होता है। कहा है—वह माता की समस्त मधुरिमाओं से भरा हुआ एक अक्षय पात्र है। वह उनके लिए प्रकट हुई जो मातृमान् हैं और जिनके हृदय में माता और पुत्र के स्नेह का बीज अंकुरित हुआ—

भुजिष्यं पात्रं निहितं गुहा यदाविर्भोगे भवन्मातृभद्भ्यः।

—*मंत्र ६०*

किंतु जिस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति की शरीर-रचना मातृ-कुक्षि में होती है और प्रत्येक को अपने जन्म के लिए जननी की आवश्यकता है, वैसे ही संसार के स्वाभाविक विधान में किसी-न-किसी देश या भूमि से मानव का संबंध होता ही है। उसी भूमि के साथ हमारा हृदय प्रगाढ़

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संबंध में बँध जाता है। इस संबंध के पोषण के लिए हृदय की उदार भावना होनी चाहिए, दूसरों का निराकरण करने की विषम भावना नहीं। आर्ष भावना ने मानों समस्त नारी जाति के लिए पृथिवीसूक्त के द्वारा यह भावना व्यक्त की है। जो अनंत द्युलोक ऊपर फैला है उसका अभिन्न संबंध समग्र पृथिवी के साथ है, किसी भाग-विशेष तक सीमित नहीं। जब इस प्रकार की भावना मन में रहती है तभी मानव रसात्मक स्नेह का अनुभव करता है। पृथिवी के साथ घनिष्ठ संबंध जोड़ने के लिए इस अमृतमय प्रतिष्ठा-विन्दु को कभी भुलाना नहीं चाहिए। ऋषि की दृष्टि में पृथिवी माता का अमृत-हृदय सत्य से भरा हुआ है और उसका मूल परम व्योम या नित्य आकाश में है, जिसकी प्रेरणा कभी क्षीण नहीं होती। जो माता के इस हृदय को नहीं जानता उसके लिये तो यह भूमि केवल मिट्टी-पत्थरों का ढेर है। इसका सच्चा स्वरूप तो उनके लिए प्रकट होता जो ध्यान की शक्ति से इसकी उपासना करते हैं—

यार्णवेऽधि सलिलतग्र आसीद्
यां मायाभिरन्वचरन्मनोषिण:।
यस्या हृदयं परमे व्योमन्
सत्येनावृतममृतं पृथिव्या। —मंत्र ८

मातृ-हृदय के जिस रूप का वर्णन आया है, वह गुहानिहित या छिपा हुआ कहलाता है (मंत्र ६०), किंतु उसका दूसरा रूप नितांत स्थूल और सबके लिए प्रकट है। वह भूरी, काली श्याम, पीत और लाल मिट्टियों से बनी है।[1] वह विश्वरूपा या सब रूपों की खान है। वह अपने स्थल पर अविचल है। उसमें अनेक पर्वत, नदियों के प्रवाह और समतल मैदान हैं। हिम से ढँके हुए गिरि और नाना प्रकार की औषधि-वनस्पतियों से भरे हुए अरण्य उसके कल्याणात्मक रूप हैं। चारों दिशाओं में लहराती हुई कृषि और क्षेत्रों में श्रम करते हुए कृषक उसकी शोभा हैं। वह आकाश में छा जाने वाले मेघों की पर्जन्य-पत्नी है, जिसे वे सदा जल-धाराओं से सींचते हैं और उसके फलस्वरूप वह जौ, चावल आदि अन्नों से भर जाती है (मंत्र ४३)। वृष्टि लाने वाली पुरवाई मातरिश्वा वात धूल उड़ाती हुई और वृक्षों को हिलाती हुई जिस समय ऊपर-नीचे झकझोरती है उस समय आकाश में विजली कौंधती और मेघ गरजते हैं (मंत्र ५१)। संवत्सर की शक्ति ग्रीष्म, वर्षा, शरद्, हेमन्त; शिशिर और बसंत—इन छः ऋतुओं के सुंदर चक्र को घुमाती हुई पृथिवी से रात और दिन अमृत का दोहन करती है (मंत्र ३६)। पृथिवी की कुक्षि में नाना प्रकार के रत्न, मणि, हिरण्य भरे हुए हैं, जिन्हें वह मानवों के लिए प्रसन्न होकर उगलती रहती है। उससे धन की सहस्र धाराएँ इस तरह प्रवाहित होती हैं जैसे दुधार सीधी गौ से दूध की धाराएँ। वह सच्चे अर्थों में सबका भरण करने वाली विश्वम्भरा देवी है। उस भूमि पर अनेक उपयोगी पशु-पक्षी निवास करते हैं। हंस और सुपर्ण उसके आकाश में भरे हुए हैं। सिंह और व्याघ्र उसके जंगलों में विचरण करते हैं। गौ और अश्व की वह प्रतिष्ठा

१. १५वें मंत्र जो पंचजन कहे गये हैं, उनमें सभी विभिन्न रंग वाली क़ौमें आ जाती हैं। भगवान् के शंख को भी पाँचजन्य इसीलिए कहा गया है कि वह समस्त संसार के मानव-समाज के लिए गुंजाया जाता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है (मंत्र ४९)। वृक्ष और वनस्पति सदा के लिए उस पर अडिग रूप से विद्यमान है (मंत्र २७)।

इस प्रकार पृथिवी के भौतिक स्वरूप का दिव्य वर्णन इन मंत्रों में चित्रित किया गया है। वह सबके लिए सदा प्रत्यक्ष है। भौतिक समृद्धि के जितने रूप हैं, सबका अंतिम स्वरूप पृथिवी है। किंतु भौतिक स्वरूप से कहीं अधिक मूल्यवान् पृथिवी पर निवास करने वाले मानव हैं। वे मानव पीढ़ी-दर-पीढ़ी वृद्धि को प्राप्त होते हुए अमर हैं। प्रातःकाल उगता हुआ सूर्य उन्हीं के लिये अपनी किरणों से अमृत-ज्योति बिखेरता हुआ चलता है।

तवेमे पृथिवी पंच मानवा येभ्यो ज्योतिरमृतं
मर्त्येभ्य उद्यन्त्सूर्यो रश्मिभिरातनोति। —(मंत्र १५)

कवि इस सत्य का अनुभव करता है कि पृथिवी पर बसे हुए मानव अनेक समूहों में विभक्त हैं। उनकी संज्ञा 'जन' है। जन-जन में अनेक भेद प्रकृति की ओर से ही मातृ-भूमि को प्राप्त हुए हैं। उनमें तीन भेद प्रमुख हैं—एक, जनों का परस्पर भेद; दूसरे, इस बहुधा-जन में अनेक प्रकार की बोलियाँ हैं और तीसरे नाना प्रकार के धर्म हैं :

जनं बिभ्रती बहुधा विवाचसं
नानाधर्माणं पृथिवी यथौकसम्। —(मंत्र ४५)

किंतु भाषा, धर्म और जन के ये भेद मानवों को विभक्त करने के लिए नहीं है। प्रकृति की ओर से ही जो भेदों के विधान है उन पर अपने हृदय की शक्ति से मानवों ने विजय पाई है। उन्होंने बुद्धिपूर्वक अनेकता में एकता और भेदों में अभेद का जीवन-सूत्र ढूँढ़ निकाला। जो धागा सबमें समान रूप से पिरोया हुआ है वह यह है :

माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः। —(मंत्र १२)

"भूमि माता है और मैं उसका पुत्र हूँ"—यह अचल संबंध हर एक के लिए है और यही सबको मिलाने वाला तंतु है। जिसने भूमि को अपनी माता जानकर अपने आपको उसका पुत्र मान लिया वह माता के प्रति अपने कर्तव्य-पालन का ही प्रयत्न करेगा, अपने लिए कुछ अधिकार की खींच न करना चाहेगा।

पृथिवी पर बसने वाले जन नाना भाँति से नाचते और गाते हैं (मंत्र ४१)। दुन्दुभि-घोष करते हुए वे युद्धों में भी सम्मिलत होते हैं। उनका निवास अनेक गाँवों और नगरों में है। वे सभा और समितियों में एकत्र होकर प्रवन्ध की व्यवस्था करते हैं। इस भूमि की नींव धर्म पर टिकी हुई है। धर्मणा धृताम् (मंत्र १७)। धर्म ही सभा-समितियों का अविचल विधान है। पृथिवी पर भले और पापी सभी प्रकार के लोग रहते हैं। उन सबको ही उसके मार्गों पर चलने का अधिकार है जो शकट और रथों के लिए चारों दिशाओं में बिछे हुए हैं (मंत्र ४७)। पृथिवी-पुत्रों के नाना प्रकार के शारीरिक बल और मानसिक संकल्पों के वेग इसी भूमि पर प्रकट होते हैं, जिनसे संस्कृति की महती धारा का निर्माण हुआ है :

महत्संधस्थं महती बभूविथ
महान् वेग एजथुर्वेपथुष्टे। (मंत्र १८)

इस भूमि के साथ हमारा संबंध नया नहीं है। इसी पर हमारे पूर्वजों ने अनेक पराक्रम

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

किए। यस्यां पूर्वे पूर्वजना विचक्रिरे (मंत्र ५)। यहीं अनेक देवासुर संग्रामों में देव असुरों पर विजयी हुए (मंत्र ५)। यहीं अनेक ऋषियों ने मंत्रों का गान किया। यहीं अनेक प्रकार के तप और व्रतों का विधान हुआ। एवं इसी भूमि पर ऋत्विजों ने अनेक यज्ञों में देवों के लिए सोम का अभिप्राव किया। इस भूमि ने सदा से इन्द्र को अपना रक्षक चुना, वृत्र को नहीं :

इन्द्रं वृणाना पृथिवी न वृत्रम्। *(मंत्र ३७)*

यह भूमि हमारे बहुमुखी जीवन के अर्थ और धर्म एवं यज्ञादि की अधिष्ठात्री देवी है। इसमें जिस अग्नि का निवास है वही हम सबके शरीर में बसी हुई है अग्निरन्तः पुरुषेषु (मंत्र १९)। वह अग्नि प्राण और आयु प्रदान करती है। पूर्वकाल में किसी देवयुग में जो गंध इस पृथिवी में बसी हुई थी वही अमृत-सुगंधि आज तक सब स्त्री-पुरुषों के शरीरों में व्याप्त है। कोई कहीं भी रहे उसका जीवन अपनी भूमि की गंध से सुरभित रहता है (मंत्र २३)। जिस समय सूर्य की पुत्री सूर्या का सोम से विवाह हुआ उस उत्सव में कमल की जिस सुगंधि का सबने आनंद लिया आज भी वही पुष्कर-गंध हमारे लिए सुलभ है (मंत्र २४)।

इसी भूमि के साथ हमारे देवों का संबंध है। इन्द्र और विष्णु, अग्नि और सूर्य अपनी अधिद्वैत शक्ति से इसकी रक्षा करते हैं। यह सब भुवनों की गौप्त्री है। किसी से इसका द्वेष नहीं। अपनी मधुमती वाणी से यह सबकी मित्र है। यह सबसे आगे रहने वाली है, अग्रेत्वरी भुवनस्य गोपा (मंत्र ५७)। यह शांतिमयी शांतिवा, सौरभ-शालिनी सुरभि-मृदुला स्योना और अमृत-मयी है। सबके लिए इसकी पयस्वती या दुग्धाधारिणी मुद्रा सुलभ है (मंत्र ५९)। हे माता। हमारे लिए दीर्घ आयु का वितरण करो। तुम कामदुधा हो। तुम्हारे स्वरूप में किसी प्रकार की न्यूनता नहीं है। प्रजापति सदा तुम्हें भरते रहते हैं।

हे मातृभूमि। हमें सब प्रकार की श्री और संपत्ति इस जीवन में प्राप्त हो। किंतु साथ ही द्यु लोक का जो अमृत-जीवन है उसके साथ भी हमारा संबंध स्थिर रहे :

भूमे मातर्नि धेहि मा भद्रया सुप्रतिष्ठितम्।
संविदाना दिवा कवे श्रियां मा धेहि भत्याम्॥

मातृभूमि के ये गुण-वर्णन हमें समस्त मातृ-जाति को समझने की चाबी दे सकते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्त्री शक्ति का आह्वान

सरला बहन

संसार में यह माना जाता है कि किसी देश की संस्कृति की सुरक्षा उस देश की स्त्रियों के हाथ में होती है। अंग्रेजी में एक कहावत है "दी हैंड दैट रौक्स दी क्रैडल रूल्स दी वर्ल्ड !" (जो हाथ पालने को झुलाता है, वही दुनिया पर राज्य करता है।) यह बात बहुत सही है, क्योंकि छोटी उम्र में बच्चे अधिकतर माँ के प्रभाव में रहते हैं। हम सब को अनुभव है कि बचपन में उत्पन्न संस्कार बहुत प्रबल रहते हैं। इसलिए किसी देश में स्त्रियों का विकास किस दिशा में हो रहा है, यह बड़े महत्त्व की बात है।

भारत की परम्परा में माता की पदवी बहुत ऊँची मानी जाती थी। हालांकि सार्वजनिक जीवन में बहनों का स्थान बहुत उच्च नहीं है, तथापि झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई की तरह अन्य वीरांगनाएं भी इस देश में जन्मी हैं—और हमारी पुरानी संस्कृति की सीता, दमयन्ती और सावित्री आदि की कहानियाँ हमें दिखाती हैं कि स्त्रियों में साहस और सहन-शक्ति की कमी नहीं थी। परिवार में और विशेष करके धार्मिक रीति-रिवाजों में, स्त्रियों का स्थान सर्वोच्च था।

लेकिन धीरे-धीरे हमारी संस्कृति बदलती गयी। पश्चिमी शिक्षा के प्रवेश के बाद तो काफी अन्तर आया था। लड़कों की शिक्षा एक ऐसी दिशा में होने लगी, जिससे उनकी माताएँ और पत्नियाँ अनभिज्ञ रहती थीं। सामाजिक और पारिवारिक जीवन के बीच की

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

खाई बढ़ती गयी। अंग्रेजी शिक्षा पाए हुए लोग भारतीय संस्कृति की परंपरा का महत्त्व भूलने लगे। पहले भारत में राधा-कृष्ण, सीता-राम की पूजा की परंपरा रही। वुद्धि का सर्वोच्च स्थान हृदय और भावनाओं को मिलता था। वुद्धि को इनका ही मार्गदर्शन मिलना चाहिए, यह उसका अर्थ है। लेकिन अंग्रेजी शिक्षा पाने के वाद, समाज और परिवार की मूल मान्यताओं में अन्तर आने लगा। समाज में याने उद्योग, व्यापार, राजनीति में, वुद्धि निर्णयात्मक शक्ति हो गई। पारिवारिक वातावरण में अभी तक प्रेम, सहयोग और सेवा मुख्य वस्तुएँ हैं।

औद्योगिक युग के विकास से, वातावरण में यह फर्क और ज्यादा स्पष्ट दिखाई देने लगा है। वच्चे वाहरी दुनिया के अधिकाधिक सम्पर्क में आने लगे हैं। वाजार की चकाचौंध, सिनेमा तथा रेडियो आदि एक वदलती हुई संस्कृति के मुख्य-मुख्य प्रतीक हैं। नयी दृष्टि, नये गाने, नया फैशन, नयी शिक्षा। घर में माताएं अभी तक अपनी पुराने ढाँचे की हैं। अब शिक्षित लड़कियाँ भी एक सीमा तक इस नये ढाँचे में ढलने लगी हैं। अव माँ का महत्त्व कम हो रहा है। वाजार (याने दुनिया) का महत्त्व ज्यादा होता है। अव हम विशेषीकरण और खण्डीकरण के युग में जी रहे हैं। इन प्रक्रियाओं से घर और समाज के वीच की खाई वढ़ती जा रही है।

इस वढ़ते हुए विशिष्टीकरण के युग ने घर में भी प्रवेश किया। चालीस-पचास वर्ष पहले तक, रईस घरों में भी एक सीधा-सादा और श्रमिक वातावरण था। परदे में रहनेवाली बहनें भी चक्की चलाती थीं, छाछ विलोती थीं, अनाज साफ करके उसे संभालती थीं, पापड़ बेलती थीं, इत्यादि। इससे वच्चे एक व्यस्त वातावरण में रहते थे। कुछ-न-कुछ काम चलते रहने से उनकी शक्तियों और दिलचस्पियों को एक प्रणाली मिलती थी। पर्दे में बंद रहने पर भी, उस श्रम से वहनें स्वस्थ रहती थीं। अव वढ़ती हुई विलासिता की वजह से, ये सव काम या तो मिल में होते हैं, या नौकरानियों के सुपुर्द रहते हैं। वहनें दिनभर वैठी रहती हैं। वे एक प्रकार से गुड़िया-जैसी बन गयी हैं, पुरुषों के भोग-विलास का साधन-भर रह गयी हैं। क्या खाएं, पिएं, क्या कपड़े बनाएं, इसके सिवा उन्हें बहुत सोचने को नहीं होता है। ये श्रम से दूर जा रही हैं, और अपने बच्चों को भी श्रम से (याने स्वास्थ्य से भी) बचाकर रखना चाहती हैं। शहरों का फैलाव बढ़ता जा रहा है, सब लोग प्रकृति और मिट्टी के स्पर्श से दूर होते जा रहे हैं।

पश्चिम में औसतन बहनें इस नयी होड़ में पूरी तरह रम गयी हैं। उसके फल-स्वरूप वहाँ पर बहुत तेजी से सामाजिक पतन हो रहा है। दो विश्वव्यापी युद्धों को देखने से, जीवन की अनिश्चितता से, युद्ध की विभीषिका से, 'खाओ पिओ और मौज उड़ाओ, क्योंकि कल हम नहीं रहेंगे,' का वातावरण सर्वत्न फैल रहा है। सब पुराने सामाजिक मूल्य टूट रहे हैं। इस पतन की ओर वढ़नेवाली सभ्यता से बचने के लिए, नौजवान एक ओर साम्यवाद की ओर, दूसरी ओर 'हिप्पीवाद' की ओर जा रहा है, लेकिन ये दोनों पलायनवाद हैं, समस्या के सही समाधान नहीं हैं। समस्या का एकमात्न समाधान इसी में हो सकता है कि विज्ञान को आत्मज्ञान का मार्ग-दर्शन मिले। याने कृष्ण को राधा का मार्गदर्शन मिले। पश्चिम में राधा ने अपने जन्म-सिद्ध अधिकार को छोड़ दिया है, और कृष्ण के साथ वह गयी हैं। भारत में भी आधुनिक समाज में यही हाल हो रहा है। घर में वैठनेवाली बहनें भी अपनी दिशा खो चुकी हैं, और इस नयी धारा में अपना स्थान नहीं खोज पा रही हैं। इस मार्ग को खोजकर भारत को,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

और भारत के द्वारा दुनिया को एक सही मार्ग दिखाया जा सकता है।

अपने सब सार्वजनिक कार्यों मे गांधी जी ने बहनों का महत्त्व समझा था तथा उन्हें अपने कामों में शामिल किया था। बहनों ने काम करके दिखाया था। सामाजिक मूल्यों की सुरक्षा के आन्दोलनों में, शराब की दुकानों पर धरना देने में विलायती कपड़े की दुकानों पर धरना देने में, या सत्याग्रह में लाठी का सामना करने में, जेल के अत्याचारों को हिम्मत के साथ झेलने में, बहनें पुरुषों के साथ कंधे-से-कंधे मिलाकर काम कर सकती हैं। उन साहस के कामों में भारतीय परम्परा के अनुसार ये अपने सही स्त्रीत्व को भी कायम रख सकती हैं। जब बहनें एक सही दिशा को पकड़कर निकलती हैं, तो वे बुरी-से-बुरी जगह में जाकर भी अपने मन का सन्तुलन कायम रखकर बुरे-से-बुरे आदमी का हृदय-परिवर्तन कर सकती हैं। इससे समाज में उनकी इज्जत बढ़ी है, घटी नहीं। ऐसी वीरांगनाएं सिर्फ अपनी संतान को नहीं, बल्कि समाज को भी, एक सही मार्ग दिखा सकती हैं।

उम्मीद थी कि स्वराज्य के बाद बहनें इस नयी परम्परा में आगे बढ़ती रहेंगी, और शिक्षा तथा सामान्य राजनैतिक अधिकार पाकर, ये हमारे देश को एक स्वस्थ सामाजिक परम्परा में आगे बढ़ने का मार्ग दिखाएंगी।

लेकिन हमें इसमें निराश होना पड़ा। जो बहनें सार्वजनिक जीवन में निकलीं चाहे सेवा के क्षेत्र में, अस्पतालों और विद्यालयों में, चाहे राजनीति, अधिकार या व्यापार के क्षेत्र में, ये औसत में अपने स्त्रीत्व को घर में छोड़ आयी हैं, और इस क्षेत्र में अपनी भावनाओं को छोड़कर पुरुष की बुद्धि से पुरुष के साथ स्पर्धा में उतरी हैं। ये जिस बात से पुरुषों में अपनी सही सुवास को फैला पाती थीं ये उस चीज को भूल गई हैं । अन्य बहनें गुड़िया बनकर पश्चिम की बहनों की नकल करने में तथा पुरुषाधीन रहकर, उनके भोग-विलास और प्रदर्शन का बने साधन रहने में अपना संतोष मानती हैं।

इस हालत में ये बहनें अपनी संतान को भी भारतीय संस्कृति के अनुकूल शिक्षा और मार्गदर्शन नहीं दे पाती हैं। जो बहनें अपने गृहकार्य में सीमित हैं, वे भी इस नये वातावरण में अपने बच्चों को मार्ग नहीं दिखा पाती हैं।

यह तो हमारे बढ़ते हुए नगरों में स्त्रियों की हालत की तसवीर है। लेकिन अभी तक ७०।८० प्रतिशत हमारी बहनें देहात में रहकर आधुनिक शिक्षा से सर्वतः वंचित हैं। उन्हें हम दो श्रेणियों में बाँट सकते हैं—उत्तर भारत के मैदानों में रहनेवाली बहनें, जो पर्दे में रहती हैं तथा हिमालय पहाड़ों में तथा दक्षिण में रहनेवाली बहनें, जो पर्दे में नहीं रहती हैं, लेकिन जो अधिकांशतः खेतों के कामों में और पशुओं की सेवा में अति व्यस्त रहती हैं।

जब हमें पर्दे में रहनेवाली देहाती बहनों के साथ चर्चा करने का मौका मिलता है, तो हम पाते हैं कि ये भोली-भाली बहनें अपने बच्चों की दुनिया से बहुत दूर रहती हैं—उन्हें समझ में नहीं आता है कि ये बच्चे बड़े होकर क्या सोचते हैं, क्या करते हैं, जीवन के लिए क्या अभिलाषाएं रखते हैं।

मुझे याद आता है, एक बार मैं एक ऐसे कमरे में बैठी थी, जिसकी दीवार पूरी तरह अश्लील तस्वीरों और पोस्टरों से भरी थी। उस कमरे के मालिक बड़े गर्व से मुझसे कह रहे थे,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मेरा बड़ा पुत्र दस वर्ष का है। मैंने अभी तक उसकी माता का मुँह नहीं देखा है। ऐसे अस्वाभाविक समाज में माँ का बच्चों पर क्या प्रभाव पड़ सकता है? बच्चों में संयम और मर्यादा पालन के संस्कार कैसे बन सकते हैं? स्त्री-जाति के लिए सही आदर कैसे हो सकता है? हम गर्व करते हैं कि भारत एक विकासशील देश है, लेकिन औद्योगिक या आर्थिक विकास से क्या लाभ हो सकेगा, जब तक हमारी माताओं की यह हालत है। जबतक हमारे सामाजिक मूल्यों में परिवर्तन नहीं होता है, तबतक इस देश में किसी प्रकार का सही विकास असम्भव है।

जहाँ देहात में बहनें पर्दे में नहीं रहती हैं, उन पर काम का काफी भार रहता है। हिमालय में बहनें दिनभर जंगलों में और खेतों में काम करती हैं, फिर उन्हें सुबहशाम रसोई बनानी पड़ती है। ये खुशमिजाज और साहसी होती हैं। जमीन होने पर, यदि पतिदेव मर गए तो भी माँ अच्छी तरह अपने बाल-बच्चों को पालती है—उन्हें शिक्षा देती है। बच्चों की माँ यदि मर गयी, तो बाप उन्हें पालने में असमर्थ रहता है। किसी प्रकार खेती को संभालने के लिए, उसे कहीं से एक औरत को ढूंढ़कर रखना पड़ता है। फिर भी, समाज में स्त्रियों की कोई इज्जत नहीं है। पुरुष कहते हैं; "ये क्या जानें? ये तो पशु हैं।" और इससे और ज्यादा दुख की बात क्या हो सकती है कि उन्हें सुनकर बहनें भी यह बात दोहराती हैं, 'हम क्या जानें? हम तो पशु हैं।' घर और खेत के कामों को संभालने में स्त्रियों में इतना कर्त्तव्यपालन का भाव और शारीरिक शक्ति और हिम्मत होती है, पर दुख है कि उस शक्ति का सदुपयोग समाज को सही मार्गदर्शन देने में नहीं हो पाता?

अभी-अभी उत्तराखंड की बहनों ने शराब बन्दी के लिए लड़कर सही उत्तर दिया है। उन्होंने दिखाया है कि जिस स्त्री-शक्ति पर गांधी जी विश्वास करते थे, जिसे वह समाज-सुधार का वाहक समझते थे, उस दिशा में जब उनके मर्दों और बच्चों के नैतिक मूल्यों पर प्रहार होता है तो ये ठीक उस दिशा में जा सकती हैं, जिसे गांधी जी ने दर्शित किया था। उन्होंने करके दिखाया कि जब किसी भी इलाके की बहनें मिलकर तय करती हैं कि हम अपने पारिवारिक जीवन को शराब की बुराइयों से बचा सकती है। अंत में सरकार को इन बहनों की सच्ची बात को मानना पड़ा। इस काम के लिए बहनें जब तक सरकार उनकी बात नहीं मानती है, तबतक जेल में भी रहने को तैयार हो गईं। इन अपढ़ श्रमनिष्ठ बहनों के पास, जिनका दैनिक संपर्क प्रकृति और मिट्टी के साथ है, भारतीय संस्कृति सुरक्षित है।

दक्षिण और मध्यदेश में भी बहनें खेतों में बहुंत काम करती हैं। दक्षिण में तो संत स्त्री-पुरुषों का प्रबल प्रभाव पड़ा है। काफी ब्रह्मचारिणी बहनें सिर्फ अपनी शक्ति के आधार और कीर्तनों के द्वारा समाज को दर्शन ही नहीं, सामाजिक सेवाओं और संगठनों को प्रोत्साहन और मार्ग-दर्शन देती रहती हैं। वहाँ पर गाँधी जी परंपरा भी जारी है और बहनों ने संत विनोबा के भूदान और ग्रामदान-यज्ञों के लिए निकलकर बहुत हिम्मत और निष्ठा से काम किया है। काफी हिम्मत और धीरज से इस काम को आगे बढ़ाया है।

लेकिन हमें इसमें संतोष नहीं मानना चाहिए कि जहाँ बहनों को अनुकूल मौका मिले, वहाँ ये भारतीय संस्कृति का सही अर्थ दिखाएँ; जहाँ परिस्थिति प्रतिकूल हो, वहाँ पर भी उन्हें उसे अनुकूल बनाने की शक्ति रखनी चाहिए। हर प्रकार से समाज के शील की

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रक्षा के लिए उन्हें अपने जीवन को समर्पित करने को तैयार रहना चाहिए।

आजकल दुनिया चौराहे पर है। औद्योगिक विकास में मनुष्य और प्राकृतिक साधनों का निर्दय शोषण करके, दुनिया सिर्फ आणविक लड़ाई के द्वारा नहीं, बल्कि संदूषण के द्वारा भी सर्वनाश की ओर तेजी से बढ़ रही है। इस समाज में अब विशेषज्ञों, वैज्ञानिकों, अर्थशास्त्रियों, राजनीतिज्ञों के लेखे मनुष्य मनुष्य नहीं रहा है, वह उत्पादन और उपभोग का एक साधन मात्र रह गया है। उपभोग बढ़ाने की दृष्टि से (क्योंकि उपभोग बढ़ेगा, तब उद्योग बढ़ेगा।) भी कोशिशें हो रही हैं। उसके व्यक्तित्व और उसकी भावनात्मक आवश्यकताओं का कोई ख्याल नहीं है। मानवता का दिवाला पिटा जा रहा है। प्रकृति की शक्ति समाप्त हो रही है। मनुष्य के हाथों से ही प्रलय हो रहा है और 'पालना झुलाने वाला हाथ' चुप्पी साधे है। अब दुनियाभर की स्त्रियों को उठकर अपनी संतान को पुराने मार्ग का नया स्वरूप दिखाने का प्रयत्न करना पड़ेगा। संतों और धर्म-संस्थापकों ने हमें सत्य प्रेम और करुणा का मार्ग सिखाया। परिवार की व्यवस्था में बहनों ने उसे माना है, समाज की व्यवस्था में पुरुषों ने उसका तिरस्कार किया है। गांधी जी ने हमें अमल करके दिखाया कि यह मार्ग समाज में भी सफल हो सकता है और स्त्रियाँ भी इसमें समाज को मार्ग-दर्शन दे सकती हैं। अब-स्त्री जाति को आगे आकर खंडीकरण का अंत करके, एक नये समाज की स्थापना करनी पड़ेगी, जिसके मूल्य सत्य प्रेम और करुणा पर आधारित हों, जिसमें सिर्फ मानव-जाति के साथ नहीं, बल्कि प्राणी और वनस्पति जगत् के साथ भी एकात्मता का अनुभव हो।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नये युग की नारी

दादा धर्माधिकारी

औजार में यह खासियत है कि शारीरिक श्रमशक्ति कम हो तो भी कार्यसिद्धि सुलभ हो जाती है। जब तक उपकरणों का शोध नहीं हुआ था, तब तक जीवन में सत्ता उन्हीं की थी, जो अधिक-से-अधिक श्रम कर सकते थे। भीमसेन और हरक्यूलिस के शरीर में हजारों हाथियों की शक्ति थी। जब औजारों की खोज नहीं हुई थी, उस जमाने में इसी प्रकार के मल्लों की सत्ता चलती होगी। उसके बाद जब उपकरणों का आविष्कार हुआ, तो बाहुबल की अपेक्षा उपकरण कुशलता का महत्त्व बढ़ा। औजारों के लिए जो विकासक्रम लागू है, वही हथियारों के लिए भी है। ज्यों-ज्यों औजार और हथियार अधिक कुशल और सूक्ष्म होते गए, त्यों-त्यों शरीर-बल की अपेक्षा उपकरण-कुशलता और शस्त्र-कुशलता का महत्त्व बढ़ता गया। इस विकास का तात्पर्य पुराने इस संस्कृत वाक्य से भली भाँति व्यक्त हो जाता है—"बुद्धिर्यस्य बलं तस्यं।"

मनुष्य की प्रगति शरीर बल से बुद्धिबल की दिशा में होती गई है और आज तो यह वस्तु स्थिति है कि शरीर बल और संख्याबल वैज्ञानिक उपकरणों के सामने गतार्थ हो गया है। इसका अर्थ यह है कि पुरुष की अपेक्षा स्त्री में शरीरबल की न्यूनता हाने के कारण वह 'अबला' 'रक्षणाकांक्षिणी', अथवा 'पराधीन' नहीं रह गई है। शस्त्र-विद्या, अस्त्र-विद्या तथा यंत्रविद्या का विकास जिस दिशा में हो रहा है, उससे तो यह अनुमान निश्चित रूप से किया जा सकता है

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कि जहाँ मनोबल और बुद्धि-बल अधिक होगा, वहीं वास्तविक शक्ति और सत्त्व होगा। विज्ञान की प्रगति ने स्त्री को पुरुष के साथ तुल्य-बल बना दिया है।

सदियों से स्त्री का जीवन पुरुष-निर्भर और पुरुष सापेक्ष रहा है। इसलिए उसमें बलिदान, आत्मोत्सर्ग और क्लेशसहन की अतुलित शक्ति होते हुए भी कुटुम्ब तथा समाज में उसकी भूमिका गौण रही। ईश्वरभक्ति और आत्मज्ञान में निमग्न पुरुषों ने उसे मोक्षमार्ग की मुख्य बाधा माना। सभ्य पुरुषों ने स्त्री की चर्चा करना वैषयिकता का लक्षण माना। विरक्तों ने उसका मुखावलोकन करना निषिद्ध समझा। विलासियों ने और कवियों ने उसे विलास और उपभोग का साधन माना। गृहस्थों ने माता, भगिनी तथा कन्या के रूप में उसे देवता या पवित्र धरोहर माना। परन्तु इनमें से किसी ने उसे तुल्य स्वत्व और तुल्यपराक्रम मानव नहीं माना। परंतु आज तो सामाजिक जीवन में स्त्री को लिंग-निरपेक्ष नागरिकता का अधिकार प्राप्त है। इसलिए उसे अपने स्त्रीत्व का रक्षण और विकास करते हुए पुरुष निर्भर और पुरुष सापेक्ष जीवन से ऊपर उठना है। समाज में स्त्री-पुरुष का सहजीवन होगा। दोनों का जीवन परस्पर-पोषक और परस्पर-पूरक होगा, परंतु अतःपर स्त्री का जीवन पुरुषापेक्षी तथा पुरुषावलंबी नहीं होगा। यह तभी हो सकता है, जब स्त्री अपनी परंपरागत भ्रांत धारणाओं को छोड़कर 'स्वरक्षित' हो जायगी। इसके लिए उज्ज्वल चारित्र्य की जितनी आवश्यकता है, उतनी ही आवश्यकता पवित्र जीविका की भी है। निष्कलंक चारित्र्य और शुद्ध जीविका ही स्त्री के औपचारिक नागरिकत्व को वास्तविक बना सकती है।

शोषित वर्ग में भी स्त्री निकृष्ट-शोषित रही है। निकृष्ट-से-निकृष्ट पुरुष की अधिसत्ता उस पर आज तक रही है। इसके लिए संविधान और विधान में जो परिवर्तन आवश्यक थे, उनमें से मुख्य-मुख्य परिवर्तन अन्य सभ्य राष्ट्रों की तरह आधुनिक भारत में भी किए जा चुके हैं, अन्य आवश्यक परिवर्तन होते जा रहे हैं। परंतु संविधान और विधान से लाभ उठाने की शक्ति तो स्त्रियों में चारित्र्यबल से ही आ सकती है। विज्ञानयुग आत्मबल का रास्ता प्रशस्त करता है। अतः वर्तमान युग स्त्री के स्वायत्त जीवन का पुण्यपर्व है।

पुरुष होने के कारण स्त्रियों की समस्याओं का प्रत्यक्ष अनुभव मुझे होना संभव नहीं। इस विषय पर मैंने कितना ही विचार क्यों न किया हो, फिर भी मेरा ज्ञान परोक्ष ही रहेगा। आत्मप्रत्यय का आधार न होने से वह अनुमान-प्रमाण पर ही आधारित रहेगा। इसलिए साधारणतः जैसे मैं लड़कों के सामने आत्म-प्रत्यय के साथ बोल पाता हूँ, वैसे लड़कियों के सामने बोल नहीं सकता। लड़कियों की सभा में बोलते समय मुझे थोड़ा संकोच ही होता है। फिर भी इस युग के इस मुख्य सिद्धांत पर, कि लड़के और लड़कियाँ, स्त्रियाँ और पुरुष इनकी भूमिका बराबर होनी चाहिए, मैं कुछ विचार व्यक्त कर सकता हूँ। मैं यह भी कह सकता हूँ कि स्त्रियों को पुरुषों की बराबरी ही नहीं, उनसे भी श्रेष्ठ भूमिका प्राप्त करने के लिए क्या करना होगा।

मुझे ऐसा भी लगता है कि पुरुष के नाते में यह बात और अच्छी तरह कह सकूँगा। जिस दोष के कारण नारी आज तक पुरुषों की बराबरी का स्थान न पा सकी, उसका ज्ञान स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों को अधिक होना संभव है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पुराने जमाने में 'स्नातक' शब्द केवल लड़कों के लिए ही था, क्योंकि ब्रह्मचर्य केवल लड़कों के लिए ही था। बारह वर्ष तक गुरु-गृह में रहकर, अनेक विद्याओं और कलाओं का अध्ययन कर विद्या-विनय-संपन्न ब्रह्मचारी अवभृथ स्नान करता और फिर गृहस्थाश्रम में प्रवेश करता था। अवभृथ स्नान करने वाला ही 'स्नातक' यानी दुनियादारी में पड़ने की योग्यता प्राप्त व्यक्ति कहा जाता था! लेकिन उन दिनों लड़कियों का न तो उपनयन होता था और न आज की तरह कोई उन्हें शिक्षा ही देता था। यही कारण है कि उनके लिए ब्रह्मचारिणी या स्नातिका शब्द का प्रयोग नहीं होता था। लड़की सयानी होते ही स्नातिका समझ ली जाती थी। वह गृहस्थी में प्रवेश करने और मातृपद पाने योग्य मान ली जाती थी। पतिगृह-प्रवेश ही उसका गुरुगृह-प्रवेश और ऋतु-स्नान ही उसका स्नातकत्व माना जाता था।

प्राचीन काल में स्त्रियों के लिए उपनयन या व्रतबंध विहित न होने के कारण ही उन्हें वेदाध्ययन आदि का अधिकार भी नहीं था। उनके बारे में मनु ने मंत्रयुक्त विधि आदि का निषेध किया है। आज भी हम लोग देखते हैं पंडितजी (पुरोहित) स्त्रियों से अभिषेक करवाना हो, तो रुद्र का पाठ न कर महिम्नस्तोत्र का ही पाठ करते हैं, यानी आज भी हमारी धर्म-विधि में स्त्रियों को वेदाध्ययन का अधिकार प्राप्त नहीं है। यही कारण है कि आज भी उनका वेदाध्ययन का संस्कार नहीं किया जाता। उनके लिए न तो गुरुगृह-निवास है और न अवभृथस्नान ही। यह अलग बात कि इस युग में यही लड़कों पर भी लागू हैं।

आजकल हम लोग विभिन्न विद्यालयों एवं विद्यापीठों द्वारा स्त्री-शिक्षा का जो उपक्रम कर रहे हैं, वह एक युगप्रवर्तक कार्य है। प्राचीन वाङ्मय में इसका ऐसा कोई संकेत नहीं मिलता। शिक्षणकार्य के लिए स्त्री माता के नाते पुरुष की अपेक्षा हजार गुना श्रेष्ठ मानी गई है। मनु ने एक जगह कहा है कि "दस उपाध्यायों की अपेक्षा आचार्य श्रेष्ठ है, सौ आचार्यों की अपेक्षा पिता श्रेष्ठ है, और माता हजार पिताओं की अपेक्षा (गुरु के नाते) श्रेष्ठ है।" किंतु प्रत्यक्ष जीवन में इस बात का प्रमाण या कोई चिह्न न मनु के युग में और न बाद के युग में ही दिखाई पड़ता है। स्मृतियों मे भी इनका चिह्न या सूचक संकेत नहीं दीखता। स्मृतियों में एकाध वचन हो, तो उसका संकेत श्रुतियों में कहीं-न-कहीं दिखाई पड़ ही सकता है। मनु के युग में एक भी स्त्री 'आचार्य' दिखाई नहीं पड़ती। अवश्य उससे पहले श्रुतियों में गार्गी, मैत्रेयी जैसे उदाहरण दिखाई पड़ते हैं, फिर भी स्त्री के आचार्य होने का उल्लेख कहीं भी नहीं मिलता। जब स्त्रियों के लिए गुरुकुल ही नहीं थे, तो स्त्री आचार्या कैसे होगी?

आज हम लोग इस विषय में स्त्रियों की भूमिका में क्रांति करना चाहते हैं। आधुनिक शिक्षा-शास्त्र का यह एक महनीय प्रमेय है कि गुरु के नाते स्त्री पुरुषों से हजार गुना श्रेष्ठ है। इसका प्रत्यक्ष प्रयोग हमें प्रगतिशील राष्ट्रों में दिखाई पड़ता है। क्रांतिकारी राष्ट्रों में अग्रगण्य माने जानेवाले रूस में शिक्षक की अपेक्षा शिक्षिका की योग्यता अधिक मानी जाती है। शिक्षण के क्षेत्र में इस प्रमेय का प्रयोग सूक्ष्मता से हुए बिना हम समाज में मूल्यपरिवर्तन नहीं कर सकते। अतएव आगे से जिस अर्थ में लड़कों के लिए 'स्नातक' शब्द रुढ़ हो गया है, उसी अर्थ में वह लड़कियों के लिए भी शिक्षण और जीवन में प्रयुक्त होना चाहिए।

उत्क्रांति या विकास का एक मूलभूत सिद्धान्त यह है कि एक का उद्धार दूसरा नहीं कर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सकता। हरिजनों का उद्धार सवर्ण नहीं कर सकता। इसीलिए बापू जब हरिजनसेवा का आन्दोलन चलाते थे, तब कहते थे कि "अस्पृश्यता-निवारण हरिजनों के उद्धार के लिए नहीं, बल्कि सवर्णों के उद्धार के लिए है। अस्पृश्यभावना से सवर्णों का अधःपतन हो गया है। अतः आत्मशुद्धि के लिए उन्हें हरिजनसेवा करनी चाहिए। हरिजनों का उद्धार तो हरिजन ही कर सकते हैं। अपना उद्धार हम ही कर सकते हैं, यह अवाधित सिद्धान्त है।"

यही न्याय स्त्रियों पर लागू है। पुरुष ने नारी को दवा दिया है। उसका विकास होने नहीं दिया। इस पाप का प्रायश्चित उसे करना ही चाहिए। लेकिन वह होगा खुद के कल्याण के लिए ही, अपने ही उद्धार के लिए; स्त्री पर मेहरवानी, कृपा या करुणा के रूप में नहीं। स्त्री का उद्धार पुरुष कर नहीं सकता। वह तो उसे स्वयं ही करना होगा। दूसरे के मरने से हमें स्वर्ग नहीं दीखेगा।

जब तक 'स्त्री' और 'श्री' के बीच अभेद बना रहेगा, तब तक स्त्री की भूमिका श्री से अलग रह नहीं सकती। महाभारत में भीष्म ने स्त्री का श्री कहा है। मनु ने भी उन्हें 'घर की दौलत' और 'घर की शोभा' कहा है। 'श्री' ओर 'स्त्री' शब्द के उच्चारण में तो साम्य है ही। महाभारत में द्रौपदी को दुर्योधन के दरवार में आने का बुलावा जाता है। इस प्रसंग का वर्णन मोरोपंत ने किया है। उस दूत से द्रौपदी कहती है, "स्त्री म्हण श्री नह्वे"—अर्थात् 'अरे, उन्होंने 'श्री' मंगवाई होगी, स्त्री नहीं।" लेकिन समाज में स्त्री और श्री के उच्चारण में ही नहीं, अर्थ में भी अभेद है। विदर्भ में स्त्री को 'लक्ष्मी' कहने की प्रथा है। 'स्त्रियों का डब्बा' यानी 'लक्ष्मी का डब्बा'। भले ही साहित्य और पुराण में लस्मी विष्णुपत्नी हो, लेकिन प्रत्यक्ष व्यवहार में तो वह जड़ संपति ही मानी जाती है। 'लक्ष्मी' शब्द धन और संपत्ति का ही द्योतक है। महाभारत के अनुशासन पर्व में भीष्माचार्य ने राजा को उन चीजों की सूचि दी है, जिनके चुराये जाने का भय रहता है। उस सूचि में 'स्त्री' भी है। मुझे लगता है कि स्त्रियों के सभी प्रश्नों में यह एक 'यक्ष प्रश्न' है। अगर यह हल नहीं होता, भले ही अन्य सब प्रश्न हल हो जायं, तो उसकी सामाजिक भूमिका विल्कुल नहीं वदल सकती।

इस वस्तुस्थिति का परिणाम हमारी भावनाओं, विचारों और संस्कारों पर हो गया है। स्त्री विश्वास की पात्र नहीं। आप लोग मेरे इस कथन का गलत अर्थ न करें। मैं यह नहीं कहता कि स्त्री मिथ्या या कपटी होती है। वह सर्वदा प्रामाणिक और सत्यनिष्ठ हो सकती है—बिल्कुल सत्यवादी और सदाचारी हो सकती है, फिर भी वह विश्वासपात्र नहीं है। मेरे कहने का अभिप्राय कदाचित् अंग्रेजी के 'अन्‌रिलायेबल' शब्द से अधिक स्पष्ट हो सकता। सर्वथा 'आनेस्ट' (ईमानदार) व्यक्ति भी अन्‌रिलायेबल' हो सकता है। उदाहरणार्थ, छोटा बच्चा या बूढ़ा व्यक्ति सर्वथा आत्मा निर्भर नहीं रह सकते। स्त्री के रक्षणीय होने के कारण उसे अपने खुद के भरोसे छोड़ा नहीं जा सकता। इस दृष्टि से वह अविश्वसनीय न हीने पर भी विश्वास-पात्र भी नहीं है। उसके वारे में हम निश्चिन्त नहीं रह सकते, क्योंकि वह स्वयं निर्भय नहीं है।

आप कहेंगे, 'यह शारीरिक दुर्वलता के कारण स्वाभाविक है।' मैं अधिक विवाद में पड़ना नहीं चाहता, लेकिन स्त्री का यह स्वभाव नहीं, परंपरागत संस्कार ही है—इतना अवश्य कहूंगा। इस बारे में प्रकृति को दोष देना गलत है। दुर्बलता शरीर का धर्म हो, तो भी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वह मन का धर्म नहीं बनना चाहिए, यह मैं अवश्य कहना चाहता हूं। मन कमजोर न हो, तो बस है। इस विषय में स्त्रियाँ, पुरुषों से पेश पा सकती हैं। जिसका मन दुर्बल होता है, उसकी उन्नति संभव नहीं। दुर्बल मन में कोमल भावनाएँ भी नहीं रह सकतीं। कमजोर मन में करुणा नहीं समाती। 'क्षीणा जना निष्करुणा भवन्ति' यह सोलह आना सच है।

स्त्रियों का मन कोमल होता है, यानी कमजोर होता है, ऐसा माना जाता है। लेकिन 'कोमल' का अर्थ 'दुर्बल' नहीं है। 'नाजुक' का मतलब 'कमजोर' नहीं। किंतु स्त्रियाँ 'भीरु' कही गई हैं, इसीलिए उनमें चंचलता की भी कल्पना की गई है। सर्वत्र यही माना जाता है कि कामिनी भी लक्ष्मी जैसी ही चंचल होती है। दशरथ जैसा चक्रवर्ती राजा भी जब कैकेयी के हठवाद से हैरान हो गया, तो उसने स्त्रियों को 'अनित्यहृदया' कहा, यानी कहा कि स्त्रियाँ अस्थिरवृत्ति की होती हैं। चंचलते तेरा नाम स्त्री है—इस वाक्य में शेक्सपियर ने मानो वाल्मीकि के इस वाक्य का अनुवाद ही कर दिया है। प्राचीन सुभाषितकार तो इससे भी आगे बढ़ गये! उन्होंने उद्‌गार व्यक्त किए कि 'पुरुषों के भाग्य की तरह स्त्रियों का चरित्र देवता भी जान नहीं सकते; फिर पामर मानव की क्या बात !"

स्त्रियों के विषय में ऐसी धारणा बनने का एकमात्र कारण है उनका डरपोकपन! भीति और नीति और प्रीति! वास्तविक नीति और वास्तविक प्रीति को स्त्री के जीवन में स्थान ही नहीं रह गया है। उपन्यास और कहानियों का प्रेम अलग है और स्वायत्त एवं सम्पन्न हुए जीवन को जिस प्रेम की जरूरत होती है, वह अलग है।

लज्जा और भीरुता स्त्रियों के भूषण माने गये हैं, इसीलिए वे खुले तौर पर दुनिया में जी भी नहीं पातीं। वे जन्मभर लजाती हुई ही जीती हैं, डरती-डरती ही जीती हैं। उन्हें जीने में भी लाज लगती है। हम जी रही हैं, मानो दुनिया के समक्ष इसके लिए क्षमा-याचना करती हुई बेचारी जीवन बिताती हैं।

मैं स्त्री-जीवन के इस मूलभूत प्रश्न की ओर आप लोगों का ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूँ। समाज में स्त्री के सुरक्षित होने मात्र से उसकी समस्या हल हो नहीं सकती। उसे पुरुषों के बराबरी की भूमिका प्राप्त नहीं हो सकती। पुरुषों द्वारा स्त्रियों की रक्षा की जा सकती है। सभी दुष्ट पुरुषों का सफाया कर देने पर स्त्रियाँ उनसे सुरक्षित हो जायंगी। उन्हें पुरुषों से भय नहीं रहेगा। लेकिन इतने से वे स्वतंत्र कभी नहीं हो सकतीं। जब तक स्त्री 'स्वरक्षित' न होगी, तबतक वह सच्चे अर्थ में 'सुरक्षित' नहीं हो सकती। जबतक उनमें दुष्टों और गुंडों का प्रतिकार करने की क्षमता नहीं आती, तबतक स्त्री-जीवन सुरक्षित और स्वतंत्र हो नहीं सकता जो स्वरक्षित नहीं, वह सुरक्षित भी नहीं। गत महायुद्ध में बहुत-सी स्त्रियों ने युद्ध में अद्‌भुत शौर्य दिखाया, विलक्षण धैर्य और साहस के काम किये, लेकिन इतना करने पर भी उन राष्ट्रों की स्त्रियों की सुरक्षा का प्रश्न शेष ही रहा। शत्रु से रक्षणीय चीजों में अब भी स्त्रियों की गणना की जाती है। इतनी महान् झाँसीवाली 'लक्ष्मीबाई' ने भी, जिसने कि युद्धकर्म की पराकाष्ठा कर दिखाई, अन्त में अपने शरीर की रक्षा के लिए अग्नि का ही सहारा लिया। स्त्री की प्रतिष्ठा, उसकी इज्जत, उसका शील, इस तरह शरीरनिष्ठ बन गया है।

एक दूसरे भी अर्थ में गत महायुद्ध में स्त्रियों की शरीर-निष्ठ उपयुक्तता का प्रमाण

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मिला है। शत्रुपक्ष की गुप्त खबर लाने के लिए गुप्तचरों के काम में स्त्रियाँ नियुक्त की गई थीं। मोहक स्त्रियाँ शत्रु के पास भेजी जाती थीं। इस तरह पुरुषों के चित्त में रही हुई स्त्री-शरीर विषयक कामना का लाभ उठाया गया। कुछ लोग कहते हैं, "इन स्त्रियों ने अपने देश के हित के लिए अपना शील तक दे डाला।" लेकिन मुझे लगता है कि स्त्रियों ने पुरुषों की स्त्री-विषयक कामना से लाभ उठाकर अपने शरीर का दुरुपयोग कर लिया। आखिर अप्सराएँ ही तपस्वियाँ के साथ क्या करती थीं ? इसे ही 'रूप का सौदा' कहा जाता है। इस तरह अपने शरीर का उपयोग करना कभी भी स्त्री को भूषणास्पद नहीं मानना चाहिए। इसमें स्त्री-शरीर की विडम्बना और मानवता का अपमान है।

स्त्री को 'प्रेमजीवी' कहा गया है। उसका हृदय प्रेम का अखण्ड स्रोत है। लेकिन मैं अत्यंत नम्रतापूर्वक बताना चाहता हूँ कि दुर्बल अंतःकरण में प्रेम रह ही नहीं सकता। आजकल हम लोग जिसे स्त्री का प्रेम कहते हैं, वह प्रेम न होकर निष्ठा है। किसी दास के चित्त में अपने मालिक के प्रति अटल निष्ठा हो सकती है। पुराने जमाने में ईमानदार नौकरों की स्वामि-भक्ति प्रसिद्ध ही हुआ करती थी। लेकिन वह निष्ठा, भक्ति यानी प्रेम नहीं है। 'पतिनिष्ठा' का अर्थ पतिप्रेम नहीं। पातिव्रत्य अलग चीज है और प्रेम अलग। दास में निष्ठा होने पर भी प्रेम रहना ही चाहिए, ऐसी बात नहीं। प्रेम के लिए बराबरी का नाता चाहिए। उसमें भय का एक कण भी नहीं रहना चाहिए। लोग कहते हैं, "बिनु भय होत न प्रीत।" लेकिन वस्तुस्थिति इसके विपरीत है। भय और प्रेम एक साथ रह ही नहीं सकते। जबतक स्त्री को पुरुष से भय बना रहेगा जबतक वह उससे खुले दिल से प्रेम नहीं कर सकती।

इसलिए लड़कियों को मेरी पहली सलाह है कि वे भय छोड़ दें। ईश्वर का भी भय छोड़ दें। जिससे भय लगता है, उसे कोई नहीं चाहता। बच्चा कभी मास्टर को नहीं चाहता। बालक कभी नहीं चाहते कि कठोर-प्रकृति पिता घर पर रहे। जिस स्त्री को अपने पति से डर लगता है, वह यही चाहती है कि पति सदा काम पर ही रहे। हमें पुलिस का साथ नहीं सुहा सकता। दूसरों से डर रहने पर ही पुलिस की जरूरत महसूस होती है। इसी तरह स्त्री भी किसी पुरुष का आश्रय इसीलिए करती है कि दूसरे पुरुषों से रक्षा हो सके। एक को वह अपना सर्वस्व-समर्पण कर देती है। इस सर्वस्वदान को 'निष्ठा' भले ही कहा जाय, लेकिन यह समान भूमिका पर बराबरी के नाते का प्रेम नहीं है। जब तक हम शेर से डरते हैं, तब तक उससे हिलमिल नहीं सकते। जब शेर मेमने जैसा सीधा होगा, तभी हम उसे सहला सकते हैं। उससे दोस्ती कर सकते हैं। जिस दिन स्त्री, पुरुषों का भय त्याग देगी, उसी दिन वह उसपर वास्तविक प्रेम कर सकेगी। बलवान मन और बलवान हृदय ही प्रेम का पात्र हो सकता है।

स्त्री स्वरक्षित होनी चाहिए। उसे लज्जा और भय छोड़ देना चाहिए और उसे ऐसा मोड़ शिक्षा से मिलना चाहिए। यह आधुनिक स्त्री-शिक्षा का आधार-भूत सिद्धांत है। यह मान-सिक क्रान्ति सम्यक् शिक्षण से ही सध सकती है।

शिक्षण-पद्धति सम्बन्धी अन्य मुद्दे स्त्री और पुरुष, दोनों के शिक्षण के लिए सामान्य हैं। मैं उनका बहुत ही सरसरी तौर पर उल्लेख कर सकूँगा। आज का शिक्षणशास्त्र कहता है कि शिक्षा में सामंजस्य और अनुबंध चाहिए। शिक्षा के विभिन्न विषयों पर परस्पर संबंध ही

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सामंजस्य है और कुल शिक्षा का जीवन से संवद्ध होना ही 'अनुबंध' है।

सामंजस्य और अनुबंध के सिवा शिक्षा का एक तीसरा भी सिद्धांत है। उसे हम 'विनय' कहें। अंग्रेजी में जिसे 'कल्चर' कहते हैं, उसे हम 'विनय' कहेंगे। विनय यानी 'सदभिरुचि'। यह व्यक्ति की रुचि, अरुचि और व्यवहार से व्यक्त होती है। हमारे प्राचीन साहित्य में विद्या और विनय का अभेद्य संवंध माना गया है। मानव की अभिरुचि उसके उठने-वैठने, बोलने-चालने, देखने-सुनने यानी जीवन के सभी व्यवहारों से व्यक्त हुआ करती है। अंग्रजी में जिसे हम कल्चरल वैल्यू या सांस्कृतिक मूल्य कहते हैं, उसमें मुख्यतः दो गुणों का समावेश होता है—एक सुसंस्कृत अभिरुचि और दूसरा बैलेंस अर्थात् संतुलन या तारतम्य। विनयहीन विद्या संतुलित नहीं रहती। मानव के मनोरंजन में भी यही है। उसके मनोरंजन में भी, मुख्यतः उसकी अभिरुचि स्पष्ट होती है। अन्य जीवों को कष्ट देनेवाला मनोरंजन सदभिरुचि से रहित हुआ करता है। अगर वच्चा मेंढक की जान ले रहा हो तो उसका वह खेल आसुरी ही माना जाता है। जिस खेल में दूसरों के सुख का ध्यान होगा, वह सुसंस्कृत और सदभिरुचिपूर्ण कहा जायगा। इस विनयशीलता को ही समाजशास्त्र की भाषा में 'सामाजिकता' कहा जाता है। शिक्षा के कारण यह सामाजिकता वढ़नी चाहिए। जीवन के प्रत्येक व्यवहार में हमें दूसरों के साथ काम करने की कला सधनी चाहिए। स्त्री-पुरुषों को एक-दूसरे के साथ वर्ताव करने में भी यह कला सधनी चाहिए। सार्वकालिक सदभिरुचि की यही कसौटी है।

स्त्री पुरुषों के साथ खुले तौर पर रह सके, इसके लिए उसे आज तक अपने हाड़-मांस में भिदी हुई वहुत-सी गलत धारणाओं को त्याग देना होगा। ऐसी धारणाओं में एक यह भी है कि 'स्त्री का शरीर काँच के वर्तन जैसा है। इसलिए उसकी इज्जत कुरकुरी है।' अगर आप लोग इस धारणा से चिपकी रहेंगी, तो आप के साथ काँच के वर्तन की तरह ही वर्ताव करना होगा। आपके जीवन पर यह लेवल लगाना पड़ेगा—'ग्लास विद केयर'—यानी सँभालो यह काँच है। काँच के वर्तन अन्य वर्तनों के साथ कभी नहीं रखे जा सकते, वल्कि वे एक-दूसरे के साथ भी नहीं रखे जा सकते। एक-दूसरे के साथ रखना हो, तो उनमें वीच में रुई या कागज का भूसा भरना पड़ता है। जव तक स्त्रियों के मन में यह गलत और खुराफाती धारणा बनी रहेगी, तब तक स्त्रियों के वीच भी परस्पर मैत्री हो नहीं सकती। उनमें भी परस्पर अविश्वास ही वना रहेगा। वीच-वीच में भूसा भरना पड़ेगा। यही कारण है कि 'पुरुषों का मत्सर' प्रसिद्ध नहीं है, 'स्त्रियों का ही मत्सर' प्रसिद्ध है। 'स्त्रियों की मैत्री' प्रसिद्ध नहीं। पुरुष ने अपने मित्र के लिए पत्नी के गहने भी वेच दिये, ऐसी कथाएँ मिलती हैं, लेकिन यह कभी सुनाई नहीं पड़ता कि किसी स्त्री ने अपनी सहेली के लिए पति का सोने का ठोस कड़ा या घड़ी वेच दी हो। स्त्री का प्रेम अपने परिवार के सीमित क्षेत्र में ही अपना चमत्कार दिखलाता है। अब समाज के व्यापक क्षेत्र में उनका तेज और माधुर्य अनुभव में आना चाहिए। उस प्रेम की उत्कटता और निरपेक्षता से हमारा सामाजिक जीवन उन्नत और उदात्त होना चाहिए। ऐसा होने के लिए भीरुता स्त्री का भूषण न होकर दूषण है, यह बात लड़कियों के हृदय में अंकित कर देनी चाहिए।

भीरुता की तरह 'लज्जा भी स्त्री का एक गुण है, यह एक भ्रम लोगों में प्रचलित है। वास्तव में लज्जा गुण न होकर दोष ही है। भय की तरह वह भी बहुत बड़ा दुर्गुण है। उनके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लिए मर्यादा और संयम के अर्थ में ही 'भय' और 'लज्जा' बताई गई है। यहाँ 'भय' शब्द का अर्थ 'मर्यादा' और 'लज्जा' शब्द का अर्थ 'तारतम्य' है। शिष्टाचार और शालीनता की मर्यादाएँ स्त्रियों की तरह पुरुषों को भी पालनी चाहिए। शालीनता या विनय दोनों के जीवन की शोभा है। लज्जा का अथ विनय नहीं। लज्जा यानी कुलीनता नहीं, शालीनता नहीं। आप लोगों को बुरके में या परदे में जीने के स्थान पर खुली हवा में ही जीना आना चाहिए। अगर आप लोग काँच के वर्तन हों, तो आपको बंद अलमारी में सावधानी के साथ रखना पड़ेगा। समझ-बूझकर बचाकर आपका उपयोग करना पड़ेगा। आपको काँच का वर्तन बनने में ही भूषण मालूम पड़ता हो, तो आपके जीवन में-काँच सी चमक और पारदर्शकता अवश्य होनी चाहिए, लेकिन उसका नाजुकपन नहीं चाहिए। उसका कुरकुरापन नहीं चाहिए। विनयशीलता के साथ इस तरह के खुलेपन का कोई विरोध नहीं।

संक्षेप में मैंने छः बातें बताईं :

१. स्त्री सुरक्षित नहीं, स्वरक्षित होनी चाहिए।

२. अब से शिक्षण के विकास के लिए उसमें सामंजस्य और अनुबंध, ये दो तत्त्व दाखिल होने चाहिए।

३. शिक्षण का स्वाभाविक परिणाम विनयशीलता में होना चाहिए।

४. स्त्रियों को स्त्रियों और पुरुषों के साथ समान भूमिका पर मित्रता के नाते रहने की कला सधनी चाहिए।

५. समानतत्त्व यानी समान रूपत्व नहीं। स्त्री पुरुषों की बराबरी की होगी, यानी वह उसके जैसी होगी, ऐसी बात नहीं है। विकसित स्त्री का अर्थ 'नकली पुरुष' नहीं है। यहाँ 'समानता' का अर्थ 'तुल्यता' है। स्त्री की भूमिका पुरुषों की भूमिका के तुल्य रहेगी। सरस भी होगी। कई विषयों में समान भी रहेगी। लेकिन उससे कम दर्जे की कभी न रहेगी। स्त्री की प्रतिष्ठा वीरमाता या वीरपत्नी होने में ही नहीं, वीरांगना होने में है। वीरपुरुष की पत्नी बनकर घूमने से वह वीरांगना नहीं होगी। जिसका पराक्रम स्वायत्त (स्वाधीन) होगा, वही वीर स्त्री है। वीर पुरुष की तरह वीर स्त्री बनने में आपको भूषण, गर्व, मानना चाहिए।

६. 'नया युग आयेगा' यह भगवान् कह चुके हैं। पुराने मूल्य समाप्त होकर उनकी जगह नई दुनिया के नये मूल्य आयेंगे। उन नये मूल्यों का आधारभूत परम मूल्य है, स्त्री-पुरुषों का साधारण मनुष्यत्व। उसकी प्रतिष्ठा शिक्षा से बढ़नी चाहिए, जीवन में रूढ़ होनी चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समन्वय-संस्कृति और नारी

काका कालेलकर

भारत एक बड़ा विस्तृत देश है। इसकी संस्कृति भी मानवजाति के इतिहास जितनी पुरानी है। दुनिया के सब धर्म यहाँ आकर बसे हैं। यहाँ पहाड़ी प्रदेश भी हैं, बड़े-बड़े जंगल हैं; सारा देश खेती प्रधान तो है ही। कहीं-कहीं रेगिस्तान पाये जाते हैं और तीन हजार मील का इसका समुद्री किनारा है। यहाँ पर जीवन की जो विविधता है सो कल्पनातीत है। लोक-संख्या का बड़ा हिस्सा हिन्दुओं का है, बाकी के धर्म-समाज भी जातियों का रूप लेकर यहाँ अपना-अपना विकास करते आये हैं।

यहाँ पर भाषाएँ भी अनेक हैं। फलतः जितनी भाषाएँ, उतने अलग समाज—ऐसी स्थिति पाई जाती है। इसमें भी हरेक जाति का जीवनक्रम अलग है। खान-पान के नियम अलग हैं। इसलिए सबों के लिए समान एकसा सामाजिक जीवन पाया नहीं जाता।

यह हो गई सारे राष्ट्र की हालत; जिसमें पुरुष जाति ही प्रधान है। यहाँ पुरुषों का जीवन इस विविधता के कारण ओतप्रोत नहीं है, वहाँ स्त्रियों का जीवन तो पुरुषों से भी अधिक विच्छिन्न है—एकाकी है और परस्पर भिन्न है। किसी एक भाषावाले प्रदेश को ही लीजिए; उस प्रदेश के सब लोग एक भाषा बोलते हैं तो भी सारा समाज परस्पर ओतप्रोत नहीं है। हिन्दू समाज मुसलमानसमाज से अलग रहता है, इसमें तो बड़ा आश्चर्य नहीं; लेकिन लोगों को एक-दूसरे के समाज की आन्तरिक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्थितिका परिचय भी कम है। इस्लाम और ईसाई धर्म दोनों जागतिक होने का दावा करते हैं; वे अन्य धर्मी लोगों से कहते रहते हैं कि 'अपना धर्म छोड़कर हमारे धर्म का स्वीकार करो, हमारे साथ ओतप्रोत बन जाओ, तभी तुम्हारा उद्धार होगा।' एक ही धर्म सारी दुनिया में चले ऐसा आदर्श लेकर जो समाज जीता है और अपना विकास करता है उसमें तो एकता को सम्भव मानने और बढ़ाने का आग्रह होना चाहिए। लेकिन ये दो धर्म-समाज भी भारत में एक-एक जाति के-जैसे बनकर रहे हैं। बंगाल की मुस्लिम स्त्रियाँ और पंजाब की मुस्लिम स्त्रियाँ समान धर्म के बाद भी एक समाज नहीं बन सकी हैं—यह अलगाव कितना भयानक है। इसका सबूत अत्यन्त कठोर और शर्मनाक रूप में दुनिया देख सकती है। पंजाब की मुस्लिम पाकिस्तानी फौज ने बंगाल की मुस्लिम स्त्रियों पर, लाखों की संख्या में जो अत्याचार किए उसका वर्णन पढ़कर समस्त मानवजाति शर्म के कारण लज्जित हो गई है।

ऐसी हालत में सारे देश में भारतीय नारी का एक समाज कहाँ से हो सकता है ? भारत की सब स्त्रियों के बारे में एकत्र सोचना कठिन बात है। इस विषय पर जो किताबें उपलब्ध हैं उनमें ज्यादातर हिन्दू स्त्रियों के जीवन का ही विचार किया किया है।

भाषा-भेद, धर्म-भेद, प्रादेशिक-भेद, जाति-भेद आदि अनेक भेदों के उपरान्त आर्थिक सुस्थिति अथवा उसके अभाव के कारण भी समाज में भिन्नता आ जाती है। उनका आपस में मिलना कठिन होता है। ऐसे भेद को रोटी व्यवहार और बेटी व्यवहार की मर्यादाओं के द्वारा पहचाना जाता है।

ऐसे इस देश में नारी जाति के स्वरूप इतने-इतने भिन्न होते हैं कि उनका एकत्रित विचार करना आसान नहीं है। तो भी उनकी समस्याओं में चन्द सवाल समान पाए जाते हैं। इसलिए भारतीय नारी का चिन्तन हम कर सकते हैं और भविष्य में एकता बढ़गी, ऐसी अपेक्षा के कारण भी हम इस सवाल को एकत्रित रूप में सोच सकते हैं।

हमने शुरू में कहा कि केवल भारत में ही नहीं सारी दुनिया में जो भी सामाजिक संगठन हैं, सबमें पुरुषों की प्रधानता है। धर्मों का चिन्तन, धर्मों के संगठन, आय के साधन और सामाजिक संगठन का स्वरूप सब बातें पुरुष-निर्मित है। मानवीय संस्कृति भी पुरुष-संस्कृति है। समस्त स्त्री-जाति मानवता का आधा हिस्सा है सही, लेकिन वह आश्रित, उपेक्षित और अनुयायी है। यह भेद इतना पुराना है, इतना दृढ़मूल हो गया है कि सामान्य मान्यता है कि पुरुषों की श्रेष्ठता, स्त्रियों की ऐसी दशा, प्रकृति निर्मित यानी स्वाभाविक ही है।

ऐसा समझने के कुछ कारण भी हैं। मानववंश चलाने के लिए बच्चों को जन्म देना अत्यावश्यक है—इसमें पुरुष-स्त्रियों के सहयोग से ही बच्चे पैदा होते हैं। तो भी बच्चों का भार सबसे अधिक स्त्री पर ही होता है। बच्चों को ९ महीने माँ अपने गर्भ में रखती है और अपने खून से उसका विकास होने देती है। जन्म के बाद भी बच्चे को काफी समय तक माँ के दूध पर ही जीना पड़ता है। यह दूध भी बच्चे को माँ के शरीर से मिलता है। मनुष्य दुनिया में कहीं भी जाय, बच्चों का पालन-पोषण माँ को ही करना पड़ता है। फलतः घर में रहना, घर चलाना, खाना पकाना, बच्चों को अच्छे संस्कार देना—यह सब काम माता को ही करना पड़ता है। इतना बड़ा सांस्कृतिक बोझ माता उठाती है। इसी कारण माँ कमाने का धन्धा नहीं कर सकती।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मानवता की सब प्रवृत्तियाँ माता को ही करनी पड़ती हैं। इसी कारण पुरुष बाहर का काम सम्हालता है। आय का कमाना, खेती करना, घर बनाना, युद्ध चलाना आदि सब काम पुरुष को ही चलाने पड़ते हैं। तब स्वाभाविक है कि स्त्री सदा पुरुष की आश्रित रही।

सामान्यतौर पर हम कह सकते हैं कि विवाह संस्था भी बच्चों के विकास के कारण ही पैदा हुई है। विवाह संस्था का विचार स्त्रियों की और पुरुषों की आवश्यकताएँ ध्यान में लेकर नहीं, किन्तु बच्चों के जन्म और विकास के कारण ही पैदा हुआ है।

स्त्री-पुरुषों को एक-दूसरे का सहवास चाहिए, सम्भोग-सुख चाहिए। संस्कारी जीवन जीने से लिए श्रम-विभाग आवश्यक है। लेकिन यह सारा विवाह संस्था की स्थापना के बिना सम्पन्न हो सकता था। सामान्य मैत्री में जितना सहयोग और सहजीवन आवश्यक है उसके कारण विवाह के जैसी संस्था उत्पन्न नहीं होती। माता-पिता का सहयोग और सह-जीवन और परस्पर निष्ठा—तीनों बातें बच्चों के विकास के लिए ही आवश्यक हैं।

जिस तरह आहार प्राप्ति के लिए मनुष्य ने खेती की कला बनाई, गो-रक्षा का प्रारम्भ किया, चीजों के विनियम के लिए बाजार जैसी संस्था स्थापित की, उसी तरह बच्चों की परवरिश के लिए विवाह संस्था सोची गई है।

पति-पत्नी की परस्पर निष्ठा, उन दोनों के जीवन विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक है इसमें तनिक भी शंका नहीं है; किन्तु इससे भी अधिक यह बात सोची गई कि बच्चों के विकास के लिए परस्पर निष्ठावान् माँ-बाप होने चाहिए। उनका सह-जीवन स्थायी होना चाहिए। बच्चों को उनकी रक्षा, उनका भरण-पोषण, और जीवन-विकास के लिए शिक्षा आदि सब बातें आवश्यक है हीं, लेकिन इसके अलावा बच्चों को माता-पिता के वात्सल्य का भी अनुभव होना आवश्यक है। अन्न की जितनी आवश्यकता है, उतनी ही आवश्यकता परस्पर निष्ठा वाले स्थायी रूप से गृहस्थाश्रम चलाने वाले माँ-बापों को वात्सल्य की, बच्चों के प्रेम आदि की है।

अगर हमने मान्य किया कि विवाह संस्था बच्चों के हित के लिए ही प्रधानतया खड़ी की गई है तो हम मानते हैं कि स्त्री-जाति की सब समस्याओं का हल हमें इसी में से मिलेगा। इतना ही नहीं, नारी जाति की सब समस्याओं का हल इसी एक शुद्ध दृष्टि के स्वीकार से मिल सकेगा।

विवाह की संस्था मान्य करने के बाद स्त्रियों को यह अपेक्षा रखने का अधिकार प्राप्त हुआ कि 'माताएं घर चलाएँगी और घर की रक्षा का बोझ पुरुषों के कन्धे पर रहेगा।' आजीविका प्राप्त करने का भार पुरुषों पर ही होगा। इसलिए खेती करना, बाजारों का संगठन करना तरह-तरह के उद्योगों के द्वारा चीजें पैदा करना आदि सब काम और समाज हित का अधिकांश चिन्तन पुरुषों को ही करना पड़ा।

यह जो बड़ा श्रम-विभाग स्त्री-पुरुषों के अन्दर शुरू से चला आया है उसमें यह जरूरी नहीं था कि पुरुषों को हम श्रेष्ठ मानें और स्त्री को हम आश्रित मानें। विवाह में विवाह के द्वारा उत्पन्न होने वाली कुटुम्ब संस्था में स्त्री-पुरुष दोनों का समान सहयोग है। वे किसी के आश्रित नहीं हैं। अधिकार दोनों के समान होने चाहिए। समान अधिकार की बात अब दुनिया

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के सब पुरुष मान्य करने लगे हैं और स्त्रियों को हर क्षेत्र में स्थान भी मिलने लगा है। लेकिन इतना बस नहीं है। धर्म संस्था को जन्म दिया पुरुषों ने, समाज का संगठन किया पुरुषों ने, राज्य चलाने का काम आज तक ज्यादातर पुरुषों का ही रहा और युद्ध-कला तो पुरुषों की ही ईजाद है। इस तरह जो नेतृत्व आज तक पुरुषों का रहा उसमें हमारे लेखे तो क्रान्ति के दिन अब आए हैं।

मानव जीवन के विकास में पुरुषों ने तीन तत्त्वों का विकास किया जो आइन्दा के लिए बाधक साबित होंगे। एक है, प्रतिस्पर्धा (कॉम्पीटीशन) दूसरा है शोषण (एक्सप्लायटेशन) और तीसरा है युद्ध (वॉर)। दूसरे को दबाकर आगे बढ़ना यह है स्पर्धा। दूसरे की मेहनत से नाजायज लाभ उठाना यह है शोषण और दूसरे को मारकर उसकी जायदाद पर अपना अधिकार कर लेना यह है युद्ध। ये तीनों तत्त्व हैं तो असंस्कारी, अन्यायमूलक, अतएव असमाजिक; किन्तु जब तक इनके द्वारा किसी एक पक्ष को भी लाभ मिलता रहा—ये तीनों तत्त्व मानवीय प्रगति के लिए अत्यावश्यक माने गए। किन्तु अब इनकी हद आ गई है। विज्ञान की प्रगति के कारण, यंत्र विद्या की प्रगति के कारण और संगठन के विस्तार के कारण आइन्दा हरेक युद्ध विश्व युद्ध बननेवाला है और युद्ध के अन्त में किसी भी एक पक्ष का विजय न होते हुए सम्भावना दोनों पक्ष के नाश की ही है। मनुष्य संख्या का नाश, और मानवीय मूल्यों का नाश ! यही फल होगा संघर्ष, शोषण और युद्धों का।

इससे अगर बचना है तो 'संघर्षमूलक संस्कृति' को ही तिलांजलि देकर 'समझौता और समन्वय की नयी संस्कृति' स्थापित करनी होगी। इसमें स्त्री-मानस ही अधिक काम देगा। इसलिए आज स्त्री-जाति का नेतृत्व अत्यावश्यक हो गया है।

आज की पुरुष निर्मित संघर्ष-मूलक संस्कृति का भविष्य हमें विनाश की ओर ले जाएगा, ऐसा देखकर संस्कृति में ही आमूल परिवर्तन करने की बात हम सोच रहे हैं और आशा करते हैं कि संघर्ष-मूलक संस्कृति की जगह समन्वयमूलक एक बिलकुल भिन्न संस्कृति लाई जा सकती है। इसमें स्त्रीजाति का नेतृत्व हमें मदद करेगा; क्योंकि स्त्रीजाति के हाथ, युद्ध में बहाए जाने वाले रक्त से लाल नहीं बने हैं।

हम जानते हैं कि स्त्रियाँ भी झगड़ा करती हैं। सामाजिक शोषण से स्त्रियाँ लाभ उठाती आई हैं तो भी स्त्रियों का विषय तो घर चलाने का है। पुरुष युद्ध चलाते रहे, स्त्रियाँ घर चलाती रहीं। इस सबमें उन्हें दिन-रात समझौता करना ही पड़ता है। समन्वय के मानस का विकास स्त्रियों के द्वारा हुआ है। इसलिए हम चाहते हैं कि स्त्री-जाति अब पुरुष-संस्कृति की अनुयायी न बने। किन्तु 'समन्वय संस्कृति' की निर्मित में अपनी सारी शक्ति लगा दे। धर्म अर्थ, काम और मोक्ष ये चारों अगर पुरुषार्थ हैं तो इनका समन्वय नार्यर्थ है। (१) धर्म आज तक सारी दुनिया में लड़ता रहा है और अधर्म बढ़ रहा है। (२) दुनिया की अर्थ-व्यवस्था आज तो शोषणमूलक है। (३) काम का पुरुषार्थ तो प्रमुख पुरुषार्थ बना बैठा ही है। पुरुषों को चाहे जितनी स्त्रियाँ करने का अधिकार प्रारम्भ से था और (४) मोक्ष की साधना कभी सामाजिक बनी ही नहीं। ऐसे इतिहास को जानते हुए हम कहेंगे कि अब समन्वय को नजर के सामने रखकर स्त्रियों का नेतृत्व मान्य करना होगा और विश्व की नारी को संघर्षमूलक संस्कृति का

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विरोध करते हुए नयी धर्म-साधना देनी होगी। अर्थ-व्यवस्था में भी बुनियादी सुधार करना होगा। और काम-वासना को वात्सल्य की दासी बनाना होगा।

तीन पुरुषार्थों की ऐसी नयी व्यवस्था सिद्ध होने के बाद चतुर्थ पुरुषार्थ मोक्ष को सामाजिक बनाना होगा। व्यक्तिगत मोक्ष मोक्ष ही नहीं है। किन्तु पलायन है। उसकी जगह जीवन योग द्वारा सामाजिक मोक्ष स्थापित करने की आध्यात्म संस्कृति सूचित करने का काम नारी जाति को ही करना पड़ेगा।

नारी जाति के जितने भी सवाल आज पूछे जाते हैं अथवा इतिहासक्रम से हमारे सामने खड़े होते हैं उन सवालों के इलाज इस नये आदर्श के अनुसार 'समन्वय सिद्धान्त' को अनुकूल रखकर ढूंढ़ने पड़ेंगे। इसी दृष्टि से थोड़ा चिन्तन करके आज उठाए जाने वाले सब सवालों का जवाब देना है। हम थोड़े में बताते जाएँगे। जहाँ बुनियाद ही बदलनी है वहाँ विस्तार के लिए अवकाश कम रहता है। नई बुनियाद मान्य होने पर विस्तार तो हर कोई कर सकता है।

प्रथम सवाल है नारी के शिशुकाल की समस्या का। छोटे बच्चे मां-बाप के दिये हुए संस्कार आसानी से ग्रहण कर सकते हैं और ये बचपन के संस्कार ही संस्कृति की बुनियाद है। ऐसे संस्कार बच्चों को देना ही चाहिए। लेकिन साथ-साथ हम कहेंगे कि "देखिए आज तक सब लोगों ने जिन रिवाजों को अच्छा माना, और जो रिवाज हम स्वयं पालते आये हैं सो ही तुमको दे रहे हैं। लेकिन भविष्य के जमाने को इनमें सुधार करने का तुम्हें पूरा अधिकार है। इसलिए आज तो हमारे रिवाज और संस्कार मान्य करके चलो। बड़े बनने पर उनमें सुधार करने का मौका तुम्हें मिलेगा। संस्कारों के बिना मनुष्य का अधःपात होता है। उससे आज हम तुमको बचायेंगे। लेकिन इन संस्कारों से भी अच्छे संस्कार हो सकते हैं, जिनमें अधिक न्याय, अधिक आत्मीयता प्राप्त हो सकती है। इसका इंकार हम नहीं करेंगे और जब तुम उम्र में बड़े बनोगे और नयी-नयी बातें तुम्हारे दिमाग में उगेंगी तब हम तुमको सुधार करने से रोकेंगे नहीं।" बच्चों को ऐसे गम्भीर शब्दों में समझाया नहीं जा सकता। बच्चों को किन शब्दों में समझाना, मां-बाप जानें। मां-बापों को कैसे सोचना चाहिए, यही हमने यहां बताया है।

छोटे बच्चों में स्त्री-पुरुष का भेद नहीं रहता। दोनों को एक-से ही संस्कार दिये जाते हैं। तो भी कभी-कभी लड़कियों को सिखाया जाता है कि "तुम तो लड़की हो, लड़कों की प्रतिष्ठा तुम्हें नहीं मिलेगी। पुरुषों के सामने स्त्रियों को दब कर ही रहना चाहिए।" ऐसे कुसंस्कार लड़कियों को नहीं देने चाहिए। इतनी बात सम्हाल ली तो शिशुकाल की कोई समस्या नहीं रहेगी।

बचपन की शिक्षा भी दोनों की एक-सी होनी चाहिए। इतना ही नहीं किन्तु एक-साथ होनी चाहिए। दोनों को बचपन से अलग-अलग रखने से दोनों का मानस विकृत होता है। जब तक बच्चे कपड़े पहनते नहीं तब दोनों को, एक-दूसरे को नग्न-अवस्था में देखने का मौका मिलता है। वह हालत अच्छी है और इसलिए, कपड़े पहनने के बाद, सह-शिक्षा ही स्वाभाविक है।

अब सवाल आता है। विवाहित दशा की समस्याओं का। हमारी संस्कृति में सुरक्षा इसमें मानी गई कि काम-विकास जाग्रत होने के पहले ही लड़के-लड़कियों के विवाह किये जायं जिससे मन में अपने पति और पत्नी को छोड़कर और किसी के प्रति मन में विकार पैदा ही न

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हो। ऐसे आदर्श से हमने क्या पाया, क्या खोया—यह सब अनुभव की बात है। अब हम मानने लगे हैं कि किसी पर भी, पति या पत्नी, मां-बाप की ओर से या बाहर से लादे न जाएँ। बालिग़ होना एक बात है। शादी का महत्त्व समझने की बात दूसरी है। लड़का हो या लड़की सोलह या अठारह वर्ष तक उनके शादी की बातें ही नहीं होनी चाहिए। उसके बाद शादी की चर्चा भले हो किन्तु अठारह या बीस वर्ष तक शादी कर बैठना अयोग्य समझना चाहिए।

और शादी में भी, अगर मां-बापों ने तय किया तो लड़के और लड़की दोनों की सम्मति लेनी ही चाहिए। दोनों को एक-दूसरे से सामान्य परिचय का मौका मिलना ही चाहिए इसके लिए एकान्त की जरूरत नहीं है। अगर दोनों में से एक भी कहे कि हमें परस्पर पूरा परि- नहीं है, हमें सोचने के लिए समय दीजिए तो उनकी बात माननी चाहिए।

आज की हमारी सामाजिक हालत देखते मैं कहूंगा कि अगर युवा और युवती स्वेच्छा से शादी करना तय करें तो अपने-अपने मां-बापों की सम्मति लेना उन्हीं के हित की बात है। मां-बाप आसानी से सम्मति न दें तो ज़रा ठहरना अच्छा होगा और अपनी जिद पकड़कर मां-बाप से लड़ने का अधिकार तो अपत्यों को है ही; लेकिन मां-बाप को जानकारी दिए बिना शादी करना तो अनिष्ट कारक ही ठहरेगा।

विवाह के बाद नूतन दम्पत्ति मां-बाप के साथ अपने घर पर रहें या अलग घर बनाकर रहें, इस सवाल की चर्चा पहले नहीं होती थी। शादी के बाद बहू को सास के साथ रहना और नये घर के संस्कार पाना अत्यन्त ज़रूरी माना जाता था। अब वे दिन नहीं रहे। अब तो जहाँ नौकरी मिले वहाँ तुरन्त जाना ही पड़ता है। इसलिए साथ रहना या अलग रहना यह सवाल चर्चा का विषय नहीं रहा। परिस्थिति ही निश्चित कर देती है। तो भी सामान्यतौर पर हम कहेंगे कि कौटुम्बिक प्रेम की वृद्धि के लिए कम से कम साल-दो साल एकत्र रहना सब तरह से इष्ट है। किसी तरह का संकट आया तो आखिरकार सगे-सम्बन्धी ही मदद के लिए दौड़कर आ सकते हैं। यह भूलना नहीं चाहिए। और साथ रहने से जो सामाजिक सद्‌गुण वृद्धिगत होते हैं और सहज तथा स्वाभाविक बन जाते हैं। उनका महत्त्व कम नहीं है।

और एक बात है। विवाह होने के बाद जो पहला बच्चा आता है, उसकी सम्हाल अकेली माता अच्छी तरह से नहीं कर पाती। अस्पतालों के द्वारा और दाई रखकर भी बच्चों को वह लाभ नहीं मिल सकता जो घर के लोगों की सेवा के द्वारा मिलता है। यों यह मान्य कर लेना है कि पुराने ढंग की अविभक्त कुटुम्ब पद्धति चाहे जितनी सुन्दर और कल्याणकारी हो आज का युग उसके लिए अनुकूल नहीं है। इसलिए इसका जितना लाभ लेना-देना जरूरी है, उसे समझ लेना ही ठीक होगा।

हम जब नारी जाति के जीवन पर विचार करते हैं तब केवल मध्यम वर्ग के खानदान का विचार हमें नहीं करना चाहिए। मजदूरी करके जीवन जीने वाले लोगों को शूद्र समझकर उनके साथ विवाह सम्बन्ध नहीं करने का मध्यमवर्ग का रिवाज़ अथवा आदर्श तोड़ना ही चाहिए। आइन्दा मध्यमवर्ग के लोगों को घर में आवश्यक मज़दूरी तो करनी ही पड़ेगी। नौकर रखने का रिवाज़ बहुत मँहगा होगा और खतरनाक भी होता चला जायेगा। फिर नौकरी भी केवल कलम चलाने की, याने बैठी नौकरी, अब नहीं मिलेगी। सामान्य मज़दूर को भी काम का कौशल सीखना

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पडेगा और उसको तनख्वाह भी पूरा पेट भरने के लिए देनी ही होगी। ऐसी हालत में मजदूर वर्ग और मध्यम वर्ग—ऐसा कड़ा सामाजिक भेद रहेगा नहीं।

और अगर गांधीजी का सर्वोदयवाद मान्य किया तो देश में अमीर भी नहीं रहेंगे। मानव-जाति में नैतिक आदर्श के कारण ही काफी समानता स्थापित होगी।

जो हो समाज में भिन्न-भिन्न कुटुम्बों में परस्पर सहयोग बढ़ाने की प्रवृत्ति अत्यावश्यक है। समन्वय संस्कृति में कौटिम्बक भाव जाति तक जाकर रुक नहीं जायेगा। एक अंचल में रहने वाले सारे समाज में सामाजिकता इतनी वढ़ेगी कि जातिभेद, वर्णभेद तो क्या धर्मभेद भी समाज के टुकड़े नहीं कर सकेगा।

अव सवाल लेंगे परित्यक्ता का और विधवा का। लेकिन इसके पहले ऐसी स्त्रियों का सवाल प्रथम सोचना चाहिए जो स्वेच्छा से अविवाहित रहना चाहती हैं। ऐसी अविवाहित स्त्री ज्यादातर अपने मां-वापों के साथ, रिश्तेदारों के साथ अथवा अच्छे संस्कारी, स्नेही आत्मीयजनों के परिवार में रहेगी, उसे अलग सोने का कमरा मिलना चाहिए और अपना हिसाव अलग रखने की सहूलियत और मुसाफिरी में जाने की स्वतंत्रता पूरी-पूरी होनी चाहिए। अगर इतना रहा तो अविवाहित स्त्री की कोई खास समस्या रहती नहीं।

लेकिन जिस स्त्री को किसी परिवार में नहीं रहना है, अकेले रहना है, उसकी समस्या तो वह स्वयं हिम्मतपूर्वक हल करेगी ही। समाज कुछ समय तक उसकी निन्दा करेगा, वाद में या तो उसका पूरा वहिष्कार करेगा अथवा उसे आदर के साथ अपनायेगा। अकेले रहने वाली स्त्री के सवाल उसके चारित्र्य और इससे भी वढ़कर उसके स्वभाव पर निर्भर रहेंगे। अकेले रहने का प्रयोग पूरी हिम्मत के विना हो नहीं सकता और हिम्मतवाली स्त्री की समस्या वह स्वयं हल कर ही सकती है।

अव सवाल रहा परित्यक्ता का और विधवा का। हम कहेंगे कि जिस विधवा के वाल-वच्चे नहीं हैं उसको तो पुनर्विवाह करना ही अच्छा है। प्रथम विवाह और पुनर्विवाह के वीच भेद मानने की आवश्यकता नहीं है। चारित्र्य अच्छा है तो दोनों में सव समस्याएं समान होती हैं और आसान होती हैं।

जिस विधवा के बाल-बच्चे हैं उसको तो अगर हो सके तो वाल-वच्चों के हित के लिए पुनर्विवाह नहीं करना ही हितकर होने की सम्भावना है। तो भी अगर बच्चों की व्यवस्था अच्छी तरह से हो सके तो विधवा को पुनर्विवाह करने की इजाजत तो होनी ही चाहिए, उसे प्रोत्साहन भी मिलना चाहिए।

परित्यक्त होने में दोष पति का भी हो सकता है, पत्नी का भी हो सकता है। स्वभाव का दोष ही मुख्य कारण होता है। और कभी-कभी सामाजिक संकुचिता के कारण भी विवाह तोड़ना पड़ता है। इसलिए हरेक परित्यक्ता को निंदा-योग्य समझने की भूल समाज न करे। उसे सदा सहायता का पात्र समझा जाना चाहिए। उसकी कोई अलग समस्या मानने की आवश्यकता नहीं है।

अव खड़ा होता है एक अत्यन्त नाजुक सवाल जिसका हल आसान नहीं है।

विवाहित हो या अविवाहित हरेक स्त्री को कुटुम्व के अन्दर रहना ही होता है, लेकिन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अकेली रहना धनी समाज में ही चल सकता है। इस तरह हर स्त्री को रहने के लिए एक खानदान चाहिए। और आजीविका प्राप्त करने के लिए अच्छी परिस्थिति चाहिए। जिसकी शादी हुई है उसे तो पति से आवास भी प्राप्त है और आजीविका भी। उसका वहाँ सवाल नहीं है। किन्तु जिन स्त्रियों का भी कहीं नौकरी करनी पड़ती है वहां आजकल के समाज में कभी-कभी स्त्रियों की हालत बड़ी चिन्ताजनक होती है। स्त्री राजी-खुशी से मजदूरी करे, ईमानदारी से जो आजीविका मिले उसमें रहने के लिए राजी हो; लेकिन कभी-कभी ऐसी स्थिति के प्रति कु-दृष्टि रखने की आदत चन्द पुरुषों में होती हैं। और न्याय के खातिर यह भी कहना चाहिए कि कभी-कभी मजदूरी के अलावा दूसरे ढंग से अपनी आमदनी में वृद्धि करने की कमजोरी स्त्रियों में भी होती है। ऐसी हालत में अगर चारित्र्य की कमी-के कारण किसी पुरुष से स्त्री का सम्वन्ध बन जाय तो नसीब उनका ! इसके लिए तो समाज अपने वायुमंडल की शुद्धि सम्हालने के लिए जो इलाज करता आया है वही करेगा, किन्तु कभी-कभी मजदूरी या नौकरी करने वाली स्त्री को केवल लाचारी के कारण परिस्थितिवश अनीति का सम्बन्ध मान्य करना पड़ता है। ऐसे प्रसंग में समाज दुराचारी पुरुष को सजा नहीं दे सकता अथवा देना चाहता नहीं है। सजा देता है, वेचारी स्त्री को। ऐसी दो किस्म की लाचारी में से बेचारी स्त्री को कैसे बचाना यह समाज के सामने एक बड़ा प्रश्न है। इसके लिए समाज के नेताओं को चाहिए कि वे शुद्ध दृष्टि से परिस्थिति की चर्चा करें, स्त्री जाति की असह्य स्थिति सोचकर दयाभाव से उसका सवाल अपने हाथ में ले लें और सामाजिक परिस्थिति सुधारने की कोशिश भी करे।

किसी के घर में नौकरी करना या एक प्रकार गांव में रहने वाली स्त्रियों के लिए खेती का काम करना या दूसरा प्रकार, कार्यालयों में मुहर्रिर के जैसा काम करना; या अन्य ऐसे प्रकार है। और कल-कारखानों में यंत्रों के सामने बैठकर या खड़े रहकर काम करना यह भी एक सामान्य प्रकार है।

इन सब परिस्थितियों में अत्यन्त जरूरी है, स्त्री-जाति में तेजस्विता का प्रचार करने की। जहां कष्ट सहन करने की जरूरत पड़ने पर भूखे रहने की और मरने की तैयारी है और समाज के सामने अपना सवाल निर्भयता से पेश करने पर न्याय मिलने की सम्भावना है वहां स्त्री-जाति को अपनी तेजरिवता प्रकट करने की शिक्षा मिलनी ही चाहिए। समाज के नेताओं को चाहिए कि आलस्य छोड़कर बेदरकारी छोड़कर समाज के कुटुम्बों की, कार्यालयों की और कल-कारखानों की हालत देखने के लिए वहां आने-जाने का रिवाज सार्वत्रिक करें। और सामाजिक शुद्धि और आदर्श के पालन के लिए समाज के लोगों को इकट्ठा करने का रिवाज भी शुरू करें। इसमें नित्य झगड़ा चलाने वाले लोगों के दाखिल होकर काम विगाड़ डालने का डर तो है ही, लेकिन अगर शुरू से ही ऐसे डर की चर्चा करली जाये तो डर कम करना कठिन भी नहीं है।

जो हो जब हम सामाजिक क्रान्ति करने के लिए बैठे हैं और जब झगड़ा टालकर समन्वित वायुमंडल स्थापित करना है, तब नई चर्चा के लिए हमें तैयार रहना ही चाहिए।

कला-साहित्य, नृत्य-संगीत, नाट्य आदि विषयों को प्रारम्भ में अलग विषय के तौर पर लेना नहीं चाहिए। अध्यापक और विद्यार्थी, स्त्री-पुरुष सबके नित्य के सह-जीवन में और रोज

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के कार्यक्रम में इन सब चीजों को स्वाभाविक स्थान होना चाहिए। जिस तरह सोना, उठना, नहाना, आहार लेना, पूजा करना आदि वातें मिलकर दैनिक जीवनक्रम चलता है उसी तरह गायन, नर्तन, संगीत, काव्य-गायन, संवाद, साहित्य-पठन आदि वातें समय-समय पर व्रत के रूप में, उत्सव के रूप में अथवा श्राद्ध के रूप में सामाजिक जीवन का अंग बनने चाहिए। इस तरह से ये सारी बातें हजम होने के वाद जिस तरह हम धर्म का अध्ययन करते हैं, आध्यात्मिकता की खास आराधना चलाते हैं और तत्त्वज्ञान की गहराई में उतरते हैं उसी तरह इन कलाओं का अध्ययन चिन्तन, संशोधन और रहस्योद्घाटन शुरू करना चाहिए। प्रथम जीवन-साधना वाद में तत्त्वज्ञान का अध्ययन; इसी तरह कला के वारे में भी क्रम होना चाहिए।

हमने ऊपर कहा ही है कि अपनी कमजोरी और असंस्कारिता के कारण जो समस्याएं खड़ी होती हैं उनका इलाज अध्ययन के द्वारा, संयम और तपस्या के द्वारा और उत्कट् साधना के द्वारा हो सकता है। किन्तु सामाजिक जीवन में और औद्योगिक संगठनों में दूसरों की असंस्कारिता पाप-प्रवृत्ति, अभिमान, लोभ आदि दुर्गुणों के कारण और कमजोरियों के कारण जो समस्याएं पैदा होती हैं उसका इलाज सारे समाज को करना चाहिए। यानी समाज के अच्छे संस्कारी, अध्यात्म-परायण नेताओं को यह बोझ अपने सिर लेना चाहिए और जीवन-शुद्धि और जीवन-समृद्धि के लिए सतत प्रयत्नशील रहना चाहिए।

इसमें वहुत-सा काम केवल स्त्रियों के द्वारा या अकेले पुरुषों के द्वारा करना आसान नहीं है। संस्कारी, सेवाभावी समर्थ लोगों को समाज का आदर प्राप्त करके स्त्री-पुरुषों का सम्मिलित संगठन करना चाहिए और ऐसे संगठन के द्वारा सामाजिक क्रान्ति सिद्ध करनी चाहिए। इसके लिए आश्रम-संस्था अधिक से अधिक उपयोगी साबित होगी। लेकिन यह आश्रम-संस्था पुराने ढंग की अथवा मन्दिरों की जैसी नहीं होनी चाहिए। चलती आई परम्परा को मान्य करना और उसी के अन्दर डूब जाना यह सामान्य नियम होता है। रूढ़िनिष्ठ आश्रमों का, मन्दिरों का व्रत-उत्सवों का और धार्मिक यात्राओं का यही स्वभाव बन गया है।

हमें तो इन सब वातों में रचनात्मक क्रान्ति करनी है जिसके लिए हिम्मत भी चाहिए, धैर्य भी चाहिए। जिनके चरित्र के वारे में कभी कोई शंका उठ नहीं सकती, ऐसे अनुभवी, प्रतिष्ठित नेताओं के द्वारा ही रचनात्मक परिवर्तन और उसके द्वारा क्रान्ति हो सकती है। हिम्मत के साथ पुराने समाज-मान्य और शास्त्रग्रन्थ-मान्य रिवाजों में परिवर्तन ऐसे पूज्य लोगों के द्वारा ही हो सकता है। स्त्री-पुरुष मिलकर एक संस्था चलायें, उसीको हम 'आश्रम' कहेंगे। तब जाकर क्रान्ति समाज-मान्य होगी।

यह सारा काम पांच-दस वरस में अन्दर ही करने का है। एक आश्रम नहीं, स्थान-स्थान पर अनेक आश्रम स्वतंत्र रूप से एक योजना के रूप में चलाये जायें तभी यह क्रान्ति सिद्ध हो सकेगी।

क्रान्ति का काम पुरानी वातें तोड़ने का और नये बीज बोने का है। क्रान्ति के ये दो काम सिद्ध होने के बाद, वोये हुए बीजों को पोषण देना नये समाज का निर्माण करना और नये प्रकार की, नये आदर्शवादी संस्कृति का विकास करने का रचनात्मक काम आता है; वह तीस-चालीस वर्ष का काम है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अगर ऐसी क्रान्ति सफल बनानी है तो क्रान्ति के बाद रचनात्मक सुधार की प्रवृत्तियां हर पांच साल में शुरू करके दिखानी चाहिए। जिस तरह खेती पुश्त-दर-पुश्त होती है उसी तरह संस्कृति का भी है। इसमें एक बात उत्साह-वर्द्धक है कि स्त्रियों का स्वभाव ही ऐसा है कि एक क्रान्ति सिद्ध हुई देखी तो नव-सृजन का कार्य वे उत्साह और निष्ठा से लेती हैं और पूरे विश्वास के साथ उसे अमल में लाती हैं। स्त्रियों की इस रचनात्मक प्रवृत्ति से हम पूरा लाभ उठा सकते हैं। इसीलिए हम कहते हैं कि समन्वयात्मक नव-संस्कृति के निर्माण में स्त्री-जाति का सहयोग सबसे अधिक होना चाहिए। इस क्रान्ति से अधिक से अधिक लाभ स्त्री-जाति को ही मिलने वाला है। और अन्त में समस्त मानव-जाति की उन्नति होने वाली है।

स्वतंत्रता के बाद हमें विदेशी लोगों के प्रभाव का विचार करना नहीं पड़ता है। जिस तरह विदेशी दवाब दूर हो गया है, उसी तरह पुरुष जाति का दवाव भी आसानी से दूर होने वाला है। कठिनाई पुरुषों की तरफ से नहीं आयेगी, किन्तु स्त्री-स्वभाव ही ऐसा आदी बन गया है कि बार-बार पुरुषों से ही सूचनाएं, निर्णय और नेतृत्त्व मांगती रहेंगी। इस स्वभाव को तोड़ने का काम नव जाग्रति को समझने वाली पुरुषों को भी करना है और तेजस्वी, चिन्तनशील और कार्य-कुशल स्त्रियों को भी करना है। जगत की परिस्थिति ऐसी महत्वाकांक्षा जाग्रत करने के अनुकूल है। सवाल पुरानी कमजोरियां ही छोड़ देने का है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

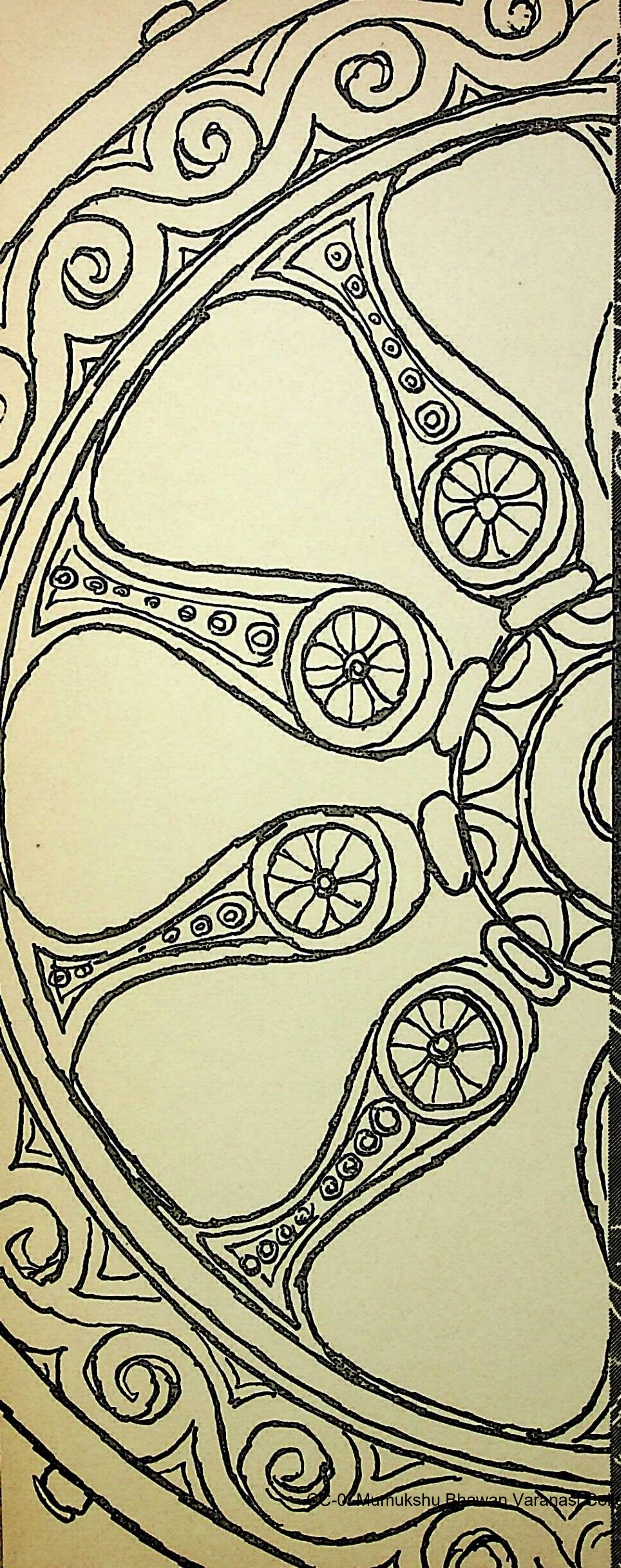

नारी: प्रगति के सोपान

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्राचीन भारत में नारी की स्थिति : १

इन्द्रनाथ आनन्द

वैदिक साहित्य (मंत्र, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद्) के अध्ययन से पता चलता है कि प्राचीन काल में नारी को परिवार और समाज में अत्यन्त सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त था और जीवन के हर क्षेत्र में उसे पुरुष के लगभग बराबर ही अधिकार और अवसर सुलभ थे। पुत्री के रूप में वह पुत्र के समान ही प्रिय, युवती के रूप में वह युवक के समान ही स्वतन्त्र, पत्नी के रूप में वह पति के समान ही अधिकार रखने वाली गृहस्वामिनी और माता के रूप में वह पिता से भी अधिक पूज्य थी। वैदिक शिक्षा के पठन-पाठन तथा यज्ञ आदि धार्मिक कृत्यों के अनुष्ठान में नारी के मार्ग में कोई बाधा न थी। यही कारण है कि भारतीय सभ्यता के उस स्वर्ण-युग में नारी ने विद्वत्ता और आध्यात्मिक उन्नति का जो आदर्श स्थापित किया वह आज भी अनुकरणीय है।

मन्त्र-दृष्टा नारियाँ

वैदिक समाज में सबसे अधिक सम्मानित पद उन ऋषियों का था जिन्हें मन्त्र-द्रष्टा अर्थात् मन्त्रों का रचयिता कहते हैं। वैदिक मन्त्र साधारण मानवीय काव्य-रचनाएँ नहीं हैं, प्रत्युत प्रकृति के रहस्यों का उद्घाटन करने वाली उदात्त तथा अतीन्द्रिय आध्यात्मिक अनुभूतियों

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

की अभिव्यक्ति करने वाली रचनाएं हैं। वे लौकिक विद्या तथा ब्रह्मविद्या के आदि स्रोत हैं। उनसे भारतीय जीवन और दर्शन अत्यन्त प्रभावित हुआ है। इन मन्त्रों के रचयिता जहाँ अंगिरा, अगस्त्य, वसिष्ठ आदि अनेक ऋषि हुए, वहाँ उन्हीं के तुल्य सम्मानार्ह बहुत-सी नारियाँ भी मन्त्र-दृष्टा हुई जिन्हें ब्रह्मवादिनी अथवा 'ऋषिका' की संज्ञा दी गई।

ऋग्वेद से बीस से अधिक ऋषिकाओं के नाम आये हैं; जो इस प्रकार हैं—अपाला, इन्द्राणी, उर्वशी, कद्रु, गोधा, घोषा, जरिता, जुहू, दक्षिणा, देवयानी, पौलोमी, मेधा, यमी, रात्री, रोमशा लोपामुद्रा, वागांभृणी, विश्वावरा, शांर्गी, श्रद्धा-कामायनी, श्री, सरमा और सावित्री। इनके अतिरिक्त सामवेद की चार और ऋषिकाएँ हैं: अकृष्टभाषा, गंपायना, नोधा और सिकता निवावरी। ऋग्वेदीय आश्वलायन और शांखायन गृह्यसूत्रों के अनुसार ब्रह्मयज्ञ के अवसर पर ऋषियों के अतिरिक्त जिन ऋषिकाओं की वन्दना की जाती थी उनमें वडवा प्रातिथेयी, सुलभा मैत्रेयी और गार्गी वाचन्कवी भी हैं।

ब्रह्मचर्चा और दार्शनिक शास्त्रार्थ

वैदिक काल में विद्या के दो विभाग माने जाते थे, अपरा अर्थात् लौकिक विद्या, और परा अर्थात् ब्रह्म विद्या[1]। दोनों ही प्रकार की विद्याओं में नारियाँ पुरुषों के समान पारंगत और विद्वत्-समाज की शोभा बढ़ाने वाली थीं। ऐसे उदाहरण भी मिलते हैं, जहां स्त्रियों ने ब्रह्मविद्या के विषय में पुरुषों का पथ-प्रदर्शन किया। केनोपनिषद् में आये यक्षोपाख्यान से पता चलता है कि ब्रह्म के जिज्ञासु अग्नि, वायु और इन्द्र आदि देवता जब यत्न करने पर भी ब्रह्म को जानने में असफल रहे तो उमा हेमवती ने उन्हें ब्रह्म का ज्ञान कराया था।

आदिकाल से लेकर महाभारत काल तक यज्ञ करना धार्मिक एवं सामाजिक जीवन का अनिवार्य एवं महत्त्वपूर्ण अंग था। पुरुषों की भांति स्त्रियां भी यज्ञ में भाग लेती थीं और स्वयं भी यज्ञ करती थीं। लवन-यज्ञ अर्थात् फ़सल काटने के समय का यज्ञ और रुद्र-यज्ञ केवल नारियां ही करती थीं।

विराट् यज्ञों के अवसर पर प्रायः धार्मिक सम्मेलन हुआ करते थे जिनमें शास्त्रार्थ भी होते थे। नारियां शास्त्रार्थों में पुरुषों से टक्कर लेती थीं और अपनी विद्वत्ता और प्रतिभा का प्रमाण देती थीं। बृहदारण्यक उपनिषद् के अनुसार विदेह-राज जनक ने ब्रह्म-जिज्ञासा से प्रेरित होकर एक महान् यज्ञ का अनुष्ठान किया और उसमें सम्मिलित होने के लिए प्रकाण्ड ब्रह्मवेत्ताओं और ब्रह्मवादिनियों को निमन्त्रित किया। इस अवसर पर उस समय के मुख्य ब्रह्मवेत्ता याज्ञवल्क्य से शास्त्रार्थ करने वालों में जहां सात पुरुषों के नाम[2] आये हैं, वहां ब्रह्मवादिनी गार्गी वाचन्कवी[3] का नाम भी आया है। जहां पुरुष शास्त्रार्थी याज्ञवल्क्य से एक-एक बार प्रश्न करके चुप हो रहे, वहां गार्गी ने दो बार प्रश्न करने का साहस किया।

१. द्विविधे वेदितव्ये···परा चैवापरा च॥ तत्रापरा ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्ववेदः शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दो ज्योतिषमिति। अथ परा यया तदक्षरमधिगम्यते। (मुंडकोपनिषद्)

२. उनके नाम हैं: अश्वल, आर्तभाग, उद्दालक आरुणि, उषस्त, कहोल, विदग्ध शाकल्य और भुज्यु।

३. वचन्क की कन्या होने के कारण गार्गी का उपनाम वाचन्कवी है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पहले अवसर पर उसने पृथ्वी से लेकर अन्तरिक्षलोक पर्यन्त और फिर अन्तरिक्षलोक से ब्रह्मलोक पर्यन्त विविध विषयों पर प्रश्न किये। परन्तु जब वह ब्रह्मलोक से आगे के विषय में प्रश्न करने लगी तो याज्ञवल्क्य ने उसको अनधिकार-चेष्टा बताते हुए "अनतिप्रश्न्यां वै देवता-मतिपृच्छसि गार्गी, मातिप्राक्षी" कहकर रोक दिया[1]।

वाद विवाद चलता रहा और याज्ञवल्क्य द्वारा उद्दालक आरुणि के प्रश्नों का उत्तर दिये जाने के बाद गार्गी ने याज्ञवल्क्य से फिर प्रश्न पूछने के लिए सभा से आज्ञा मांगी। इस अवसर पर उसने दो अत्यन्त दुरूह प्रश्न किए। पहला प्रश्न यह था कि दृश्य और अदृश्य जगत् तथा भूत, वर्तमान और भविष्य किस तत्त्व में ओत-प्रोत हैं। याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि आकाश में। तब गार्गी ने पूछा कि आकाश किसमें ओत-प्रोत है। याज्ञवल्क्य ने कहा "उस तत्त्व को ब्रह्मवेत्ता अक्षर कहते हैं, जिसके प्रशासन में समस्त दृश्य और अदृश्य जगत है…जो स्वयं अज्ञात है और दूसरों का ज्ञाता है…।" गार्गी को इन उत्तरों से सन्तोष हो गया और उसने उपस्थित ब्राह्मणों को सम्बोधित करते हुए कहा "न वै जातु युष्माकमिमं कश्चिद् ब्रह्मोद्यं जेतेति।" अर्थात् आपमें से कोई भी याज्ञवल्क्य को ब्रह्मविषयक वाद-विवाद में जीतने वाला नहीं है। आपका कल्याण इसी में है कि आप इन्हें नमस्कार करके यहां से विदा लें। सम्मेलन के अन्त में याज्ञवल्क्य को ब्रह्मिष्ठ घोषित किया गया।

याज्ञवल्क्य की धर्मपत्नी मैत्रेयी भी ब्रह्मवादिनी थी। उसके मन में उत्कट ब्रह्मजिज्ञासा विद्यमान थी। याज्ञवल्क्य जब वानप्रस्थ लेने लगे तो मैत्रेयी से बोले कि यदि तेरी इच्छा हो तो मैं अपनी सम्पत्ति का बँटवारा तेरे और कात्यायनी[2] के बीच कर दूं। तब मैत्रेयी ने ऐहिक भोगों के प्रति उदासीनता व्यक्त करते हुए पूछा, "यदि धन से भरी सारी पृथ्वी मुझे मिल जाए, तो क्या मैं अमर हो सकती हूं?" याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि नहीं, धन से अमृतत्व अर्थात् मोक्ष नहीं प्राप्त हो सकता। तब मैत्रेयी बोली "येनाहं नामृता स्यां किमहं तेन कुर्यां, यदेव भगवान्वेद तदेव मे ब्रूहीति।" अर्थात् जिस धन से मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो सकती, उसे लेकर मैं क्या करूंगी? श्रीमन्, मोक्ष प्राप्ति का आप जो साधन जानते हों मुझे वह बतलाइए। इससे मैत्रेयी की सांसारिक विषयों से विरक्ति और ब्रह्म सम्बन्धी जिज्ञासा की तीव्रता प्रकट होती है।

उपनिषद् काल के बाद रामायण और महाभारत काल में भी वैदिक-साहित्य की विदुषियों के अनेक उदाहरण मिलते हैं। रामायण के अनुसार वसिष्ठ की धर्म-पत्नी अरुन्धती उन्हीं के समान विदुषी थी। वह आचार्या भी थी और सच्ची जिज्ञासा रखने वालों का अध्यापन भी करती थी। दशरथ की ज्येष्ठ पत्नी कौसल्या और बाली की पत्नी तारा मन्त्रविद अर्थात् वेद-मन्त्रों की ज्ञाता थीं। महाभारत में पाण्डवों की माता कुन्ती को अथर्ववेद की पण्डिता बताया गया है। द्रोणाचार्य की धर्मपत्नी गौतमी ब्रह्मवादिनी थी।

१. रोकने के कारण स्पष्ट करते हुए याज्ञवल्क्य ने कहा कि यह प्रश्न जिस देवता के विषय में है वह प्रश्नोत्तर द्वारा नहीं प्रत्युत आचार्योपदेश से ही जाना जा सकता है। इसलिए उसके विषय में अति-प्रश्न करना उचित नहीं है।

२. याज्ञवल्क्य की दूसरी पत्नी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वैदिक काल में नारी की सम्मानित स्थिति पर विहंगम दृष्टि डालने के बाद अब हम कन्या, युवती, पत्नी, माता और विधवा के रूप में नारी की स्थिति पर तनिक विस्तार के साथ विचार करेंगे।

कन्या का जन्म

पुत्र अथवा कन्या का जन्म होने पर माता-पिता की जो भावनाएं होती हैं, उनसे भी तत्कालीन समाज में पुरुष और नारी के स्थान का संकेत मिलता है। ऋग्वेद में ऐसी भावनाओं का स्पष्ट उल्लेख तो नहीं मिलता, परन्तु विवाह सूक्त में दस पुत्रों की उत्पत्ति की कामना की गई है और कन्याओं के विषय में कुछ नहीं कहा गया है। इससे अनुमान होता है कि पुत्र-जन्म माता-पिता के हर्ष का विशेष कारण होता था। अथर्ववेद के एक सूक्त में प्रार्थना की गई है कि "हमारे यहां पुत्र का जन्म हो और कन्या का जन्म किसी और के घर से हो।[1] एक और सूक्त में कहा गया है कि "हमारे यहां पुत्र के बाद पुत्र का ही जन्म हो, न कि कन्या का।[2] तैत्तिरीय संहिता में कहा गया है कि पुत्र का जन्म होने पर पिता आनन्द में भरकर माता के पास लेटे हुए नवजात शिशु को हाथों में उठा लेता था, परन्तु यदि कन्या होती तो वह उसे माता के पास ही लेटे रहने देता था। ऐतरेय ब्राह्मण में कन्या को शोक का कारण बताया गया है, परन्तु बृहदारण्यक उपनिषद् में पुत्र की कामना करने वालों के अतिरिक्त कन्या की कामना करने वालों के लिए भी विधान बताया गया है।[3] इससे पता चलता है कि कन्या और विशेषतः पण्डिता कन्या की कामना भी कई लोग अवश्य करते होंगे। वराह गृह्य-सूत्र में बताया गया है कि अच्छी सन्तान और विशेषतः सुन्दर कन्याओं की उत्पत्ति के लिए वधुएँ दुन्दुभि और गोमुख आदि वाद्यों का वादन किया करती थीं। फिर भी इसमें सन्देह नहीं कि वैदिक काल में पुत्रों को कन्याओं पर वरीयता दी जाती थी। इसका कारण यह था कि पुत्र ही पितरों का श्राद्ध तर्पण, और पिंडदान आदि कर सकता था; कन्या नहीं। यों पुत्र के जन्म पर हर्ष और कन्या के जन्म पर अपेक्षाकृत उदासीनता की जो भावना होती थी, वह क्षणिक ही होती थी और बाद में कन्या का लालन-पालन पुत्र के ही समान लाड़-प्यार से होता था तथा बालकों के उपनयन आदि धार्मिक संस्कार जो किये जाते थे, सो बालिकाओं के भी किये जाते थे।

शिक्षा

वैदिक काल में बालकों के समान बालिकाओं की शिक्षा की भी पर्याप्त व्यवस्था थी। यह पहले कह आये हैं कि विद्या दो प्रकार की मानी जाती थी एक अपरा और दूसरी परा। कन्याओं को दोनों प्रकार की विद्या प्राप्त करने का अधिकार था। उनके बौद्धिक और आध्यात्मिक विकास के मार्ग में कोई बाधा न थी।

१. अथर्व० ६, २, ३
२. अथर्व० ३, २३, ३
३. अथ य इच्छेद् दुहिता मे पण्डिता जायेत (बृहदारण्यक ६, ४, १७)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शिक्षा का आरम्भ उपनयन संस्कार से होता था। उपनयन का अर्थ है शिष्य का गुरु के पास उसके आश्रम में जाना। उपनयन संस्कार होने पर ही शिष्य वैदिक शिक्षा का अधिकारी होता है। वालकों की भांति वालिकाओं का भी उपनयन संस्कार होता था और वे भी गुरुओं के आश्रमों में रहकर शिक्षा ग्रहण करने के लिए व्रह्मचर्य व्रत का पालन करती थीं और बालकों की भांति ही यज्ञोपवीत, मौंजी मेखला और वल्कल धारण करती थीं।

शिक्षा समाप्त करके शिष्य जव गुरु के आश्रम से लौटने लगता था, तो उस समय समावर्तन संस्कार होता था। कन्याओं के समावर्तन संस्कार की चर्चा आश्वलायन गृह्य-सूत्र (३, ८, ११) में मिलती है जहां कहा गया है कि समावर्तन के समय व्राह्मण हाथों पर अभ्यंजन मलकर उसे अपने मुख पर लगाये, क्षत्रिय अपनी बांहों पर, वैश्य अपने पेट पर और स्त्री अपने शरीर के अधोभाग पर लगाये।

ऋग्वेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद में ब्रह्मचारिणियों का उल्लेख है। अथर्ववेद में उनकी चर्चा करते हुए कहा गया है कि ब्रह्मचर्य-व्रत धारण कर शिक्षा समाप्त करने पर ही युवतियां योग्य पतियों को प्राप्त करती हैं।[1] कन्याओं की शिक्षा की आवश्यकता पर वल देते हुए गोभिल गृह्यसूत्र में कहा गया कि यदि पत्नी अशिक्षित हो, तो वह यज्ञ करने में समर्थ नहीं होती।[2] जो छात्राएं पर्याप्त से अधिक ऋचाओं (ऋग्वेद के मन्त्रों) की पण्डिता हो जाती थीं, उन्हें 'वह्वृची' की संज्ञा दी जाती थी। पाणिनि के अनुसार यजुर्वेद की कठ शाखा का अध्ययन करने वाली छात्रा को 'कठी' कहा जाता था। पतंजलि के अनुसार आपिशलि के व्याकरण का अध्ययन करने वाली छात्रा को आपिशला कहते हैं।

कालान्तर में जव वैदिक ज्ञान और यज्ञ दुरूह हो गये तो उनके विषय में अध्ययन करने के लिए नयी शाखा का विकास हुआ जिसे 'मीमांसा' कहते हैं। यद्यपि यह अत्यन्त नीरस विषय है, तो भी कई छात्राएं इसमें पर्याप्त रुचि लेती थीं। काशकृत्स्नी ने मीमांसा पर एक पुस्तक छात्राओं के लिए लिखी जिसे उसके नाम पर काशकृत्स्नी ही कहते हैं। इस ग्रन्थ का विशेष अध्ययन करने वाली को 'काशकृत्स्ना' की संज्ञा दी गई है।

वैदिक साहित्य के अतिरिक्त कन्याओं को गणित, वैद्यक, संगीत, नृत्य और शिल्प आदि की शिक्षा दी जाती थी।

संगीत शिक्षा विशेषतः सामगान से सम्बन्धित होती थी। संस्कारों के अवसर पर नारियों के संगीत की चर्चा ऋग्वेद में आई है। महाव्रत में पत्नियाँ विभिन्न वाद्ययन्त्रों के साथ गायन करती थीं। सत्याषाढ श्रौतसूत्र में स्त्रियों द्वारा बनाये जाने वाले अपघाटलिका, तालुक-वीणा, काण्डवीणा, पिछोरा आदि। कई वाद्ययन्त्रों के नाम आते हैं इस बात की चर्चा ऊपर कर आये हैं कि सुन्दर कन्याओं की उत्पत्ति की कामना करने वाली पत्नी दुन्दुभि और गोमुख आदि वाद्य वजाती थी। महाभारत के अनुसार राजा विराट् की कन्या उत्तरा और उसकी सखियाँ घर पर ही नृत्य, संगीत और वाद्य-वादन की शिक्षा पाती थीं। ययाति की पुत्री माधवी

१. ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम् (अथर्व ११, ६, १६)
२. न हि खल्वनधीता शक्नोति पत्नी होतुमिति।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संगीत-विशारदा थी। ऋग्वेद (१,६, २, ४) में नारियों के नृत्य-कौशल का संकेत मिलता है।

क्षत्रिय कन्याएँ धनुर्वेद अर्थात् युद्ध-विद्या की भी शिक्षा ग्रहण करती थीं। सेना में भरती होती थीं और अवसर आने पर युद्ध में भाग लेती थीं। ऋग्वेद में इसके प्रमाण मिलते हैं। ऋग्वेद के घोषा-रचित सूत्र[1] में वध्रिमती और विष्पला नामक दो स्त्री-योद्धाओं की चर्चा है। उन्होंने युद्ध-भूमि में जाकर अन्य योद्धाओं की भाँति युद्ध किया। जब वध्रिमती के दोनों हाथ कट गए, तो उसके आह्वान पर अश्विनीकुमार उपस्थित हुए और उन्होंने उसे सोने के दो हाथ दिये। विष्पला महाराज खेल की सेना में एक सिपाही थी। युद्ध में जब उसकी एक टाँग उड़ गई तो अश्विनीकुमारों ने उसे लोहे की एक नई टाँग देकर चलने की शक्ति प्रदान की।[2] राजा मुदगल की पत्नी मुद्‌गलानी ने युद्ध में अपने पति के सारथि का काम किया और राज्य के शत्रुओं को परास्त करने में पति का हाथ बटाया। ऋग्वेद[3] में एक और स्त्री-योद्धा शशीयसी का नाम आया है। इन्द्र और वृत्र के युद्ध में वृत्र की माता दनु ने भी भाग लिया और इन्द्र ने उसका संहार किया।[4]

रामायण के अनुसार कैकेयी दशरथ के साथ देवासुर-संग्राम में गई थी जहाँ उसने घायल और संज्ञाहीन पति के रथ को युद्धस्थल से दूर ले जाकर उसके प्राण बचाये थे, जिसके उपलक्ष में दशरथ ने उसे दो वर दिए थे।[5]

शिक्षा की अवधि

शिक्षाकाल की अवधि के आधार पर शिष्याओं के दो वर्ग होते थे। पहला वर्ग उन शिष्याओं का था जो १६-१७ वर्ष की आयु तक ही शिक्षा ग्रहण करती थीं और तदनन्तर विवाह करके गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करती थीं। अधिकांश शिष्याएँ इसी वर्ग की होती थीं और उन्हें सद्योवधू कहा जाता था। इन्हें सन्ध्यावन्दन और यज्ञ आदि के लिए आवश्यक मन्त्र पढ़ा दिये जाते थे और संगीत नृत्य आदि की शिक्षा भी दी जाती थी। दूसरा वर्ग उन शिष्याओं का था जो १६-१७ वर्ष की आयु के बाद अध्ययन जारी रखती थीं और पूर्ण वैदिक शिक्षा समाप्त करने के बाद ही विवाह करती थीं। उन्हें ब्रह्मवादिनी कहा जाता था।

अध्यापिकाएँ

पुरुष अध्यापकों के अतिरिक्त विदुषी स्त्रियाँ भी अध्यापन-कार्य करती थीं। उन्हें अध्यापिका, उपाध्याया, उपाध्यायी और आचार्या आदि की संज्ञा दी जाती थी। इसका उल्लेख

१. ऋग्वेद (१०, ३६, ४०)
२. ऋग्वेद (१, ११८, ८); (१, ११२, १०)
३. ऋग्वेद (५, ६१, ६, ६)
४. ऋग्वेद (१, ३२, ६)
५. स्मर राजन् पुरा वृत्तं तस्मिन् देवासुरे रणे।
तत्र त्वां च्यावयच्छत्रुस्तव जीवितमन्तरा॥
तत्र चापि मया देव यत्त्वं समभिरासितः।
जाग्रत्या यतमानायास्ततो मे प्रददौ वरौ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पाणिनि के वार्तिककार कात्यायन ने किया है। अध्यापन कार्य करने वाली नारियों के लिए उपाध्याया, उपाध्यायी और आचार्या आदि शब्द उपाध्याय की पत्नी अर्थात् उपाध्यायानी और आचार्य की पत्नी अर्थात् आचार्यानी से भिन्नता बताने के लिए गढ़े गए थे। इससे अनुमान होता है कि ऐसी अध्यापिकाओं की संख्या पर्याप्त रही होगी। पतंजलि ने एक उदाहरण देते हुए कहा है कि औदमेध्या नामक अध्यापिका के शिष्यों को औदमेध कहते हैं।

विवाह-संस्कार

वैदिक काल से ही भारत में विवाह को एक पवित्र धार्मिक संस्कार माना गया है। ऋग्वेद के विवाह-सूत्र से पता चलता है कि वैदिक काल में विवाह-प्रथा का पूर्ण विकास हो चुका था। आरंभ में विवाह अनिवार्य नहीं ठहराया गया था और न बाल-विवाह की प्रथा ही प्रचलित हुई थी। विवाह के समय कन्याओं की आयु १६-१७ वर्ष की होती थी और वे अपना वर चुनने में प्रायः स्वतन्त्र होती थीं। ऋग्वेद-भाष्य में सायणाचार्य ने कमद्यु नामक कन्या द्वारा स्वयंवर सभा में उपस्थित विमद ऋषि के वरण और उससे विवाह की चर्चा की है। ब्राह्मण और सूक्त-काल में कन्याओं द्वारा पति चुनने की प्रथा धीरे-धीरे कम हो गई। फिर भी महाभारत में इस प्रथा के पूर्वकालीन और तत्कालीन अनेक उदाहरण मिलते हैं—यथा सावित्री का देशाटन करते समय सत्यवान् को वरण करना तथा दमयन्ती, इन्दुमती और कुन्ती आदि का स्वयंवर सभा में उपस्थित राजकुमारों में स पति का चुनना। स्वयंवर में कभी-कभी वर के लिए कोई शर्त रखी जाती थी, जैसे कि सीता-स्वयंवर में धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाना और द्रौपदी-स्वयंवर में घूमती हुई मछली की आँख का बींधना।

ऋग्वेद-काल के बाद कन्याओं का विवाह प्रायः माता-पिता के अधीन होने लगा और विवाह को पिता द्वारा कन्या का दान माना जाने लगा। माता-पिता कन्या के गुण, शील और रूप के अनुरूप वर खोजने का प्रयत्न करते थे। गुणहीन पुरुष को कन्या देना दोष माना जाता था। बाद में मनु ने भी कहा है कि चाहे कन्या पिता के घर में आजीवन अविवाहित रहे, पर गुणहीन पुरुष के साथ उसका विवाह न किया जाए। कुशध्वज ऋषि की कन्या वेदवती आजीवन कुमारी रही थी।

विवाह में पिता अपने सामर्थ्य के अनुसार कन्या को सोना, मोती, वस्त्र, आभूषण, गाय-घोड़े आदि यौतक (दहेज) के रूप में देता था।

विवाह प्रायः अपने वर्ण में ही होता था, अर्थात् ब्राह्मण का ब्राह्मणी से और क्षत्रिय का क्षत्रिया से। परन्तु कभी-कभी इस नियम का अतिक्रम भी हो जाता था। उत्तम वर्ण वाला पुरुष यदि अवर वर्ण की कन्या से विवाह करता—जिसे अनुलोभ कहते हैं—तो समाज का कोई आपत्ति न होती थी; ऐसी घटना कन्या और उसके कुल के लिए तो सम्मानजनक समझी जाती थी परन्तु इसके विपरीत यदि उत्तम वर्ण की कन्या अवर वर्ण के पुरुष से विवाह करती —जिसे प्रतिलोम कहते हैं—तो उसे अनुचित समझा जाता; इसमें कन्या के कुल का अपमान माना जाता था। असुर-गुरु शुक्राचार्य की पुत्री देवयानी ने ब्राह्मणी होते हुए भी अपनी इच्छा से क्षत्रिय राजा ययाति से—जो कि शुक्राचार्य के यहाँ शिष्य रूप में विशेष विद्याभ्यास कर रहा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

था—विवाह किया। गुरु-कन्या के साथ शिष्य का विवाह हो जाने के कई उदाहरण मिलते हैं।

आश्वलायन गृह्य सूत्र, अधिकांश धर्मसूत्रों और मनुस्मृति में आठ प्रकार के विवाह का वर्णन है। वे हैं :—ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्राजापत्य, आसुर, गान्धर्व, राक्षस और पैशाच। यदि वर और कन्या दोनों ब्रह्मचर्य पालन से पूर्ण विद्वान् धार्मिक और शीलवान् हों, और परस्पर प्रसन्नता से उनका विवाह हो, तो वह 'ब्रह्म' कहलाता है। विस्तृत यज्ञ में ऋत्विक कार्य करते हुए जामाता को अलंकारयुक्त कन्या देना 'दैव' विवाह है। वर से कुछ लेकर कन्या देना 'आर्ष', धर्म की वृद्धि के उद्देश्य से दोनों का विवाह 'प्राजापत्य' तथा कन्या के पिता का धन देकर विवाह होना 'आसुर' कहलाता है। अनियमित रूप से और असमय किसी कारणवश दोनों का इच्छापूर्वक परस्पर संयोग 'गांधर्व' कहलाता है। राक्षस विवाह वह माना जाता था जिसमें कन्या को उसके सम्बन्धियों के साथ युद्ध करके अपहरण कर लिया जाता था। और कन्या के सम्बन्धियों के सोते रहने पर उसका अपहरण करना 'पैशाच' कहलाता था। सम्भव है कि राक्षस और 'पैशाच' विवाह की प्रथा तत्कालीन किन्हीं जन-जातियों में विद्यमान रही हो। यह भी सम्भव है कि ऐसे विवाहों को आर्यों की विवाह-पद्धति में परिगणित करने का उद्देश्य अपहरण की गई अभागिनी कन्या और उसकी सन्तान को समाज में उचित स्थान देना था। बोधायन धर्म-सूत्र का कहना है कि यदि अपहरण की गई कन्या का शास्त्र-विधि अनुसार विवाह न हुआ हो तो उसे कुंवारी ही समझना चाहिए; उसका किसी अन्य पुरुष से विवाह हो सकता है।

एक पत्नी प्रथा अथवा बहु-विवाह

एक पुरुष का एक स्त्री से विवाह होना आर्यों का आदर्श था। इसके मूल में यह विश्वास था कि स्त्री-पुरुष का संयोग विधाता द्वारा विहित होता है और जन्म-जन्मातर तक रहता है। वैदिक काल में साधारणतया पुरुष की एक ही पत्नी होती थी। इसका प्रमाण ऋग्वेद के वे मन्त्र हैं, जहाँ जाया (अर्थात् पत्नी) शब्द एक वचन में प्रयुक्त हुआ है। दम्पती और जायापती शब्द, जिनका अर्थ है एक पति और एक पत्नी (जाया च पतिश्च जायापती अथवा दम्पती) यही बात सिद्ध करते हैं। इसमें संदेह नहीं कि जहाँ कहीं बहु-विवाह की चर्चा हुई है वहाँ स्वर में बहु-विवाह की निन्दा का भाव व्यक्त होता है। सूत्रकाल में भी एक-पत्नी प्रथा की ध्वनि मिलती है। आपस्तम्ब गृह्यसूत्र का कहना है कि 'एक धर्मपत्नी से पुत्र होने पर पुरुष को दूसरी स्त्री से विवाह नहीं करना चाहिए।' और यदि पुत्रवती पत्नी पति के साथ यज्ञों में भाग लेने के लिए समर्थ और उद्यत हो, तो पति को दूसरा विवाह नहीं करना चाहिए।' दूसरा विवाह तभी वांछनीय समझा जाता था जब पत्नी के पुत्र न हुआ हो या वह किसी कारणवश यज्ञों में भाग लेने के योग्य न हो।

एक-पत्नी विवाह आदर्श और साधारण नियम होते हुए भी वैदिक काल से लेकर महाभारत काल तक बहु-विवाह के अनेक उदाहरण मिलते हैं। उपनिषद्-काल में याज्ञवल्क्य की दो पत्नियाँ थीं—मैत्रेयी और कात्यायनी। राजाओं की एक से अधिक रानियाँ होने के अनेक प्रमाण मिलते हैं। मनु, पुरुरवस, ययाति, दशरथ, दुष्यन्त, विचित्रवीर्य, पांडु आदि की एक से अधिक रानियाँ थीं। अर्जुन ने द्रौपदी के अतिरिक्त सुभद्रा और उलूपी से विवाह किया। भीम ने हिडिम्बा और शिशुपाल की बहन से भी विवाह किया था। नकुल और सहदेव

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

की भी रेणुमती और विजया एक-एक पत्नी और थीं। श्रीकृष्ण की सत्यभामा, रुक्मिणी आदि आठ मुख्य पत्नियाँ थीं।

सपत्नीद्वेष

वहु-विवाह प्रथा प्रायः समृद्ध कुलों तक ही सीमित थी और इसे सुख का कारण नहीं समझा जाता था। सपत्नियों में परस्पर ईर्ष्या-द्वेष होता था और कलह होती रहती थी; एक पत्नी दूसरी के विनाश के लिए अभिचार का प्रयोग करने में भी संकोच नहीं करती थी। ऋग्वेद के एक सूक्त में एक ईर्ष्यालु पत्नी कहती है : "सपत्नी का नाश और पति का प्रेम प्राप्त कराने वाली यह औषधि मैंने धरती से उखाड़ ली है…हे औषधि, तू मेरी सपत्नी का नाश कर और मेरे पति को मेरे वश में कर दे।"

बहुपति प्रथा का अभाव

वैदिक साहित्य में वहु-पति प्रथा का कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलता। तैत्तिरीय संहिता और ऐतरेय ब्राह्मण में स्पष्ट कहा गया है "यद्यपि एक पति की अनेक पत्नियां हो सकती हैं, एक नारी के एक ही समय में अनेक पति नहीं हो सकते।" इसका एक सुविदित अपवादआगे चलकर महाभारत काल में मिलता है, जव द्रौपदी का पांच पाण्डवों से विवाह हुआ।

पत्नी की स्थिति

वैदिक काल में पत्नी का गौरव और प्रतिष्ठा लगभग पति के समान ही होती थी। वास्तव में पति-पत्नी को एक ही तत्त्व के दो समान अंश समझा जाता था। विश्वास किया जाता था कि सृष्टि के आदि में प्रजापति ने प्रजा की कामना से प्रेरित होकर अपनी देह को दो भागों में विभक्त किया जिससे एक भाग पति-रूप और दूसरा भाग पत्नी-रूप हो गया[1]। इसी से पत्नी को पुरुष की अर्द्धांगिनी भी कहते हैं। इससे यह भाव भी व्यक्त होता है कि पति-पत्नी अन्योन्याश्रयी हैं और एक दूसरे के विना अपूर्ण रहते हैं। पत्नी के विना पति का कोई धार्मिक कृत्य सम्पन्न नहीं हो सकता था। यज्ञों में पति के साथ पत्नी की उपस्थिति अनिवार्य होती थी।[2] शतपथ ब्राह्मण ने स्पष्ट कहा है कि पुरुष पत्नी के विना यज्ञ कर ही नहीं सकता (अयज्ञियो वा एष यो ऽपत्नीकः)। इसीलिए पत्नी को सहधर्मिणी भी कहते हैं। सहधर्मिणी होने के अतिरिक्त पत्नी पति के सामन ही घर की स्वामिनी भी होती थी। वैदिक 'दम्पती' शब्द पति-पत्नी दोनों का संयुक्त स्वामित्व व्यक्त करता है।

गृहस्थ जीवन में पत्नी को यथेष्ट सम्मान मिलता था। वह गृहस्थी की केन्द्र-विन्दु मानी

१. स हैतावानास यथा स्त्री पुमांसौ सम्परिष्वक्तौ स इममेवात्मानं द्वेधापातयत् ततः पतिश्च पत्नी चाभवताम …(बृहदारण्यकोपनिषद् १, ४, ३,)।
२. सीता परित्याग के बाद राम ने जब अश्वमेघ यज्ञ किया तो उसमें सीता की स्वर्ण-मूर्ति राम की सहधर्मिणी के रूप में स्थापित की गई।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जाती थी। कहा जाता था कि गृहिणी ही घर है, उसके बिना घर घर ही नहीं होता। वैदिककाल में पत्नी, गृहस्थी के समस्त कार्य-कलाप गार्हपत्य, अग्नि में ईंधन डालकर उसे प्रज्वलित रखना, गायों का दोहना, दही बिलोना, भोजन पकाना, कपड़े धोना, गाय चराना आदि की संचालिका, सम्पादिका और अधीक्षिका होती थी। शतपथ के अनुसार पत्नी पति के वाद भोजन करती थी; किन्तु साथ ही गृह्यसूत्रों का विधान है कि पति को गर्भवती पत्नी के बाद भोजन करना चाहिए।

नारी का सम्मान करने और उसे सुख-सुविधा से सम्पन्न करने की वांछनीयता बाद में मनु के इन शब्दों से व्यक्त होती है : "जहाँ नारियों का सम्मान होता है, वहाँ देवताओं की कृपा होती है और जहाँ उनका सम्मान नहीं होता वहाँ यज्ञ आदि सब क्रियाएं निष्फल होती हैं। जिस कुल में नारियाँ दुःखी होती हैं, वह कुल शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।"

पातिव्रत्य का आदर्श

सीता, सावित्री, दमयन्ती, गान्धारी आदि नारियों ने पातिव्रत्य का आदर्श स्थापित करके विश्व इतिहास में भारतीय नारी का नाम उज्ज्वल किया है। इसमें सन्देह नहीं कि प्राचीन साहित्य में आदर्श पत्नी उसी को समझा जाता था जो पति को देवता और प्राणनाथ माने, उसकी सेवा में तत्पर रहे, उसकी खुशी में अपनी खुशी समझे, छाया की तरह उसका अनुसरण करे और पर-पुरुष का कदापि चिन्तन न करे। वैदिक काल में पति के लिए अनुकरणीय ऐसा कोई आदर्श प्रतीत नहीं होता। मनु ने पर-नारी संसर्ग की निन्दा की है।[1] गौतम, आपस्तम्ब आदि ने भी परदारगामी के लिए कठोर दण्ड का विधान किया है।

विधवा विवाह और नियोग

वैदिक काल में विधवा-विवाह होता था या नहीं इस विषय में विद्वानों में मतभेद है। परन्तु इस विषय में कोई सन्देह नहीं है कि सन्तानहीन विधवाओं को दूसरे पुरुष के सम्बन्ध से सन्तान उत्पन्न करने की अनुमति ही नहीं, बल्कि आदेश दिया जाता था। इसका प्रमाण ऋग्वेद के दो मन्त्र हैं। एक में कहा गया है : "हे विधवे, तू इस मृतपति की आशा छोड़ दे और जीवित पुरुषों में से दूसरा पति प्राप्त कर[2], दूसरे मन्त्र में कहा गया है कि विधवा देवर से सन्तानोत्पत्ति करती है। निरुक्त के अनुसार देवर का अर्थ विधवा का दूसरा पति है। यह आवश्यक नहीं था—यद्यपि बहुधा ऐसा हुआ करता था—कि मृत पति का भाई ही दूसरा पति हो। दूसरा पति कोई अन्य व्यक्ति भी हो सकता था[3]।

अथर्ववेद के दो मन्त्रों से विधवा-विवाह का स्पष्ट संकेत मिलता है। एक में कहा गया है कि '···दूसरा पति पुनर्विवाहित स्त्री के साथ इस लोक में रहता है···।' दूसरे मन्त्र में कहा गया है कि "मैंने मृत पति से वियुक्त पुनर्विवाहिता युवती को देखा है।"

१. न हीदृशमनायुष्यं लोके किंचन विद्यते। यादृशं पुरुषस्येह परदारोपसेवनम्॥ (मनु ६, १३४)
२. उदीर्ष्व नार्यभि जीवलोकं गतासुमेतमुप शेष एहि। (ऋग्वेद १०, १८, ८)
३. ···कोवां शयुत्रा विधवेव देवरं मर्यं न योषा कृणुत सधस्थ आ॥ (ऋग्वेद १०, ४०, २)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वैदिक काल के बाद महाभारत काल में भी नियोग की प्रथा प्रचलित रही। महाभारत में इसके अनेक उदाहरण मिलते हैं। अम्बिका और अम्बालिका तथा कुन्ती की सन्तान नियोग द्वारा उत्पन्न हुई थी।

सती प्रथा का अभाव

वैदिक काल में विधवा के सती होने की प्रथा नहीं थी। यद्यपि अथर्ववेद (१८, ३, १) में ऋग्वेद से पहले भी सती-प्रथा का संकेत मिलता है, परन्तु ऋग्वेद में इसका निषेध किया गया है। रामायण के अनुसार दशरथ की मृत्यु होने पर उसकी कोई भी रानी सती नहीं हुई। महाभारत के अनुसार विचित्रवीर्य के निधन पर उसकी रानियाँ अम्बिका और अम्बालिका सती नहीं हुई। पाण्डु के देहान्त पर कुन्ती सती नहीं हुई परन्तु माद्री इसलिए सती हुई कि वह अपने आपको एक तरह से पति की अकाल-मृत्यु का कारण समझती थी। महाभारत युद्ध में हजारों योद्धा वीरगति को प्राप्त हुए परन्तु किसी की विधवा के सती होने का कोई उल्लेख नहीं मिलता।

विवाह-विच्छेद का अभाव

आर्य लोग विवाह को जन्म-जन्मान्तर तक रहने वाला अटूट सम्वन्ध मानते थे। अतएव वैदिक साहित्य, रामायण और महाभारत में विवाह-विच्छेद प्रथा की कहीं चर्चा नहीं है। सूत्रकार आपस्तम्व ने स्पष्ट कहा है कि "जायापत्योर्न विभागोस्ति" अर्थात् पति और पत्नी पृथक् नहीं हो सकते। आपस्तम्व, वसिष्ठ और मनु आदि स्मृतिकारों ने किसी भी स्थिति में एक-दूसरे को त्यागने वाले पति-पत्नी के लिए प्रायश्चित और दण्ड का विधान किया है।

माता का पद

शास्त्रों में माता का पद पिता से ऊँचा बताया गया है। तैत्तिरीय उपनिषद् के अनुसार समावर्तन के समय आचार्य शिष्य को जो उपदेश देता है उसमें "···मातृ देवो भव पितृ देवो भव···" कहा गया है, अर्थात् पहले यह कहा गया कि माता को देवता मानो और बाद में कहा गया यह कि पिता को देवता मानो। रामायण में कहा गया कि माता का सम्मान पिता के बराबर ही होना चाहिए।

सम्पत्ति पर अधिकार

प्राचीन काल में नारी को पुत्री, पत्नी, माता और विधवा के रूप में सम्पत्ति पर आंशिक अधिकार प्राप्त था। इसका उद्देश्य मुख्यतः कुमारियों के विवाह का प्रबन्ध और विधवाओं के जीवन-निर्वाह आदि की व्यवस्था करना था। नारी को सम्पत्ति के उपभोग का अधिकार था, परन्तु उसे वेचने या किसी को दे देने का अधिकार नहीं था।

वैदिक काल में पिता की सम्पत्ति जब बाँटी जाती थी तो वह पुत्रों को ही मिलती थी; पुत्रियों को नहीं। निरुक्त ने भी स्पष्ट कहा है कि "पुमान् दायादो अदायादा स्त्री", अर्थात्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पुरुष दाय का भागी है, न कि स्त्री। आजीवन माता-पिता के घर में रहने वाली अविवाहिता कन्या को पितृ-सम्पत्ति का अंश, यद्यपि वह भाइयों के अंश के बराबर नहीं होता था, अवश्य मिलता था।

नारी को माता-पिता और भाई आदि सम्बन्धियों से जो वस्त्राभूषण और धन आदि चल-सम्पत्ति मिलती थी, या विवाह के अवसर पर यौतक के रूप में जो कुछ मिलता था, या बाद में पति और सास-ससुर से जो कुछ प्राप्त होता था, वह स्त्री-धन कहलाता था और उस पर उसकी मृत्यु के बाद उसकी लड़कियों का ही अधिकार होता था, उसके पति या पुत्रों का नहीं। ऋग्वेद के अनुसार विधवा को मृत पति की सम्पत्ति पर कोई अधिकार नहीं था, परन्तु विधवा को अपने माता-पिता की सम्पत्ति का कुछ अंश अवश्य मिलता था। बाद में कात्यायन आदि स्मृतिकारों ने यह व्यवस्था दी कि विधवा अपने पति की सम्पत्ति का आजीवन उपभोग कर सकती है, परन्तु उसे किसी को बेच या दे नहीं सकती। मनु के अनुसार जब कोई पुरुष सन्तानहीन मर जाता था तो उसकी माता को उसकी सम्पत्ति का अंश मिलता था।

स्वतन्त्रता का वातावरण

वैदिक काल में पर्दे की प्रथा नहीं थी। उन दिनों नारी घर की चारदीवारी में बन्द नहीं रहती थी, और न उसके बाहर आने-जाने पर कोई प्रतिबन्ध ही था। उन दिनों नारी पुरुषों की भाँति और बहुधा पुरुषों के साथ उत्सवों, यज्ञों, सभा-सम्मेलनों और यहाँ तक कि युद्धों में भी सम्मिलित होती थी। स्वतन्त्रता के उस वातावरण में भारतीय नारी के सर्वतोमुखी विकास के मार्ग में कोई बाधा न थी। तत्कालीन दृष्टिकोण के अनुसार जीवन के चारों पदार्थों अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति का मार्ग पुरुष और नारी के लिए समान रूप से खुला था।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्राचीन भारत में नारी की स्थिति : २

इन्द्रनाथ आनन्द

महाभारत काल के बाद अनेक कारणों से नारी के धार्मिक अधिकारों का धीरे-धीरे ह्रास होता गया, शिक्षा की सुविधाएं कम होती गईं, सार्वजनिक जीवन में भाग लेने की स्वतंत्रता सीमित होती गई और इन सब बातों के परिणामस्वरूप हिन्दू-समाज में नारी का गौरव घटता गया। दूसरी ओर इसी युग में बौद्ध और जैन धर्मों का प्रचार और प्रसार हुआ। इन धर्मों के प्रवर्तकों ने नारी के प्रति किंचित् उदार दृष्टिकोण अपनाया और नारी के धार्मिक अधिकारों को स्वीकार किया। हिन्दू-समाज में जहाँ ब्रह्मवादिनियों का धीरे-धीरे लोप होता गया, वहाँ दूसरी ओर बौद्ध भिक्षुणियों और जैन साध्वियों का आविर्भाव हुआ। इन भिक्षुणियों और साध्वियों ने आध्यात्मिक क्षेत्र में प्रशंसनीय उन्नति की और आचार्या, अर्हता और सिद्धा आदि की पदवी प्राप्त की तथा भारतीय नारी का गौरव बढ़ाया। कालान्तर में बौद्ध धर्म का ह्रास होने पर नारी के लिए शिक्षा, आध्यात्मिक प्रगति और समाज-सेवा के अवसर कम हो गये और उसका कार्यक्षेत्र घर-परिवार तक ही सीमित होकर रह गया। यह स्थिति लगभग १९वीं शताब्दी के मध्य तक रही।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विवाह-योग्य आयु क्रमशः कम

वैदिक काल के बाद कन्याओं के विवाह की आयु धीरे-धीरे कम ही होती चली गई; उस काल में नारी का गौरव घटने के कारणों में मुख्य कारण यही हुआ। वैदिक काल में कन्याओं के लिए विवाह अनिवार्य नहीं था और न उस काल में बाल-विवाह की प्रथा का प्रारंभ ही हुआ था। उस युग में कन्याओं के विवाह की आयु १६-१७ वर्ष थी। बाद में यह धीरे-धीरे घटाई जाने लगी। ईसापूर्व ५०० के लगभग विवाह-योग्य आयु १४-१५ वर्ष रह गई और उसे और कम करने की प्रवृत्ति उभरने लगी। कई धर्मसूत्रों ने व्यवस्था दी कि कन्या का विवाह रजोदर्शन के तीन वर्ष के भीतर अर्थात् १५ वर्ष की आयु तक कर ही दिया जाना चाहिए। कई धर्मसूत्रों ने विवाह का समय रजोदर्शन के तीन मास के भीतर अर्थात् १२ वर्ष की आयु के लगभग बताया। मनु ने (ईसा पूर्व ३०० के लगभग) व्यवस्था दी कि ८ वर्ष की आयु में भी कन्या का विवाह हो सकता है, परन्तु इससे छोटी आयु में नहीं।[1] मनु ने यह भी कहा कि यदि योग्य वर न मिले तो कन्या पिता के घर मैं आजीवन कुँवारी रह सकती है।[2] बाद के स्मृतिकारों का कहना था कि यदि योग्य वर न मिले तो भी कन्या का विवाह कर दिया जाना चाहिए। कइयों ने तो विवाह की उपयुक्त आयु ८ वर्ष बताई और कइयों ने व्यवस्था दी कि ४ वर्ष की आयु के बाद किसी समय भी कन्या का विवाह किया जा सकता है। इसमें सन्देह नहीं कि अधिकांश जनता स्मृतिकारों की व्यवस्था का अनुसरण करती थी। अतः इस युग में रजोदर्शन से पूर्व कन्या का विवाह एक साधारण घटना बन गई और बाल-विवाह की प्रथा रूढ़ ही हो गई।

शिक्षा पर अनिष्ट प्रभाव

छोटी आयु में विवाह का कन्याओं की शिक्षा-दीक्षा पर अनिष्ट प्रभाव पड़ा। अब वे वैदिक काल की कन्याओं की भाँति १६-१७ वर्ष की आयु तक शिक्षा ग्रहण नहीं कर पाती थीं। इसके साथ ही इस युग में शिक्षा के क्षेत्र में इतना परिवर्तन और परिवर्द्धन हुआ तथा तत्संबंधी मान्यताएं इतनी बदल गई कि कन्या को पहले की भाँति शिक्षित करना अप्रशस्त और कहीं-कहीं निषिद्ध तक कह दिया गया। आरंभ में वैदिक साहित्य अल्प था और पौरुषेय माना जाता था। उस समय वैदिक सूक्तों का अध्ययन उसी भावना से किया जाता जिस भावना से आज जन-साधारण संत कवियों की वाणी का अध्ययन करता है और उसे कण्ठस्थ करता है। ऐसा करने में संत-वाणी के विषय में यह भावना नहीं रहती कि वह ईश्वरीय रचना अथवा ब्रह्मवाक्य है। अतः भाव को सुरक्षित रखते हुए लोग संतों के मूल शब्दों में थोड़ा-बहुत परिवर्तन भी करते हुए पाए जाते हैं। परंतु जब वैदिक मंत्रों को अपौरुषेय अर्थात् ईश्वरकृत माना जाने लगा तब उनको शुद्ध रूप में सुरक्षित रखना उनका शुद्ध उच्चारण और उनका उपयुक्त विनियोग

१. त्रिंशद्वर्षोद्वहेत् कन्यां हृद्यां द्वादशवार्षिकीम्।
त्र्यष्टवर्षोऽष्टवर्षां वा धर्मे सीदति सत्वरः॥ (मनु० ९, ९४)

२. काममामरणात् तिष्ठेद् गृहे कन्यर्तुमत्यपि।
न चैवैतां प्रयच्छेत्तु गुणहीनाय कर्हिचित्॥ (मनु० ९. ८९)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आवश्यक और अनिवार्य समझा जाने लगा। इसमें किसी प्रकार की त्रुटि का रह जाना अत्यंत अनिष्टकर माना जाने लगा।[1] साथ ही वैदिक साहित्य में ब्राह्मण ग्रंथों और उपनिषदों के समावेश से उसका आकार बहुत बढ़ गया और वैदिक यज्ञ और कर्मकांड बहुत जटिल हो गए। इस सारे साहित्य के अध्ययन और जटिल यज्ञ-विधि में कुशलता प्राप्त करते करते १६ वर्ष लग जाते थे। ८-१० वर्ष की आयु में उपनयन होने के बाद बालक तो २४-२५ वर्ष की अवस्था तक अपना अध्ययन बहुत हद तक पूरा कर पाते थे। परंतु बालिकाएँ १४-१५ वर्ष की अवस्था तक इसे कदापि पूरा नहीं कर पाती थीं। अतः उन्हें वैदिक साहित्य का कुछ ही अंश इस दृष्टि से अच्छी तरह पढ़ा दिया जाता था कि वे संध्या-वन्दन कर सकें। ईसा पूर्व ४०० के लगभग वेद-विद्या-पारंगत पुरुष पर्याप्त संख्या में थे; परंतु वेद-मंडिता कन्याएँ इनी-गिनी और अपवाद-मात्र ही थीं। जब विवाह की आयु घटते-घटते आठ वर्ष ही रह गई तो कन्याओं के लिए शिक्षा के अवसर कम होते-होते नगण्य रह गए। इस प्रकार अल्पशिक्षित अथवा अशिक्षित होने के कारण पुरुष की अपेक्षा नारी का गौरव बहुत घट गया।

उपनयन संस्कार का अन्त

ईसा पूर्व ४०० के लगभग कन्याओं का उपनयन-संस्कार उपचार-मात्र रह गया अर्थात् उपनयन तो होता था परंतु उसके बाद वैदिक शिक्षा का समारंभ नहीं होता था। ईसा पूर्व ३०० के आस-पास मनु आदि स्मृतिकारों ने व्यवस्था दी कि कन्याओं का उपनयन मन्त्रोच्चारण के बिना किया जाना चाहिए। ३०० ईस्वी के लगभग स्मृतिकार याज्ञवल्क्य ने और उसके उत्तरवर्ती स्मृतिकारों ने कन्याओं के उपनयन ही का निषेध कर दिया। मनु और याज्ञवल्क्य ने एक नये सिद्धांत का प्रतिपादन किया। उन्होंने कहा कि कन्याओं का विवाह ही उनका उपनयन-संस्कार है, पति ही उनका गुरु है और पति-सेवा तथा घर का काम-काज ही उनके लिए यज्ञ है। उपनयन-संस्कार और वैदिक शिक्षा का निषेध हो जाने पर कन्याएँ द्विज-पद से वंचित हो गईं और उन्हें शूद्र के समान समझा जाने लगा।[2] इस प्रकार हम देखते हैं कि उपनयन-संस्कार से वंचित होने के कारण पुरुष की तुलना में नारी की स्थिति अत्यन्त हीन हो गई।

यज्ञ-अधिकार का अंत

वैदिक काल में स्त्री को पुरुष की भाँति यज्ञ करने का अधिकार था। 'लवन' आदि यज्ञ

१. वैदिक मंत्रों के सस्वर शुद्ध उच्चारण की आवश्यकता बताते हुए महाभाष्यकार पतंजलि ने कहा—
दुष्ट : शब्द : स्वरतो वर्णतो वा मिथ्याप्रयुक्तो न तदर्थमाह।
स वाग्वज्रो यजमानं हिनस्ति यथेन्द्र शत्रु : स्वरतोऽपराधात्॥
अर्थात् 'इन्द्रशत्रुः' शब्द को अन्तोदात्त स्वर के बजाय आद्योदात्त स्वर से पढ़ने के कारण यजमान वृत्रासुर की इन्द्र पर विजय होना तो दूर, इन्द्र के हाथों उसका ही नाश हो गया। अतः इष्टलाभ के लिए ठीक स्वर का उच्चारण आवश्यक है।

२. भगवद्गीता में स्त्री की गणना शूद्र के साथ की गई है :
मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य येऽपि स्युः पापयोनयः।
स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि यान्ति परां गतिम्॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

केवल स्त्रियाँ ही करती थीं। गृहस्थ के लिए यज्ञों में पत्नी की उपस्थिति अनिवार्य होती थी और उसके बिना पति यज्ञ कर ही नहीं सकता था। परंतु जब नारी का उपनयन-संस्कार बन्द हो गया, तब ऐतिशायन आदि स्मृतिकार कहने लगे कि पत्नी, पति के साथ वैदिक यज्ञ में सम्मिलित नहीं हो सकती। यह एकदम नया ही विधान था। जैमिनी ने इसका विरोध किया और यज्ञ में पत्नी के साहचर्य का समर्थन किया। परंतु उसने भी यह माना कि चूँकि पत्नी अशिक्षित होती है, इसलिए वह पति की तुलना कदापि नहीं कर सकती। इस प्रकार हम देखते हैं कि उपनयन-संस्कार बंद होने के कारण नारी को यज्ञ से बहिष्कृत किया जाने लगा। इससे नारी के गौरव को भारी आघात पहुँचा।

पत्नी की स्थिति

वैदिक काल में कन्याओं को स्वयं पति को वरण करने का अधिकार था और विवाह करना या न करना उनकी अपनी इच्छा पर निर्भर करता था। परंतु बाद में जब विवाह अनिवार्य ठहरा दिया गया और विवाह की आयु १०-१२ वर्ष निर्धारित कर दी गई, तव कन्याएँ अशिक्षित एवं अपरिपक्व-बुद्धि होने के कारण पति का स्वयंवरण करने में समर्थ नहीं रहीं। अतः स्वयंवर की प्रथा धीरे-धीरे लुप्त हो गई। क्षत्रिय-कुलों में इसका प्रचलन कुछ और शताब्दियों तक अवश्य रहा। वैदिक काल में पत्नी पति की सहधर्मिणी और गृह-स्वामिनी मानी जाती थी। परंतु स्मृति-काल में पत्नी की स्थिति हीन हो गई और पति-पत्नी के सम्बन्ध गुरु-शिष्य अथवा स्वामी सेवक के समान हो गये। पति की श्रेष्ठ स्थिति और पत्नी की हीन स्थिति की झलक मनुस्मृति में भी मिलती ही है। मनु का कहना है : पति चाहे गुण-रहित हो, व्यसनी हो और दुराचारी हो तो भी पत्नी को उसकी देवता की भाँति सेवा करनी चाहिए। पति सेवा से पत्नी स्वर्ग की अधिकारिणी बनती है। स्वर्ग की कामना करने वाली स्त्री को पति के जीवन काल में अथवा उसके मरणोपरान्त पति के विरुद्ध आचरण नहीं करना चाहिए। विधवा को अल्पाहार से अपनी देह क्षीण कर लेनी चाहिए और पर-पुरुष का कभी चिंतन नहीं करना चाहिए। सती साध्वी विधवा, पुत्र-हीन होती हुई भी स्वर्ग की अधिकारिणी होती है।[१]

स्वतंत्रता का ह्रास

शिक्षा से वंचित और शास्त्र-ज्ञान से रहित होने के कारण नारी कर्तव्याकर्तव्य का निर्णय करने में असमर्थ हो गई और हर बात में पुरुष पर निर्भर करने लगी। अतः मनु आदि स्मृतिकारों ने यह सिद्धांत प्रतिपादित किया कि स्त्रियां स्वतंत्रता की अधिकारिणी नहीं हैं। पुरुषों को चाहिए कि उन्हें सदा अपने वश में रखें।[२] पिता कन्या को, पति पत्नी को और पुत्र वृद्ध माता को सदा अपने संरक्षण में रखें।[३] इस सिद्धान्त का अनुमोदन करते हुए नारदस्मृति के

१. मनुस्मृति (५, १५५-१६०)
२ अस्वतंत्राः स्त्रियः कार्याः पुरुषैः स्वैःदिवानिशम्। (मनु० ९, २)
३. पिता रक्षति कौमारे भर्ता रक्षति यौवने।
रक्षन्ति स्थविरे पुत्रा न स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति॥ (मनु० ९, ३)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

टीकाकार असहाय ने कहा कि चूंकि औचित्य-अनौचित्य का निर्णय शास्त्र-ज्ञान पर निर्भर करता है, और चूंकि स्त्रियां अशिक्षित और शिक्षा की अनधिकारिणी होने के कारण शास्त्र-ज्ञान से रहित हैं, इसलिए उन्हें सदा पुरुषों के संरक्षण में रहना चाहिए।

विधवा-विवाह और नियोग-प्रथा का अन्त

हम देख चुके हैं कि वैदिक काल में संतानहीन विधवा नियोग द्वारा संतान उत्पन्न कर सकती थी और सम्भवतः पुनर्विवाह भी कर सकती थी। नियोग-प्रथा सूत्रकाल और आरंभिक स्मृति-काल तक प्रचलित रही। गौतम, बोधायन और वसिष्ठ इसके पक्ष में थे। परन्तु मनु ने विधवा विवाह और नियोग दोनों का निषेध कर दिया। मनु का कथन है, 'विवाह-सम्बन्धी मंत्रों में कहीं भी नियोग की अनुमति नहीं दी गई है और न उनमें दूसरे पुरुष से विवाह की चर्चा हुई है।'[1] शास्त्र-ज्ञान से रहित जो पुरुष विधवा स्त्री को देवर आदि से नियोग की अनुमति देता है, वह निंदनीय है।[2] मनु आदि स्मृतिकारों की व्यवस्था के परिणामस्वरूप नियोग-प्रथा समाप्त हो गई।

विधवा-विवाह का निषेध करते हुए मनु ने कहा, 'सकृत् कन्या प्रदीयते' अर्थात् कन्या का विवाह एक बार ही होता है। (९, ४७)। न द्वितीयश्च साध्वीनां कश्चिद् भर्तोपदिस्यते। अर्थात् सदाचारिणी स्त्रियों का दूसरा पति नहीं होता। (५, १६२) ऐसी ही व्यवस्था याज्ञवल्क्य ने भी दी।

परंतु नारद तथा अन्य स्मृतिकारों ने विशेष परिस्थितियों में पत्नी के पुनर्विवाह की अनुमति दी। उनका कहना था कि यदि पति की मृत्यु हो जाये, या पति संन्यासी हो जाये, या जाति से वहिष्कृत कर दिया जाये, या नपुंसक हो, तो पत्नी पुनर्विवाह कर सकती है। कौटिल्य का कहना था कि यदि पति दुराचारी हो, या वहुत समय तक विदेश से न लौटे, या पत्नी के जीवन को संशय में डालने वाला हो, तो पत्नी पुनर्विवाह कर सकती है। परंतु शीघ्र ही स्मृतिकारों के इन वचनों का अनुसरण वंद हो गया और पुनर्विवाह की प्रथा लुप्त हो गई।

सती-प्रथा का आविर्भाव

जैसाकि हम ऊपर कह आये हैं, मनु का आदेश था कि विधवा स्त्री को अल्पाहार से अपनी देह क्षीण कर लेनी चाहिए, ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना चाहिए, पर-पुरुष का कदापि चिंतन न करना चाहिए और सती-साध्वी की भांति कठोर तपस्या का जीवन व्यतीत करना चाहिए।

स्मृतिकारों के ऐसे वचन नारी के लिए आदर्श माने जाने लगे और जो इन्हें मन से ग्रहण न कर सकीं उनका जीवन कष्टमय और निराशापूर्ण हो गया। इसके साथ ही सती-प्रथा भी

१. नोद्वादिकेषु मन्त्रेषु नियोगः कीर्त्यते क्वचित्।
न विवाहविधावक्तं विधवावेदनं पुनः॥

२. ततः प्रभृति यो मोहात् प्रभीतपतिकां स्त्रियम्।
नियोजयत्पत्यार्थे तं विगर्हन्ति साधवः॥ (मनु० ९, ६८)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उग्ररूप में प्रकट होने लगी। हम पहले कह आये हैं कि वैदिक काल में यह प्रथा नहीं थी। महाभारत काल में पांडु की छोटी रानी माद्री का सती होना इसका एकमात्र उदाहरण मिलता है। परन्तु ईसा पूर्व चतुर्थ शताब्दी में इसके अनेक उदाहरण मिलते हैं। ईस्वी १०० के लगभग स्मृतिकार विष्णु ने सती-प्रथा का समर्थन करते हुए कहा कि विधवा प्राणोत्सर्ग करके मृत पति की आत्मा का अनुसरण कर सकती है। अंगिरस ने कहा कि सती होना ही विधवा का धर्म है। हारीत ने कहा कि पति के शव के साथ जलकर पत्नी पति को उसके भयंकर पापों से मुक्त करा सकती है। यद्यपि कई स्मृतिकारों ने सती-प्रथा को आत्महत्या कहकर उसका विरोध किया परन्तु अधिकतर स्मृतिकारों ने उसका समर्थन ही किया। परिणामतः प्रथा ज़ोर पकड़ती गई और सर्वमान्य हो गई। इसका प्रचलन उन्नीसवीं शताब्दी तक रहा। फिर कानून द्वारा इसका निषेध कर दिया गया।

पत्नी का परित्याग

वैदिक युग तथा रामायण-महाभारत काल में विवाह-विच्छेद की किसी ने भी कल्पना नहीं की थी। स्मृति-काल में पहली बार पत्नी के अधिवेदन अर्थात् पति द्वारा पत्नी के परित्याग और दूसरी स्त्री से विवाह की चर्चा हुई। यद्यपि मनु और याज्ञवल्क विवाह-विच्छेद का निषेध करते हैं, पर विशेष परिस्थितियों में वे पत्नी के अधिवेदन की अनुमति भी देते हैं।

मनु का कहना है कि पति दुराचारी हो तो भी पूज्य है, परन्तु यदि पत्नी मद्यपान करने वाली, प्रतिकूल आचरण करने वाली, रोगिणी अथवा अति व्यय करने वाली हो तो पति उसका परित्याग कर सकता है। वन्ध्या पत्नी का विवाह के आठवें वर्ष में, मृत-प्रजा का (अर्थात् जिसके बाल-बच्चे मर जाते हों) दसवें वर्ष में, और स्त्री-जननी (अर्थात् केवल कन्याओं को जन्म देने वाली पत्नी) का ग्यारहवें वर्ष में परित्याग किया जा सकता है। अप्रियवादिनी पत्नी का तो तुरंत परित्याग किया जा सकता है।[1] परन्तु इस प्रकार परित्यक्त पत्नी पति-गृह में ही दासी की भांति रहे और अपने-आपको स्वतंत्र न समझे। यदि वह रुष्ट होकर पति के घर से निकल भागना चाहे तो उसे रस्सी आदि से बांध देना चाहिए।[2] उपर्युक्त प्रकार से परित्यक्ता पत्नी का पति तुरंत दूसरा विवाह कर सकता है।

संपत्ति का अधिकार

यद्यपि समीक्ष्य युग में परिवार और समाज में नारी की स्थिति निरंतर बिगड़ती गई, फिर भी एक संतोषजनक बात यह हुई कि सम्पत्ति पर उसका अधिकार स्वीकार किया जाने लगा। पिता की संपत्ति पर, पुत्र के अभाव में, कन्या का अधिकार पहले की भांति सर्वमान्य रहा। भाइयों के रहते अविवाहित बहन को पितृ-संपत्ति पर अधिकार देने का प्रश्न नहीं उठ सकता था, क्योंकि इस युग में कन्याओं का विवाह अनिवार्य हो गया था। बहनों के विवाह के लिए पितृ-संपत्ति का पर्याप्त अंश अलग रख देना भाइयों का कर्त्तव्य माना

१. मनु० ६,८०-८१
२. मनु० ६,८३

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गया। संतानहीन पुत्र की संपत्ति पर माता का अधिकार और संतानहीन पोते की सम्पत्ति पर मातामही का अधिकार पहले की भांति मान्य रहा। इस काल में मुख्य सुधार विधवा के संपत्ति-अधिकार के विषय में हुआ। यह स्वीकार कर लिया गया कि यदि पति मृत्यु से पूर्व संयुक्त परिवार से अलग हो गया हो तो उसकी विधवा उसकी संपत्ति की उत्तराधिकारिणी है। ईसा पूर्व ४०० के लगभग स्मृतिकारों ने विधवा का यह अधिकार स्वीकार नहीं किया था। परन्तु चूंकि ईसा पूर्व ५०० और १०० ई० के बीच नियोग और विधवा-विवाह की प्रथा धीरे-धीरे समाप्त हो गई थी, इसलिए स्मृतिकारों ने सोचा कि यदि पुत्रहीन विधवा न विवाह कर सकती है और न नियोग द्वारा संतान उत्पन्न कर सकती है तो उसे सम्मानपूर्वक जीवन-निर्वाह के लिए दिवंगत पति की संपत्ति का पर्याप्त अंश मिलना चाहिए। ईसा पूर्व ३०० के लगभग कौटिल्य ने व्यवस्था दी कि विधवा को पति की संपत्ति से निर्वाह-मात्र के लिए पर्याप्त अंश मिल जाना चाहिए। ईसा पूर्व १०० के लगभग स्मृतिकार विष्णु ने इसमें और सुधार करते हुए कहा कि पुत्रहीन विधवा को पति की संपूर्ण संपत्ति मिलनी चाहिए। दो सौ वर्ष बाद स्मृतिकार याज्ञवल्क्य ने इस मत का समर्थन किया। परन्तु विष्णु और याज्ञवल्क्य के मत से अन्य स्मृतिकार सहमत न थे। उनके मत भिन्न-भिन्न थे। अनेकों ने यह कहा कि विधवा को स्त्री-धन के अतिरिक्त दो या तीन सहस्र रुपये ही मिलने चाहिए। कइयों का कहना था कि विधवा को केवल चल-संपत्ति मिलनी चाहिए। कुछ का मत था कि विधवा को पति की संपत्ति, देवर अथवा सास-ससुर के न होने पर ही मिलनी चाहिए। परिणामतः भिन्न-भिन्न प्रदेशों में विधवा के संपत्ति-विषयक अधिकार के संबंध में भिन्न-भिन्न कानून लागू रहे। संपत्ति पर विधवा का अधिकार कहीं-कहीं तो स्वीकार कर लिया गया, परंतु कई प्रदेशों में स्वीकार नहीं हुआ।

आलोच्य काल में नारी की स्थिति को ठीक-ठीक समझने के लिए दो बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है। एक यह कि यद्यपि अधिकांश स्मृतियों ने नारी के विषय में कठोर व्यवस्थाएं थीं तथापि वास्तविक जीवन के व्यवहार में उनके अनेक अपवाद होते थे। यद्यपि साधारणतया कन्याओं का विवाह ८-१० वर्ष की आयु में होता था, फिर भी पूर्ण युवा कन्याओं के विवाह के उदाहरण सातवीं शताब्दी तक ही मिलते हैं। यद्यपि साधारण परिवारों में कन्याओं की शिक्षा पर पूर्ण प्रतिबंध था, फिर भी राजवंशों और शिष्ट तथा अभिजात कुलों में कन्याओं को घर पर ही शिक्षा देने की व्यवस्था की जाती रही जिसके फलस्वरूप आगे चलकर अनेक विदुषियां और कवयित्रियां हुईं। दूसरे यह कि अधिकांश स्मृतिकारों द्वारा नारी को अवर स्थान दिये जाने के बावजूद, मानव की स्वाभाविक प्रवृत्तियों से भी अधिक समाज की गहरी मान्यताओं के कारण, पिता के हृदय में पुत्री के लिए स्नेह, पति के हृदय में पत्नी के लिए प्रेम और पुत्र के मन में माता के प्रति आदर का भाव होता ही था। ऐसे भावों को व्यक्त करते हुए कालिदास ने कन्या को कुल का प्राण,[1] पत्नी को पति की सचिव और सखी कहा,[2] और मनु ने माता का गौरव पिता से सहस्रगुना माना[3] और यह भी कहा कि जहां नारियों की पूजा होती है, वहीं सुख-समृद्धि का

१. कन्येयं कुलजीवितम् (कुमारसम्भव ६, ६३)
२. गृहिणी सचिवः सखी मित्रः (रघुवंश ८, ६७)
३. सहस्रं तु पितॄन् माता गौरवेणातिरिच्यते (२, १४५)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निवास होता है।[1]

बौद्ध धर्म में नारी की स्थिति

ऊपर हमने हिन्दू समाज में नारी की स्थिति के जिस युग का वर्णन किया है, लगभग उसी युग में बौद्ध और जैन धर्मों का भी प्रचार और प्रसार हुआ। इन धर्मों में नारी की स्थिति पर प्रकाश डाले विना भारतीय नारी की अवस्था का चित्रांकन पूर्ण नहीं कहा जा सकता।

बुद्ध और महावीर ने बहुत-सी ऐसी धारणाओं का अंत कर दिया जिनके आधार पर हिन्दू-समाज में पुरुष और स्त्री में विभेद किया जाता था। हिन्दू-शास्त्रों में स्वर्ग की प्राप्ति के लिए पुत्र का जन्म आवश्यक माना गया था। इसके विपरीत बुद्ध और महावीर ने कहा कि निर्वाण अथवा मोक्ष व्यक्ति को केवल अपने कर्मों से प्राप्त होता है। पुत्र अथवा कन्या का जन्म उसकी प्राप्ति में साधक या बाधक नहीं है। वैदिक यज्ञों में नारी का धीरे-धीरे बहिष्कार किया जाने लगा था जिसके फलस्वरूप उसे पुरुष से हीन समझा जाने लगा। परंतु बुद्ध और महावीर ने यज्ञों को अनावश्यक बताकर उनका निषेध ही कर दिया।

इस प्रकार पुरुष और स्त्री के विभेद के मूल कारणों को दूर करके बौद्ध और जैन धर्मों के प्रवर्तकों ने पुरुष के समान नारी के लिए भी शिक्षा, दीक्षा और आध्यात्मिक उन्नति का द्वार खोल दिया।

लगता है कि संघ की स्थापना के आरंभिक वर्षों में कुछ के मन में नारी की योग्यता और सामर्थ्य के विषय में किंचित् संदेह और अनास्था थी। बुद्ध की अपनी विमाता एवं धात्री महाप्रजापती गौतमी ने महाराज शुद्धोदन के देहांत के बाद विरक्त होकर निर्वाण की अभिलाषा से संघ में प्रवेश करने के लिए तीन बार प्रार्थना की। परंतु बुद्ध ने उसकी प्रार्थना अस्वीकार कर दी। तीनों बार उनका यही उत्तर था, "रहने दो गौतमी, नारियों को गृहस्थी त्यागकर संघ में प्रवेश करने की प्रेरणा मत दो।" अंत में अपने मुख्य शिष्य आनंद के अनुरोध पर जब उन्होंने नारियों के संघ में प्रवेश की अनुमति दे दी तो उन्होंने भविष्यवाणी की कि नारियों के प्रवेश के विना संघ जितनी अवधि तक शुद्ध रह सकता था, अब भिक्षुणी संघ की स्थापना के फलस्वरूप वह उसकी आधी अवधि तक ही शुद्ध रह पायेगा।

भिक्षुणी संघ की स्थापना हो गई और किसी भेद-भाव के बिना सब नारियों को— कुमारियों, विवाहित स्त्रियों, विधवाओं, यहाँ तक कि गणिकाओं को भी दीक्षा दी जाने लगी।

परंतु भिक्षुओं की तुलना में बुद्ध ने भिक्षुणियों को अवर ही माना। भिक्षुणियों के लिए आठ शर्तें रखी गईं जिनमें से दो इस प्रकार थीं :—

१. भिक्षुणी चाहे वृद्धा हो और उसे दीक्षा लिये चाहे सौ वर्ष हो गये हों, तो भी उसका कर्तव्य है कि वह किसी नव-दीक्षित युवा भिक्षु के पधारने पर अपने आसन से उठकर उसका अभिवादन करे।

२. किसी भिक्षुणी को किसी भिक्षु की भर्त्सना नहीं करनी चाहिए और न किसी भिक्षु

१. यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता : (३, ५६)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के प्रति अपशब्दों का प्रयोग करना चाहिए।

यों कदाचित् ये शर्तें व्यवहार में भिक्षुणियों की साधना के आरंभिक वर्षों में ही लागू होती होंगी और किंचित् सिद्धि प्राप्त करने के बाद भिक्षु और भिक्षुणियों में भेद नहीं किया जाता होगा।

भिक्षुणी संघ की स्थापना के फलस्वरूप जहां समाज में नारी का गौरव बढ़ा, वहां भिक्षुणियों के लिए उच्च शिक्षा, आध्यात्मिक उन्नति और समाज-सेवा तथा धर्म-प्रचार का मार्ग प्रशस्त हो गया।

विदुषी भिक्षुणियां

अनुभवी और सिद्धि-प्राप्त भिक्षुणियों को 'थेरी' की संज्ञा दी जाती थी। थेरियों में सबसे अधिक विदुषी 'धम्मदिता' थी जो प्रमुख धम्मकथिका अर्थात् धर्म-प्रचारिका भी थी। उसने औरों के अतिरिक्त अपने पति को भी धार्मिक सिद्धांतों की शिक्षा दी। बुद्ध ने उसके शिक्षा देने के ढंग की प्रशंसा की है। एक और प्रख्यात धम्मकथिका थी 'सुक्का' जो विशाल जन-समुदाय के सम्मुख बौद्ध सिद्धांतों पर व्याख्यान दिया करती थी। श्रावस्ती के श्रेष्ठी की पुत्री 'पटाचारा' विनय-नियमों की पंडिता थी। उसने तीस भिक्षुणियों को शिक्षा दी और उन्हें सिद्धि के मार्ग पर अग्रसर किया।

बिंबसार की पत्नी महारानी 'खेमा' बौद्ध शास्त्रों की पंडिता थी और बुद्ध ने उसे विदुषी थेरियों मे स्थान दिया था। कहते हैं कि एक बार कौशल-नरेश प्रसेनजित ने उससे यह दुरूह प्रश्न किया कि देहत्याग के बाद तथागत का अस्तित्व रहता है या नहीं ? उसने उत्तर दिया कि देह-त्याग के बाद तथागत को पांच तत्त्वों के द्वारा अथवा रूप और वेदना के आधार पर किसी स्थान विशेष में उपलब्ध नहीं किया जा सकता। उसने यह भी बताया कि बुद्ध ने इस प्रकार के प्रश्नों को अनिर्णेय ठहराया है। कहते हैं कि बाद में प्रसेनजित ने बुद्ध से भेंट की और उन्होंने भी उसे उपर्युक्त प्रश्न का वही उत्तर दिया जो कि खेमा ने दिया था। 'थुल्लनन्दा' प्रवचन करने में कुशल थी। विनयपिटक में उसे कुशल शिक्षिका बताया गया है। 'कुशाग्रबुद्धि कजंगला' के विषय में कहा गया है कि उसने बुद्ध अथवा उनके शिष्यों के व्याख्यान कभी नहीं सुने थे। फिर भी वह ग्रंथों के अध्ययन से ही पंडिता हो गई थी। वह धार्मिक सम्मेलनों में बुद्ध की उक्तियों की ऐसी यथार्थ व्याख्या करती थी कि सुनने पर स्वयं बुद्ध उसकी प्रशंसा किये बिना न रह सके। राजगृह के धनाढ्य श्रेष्ठी की कन्या 'भद्दा कुण्डल-केशा' परम विदुषी और विशेषतः तर्क-शास्त्र की पंडिता थी। उसने कई बार पुरुषों को शास्त्रार्थ में पराजित किया था। बुद्ध के प्रख्यात शिष्य सारिपुत्त के अतिरिक्त कोई उसे पराजित नहीं कर सका। बुद्ध से दीक्षा प्राप्त करने के बाद लगभग पचास वर्ष तक वह अंग, मगध, काशी, कौशल आदि देशों की यात्रा और धर्म-प्रचार करती रही।

भिक्षुणियों की आध्यात्मिक सिद्धि

बौद्ध भिक्षुणियां और थेरियां विदुषी ही नहीं थीं प्रत्युत आध्यात्मिक क्षेत्र में भी उन्होंने परम सिद्धि प्राप्त की थी।

थेरीगाथा नामक ग्रंथ से, जो कि ७७ भिक्षुणियों द्वारा रचित ५२२ गीतों का संग्रह है,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उनकी साहित्यिक सफलता एवं आध्यात्मिक उपलब्धि का परिचय मिलता है। इस ग्रंथ के अनुसार बुद्ध की विमाता महाप्रजापती को अपने पूर्व जन्मों की स्मृति उपलब्ध हुई जिनमें वह पुत्र, भाई, माता और मातामही आदि रह चुकी थी। उसे यह भी बोध हो गया था कि अब उसका पुनर्जन्म नहीं होगा और वह निर्वाणपद प्राप्त करने वाली है।

पटाचारा, जिसकी चर्चा ऊपर की जा चुकी है पति, पुत्र, पिता, भाई आदि निकट संबंधियों का निधन देखकर विक्षिप्त हो गई थी। बुद्ध के उपदेश सुनकर पहले वह स्रोतापन्न अर्थात् निवार्ण-पथगामिनी हुई और फिर उन उपदेशों पर मनन और आचरण करने से उसने अर्हंता-पद प्राप्त किया। उज्जयिनी के श्रेष्ठी की कन्या 'इसिरासी' गृहस्थ जीवन से निराश होकर भिक्षुणी-संघ में प्रविष्ट हुई। भिक्षुणी जिनदत्ता से दीक्षा पाने के कुछ समय बाद उसे पूर्व-जन्मों के कर्मों का स्मरण हो आया और तदनंतर उसे परम ज्ञान प्राप्त हुआ।

वैशाली की रूपवती गणिका अम्बपाली जिसकी कामना करने वालों में महाराज बिंबसार भी थे, वीतराग होकर उपासिका बन गई थी। वैशाली के निकट कोटिगाम में बुद्ध ने उसे उपदेश दिया। अम्बपाली ने बुद्ध और उनके शिष्यों को भोजन का निमंत्रण दिया। भोजनोपरांत अम्बपाली ने अपना आम्र-उद्यान संघ को दान दे दिया। बाद में उसने भिक्षुणी संघ में प्रवेश किया और कालांतर में अर्हंता-पद प्राप्त किया। उसने नये गीतों की रचना भी की।

जो नारियां संघ में प्रवेश न करके भी बौद्ध धर्म का अनुसरण करती थीं, उन्हें उपासिका की संज्ञा दी गई थी। इन उपासिकाओं में उदयन की रानी 'सामावती', सामावती की दासी 'सज्जुत्तरा' और अंगदेश के श्रेष्ठी की कन्या विशाखा के नाम उल्लेखनीय हैं।

सामावती बाल्यकाल से बुद्ध की उपासिका थी। विवाह के बाद उसकी सपत्नी 'चूड़ा-मागंदीय' उदयन को, जिसकी बुद्ध में आस्था नहीं थी, सामावती के विरुद्ध भड़काया करती थी। एक बार उदयन को इतना क्रोध आया कि वह हाथ में धनुष लेकर सामावती और उसकी दासियों पर विषैले बाण चलाने को तैयार हो गया। यह देखकर सामावती और उसकी दासियों ने निश्चल रहते हुए राजा के प्रति मैत्री-भावना से ध्यान किया; जिससे उसके हाथ सुन्न हो गये और वह बाण न चला सका। यही नहीं, प्रत्युत वह धनुष और बाणों को अपने हाथों से अलग करने में असमर्थ हो गया। तब उसने सामावती से क्षमा-याचना की और उसके प्रभाव से ही वह धनुष और बाण से अपना हाथ छुड़ा सका। बाद में सामावती को अपने महल में ही 'आनन्द' से प्रवचन सुनने की अनुमति मिल गई। मैत्री-भावना के अभ्यास में सिद्धि प्राप्त करने के कारण बुद्ध ने सामावती की गणना श्रेष्ठ उपासिकाओं में की।

सामावती की दासी सज्जुत्तरा ने जब पहली बार बुद्ध का प्रवचन सुना तो उसे उसका एक-एक अक्षर कण्ठस्थ हो गया और साथ ही स्रोतापत्ति भी प्राप्त हो गई। सामावती के कहने पर वह प्रतिदिन प्रवचन सुनने जाती और महल में लौटकर रानी को सारा प्रवचन अक्षरशः सुना देती। ऐसा करते-करते वह बहुत विदुषी हो गई और बुद्ध ने उसकी गणना भी श्रेष्ठ उपासिकाओं में की।

श्रावस्ती के श्रेष्ठी पुन्नवर्द्धन की पत्नी विशाखा भी बुद्ध की उपासिका थी। उसने अपने सारे आभूषण उतारकर बुद्ध को भेंट कर दिये थे।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जैन धर्म में नारी

जैन धर्म के प्रवर्तक महावीर ने नारी को पुरुष के समान धर्माधिकारिणी मानकर तथा जैन आचार्यों और गुरुओं ने नारी को संपत्ति विषयक तथा अन्य कानूनी अधिकार देकर उसका उद्धार किया और भारतीय समाज पर अनुग्रह किया।

नारी के विषय में महावीर का दृष्टिकोण बुद्ध की अपेक्षा अधिक उदार था। उन्होंने नारियों को दीक्षा देने में तनिक भी संकोच नहीं किया। बौद्ध धर्म में तो भिक्षुणियों को भिक्षुओं से अवर ही माना गया था, परन्तु जैन धर्म में साध्वियों को साधुओं से हीन नहीं माना गया। दीक्षा लेने के बाद साधुओं और साध्वियों के लिए भिक्षा, चर्या, भाषण, अभिवादन आदि के विषय में समान नियम थे। संभवतः यह एक कारण था कि जैन धर्म के अनुयायियों में पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की संख्या बहुत अधिक थी।

महावीर के जीवन-काल में उनके अनुयायियों में चौदह सहस्र साधु और छयालीस सहस्र साध्वियां, तथा एक लाख उनसठ हजार श्रावक और तीन लाख अठारह हजार श्राविकाएं थीं। आगे चलकर जैन धर्म के दो संप्रदाय हो गये—श्वेताम्बर और दिगम्बर। श्वेताम्बर संप्रदाय नारी के प्रति अधिक उदार है। इसमें नारियों की आध्यात्मिक प्रगति में कोई बाधा नहीं है, और वे क्रमशः साध्वी, उपाध्याया, आचार्या, अर्हंता और सिद्धा की पदवी प्राप्त कर सकती हैं और पुरुषों की भांति ही मोक्ष की भी अधिकारिणी हैं। शाकटायनाचार्य ने स्पष्ट कहा है 'अस्ति स्त्रीनिर्वाणं पुंवत्'।

धर्म-प्रचार और आध्यात्मिक सिद्धि

जैन धर्म में दीक्षा लेने के बाद अनेक नारियों ने धर्म के प्रचार और प्रसार के क्षेत्र में प्रशंसनीय कार्य किया तथा आध्यात्मिक सिद्धि प्राप्त की। चम्पा के राजा दधिवहन की कन्या 'चन्दना', जिसे महावीर ने नारियों में सबसे पहले दीक्षा दी थी, साध्वी-मंडल की अध्यक्षा बनी। उसके प्रचार-कार्य के फलस्वरूप बीस हजार स्त्री-पुरुष जैन धर्म के अनुयायी बने। धर्म-प्रचारिकाओं में महासुव्रता, आर्यापक्षिणी, आर्यावज्रा, यक्षा और राजनीति के नाम भी उल्लेखनीय हैं।

कल्पसुत के अनुसार 'पुष्पचूला' के अनुरोध से अड़तीस हजार नारियों ने पार्श्वनाथ से दीक्षा लेकर साध्वीपद प्राप्त किया। इसी प्रकार 'सुमना' की प्रेरणा से तीन लाख छब्बीस हजार नारियां श्राविकाएं बनीं। बीस हजार साध्वियों ने अपने कर्मों का क्षय होने पर मोक्ष प्राप्त किया; जब कि उसी अवधि में केवल एक हजार साधु ही मोक्ष प्राप्त कर पाये। इसी ग्रंथ के अनुसार अर्हंत अरिष्टनेमि की प्रेरणा से तीन लाख बत्तीस हजार श्राविकाओं ने दीक्षा ली जिनमें तीन हजार ने कालांतर में मोक्ष प्राप्त किया।

जैन विदुषियां

जैन समाज में विदुषियों की भी कमी नहीं थी। 'याकिनी महत्तरा' परम विदुषी और

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शास्त्रार्थ-कुशला थी। कहते हैं कि उसने हिन्दू शास्त्रों के प्रकांड पंडित एवं नीति, तर्क, योग और कर्मकांड विषयक अनेक ग्रंथों के रचयिता हरिभद्र सूरि को शास्त्रार्थ में पराजित किया था। पराजित होने पर हरिभद्र सूरि ने जैन धर्म स्वीकार किया और अपने-आपको 'याकिनी-महत्तरा-सूनु' माना।

९०५ ईसवी में गुणसाध्वी ने सिद्धर्षि के बृहदाकार ग्रंथ उपमित-भव-प्रपंच कथा की प्रथम प्रतिलिपि तैयार की। उसकी विद्वत्ता देखकर स्वयं सिद्धर्षि ने उसे सरस्वती का अवतार माना। बारहवीं शताब्दी के आरंभ में महानन्दाश्री महत्तरा और गणिनी वीरमती नामक दो विदुषियों ने हेमचन्द्र को जिनभद्र के ग्रंथ विशेषावश्यकभाष्य पर विस्तृत टीका लिखने के काम में सहयोग दिया। १३५० में गुण समृद्धि महत्तरा ने अज्जना सुंदर-चरित्र नामक ग्रंथ की रचना की।

आदर्श पतिव्रताएं

हिन्दू समाज की भांति जैन समाज में भी पातिव्रत्य धर्म को बहुत महत्त्व दिया गया है। जैन तीर्थंकर नेमिनाथ की पत्नी राजीमती, कौवलन की पत्नी कन्नकी और कौशाम्बी के राजा शतानीक की पत्नी रानी मृगावती आदि पतिव्रताएं सीता और सावित्री के समान ही पूज्य हैं।

'सुलसा' भी आदर्श पतिव्रता नारी थी जिसके विषय में आज भी निम्न आशय का गीत गाया जाता है: 'सुलसा पतिव्रता थी। वह सांसारिक सुख-भोगों में आसक्त नहीं थी। उसके दर्शन-मात्र से पाप दूर हो जाते थे।'

नारी का सम्मान

जैन समाज में नारी, विशेषतः माता, सदा ही आदर की पात्र रही है। मंदिरों में शुरू से ही चौबीस तीर्थंकरों की माताओं की मूर्तियों की पूजा होती रही है और आज भी आबू, गिरनार, पाटण आदि के मंदिरों में उनकी पूजा होती है।

इसके अतिरिक्त विशेष परिस्थितियों में नारी को पुरुष से वरीयता दी जाती थी। बृहत्कल्पभाष्य के अनुसार बाढ़, अग्निकांड और डकैती आदि संकट उपस्थित होने पर पुरुषों से पहले नारियों को बचाने का प्रयत्न किया जाता था। जैन परिवारों में पत्नी की इच्छाओं का आदर किया जाता था और उसे पति की दासी नहीं प्रत्युत 'सहकारिणी' समझा जाता था। उसे गृहस्थी के काम-काज का प्रबंध करने की पर्याप्त स्वतंत्रता थी और दत्तक को गोद लेने के विषय में पति के समान ही अधिकार प्राप्त था।

संपत्ति पर अधिकार

हिन्दू नारी की भांति जैन नारी का भी स्त्री-धन पर पूरा अधिकार था। जैन नीति ग्रंथों के अनुसार स्त्री-धन में पांच प्रकार का धन समाविष्ट था: (१)अध्याग्निकृत—विवाह मंडप में अग्नि के समक्ष वधू को जो कुछ दिया जाये, (२)अध्याह्वनिक—वधू पितृकुल से जो कुछ लाती है, (३) प्रतिदान—सास-ससुर वधू को जो कुछ देते हैं, (४)सौदायिक—वधू को माता-पिता,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भाई और पति से जो कुछ मिलता है, और (५) अन्याधेय—विवाह के अवसर पर वधू को पितृ-कुल अथवा पति-कुल की स्त्रियों से जो सोना-मोती, वस्त्र आदि मिलता है।

कन्या, पिता की संपत्ति की दायाद मानी जाती थी। इस विषय में जैन परिवारों में पुत्र और कन्या में भेद नहीं किया जाता था। पुत्रहीन पुरुष की कन्या को उसकी संपूर्ण संपत्ति पर अधिकार था। यदि भाई हों, तो अविवाहित बहन को पितृ-संपति में से भाइयों की तुलना में एक-चौथाई भाग मिलता था। परन्तु भाइयों के रहते विवाहित बहन को पिता की संपत्ति नहीं मिलती थी। पुत्री विवाहित हो या अविवाहित, उसे माता की संपत्ति पर पूर्ण अधिकार था।

हिंदू विधवा की अपेक्षा जैन विधवा के संपत्ति-विषयक अधिकार अधिक थे। जैन विधवा को संपत्ति का उपभोग करने के अतिरिक्त उसे बेचने या किसी को दे देने का भी अधिकार था। 'वर्धमान-नीति' में विधवा को पुत्रों पर वरीयता दी गई है। उसे पुत्रों के रहते भी पति की संपत्ति पर पूर्ण अधिकार था। अपने निर्वाह के लिए, धर्मार्थ व्यय करने के लिए अथवा दान आदि के लिए जैन विधवा पति की संपत्ति का व्यय और विक्रय कर सकती थी।

इस प्रकार हम देखते हैं कि महाभारत काल के बाद हर्षवर्द्धन के काल तक भारतीय नारी की स्थिति जहां वैदिक धर्म का ह्रास होने के कारण गौण होती गई, वहां बौद्ध और जैन धर्म के प्रसार के साथ उसके गिरते हुए स्थान को अवलंब भी मिला। यह तो ध्यान में रखा जाना चाहिए कि सर्वसाधारण समाज में कृषक और श्रमजीवी वर्ग की भारतीय नारी की स्थिति में उत्थान-पतन के कहने लायक दौर कभी आये ही नहीं। वहां तो वह लगभग अबाधित रूप से पुरुष की सहकारिणी बनी रही।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मध्य युग में नारी की स्थिति

नदिन्ता मिश्र

महाभारत काल के बाद नारी के अधिकारों और उसकी स्वतंत्रता को सीमित करने का जो क्रम शुरू हुआ वह हर्षवर्द्धन के बाद भी कोई ग्यारह सौ वर्ष तक निरंतर चलता रहा। इस लंबी अवधि में मुसलमानों के आक्रमण और उसके परिणामस्वरूप पहले उत्तर भारत में और तदनंतर दक्षिण भारत के अधिकांश भाग पर मुस्लिम आधिपत्य की स्थापना, मुस्लिम संस्कृति के प्रसार और विशेषतः पर्दे की प्रथा के प्रचलन से नारी की स्वतंत्रता पर कुठाराघात हुआ। परंतु इसी काल में राजपूत और मराठा वीरांगनाओं ने मुसलमानों के आक्रमणों का मुकाबला करके यह भी सिद्ध कर दिया कि भारतीय नारी देशप्रेम, आत्म-बलिदान और वीरता में पुरुष से कम नहीं है। राजवंशों की नारियों ने अपनी शासन-कुशलता का भी परिचय दिया। इसी युग के आरंभ में वैदिक यज्ञों के स्थान पर पौराणिक धर्म के अभ्युदय और बाद में भक्ति संप्रदायों के आविर्भाव और प्रचार के फलस्वरूप नारी को आध्यात्मिक बल मिला और विकास की एक नई दिशा भी मिली। यद्यपि शिक्षा के अभाव के कारण अधिकांश नारियां निरक्षर रह गईं, फिर भी जिन घरानों में शिक्षा का क्रम अविच्छिन्न रहा उनमें संस्कृत, प्राकृत और प्रादेशिक भाषाओं की विदुषियां और कवयित्रियाँ भी हुईं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

धार्मिक क्षेत्र

सातवीं शताब्दी में वेदों के अध्ययन और यज्ञों के अनुष्ठान की परिपाटी का ह्रास शुरू हो गया था। पुरुष भी वैदिक साहित्य को छोड़ काव्य और धर्मशास्त्र के अध्ययन में रुचि लेने लगे थे और यज्ञ तो विरले ही पुरुष करते थे। इसलिए वैदिक धर्म के अनुसरण की दृष्टि से स्त्री और पुरुष की व्यावहारिक स्थिति में कोई विशेष अंतर नहीं था। परन्तु चूंकि नारी को उपनयन और यज्ञ आदि का अधिकार ही नहीं था, इसलिए सिद्धांतरूप में वह पुरुष से हीन और शूद्रवत् मानी जाती थी। आगे चलकर जब धीरे-धीरे पुराणों ने वैदिक साहित्य का स्थान ले लिया और यज्ञों के स्थान पर पौराणिक व्रतों का प्रचार हुआ, तो नारी को एक नया सहारा मिला। पौराणिक व्रतों के अनुष्ठान के विषय में नारी पर कोई प्रतिबंध नहीं था। वास्तव में ये व्रत पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियां ही अधिक रखती थीं।

१००० ईसवी के लगभग जब संस्कृत भाषा पढ़ने-लिखने वाले लोग थोड़े ही रह गये तो नयी प्रादेशिक भाषाओं में पुराणों का अनुवाद हुआ। इस प्रकार पौराणिक धर्म के प्रचार का क्रम अविच्छिन्न बना रहा। १५०० ईसवी के लगभग भारत-भर के नगरों और गांवों के मन्दिरों में पंडितों के द्वारा प्रतिदिन प्रादेशिक भाषाओं में पुराणों की कथा चलती थी। श्रोताओं में अधिकांश स्त्रियां ही होती थीं। वे धार्मिक व्रतों के रहस्य और महत्त्व को पुरुषों की अपेक्षा अधिक समझती थीं और वे ही उनका अनुष्ठान भी करती थीं। अतः मानना पड़ता है कि जिस नारी को स्मृतकारों ने धर्म-अधिकार से वंचित कर दिया था, अन्त में उसी ने धार्मिक परम्परा को किसी न किसी रूप में चलाते रहने का क्रम निभाया। इसी प्रकार १५०० ईसवी के लगभग जब भक्ति मार्ग के प्रवर्तक मैदान में आये और भक्ति-धर्म का प्रचार हुआ तो उसके अनुयायियों में भी स्त्रियां पुरुषों से आगे रहीं। पौराणिक धर्म तथा भक्ति-धर्म का अनुसरण करने से नारी को अवलंब मिला; किन्तु एक अनिष्ट यह हुआ कि शिक्षा के अभाव और विवेक-बुद्धि की कमी के कारण नारियों में अंधविश्वास फैला और वे अनेक कपोल-कल्पित बातों में भी विश्वास करने लगीं और उनसे कर्तव्याकर्तव्य का विवेक रखने में चूक होने लगी।

शिक्षा

उच्च शिक्षा हर्षवर्द्धन काल के बाद राजवंशों, तथा कतिपय शिष्ट और धनाढ्य परिवारों में ही कन्याओं को दी जाती थी। बाद में ऐसी शिक्षा पाने वाली कन्याओं की संख्या भी धीरे-धीरे कम होने लगी। साधारण परिवारों की नारी के लिए शिक्षा की कोई व्यवस्था न रही। तेरहवीं शताब्दी में मुस्लिम शासन स्थापित होने के बाद पुराने ढंग के शिष्ट परिवारों के स्थान पर ऐसे घरानों का आविर्भाव होने लगा जिनकी भारतीय विद्या और संस्कृति आदि में उतनी रुचि नहीं थी। अतः इस काल में उत्तर भारत में शिक्षा का प्रचार कुछेक ब्राह्मण परिवारों और राजपूत घरानों की नारियों तक ही सीमित रह गया। दक्षिण भारत में जहां मुसलमानों का आधिपत्य देर से स्थापित हुआ, नारियों को और विशेषतः राजवंशों की नारियों को साहित्य, राजनीति और युद्धविद्या की शिक्षा दी जाती रही। यही कारण है

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कि लगभग दसवीं शताब्दी तक संस्कृत और प्राकृत में काव्य-रचना करने वाली और बाद में नई प्रादेशिक भाषाओं में ग्रन्थ लिखने वाली नारियां दक्षिण में विशेषतः मिलती हैं। संस्कृत कवयित्रियों में शील-भट्टारिका, विजयांका (विज्जा अथवा विज्जका), प्रभुदेवी, सुभद्रा आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। प्रादेशिक भाषाओं की कवयित्रियों में, कान्ती, हेलवनकट्टे गिरियम्भरा, और अक्कभद्दा देवी कन्नड में; मौल्ला और वेंगमाम्बा तेलुगु में; महदम्बा और मुक्ताबाई मराठी में; लल्ला कश्मीरी में और मीरावाई व्रज में राजस्थानी एवं गुजराती अपनी काव्य-रचना के कारण प्रसिद्ध हैं। इनकी तथा कुछ अन्य कवयित्रियों की तनिक विस्तृत चर्चा इस लेख में आगे चलकर की जायेगी।

विवाह और गृहस्थ-जीवन

इस युग में कन्याओं का विवाह प्रायः ८-६ वर्ष की आयु में हो जाता था और बाद में तो ४-५ वर्ष की अवोध वालिकाओं का भी विवाह होने लगा। परन्तु कश्मीरी पंडितों और केरल के नम्बूदिरि ब्राह्मणों में रजोदर्शन से पूर्व कन्या के विवाह की प्रथा नहीं थी। कई भागों में दहेज प्रथा विकट रूप धारण करती जा रही थी। आम परिवारों में कन्या का विवाह माता-पिता के लिए एक कठिन समस्या मानी जाने लगी। स्वयंवर की प्रथा कुछ एक राजपूत घरानों तक सीमित रह गई थी। वहु-विवाह की प्रथा भी विद्यमान थी। विधवा-विवाह की प्रथा सवर्णों में नहीं थी, परन्तु विधुरों के विवाह पर कोई प्रतिबंध नहीं था। ४०-४५ वर्ष के विधुरों का विवाह १०-१२ वर्ष की कन्याओं से हो जाता था। निरक्षर और अपरिपक्व-बुद्धि पत्नी की स्थिति पति की तुलना में अत्यन्त हीन थी। सुसराल में वह सास के अनुचित दबाव में रहती थी और पर्दे के कारण उसे उत्सवों में सम्मिलित होने के लिए घर से बाहर जाने की स्वतंत्रता नहीं थी। उस काल में इस दृष्टि से उच्चवर्ग और मध्यवर्ग की स्त्रियों की दशा शोचनीय हो गई। किसान और मजदूर परिवारों में स्त्री की स्थिति पहले जैसी थी, वैसी ही वनी रही।

धर्म-परिवर्तन

७०० ईसवी के वाद से ही मुसलमान आक्रमणकारी भारत में आने लगे थे। वे प्रायः हिन्दुओं को मुसलमान बना लेते थे। जवरदस्ती मुसलमान बनाई गई स्त्रियों की दशा अत्यंत शोचनीय हो जाती थी। आरंभ में तो ऐसी स्त्रियों की प्रायश्चित्त और शुद्धि की विधि से फिर हिन्दू बनाकर अपने परिवारों में स्वीकार कर लिया जाता था, परन्तु १००० ईसवी के लगभग यह उदार दृष्टिकोण त्याग दिया गया और एक बार अपहृत की गई नारी को फिर हिन्दू समाज में स्थान मिलना असंभव हो गया। उसे अपहरणकर्ता के परिवार में ही दुःखमय जीवन विताना पड़ता था।

पर्दे की प्रथा

तेरहवीं शताव्दी में जब मुसलमानों ने पैर जमाने शुरू किये तो उनकी संस्कृति के प्रभाव से उत्तर भारत के कुलीन हिन्दू परिवारों में भी पर्दे की प्रथा आरंभ हो गई और वह धीरे-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

धीरे जोर पकड़ती गई। परन्तु दक्षिण भारत में कुछेक राजघरानों को छोड़, कहीं पर्दे का रिवाज नहीं हुआ। पर्दे की प्रथा से मुक्त राजवंश की नारियां उत्सवों के अवसर पर जन-समुदायों के सम्मुख भी नृत्य-संगीत कला का प्रदर्शन करने में संकोच नहीं करती थीं। उत्तर भारत में तो पर्दे का रिवाज इतना कड़ा हो गया कि ससुर अपनी पुत्रवधू को आसानी से नहीं पहचान पाता था; उसे उसका मुख देखने का प्रायः अवसर ही नहीं आता था।

विधवा-विवाह

आलोच्य युग में उत्तर भारत के कुलीन घरानों में सती-प्रथा का प्रचलन रहा। दक्षिण में इस प्रथा का प्रायः अभाव था। धर्म के सूत्रधारों ने अभी तक विधवा-विवाह की अनुमति नहीं दी थी। फिर भी सत्रहवीं-अठारहवीं शताब्दी में महाराष्ट्र की ब्राह्मणेतर जातियों में तथा पंजाब और यमुना-घाटी के जाटों में विधवा-विवाह होने लगा था। अठारहवीं शताब्दी के मध्य में बंगाल में ढाका के राजा, राजवल्लभ ने विधवा-विवाह-प्रथा का सूत्रपात करने का प्रयत्न किया परंतु उन्हें सफलता नहीं मिली।

संपत्ति-विषयक अधिकार

आलोच्य युग में नारी के संपत्ति-विषयक अधिकार पहले की अपेक्षा विस्तृत कर दिये गये। यद्यपि भाइयों के रहते कन्या का पितृ-संपत्ति पर अधिकार पहले की भांति ही अमान्य रहा, फिर भी अधिकांश स्मृतिकारों ने यह व्यवस्था दी कि भाइयों को बहनों के विवाह के लिए पितृ-संपत्ति में से पर्याप्त राशि अलग रख देनी चाहिए और यह राशि भाइयों के अंश के एक-चौथाई भाग से कम नहीं होनी चाहिए।

स्त्री-धन की परिभाषा का विस्तार किया गया। आरंभ में हिन्दू नारी के स्त्री-धन के अंतर्गत वही संपत्ति मानी जाती थी जो उसे विवाह के अवसर पर दी जाती थी। ११०० ईसवी के लगभग विज्ञानेश्वर आदि टीकाकारों ने कहा कि नारी को किसी प्रकार से भी मिली संपत्ति स्त्री-धन के अंतर्गत मानी जानी चाहिए।

जहां तक विधवा के उत्तराधिकार का संबंध है, बृहस्पति, प्रजापति और कात्यायन आदि सुधारवादी स्मृतिकार इस बात के पक्ष में थे कि विधवा को पति की संपूर्ण संपत्ति मिलनी चाहिए। उनका कहना था कि पति और पत्नी संपत्ति के संयुक्त स्वामी होते हैं, अतः दोनों में से एक के रहते, अर्थात् विधवा के जीवनकाल में, उनकी संपत्ति किसी दूसरे को नहीं मिलनी चाहिए। बंगाल के बारहवीं शताब्दी के जीमूतवाहन ने भी ऐसा ही मत व्यक्त किया। इन स्मृतिकारों और विधिज्ञों के प्रबल समर्थन के बावजूद बारहवीं शताब्दी तक विधवा का दिवंगत पति की संपत्ति पर संपूर्ण अधिकार स्वीकार नहीं किया गया था। परिणामतः संतानहीन पुरुष की संपत्ति विधवा को मिलने की बजाय राजा की हो जाती थी।

१२०० के लगभग विधवा का संपत्ति-विषयक अधिकार प्रायः समस्त देश में स्वीकार कर लिया गया। बंगाल में दायभाग-कानून के अनुसार संयुक्त परिवार की विधवाओं को मृत पति की संपत्ति का अंश मिल सकता था; परन्तु मिताक्षर कानून के अधीन ऐसे पुरुष की ही

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विधवा को संपत्ति मिल सकती थी, जो स्वर्गवास से पहले संयुक्त परिवार से अलग हो गया हो।

कवयित्रियां और विदुषियां

इसमें संदेह नहीं कि भारत में कवयित्रियों की परंपरा लगभग अविच्छिन्न रूप में प्राचीनकाल से ही चली आ रही है। यद्यपि वहुतों के काव्य-ग्रंथ और नाम तक लुप्त हो गये हैं, फिर भी अनेकों के पद्य संस्कृत और प्राकृत के सुभाषित संग्रहों में आज भी उपलव्ध हैं और अन्य कवियों की रचनाओं से कइयों के केवल नाम ही ज्ञात होते हैं।

'हाल' की सतसई[1] में जिन काव्य-रचयिताओं के पद्य संकलित हैं उनमें ये आठ कवयित्रियां भी हैं—अनुलक्ष्मी, असुलद्धी, पाहई (प्रहता), बद्धवाही, माधवी, रेवा, रोहा और शशिप्रभा। यह ज्ञात नहीं है कि ये कवयित्रियां किस प्रदेश में या किस काल में हुईं। लगता है सतसई में हाल के बाद भी अनेक पद्यों का प्रक्षेप होता रहा है, इसलिए भाषा को देखते हुए मोटे तौर पर इतना ही कहा जा सकता है कि उपर्युक्त कवयित्रियां प्रथम और आठवीं शताव्दी के बीच हुई होंगी।

नवीं-दसवीं[2] शताव्दी में कवि राजशेखर ने पूर्वकालीन कवयित्रियों की रचनाओं से प्रभावित होकर कहा था : "पुरुषों की भांति स्त्रियां भी काव्य-रचना में कुशल होती हैं।" ऐसी अनेक राजकुमारियां, मंत्रियों की पुत्रियां तथा गणिकाएं हुई हैं जो शास्त्र-पारंगता एवं काव्य-प्रतिभा से सम्पन्न थीं। स्वयं राजशेखर की पत्नी 'अवन्तिसुन्दरी' अलंकार-शास्त्र की पंडिता तथा कवयित्री थी। राजशेखर ने काव्यमीमांसा में तीन स्थलों पर अपनी पत्नी के मत को उद्धृत किया है। उत्तरकाल में हेमचन्द्र (१०८८-११७२) ने देशीनाममाला में अवन्तिसुन्दरी के तीन प्राकृत पद्य उद्धृत किये हैं। जल्हण (लगभग १२५०) की सूक्तिमुक्तावली में राजशेखर के नाम से दिये गये पद्यों में निम्न कवयित्रियों का उल्लेख है:—शीलभट्टारिका, कर्णाकट देश की विजयांका (—विज्जा, विज्जका), लाट देश की प्रभुदेवी, सुभद्रा और विकटनितम्बा।

शीलभट्टारिका पांचाली रीति के प्रयोग में कवि वाण के समान कुशल मानी गई है। विजयांका वदर्भी रीति के प्रयोग में कालिदास के तुल्य एवं साक्षात् सरस्वती मानी गई है।[3]

लाटदेश की प्रभुदेवी के विषय में कहा गया है कि वह तो चली गई है किंतु उसकी

१. कई विद्वानों के मतानुसार हाल का समय प्रथम ईसवी शताव्दी है, और कइयों के अनुसार २०० और ४५० ईसवी के बीच है।
२. राजशेखर का समय लगभग ८९० से ९४० के बीच है।
३. सरस्वतीव कर्णाटी विजयांका जयत्यसौ।
या वैदर्भगिरां वास: कालिदासादनन्तरम्॥
विजयांका ने एक पद्य में अपनी तुलना सरस्वती से करते हुए कहा—
नीलोत्पलदलश्यामां विज्जकां मामजानता।
वृथैव दण्डिनाप्युक्तं सर्वं शुक्ला सरस्वती॥
नीलकमल के समान श्याम वर्ण वाली मुझ विजयांका को न जानने के कारण कवि दण्डी ने यह अयथार्थ उक्ति की कि सरस्वती शुक्लवर्ण होती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सूक्तियां अभी तक रसिकों का अनुरंजन करती हैं[1] काव्यमीमांसा में सुभद्रा के काव्य-चातुर्य की प्रशंसा की गई है।[2]

शारंगधरपद्धति के एक पद्य में शीला (शीलभट्टारिका) और विज्जा (विजयांका) के अतिरिक्त दो अन्य कवयित्रियों—मारुला और मौरिका—का उल्लेख है।[3] इनके पद्य सूक्ति मुक्तावली (लगभग १२५०) में संकलित हैं। सीता नामक एक कवयित्री का एक पद्य राजशेखर के काव्यमीमांसा में और सरस्वती नाम की एक कवयित्री के दो पद्य बंगाल के श्रीधरदास के सदुक्तिकर्णामृत में उद्धृत हैं। भावदेवी के पद्य कवीन्द्रवचनसमुच्चय में तथा सरस्वती के पद्य भोज के सरस्वती-कण्ठाभरण में मिलते हैं।

जैसाकि हम ऊपर कह आये हैं, कर्णाट देश की संस्कृत कवयित्री विजयांका के बारे में हम राजशेखर के एक पद्य से इतना ही जान पाये हैं कि वह वैदर्भी रीति में कालिदास के तुल्य थी परन्तु बारहवीं शताब्दी में हुई कन्नड़भाषा की प्रथम महान कवयित्री 'कान्ती' के विषय में हमें पर्याप्त जानकारी उपलब्ध है। इसी प्रकार अन्य प्रादेशिक भाषाओं की विदुषियों के बारे में हमारी जानकारी पर्याप्त तथा विश्वसनीय है। कान्ती का समय लगभग ११०० ईसवी है। वह होयसल-वंशी महाराज बल्लाल-प्रथम के दरबार में थी। कान्ती-हम्पन-समस्येगलु के अनुसार तत्कालीन प्रसिद्ध कवि नागचन्द्र के साथ उसकी कई बार काव्य-प्रतियोगिता हुई और वाद-विवाद भी। उत्तरकालीन कवि बाहुबली (लगभग १५६०) ने कान्ती को अभिनव-वाग्देवी कहकर स्मरण किया है। इसी प्रदेश की अक्क महादेवी (लगभग ११३० ईसवी) उच्चकोटि की संत कवयित्री थी जिसने लगभग एक हजार सूक्तियां लिखने के अतिरिक्त योगांग-त्रिविधि, सृष्टीय-वचन और अक्कगल-पीठि नामक तीन धार्मिक ग्रंथों की रचना की।

चौदहवीं शताब्दी में विजयनगर सम्राट् कुमार कम्पण-द्वितीय की रानी गंगादेवी अपने समय की संस्कृत कवयित्रियों की शिरोमणि थी। उसने वैदर्भी रीति में मधुरा-विजयम् नामक ऐतिहासिक महाकाव्य की रचना की जिसमें मदुरा के सुल्तान के विरुद्ध कम्पण की युद्ध-यात्रा और विजय का वर्णन है।

पंद्रहवीं शताब्दी में प्रसिद्ध तेलुगु कवयित्री 'मोल्ला' ने सरल और प्रवाहमयी भाषा में 'रामायणम्' की रचना करके तेलुगु साहित्य की श्रीवृद्धि की।

इसी शताब्दी में विजयनगर के महाराज अच्युतराय की राजमहिषी 'तिरुमलाम्बा' हुई, जो व्याकरण, दर्शन और अलंकार शास्त्र की पंडिता, रामायण-महाभारत में पारंगता तथा बहुभाषाविद् थी। उसने संस्कृत में वरदाम्बिका-परिणय-चम्पू की रचना की जिसमें अच्युतराय के वरदाम्बिका के साथ विवाह का वर्णन है।

१. सूक्तीनां स्मरकेलीनां कलानां च विलासभूः।
प्रभुदेवी कवी लाटी गतापि हृदि तिष्ठति ॥

२. पार्थस्य मनसि स्थानं लेभे खलु सुभद्रया।
कवीनां च वचोवृत्ति चातुर्येण सुभद्रया ॥

३. शीला-विज्जा-मारुला-मोरिकाद्याः
काव्यं कर्तुं सन्ति विज्ञाः स्त्रियोऽपि।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सत्रहवीं शताब्दी में मैसूर में एक शूद्र स्त्री होतम्मा ने कन्नड़ में हृदिवदेय-धर्म नामक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ लिखा जिसमें सती नारी के कर्तव्यों की चर्चा की गई है। होतम्मा राजमहल में दासी थी और महारानी के कहने से उसे वेद-वेदान्त के पारंगत पंडित अलंशिगाराचार्य से शिक्षा दिलाई गई थी। आचार्य ने उसकी योग्यता से प्रसन्न होकर उसे 'सरस-साहित्य-वर देवता' की उपाधि दी थी।

इसी शताब्दी में तंजौर के नायक वंश की कई रानियों ने संस्कृत और तेलुगु में काव्य और नाटक लिखे। इनमें रघुनायक की पटरानी, मधुरवाणी द्वारा संस्कृत में रचित रामायण और दूसरी रानी, रामभद्राम्बा द्वारा रचित रघुनाथाभ्युदयम् नामक महाकाव्य उल्लेखनीय हैं। मधुरवाणी व्याकरण और छन्दशास्त्र की पंडिता, आशु-कवयित्री तथा संगीत-विशारदा थी। रामभद्राम्बा आठ भाषाओं में पद्य रचना कर सकती थी। ऐसी योग्यता रखने वाली कई अन्य नारियां भी तंजौर के राज दरबार में थीं। विजयराघव नायक की रानी रंगजम्मा ने रामायण-सारम् और भारतसारम् के अतिरिक्त तेलुगु में मन्नारुदासविलासम् और उषापरिणयम् नामक दो काव्य लिखे।

अठारहवीं शताब्दी में मैसूर के दोड्ड कृष्णराज की रानी 'चेतुवाम्वा' ने वरनन्दी-कल्याण नामक मधुर काव्य की रचना की और तुला-कावेरी-माहात्म्य पर टीका लिखी। 'हेलवनकट्टे गिरियम्मा' ने कन्नड़ में अनेक ग्रंथ लिखे। उसके भक्तिगीत आज भी लोकप्रिय हैं। इन गीतों की विशेषता यह है कि उनमें रागों का भी निर्देश किया गया है। 'तरिगोण्ड वेंगमाम्वा' ने तेलुगु में भागवत, राजयोगसार और वेंकटाचलमाहात्म्य नामक तीन काव्य लिखे। तेलुगु में राधिका-सान्त्वना नामक एक उत्कृष्ट श्रृंगार काव्य युदुपलनि नाम की एक गणिका की रचना है जो तंजौर के भोंसले-नरेशों के दरवार में थी। वह नृत्य-संगीत-विशारदा होने के अतिरिक्त संस्कृत और तेलुगु की पंडिता थी। उसने जयदेव की प्रसिद्ध अष्टपदी का तेलुगु में अनुवाद भी किया।

पहली बार तेरहवीं शताब्दी में एक मराठी कवयित्री की रचनाएं मिलती हैं। उसका नाम 'महदम्वा' है और उसे 'महदाइसा' भी कहते हैं। इस कृष्ण-भक्त कवयित्री ने श्रीकृष्ण और रुक्मिणी के विवाह के विषय पर गीत लिखे जिन्हें धवले कहा जाता है। उसने रुक्मिणी विवाह पर एक और कविता भी लिखी जिसके पद्य वर्णमाला के क्रम से आरम्भ होते हैं। इसी शताब्दी में संत कवयित्री मुक्तावाई भी हुई। यह गीता की प्रसिद्ध ज्ञानेश्वरी टीका के टीकाकार, वेदान्त के पंडित, दार्शनिक एवं संत महाराण ज्ञानदेव की वहन थी।

मुक्तावाई अभंग भक्ति-गीतों की रचना के लिए विख्यात है। सन्त कवि नामदेव की वहन जनावाई द्वारा रचित लगभग तीन सौ अभंग उपलब्ध हैं। ये अत्यंत लोकप्रिय हैं और आज भी कीर्तन के अवसर पर गाये जाते हैं। भगवान् विट्ठल की अनन्य भक्ता 'कान्होपात्रा' भी जो एक गणिका की पुत्री थी, अभंग-रचना के लिए प्रसिद्ध है। वह पंद्रहवीं शताब्दी में हुई। उत्तरकालीन मराठी की संत कवयित्रियों में वेणावाई (१७वीं शताब्दी) और अक्कावाई (१७-१८वीं शताब्दी) के नाम उल्लेखनीय हैं।

आलोच्य काल में उत्तरभारत में भी कुछ एक कवयित्रियां हुईं, यद्यपि उनकी संख्या इस युग की दक्षिण भारत की कवयित्रियों की अपेक्षा बहुत कम है। कश्मीर में चौदहवीं शताब्दी के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अंतिम भाग में लल्ला (अथवा लल्लेश्वरी) नाम की संत कवयित्री हुई जिसे रामानन्द, कबीर, नानक आदि संतों और समाज-सुधारकों की अग्रदूती कहा जा सकता है। भगवद्भक्ति तथा उदात्त दार्शनिक विचारों की अभिव्यक्त करने वाले उसके गीत भारतीय साहित्य की अमूल्य निधि हैं। लल्ला की तुलना मुक्ताबाई, जनाबाई और मीराबाई से की जा सकती है। यों मीराबाई अतुलनीय हैं। उन्होंने व्रज, राजस्थानी और गुजराती भाषाओं में भक्ति-रस से ओत-प्रोत जो गीत लिखे उन्हें 'यावच्चन्द्र दिवाकरौ' कहते हुए किसीको कोई हिचक नहीं हो सकती।

कृष्ण की अनन्य भक्त, गिरधर गोपाल की दासी, स्वनामधन्य मीराबाई का जन्म १६वीं शताब्दी के आरंभ में राजस्थान में हुआ। उन्होंने केवल काव्य ही नहीं लिखा, यह भी सिद्ध किया कि विवेकपूर्ण कामों को करने वाला व्यक्ति सहज भावेन समाज से विद्रोह करके पूजित बना रहता है।

१८वीं शताब्दी में चरणदासी संप्रदाय की अनुयायी सहजोबाई और दयाबाई नाम की दो विदुषी नारियां हुईं जिन्होंने भक्ति के अतिरिक्त साहित्य-सेवा भी की। सहजोबाई ने सहज-प्रकाश और सोलह तत्त्वनिर्णय तथा दयाबाई ने दया-बोध और विनय-मालिका नाम के ग्रंथ लिखे।

वीरांगनाएं और शासिकाएं

जैसाकि हम ऊपर कह आये हैं, आलोच्य युग में यद्यपि आम लोग कन्याओं को शिक्षा नहीं देते थे, फिर भी राजघरानों में राजकुमारियों को राजनीति, शासन-प्रबंध और युद्ध-विद्या की शिक्षा प्राय: दी जाती रही, जिससे कि वे आवश्यकता पड़ने पर राजकाज चला सकें और सैन्य-संगठन करके आक्रमणकारियों का मुकाबला कर सकें। देश के कई भागों में, विशेषत: कश्मीर, उड़ीसा और तेलुगु भाषी प्रदेश में नारी राज्य की उत्तराधिकारिणी होती थी। अत: इन प्रदेशों में रानियों ने स्वतंत्र रूप से कुशलतापूर्वक शासन किया। कई अन्य प्रदेशों में रानियों ने अपने पतियों के साथ संयुक्त रूप से भी शासन किया। उत्तरभारत और पश्चिम भारत में रण-कुशल राजपूत स्त्रियों ने अनेक अवसरों पर मुसलमान आक्रमणकारियों का मुकाबला करने में अद्भुत वीरता का परिचय दिया।

इस युग में विदेशी आक्रमणकारियों का मुकाबला करने वाली वीरांगनाओं में सर्वप्रथम दाहिर की पत्नी 'रानी बाई' है। ७१२ ईसवी में जब मुहम्मद बिन कासिम के नेतृत्व में अरबों ने सिन्ध पर हमला किया तो वहां का ब्राह्मण राजा दाहिर जो पहले कई बार उन्हें परास्त कर चुका था, शत्रु का मुकाबला करते-करते वीरगति को प्राप्त हुआ। तदनंतर रानीबाई ने, जो कि किले के भीतर थी, १५००० सैनिकों की सहायता से मुकाबला जारी रखा। अन्त में विजय की आशा न रहने पर रानीबाई ने किले में विद्यमान नारियों को संबोधित करते हुए कहा : "अब यहां से बच भागने का कोई रास्ता नहीं रह गया है। हम शत्रु के हाथ में कदापि पड़ना नहीं चाहेंगी। अच्छा यही होगा कि हम आग में जलकर प्राण दे दें और अपने दिवंगत पतियों से जा मिलें।" तदनंतर रानी तथा अन्य नारियों ने अपने सम्मान की रक्षा करने के लिए अपने को 'जौहर' कर लिया।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इसके बाद बारहवीं शताब्दी में गुजरात के इतिहास में विदेशी आक्रमणकारियों के विरुद्ध नारी-वीरता का एक अद्‌भुत उदाहरण मिलता है। अणहिल्लवाड पाटन (उत्तर गुजरात) के राजकुमार मूलराज के शैशवकाल में उसकी माता 'नाइकी देवी' शासन कर रही थी। तभी लगभग ११७७ में मुसलमानों ने, अनुमानतः मुहम्मद गोरी के नेतृत्व में, वहां आक्रमण किया। कहते हैं कि हाथी पर सवार रानी नाइकी देवी राजकुमार को गोद में लिये ही शत्रुओं से तब तक लड़ती रही जब तक वे भाग न खड़े हुए।

इसी शताब्दी में राजपूत नारियों की वीरता का पहला उत्कृष्ट उदाहरण पृथ्वीराज चौहान की पत्नी संयोगिता ने उपस्थित किया। ११९२ में मुहम्मद गोरी के दूसरे आक्रमण के समय संयोगिता ने पति को स्वयं शस्त्रास्त्र से सुसज्जित करके युद्ध में भेजते हुए कहा : "संसार में जन्म लेकर मरते तो सभी हैं, परंतु जो वीरों की भांति प्राण देते हैं वे अमर हो जाते हैं।" पृथ्वीराज बड़ी वीरता से लड़कर आखिर मारा गया और संयोगिता पति की चिता पर बैठकर सती हो गई।

मेवाड़ के राणा रत्नसिंह की रूपवती एवं वीर रानी 'पद्मिनी' तथा अन्य वीर नारियों ने १३०३ ईसवीं में अलाउद्दीन के आक्रमण के समय चित्तौड़गढ़ की रक्षा करने में पुरुषों का पूरी तरह हाथ बंटाया था। राजपूत आठ महीने तक डटकर लड़े परन्तु शत्रु-सेना की संख्या के आगे वे हार गये। तब पद्‌मिनी तथा कई हजार वीर नारियों और वीर बालाओं ने जौहर की आग में जलकर प्राण त्याग दिये।

महोवा के चन्देला सरदार की पुत्री एवं गोंडवाना (मध्यप्रदेश) की रानी दुर्गावती भी वीरता और देशभक्ति की प्रतिमा थी। अपने अल्पवयस्क पुत्र बीर नारायण की ओर से उसने कुशलता से शासन ही नहीं किया, प्रत्युत मालवा के बाज़ बहादुर तथा अकबर की सेनाओं को भी कई बार परास्त किया। १५६४ में जब अकबर के आदेश से आसफ़खान ने गोंडवाना पर चढ़ाई की तो रानी दुर्गावती ने तीर-कमान और भाले से सुसज्जित होकर हाथी पर बैठकर सेना का संचालन किया और मुगलों को दो जगह परास्त किया। अगले दिन उसके पुत्र वीर नारायण के घायल हो जाने पर उसकी अधिकांश सेना भाग खड़ी हुई। परंतु रानी वीरतापूर्वक लड़ती रही और अंत में तीर लगने से घायल हो गई। उसके एक राजभक्त सैनिक अधिकारी ने उसे युद्धभूमि से उठा ले जाने का प्रस्ताव किया; परन्तु रानी ने कहा, "ईश्वर न करे कि मैं शत्रु के हाथ पड़ जाऊं। यह कटार लो और मेरा अंत कर दो।" सैनिक अधिकारी को हिच-किचाते देख दुर्गावती ने वीर राजपूत नारी की भांति स्वयं कटार भोंककर प्राणांत कर लिया।

सोलहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में मेवाड़ के राजकुल की दासी पन्ना दाई ने निःस्वार्थ राजभक्ति और आत्मबलिदान का जो उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत किया, उसका महत्त्व वीरांग-नाओं के बलिदान से कम नहीं है। राणा सांगा के देहांत के बाद उसके बेटे रतनसिंह और विक्रमजीत क्रमशः गद्दी पर बैठे। उन्हींके वंशज बनवीर ने विक्रमजीत की हत्या कर दी और फिर वह महाराणा के सबसे छोटे बेटे उदयसिंह की, जो अभी शिशु ही था, हत्या करने को तैयार हो गया। उदयसिंह की धाय पन्ना को यह खबर एक नाई ने दी तो उसने उदयसिंह को पत्तों से ढंकी फलों की टोकरी में डालकर उसी नाई के हाथ महल से बाहर भिजवा दिया और

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पालने में उसकी जगह अपने बेटे को लिटा दिया। रक्त-पिपासु बनवीर ने आकर जब पन्ना से पूछा कि उदय कहां है, तो उसने पालने की ओर इशारा किया। बनवीर ने बच्चे की हत्या कर दी। तब पन्ना केवल आंसुओं से बेटे की अन्त्येष्टि करके, उदय को लेने के लिए तुरन्त वहां पहुंची जहां नाई उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। तदनंतर वह उदय की रक्षण-व्यवस्था करने के लिए जगह-जगह घूमती फिरी। आखिर कुंभलमेर के जैन व्यापारी आसासाह ने बच्चे को अपने संरक्षण में लेना स्वीकार कर लिया। बड़ा होकर उदयसिंह मेवाड़ की गद्दी पर बैठा।

शासिकाएं

भारतीय नारी ने विदेशियों के आक्रमणों का सामना करने में ही वीरता और आत्म-बलिदान का परिचय नहीं दिया प्रत्युत शासन-कार्य में पतियों का हाथ बंटाने, बेटों की अल्प-वयस्कता में शासन संभालने तथा उत्तराधिकार में मिले राज्य पर शासन करने में भी योग्यता का प्रमाण दिया।

शासन करने वाली रानियों के पहले और अधिकतर उदाहरण हमें दक्षिण भारत में मिलते हैं। आठवीं शताब्दी में प्रतापी राष्ट्रकूट नरेश महाराज ध्रुव की रानी शीला महादेवी उनके विशाल राज्य की संयुक्त शासिका थी। उसे पति की अनुमति लिये बिना ही बड़े-बड़े अग्रहार दान देने का अधिकार था। एक दानपत्र में उसे परमेश्वरी और परम-भट्टारिका बताया गया है जिससे अनुमान होता है कि शासन के विषय में उसका अधिकार पति के समान ही था।

ग्यारहवीं शताब्दी में चालुक्य वंशी राजकुमारी अक्कादेवी ने चालुक्य-साम्राज्य के अंतर्गत कई प्रदेशों पर अपने विवाह से पूर्व स्वतंत्र रूप से तथा विवाह के बाद अपने पति कदंब-वंशी मयूव वर्मा के साथ संयुक्त रूप से शासन किया—कुल मिलाकर लगभग पचास वर्ष तक। अक्कादेवी कुशल शासिका, विद्रोहियों का दमन करने वाली तथा युद्ध में चंडी के समान थी।

तेरहवीं शताब्दी में तेलुगु भाषी प्रदेश में नाकतीय वंशी महाराज गणपतिदेव की पुत्री उनके देहांत के बाद गद्दी पर बैठी और उसने तीस वर्ष से अधिक काल तक कुशलतापूर्वक शासन किया। उसने राज्य के भीतर सामंतों के विद्रोह का ही अंत नहीं किया प्रत्युत यादव-वंशी महाराज देवगिरि के आक्रमण का मुकाबला करके उसे परास्त भी किया। रुद्राम्बा ने लोक-कल्याण के लिए कुएं, बावड़ियां और तालाब खुदवाये, उद्योग-व्यापार की उन्नति के लिए अनेक सुविधाएं दीं और धार्मिक संस्थानों को भूमि तथा ब्राह्मणों को अग्रहार दान दिये।

रुद्राम्बा की छोटी बहन गणपाम्बा ने कोट-वंशी शासन बेत से विवाह किया जिसकी राजधानी कृष्णा के किनारे घरणीकोठ नामक नगर था। बेत जब युद्ध में मारा गया तो रुद्राम्बा गद्दी पर बैठी और उसने बड़ी योग्यता से चालीस वर्ष तक शासन किया। उसके राज्य में प्रजा स्मृद्ध और सुखी थी। गणपाम्बा ने पिता और पति की स्मृति में दो शिव-मंदिरों का निर्माण करवाया।

सत्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में कन्नड़-भाषी प्रदेश केलदि के शासक नायक-वंशी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सोमेश्वर की पत्नी चेतम्माजि उसके साथ संयुक्त रूप से शासन करती थी। १६७७ में सोमेश्वर की मृत्यु के उपरांत चेनम्माजि ने स्वतंत्र रूप से २५ वर्ष तक बड़ी कुशलता से शासन किया। उसने शिवाजी के पुत्र राजाराम को आश्रय देने का भी साहस किया जबकि औरंगज़ेब की सेना उसका पीछा कर रही थी। राजाराम को पकड़ने के लिए जब मुगल सेना केलदि राज्य में घुसी तो चेनम्माजि ने उसे बुरी तरह पछाड़ दिया। उसकी वीरता से औरंगज़ेब इतना प्रभावित हुआ कि उसने उसे बहुमूल्य उपहार भेजे। एक और अवसर पर चेनम्माजि ने मैसूर की सेना को परास्त किया और सेनापति दलवाय तिम्मप्पा के पुत्र को बंदी बना लिया।

ऐसी ही वीर शासिका मलयालम् भाषी इलाके आत्तिंगल की रानी उमयम्मा थी। १६७५ के लगभग त्रावणकोर राज्य के कुछ विद्रोही सामंतों ने मिलकर वहां के शासक महाराज आदित्य वर्मा की हत्या कर दी और उनकी निकट संबंधी और उत्तराधिकारिणी उमयम्मा के छः में से पाँच पुत्रों को भी धोखे से मरवा दिया। उमयम्मा अपने एक पुत्र को लेकर पुत्तनकोट्ट से भागकर नेडुमंगल चली गई। उसके जाने के बाद राज्य में अशांति और उथल-पुथल मच गई। इस दुस्था को देखकर एक मुगल सरदार ने त्रावणकोर पर चढ़ाई कर दी और सामंतों को भगाकर दक्षिण त्रावणकोर के कुछ भाग पर कब्जा कर लिया। तब उमयम्मा को अपना कर्तव्य सूझा और उसने कोटायम के केरल वर्मा से सहायता लेकर मुगल सरदार से युद्ध किया और उसे मौत के घाट उतार दिया। उसकी इस सफलता को देखकर विद्रोही सामंतों ने भी उसकी अधीनता स्वीकार कर ली। उमयम्मा ने १६७८ से लेकर १६८४ तक बड़ी कुशलता से शासन किया।

मराठा-सम्राट् शिवाजी की माता जीजाबाई (१५९४-१६७४) किसी बड़े प्रदेश की शासिका न होने पर भी स्वातंत्र्य-प्रेम, चारित्रिक दृढ़ता, न्यायप्रियता, वीरता और साहस के कारण इतिहास में विशेष स्थान रखती है। अपने बेटे में ऐसे ही गुण भरने और उसे महाराष्ट्र को स्वतंत्र कराने की प्रेरणा देने का श्रेय जीजाबाई को है, न कि उसके पति शाहजी को। जीजाबाई ने, जिसे कि पति की पूना जागीर का प्रबंध करने का अनुभव था, बालक जीवाजी को युद्ध-कला सिखाने के अतिरिक्त शासन-विद्या की भी शिक्षा दी जिससे शिवाजी को आगे चलकर मराठा साम्राज्य स्थापित करने में बड़ी सहायता मिली।

शिवाजी की पुत्रवधू ताराबाई (१६७५-१७६१) अपने पति राजाराम से भी अधिक साहसी और महत्त्वाकांक्षिणी थी। पति की मृत्यु के बाद उसने दुर्गों के निरीक्षण और सेना के संगठन तथा संचालन का काम पूरी तरह अपने हाथ में ले लिया और मुगल-सेनाओं को आगे बढ़ने से ही नहीं रोका प्रत्युत उन्हें दक्कन में टिकने ही नहीं दिया। यह ताराबाई की ही प्रशासन-कुशलता और सामरिक प्रतिभा का परिणाम था कि राजाराम की मृत्यु के बाद सात वर्ष तक औरंगज़ेब दक्कन में अपना आधिपत्य नहीं स्थापित कर सका।

इंदौर की अहल्याबाई (१७३५-९५) मराठा इतिहास में ताराबाई के समान ही महत्त्व रखती है। १७५४ में उसके पति की मृत्यु हो जाने पर उसके ससुर मल्हार राव ने उसे सती होने से रोक दिया और उसे राजस्व एकत्र करने, सेना का प्रबंध करने तथा शासकीय पत्र-व्यवहार करने के काम में लगा दिया। इन कामों का अनुभव आगे चलकर उसके बहुत काम आया। मल्हार राव की मृत्यु के बाद अहल्याबाई के पुत्र मालेराव को सूबेदार बनाया गया

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

परंतु शासन-व्यवस्था वस्तुतः अहल्यावाई के हाथ में रही। उसके शासन-काल के आरंभ में जबकि उसका सेनापति उत्तर भारत में गया हुआ था, चन्द्रावत राजपूतों ने विद्रोह कर दिया। अहल्यावाई ने सेनापति के लौटने की प्रतीक्षा किये विना स्वयं सेना को संगठित करके उसका नेतृत्व करते हुए विद्रोहियों का दमन किया। इसी प्रकार उसने सतपुड़ा के विद्रोही भीलों के सरदार को पकड़कर उसे मृत्यु-दंड दिया। तदनंतर उसके राज्य में शान्ति रही। तत्कालीन पेशवा के चचा राघोवा ने मालेराव की मृत्यु के बाद जब इंदौर पर आक्रमण करने का विचार किया तो अहल्यावाई ने स्त्रियों की सेना संगठित करके राघोवा को संदेश भेजा—"लगता है तुम युद्ध-भूमि में मेरा सामना करने की सोच रहे हो। मैं तैयार हूं। एक नारी को हराने से तुम्हारा गौरव नहीं वढ़ेगा। पर सोच लो कि यदि तुम हार गये, तो क्या परिणाम होगा?" यह संदेश पाकर राघोवा ने आक्रमण का विचार छोड़ दिया।

कश्मीर के इतिहास में रानी दिद्दा (दसवीं शताब्दी) ने नीति-कुशलता का जो परिचय दिया वह कम आश्चर्यजनक नहीं है। अपने पति महाराज क्षेमगुप्त के राजत्वकाल में समस्त शासन-व्यवस्था वस्तुतः दिद्दा के हाथ में ही थी। ९५८ में पति का स्वर्गवास होने पर अपने पुत्र अभिमन्यु के राज्यारोहण के वाद भी दिद्दा ही शासन करती रही। उसने साम, दाम, दंड आदि उपायों का कुशल प्रयोग करते हुए फलगुन आदि मंत्रियों को पदच्युत किया, पाटल आदि विद्रोही सामंतों का दमन किया। निर्वासित सेनापति यशोधर के समर्थकों को धन देकर अपनी ओर कर लिया और सत्ता हथियाने का प्रयत्न करने वालों को प्राणदंड दिया। इसमें संदेह नहीं कि दिद्दा के चरित्र में कई त्रुटियां भी थीं जिनमें सवसे भयंकर थी उसकी राज्य-लोलुपता। उसने अपने पोतों को अभिचार-क्रिया के प्रयोग द्वारा मरवा दिया और तत्पश्चात् ३० वर्ष तक और शासन किया।

अणहिल्लवाड पाटण (उत्तर-गुजरात) के चालुक्यवंशी महाराज सिद्धराज जयसिंह (१०९४-११४३) की माता मयणल्ला (मीनलदेवी) न्यायप्रिय शासिका होने के अतिरिक्त अत्यंत साधु स्वभाव और सात्त्विक वृत्ति की स्त्री थी। कहते हैं कि एक बार सिद्धराज के सभा-पतित्व में श्वेताम्बर और दिगम्बर संप्रदायों के नेताओं में इस विषय पर वाद-विवाद हुआ कि क्या स्त्री मोक्ष की अधिकारिणी है। श्वेताम्वर संप्रदाय के नेता ने कहा कि जिन स्त्रियों में सत्त्व गुण प्रधान होता है वे मोक्ष प्राप्त कर सकती हैं। इसके समर्थन में उसने सीता का उदाहरण दिया। जब उसे समकालीन नारियों का उदाहरण देने के लिए कहा गया तो उसने औरों के अतिरिक्त राजमाता मयणल्ला का नाम लिया। मयणल्ला कुशल शासिका भी थी। उसने सिद्धराज की अल्पवयस्कता में मंत्रियों की सहायता से शासन-कार्य किया था और उसे न्यायप्रिय शासक तथा वीर-विजेता बनने की शिक्षा भी दी।

शासिकाओं का प्रसंग समाप्त करने से पहले पूर्वी और उत्तरपूर्वी भारत की कुछ रानियों का उल्लेख करना आवश्यक है। उड़ीसा में, जहां नारियां राज्य की उत्तराधिकारी होती थीं, ९वीं और ११वीं शताब्दी के वीच भौमकर वंश की छः रानियों ने शासन किया। महाराज ललितहार की पत्नी रानो त्रिभुवन महादेवी-प्रथम ने अपने पुत्र महाराज शुभाकर-तृतीय का स्वर्गवास होने के वाद अपने पोते की अल्पवयस्कता में कुछ वर्षों तक शासन किया। महाराज

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शुभाकर-चतुर्थ की रानी पृथ्वी महादेवी अपने देवर महाराज शिवाकर-तृतीय के निधन के बाद गद्दी पर बैठी और तब से उसका नाम रानी त्रिभुवन महादेवी-द्वितीय हो गया। महाराज शुभाकर पंचम की मृत्यु के पश्चात् उनकी विधवा रानी गौरी महादेवी के बाद उसकी पुत्री दण्डी महादेवी गद्दी पर बैठी। दण्डी महादेवी के वाद उसकी विमाता बकुल महादेवी ने राज्य किया और उसके जेठ शांतिकर-तृतीय की पत्नी धर्म महादेवी ने। इन रानियों के शासन-इतिहास के विषय में अभी विस्तृत जानकारी उपलब्ध नहीं है।

अठारहवीं शताब्दी के अंतिम दशक में असम के कछार-प्रदेश के राजा ताम्रध्वज की रानी चन्द्रप्रभा ने अपने पति के राजत्व-काल में और पति के मरणोपरांत अपने पुत्र शूरदर्प की अल्पवयस्कता के दौरान शासन-कार्य बड़ी कुशलता से निभाया। वह विद्वानों और कवियों की आश्रयदाता थी। उसने अपने राज्य में संस्कृत के प्रचार को प्रोत्साहन दिया। उसके कहने से भुवनेश्वर वाचस्पति ने नारदीय पुराण के आधार पर बंगला में नारदी-रसामृत नामक काव्य-ग्रंथ की रचना की।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ब्रिटिश काल में नारी की स्थिति

सत्येन्द्र त्रिपाठी

अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में ब्रिटिश शासन की स्थापना के साथ भारत के इतिहास ने नया मोड़ लिया। अंग्रेजी शिक्षा के प्रचार के परिणामस्वरूप देश में पाश्चात्य का प्रवेश होने लगा और उसके प्रभाव से देश की अनेक प्रथाएं टूटने लगीं। उन्नीसवीं शताब्दी में राजा राममोहन राय और स्वामी दयानन्द आदि सुधारवादी नेताओं के प्रयत्नों से अनेक अन्धविश्वासों और रूढ़ियों तथा सामाजिक कुरीतियों का अंत हुआ जिससे नारी की स्थिति में काफी परिवर्तन आये। तदनंतर बीसवीं शताब्दी में गांधीजी जैसे राष्ट्रीय नेताओं की प्रेरणा से नारी ने राजनीतिक क्षेत्र में पांव रखा और देश को स्वतंत्र कराने में पुरुष के साथ कंधे से कंधा मिलाकर संघर्ष किया।

शिक्षा

ब्रिटिश शासन की स्थापना से देश का अनेक दृष्टियों से अहित हुआ, किन्तु इसमें संदेह नहीं कि पाश्चात्य विज्ञान, दर्शन और साहित्य के संपर्क से कुछ अंधविश्वासों और रूढ़ियों का उन्मूलन करने में सहायता मिली और नारी की सदियों से कुंठित-सी स्थिति में सुधार होना शुरू हुआ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अंग्रेजों के आने से पहले भारत में नारी-शिक्षा की कोई सरकारी अथवा सार्वजनिक व्यवस्था नहीं थी। इने-गिने कुलीन परिवारों की लड़कियां घर पर ही थोड़ी-बहुत शिक्षा ग्रहण कर पाती थीं। मुस्लिम काल में देश में पुराने ढंग की जो संस्कृत-पाठशालाएं और अरबी-फारसी के मकतब-मदरसे थे उनमें लड़कों को ही शिक्षा दी जाती थी। लड़कियों को पाठशालाओं में भेजने का किसीको ख्याल तक नहीं आता था। अधिकांश हिन्दू-परिवार और विशेषतः स्त्रियाँ ऐसा मानती थीं कि पढ़ी-लिखी लड़की दीर्घकाल तक सौभाग्यवती नहीं रह पाती, वह आगे-पीछे विधवा हो जाती है।

उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध से बंगाल में राजा राममोहन राय तथा ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने और पंजाब तथा उत्तर प्रदेश में स्वामी दयानन्द ने इन अंधविश्वासों का प्रत्याख्यान किया और नारी-शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया। ये समाज-सुधारक अच्छी तरह समझते थे कि शिक्षा के बिना नारी की स्थिति में सुधार नहीं हो सकता। स्वामी दयानन्द वैदिक शिक्षा-पद्धति के पक्षपाती थे। उन्होंने वेदों के प्रमाण देकर इस अंधविश्वास का खंडन किया कि स्त्री और शूद्र विद्या के अधिकारी नहीं हैं और कहा कि सब मनुष्यों को वेदादि शास्त्र पढ़ने-सुनने का समान अधिकार है।[1] स्वामी दयानन्द के आने से पहले राजा राममोहन राय ने भी हिन्दू-शास्त्रों का बंगला अनुवाद छपाकर प्रमाणित किया कि नारी-शिक्षा शास्त्रसम्मत है और प्राचीन काल में भारत की नारियां विदुषी हुआ करती थीं। राजासाहब अंग्रेजी शिक्षा के भी समर्थक थे। सरकार अंग्रेजी शिक्षा का प्रचार करने में हिचकिचा रही थी, किन्तु राजा राममोहन राय और उनसे प्रेरणा पाकर जब अन्य अनेक प्रतिष्ठित समाज सेवियों तथा विद्वानों ने उसकी आवश्यकता पर बल दिया तो अंग्रेजों ने शासन-व्यवस्था को दृढ़ करने के साथ-साथ शिक्षा की ओर ध्यान दिया। उन्होंने पहले-पहल तो संस्कृत, अरबी आदि प्राच्य विद्याओं के अध्ययन को ही प्रोत्साहन दिया। १७८१ में 'कलकत्ता-मद्रास' और १७९२ में बनारस में संस्कृत कालेज की स्थापना हुई थी। परन्तु १८२३ में जब कलकत्ता में संस्कृत कालेज खोला जाने लगा तो राजा राममोहन राय ने गवर्नर जनरल को लिखा कि संस्कृत कालेज में तो विद्यार्थियों को वही ज्ञान मिल सकेगा जो उन्हें दो हजार वर्ष पहले उपलब्ध था। आज तो विज्ञान, गणित और अर्थशास्त्र आदि की शिक्षा देने की आवश्यकता है। राजा साहब इससे पहले बंगाल और मद्रास में ईसाई मिशनरियों द्वारा खोले गये अंग्रेजी स्कूलों की प्रगति देख चुके थे, और उन्होंने स्वयं भी कई अंग्रेजी स्कूल खुलवाये थे। उन्हींके प्रभाव में ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने नारी-शिक्षा के प्रचार के लिए वर्षों तक काम किया। फलस्वरूप उनके प्रयत्न से कलकत्ता में पहला महिला कालेज—बैथ्यून कालेज—स्थापित हुआ। श्री बैथ्यून, जिनके नाम पर कालेज खोला गया, गवर्नर जनरल की कार्यकारी

१. यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्य :
ब्रह्म राजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय ॥ (यजुर्वेद २६,२)

इसकी व्याख्या करते हुए स्वामी दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश (तृतीय समुल्लास) में लिखा :—

ईश्वर स्वयं कहता है कि हमने ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और अपने स्त्रियादि और अतिशूद्रादि के लिए भी वेदों का प्रकाश किया है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

परिषद् के सदस्य और शिक्षा-परिषद् के (१८४८-१८५१) प्रधान थे। उन्होंने लड़कियों के लिए कई स्कूल भी खुलवाये।

इस प्रकार भारतीय समाज-सुधारकों और अंग्रेज अधिकारियों के प्रयत्नों से नारी-शिक्षा और अंग्रेजी शिक्षा का विरोध कम हुआ और नये ढंग की प्राइमरी, हाईस्कूल और कालेज की पढ़ाई लड़कियों के लिए उपयोगी समझी जाने लगी।[1] १८५७ में कलकत्ता विश्वविद्यालय की स्थापना हुई और २० वर्षों के भीतर बम्बई, मद्रास और इलाहाबाद में भी विश्वविद्यालय स्थापित हो गये। १८८२ में पहली बार लड़कियां ग्रेजुएट हुईं। तब से नारी-शिक्षा की उत्तरोत्तर प्रगति होने लगी। बीसवीं शताब्दी में पटना, लखनऊ, अलीगढ़, बनारस, आगरा, दिल्ली, नागपुर, ढाका, हैदराबाद, मैसूर आदि अनेक स्थानों में विश्वविद्यालयों की स्थापना हुई। सभी में लड़कियों की शिक्षा की व्यवस्था की गई। सरकार के अतिरिक्त ब्राह्मसमाज, आर्यसमाज सर्वेन्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी तथा अन्य लोकसेवक संगठनों के प्रयत्नों से लड़कियों के लिए स्कूल और कालेज खोले गये। १९१६ में प्रो० घोंडो केशव कर्वे ने पूना में महिलाओं के लिए इण्डियन विमन्स यूनीवर्सिटी की स्थापना की।[2] १९१७ में बम्बई में एस०एन०डी०टी० विमन्स यूनीवर्सिटी स्थापित हुई।

शिक्षाप्राप्त महिलाओं को अध्यापन, डाक्टरी आदि कई क्षेत्रों में जीविका भी मिलने लगी। इससे उनकी आर्थिक और सामाजिक स्थिति में परिवर्तन हुआ। अनेक विदुषियों ने भारतीय भाषाओं और कुछ एक ने अंग्रेजी में भी साहित्य-सृजन किया। इन विदुषियों की चर्चा इसी लेख में आगे चलकर की जायगी।

सती-प्रथा का अन्त

सती-प्रथा, जिसके विषय में ऋग्वेद में निषेध किया गया था और जो रामायण-महाभारत काल में विधवा की इच्छा पर निर्भर थी, किन्तु स्मृतियों ने जिसे विधवा का कर्तव्य एवं स्वर्ग-प्राप्ति का साधन बता दिया था, कई घरानों में अनिवार्य नियम ही बन गई थी। आलोच्य काल में कई प्रदेशों में, विशेषतः बंगाल में, इस प्रथा ने भयंकर रूप धारण कर लिया था। विधवा से सती होने के लिए अनुरोध ही नहीं किया जाता था प्रत्युत उसे बाध्य किया जाता था। कई बार उसे अफीम आदि मादक द्रव्यों से जोश दिलाकर सती होने के लिए तैयार किया जाता और कई बार उसे पकड़कर पति की चिता पर बिठा दिया जाता था और प्रबंध कर लिया जाता था कि वह भाग न पाये। सोलहवीं शताब्दी में अकबर ने इस क्रूर प्रथा को रोकने का प्रयत्न किया था परंतु उसे सफलता नहीं मिली। ब्रिटिश शासन के आरंभ से ही अंग्रेज अधिकारियों और मिशनरियों ने इस प्रथा का अंत करने के लिए सरकार से अनुरोध किया। ब्रिटेन में भी इसके

१. चूंकि १८३५ में थामस बैबिंगटन मैकाले की नीति के अनुसार भारत में अंग्रेजी शिक्षा का उद्देश्य सरकारी दफ्तरों के लिए क्लर्क तैयार करना घोषित किया गया था, इसलिए कई क्षेत्रों में लड़कियों के लिए ऐसी शिक्षा को बहुत समय तक अनुपयोगी समझा जाता रहा।

२. १९३६ में स्थानान्तरित होकर बम्बई में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विरुद्ध आन्दोलन हुआ। परन्तु ब्रिटिश सरकार धार्मिक मामलों में दख़ल देकर भारतीय जनता में असंतोष फैलाने से डरती थी। १७८९ में जब शाहाबाद के कलक्टर ने लार्ड कार्नवालिस को लिखा कि आपकी स्पष्ट अनुमति के बिना मैं अपने इलाके में सती की अमानुषिक घटनाएं नहीं होने दे सकता तो इस बात का समर्थन करते हुए उसे यही उत्तर मिला कि वह इस विषय में केवल समझाने-बुझाने और अनुरोध करने के उपाय से काम ले और प्रथा को रोकने के लिए सरकारी दबाव न डाले। आगे चलकर सरकार ने १८१२,१८१५ और १८१७ में इस विषय में नियम बनाकर ऐसी विधवाओं के सती होने पर प्रतिबंध लगा दिया जिनकी उम्र बहुत छोटी हो, जो गर्भवती हों या जिनके बच्चे बहुत छोटे हों। किसी विधवा को सती होने के लिए बाध्य करना या उसे मादक द्रव्य खिलाकर सती होने के लिए राजी करना भी अपराध ठहरा दिया गया। इस प्रकार के नियमों या प्रतिबंधों का कोई बड़ा परिणाम नहीं हुआ। कहते हैं कि कलकत्ता के आस-पास के जिलों में ही प्रतिवर्ष लगभग पांच सौ विधवाएं सती होती थीं। जनता में रूढ़ अंधविश्वास के कारण सरकार सती-प्रथा को सख्ती से दबाने में हिचकिचाती थी। इस अंधविश्वास को दूर करने के लिए राजा राममोहन राय ने कई पुस्तिकाएं लिखीं और प्रचार किया। आखिर उनके अनथक प्रयत्नों के फलस्वरूप जनता में धीरे-धीरे जागृति आने लगी। जब रूढ़िवादी हिन्दुओं ने १८१७ के सती-निषेध नियमों के विरुद्ध अपील की और उनके रद्द किये जाने की मांग की तो राजा साहब और उनके सहकारियों ने उक्त अपील के विरुद्ध दरखास्त दायर की। उन्होंने कहा कि शास्त्रों के अनुसार यह प्रथा तो एक प्रकार की हत्या है। राजा राधाकान्तदेव तथा अन्य कट्टरपंथियों ने राजा राममोहन राय का कड़ा विरोध किया। इसी समय (१८२८) लार्ड विलियम बैंटिक गवर्नर जनरल नियुक्त होकर भारत आये। उन्होंने सती-प्रथा के विषय में पक्ष-विपक्ष पर विस्तृत विचार करके उसका अंत करने का निश्चय किया। उन्होंने ४ दिसम्बर, १८२९ में सती-प्रथा को कानून-विरुद्ध एवं दंडनीय अपराध घोषित कर दिया। इसके अधीन सती होने के लिए अनुरोध अथवा बाध्य करने वाले लोग ही नहीं प्रत्युत विधवा के स्वेच्छा से सती होने की घटना से भी किसी प्रकार का संबंध रखने वाले व्यक्ति अपराधी ठहराये गये।

कानून के पास होने पर कट्टरपंथियों ने फिर उसका विरोध किया। बहुत से लोगों के हस्ताक्षर के साथ एक विरोध-पत्र गवर्नर जनरल को भेजा गया और लंदन में ब्रिटिश सरकार के पास अपील भी भेजी गई। दूसरी ओर राजा राममोहन राय ने कलकत्ता के ३०० लोगों के हस्ताक्षर कराकर गवर्नर जनरल को बधाई का तार भेजा। राजा साहब इंग्लैंड भी गये ताकि प्रिवी कौंसिल रूढ़िवादियों की अपील मानकर नये कानून को कहीं रद्द न कर दे। उनके प्रयत्न के फलस्वरूप प्रिवी कौंसिल ने सती-निषेध कानून को वैध घोषित कर दिया। इस प्रकार इस अमानुषिक प्रथा का अंत हुआ। बाद में लार्ड हार्डिंग-प्रथम ने देसी रियासतों में सती-प्रथा को अंत करने का प्रयत्न किया और उन्हें सफलता मिली।

विधवा-विवाह

सती-प्रथा का निषेध कर दिये जाने के बाद समाज-सुधारकों का ध्यान विधवा-विवाह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

की आवश्यकता की ओर गया। इसके संबंध में आंदोलन करने वालों में ईश्वरचन्द्र विद्यासागर का नाम सर्वोपरि है। उनके अनथक प्रयत्न के फलस्वरूप सरकार ने १८५६ में विधवा-पुनर्विवाह कानून पास किया जिसके अधीन विधवाओं का विवाह विधि-सम्मत घोषित किया गया और ऐसे विवाह से होने वाली संतान को औरस संतान माना गया। १८६१ में न्यायमूर्ति महादेव गोविन्द रानाडे ने विधवा-विवाह-सभा स्थापित की। ब्राह्मसमाज के नेता केशवचन्द्रसेन के प्रयत्न के फलस्वरूप सरकार ने १८७२ में एक कानून पास किया जिसके द्वारा कन्याओं के छोटी उम्र में विवाह का निषेध किया गया तथा विधवा-विवाह को वैध घोषित किया गया। फिर भी हिन्दू समाज में विधवा-विवाह के विषय में बहुत अरुचि और विरोध की भावना थी जिसे दूर करने के लिए १८६७ से १८८७ के बीच संस्थापित प्रार्थना समाज, आर्यसमाज और ब्राह्मसमाज आदि अनेक संगठनों ने विधवा-विवाह के पक्ष में प्रचार किया।

बाल-विवाह

हम देख चुके हैं कि कन्याओं के विवाह की आयु, जो कि वैदिक काल में १६-१७ वर्ष थी, घटते-घटते मुस्लिम काल में ७-८ वर्ष रह गई थी। कइयों का विवाह इससे भी छोटी उम्र में हो जाता था। पति की अकाल-मृत्यु से बचपन में ही विधवा होने पर जो सती नहीं होती थीं, उन्हें निरंतर वैधव्य-जीवन ही बिताना पड़ता था। इसलिए बाल-विवाह का अंत, समाज-सुधार का आवश्यक अंग माना गया। इस दिशा में पहले-पहल ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने आंदोलन किया। तदनंतर बड़ौदा, इंदौर, मैसूर आदि देसी रियासतों ने, जिनके शासक सुशिक्षित और प्रगतिवादी थे, अपने-अपने इलाकों में बाल-विवाह बंद करने के लिए कानून बनाये। बड़ौदा के गायकवाड ने १९०१ में बाल-विवाह निरोध कानून पास किया जिसके अधीन १२ वर्ष से छोटी कन्या और १६ वर्ष से छोटे लड़के का विवाह अवैध ठहरा दिया गया। अन्य प्रदेशों में सुधारवादी संगठनों ने विवाह की उम्र बढ़ाने के पक्ष में आंदोलन और प्रचार जारी रखा। १९२८ में शिमला में 'सम्मति-वय समिति' की बैठक हुई। उसकी रिपोर्ट प्रकाशित होने पर राय साहब हरबिलास सारदा ने केन्द्रीय विधान सभा में बाल-विवाह-निषेध विधेयक पेश किया। १९३० में यह हो गया कि इसके अधीन विवाह के लिए कन्याओं की न्यूनतम आयु १४ वर्ष और लड़कों की न्यूनतम आयु १८ वर्ष स्थिर की गई। बाद में एक संशोधन के द्वारा कन्याओं की न्यूनतम आयु बढ़ाकर १५ वर्ष कर दी गई। रूढ़िवादी लोगों ने कानून का विरोध किया। उल्लंघन तो इसका विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में आज तक होता है किन्तु शिक्षा के प्रसार और औद्योगीकरण के परिणामस्वरूप स्थिति में पर्याप्त सुधार हुआ है और अब शहरी क्षेत्रों में तो अधिकांश लड़कियों का विवाह १७ वर्ष की आयु में या उसके बाद होता है।

स्वतंत्रता-संग्राम

१८५७ के प्रथम स्वातंत्र्य-संग्राम में अनेक महान पुरुष-वीरों के बीच रानी झांसी का सेनापतित्व अपनी अलग महत्ता रखता है। इसी प्रकार वर्तमान शताब्दी में गांधीजी के नेतृत्व में १९१९, १९२१ और १९३०-३२ के असहयोग और सविनय अवज्ञा आंदोलनों तथा १९४२

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के देशव्यापी स्वातंत्र्य-संघर्ष में नारियों का सहयोग और वलिदान भी यह वताता है कि शारीरिक कष्टों को झेल सकने में नारियां पुरुषों से कम नहीं ठहरतीं।

१८५७ के स्वातंत्र्य-युद्ध के सेनानियों में सबसे अधिक वीर, साहसी, और रण-कुशला झांसी की स्वाभिमानिनी रानी लक्ष्मीबाई (१८३५-१८५८) ही थी। १८५३ में उनके पति सूबेदार गंगाधर राव की अकाल मृत्यु हो जाने पर जब गवर्नर जनरल लार्ड डलहौज़ी ने झांसी राज्य को ब्रिटिश भारत में मिलाया, रानी के हृदय में तभी से बदला लेने की आग सुलगने लगी थी। इसके लिए उपयुक्त अवसर १८५७ में उपस्थित हुआ। उस वर्ष १० मई को मेरठ में और अगले दिन दिल्ली में भारतीय सैनिकों ने विद्रोह कर दिया जो धीरे-धीरे अधिकांश उत्तर भारत में फैल गया। ५ जून को झांसी में विद्रोह हुआ और ६ जून को झांसी के राज्य में रानी लक्ष्मीबाई के अधिपतित्व की घोषणा कर दी गई। तव से लेकर ४ अप्रैल, १८५८ तक, अर्थात् कोई ग्यारह महीने तक रानी ने झांसी के किले से ब्रिटिश सेना का डटकर मुकावला किया। आखिर स्थिति को प्रतिकूल देखकर रानी ने ब्रिटिश सैनिकों के घेरे को तोड़कर निकल जाने का प्रयत्न किया। निकलकर उसने बुंदेलखंड में जाकर फिर ब्रिटिश सेना का मुकाबला किया। बुंदेलखंड में उसने एक और वीर सेनानी तांतिया टोपे से संपर्क स्थापित किया और दोनों ने मिलकर आसपास के इलाकों से ब्राह्मण, राजपूत और रुहेले तथा अन्य मुसलमान वीरों को एकत्र कर सेना का संगठन किया। रानी स्वयं फौजी वर्दी तथा पगड़ी पहनकर सेना का संचालन करती, लड़ाई में भाग लेती और अपने सैनिकों की भांति खुशी-खुशी सव कष्ट झेलती। वह अपने सैनिकों और सेवकों के प्रति असीम उदारता दिखाती और प्रतिकूल स्थिति में भी कभी न घवराती।

२३ मई, १८५८ को जब अंग्रेजों ने बुंदेलखंड में कालपी पर अधिकार कर लिया तो लक्ष्मीवाई और तांतिया टोपे वहां से भागकर जंगल में छुपकर अवसर की प्रतीक्षा करने लगे। स्थानीय अंग्रेज जनरल ने समझा कि विद्रोह शांत हो गया है और उसने अपने अधीन सेना के विघटन का आदेश दे दिया। इसके कुछ दिन वाद ४ जून, १८५८ को रानी लक्ष्मीवाई और तांतिया टोपे ने अचानक ग्वालियर के किले पर अधिकार करके अंग्रेजों को अचंभे में डाल दिया। ग्वालियर का राजा, जो कि अंग्रेजों का साथ दे रहा था, जान बचाकर भाग गया और उसके सिपाही रानी लक्ष्मीबाई से आ मिले। रानी का पीछा करती हुई अंग्रेज सेना १६ जून को ग्वालियर के किले के निकट मोरार नामक स्थान पर पहुंची जहां उसने बहुत से सैनिक सामान पर अधिकार कर लिया। अगले दिन अंग्रेजों ने फूलबाग के निकट मोरार-ग्वालियर सड़क को पार कर रानी की घुड़सवार सेना पर हल्ला वोल दिया। उस समय रानी के पास कोई चार सौ सैनिक थे और वह स्वयं उनका संचालन कर रही थी। उनके पास तलवारें और भरमार बंदूकें थीं। अंग्रेजों के पास की बंदूकें बहुत अच्छी थीं और उनकी सेना भी वड़ी थी। अंग्रेज सेना गोलियां दागती हुई रानी के पास तक जा पहुंची। रानी के अधिकांश साथी भाग खड़े हुए और कोई पंद्रह सैनिक ही उसके पास रह गये। अंग्रेज घुड़सवारों से घिरी रानी ने तब भी बच निकलने की कोशिश की पर नाले के किनारे पहुंचकर उसका घोड़ा रुक गया। उसके गोली लगी और फिर एक अंग्रेज सैनिक ने उस पर तलवार से वार भी किया। घायल हो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जाने पर भी रानी ने घोड़ा बढ़ाना चाहा पर अगले ही क्षण वह धरती पर गिर पड़ी। इस प्रकार वीरता की अप्रतिम प्रतिभा और स्वतंत्रता की अद्वितीय सेनानी रानी लक्ष्मीवाई ने वहुसंख्यक शत्रुओं के वीच लड़ते-लड़ते २३ वर्ष की आयु में वीरगति पाई।

जलियांवाग का हत्याकांड

१८५७ में स्वातंत्र्य-युद्ध के समय देश में व्यापक राष्ट्रीय चेतना का अभाव था और इसलिए वह युद्ध उत्तर भारत के कुछ भागों में ही हुआ और १८५९ के अप्रैल महीने में समाप्त हो गया। जैसाकि हम पहले कह आये हैं, १८५७ में कलकत्ता में भारत का पहला विश्वविद्यालय स्थापित हुआ था और तदनंतर अन्य स्थानों में भी विश्वविद्यालय खुले। अंग्रेजी शिक्षा के प्रसार के फलस्वरूप देश में प्रजातंत्र की भावना जागृत होने लगी। १८८५ में कांग्रेस की स्थापना के वाद धीरे-धीरे राष्ट्रीय जागृति हुई और पुरुषों की भांति स्त्रियां भी, विशेषत: शिक्षित स्त्रियां, राजनीतिक क्षेत्र में उतर आईं और स्वराज्य-संघर्ष में भाग लेने लगीं।

भारत सरकार ने प्रथम महायुद्ध (१९१४-१८) के दौरान स्वतंत्रता प्रेमियों को दमन करने के लिए जो कड़े नियम वनाये थे, वह उन्हें युद्ध समाप्ति के वाद भी जारी रखना चाहती थी। इस उद्देश्य से जव १९१९ में रोलट एक्ट पास किया गया तो गांधीजी के सुझाव पर देश-भर में सरकार-विरोधी प्रदर्शन और सभाएं हुईं। इन प्रदर्शनों और सभाओं में स्त्रियों ने वड़े जोश के साथ भाग लिया। सरकार ने प्रदर्शनों को दवाने के लिए सख्ती से काम लिया। अमृतसर के जलियांवाला वाग में ऐसी एक सभा को भंग करने के लिए जनरल डायर के आदेश से फौज ने निहत्थे लोगों पर गोलियां चलाईं। उस गिरे हुए स्थान से भागने तक का कोई रास्ता नहीं था, इसलिए सैंकड़ों स्त्री-पुरुष घटनास्थल पर ही मारे गये और एक हजार से अधिक घायल हो गये। तदनंतर पंजाव में मार्शल-ला की घोषणा कर दी गई और कानून भंग करने वालों को कठोर कारावास ही नहीं दिया गया, अनेक लोग फांसी पर चढ़ाये गये और कुछ तो वर्वरता-पूर्ण ढंग से गोली से उड़ा दिये गये।

असहयोग आंदोलन

१९२१ के अहिंसात्मक असहयोग आंदोलन में तो स्त्रियों ने आगे बढ़कर भाग लिया। आंदोलन करने का फैसला गांधीजी के अनुरोध पर कांग्रेस द्वारा सितम्वर, १९२० में पास किये गये एक प्रस्ताव में घोषित किया गया था। नवम्वर, १९२० में प्रान्तों में जो चुनाव हुए उनमें दो-तिहाई मतदाताओं ने भाग नहीं लिया। १९२१ में हजारों विद्यार्थियों ने स्कूल और कालेज छोड़ दिये। वकीलों ने अदालत जाना छोड़ दिया। जगह-जगह विदेशी कपड़े की होली जलाई गई। कोई तीस हजार आंदोलनकारियों को, जिनमें कई हजार महिलाएं भी थीं, जेल में वंद कर दिया गया। इस आंदोलन में स्त्रियां भी खुशी-खुशी जेल गईं। और अनेक माताओं ने अपने पुत्रों, पत्नियों ने अपने पतियों और वहनों ने भाइयों को केसरिया तिलक लगाकर जेल लाने के लिए उत्साहित किया।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दांडी यात्रा और सविनय अवज्ञा आंदोलन

इसके बाद १९३० में सत्याग्रह का अपूर्व दृश्य देखने में आया। अक्टूबर, १९२९ में ब्रिटिश सरकार ने भारत की संवैधानिक प्रगति के विषय में साईमन कमीशन की सिफारिशों पर विचार करने के लिए लंदन में गोलमेज सम्मेलन करने का सुझाव दिया था। कांग्रेस ने दिसम्बर, १९२९ को लाहौर के अधिवेशन में इस सुझाव को अस्वीकार करते हुए पूर्ण स्वतंत्रता की मांग की और सविनय अवज्ञा आंदोलन आरंभ करने का निश्चय किया। इस निश्चय के अनुसार कांग्रेस ने २६ जनवरी, १९३० को स्वतंत्रता-दिवस मनाया और गांधीजी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन के प्रतीक के रूप में नमक कानून भंग करने लिए ६ अप्रैल को दांडी यात्रा शुरू की। यात्रा में नारियों को शामिल करने को लेकर उनके मन में कुछ संकोच था और उन्होंने अपने साथ जो सत्याग्रही लिये थे उनमें स्त्रियां बहुत थोड़ी थीं। परन्तु सत्याग्रह के पहले दिन ही जनता के अदम्य उत्साह के कारण आंदोलन ने इतना विशाल सार्वजनिक रूप धारण कर लिया कि उसमें किसीको शामिल करने या न करने का सवाल ही नहीं रहा। गांवों की हजारों अनपढ़ और अशिक्षित नारियों ने घर की चारदीवारी से बाहर निकलकर स्वाभिमानी स्वातंत्र्य सैनिकों की भांति कदम बढ़ाते हुए समुद्रतट पर मानो आक्रमण ही कर दिया। कानून के विरुद्ध नमक बनाने के उद्देश्य से समुद्र का पानी भरने के लिए घड़े-कलसे आदि तरह-तरह के बरतन उठाकर जाती हुई नारी-सेना के अभियान का यह दृश्य देखते ही बनता था। इससे प्रभावित होकर गांधीजी ने कहा था कि भारत की नारियों ने जो काम कर दिखाया है वह देश के इतिहास में स्वार्णाक्षरों में लिखा जायेगा।

नमक-कानून को भंग करने में शहरों की नारियों ने भी अपूर्व योग दिया। धनी और निर्धन, युवा और वृद्ध सैकड़ों-हजारों स्त्रियां परंपरागत प्रथा की शृंखलाओं को तोड़कर घरों से बाहर आ गईं। निषिद्ध नमक की पुड़िया लेकर वे गली-कूंचों के मोड़ पर खड़ी हो जातीं और आवाज लगातीं—"हमने नमक का कानून तोड़ दिया है। हम स्वतंत्र हो गये हैं। यह लो स्वतंत्रता का नमक। कौन लेगा स्वतंत्रता का नमक ?" हर राहगीर उनके हाथ पर पैसा धरता और नमक की छोटी-सी पुड़िया लेकर गर्व से फूला न समाता।

बाद में वे अमीरों के हाथ नमक बेचने के लिए कपास मंडी, अनाज मंडी, कपड़ा बाजार और सराफा बाजार में भी गईं। वहां 'स्वतंत्र-नमक की पुड़िया' बहुत बड़ी कीमत में नीलाम होने लगी। कहते हैं कि एक बार एक पुड़िया दस हजार रुपये में नीलाम हुई। इस प्रकार अमीर और गरीब, स्त्री और पुरुष, जवान और बूढ़े स्वातंत्र्य-संग्राम में कूद पड़े और इतनी बड़ी संख्या में गिरफ्तार होने के लिए आगे आये कि उन्हे रहने के लिए जेलों में जगह ही न रही।

धरसाना में नमक सत्याग्रह का नेतृत्व श्रीमती सरोजिनी नायडू ने किया। जब वे स्वयंसेविकाओं के दल को लेकर नमक-क्षेत्र की ओर बढ़ रही थीं, तो पुलिस ने उन्हें रोक दिया और स्वयंसेविकाओं पर, जिनमें कई सुकुमार युवतियां भी थीं, भयंकर लाठी-प्रहार किया। फिर भी स्वयंसेविकाओं ने कई बार आगे बढ़ने की कोशिश की। पुलिस ने उन्हें चारों तरफ से घेरकर मुख्य भूमि से अलग-थलग कर दिया। गरमी के दिन थे आर आसमान से अंगारे बरस रहे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

थे। प्यास के मारे जब स्वयंसेविकाओं का गला सूखने लगा तो पुलिस ने उन्हें तरसाने के लिए पानी की गाड़ियां मंगाईं और उन्हें सेविकाओं के समूह के बीच से निकालकर ले गये पर किसी-को एक बूंद पानी नहीं दिया। स्वयंसेविकाओं ने गरमी और प्यास की तेजी को वीरतापूर्वक सहन किया। उन्होंने देखा कि उनकी नेता श्रीमती सरोजिनी नायडू, जो कि सुख-विलास की सामग्री से सुसज्जित भवनों में रहने की अभ्यस्त, भावुक कवयित्री थीं, तपती रेती पर भी बड़े आराम और शान से बैठी हैं और अपनी मधुर-मुस्कान एवं हंसी-मज़ाक से उनका मनो-विनोद कर रही हैं। इससे स्वयंसेविकाओं को नैतिक बल मिला और उनका हौसला बढ़ा। पुलिस जो उनके धैर्य की परीक्षा करना चाहती थी स्वयं धैर्य खो बैठी और रातभर समुद्र-तट पर पहरा देने की अपेक्षा पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार करना ही सुविधाजनक माना। पर गिरफ्तारी से पुलिस का काम आसान नहीं हुआ, क्योंकि अगले दिन और अधिक स्वयंसेविकाएं वहां पहुंचीं और उससे अगले दिन और भी अधिक। इस प्रकार यह सत्याग्रह कई सप्ताहों तक चलता रहा।

दक्षिण भारत में नमक-सत्याग्रह की नेता थीं श्रीरुक्मिणी लक्ष्मीपति। वह मद्रास में गिरफ्तार की जाने वाली पहली महिला थीं। स्त्रियां सूर्योदय से पूर्व घरों से निकल आतीं और गाती हुई गली-कूचों से गुजरती, दूसरों को जगातीं और उन्हें संग्राम में सम्मिलित होने को प्रेरित करतीं। इस प्रकार स्त्रियों के नेतृत्व में बड़े-बड़े जलूस निकलते और जब उन्हें रोका जाता तो वे धरना देकर बैठ जातीं। पुलिस उन्हें तितर-बितर करने के लिए डंडे चलाती। घुड़सवारों को उन्हें कुचलने का आदेश देती और कई बार गोली भी चलाती। परन्तु नारियां टस से मस न होतीं। एक बार तीस हजार नारियों का जुलूस धरना देकर बैठ गया और सारे दिन और सारी रात वहीं बैठा रहा। लाचार होकर पुलिस को भी वहां सड़क के किनारे बैठकर रातभर पहरा देना पड़ा। अगले दिन पौ फटते ही पुलिस-दल हारकर वहां से चलता बना और विजयी जलूस शान से समुद्र-तट की ओर बढ़ा। उन दिनों ऐसी घटनाएं विरल नहीं रहीं थीं।

सत्याग्रह के दौरान रोजमर्रा की कार्यवाहियों के बारे में आदेश जारी करने के लिए जो संग्राम-परिषदें बनीं, कई नारियां उनकी 'डिक्टेटर' थीं। इन डिक्टेटरों में अवन्तिकाबाई गोखले, श्रीमती कामदार, श्रीमती दुर्गाबाई, श्रीमती वेदान्तम् कमलाम्मा, सत्यवती और कृष्णा-बाई पणजीकर के नाम विशेषरूप से उल्लेखनीय हैं।

जंगल-कानून की अवज्ञा

नमक-कानून भंग करने के अतिरिक्त जंगल-कानून की अवज्ञा करने में भी गांव की स्त्रियों ने पुरुषों की तरह उत्साह दिखाया। अंग्रेजों के आने से पहले गांव के आसपास के जंगल गांव वालों की मिल्कियत होती थी और उन्हें ईंधन के लिए लकड़ियां बीनने का अधिकार होता था। अंग्रेजी शासन की स्थापना के साथ ये जंगल सरकार की सुरक्षित सम्पदा बन गये और लोगों का लकड़ी बीनने का अधिकार छिन गया। इस आंदोलन में पुरुष और स्त्रियां कुल्हाड़ियां लेकर जंगल में जाते और लकड़ियां काटने में लग जाते। इस प्रकार कानून भंग

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करने पर पुलिस लोगों का पीटती और गिरफ्तार कर लेती। जंगल-सत्याग्रह में सज़ा पाने वालों में स्त्रियों की बहुत बड़ी संख्या होती थी।

विदेशी वस्त्र का बहिष्कार

दासता के प्रतीक स्वरूप विदेशी वस्त्र का बहिष्कार करने के लिए नारियों ने अद्भुत काम किया। जयश्री रायजी, हंसा मेहता, पेरिन कैप्टन, लीलावती मुंशी मणीबेन पटेल आदि अनेक नारियों ने विदेशी कपड़ों की दुकानों पर धरना देने का नेतृत्व किया। वे दुकानदारों से कहतीं कि "विदेशी कपड़े के एक-एक थान के मंगाये जाने से भारत की दासता का फंदा अधिकाधिक पक्का होता चला जाता है। आप विदेशी वस्त्र के व्यापार को छोड़ खादी की बिक्री करें जिससे गरीब बुनकरों के परिवारों को भरपेट खाना मिले और देश का धन देश में ही रहे।"

व्यापारियों के दिल पर असर न होता देखकर ये साहसी नारियां दुकानों के बाहर खड़ी होकर पिकेटिंग करतीं और हाथ जोड़कर ग्राहकों से कहतीं कि आप विदेशी कपड़ा न खरीदें। उनकी बातों का ग्राहकों पर असर हुआ और विदेशी कपड़े के व्यापार में मंदी आने लगी।

भारत सरकार, जो अपने-आपको लंकाशायर और मैनचैस्टर की कपड़ा-मिलों की संरक्षक समझती थी, घबरा उठी। अतः पिकेटिंग पर प्रतिबंध लगा दिया गया और पिकेटिंग करने वालों को गिरफ्तार किया जाने लगा। परंतु इससे आंदोलन में और तेजी आ गई और सैकड़ों हजारों नारियां पिकेटिंग करने के लिए मैदान में उतर आईं। १९३० के आंदोलन के पहले दस महीनों में १७००० नारियों को जेल की सजा मिली। बाद में जेल में स्थान न रहने पर नारियों को गिरफ्तार करके दूर जंगल में ले जाकर छोड़ दिया जाता। कई नगरों में नारियों पर रबर की नाली से पानी की मोटी धार छोड़ी जाती, कहीं-कहीं उन पर पिसी हुई राई या काली मिर्च फेंकी जाती, और कभी-कभी लाठी भी चलाई जाती। दुकानदार अपनी दुकानों के सामने औरतों पर ऐसा अत्याचार बरदाश्त न कर सके। उन्होंने इससे तो अपनी दुकानें ही बंद कर देना उचित समझा। तब सरकार झुंझला उठी। दुकानें बंद रखना अपराध घोषित कर दिया गया। अब सरकारी आज्ञा का उल्लंघन करने पर दुकानदार भी पिकेटिंग करने वालों की तरह गिरफ्तार होने लगे। संघर्ष बढ़ता ही गया और अंत में विदेशी कपड़े का व्यापार ठप्प हो गया।

इसी प्रकार औरतों ने शराब की दुकानों पर भी पिकेटिंग किया जिससे शराब की बिक्री से होने वाले राजस्व में भारी कमी हो गई।

जेल की यातनाएं

स्त्रियों ने जेल की यातनाएं बड़े धैर्य से झेलीं। इनका अनुमान लगाने के लिए यह समझना जरूरी है कि साधारण मानवोचित सुविधाओं से रहित भारत के जेल उन दिनों भयंकर कष्टगार होते थे जिनके विषय में एक कवि ने कहा था :

'आजाद रहके जिसने अपने दो दिन गुजारे
उसको भला खबर क्या कि यह कैद क्या बला है ?'

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गांवों के जेलखाने तो और अधिक कष्टप्रद होते थे। वहां गिरफ्तार की गई स्त्रियों को तंग, अंधेरी, गंदी और सीलन से भरी कोठरियों में डाल दिया जाता। हवा और रोशनी की आने की ठीक व्यवस्था न होने के कारण वहां का वातावरण बदबू से भरा होता था, छतों में चमगादड़ लटक रहे होते थे और दीवारों पर छिपकलियां और फर्श पर कीड़े-मकोड़े दौड़ रहे होते थे। इन कालकोठरियों में कई औरतों को प्रसव-वेदना भी सहनी पड़ती। ऐसी परिस्थितियों में भी डाक्टरी सहायता का कोई प्रबंध नहीं होता और कैदी औरतें ही जच्चा-बच्चा की देख-भाल करतीं। जेल की सब औरतें इन बच्चों से अपने बच्चों की तरह स्नेह करतीं और गर्व से उन्हें जेल-कुमार, संग्राम-नायक, विजया आदि नामों से पुकारतीं।

१९३० के असहयोग आंदोलन में जेल जाने वाली स्त्रियों में श्रीमती कमलादेवी चट्टोपाध्याय, श्रीमती दुर्गाबाई, श्रीमती कमला नेहरू और श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित के नाम उल्लेखनीय हैं।

सरकारी आंकड़ों के अनुसार एक वर्ष में कम से कम समय में २९ अवसरों पर गोली चलाई गई, जिससे १०३ व्यक्ति मारे गए, ४२० घायल हुए। ६०,००० व्यक्ति गिरफ्तार किये गये। परन्तु सरकार आंदोलन को दबा न सकी। जब कांग्रेस ने १९३० (नवम्बर-दिसम्बर) में होने वाले पहले गोलमेज सम्मेलन का बहिष्कार कर दिया तो सरकार कुछ नरम पड़ी। ५ मार्च, १९३१ को गांधी-इरविन समझौता हुआ और कांग्रेस ने सविनय अवज्ञा आंदोलन को स्थगित करने और दूसरे गोलमेज सम्मेलन में भाग लेने का निश्चय किया। सितम्बर-नवम्बर, १९३१ में हुए इस सम्मेलन में कांग्रेस के प्रतिनिधि केवल गांधीजी थे। साम्प्रदायिक समस्या को सुलझा न सकने के कारण सम्मेलन असफल रहा।

शिखर-सम्मेलन से गांधीजी के लौटने के बाद कांग्रेस ने पहली जनवरी, १९३२ को सविनय अवज्ञा और ब्रिटिश वस्तुओं के बहिष्कार का आंदोलन शुरू किया। इसमें भी स्त्रियों ने बड़े उत्साह के साथ भाग लिया और दमनकारी अध्यादेशों की खुल्लमखुल्ला अवज्ञा की। इस आंदोलन में श्रीमती स्वरूपरानी नेहरू और कस्तूरबा गांधी भी गिरफ्तार हुईं। कांग्रेस के अनुमानों के अनुसार मार्च, १९३३ तक १,२०,००० लोग पकड़े गये। आंदोलन मई, १९३४ तक चलता रहा।

इसके बाद कांग्रेस ने पार्लियामेंट द्वारा १९३५ में पास किये गये विधान-संबंधी कानून के अधीन आम चुनावों में भाग लेने का निश्चय किया। १९३७ के चुनावों के परिणामस्वरूप कांग्रेस ने ११ में से ७ प्रान्तों में मंत्रिमंडल बनाये। परन्तु १९३९ में द्वितीय महायुद्ध शुरू होने पर जब सरकार ने राष्ट्रीय नेताओं की इच्छा के विरुद्ध भारत को युद्ध में खींचा तो कांग्रेसी मंत्रिमंडलों ने इस्तीफा दे दिया। सरकार ने युद्ध में भारत का सहयोग प्राप्त करने के लिए अगस्त, १९४० में वादा किया कि युद्ध की समाप्ति पर एक प्रतिनिधि सभा बुलाई जाएगी जो भारत का संविधान तैयार करेगी। परन्तु इस वादे से असंतुष्ट होकर कांग्रेस ने व्यक्तिगत सत्याग्रह शुरू कर दिया।

८ अगस्त, १९४२ को कांग्रेस ने विराट सामूहिक आंदोलन करने के पक्ष में प्रस्ताव पास किया, जिसे 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव के नाम से याद किया जाता है। अगले दिन प्रातः गांधीजी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तथा देशभर के सभी प्रमुख नेताओं को गिरफ्तार कर लिया। उनकी गिरफ्तारी के साथ ही स्वातंत्र्य-संग्राम का अंतिम दौर शुरू हो गया। इस समय भारत की आत्मा पूरी तरह जागृत हो चुकी थी। देश के हर स्त्री-पुरुष और बच्चे के हृदय में दासता का जुआ उतार फेंकने की उत्कट अभिलाषा थी। चूंकि सभी प्रमुख नेता गिरफ्तार किये जा चुके थे, इसलिए एकदम नये लोगों ने नेतृत्व संभाला। देश के सभी प्रान्तों में लोगों ने जगह-जगह टेलीग्राफ और टेलीफोन के तार काट डाले, रेल की पटरियां उखाड़ दीं। कई रेलवे स्टेशनों और थानों को आग लगा दी। सरकार ने स्वतंत्रता की लहर को दबाने के लिए घोर अत्याचार किये और लोगों पर हवाई हमले भी किये। सरकारी अनुमानों के अनुसार १९४२ के अंत तक ९४० व्यक्ति पुलिस और फौज की गोलियों का शिकार हुए, १६३० घायल हुए और ६०,००० गिरफ्तार कर लिये गये। गिरफ्तार की गई महिलाओं में कस्तूरबा गांधी, सरोजिनी नायडू और विजयलक्ष्मी पंडित भी थीं।

प्रकट आंदोलन के साथ-साथ गुप्त आंदोलन भी चलता रहा। इसमें भी कई नारियों ने भाग लिया। इनमें श्रीमती अरुणा आसफअली, श्रीमती सुचेता कृपलानी और बम्बई की ऊषा मेहता के नाम उल्लेखनीय हैं।

महिला-संस्थाएं

बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में शिक्षित नारियों ने समाज-सेवा तथा राजनीति के क्षेत्र में पदार्पण कर अपनी बहनों को सामाजिक तथा राजनीतिक अधिकार दिलाने के लिए संघर्ष शुरू किया। इस उद्देश्य से महिलाओं के कई अखिलभारतीय संगठन स्थापित हुए। इसमें संदेह नहीं कि आरंभ में पुरुषों के तथा कुछ ब्रिटिश विदुषियों ने जिनमें डॉ० एनीबेसंट, मार्गरेट नोबल (सिस्टर निवेदिता) और मार्गरेट कज़िन्स के नाम उल्लेखनीय हैं—भारतीय नारियों का पथ-प्रदर्शन किया। १९०९ में जस्टिस रानाडे के पथ-प्रदर्शन से उनकी पत्नी श्रीमती रामाबाई ने पूना में 'सेवा-सदन' की स्थापना की। महिलाओं का आधुनिक ढंग का पहला संगठन—विमन्स इंडियन एसोसिएशन—श्रीमती मार्गरेट कज़िन्स ने १९१७ में मद्रास में स्थापित किया। इसके बाद १९२७ में आल इंडिया विमन्स कांफ्रेंस की स्थापना हुई।

राजनीतिक अधिकार

१९१७ में तत्कालीन भारत मंत्री मांटेग्यु भारत के दौरे पर आये। १८ दिसम्बर, १९१७ को श्रीमती सरोजिनी नायडू के नेतृत्व में चौदह महिलाओं का एक शिष्ट मंडल वाइसराय लार्ड चैम्स फ़ोर्ड और श्री मांटेग्यु से मिला। शिष्ट मंडल की मांग थी कि जब भारत में आम चुनावों की व्यवस्था की जाये तो पुरुषों की भांति स्त्रियों को भी मताधिकार दिया जाये और स्थानीय स्वशासन तथा शिक्षा से संबंधित जिन निकायों के सदस्यों की नियुक्ति निर्वाचन द्वारा की जाती हो उन सबके लिए स्त्रियों को चुनाव लड़ने का अधिकार दिया जाये। परन्तु १९१९ के भारत-बिल से संबंधित जिस प्रवर समिति ने मताधिकार के प्रश्न पर विचार किया उसने स्त्रियों के मताधिकार की मांग स्वीकार नहीं की। प्रवर समिति ने कहा कि १९१९ के एक्ट के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अधीन स्थापित होने वाली विधान-परिषदें इस प्रश्न का निर्णय कर सकती हैं। महिलाओं के अनेक संगठनों ने, जिनमें एक विमन्स इंडियन एसोसिएशन, इंडियन विमन्स यूनिवर्सिटी विमन्स होमरूल लीग, महिला सेवा समाज और सेवासदन आदि शामिल थे—प्रवर समिति के फैसले का विरोध किया और प्रयत्न जारी रखने का निश्चय किया।

डॉ० एनी बेसन्ट, मार्गरेट कज़िन्स, डोरा थी जिनराजदास, डॉ० मुथुलक्ष्मी रेड्डी श्रीमती सदाशिव एय्यर, और धनवन्ती रामाराव आदि अनेक महिलाओं के प्रयत्न से मार्च, १६२१ में मद्रास विधान-परिषद् के मतदाताओं की सूचियों में स्त्रियों को भी शामिल करने के पक्ष में प्रस्ताव पास किया। तदनंतर दूसरे प्रान्तों ने भी मद्रास का अनुकरण किया और १६२६ तक सब प्रान्तों की विधान-परिषदों के चुनावों में स्त्रियों को वोट देने का अधिकार मिल गया। अप्रैल, १६२६ में भारत सरकार ने स्त्रियों को विधान-परिषदों की सदस्याएं चुने जाने का अधिकार भी दे दिया।

श्रीमती कमलादेवी चट्टोपाध्याय मद्रास विधान-परिषद् के चुनाव के लिए खड़ी हुईं पर अपने विरोधी उम्मीदवार की अपेक्षा केवल ५०० वोट कम मिलने पर हार गईं। उस पहले चुनाव में इतने कम वोटों से हारना भी महिलाओं की नैतिक विजय माना गया। तदनंतर विमन्स इंडियन एसोसिएशन के अनुरोध पर मद्रास सरकार ने डॉ० मुथुलक्ष्मी रेड्डी को विधान-परिषद् की सदस्या नियुक्त किया। वे पहली महिला थीं जिन्हें भारत की किसी प्रान्तीय विधान परिषद् में बैठने का अवसर मिला।

१६३५ के एक्ट में महिलाओं को आम चुनावों में वोट देने तथा चुनाव लड़ने का अधिकार दे दिया गया। विभिन्न विधान-मंडलों में उनके लिए जगहें इस प्रकार निर्धारित की गईं—फ़ीडरल कौंसिल आफ स्टेट में ब्रिटिश भारत के लिए रखी गई १५६ जगहों में से ६ और फ़ीडरल एसेम्बली की २५० जगहों में से ६। प्रान्तीय विधान-सभाओं में से मद्रास में ८, बम्बई में ६, बंगाल में ५, युक्त प्रान्त में ६, पंजाब में ४, बिहार में ४, मध्यप्रान्त तथा बरार में ३, असम में १, उड़ीसा में २ और सिन्ध में भी २ जगहें निर्धारित हुईं। कुल साढ़े तीन करोड़ लोगों को वोट देने का अधिकार दिया गया जिनमें ६० लाख स्त्रियां थीं।

१६३६ के आम चुनावों में लगभग २८ महिलाएं विधान-सभाओं की सदस्याएं चुनी गईं। उनमें से कई मंत्री और उपसभापति आदि नियुक्त हुईं। सबसे पहली महिला मंत्री श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित थीं। उन्हें युक्त प्रान्त के कांग्रेसी मंत्रिमंडल में स्थानीय स्वशासन तथा स्वास्थ्य विभाग सौंपा गया। मद्रास में श्रीमती रुक्मिणी लक्ष्मीपति और श्रीमती ज्योति वेंकटाचलम् मंत्री नियुक्त हुईं। दो महिलाएं विधान-सभाओं की उपसभापति चुनी गईं—श्रीमती अनुसूया बाई काले मध्यप्रान्त में, और सिंध में श्रीमती मलानी।

कई महिलाएं केन्द्रीय विधान सभा के चुनाव में सफल हुईं। उनमें श्रीमती रेणुका राय, राधाबाई सुब्बारायन और अम्मू स्वामिनाथन् के नाम उल्लेखनीय हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विदुषियां और कवयित्रियां

पंडिता रमाबाई (१८५८-१९२२)

ब्रिटिश काल की विदुषियों और समाज सेविकाओं में सबसे पहले पंडिता रमाबाई का नाम लिया जाना चाहिए। उसके पिता अनन्तशास्त्री डोंगरे संस्कृत के प्रकांड पंडित थे। उन्होंने तत्कालीन हिन्दू प्रथा के विरुद्ध अपनी पत्नी लक्ष्मीबाई को संस्कृत पढ़ाई थी जिससे चिढ़कर समाज ने उनका बहिष्कार कर दिया था। रमाबाई अत्यन्त कुशाग्र बुद्धि की थीं। उन्होंने बचपन में अपनी मां की गोद में बैठकर ही अष्टाध्यायी के सूत्र और भागवत के सहस्रों श्लोक कंठस्थ कर लिये थे। १५-१६ वर्ष की आयु में वह संस्कृत में धाराप्रवाह भाषण करने लग गई थीं। १८७८ में वे कलकत्ता गईं जहाँ उन्होंने हिन्दुओं के अंधविश्वासों की तीव्र आलोचना की। उनके अगाध शास्त्र-ज्ञान और संस्कृत में वक्तृत्व की धाराप्रवाहिता को देखकर कलकत्ता के विद्वानों ने उन्हें 'पंडिता' और 'सरस्वती' की उपाधि दी। उन्होंने महाराष्ट्र की सवर्ण हिन्दू स्त्रियों को सामाजिक एवं धार्मिक कुरीतियों से बचाने के उद्देश्य से १८८२ में पूना में आर्य महिला समाज की स्थापना की। अंग्रेजी का विशेष ज्ञान उपार्जन करने के लिए वे १८८३ में इंगलैंड गईं। १८८६ में अमेरिका में जाकर उन्होंने कई स्थानों में भाषण दिये और समाज-सुधार के कामों के लिए रुपया-पैसा एकत्र किया। भारत लौटकर उन्होंने विधवाओं के लिए 'शारदा सदन', 'मुक्ति सदन', और 'कृपा सदन' नामक संस्थाएं खोलीं।

श्रीमती स्वर्णकुमारी देवी (१८५५-१९३२)

महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर की पुत्री एवं कवींद्र रवींद्र की बड़ी बहन श्रीमती स्वर्णकुमारी देवी का बंगला के साहित्यिक जगत् में विशेष स्थान है। उन्होंने १३ वर्ष की आयु से पहले ही कविता और कहानियां लिखना आरंभ कर दिया था। वे जीवन के अंतिम दिनों तक साहित्य-सृजन करती रहीं। उन्होंने गल्प, ऐतिहासिक और सामाजिक उपन्यास, नाटक, प्रहसन, गीत-संग्रह इत्यादि सब मिलाकर २७ ग्रंथों की रचना की। साहित्यिक क्षेत्र में उनकी प्रतिष्ठा का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि १९२१ में जब कवींद्र रवींद्र 'बंगीय साहित्य सम्मेलन' के सभापति निर्वाचित हुए परंतु अधिवेशन में उपस्थित न हो सके तो साहित्यकारों ने श्रीमती स्वर्णकुमारी देवी से ही सभापतित्व करने को कहा।

श्रीमती सरोजिनी नायडू (१८७९-१९४९)

हैदराबाद निवासी विख्यात वैज्ञानिक डा० अघोरनाथ चट्टोपध्याय की पुत्री सरोजिनी की बहुमुखी प्रतिभा कविता, समाजसेवा और राजनीति के क्षेत्र में प्रतिफलित हुई। वे घर पर ही प्रारंभिक शिक्षा पाने के बाद १८९५ में उच्च शिक्षा के लिए इंगलैंड गईं जहां उन्होंने लंदन और केम्ब्रिज में अध्ययन किया। इसी दौरान उनका संपर्क अंग्रेजी के उत्कृष्ट कवियों से हुआ जिनसे उन्हें अंग्रेजी में कविता करने की प्रेरणा मिली। उनकी कविता में जहां भारत के प्राकृतिक दृश्यों तथा प्राचीन गौरव का सुंदर चित्रण हुआ वहां विश्व-प्रेम और भगवत्-भक्ति के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उदात्त आदर्शों की भी अभिव्यक्ति हुई। कविता के क्षेत्र से बाहर आकर वे नारी-उद्धार के आंदोलन में लग गईं और धीरे-धीरे गांधीजी की प्रेरणा से राजनीतिक क्षेत्र में प्रविष्ट हुईं। चरखा-प्रचार, दलित-उद्धार और सांप्रदायिक एकता के लिए उन्होंने बहुत काम किया। असहयोग आंदोलन में उनके नेतृत्व की चर्चा पहले की जा चुकी है। वे अपने भाषणों से विराट् जनसमुदाय को मंत्र-मुग्ध कर देती थीं। वे कई वर्षों तक कांग्रेस कार्य-समिति की सदस्या रहीं और १९२५ में कांग्रेस की सभापति चुनी गईं। स्वतंत्रता के बाद १९४७ में उत्तरप्रदेश की गवर्नर भी नियुक्त हुईं।

तोरुदत्त (१८५६-१८७७)

उन्नीसवीं शताब्दी में अंग्रेजी साहित्य रचना के क्षेत्र में प्रवेश करने वाली पहली भारतीय युवती थी तोरुदत्त जिसने २१ वर्ष की आयु में स्वर्गवास से पहले पर्याप्त प्रसिद्धि प्राप्त कर ली थी। उनके पिता गोविनचन्द्र दत्त अंग्रेजी गद्य एवं पद्य के विख्यात लेखक थे। कु० दत्त की प्रारंभिक शिक्षा कलकत्ता में ही केवल अंग्रेजी के माध्यम से हुई थी। बाद में इंग्लैंड में जाकर उन्होंने अंग्रेजी के अतिरिक्त फ्रैंच का भी अध्ययन किया। वहां रहकर उन्होंने पाश्चात्य कला और संस्कृति का भी अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया। उन्होंने फ्रैंच कविताओं का अंग्रेजी में अनुवाद करके 'फ़्रांस' के खेतों से लुनी हुई मंजरियां, शीर्षक से एक संकलन १८७६ में प्रकाशित किया। भारत और इंग्लैंड के आलोचकों ने इस संकलन की पर्याप्त प्रशंसा की। 'भारत के प्राचीन गीत और गाथाएं' शीर्षक से उनका काव्य-संग्रह उनके स्वर्गवास के बाद प्रकाशित हुआ। उन्होंने फ्रैंच में एक उपन्यास लिखा जिसके विषय में प्रसिद्ध फ्रांसीसी विद्वान् जेम्स डार्यस्टेटर ने कहा कि उन्नीस वर्षीय हिन्दू युवती की यह रचना अत्यन्त असाधारण और प्रशंसनीय है। फ्रैंच कवयित्री मदाम द साफ़े ने लिखा : "तोरु की प्रतिभा विलक्षण है···उसकी रचना से लगता है कि वह फ्रांसीसी महिला है—उसके सोचने और लिखने का ढंग बिलकुल हमारे जैसा है।"

आधुनिक युग में राष्ट्रभाषा की कवयित्रियों और लेखिकाओं में महादेवी वर्मा और सुभद्राकुमारी चौहान का स्थान बहुत ऊंचा है। महादेवी ने संस्कृतनिष्ठ कमनीय पदावली और नये छन्दों में मधुर गीतों की रचना कर हिन्दी कविता की अपार श्रीवृद्धि की है। उनके कविता-संग्रहों में नीहार, रश्मि, नीरजा, सांध्यगीत आदि प्रसिद्ध हैं। वेद-मंत्रों के उनके अनुवाद अनुपम ही कहे जायेंगे।

सुभद्राकुमारी चौहान की सरल खड़ी बोली में लिखी कविता प्रेम, वात्सल्य और वीर रस से पूर्ण होने के अतिरिक्त राष्ट्रीय चेतना जागृत करने की विशेषता रखती है। उनकी 'झांसी की रानी' नामक कविता १८५७ के प्रथम स्वातंत्र्य-युद्ध का चित्र खींचकर विदेशी राज्य से मुक्त होने की भावना जगाने के कारण बहुत प्रसिद्ध हुई।

हिन्दी की गद्य-लेखिकाओं में श्रीमती सत्यवती मल्लिक, ऊषादेवी मित्रा, होमवती और कमलादेवी चौधरी के नाम उल्लेखनीय हैं।

आधुनिक युग में महिलाओं ने भारत की सभी प्रादेशिक भाषाओं में साहित्य-सृजन करने में अपूर्व योग दिया है। असमिया में स्नेहलता भट्टाचार्य, चन्द्रप्रभा शैकिया, उड़िया में पीता-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

म्बरी देवी, वसन्तकुमारी, पठ्ठनायक, शकुन्तलादेवी, सरस्वती कानूनगो—उर्दू में रशीद जहां, इस्मत चुग़ताई, कन्नड़ में—गौरम्मा, सविन्नम्मा, कल्यम्मा, गुजराती में—लभूबेन मेहता, विद्यावहन रमणभाई नीलकंठ, धीरूबेन पटेल, लीलावती मुंशी, तमिल में—बीरूएमरूकोद-नायकी अम्माल, स्वर्णाम्बल सुब्रह्मण्यम्, गुहप्रिया, तेलुगु में—मालती चन्द्रर, कुम्मूरी पद्मावती देवी, नन्दगिरि देवी, बंगला में—आशापूर्णादेवी, आशालता सिन्हा, बानीराय, लीला मजूमदार, मराठी में—शान्ता होसाबिन्स, शान्ता शैल्के, कुसुमावती देशपांडे और मलयालम में—आम्बाडि इक्कावम्मा, आम्बाडि कात्यायिनी अम्मा, टी० सी० कल्याणी अम्मा, बी० कल्याणी अम्मा, पी० आर० श्यामला, एन० सरस्वती और ललिताम्बिका अन्तर्जनम् तथा रानमयी देवी के नाम सहज ही लोगों के सामने आ जाते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्वतंत्र भारत में नारी की स्थिति

हरिशंकर शर्मा

स्वतंत्रता के बाद भारतीय नारी की स्थिति में क्रांतिकारी सुधार हुआ है। इसके दो मुख्य कारण हैं। एक यह कि भारत के संविधान में कानून की दृष्टि से स्त्री और पुरुष की समानता स्वीकार कर ली गई। और दूसरा यह कि हिन्दुओं के विवाह, विवाह-विच्छेद और उत्तराधिकार आदि के संबंध में कानून पास करके नारी के साथ सदियों से होने वाले सामाजिक और आर्थिक अन्याय का सिद्धान्तः अंत कर दिया गया। इन व्यवस्थाओं के परिणामस्वरूप नारी की आर्थिक परतंत्रता कम हुई, और परिवार तथा समाज में उसका सम्मान बढ़ा। और फिर वयस्क मताधिकार की प्राप्ति के साथ राजनीतिक क्षेत्र में भी उसका महत्त्व बढ़ा और राष्ट्र का ऊंचे से ऊंचा पद उसकी पहुंच में आ गया। इसमें संदेह नहीं कि शिक्षा की पर्याप्त व्यवस्था न होने के कारण देश की अधिकांश नारियां अभी पिछड़ी हुई हैं और उदार सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्थाओं से पूरा-पूरा लाभ नहीं उठा पा रही हैं, तो भी जहां तक शिक्षित मध्यमवर्गीय और उच्चवर्गीय नारियों का संबंध है, वे आत्मविश्वास और गर्व के साथ सिर ऊंचा किये जीवन के संघर्ष में हिस्सा ले रही हैं और राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रों में पुरुषों से टक्कर लेकर नारी जाति और देश का गौरव बढ़ा रही हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समानता का अधिकार

हम पिछले लेख में देख चुके हैं कि स्वातंत्र्य-आंदोलन में भारी संख्या में नारियों के भाग लेने के परिणामस्वरूप राजनीतिक क्षेत्र में नारी का महत्त्व समझा गया और यह स्वीकार किया गया कि नारी के सहयोग के बिना देश न स्वतंत्र हो सकता है, न उन्नति कर सकता है। राष्ट्रीय नेताओं ने अनुभव किया कि समाज में नारी को पुरुष की अपेक्षा हीन दर्जा देकर परंपरा से जो अन्याय किया गया है उसका शीघ्र अंत होना आवश्यक है। अतः १९३१ में कांग्रेस के कराची अधिवेशन में एक प्रस्ताव पास कर यह निर्णय किया गया कि स्वतंत्र भारत की जनता को जो मूल अधिकार दिये जायेंगे उनमें यह व्यवस्था भी होगी कि "लिंग के आधार पर किसीके साथ विभेद नहीं किया जायेगा।"

स्वतंत्रता के बाद २६ नवम्बर, १९४९ को संविधान पास हुआ और २६ जनवरी, १९५० को लागू हुआ। संविधान में कानूनी और सामाजिक दृष्टि से स्त्री और पुरुष की समानता स्वीकार की गई और इससे संबंधित व्यवस्था मूल अधिकारों के अंतर्गत अनुच्छेद १४, १५ और १६ में की गई जिनका भावार्थ इस प्रकार है :—

१४. कानून की दृष्टि में सब व्यक्ति समान हैं और सबको कानून का संरक्षण प्राप्त करने का समान अधिकार है।

१५. सरकार किसी व्यक्ति के धर्म, वंश, जाति, लिंग अथवा जन्म-स्थान के कारण उसके प्रति विभेद नहीं करेगी, परंतु सरकार चाहे तो स्त्रियों और बच्चों के हित में विशेष व्यवस्थाएं कर सकती है।

१६. (क) राजकीय नौकरियों या पदों पर नियुक्ति के विषय में सब नागरिकों को समान अवसर उपलब्ध होंगे।

(ख) राजकीय नौकररियों पर नियुक्ति के विषय में धर्म, वंश, जाति, लिंग, जन्म-स्थान अथवा निवास-स्थान के कारण किसी व्यक्ति के प्रति विभेद नहीं किया जायेगा।

समानता की उपर्युक्त व्यवस्थाओं के फलस्वरूप नारी के लिए बहुमुखी प्रगति का द्वार खुल गया। इससे मध्यम वर्ग की शिक्षित नारियों ने पूरा-पूरा लाभ उठाया। आज सरकारी और गैर-सरकारी क्षेत्र का शायद ही कोई दफ्तर, उद्योग, व्यवसाय और कारखाना होगा जहां स्त्रियां ऊंचे से ऊंचे पदों पर काम न कर रही हों। वे पहले की भांति अध्यापिकाएं ही नहीं, बल्कि क्लर्क, स्टैनोग्राफर, टेलीफोन-आपरेटर, स्वागत-अधिकारी, डाक्टर, वकील, जज, मजिस्ट्रेट, इंजीनियर आदि के रूप में बड़ी कुशलता से काम कर रही हैं।

पारिवारिक जीवन और हिन्दू कानून

पारिवारिक जीवन में नारी की कठिनाइयों को दूर करने के लिए स्वतंत्रता से पहले भी समाज-सुधारकों ने कई प्रयत्न किये थे जिनकी चर्चा पहले की जा चुकी है। हिन्दू विधवा-पुनर्विवाह कानून (१८५६) के द्वारा विधवाओं को विवाह का अधिकार दिया गया। बाल-विवाह निषेध कानून (१९२९) के द्वारा छोटी उम्र के लड़के-लड़कियों के विवाह पर प्रतिबंध लगा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दिया गया। स्वतंत्रता के वाद नारी की शेष कठिनाइयों को दूर करने के लिए 'विशेष विवाह कानून (१९५४)', 'हिन्दू विवाह और विवाह-विच्छेद कानून (१९५५),' 'हिन्दू उत्तराधिकार कानून (१९५६)' और 'दहेज निषेध कानून (१९६१)' पास किया गया। ये कानून हिन्दुओं के अतिरिक्त वौद्धों, जैनियों और सिक्खों पर भी लागू होते हैं। उपर्युक्त विषयों में मुसलमानों, ईसाइयों और पारसियों के अपने-अपने अलग कानून हैं जो कि उनकी परंपरागत धार्मिक प्रथाओं पर आधारित हैं। परंतु चूंकि संविधान में दिये गये निदेशक सिद्धांतों में विवाह उत्तराधिकार आदि के संबंध में सब नागरिकों के लिए समान कानून बनाने का अनुरोध किया गया है, इसलिए संभव है कि आगे चलकर सब धर्मों के अनुयायियों के लिए इन विषयों में एक-से कानून वन जायें।

हिन्दू विवाह कानून (१९५५) में यह व्यवस्था की गई है कि विवाह के समय लड़की की उम्र १५ वर्ष से और लड़के की उम्र १८ वर्ष से कम नहीं होनी चाहिए। दूसरी महत्त्वपूर्ण व्यवस्था यह है कि एक पत्नी के रहते पुरुष दूसरा विवाह नहीं कर सकता और न स्त्री एक पति के रहते दूसरा विवाह कर सकती है। इस नियम का उल्लंघन करने वाले स्त्री और पुरुष दोनों ही दंडनीय हैं। यदि विवाह के समय किसीकी पहली पत्नी जीवित हो, तो कोई-सी पत्नी भी तलाक ले सकती है। पति के धर्म-परिवर्तन कर लेने पर या संन्यास ले लेने पर भी पत्नी तलाक ले सकती है। ऐसी परिस्थितियों में पति भी पत्नी से तलाक ले सकता है।

विशेष विवाह कानून (१९५४) के अधीन एक ही धर्म अथवा विभिन्न धर्मों के मानने वाले स्त्री-पुरुष अदालत में पंजीकरण विधि द्वारा विवाह कर सकते हैं। इस कानून के अधीन विवाहित स्त्री और पुरुष पारस्परिक इच्छा मात्र से तलाक ले सकते हैं।

हिन्दू उत्तराधिकार कानून (१९५६) के द्वारा लड़कियों को पितृ-संपत्ति दाय-रूप में पाने का अधिकार दिया गया है। इस कानून के अनुसार विना वसीयत मरने वाले पुरुष की स्वार्जित संपत्ति के उत्तराधिकारियों की प्रथम श्रेणी में उसके पुत्रों के अतिरिक्त उसकी लड़कियां विधवा और माता भी शामिल हैं और इन सवको वरावर का हिस्सा मिलता है। यह कानून पुरुष की अपेक्षा नारी के प्रति अधिक उदार है। नारी को पत्नी के रूप में पति की संपत्ति और पुत्री के रूप में पिता की संपत्ति का भी अंश मिलता है। पुत्रों पर तो पिता के ऋण चुकाने की जिम्मेवारी होती है, परंतु लड़कियों पर ऐसी कोई जिम्मेवारी नहीं होती। इस कानून के द्वारा नारी को पहली बार संपत्ति के विषय में निरपेक्ष अधिकार दिया गया है, अर्थात् वह उसे बेच सकती है, रहन रख सकती है या अपनी इच्छा से किसीको दे सकती है।

दत्तक-ग्रहण और निर्वाह-खर्च कानून (१९५६) के अधीन लड़कों के अतिरिक्त लड़कियों को भी गोद लिया जा सकता है। दत्तक ग्रहण करने का अधिकार स्त्रियों को भी दिया गया है। अव कोई स्त्री जो अविवाहित हो, या विधवा हो, या जिसने तलाक ले लिया हो, या जिसके पति ने संन्यास ले लिया हो या धर्म बदल लिया हा, दत्तक ग्रहण कर सकती है। इस कानून में यह व्यवस्था भी की गई है यदि पति पत्नी का परित्याग कर दे, या अपना धर्म बदल ले, तो पत्नी उससे अलग रहती हुई भी उससे निर्वाह-खर्च ले सकती है।

दहेज-निषेध कानून (१९६१) की धारा ६ में यह आवश्यक ठहराया गया है कि विवाह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के एक वर्ष के भीतर दहेज की धन-संपत्ति वधू को दे दी जाय। इस संपत्ति पर उसका निरपेक्ष अधिकार माना गया है। और यह संपत्ति उसके बाद उसके उत्तराधिकारियों को मिलती है।

ईसाइयों और पारसियों का कानून

ईसाइयों से संबंधित विवाह-कानून के अधीन यदि वर या कन्या में से कोई १८ वर्ष से छोटा हो तो उसके पिता की अनुमति लेना जरूरी होता है। इसी प्रकार पारसियों के विवाह कानून में यह व्यवस्था है कि यदि वर या कन्या में से कोई २१ वर्ष से छोटा हो तो पिता अथवा अभिभावक की अनुमति प्राप्त करना जरूरी होता है। ईसाइयों और पारसियों दोनों के कानून के अनुसार यह भी जरूरी है कि विवाह के समय पुरुष की पहली पत्नी और स्त्री का पहला पति जीवित न हो। दोनों धर्मों के अनुयायियों के विषय में भारतीय उत्तराधिकार कानून (१९२५) लागू होता है जिसके अनुसार विधवा का अपने दिवंगत पति की और विधुर को अपनी दिवंगत पत्नी की संपत्ति पर अधिकार होता है।

मुस्लिम कानून

मुस्लिम विवाह-कानून के अनुसार यह जरूरी है कि विवाह के समय वर और कन्या में से किसीकी उम्र १५ वर्ष से कम न हो, और विवाह के लिए दोनों की स्वीकृति ली गई हो। इस कानून के अधीन मुसलमान औरत गैर-मुस्लिम से शादी नहीं कर सकती, परन्तु मुसलमान पुरुष ईसाई या यहूदी औरत से शादी कर सकता है। यदि पति पत्नी को तलाक दे तो उसे पत्नी को 'मेहर' की रकम देनी पड़ती है जो कि शादी के समय ही तय कर ली जाती है। मुसलमान पति और पत्नी दोनों ही अदालत के द्वारा भी तलाक ले सकते हैं। स्त्री और पुरुष दोनों को विरासत में संपत्ति प्राप्त करने का निरपेक्ष अधिकार है। मृतक व्यक्ति के वारिसों अर्थात् उत्तराधिकारियों में उसकी माता, पत्नी और लड़की भी शामिल हैं।

नारी-शोषण का अंत

पारिवारिक जीवन के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों में नारी-शोषण का अंत करने के उद्देश्य से भी कई कानून पास किये गये हैं। नारी-बाल-क्रय-विक्रय निषेध कानून (१९५६) के द्वारा वेश्यावृत्ति को रोकने का प्रयत्न किया गया और नारी-उद्धार सदन खोलने की व्यवस्था की गई। मद्रास के देवदासी निषेध कानून (१९४७) के द्वारा लड़कियों को मंदिरों के भेंट करने की मनाही कर दी गई। इसी प्रकार देश के अन्य भागों में भी धर्म के नाम पर होने वाले नारी-शोषण और अनाचार का अंत करने के लिए भी कानूनी व्यवस्था की गई।

जीविका उपार्जन

निम्न वर्ग की नारियां जीविका के लिए सदा से पुरुषों की भांति श्रम करती रही हैं। गाँवों में—जहां देश की ८० प्रतिशत आवादी रहती है—खेती के काम में स्त्रियों ने सदा पुरुषों का हाथ बंटाया है। जिनकी अपनी जमीन नहीं होती, वे दूसरों की जमीन पर मजदूरी कतीर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हैं। खेती के अतिरिक्त औरतें आसाम, पश्चिमी बंगाल, मद्रास, केरल और मैसूर में चाय, कॉफ़ी तथा रबर के बागानों में, बिहार, मध्य प्रदेश, पश्चिमी बंगाल, और उड़ीसा में खानों में तथा हर बड़े नगर में कारखानों में भी मजदूरी करती हैं। १९६० में कारखानों में काम करने वाली औरतों की संख्या लगभग ३ लाख ७० हजार और बागानों में काम करने वाली औरतों की संख्या लगभग ११ लाख ८७ हजार थी।

मजदूर औरतों के प्रतिदिन काम करने कें घंटे नियत करने तथा उनके स्वास्थ्य, सुरक्षा और कल्याण के लिए कई कानून पास किये गये हैं।

फैक्टरी एक्ट (१९४८) में यह व्यवस्था की गई है कि खानों, कारखानों और बागानों में औरतें प्रातः ७ बजे और सायं ६ बजे के बीच ही प्रतिदिन अधिक से अधिक ९ घंटे और प्रति सप्ताह अधिक से अधिक ५४ घंटे काम करें। औरतों को सायं ६ बजे के बाद और प्रातः ७ बजे के पहले काम पर नहीं लगाया जा सकता। औरतों से ६५ पौंड से अधिक और किशोरियों से ४५ पौंड से अधिक बोझ उठवाने की मनाही है! मजदूर औरतों के ६ वर्ष से छोटे बच्चों की देखभाल के लिए कानून में मालिकों की ओर से शिशु-गृह खुलवाने की व्यवस्था की गई है। खान कानून (१९५१) में औरतों को खानों के भीतर या किसी खतरनाक काम पर लगाने की मनाही की गई है। प्रसूतिका-कल्याण कानून (१९६१) के द्वारा देशभर में फार्मों, बागानों, खानों, कारखानों और व्यापारिक फर्मों में काम करने वाली औरतों के लिए प्रसूति-विषयक आर्थिक और डाक्टरी सुविधाओं की व्यवस्था की गई है। इस कानून के अधीन औरतों को उनकी औसत दैनिक मजदूरी या वेतन के हिसाब से उतने दिनों की मजदूरी मिलती है जितने दिन वे काम पर न आ सकें।

कारखानों आदि में काम करने वाली औरतों की समस्याओं को सुलझाने के लिए तथा उनके हितों की सुरक्षा के लिए ट्रेड यूनियनें बनी हुई हैं। १९५८-५९ में लगभग चार लाख औरतें ट्रेड यूनियनों की सदस्याएं थीं।

शिक्षा

हमारे राष्ट्रीय नेता और स्वयं महिलाएं भी इस बात को अच्छी तरह समझती हैं कि जब तक स्त्रियां पुरुषों की भांति शिक्षा-संपन्न होकर जीवन के विविध क्षेत्रों में काम करने के योग्य न हो जायें तब तक देश आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्रों में अभीष्ट प्रगति नहीं कर सकता। इस बात को ध्यान में रखकर भारत सरकार ने १९५९ में राष्ट्रीय स्त्री-शिक्षा परिषद् (National Council of Women's Education) की स्थापना की। परिषद् का मुख्य उद्देश्य लड़कों और लड़कियों की शिक्षा-व्यवस्था के अंतर का दूर करना और लड़कियों की शिक्षा को बढ़ावा देना है। परिषद् स्त्री-शिक्षा के संबंध में नीति, कार्यक्रम और लक्ष्य निर्धारित करने में सरकार को परामर्श देती है और इस बात का ख्याल रखती है कि नारी-शिक्षा संबंधी योजनाओं को कार्यान्वित किया जाये और उनके लिए रुपये-पैसे की पर्याप्त व्यवस्था की जाये। पंचवर्षीय योजनाओं में लड़कियों की शिक्षा के लिए विशेष परियोजनाएं बनाई गईं और लड़कियों को छात्रवृत्तियां देने और स्कूल तथा छात्रावास बनाने के लिए धन-राशि दी गई।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१९६१ के आंकड़ों के अनुसार देश में ८१ लाख से अधिक नारियां प्राइमरी अथवा जुनियर बेसिक शिक्षा प्राप्त थीं, और १२ लाख ७५ हजार से अधिक मैट्रिक पास थीं। लड़कियों ने साहित्य, इतिहास, अर्थशास्त्र आदि के अतिरिक्त विज्ञान, इंजीनियरिंग और टैक्नालोजी आदि में भी पर्याप्त रुचि ली है। १९६१ के आंकड़ों के अनुसार देश में १६,६५० महिलाएं विज्ञान में ग्रेजुएट थीं। २३३ इंजीनियरिंग एवं टैक्नालोजी में, ७१ कैमिकल इंजीनियरिंग में, ३८ सिविल इंजीनियरिंग में और ४ आर्किटैक्चर और रीजनल प्लैनिंग में ग्रेजुएट थीं। २७९५० महिलाएं डाक्टरी की डिग्री और १३४२ महिलाएं डाक्टरी का डिप्लोमा प्राप्त थीं।

जहां तक केवल साक्षरता का संबंध है, १९६१ में १२.९५ प्रतिशत नारियां साक्षर थीं और १९७१ में १८.४७ प्रतिशत।

शिक्षा पर आधारित रोजगार

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में स्त्रियों के लिए आधुनिक ढंग की शिक्षा वांछनीय स्वीकार कर ली जाने पर और लड़कियों के लिए स्कूल और कॉलेज खोले जाने पर अध्यापन कार्य के लिए स्त्रियों को प्रशिक्षण देने की नीति स्वीकार कर ली गई थी। अध्यापन एक ऐसा व्यवसाय है जिसमें मध्यम वर्ग की नारियों ने सबसे पहले रुचि ली। और यही क्षेत्र है जिसमें और व्यवसायों की अपेक्षा नारियों की संख्या अधिक है। स्वतंत्रता के तीन वर्ष के भीतर अर्थात् १९५० में लगभग ८०,००० अध्यापिकाएं प्राइमरी स्कूलों में, ३१,००० अध्यापिकाएं सेकेण्ड्री स्कूलों में, ४००० अध्यापिकाएं व्यावसायिक और टैक्नीकल स्कूलों में और १७०० अध्यापिकाएं कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में काम करती थीं। १९५४-५५ के शिक्षा एवं अनुसंधान विभागों में काम करने वाली महिलाओं की संख्या १ लाख ७ हज़ार से ऊपर थी।

महिलाओं ने उपकुलपति के पद का काम भी बड़ी कुशलता से निभाया है—इनमें वड़ौदा विश्वविद्यालय की उपकुलपति श्रीमती हंसा मेहता और इंडियन विमिन्स यूनिवर्सिटी की उपकुलपति श्रीमती शारदा मेहता के नाम उल्लेखनीय हैं।

डॉक्टरी व्यवसाय

लेडी हार्डिंग मैडिकल कालेज, दिल्ली, क्रिश्चियन मैडिकल कॉलेज, लुधयाना और क्रिश्चियन मैडिकल कालेज, वैल्लोर ने लड़कियों को डाक्टरी शिक्षा देने में महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। इनके अतिरिक्त अन्य डाक्टरी कालेजों में भी लड़कियों के लिए स्थान सुरक्षित रखे जाते हैं। दिल्ली स्थित 'कालेज ऑफ नर्सिंग' नर्सों को प्रशिक्षण देने की पहली और मुख्य संस्था है। इसके अतिरिक्त दाइयों को प्रशिक्षण देने की अनेक संस्थाएं हैं।

१९५६-५७ में देश की डाक्टरी और स्वास्थ्य सेवाओं में काम करने वाली महिलाओं की संख्या ७७०० थी। इनके अतिरिक्त कई महिलाएं सेना के डाक्टरी विभाग में लेफ्टिनेंट, कैप्टन, मेजर और कर्नल के पदों पर भी नियुक्त हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

केन्द्रीय सेवाएं

स्वतंत्रता के बाद लड़कियों के लिए भारतीय प्रशासन सेवा तथा प्रथम वर्ग की अन्य केन्द्रीय सेवाओं में भरती की अनुज्ञा दी जाने के परिणामस्वरूप मंत्रालयों में तथा प्रशासकीय और न्यायिक पदों पर भी महिलाएं काम कर रही हैं। श्रीमती अन्ना आर० जार्ज मंत्रिमंडलीय सचिवालय में संयुक्त-सचिव और कुमारी ए० राधाबाई उपसचिव हैं। इनके अतिरिक्त अन्य मंत्रालयों में भी कई महिलाएं उप-सचिव, अवर सचिव तथा प्रभाग-अधिकारी हैं। मंत्रालयों से बाहर कई महिलाएं डिप्टी कमिश्नर, डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट तथा सहायक डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट भी हैं। मंत्रालयों में तथा मंत्रालयों के अधीन विभागों में क्लर्क, टाइपिस्ट, स्टैनोग्राफर, टेलीफोन आपरेटर के रूप में हजारों की संख्या में लड़कियां काम कर रही हैं। केवल रेलवे विभाग और विभिन्न रेलों में ही काम करने वाली नारियों की संख्या अनुमानतः दस हजार के लगभग होगी।

अंश-कालिक रोजगार

इसमें सन्देह नहीं कि आधुनिक जीवन की आवश्यकताएं तथा रहन-सहन का खर्च बढ़ जाने के कारण विवाहित तथा अविवाहित स्त्रियों के लिए घर से बाहर किसी कार्यालय या व्यवसाय में काम करना प्रायः आवश्यक हो गया है। विशेषतः नगरों में, परिस्थिति ऐसी है कि घर-गृहस्थी का खर्च चलाने के लिए पति के अतिरिक्त पत्नी को भी काम करना पड़ता है। यदि काम की परिस्थितियां सुविधाजनक हों तो वर्तमान संख्या से और भी अधिक नारियां काम के लिए तैयार होंगी। इस संबंध में आवश्यकता इस बात की है कि उनके लिए काम के घंटे ऐसे हों कि उन्हें बच्चों की देखभाल और घर के दूसरे काम-काज की उपेक्षा न करनी पड़े, क्योंकि ऐसा करने से अनेक कठिनाइयां और समस्याएं पैदा हो जाती हैं। अतः स्त्रियों के लिए अंश-कालिक काम की व्यवस्था होनी चाहिए। इंग्लैंड में २९ लाख औरतें विभिन्न उद्योगों में अंश-कालिक काम कर रही हैं। यदि हमारे यहां भी ऐसी व्यवस्था हो जाये तो देश में उत्पादन बढ़ सकता है और लोगों की आर्थिक स्थिति भी सुधर सकती है।

कला के क्षेत्र में

आधुनिक युग में अनेक महिलाओं ने भारतीय नृत्य, संगीत और नाट्य कला का पुनरुद्धार करने में प्रशंसनीय काम किया है। कथक नृत्य का पुनः प्रवर्तन करने वाली महिलाओं में स्वर्गीय मेनका सर्वप्रथम हैं। उन्होंने भारत और यूरोप के मंच पर कथक का प्रदर्शन करके ख्याति प्राप्त की। बाद में उन्होंने खांडला में नृत्य-स्कूल स्थापित किया।

भारत-नाट्यम् नृत्य के पुनरुत्थान का श्रेय बहुत हद तक बाल सरस्वती को है। उनकी नृत्यकला ने कई अन्य महिलायों को प्रेरणा प्रदान की। मद्रास की रुक्मिणी देवी, कुम्बकोनम् की वरलक्ष्मी और बड़ौदा की गौरीबाई ने भी भरत-नाट्यम् में प्रवीणता प्राप्त करके उसे लोकप्रिय बनाने की दिशा में काम किया। रुक्मिणी देवी ने कला क्षेत्र आर्ट सेंटर की स्थापना करके दर्जनों

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

महिलाओं को प्रशिक्षण दिया। भरत-नाट्यम् नृत्य की उत्तम कलाकारों में इन्द्राणी रहमान, शान्ता राव, कुमारी कमला, वैजयन्तीमाला, यामिनी कृष्णमूर्ति, सरला, सहगल, तारा चौधरी, शीरीं वजीफदार' विनू इन्द्राणी, अंजलि होरा और सत्यवती भी हैं। रोशन कुमारी, दमयन्ती जोशी और रानी कर्णा कथक की उत्तम कलाकारों में हैं। नयना झवेरी और रंजना झवेरी ने वैले में मणिपुर नृत्य का प्रदर्शन करके उसे नवीनता प्रदान की। मृणालिनी साराभाई ने भारत के शास्त्रीय नृत्य तथा लोकनृत्य के पुनः प्रचलन के लिए प्रशंसनीय काम किया है। उन्होंने भारत के अतिरिक्त यूरोप और दक्षिण-पूर्वी एशिया के देशों में जाकर अपनी कला का प्रदर्शन किया।

नाट्य-कला

भारतीय नाट्य-कला का पुनरुद्धार करने वाली कलाकारों में कमलादेवी चट्टोपाध्याय का स्थान बहुत ऊंचा है। उनकी प्रेरणा से संगीत नाटक अकाडेमी ने १९५४ में राष्ट्रीय नाट्य समारोह का आयोजन किया। उन्होंने इंडियन अकाडेमी ऑफ ड्रामैटिक आर्ट (भारतीय नाट्य-कला अकाडेमी) की स्थापना की। वे यूनेस्को के अन्तर्राष्ट्रीय नाट्य-संस्थान द्वारा १९५६ में बम्बई में आयोजित 'प्रथम विश्व-नाट्य सम्मेलन' की अध्यक्षा थीं। भारतीय संगीत-नाटक (opera) के पुनरुद्धार के लिए शीला भाटिया ने प्रशंसनीय काम किया है।

भारत के शास्त्रीय संगीत के सिद्धहस्त कलाकारों में एम० एस० सुब्ब लक्ष्मी, हीराबाई बड़ोदकर, केसरबाई केरकर तथा डी० के० पट्टम्माल शामिल हैं। इनके अतिरिक्त बेगम अख्तर, रसूलन बाई, जूथिका राय, सन्ध्या मुकर्जी और मीरा चटर्जी ठुमरी ग़ज़ल तथा ख़याल आदि की लोक-प्रिय गायिका हैं। कोमोलतादत्त भारतीय और पाश्चात्य प्रणाली की उच्चकोटि की संगीतज्ञ, वादिय-विशारद और संगीतकार है। फ़िलोमेना थम्बू चेट्टी वायलिन-वादन में, शांति सैलडन और मणि मदान पियानो-वादन में सिद्धहस्त हैं। जहां तक पाश्चात्य गायन का संबंध है, प्रिया चैटर्जी ने मिलान (इटली) के संगीत-सम्मेलन में और कृष्णा भान ने मैड्रिड (स्पेन) के संगीत-सम्मेलन में भाग लेकर अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त की है। कृष्णा भान यूरोप की पांच भाषाओं में गा सकती हैं।

पत्रकारिता और प्रसारण

श्रीमती कमला सत्यानाथन् ने १९०१ में महिलाओं के लिए पहली पत्रिका 'दि इंडियन लेडीज़ मैगेज़ीन' निकाली थी। समाचारपत्रों में पहले-पहल कार्य करने वाली पत्रकारों में श्रीमती पद्मिनी सेनगुप्ता का नाम उल्लेखनीय है। उन्होंने १९३२ में 'दि हिन्दू' दैनिक में काम करना शुरू किया था। इला सेन और कपूरथला की राजकुमारी इन्दिरा ने राजनीतिक विषयों पर पत्रों में लेख लिखकर भारत तथा विदेश में ख्याति प्राप्त की। विमिन्स इंडियन एसोसिएशन की ओर से 'स्त्री धर्म', आल इंडिया विमन्स कान्फ्रेंस की ओर से 'रोशनी' तथा नेशनल कौंसिल आफ़ विमिन की ओर से 'बुलैटिन' नामक पत्रिकाएं निकाली गईं जिनमें महिलाओं की समस्याओं पर विचार किया जाता है। इनके अतिरिक्त 'ईव्स व्ही क्ली' और 'ट्रैंड' आदि कई पत्रिकाएं हैं जिनके विभिन्न विभागों में महिलाएं ही काम करती हैं। कई समाचारपत्रों के 'नारी-जगत्'

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

का संपादन भी महिलाएं करती हैं। कई महिलाएं दैनिक पत्रों तथा रेडियो के लिए संवाददाता का काम करती हैं। सूचना और प्रसारण मंत्रालय के अधीन पत्र-सूचना कार्यालय में इस समय छः-सात महिलाएं सूचना-अधिकारी तथा सहायक-सूचना-अधिकारी के पद पर नियुक्त हैं। इसी प्रकार प्रकाशन विभाग, आकाशवाणी तथा अन्य कार्यालयों में कई स्त्रियां अनेक महत्त्वपूर्ण पदों पर काम कर रही हैं।

राजनीतिक क्षेत्र में

१८८५ में कांग्रेस की स्थापना के साथ भारतीय नारी ने राजनीति में पदार्पण किया। कांग्रेस के अधिवेशनों में नारियां प्रतिनिधि होकर जातीं, भाषण देतीं और वहस में भाग लेतीं। डा० ऐनी वेसंट पहली महिला थीं जिन्हें १९१७ में कांग्रेस के अधिवेशन का सभापतित्व करने का सम्मान मिला। कांग्रेस ने नारी को पुरुष के समान दर्जा दिया। गांधी जी ने नारियों को स्वातंत्रय संग्राम में भाग लेने का खुला निमंत्रण दिया। जैसा कि हम पिछले लेख में कह आये हैं, हजारों नारियों ने इस संग्राम में भाग लिया और कइयों ने इसका संचालन भी किया। कुछ एक ने विधान परिषदों और विधान-सभाओं में भी काम किया। स्वतंत्रता से ठीक पहले भारत की जो संविधान सभा वनी उसमें भी सरोजिनी नायडू, हंसा मेहता, दुर्गाबाई, रेणुका राय, मालती चौधरी तथा कई अन्य महिलाएं ली गईं।

स्वतंत्रता के वाद भारत के पहले मंत्रिमंडल में राजकुमारी अमृतकौर स्वास्थ्य मंत्री नियुक्त हुईं। वाद में श्रीमती चन्द्रशेखर स्वास्थ्य विभाग की उपमंत्री, श्रीमती वायलट अलवा गृहविभाग की, श्रीमती लक्ष्मी मेनन विदेश विभाग और श्रीमती तारकेश्वरी सिन्हा वित्त विभाग की उपमंत्री रहीं।

राज्यों में सवसे पहली महिला राज्यपाल श्रीमती सरोजिनी नायडू थीं जिन्हें स्वतंत्रता के वाद उत्तरप्रदेश में नियुक्त किया गया। उन्हींकी पुत्री कुमारी पद्मजा नायडू दूसरी महिला राज्यपाल थीं। वे पश्चिमी वंगाल की राज्यपाल रहीं। श्रीमती सुचेता कृपलानी पहली मुख्य मंत्री थीं। अव उड़ीसा में श्रीमती नन्दिनी सत्पथी मुख्यमंत्री हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित मास्को तथा वाशिंगटन में भारत की राजदूत तथा लंदन में भारत की हाई कमिश्नर थीं। वे पहली महिला हैं जिन्हें संयुक्तराष्ट्र महासभा की सभापति नियुक्त किया गया।

भारत की प्रथम निर्वाचित लोकसभा में २३ और राज्यसभा में १९ महिला सदस्याएं थीं। इनमें कई संसद में होने वाली वहस में भाग लेती थीं। श्रीमती वायलट अलवा प्रतिरक्षा संवंधी मामलों पर, श्रीमती रेणु चक्रवर्ती ट्रेड यूनियन संवंधी समस्याओं पर और श्रीमती तारकेश्वरी सिन्हा वित्त और व्यापार संवंधी विषयों पर साधिकार भाषण दिया करती थीं। डा० सीता परमानन्द ने हिन्दू उत्तराधिकार विल पर हुई वहस में विशेष रुचि ली थी। इसी प्रकार जयश्री रायजी और उमा नेहरू ने सहकारी आंदोलन और सावित्री निगम मद्य-निषेध तथा नैतिक सुधार के विषय में रुचि दिखाती थीं।

वर्तमान संसद में ३० से अधिक महिलाएं हैं जिनमें प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के अतिरिक्त डा० सरोजिनी महिषी (पर्यटन और नागरिक विमानन विभाग की राज्यमंत्री), श्रीमती सुशीला रोहतगी (उप वित्तमंत्री), श्रीमती सुभद्रा जोशी, राजमाता गायत्री देवी, श्रीमती विजयाराजे सिन्धिया, श्रीमती पूरबी मुखोपाध्याय, कुमारी शान्ता वशिष्ठ के नाम उल्लेखनीय हैं। लोकसभा में नई दिल्ली क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करने वाली श्रीमती मुकुल बैनर्जी उदीयमान महिला नेताओं में से हैं।

श्रीमती इन्दिरा गांधी भारत की पहली महिला प्रधानमंत्री हैं। इस उच्च पद को संभालने से पहले वे सूचना और प्रसारण की मंत्री रह चुकी थीं और इससे पहले कांग्रेस-अध्यक्ष भी रहीं। वे राजनीतिक दूरदर्शिता, शासन-कुशलता, नैतिक साहस, न्यायप्रियता और कर्तव्यनिष्ठा की साक्षात् प्रतिमा हैं। देश की आन्तरिक और अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं को सुलझाने में उन्होंने अपूर्व बुद्धिमत्ता और साहस का परिचय दिया है प्रधान-मंत्री पद पर आरूढ़ होने के तुरन्त बाद पंजाब का बंटवारा और हरियाणा राज्य की स्थापना उनके साहस का प्रमाण है। बैंकों का राष्ट्रीयकरण निर्धनता को दूर करने की दिशा में उनका महत्त्वपूर्ण प्रयास है। बंगला देश के लगभग एक करोड़ शरणार्थियों को भारत में शरण देना उदार मानवीयता का परिचायक है। और दिसम्बर, १९७१ के भारत-पाकिस्तान युद्ध में भारत की अपूर्व विजय उनकी राजनीतिक और कूटनीतिक सफलता का उदाहरण है। इसमें तनिक सन्देह नहीं कि उनके कुशल नेतृत्व में भारत की अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में आज जितनी प्रतिष्ठा है उतनी पहले कभी नहीं हुई थी।

उपसंहार

भारत के समस्त इतिहास पर विहंगम दृष्टिपात करने से स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय नारी वैदिक काल के बाद सैकड़ों-हजारों वर्षों तक मूल मानव अधिकारों से वंचित रहने तथा अनेक कष्टों, कठिनाइयों और बंधनों को धैर्यपूर्वक सहने के बाद आज पुरानी स्वतंत्रता और पुराने अधिकारों को प्राप्त करने में बहुत हद तक सफल हो गई है। परंतु संविधान और कानून द्वारा उसे जो आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक अधिकार दिये गये हैं उन्हें व्यवहारतः सार्थक बनाने के लिए समाज के दष्टिकोण को और बदलने तथा शिक्षा के और प्रसार की आवश्यकता है। भारतीय नारी केवल अधिकारों के विषय में ही नहीं प्रत्युत अपने नये कर्तव्य और उत्तरदायित्व के विषय में भी जागरूक है। नई शिक्षा और नई स्वतंत्रता और नये युग के आर्थिक संघर्ष के परिणामस्वरूप गहस्थ जीवन, समाज सेवा और राष्ट्रसेवा के नये आदर्शों को अपनाने की आवश्यकता है जो वैदिक आदर्शों से एकदम भिन्न न होते हुए भी नवीन युग की आवश्यकताओं के अनुरूप होंगे और सर्वथा भारतीय ही होंगे। इसके लिए नारी और पुरुष दोनों को मिलकर प्रयत्न करना है जिससे कि भारतीय समाज आर्थिक समृद्धि, पारिवारिक सुख और आध्यात्मिक शांति के नये आदर्श विश्व के सामने प्रस्तुत कर सके।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मेरी जीवन यात्रा

जानकीदेवी बजाज

एक—

मेरे पिताजी का नाम गिरधारीलालजी था। उनका वर्ण गोरा था, शरीर स्वस्थ। नवासी साल की उम्र तक वे बराबर पैदल ही मंदिर जाते रहे। श्रीवैष्णवों की सांप्रदायिक मान्यता के अनुसार बोलते समय वे सदा पहले नारायण का उच्चारण करते थे। "नारायण के फल लेनो है ?" "नारायण के भोग चढ़ाणो है ?" आदि। उन्हें लोग दुखियों के सखा, कुटुंब-पाल और सत्पुरुष मानते थे। किसीसे मिलते ही उसके सुख-दुख की बात पूछते। मालूम होता कि लड़की का विवाह है, घर में कोई कार्य-प्रयोजन है तो एकाध बोरी अनाज और कुछ रुपये भिजवा देते। सहायता पाने वालों में ब्राह्मण, बनिये, किसान, मजदूर, हिन्दू-मुसलमान सभी रहते।

धार्मिक नियमों के पालन में वे कट्टर थे। सेवा-सहायता के बारे में समान-भाव रखते थे। घर में वातावरण धार्मिक था और छुआछूत का बड़ा ध्यान रखा जाता था। चिड़िया के घुस आने से चौका धोया जाता था। नल के पानी से परहेज किया जाता था, मंदिर जाते समय रास्ते में अगर नल के पानी का छींटा भी लग जाता तो स्नान करना होता था। घर में शालिग्राम की पूजा होती थी और भोग चढ़ता था, पर दर्शन-पूजन के लिए हम लोग मंदिर भी जाते थे। एकादशी के दिन व्यंक्टेशजी, रुक्मिणी और सत्यभामा की स्वर्णमंडित मूर्तियों का दूध-दही से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अभिषेक होता था। मैं भक्ति से गद्‌गद होकर देखती रहती।

कुटुंब वालों को निभाना पिताजी का स्वभाव बन गया था। हमारे ताऊ के लड़के साथ ही रहते थे। उनके बहुत-से बाल-बच्चे थे। हमारे ग्यारह भाई-बहन पहले चल बसे थे, हम तीन भाई-बहन बुढ़ापे में जिये थे। हमारे यहां जो मुनीम, गुमाश्ते, नौकर-चाकर थे उनको पिताजी ने कुटुंब का ही बना लिया था। मुसलमान नौकर भी थे। उनके साथ छुआछूत तो चलती थी पर आत्मीयता में कोई कमी नहीं होती थी।

पिताजी का जीवन सब तरह से ऊंचा ही रहा। व्यापार में उनकी साख थी, व्यवसाय अफीम का था। खेतों से अफीम के रस के घड़े के घड़े भरकर आते। कुछ दिनों रखे रहने के बाद उस रस को बड़ी-बड़ी परातों में मथा जाता और फिर लड्डू जैसे गोले बनाये जाते थे। इन्हें अफीम की घोटियां कहते थे।

पिताजी के चले जाने के बाद घर के लोगों को प्रायः घाटा ही उठाना पड़ा क्योंकि वे उनकी नीति भूल गये।

उनका जीवन जैसा भव्य रहा वैसे ही उनकी मृत्यु भी। जिस दिन उनका स्वर्गवास हुआ, ग्यारह बजे तक चिट्ठियां लिखते रहे, फिर नहाकर धोती पहन रहे थे कि चक्कर आ गया। कमरे में जाकर लेट गये। लोग इकट्ठे हो गये। डाक्टरों को बुलाया गया। शाम को ७ बजे उनका देहान्त हो गया। कहते हैं, उनका प्राण ब्रह्मरन्ध्र से निकला। ऊपर से सिर फट गया था और खून गिरा था।

उस समय मेरी आयु दस-ग्यारह साल की थी।

दो—

मेरी मां को घर तथा पास-पड़ोस के लोग 'गोगुली गाय' कहते थे। किसी नौकर को कष्ट होगा यह सोचकर मां अनेक काम स्वयं कर लिया करती थीं। परिवार से संबंधित बूढ़े नौकर-चाकर पंडित-पुरोहित सबके प्रति मां का बर्ताव बड़ा प्रेम-भरा होता था। सर्दी के मौसम में वह गोंद तथा मैथी के लड्डू बनाकर रखती थीं और इन बूढ़ों को दिया करती थीं। सुबह पांच बजे बिस्तर पर ही दे आतीं और किसी-किसी के तो घर पर पहुंचा देतीं। बिना किसी धर्म या जाति का विचार किये वह बीमारों को दवाई दिया करती थीं। मिट्टी के तेल के आड़े कटे कनस्तर में जंगली जड़ी-बूटियां तथा सोंठ, काली मिर्च, दालचीनी, लोंग, पीपल, मुलेठी, जायफल, अजवाइन आदि चीजों की छोटी-छोटी कोथलियां (थैलियां) बनाकर रखती थीं। जब किसीकी बीमारी की बात सुनतीं तो कनस्तर से दवा निकालकर देतीं।

जब मैं चार बरस की हुई तब मेरे माता निकल आई। मुझसे बड़े एक भाई थे और एक छोटे। मैं बीच की थी। मेरे दोनों भाइयों को टीका लगवा दिया गया था। मैं ही नामालूम कैसे रह गई थी। मुझे लगभग चार महीने बीमारी भोगनी पड़ी। माता निकलने पर मुझे गाय के नोहरे में बोरी या टाट पर कंडे की राख बिछाकर सुलाया जाता था। मां मेरे शरीर पर राख बुरकती रहती थीं। सांवली तो मैं पहले ही थी, इसके बाद रंग और गहरा हो गया। चेचक के दाग चेहरे पर उभर आये। बहुत-से बच्चों के चले जाने के कारण मैं लाड़ली पहले ही थी, इस

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बीमारी के कारण मुझे और भी सहानुभूति मिलने लगी।

तीन—

माता की बीमारी से उठी ही थी कि वर्धा से मुझे देखने के लिए एक ब्राह्मण आये। उनका नाम मानीरामजी था। तब मेरी उम्र कोई चार साल की थी। मानीरामजी सेठ वच्छराजजी के यहां से आये थे। उन्होंने वर्धा जाकर हमारे घर के धार्मिक वातावरण की बात की होगी। वच्छराजजी की पत्नी सद्दीबाई जी भरे-पूरे खानदान और धार्मिक वातावरण की बात सुनकर संबंध के लिए राजी हो गईं। पहले के लोग रूप की अपेक्षा खानदान को अधिक महत्त्व देते थे। वर्धा वाले संपन्न थे, लड़का सुंदर था और मैं सांवली तथा चेचक के दाग वाली थी। फिर भी सगाई हो गई।

सगाई के बाद मेरे लिए बहुत-सा जेवर वर्धा से आया। गहना ठोस सोने का था। मेरी भतीजी के पति कहा करते थे, "कढ़ी में काले को छांटो लाग्यो।" इससे उनका मतलब यह था कि सोना तो बहुत आया पर पहनने वाली ऐसी ही है ?

मुझे अपने रूप के कारण किसीसे मिलने में भी संकोच होता था। यहां तक कि कांच में भी मुंह देखते संकोच करती थी। इसे मैं भगवान का उपहार ही मानती हूं कि संपन्न परिवार, जमनालालजी जैसे सुंदर पति तथा सब प्रकार की अनुकूलताओं को पाकर भी 'रूप' के कारण मैं अहंकार में डूबने से बची। मुझमें जो सादगी आई, धर्म-ध्यान करने की रुचि बढ़ी, उसमें शायद मेरी कुरूपता भी एक कारण रही हो।

चार—

मैं कोई छः-सात बरस की थी। एक दिन पिताजी के हाथ में एक कागद था। वे उसे मां को पढ़कर सुना रहे थे। चिट्ठी के लिए कागद शब्द का इस्तेमाल होता था। पिताजी कह रहे थे कि कनीराम ने यह लिखा है, वह लिखा है। मैं विचार में पड़ गई कि कागद कैसे बोलता है। मैंने मन ही मन सोचा कि मैं भी यह बात सीखूंगी। दूसरे दिन पट्टी-कलम लेकर जोशीजी के यहां पहुंची। मैंने कहा, "कागद कीयां बोले सो मनैं बताओ।" वे मेरी समस्या समझ गये और क, ख, ग, घ, ङ—ये पांच अक्षर पट्टी पर लिखकर दे दिये और कहा कि इनको घोखना। जोशीजी के यहां से लौटी तो पिताजी ने मेरे हाथ में पट्टी-कलम देखकर कहा, "बेटाजी ! आज कठे गया था पाटी-कलम लेके ?" मैंने हंसकर पट्टी दिखा दी। पिताजी मेरा उत्साह देखकर मां से बोले, "ऐजी अब तो बाई के ताईं जोशीजी राखनो पड़सी।" धीरे-धीरे मैं थोड़ा-बहुत टूटा-फूटा पढ़ने लगी। मैं मां के साथ मंदिर तो जाती ही थी। पूजा-पाठ में भी उनके साथ रहती थी। पंडित जी से मैंने टूटे-फूटे उच्चारणों में विष्णुसहस्रनाम सीखकर उसका पाठ करना शुरू कर दिया। तेरह-चौदह बरस की उम्र में मुझे थोड़ा-थोड़ा पढ़ना आ गया था। ससुराल में मैंने अपनी ननद और देवरानियों को भी पढ़ाना शुरू किया। हमारे यहां 'हंतकार' लेने के लिए जो ब्राह्मण कन्या आती थी उसे मैं अक्षरज्ञान कराने लगी और साथ ही सीना-पिरोना सिखाने लगी। साथ ही देखा-देखी दूसरी लड़कियां भी आने लगीं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मेरे माता-पिता ने जब घर बदला तब मुझे एक कमरे में एक मंडरिया दिया गया। वह खेल-खिलौना रखने के लिए था। मेरी इच्छा उसमें भगवान का चित्र लगाने की हुई इसलिए मैंने उसमें एक कील ठोंकी, मां ने देख लिया और अत्यंत करुण मुद्रा में कहा, "ऐ बाई ! यो खीलो क्यों ठोक्यो, चूना में खरुट उतर बासी न ?" शब्द इतने करुण स्वर में कहे गये थे कि हृदय पर अंकित हो गये। मैं समझ गई कि दीवार और लकड़ी को भी दुख हो सकता है।

पांच—

वर्धा से विवाह के लिए पत्र आने लगे। उस समय मैं कोई साढ़े आठ वरस की होऊंगी। विवाह का निश्चय होने पर हम सब लोग वर्धा ही आ गये। विवाह खूब ठाठ-बाट से हुआ। वर पक्ष की ओर से महफिल सजाई गई, नाचने-गाने वाली भखतणें भी बुलाई गई थीं। बच्छराजजी ने पोते के विवाह में दिल खोलकर खर्च किया। आतिशबाजी भी खूब छोड़ी गई।

फेरे के बाद प्रथा के अनुसार मुझे सारे जेवर पहनाये गये। विवाह घूंघट में ही हुआ था। यह आज से कोई सत्तर बरस पहले की बात है। उस समय की और आज की सामाजिक स्थिति पर विचार करती हूं तो देखती हूं आज जिन प्रथाओं को हम कुरीतियां कहते हैं उस समय वे रिवाज अच्छे समझे जाते थे !

एक बात का अफसोस मुझे आज भी रह-रहकर होता है। वह यह कि मेरी सास की सास पूज्य सद्दीबाई जी मेरे विवाह के दो साल पहले ही संसार से विदा हो गई थीं। मेरी सगाई उन्हीं की सम्मति से हुई थी, वे जल्दी ही पोते की बहू का मुंह देखना चाहती थीं। मैं उनके पैर पकड़कर आशीर्वाद नहीं ले पाई।

छः—

विवाह के बाद मैं माता-पिता के साथ जावरा लौट गई। पर फिर जल्दी ही वर्धा से पत्र आने लगे कि बीनड़ी को भेजो। बच्छराजजी के यहां गणगौर पूजी जाती थी। विवाह के बाद पहले वर्ष गणगौर की पूजा वधू को करनी पड़ती है। बच्छराजजी की इच्छा का ख्याल करके पिताजी ने मुझे वर्धा भेज दिया।

ससुराल में मेरा यह पहला ही आना था। मन पर माता-पिता के धार्मिक संस्कार की छाप थी। जब देखा कि यहां टोंटी का पानी पिया जाता है तो मुझे बहुत क्षोभ हुआ। वहां तो टोंटी के पानी का छींटा लगने से स्नान करना पड़ता था और उसे यहां पीते हैं ? पानी भरने वाला जाट था। मैं तो उसे ब्राह्मण समझे थी। जब पता चला तो सोचा, मां के पास लौटकर पंचगव्य लूंगी। यहां का खानपान भी जाजोदियों जैसा स्वादिष्ट कहां था ? तुअर की दाल मुझे भाती थी, फिर भी खाते समय जावरा की याद आती रहती।

कुछ दिनों बाद होली आई। होली के दूसरे दिन रंग खेला जाता है। नये वर-वधू को भी आपस में रंग खेलने के लिए कहा जाता है। मेरी सासूजी हम दोनों को रंग खेलते देखना चाहती थीं। उन्होंने रंग के बर्तन भराकर रख दिये। हम दोनों को बुलवाया गया। जमनालाल जी के हाथ में पिचकारी दी गई और मेरे हाथ में गिलास। हम दोनों आमने-सामने कोई आठ-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दस कदम की दूरी पर खड़े थे। दोनों चुपचाप पत्थर की मूर्ति की तरह खड़े रहे। कौन रंग उछाले ? सासूजी हम दोनों से बार-बार कहतीं, पर हम तो जैसे चेतना-शून्य हो गये थे। सासूजी जमनालाल जी से कहतीं, "अरे एक पिचकारी तो छोड़ दे !" और मुझसे कहतीं, "तू ही एक गिलास उछालकर सगुन कर दे।"

सात—

ढाई महीने ससुराल रहकर मैं जावरा लौट आई। मैं जावरा पहुंची और फिर पत्र आने शुरू हो गये कि बीनणी को लेने आदमी भेजते हैं। ऐसी चर्चा सुनकर मैं तो सन्न रह जाती। अंत में ससुराल से लेने के वास्ते लोग आ ही गये। मैं सोई ही थी, माँ मेरे पास आकर लेट गई और प्यार से हाथ फेरते हुए कहने लगी, "जानी तेने लेने वाला तो आगा।" मैंने सुन तो लिया, पर आंख वन्द किये चुपचाप पड़ी रही। जी भीतर-ही-भीतर घुटने लगा। बचपन में मां की ओर आकर्षण होता ही है। ससुराल मुझे जेल जैसा लगता था। मैंने देखा था कि राधा विधवा होने के कारण मां के पास रहती थी। मैं भी विधवा होती तो मां के पास रह सकती। विधवा किसको कहते हैं इसे मैं थोड़े ही जानती थी।

दुवारा ससुराल आने पर सासूजी मुझे बड़े लाड़-चाव करने लगीं। मेरे लिए तरह-तरह के गहने बनवातीं, बंवई से मोती और कपड़े मंगवातीं, गोटा-किनारी भी खरीदतीं। वर्धा से जो भी आदमी बंबई जाता उसके साथ सामान मंगवाने की फेहरिस्त जाती।

मां से मैंने थोड़ा-बहुत सीना-पिरोना सीख लिया था। दस बरस की बहू सीना-पिरोना जाने, यह सासूजी के लिए खुशी की बात थी। उसी समय वर्धा में प्लेग फैल गया। बच्छराजजी सपरिवार बगीचे में रहने के लिए चले गये। आज जहां मगनवाड़ी है वहीं हमारा बगीचा था। बगीचे में जाने के तीसरे दिन ही सासूजी को प्लेग हो गया और वे चल बसीं। मुझे मां की याद और ज्यादा आने लगी। इधर जो स्त्रियां बैठने आतीं वे मुझसे कहतीं पल्लो लियो कर, सासूजी, सासूजी कहकर रोजे। मृत्यु के बाद जब लोग 'बैठने' आते हैं तब घर की स्त्रियां मरे हुए का नाम लेकर रोती हैं। ना रोने पर टीका-टिप्पणी भी होती है। मैं तब दस बरस की जब थी; रिवाज का रोना क्या जानूं ?

इधर मेरे पैर में नारू निकल आया। मेरा पैर सूज गया। मेरी यह हालत हो गई कि पाखाना के लिए भी नौकर गोदी में उठाकर ले जाता। पीड़ा में पीहर की याद और तीव्र हो उठी थी। मैं मन ही मन रोती रहती। जमनालालजी और बच्छराजजी को ज्ञात हो जाता कि मैं पीहर जाने के लिए दुखी हूं तो वे मुझे भेज देते। पर मैं क्या जानूं कि कैसे कहा जाय और यह पता भी कहां था कि कहने से कुछ हो भी सकता है।

आठ—

जमनालालजी पांच बरस की उम्र में गोद आये थे। दादीजी का गोद लिया हुआ जवान बेटा शादी के बाद ही चला गया था इसलिए जमनालालजी पर उनका प्यार होना स्वाभाविक ही था। दैवयोग कि उनके दस-ग्यारह वर्ष के होते-होते दादीजी का स्वर्गवास हो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गया। इससे जमनालालजी अनमने से रहने लगे। विधवा मां ने दादीजी का स्थान लेने की पूरी कोशिश की पर दादीजी जैसी प्रौढ़ता तो कठिन थी। दो वर्ष बाद हमारा विवाह हुआ, पर विवाह के दस महीने बाद ही मां का भी देहान्त हो गया।

विवाह के अवसर पर जमनालालजी के जन्मपिता कनीराम जी सपरिवार मारवाड़ से आये थे। उनके तीन पुत्र थे। पहले माधवलालजी। वे बच्छराजजी के पास वर्धा में काम सीख रहे थे। दूसरे जमनालालजी, और तीसरे बद्रीप्रसादजी जो विवाह के समय वर्धा आये हुए थे। मेरे विवाह के बाद वर्धा में ही उन्हें मियादी बुखार हुआ और ९ दिन के बाद ही बद्रीप्रसादजी चल बसे। कनीरामजी के लिए वर्धा में पानी पीना तक असह्य हो गया। कनीरामजी की मानसिक स्थिति को देखकर माधवजी उन्हें लेकर मारवाड़ चले गये।

दादी और मां के बाद बच्छराजजी ही घर का सारा भार सम्हालने लगे। जमनालालजी सोलह-सत्रह वर्ष के रहे होंगे तभी बच्छराजजी का भी स्वर्गवास हो गया। अब परिवार में हम दोनों ही रह गये। बड़े भाई माधवलालजी मारवाड़ से लौटकर फिर से कारोबार देखने लगे। वे बच्छराजजी के हाथ के नीचे व्यावहारिक शिक्षा पा चुके थे। थोड़े समय बाद उन्हें भी मियादी बुखार आया और वे भी नौ दिन में चले गये। कनीरामजी पर तो माधवजी की मुत्यु से जैसे वज्रपात ही हो गया। जमनालाल ने बहुत चाहा कि माता-पिता उनके साथ वर्धा चलकर रहें पर कनीरामजी के स्वाभिमान को यह कैसे मंजूर होता।

इन घटनाओं ने जमनालालजी को और भी सजग बना दिया। वह मौत को सदा सिर पर देखने लगे। उन्होंने अपने जीवन में कई बार मृत्यु-पत्र बनाये। एक बार तो उन्होंने अपने कमरे में तथा अन्य कई जगहों पर लिखवाकर टांग रखा था—'एक दिन मरना अवश्य है, सदा अन्याय से बचो।'

नौ—

जमनालालजी के मामा बिरदीचन्द पोद्दार वेदांती थे। वे अपने बगीचे में जाकर ध्यानादि किया करते थे। उन्हींकी तरह जमनालालजी भी शिवजी की पूजा अपने बगीचे में करते थे और गोमुखी में माला डालकर जाप करते थे। कमरे में योगियों के चित्र भी टंगे रहते थे। बाद में मेरे कहने से उन्होंने पूजा का सामान बगीचे से घर मंगवा लिया। वे स्नान करके पूजा में बैठते और मैं चांदी की कटोरी में उनके दाहिने पैर के अंगूठे को धोकर उस जल को पी लेती थी।

जमनालालजी को मेरा उनकी जूठी थाली में भोजन करना और अंगूठे को धोकर पानी पीना असह्य था। जूठी थाली में भोजन करना तो कुछ समय के बाद बंद कर देना पड़ा, पर मेरे आग्रह के कारण पादोदक ग्रहण करना चलता रहा। जब वे जेल आदि जाते तो उनका पादोदक शीशी में भरकर रख लेती थी और उसके समाप्त होने पर जब जेल में मिलने जाती, दाहिने पैर का अंगूठा धोकर ले आती। एक बार हम लोग चित्रकूट गये थे, तब मैंने वहां की पावन मिट्टी और चरणोदक को मिलाकर पेड़े बना लिए थे। आज भी ये पेड़े मेरे पास रखे हैं। प्रतिदिन स्नान के बाद एक कण मुंह में रख लेती हूं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मेरे पास कामकाज तो कुछ होता नहीं था, बाल-बच्चे भी बाद में हुए। इसलिए जमनालालजी ने मुझे पढ़ाने के लिए एक मास्टरनी रखी। पढ़ाई मराठी की होती थी। बहुत कोशिश करने पर भी मैं मराठी में बहुत प्रगति नहीं कर पाई। इसके बाद एक पारसी बहन रखी गई। उसे मेरा सामान्य ज्ञान बढ़ाने का काम सौंपा गया। वह मुझे अखबार पढ़कर सुनाती। नई-नई बातें व शब्द सुनने को मिलने लगे। मुझे तो केवल सुनना पड़ता था, इसलिए इसमें मेरी रुचि भी बढ़ने लगी। उन दिनों मैं परदे में रहती थी। जहां हम रहते थे वहां चौगान में व्याख्यान होते रहते थे। वही अब गांधीचौक कहलाता है। जैसे-जैसे घर पर बड़े-बड़े लोगों का आना-जाना बढ़ा और मैं भी बाहर आने-जाने लगी, तब मुझे बहुत-सी बातों का ज्ञान हुआ। जमनालालजी मुझे अपनी डाक पढ़ने के लिए भी कहते रहते, लेकिन वाचन का अभ्यास नहीं था। बाल-बच्चे होने पर तो पढ़ाई का सिलसिला टूट ही गया।

साबरमती आश्रम में मैं सभी कक्षाओं में जाती। क्या सितार की, क्या गीता की और क्या बापू की ! वैसे मैं प्रथमा की परीक्षा में भी बैठी। उसमें फैल हो गई। फिर मध्यमा में भी बैठी, उसमें भी फेल हुई।

दस—

सद्दीबाई धार्मिक वृत्ति की थीं। उन्होंने अपने जीवन में धर्म-कार्यों में दिल खोलकर खर्च किया और अंत समय में अपनी रकम से लक्ष्मीनारायणजी का मंदिर बनवाने के लिए कहकर सिधारीं। उनका एक लाख रुपया दूकान में जमा था। जमनालालजी को यह बात याद थी। उन्होंने मंदिर का काम शुरू करने के लिए दादाजी से मंजूरी ली और काम शुरू हो गया। जैसे-जैसे मंदिर का काम बढ़ने लगा, बच्छराजजी उसमें दिलचस्पी लेने लगे थे।

सद्दीबाई जी ने मंदिर के लिए एक लाख रुपया छोड़ा था, लेकिन काम शुरू होने पर हम सब उसमें इतने लीन हो गये कि लगभग पौने दो लाख रुपया खर्च हो गया। भविष्य में मंदिर का खर्च अच्छी तरह चलता रहे, इसलिए मंदिर के लिए ट्रस्ट बनाया गया और मंदिर के नाम पर काफी जायदाद कर दी गई। ट्रस्ट अब तक चल रहा है।

बच्छराजजी को दमे की बीमारी थी। मंदिर की प्रतिष्ठा के बाद एक दिन उनको अचानक हिचकी आई। प्राण मंदिर की संध्या आरती के समय निकले।

उनकी मृत्यु के बाद गरीबों को खिलाना शुरू हुआ जो बारह दिन तक चलता रहा। बारहवें दिन जातिवालों को जिमाया गया। उस जमाने में इस तरह का भोग प्रायः सभी जगह होता था। बहुत से लोग मिठाइयां लोटे में और बहनें घाघरों में छिपाकर ले जाती थीं। एक बहन के घाघरे का तो लड्डुओं के बोझ से टांका टूट गया। चालीस लड्डू गिरे। जमनालालजी को मालूम हुआ तो उनके दिल पर बड़ा भारी असर हुआ। उन्होंने सोच लिया कि खाने और दक्षिणा लेने वाले में दीनता आती है और देने वाले में अहंकार। इसी कारण जब उनके पिता कनीरामजी की मृत्यु हुई तो उन्होंने जीमने आदि का कार्यक्रम नहीं होने दिया। जमनालालजी ने कनीरामजी के नाम पर सीकर में हरिजनों के लिए एक पाठशाला खुलवा दी। यह कनीराम हरिजन पाठशाला आज भी अपना काम कर रही है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ग्यारह—

तब मेरी उम्र तेरह-चौदह वर्ष की रही होगी, एक दिन हमारे यहां एक मेहमान आये। उनकी कमर में सोने की तागड़ी थी। मैंने सोचा, अपने यहां तागड़ियां पड़ी हुई हैं, जमनालालजी भी पहनें तो अच्छा। उन्होंने कहा सोना भगवान का रूप है, उसे कमर के नीचे कैसे पहनूं। आगे चलकर अग्रवाल महासभा में जमनालालजी ने तागड़ी के बारे में भाषण दिया। तब से बजाज परिवार में तागड़ी बनवाने की बात भी समाप्त हो गई।

तागड़ी ही क्या, एक दिन तो ऐसा आया कि सारे गहनों का त्याग कर देना पड़ा। बापू ने बहनों से कहा कि जेवर मत पहनो। जमनालालजी ने मुझे पत्र में बापू का यह आदेश लिख भेजा। यह बात रूबरू कहते तो मैं शायद उनसे बहस भी कर बैठती। पर चिट्ठी तो वेद-वाक्य जैसी थी। चिट्ठी सामने थी और मैं एक-एक गहना उठाकर रखती जा रही थी। मारवाड़ी समाज में सभी स्त्रियों को पैर में चांदी की कड़ी तो पहननी ही पड़ती है। कड़ी निकालने पर लोगों को अचरज हुआ। कई बहनें मुझे बिना कड़ी पहने देखने को भी आईं।

कुछ दिनों बाद मंदिर में चोरी हो गई। बापू को फोन किया गया तो उन्होंने कहा कि अगर भगवान जेवरों से राजी होते तो चोरी क्यों होती, भगवान को जेवर पहनाना बंद करो। पुजारियों को समझाया गया और भगवान को जेवर पहनाना बंद कर दिया गया।

बारह—

वर्धा में अग्रवाल महासभा का अधिवेशन होने वाला था। जमनालालजी ने अपना जो भाषण तैयार किया था उसमें पर्दा-प्रथा का विरोध था। जमनालालजी जो कुछ कहते थे उसकी शुरूआत घर से करते थे। हमारी स्थिति बड़ी विचित्र हो गई। घूंघट का संस्कार पुराना था। राजस्थान में घूंघट प्रतिष्ठा, सभ्यता और कुलीनता का चिह्न माना जाता था।

एक दिन जमनालालजी ने हमसे कहा, "आपणे घर में घूंघट छोड़नो है, शुरूआत काकाजी (कनीरामजी) से करनी है। हम उनके पास कैसे जातीं ? सुनकर पसीना-पसीना हो गई। किसी तरह मैं अपनी देवरानी (गंगाबिशन बजाज की पत्नी) के साथ उनके पास गई। उन्होंने हमको आशीर्वाद दिया, "सुखी रहो बेटा।" वे भी पसीने से तर हो गये।

इसके बाद माथे पर बोर लगाना छूटा और घाघरे भी छूटने लगे। चार सौ कलियों तक का घाघरा तो मैं पहन चुकी हूं। पूरी तरह घूंघट छोड़ने में बहुत दिन लगे। अहमदाबाद कांग्रेस के समय भी कुछ घूंघट था। पूरी तरह तो वह तब छूटा जब हम साबरमती आश्रम में रहने लगे। सन् तैंतीस में मुझे कलकत्ता के मारवाड़ी महिला सम्मेलन में अध्यक्षा बनाया गया। उस समय बापू ने घूंघट-प्रथा के बारे में पत्र लिखकर बड़ा सुंदर संदेश दिया था। उसके अंतिम शब्द इस प्रकार हैं : "क्या सीता घूंघट खींचकर रामजी के साथ जंगलों में भटकी होंगी ? सीता से अधिक पवित्र स्त्री जगत में कभी हुई है···पर्दा तोड़ो धर्म रखो।"

मैं मानती हूं कि पर्दा छोड़ना साहस की बात है। उससे दिल तथा दिमाग खुल जाता है। किंतु सुधार की सार्थकता तभी है जब वह हमको ऊंचा उठाये।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तेरह—

जमनालालजी तो स्वदेशी कपड़ा पहनते थे। पर जब गांधीजी नागपुर कांग्रेस के समय वर्धा आये तब मैं भी मोटी साड़ी पहनकर कांग्रेस में गई। जब महादेव भाई ने बताया कि वह खादी नहीं है तब बात मेरी समझ में आई। कांग्रेस से लौटने पर मैंने कुछ सूत कामठी भिजवाया और खादी बुनवाकर मंगवाई। जो थान बुनकर आया वह पनहे में छोटा था, मोटा भी था; पर उसे देखकर जो खुशी हुई उसका वर्णन करना कठिन है। छोटा पनहा होने के कारण बीच में जोड़ लगाया गया और उसे हल्दी में रंगकर पहना। खादी की एक ही साड़ी थी। रात को पुरानी साड़ी पहनकर सोती और सुबह नहाकर फिर खादी की साड़ी पहन लेती। फिर अहमदाबाद से खादी का एक थान मंगवाया। अब मेरे पास दूसरी साड़ी हो गई। जो कपड़ा बच गया था उसके कपड़े बच्चों के सिलवा दिये।

जब खादी पहनना शुरू किया था तब हमारे यहां घूंघट था। मोटी खादी के कारण घूंघट में से देखने में बहुत कठिनाई होती थी। बापू से पूछा तो बापू ने कहा, "खोजे जाति की औरतों की तरह आंखों की जगह जाली लगवा लो।" बापू ने यह बात विनोद में कही थी, बड़ी हंसी आई।

बाद में हम अहमदाबाद कांग्रेस में गये। वहां खादी प्रदर्शनी हुई थी। मैंने वहां जी भर-कर खादी खरीदी। किंतु बहुत अधिक सोमन हो जाने से वह गट्ठा कहीं छूट गया। जमनालालजी ने सुना तो कहा, "जो ज्यादा लोभ करते हैं उन पर ऐसी ही बीतती है। अच्छा ही हुआ। जो ले गया है वह भी खादी पहनेगा। खादी का ही प्रचार होगा।"

चौदह—

हम लोग बंबई गये हुए थे। पहले-पहल बापू के दर्शन मणि भवन में हुए। वे चर्खा कात रहे थे। वर्धा जाकर मैंने सासूजी से कहा कि मुझे कातना सिखा दो। मैंने एक चर्खा बनवाया। सात दिन में मैं सूत कातना सीख गई। मन होने लगा कि दूसरों को भी सिखायें। धीरे-धीरे घर पर साठ चर्खे इकट्ठे कर लिये और कताई का वर्ग ही शुरू कर दिया।

पहले-पहल सूत की कुकड़ियां निकालकर बापू के पास भेजीं। उन्होंने लिख भेजा कि सूत को लपेटकर आंटी बनानी चाहिए। तब वैसा करने लगी। सूत के ढेर लग गये। कुछ सूत कामठी बुनने के लिए भेजा। बचा हुआ सूत बाद में विनोबाजी के पास भेज दिया।

सूत टूटता भी बहुत था, उसे जमा करती रहती। इससे तकिये और मसनद भरवाये। लोग उत्साह तो दिखाते थे, पर खादी शास्त्र का अभाव होने से अच्छी तरह सूत कातकर कपड़ा बुनवाने में कठिनाई थी। मुझे अनुभव हुआ कि कताई के काम में मंदता का कारण पूनी की भी फैशन है। अच्छी साफ पूनी के बिना कातने वाला ऊब जाता है। जब से मैं बजाजबाड़ी की खेती की ओर ध्यान देने लगी तब से इसका भी ध्यान रखती हूं कि पूनी के लिए अच्छे किस्म की कपास बोई जाय और उसे स्वयं और बच्चों से चुनवाया जाय। मुझे तो ऐसे काम में प्रार्थना से भी अधिक आनंद आता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पन्द्रह—

कांग्रेस के सभासद बनाने की बात सामने आई तो मैं भी उसमें जुट पड़ी। बहनों को घर-घर जाकर सदस्य बनाना शुरू कर दिया। मेरे इस काम से बहनों में थोड़ी घबराहट फैली। वे मुझे आते देखकर दरवाजे बंद कर लेतीं और कहलवा देतीं कि घर पर नहीं हैं। सबसे अधिक सदस्य हरिजन मोहल्ले में बने। संस्थाओं में तो हरिजनों के साथ उठना-बैठना, खाना-पीना होता था, पर घर जाकर स्वच्छता आदि के संस्कारों के कारण आज भी इसमें कुछ कठिनाई महसूस होती है।

इसी समय विदेशी कपड़ों की होली की बात सामने आई। घर में, दूकान में, मंदिर में सब जगह विलायती कपड़े थे। जमनालालजी से सलाह की। कपड़ों पर से जरी, गोटा किनारी फाड़-फाड़ कर निकाली गई। मंदिर की पोशाकें भी निकालीं। जहां जो विलायती कपड़ा दीख पड़ा निकाला। घर के कपड़े, दूकान के कपड़े, विवाह-शादियों के अवसर पर वर के लिए तैयार किये हुए कपड़े और गनगौर के कपड़े भी निकाले गये। बच्चों ने अपनी गुड़ियों के कपड़े भी लाकर दे दिये। यहां तक कि जमनालालजी के विवाह के समय की पगड़ी बागा आदि शकुन के कपड़े भी निकाले गये। मांगलिक वस्त्रों को होली में होमते हुए झिझक तो हुई पर बाद में मन को पक्का कर लिया। विवाह के समय जो छत्र लगाया जाता है उसे कैसे जलायें? किन्तु मैंने उसे भी अंत में मगनबाड़ी के कुएं में सिरा दिया।

होली के दिन सब कपड़ों को इकट्ठा करके जुलूस निकाला गया। गांवों के लोगों ने भी अपने-अपने कपड़े लाकर डाले। होली में जरी के भी बहुत सारे कपड़े थे। होली जल जाने के बाद उसमें से करीब ढाई सेर चांदी निकाली गई।

होली की हवा बच्चों तक में फैल गई। मेरी बच्ची ओम उस समय डेढ़-दो वर्ष की थी। वह भी अपने शरीर के वस्त्रों को, "आ तो खादी कोनी आ तो खादी कोनी" कहकर फाड़ती रहती थी।

सोलह—

१८ मार्च, १९२३ की बात है। जबलपुर में कुछ स्वयंसेवक राष्ट्रीय झंडा फहराते हुए छावनी की ओर बढ़ रहे थे। महात्माजी के कारावास-दिवस पर यह जुलूस निकला था। पुलिस ने उसे उधर जाने से रोक दिया।

राष्ट्रीय सप्ताह में जलियांवाला बाग के हत्याकांड की याद में जब नागपुर में जुलूस निकला और वह सिविल लाइन में जाने लगा तब वहां स्वयंसेवकों को पीटा गया। उन्हें पकड़-कर मुकदमा चलाया गया और दो-दो महीने की सजा दी गई।

इस घटना पर विचार करने के लिए वर्धा के सत्याग्रह-आश्रम में प्रांतीय कांग्रेस-कमेटी की सभा हुई। आश्रम तब तक आज के बजाजवाड़ी के स्थान पर था, जिसे पहले घास का बंगला कहते थे। सत्याग्रह करने का निश्चय हुआ। सत्याग्रही भेजकर सत्याग्रह को जोरों से चलाने का भार जमनालालजी, बाबा साहब वेरूलकर तथा भगवानदीनजी ने लिया। १८ मई को सत्याग्रह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नागपुर से शुरू हुआ। जमनालालजी ने प्रतिदिन कम-से-कम दस आदमी तैयार करने की जिम्मेदारी अपने ऊपर ली। उस समय स्वयंसेवक तैयार करना बड़ा कठिन था। अगर पुरुष और लड़के तैयार हो जाते तो स्त्रियां और मातायें रोकतीं। इतनी कठिनाइयां होते हुए भी जमनालालजी ने काफी स्वयंसेवक तैयार किये। पर थोड़े ही दिनों में जमनालालजी स्वयं गिरफ्तार हो गये और उन्हें १८ महीने की सजा तथा तीन हजार रुपये का जुर्माना हुआ।

उनकी यह पहली गिरफ्तारी थी। इससे वर्धा-भर में सन्नाटा छा गया। उस समय तक जेल के बारे में लोगों में यही मान्यता थी कि वहां तो चोर, डाकू और खूनी अपराधी ही जाते हैं और जेल में भयानक कष्ट दिये जाते हैं। जेल जाने वाला समाज की नजरों में गिर जाता था। देशभक्ति में भी लोग जेल जा सकते हैं, इसकी कल्पना जनता को उस समय कहां थी? इसलिए जमनालालजी के जेल जाने की बात से घर के नौकरों-चाकरों तथा गांव के लोगों में हाहाकार मच गया।

जुर्माना न देने के कारण हमारी मोटर और घोड़ागाड़ी जब्त कर ली गई। पर उनके लिए सारे मध्यप्रदेश में कोई बोली बोलने वाला न मिला। अंत में मोटर को सौराष्ट्र में ले गये। सौराष्ट्र तब काठियाबाड़ कहलाता था और वहां बहुत छोटे-छोटे राज्य थे। किसी एक राज्य के अंग्रेज अधिकारी को वह मोटर कुछ सौ में बेची गई।

जमनालालजी की गिरफ्तारी के बाद सत्याग्रह का काम सरदार वल्लभभाई पटेल ने सम्हाला। चारों ओर से जेल जाने के लिए लोग आने लगे। कुछ स्त्रियों के साथ बापूजी के कहने से कस्तूरबा और मणिबहन पटेल सत्याग्रह के लिए पहुंचीं। यह सत्याग्रह बड़ा सफल रहा। सार्वजनिक रूप से किया गया यह पहला सत्याग्रह कहा जा सकता है। जब जमनालाल जी को १८ महीने की सजा हुई तो राजगोपालाचारी ने कहा कि आज वर्धा ऐसा लग रहा है मानो राम वनवास गये हों।

अंत में सत्याग्रह की विजय हुई और गोकुल-अष्टमी के दिन सबके साथ जमनालालजी जेल से छूटे। गांव-भर में आनंद की लहर दौड़ गई। लोग सड़कों पर उत्साह से इधर-उधर घूमने लगे और कहने लगे, 'कृष्ण जन्मला, आणि सेठजी सुटले।'

यद्यपि जमनालाल जी को 'ए' श्रेणी में रखा गया था, तथापि उन्होंने सबके साथ 'सी' श्रेणी का खाना खाया था। उनके जीवन में यह पहला ही अवसर था, जब उन्होंने बिना घी-दूध के केवल ज्वार की रोटी खाई और इतना कष्ट उठाया। इसका शरीर पर ऐसा परिणाम हुआ कि लोगों के लिए उनको देखना भी कठिन हो गया। चर्बी सूख गई थी। कोमल और सुंदर चेहरे पर लाली के बदले कालिमा छा गई थी। दाढ़ी बढ़ गई थी और शरीर सूखकर कांटा हो गया था। उन्होंने जब घर के कपड़े पहने तो ऐसा लगा मानो किसीके मांगे कपड़े पहने हों।

सत्रह—

मनुष्य-मात्र हरि के जन! बापू के इन विचारों को सुनने के बाद जमनालालजी को लगा कि वर्धा का लक्ष्मीनारायण मंदिर हरिजनों के लिए खोल दिया जाय। लेकिन मंदिर-जैसी संस्था पर तो समाज का हक होता है। पांच वर्ष तक मंदिर-कमेटी के लोगों को समझाया पर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वे तैयार नहीं हुए। अंत में जमनालालजी ने आग्रह किया कि मंदिर हरिजनों के लिए खोल दिया जाय।

तरह-तरह की बातें होने लगीं शहर में—सुबह हरिजन-प्रवेश होगा, मंदिर में डंडेबाजी होगी, बांसों से स्वागत होगा, वगैरा। मैं कुछ घबराई। जमनालालजी से कहा—"लोग बांसों से मारेंगे, आप ही सबसे लंबे हो त आपके ही सिर में लगेगी।" जमनालालजी बोले—"डरने की क्या बात है, अच्छा कार्य तो करना ही है, फिर उसकी कुछ भी कीमत क्यों न देनी पड़े।"

दूसरे दिन मंदिर में हरिजन-प्रवेश हो गया। थोड़ी-बहुत ऊधमबाजी हुई। लेकिन जैसी आशंका थी, वैसा नहीं हुआ। दो-चार आदमी डंडे वगैरा लेकर आये थे और उन्होंने विरोध भी किया। लेकिन बाद में तो इन आदमियों का भी ऐसा हृदय-परिवर्तन हुआ कि बस!

जोशीजी मंदिर में कोठार का काम देखते थे, लेकिन जब मंदिर में हरिजनों का प्रवेश हुआ तब उन्होंने बड़े दुःख के साथ मंदिर को छोड़ दिया। खादी तो पहनते रहे, लेकिन गांधीजी की भरपेट बुराई करते रहे।

अठारह—

नागपुर के झंडा-सत्याग्रह के बाद हम लोग साबरमती-आश्रम में रहने के लिए गये। जमनालालजी ने सोचा कि आश्रम में रहने से बालकों को विकास के लिए अच्छा शिक्षामय वातावरण मिलेगा, हाथ से काम करने का अभ्यास होगा और मैं भी कुछ घर-गृहस्थी के काम सीख सकूंगी।

पीहर में तो करती ही क्या, छोटी थी और वर्धा में सारे काम नौकर ही करते थे। इस तरह मेरे जीवन में व्यवस्था आना रह गया था। जमनालालजी भी मेरी आदतों और कमजोरियों को जानते थे और इस कारण कुछ परेशान भी थे। मेरी ननद केशरबाई तो हमेशा ही विनोद में कहा करतीं—"राम मार्यो विधाता भूलगो। तनैं—मोट्यारा की जगां लुगाइ वणा दी।" सारी बातों का विचार करके बापू ने आश्रम की हद के बाहर, लाल बंगले के पास एक मकान दिया और कहा कि अलग मकान में रहने से जानकीदेवी सारे नियमों की पाबंदी से बच सकेगी और निकट संपर्क के कारण वातावरण का लाभ मिलेगा और धीरे-धीरे नियमों के पालन की ओर बढ़ेगी।

हमने सुना था कि आश्रम में तो सांप-बिच्छू आदि किसी भी प्राणी को मारना मना है। वहां कुत्ते बहुत थे। हर क्षण कुत्तों से परेशानी रहती थी। रात को बरामदे में हम सब और पांचों बच्चे जमीन पर ही सोते थे। सबके लिए खटिया का मिलना कठिन था। सांप-बिच्छू का डर तो बना ही रहता था। सुबह की प्रार्थना में जाते समय हम बच्चों को कपड़े ओढ़ाकर जाते। जब प्रार्थना से लौटकर आते तो उनके पास रोगी खुजली वाले कुत्ते सोये हुए नजर आते देखकर बड़ी सूग चढ़ती।

रसोईघर को बंद करके रखने की भी हमारी आदत नहीं थी। मक्खन निकालकर तपेली में रखकर कोठार में दूसरा सामान लेने जाती कि कुत्ते आकर मक्खन ले जाते। मक्खन की तपेली देखने जाती कि गुड़ का डला दूसरा कुत्ता ले भागता। एक दिन आश्रम की वेला बहन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दोपहर का खाना-पीना निपटने पर हमारे यहां आई। आते ही उन्होंने कहा, "अब तक तुम लोगों का खाना ही बाकी है। चलो, मैं रोटी बना देती हूं।" इस पर मैं राजी हो गई। मैं बेसन पीसकर लाई, तब जाकर कढ़ी बनी। बेला बहन रोटी बनाकर जाने लगीं कि इतने में एक कुत्ता लपककर, जितनी उसके मुंह में आईं उतनी रोटियां खींचकर भाग गया। हम सब पहले दिन के भूखे थे, बची रोटियां खाकर भूख बुझाई। बेला बहन ने ये सारी बातें किशोरलाल भाई से कहीं। उन्होंने नाथजी से कहा। नाथजी ने आकर देखा कि दो कुत्ते एक कमरे में, दो दूसरे में और बाकी बरामदे में हाजिर हैं। उन्होंने छोटे-छोटे पत्थरों का ढेर इकट्ठा किया और कुत्तों पर फेंकना शुरू किया। पत्थर इस प्रकार फेंकते थे कि कुत्तों को तो चोट न आती, पर वे डर जाते। कुत्ते सचमुच इतने डर गये कि फिर आना ही भूल गये और हम भी यह सबक सीख गये। बच्चों को भी यह नया शस्त्र हाथ लग गया। बाहर से कठोरता और भीतर से नम्रता का यह गुण हमने प्रत्यक्ष देखा।

उन्नीस—

जब मैं साबरमती रहने गई तब वहां दूसरों को पढ़ते और आश्रम का वातावरण देखकर पढ़ने का मन होने लगा। जहां गीता का वर्ग चलता वहां गीता ले जाती। सितार के वर्ग में सितार ले जाती। बापूजी जब बहनों का वर्ग लेते तब वहां जाती। बापूजी रामायण आदि वर्ग-पुस्तकों में से शुद्ध लिखकर लाने के लिए कहते। मैं बड़े चाव से शुद्ध और सुंदर लिखकर बताने का प्रयत्न करती। कापियां देखकर बापूजी नंबर देते थे। वे कापियां अब भी मेरे पास हैं। लड़कियों के साथ साबरमती नदी में तैरना सीखने की भी कोशिश करती। मैं सीखने के हर स्थान पर पहुंचती। आश्रम की बहनें मुझपर सदा हंसती रहतीं और कहती रहतीं कि हर वर्ग में जानकी बहन हाजिर रहती है। पर उन उन बहनों को क्या पता कि मैं जहां की तहां ही हूं। कृष्णदास भाई गांधी ने सितार की गतें सिखाईं, हारमोनियम सिखाने का भी प्रयत्न किया, संगीत सीखने की भी कोशिश की, लेकिन मेरा हाल तो यह था कि 'आगे पाठ और पीछे सपाट।' नया पाठ लेती रहती और पिछला साफ। गीता की पढ़ाई का भी यही हाल हुआ। बहुत बरसों के बाद जब विनोबाजी की गीताई मिली तब गीता का कुछ-कुछ अर्थ मेरी समझ में आने लगा।

बड़ाई के लिए या उत्साह में मैं बापूजी से कहती कि मुझे भी कुछ काम दो। बापूजी ने कहा कि यहां काम तो बहुत है। जाओ, गोशाला में सफाई करो। मैंने दूसरे रोज से झाड़ू देनी शुरू की, पर इसके पहले मैंने झाड़ू छुई कब थी। इसलिए मुझे देखकर लड़कियां हंसतीं और कहतीं, "जाओ, जानकी बहेन, तमे तो काम वधारो छो।" इसी प्रकार रसोईघर में भी लड़कियां हंसती थीं, कहतीं, "रेवा दो, तमे रोटली वाली नाखो छो। अमे करी लेसूं।"

आश्रम में पाखाना-सफाई का काम आश्रमवासी ही करते थे। बापू ने जीवन की साधना की शुरूआत भंगी के काम से ही मानी है। जिसको इस काम से ग्लानि हो, भय हो, उसका आश्रम में रहना असंभव था। सिर्फ मेहमानों को छूट थी।

मैंने देखा कि वहां तो ब्राह्मण-पंडित सब बिना हिचक के पाखाने की सफाई करते हैं। मैं भी एक दिन हिम्मत करके गई। मन में उत्साह जो था। नाक पर साड़ी लपेट ली और चली

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गई। मैले की बालटियां बांस में डालकर दोनों ओर से दो आदमी पकड़कर खाद के गढ़े तक ले जा रहे थे। मैंने भी बांस का एक छोर पकड़ा और डरते-डरते मुंह फेरकर उसे गढ़े तक पहुंचा दिया। मैंने मैला उठाने और पाखाना साफ करने का काम कर तो दिया, पर बालटी पहुंचाने के बाद लौटकर सिर से पैर तक रगड़-रगड़कर स्नान किया और गोबर लगाकर हाथ-पैरों की शुद्धि की। पाखाना-सफाई का यह मेरा पहला ही मौका था।

बापू का यह तरीका था कि जिसके घर ठहरें उसके घर की बहनें चाहें तो बापू के लिए खाना ले जाकर दे सकती थीं। तैयार तो कस्तूरबा तथा आश्रम की बहनें ही करती थीं। खाने में बकरी का दूध, फल और खाखरे रहते थे। बापू नपा-तुला खाना खाते थे। संतरों पर अक्सर झगड़ा होता था। बापू कहते थे—तीन संतरे छीलना। पर भोजन तैयार करने की बारी जिसकी होती वे प्रायः तीन बड़े-से-बड़े संतरे और कभी-कभी चौथे की भी फांकें ले लेते और छील देते। पर बापू तो सब ताड़ लेते थे।

एक दिन तैयार की हुई थाली बापू तक पहुंचाने के लिए मैंने बा से कहा कि मैं दे आऊं। बा ने मुझे दे दी। छोटी कांसी की थाली, उसमें बकरी के दूध का कांसी का गिलास, छीले हुए संतरों का कटोरा और एक चम्मच था। ऊपर लकड़ी की पतली-सी थाली ढंकने के लिए थी। बा ने तो मेरे आग्रह पर दे दी, पर बापू तक पहुंचाने के लिए भी तो सलीका चाहिए। बापू ऊपर विनोबा के कमरे में रहते थे। कमरे तक पहुंची ही थी कि हाथ से ऊपर की ढकी हुई लकड़ी की थाली गिर गई और दो टुकड़े हो गये। मूर्खता से किये हुए नुकसान का बापू पर क्या असर होगा, यह तो सभी जानते थे, पर बा का भय मन में अधिक था। डरते-डरते बापू के पास गई और दोनों टुकड़े दिखाकर बोली, "बापू, यह तो मुझसे टूट गई।" बापू हंसे तो सही, पर बोले, "तुमसे तो उम्मीद यही थी। पर बा से क्या कहोगी?" मैं बापू की सेवा के लायक साबित नहीं हुई।

श्रीमती सरलादेवी चौधरानी बीमार थीं। उन्हें टायफाइड था। उनकी सेवा के लिए भाई जमनादास गांधी नियुक्त थे। सरलादेवी ने बापू से शिकायत की कि जमनादास भाई से उनकी सेवा होना मुश्किल है। बापू ने अपने पुत्र देवदास से कहा—"काल थी देवा तू जशे।" देवदास भाई ने कहा—"बापूजी बीजे दिवसे भारीपण शिकायत थशे। त्यारे न जवुंज सारूं।" बापूजी हंस पड़े। दोपहर को श्रीमती सन्तानम् की ड्यूटी थी। उनकी भी शिकायत हुई। यह सब देखकर सेवा करने का उत्साह मुझमें जागा। मैंने बापूजी से कहा कि मैं इनकी सेवा में जा सकती हूं क्या? बापू ने दूसरे दिन से जाने को कहा। इससे मुझे बहुत खुशी हुई। मेरे मन में, सेवा कैसे की जाती है, यह सीखने की इच्छा थी।

दूसरे दिन से मैं उनकी सेवा में हाजिर हो गई। धूप और अगरबत्ती लेकर धुपाड़े में आग रखकर मैंने उनके कमरे में सुगंध कर दी। मैं डर रही थी कि कहीं मुझे भी सेवा से हटा न दिया जाये! झाड़ू भी धीरे-धीरे दी। उन्होंने पेशाब का डब्बा बाहर रखने को कहा। मैंने उठाकर बाहर रख दिया। फिर चोटी बनाने को कहा। मैंने चोटी बनाना शुरू किया। उनके बाल बड़े लंबे थे। चोटी धीरे-धीरे की कि कहीं कोई-कोई बाल खिंच न जाय। उनको अच्छा लगा। चोटी बनाते समय रोग के जंतु मेरे शरीर में न चले जायं, इसलिए साड़ी का पल्ला नाक पर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

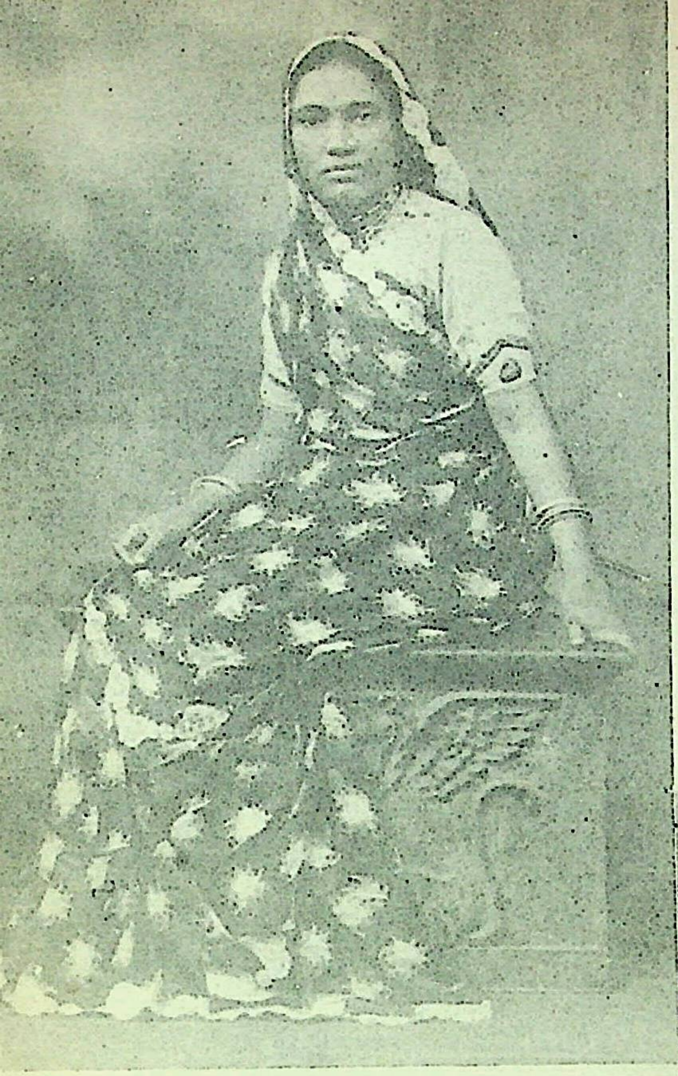

सेठानी जानकीदेवी

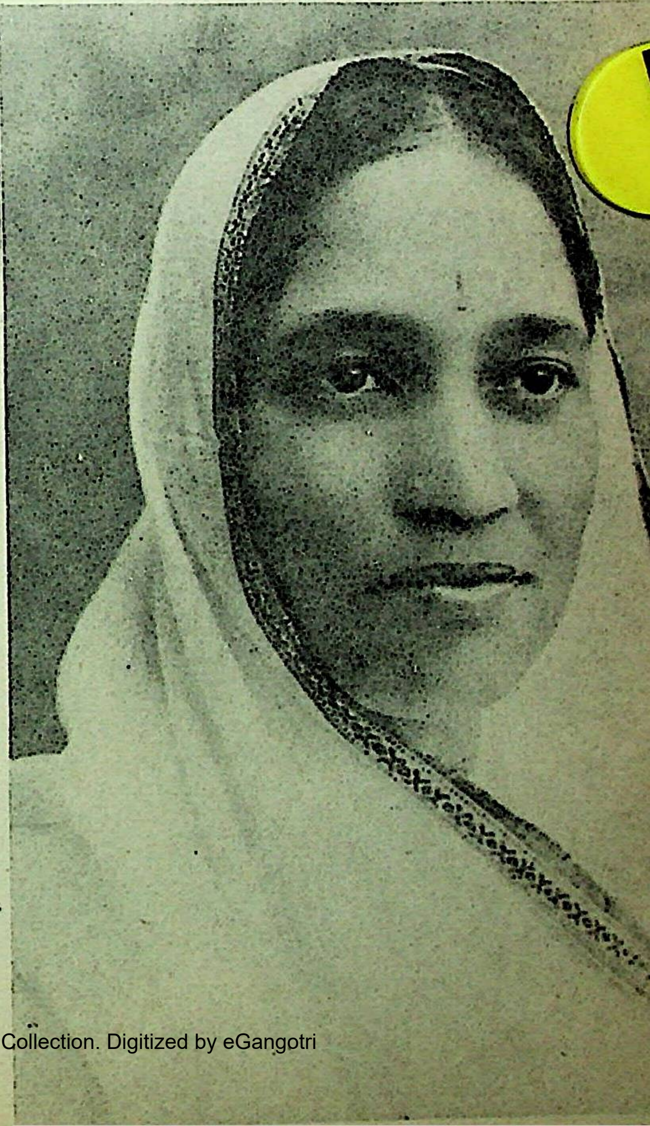

सेविका जानकीदेवी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पति के साथ
राष्ट्र-सेवा के पथ पर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बापू की छत्रछाया में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

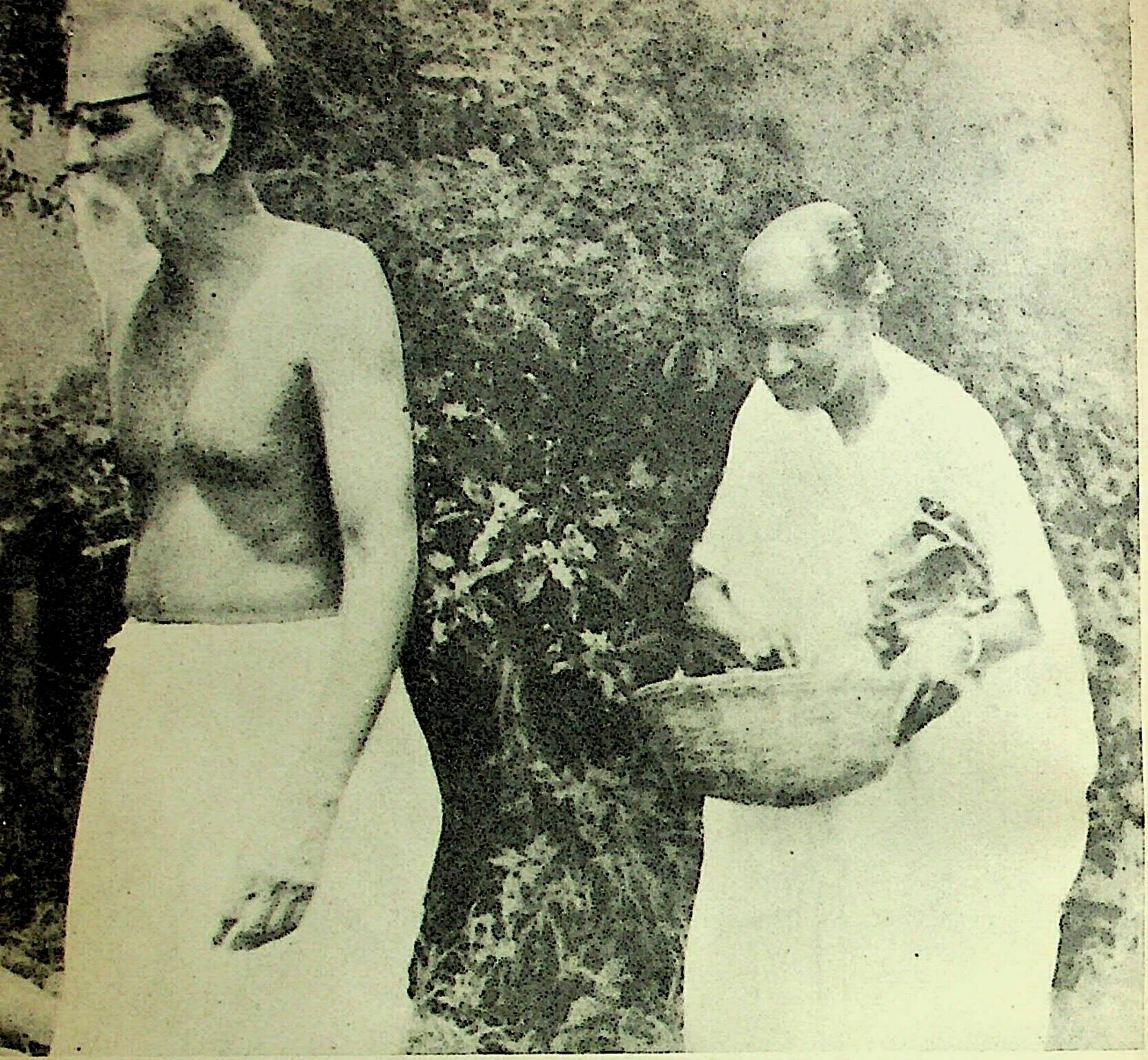

विनोबा की अनुगामिनी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हिन्द के जवाहर का स्वागत

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दरिद्रनारायण के भिक्षुक

(बांयें से) कमलनयन बजाज, जानकीदेवी, ख़ान अब्दुल गफ्फार ख़ां तथा विनोबा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

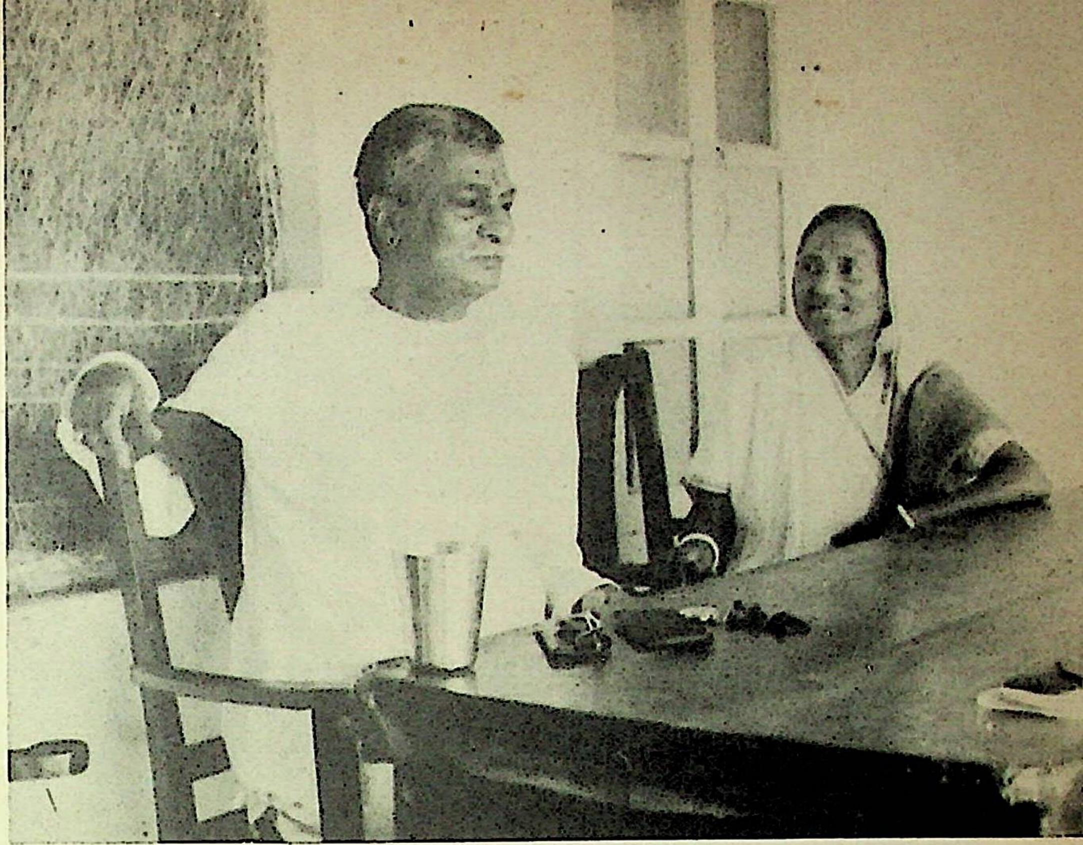

सरलता की मूर्ति राजेन्द्रबाबू का आतिथ्य

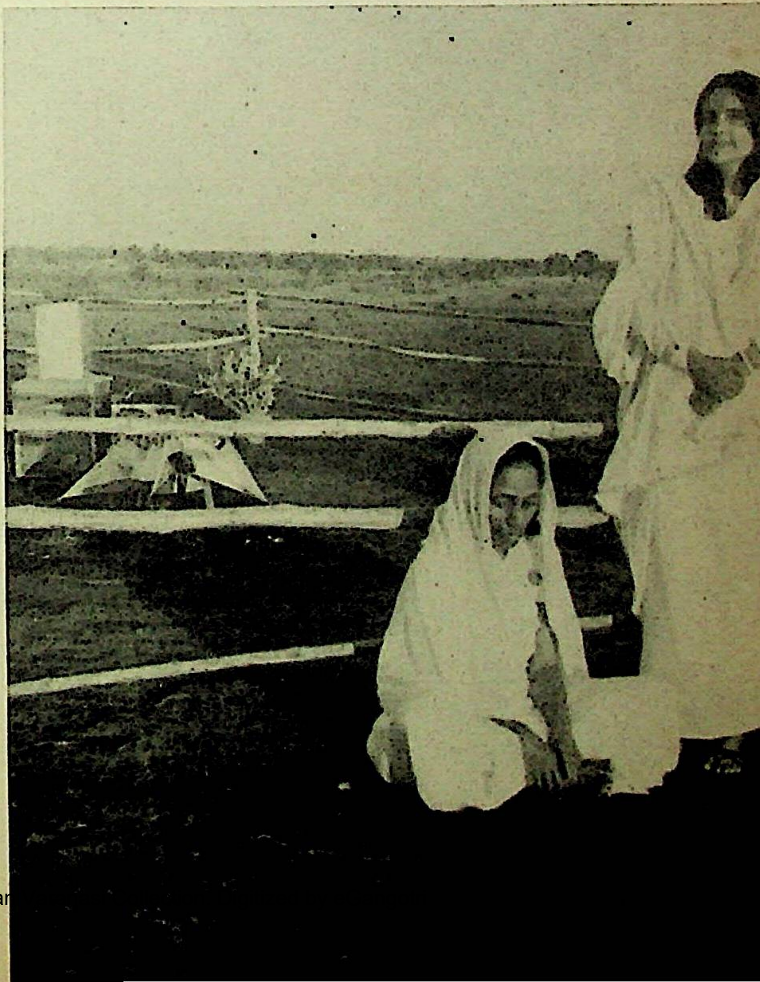

श्रीमां आनंदमयी के चरणों में

CC-0. Mumukshu Bhawan

"बाबा ने कहा है कि १०० वर्ष जी सकते हो तो बाबा और मैं १०० वर्ष जीने का नक्की करते हैं। पर हां, मेरे साथ आप सब भी १०० वर्ष जीओ।"

७ जनवरी १९७३ को ब्रह्मविद्या मंदिर, पवनार में विनोबा के दिये आशीर्वाद को स्वीकार करते हुए जानकीदेवी बजाज।

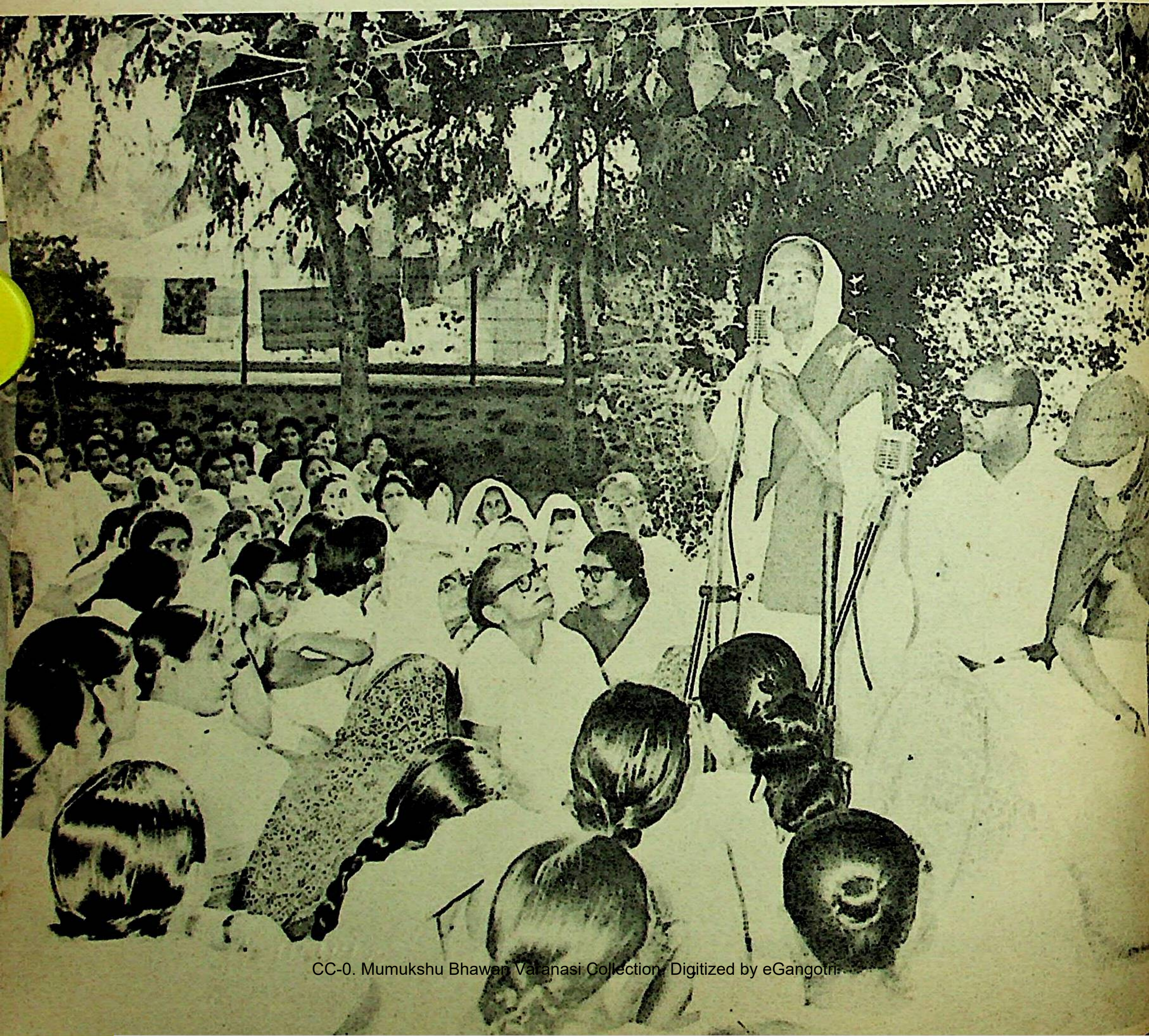

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रखना चाहती थी, लेकिन डर लग रहा था।

टट्टी-पेशाब का कमोड तो मैं बाहर रख देती, पर भंगी के हाथ का धोया गोला कमोड फिर भीतर कैसे रखूं ? इस दुविधा को मैंने गोमती बहन के सामने रखा। गोमती बहन ने कहा कि जब आप उस काम के लिए गई हैं तब वहां के कपड़े अलग रखो और घर के कपड़े अलग।

जब सरलादेवी को मालूम हुआ कि मैं जमनालालजी की पत्नी हूं तो उन्होंने कहा कि पेशाब के बरतन को बार-बार मत निकाला करो। जब टट्टी हो तो एक बार ही निकाल दिया करो। इससे मुझे खुशी हुई, क्योंकि यह काम स्नान के पहले भी हो सकता था।

एक बार साबरमती में किसी निमित्त गीता के १८ अध्यायों का पारायण हुआ। पारायण के शुरू होते ही बापू ने जो आंखें मूंदीं तो आखिर तक मूंदे ही रहे, बुद्ध भगवान की तरह, न हिले न डुले। मेरी आंख बीच-बीच में खुल जाती थीं—मैं बापू की तरफ देखती कि उनकी आंखें भी खुली होंगी। लेकिन हर बार उन्हें बंद ही पाया।

इसी तरह एक दिन सुबह की प्रार्थना में भी १८ अध्यायों का पाठ हुआ। समय की खेंच तो रहती ही थी—पूरा पाठ एक घंटे में खत्म करना था—सो एक लय से काफी तेज गति से पाठ हो रहा था। मैं भी साथ चलने के जोश में थी। प्रार्थना के बाद बापू बोले—'तमारौ उच्चारण बराबर न थी।' उस एकाग्रचित्तता में भी शुद्ध उच्चारण का ख्याल रहता था उन्हें। यह देखकर मैं चकित रह गई।

बीस—

बच्छराजजी के परिवार में संतान की औछत थी। कई पीढ़ियों के बाद हमारी पहली संतान कमला पैदा हुई थी। लोगों ने कहा कि इनके यहां तो लड़की भी होना बड़ी बात है। जमनालालजी तो लड़की की इज्जत ज्यादा करते थे। उन्होंने कमला के जन्म पर चांदी, सोना, ज़ेवर आदि नौकर-चाकरों को इनाम में बांटे। उनकी खुशी का पार न था। कमला का लालन-पालन भी बड़े लाड़-प्यार से हुआ।

उस समय की एक बात की जब याद आती है तो बड़ी हंसी आती है। कमला को दो वर्ष की होने तक पानी पिलाने में डरते थे। जब कभी वह कुछ पीने को मांगती तो दूध या फलों का रस ही दिया जाता। जब कमला चार वर्ष की हुई तो उसकी सगाई फतेहपुर के नेवटिया परिवार में रामेश्वरप्रसाद से कर दी गई। नेवटिया-खानदान समाज में प्रतिष्ठित, संस्कारी तथा सुधारक विचार का था। पर जमनालालजी ने चौदह वर्ष की होने पर ही कमला का विवाह करने का निश्चय किया। यों नेवटिया-परिवार वाले भी सुधारक तो थे ही। जमनालालजी और केशवदेवजी ने इस विवाह को सुधारक-पद्धति से तथा सादगी से करने का विचार किया। पहले यह सोचा गया कि विवाह यदि बंबई में होगा तो उसका समाज पर अच्छा असर होगा। बापूजी ने भी उसकी सम्मति दे दी। लेकिन बाद में जमनालालजी ने केशवदेवजी को साबरमती में शादी करने को राजी कर लिया। बापूजी को भी यह बात पसंद आई। उन्होंने कहा कि आश्रम के वातावरण में शादी होने से वर-वधू पर अच्छे संस्कार पड़ेंगे।

नेवटिया-कुटुंब का डेरा गुजरात विद्यापीठ में था और हमारा लाल बंगले में। जमना-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लालजी ने मुझे वरपक्ष की स्त्रियों को विवाह के समय आने को आमंत्रण देने के लिए भेजा। मैं गई। मुझे देखते ही वरपक्ष की औरतों ने घूंघट निकाल लिये। वे बोलीं, "जी क्या आवें ! वहां आप लोग नेगचार तो करेंगे नहीं, वहां देखें तो क्या देखें ?"

मैंने आकर सब बात जमनालालजी को बताई। जमनालालजी बोले, "ठीक है, मैं वहां जाकर उनको समझाऊंगा।" जमनालालजी वरपक्ष वालों के यहां गये। वहां उन्होंने रामवल्लभ-जी तथा केशवदेवजी से बात की। रामवल्लभजी बड़े सज्जन पुरुष थे और विचारक भी, पर अब तक उनके यहां पर्दा होता था। इसलिए उनके पोते की बहू बिना पर्दे के उनके सामने फेरे में बैठे, इसमें उन्हें संकोच मालूम हुआ। पर यह उलझन बापूजी ने दूर कर दी। उन्होंने जमना-लालजी से कहा कि जब वरपक्ष वालों ने बहुत-से सुधार किये हैं तो एक बात उनकी भी हम मान लें।

आज तो यह बात साधारण-सी मालूम होती है, पर आज से तीस साल पहले मारवाड़ी समाज की जो स्थिति थी उसमें तो यह क्रांतिकारी कदम ही था, पर समधियों के सहयोग से जमनालालजी के लिए यह काम भी सरल हो गया।

शादी में मारवाड़ी तरीके के खादी के कपड़े पहनकर और नाक तक घूंघट निकालकर कमला को चौरी (मंडप) में बिठाया गया। विवाह मारवाड़ी पंडित तथा पं० नेकीरामजी ने कराया। बाद में बापूजी ने आशीर्वाद दिया और सादगी से विवाह करने के लिए केशवदेवजी व जमनालालजी की सराहना करके विवाह-संस्कार के महत्त्व को बताया।

समधी तथा समधिनें यह देखकर खुश हुईं। वे कहने लगीं कि फेरे तो जैसे समाज में होते हैं वैसे ही हुए। वर के दादा को भी यह सब अच्छा लगा।

इक्कीस—

जब साबरमती-आश्रम में नमक-सत्याग्रह की चर्चा चल रही थी तब मैं वहीं पर थी। कई दिनों तक आश्रमवासियों की महत्त्वपूर्ण सभाएं होती रहीं। बापूजी उनके साथ चर्चा करते रहते। मैं भी चर्चा में उपस्थित रहती। बापूजी ने कहा, "सत्याग्रह में जिसको शामिल होना हो, वह निस्संकोच रूप में शामिल होवे। पर उसे सर्वस्व त्याग के लिए तैयार रहना चाहिए। यह एक गम्भीर प्रश्न है और शामिल होने से पहले अपने घरवालों से पूछकर सलाह-मशविरा करके जो अपने को इसमें होम सकें, वे ही अपना नाम दें। जिनकी पूरी तैयारी न हो, या थोड़ी-बहुत कमजोरी हो, वे हिम्मत के साथ साफ-साफ इन्कार कर दें, यह मुझे अच्छा लगेगा।"

बापूजी के इस निर्णय से आश्रम-भर में सनसनी फैल गई। बापूजी के साथ जाने वालों की सूची तैयार होने लगी। उस सूची में ऐसे लोगों के नाम थे जो स्वराज्य लेकर ही घर लौटेंगे या उस काम में लग जायेंगे, ऐसा व्रत लिये हुए थे। कुल उनासी आदमी तैयार हुए। कमल-नयन के लिए बापूजी से पूछने गई। बापूजी ने कहा कि उसकी उमर अठारह वर्ष से कम है। अठारह वर्ष से कम उमर के एक लड़के को लिया गया था। मैंने बापूजी से कहा। बापूजी ने जवाब दिया, "इसे अपवाद रूप में ले लिया है।" जब मैंने बहुत आग्रह किया तब बापूजी मान गये।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कमलनयन वर्धा-आश्रम में था। पिछले साल डेढ़ साल से वह मलेरिया और काला आजार से पीड़ित था। एक सौ तीन-चार डिगरी तक बुखार हो जाया करता था। काफी कम-जोर था, फिर भी यह समाचार पाकर वह उछल पड़ा। आश्रम से समाचार आया कि वह आना चाहता है, लेकिन उसका स्वास्थ्य बाधक है। मैं तो चाहती थी कि वह बापूजी के साथ जाय पर बापूजी ने कहा, "अभी तो वह बीमार है। अच्छा होने पर बीच में भी टुकड़ी में ले लेंगे।" जमनालालजी का भानजा प्रह्लाद पोद्दार वहीं विद्यापीठ में पढ़ता था। उसने जाने की स्वीकृति दी, तो उसे शामिल करा दिया।

दूसरे दिन सवेरे बापूजी आश्रम से विदा होने वाले थे। लोग सड़कों पर झाड़ों पर रात से ही बैठे थे। वे शंकित थे कि शायद बापूजी को विदा होने के पहले पकड़ लिया जाये। दूसरे दिन सवेरे की प्रार्थना होते ही वह निकल पड़े। विदाई का वह प्रसंग राम-बनवास जैसा ही हृदय को द्रवित करने वाला था। लाखों लोग उनके पीछे मान भूलकर चल रहे थे, मानो समुद्र ही उमड़ पड़ा था। अद्‌भुत था वह दृश्य।

घर का प्रह्लाद टुकड़ी में था ही। फिर भी मेरी भावना इस दृश्य को देखकर प्रबल हो उठी कि कमल को टुकड़ी में होना ही चाहिए। मैं जल्दी-से-जल्दी कमल को टुकड़ी में भेजने की तैयारी से वर्धा आई और सीधी आश्रम में पहुंची। देखा, कमल तो बुखार में पड़ा है। पर मुझे तो एक ही धुन लगी हुई थी। मैं बुखार में ही उसे बजाजवाड़ी ले आई और टुकड़ी में जाने के लिए तैयार करने लगी। रातों-रात तैयारी के बाद सुबह की गाड़ी से ही रवाना होकर उसे बापूजी की टुकड़ी में दाखिल करा दिया। इधर जमनालालजी तथा किशोरलालभाई को सरकार बाहर कैसे रहने देती। काम शुरू करते ही उन्हें पकड़ लिया गया। बच्चियों को कन्या आश्रम में रखकर मैं भी विलेपारले पहुंची।

कमलनयन बीमार तो था ही। पैदल-यात्रा के कारण उसकी आंखें सूज गईं और दीखना बंद हो गया। बापूजी ने डॉक्टर से पूछा तो उसने कहा कि इसकी आंखों की ज्योति गई। बापूजी ने आंखों पर मिट्टी बांधने को कहा। अब मैं सोचने लगी कि जोश में मैंने बापू को एक संकट में डाल दिया और बच्चे पर भी एक तरह से जुल्म किया। पर बापू ने प्रेम से यह संकट उठाया। ज्योति लौट आई। अब सवाल था कि कमलनयन का क्या किया जाय? टुकड़ी में ले जाना तो असंभव था और टुकड़ी का एक सिपाही होने के कारण वह वापस घर भी कैसे जा सकता था। अतः उसे गुजरात विद्यापीठ को रवाना कर दिया।

इधर विलेपारले-छावनी में आकर मैंने देखा कि स्त्री-पुरुषों में बहुत जोश भरा है। सभा-व्याख्यान, नमक लाने के लिए टुकड़ियों का आना-जाना, ताड़ी की दूकानों पर धरना देना आदि काम बड़े उत्साह से चल रहे थे।

जगह-जगह सभाएं होतीं और अच्छे-अच्छे कार्यकर्ता और वक्ता पकड़े जाते। नये-नये तैयार होने लगे। मेरी भी बोलने की बारी आई। मैं हिन्दी, मराठी, गुजराती और मारवाड़ी भाषाओं में बोलने लगी। मेरी भाषा शुद्ध तो कैसे होती। पर कम पढ़े-लिखे लोगों और स्त्रियों को मेरी बोलचाल की भाषा में रस आता था। गांव वालों को भी अच्छा लगता था। एक ही सभा में कई भाषा जानने वाले होते थे। सभा में मुझे जिस भाषा वाली बहनें सामने दीख पड़तीं,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उसी भाषा में मैं बोलने लग जाती। 'अन्धों में काना राजा' की तरह मेरी पूछ होने लगी। पर मेरा हाल तो भगवान ही जानता था।

एक रोज सुबह पांच बजे मुझे उठाया गया और कहा गया कि स्वयंसेवक धारासणा जा रहे हैं। मैं उनको आशीर्वाद दूं। मैं हड़वड़ाकर उठ बैठी और बाहर आई। जोश तो भरा ही पड़ा था, मैंने कहा—"भाइयो, जीतकर आओगे तो अमर हो आओगे और मरोगे तो आकाश में तारों की तरह चमकोगे।" जब मैंने अपने शब्दों पर विचार किया तब मुझे रोना आ गया। इन भाइयों को ऐसा कहने में मुझे क्या जोर लगा ? अगर कमलनयन इस टुकड़ी में होता तो क्या मैं ये शब्द बोल पाती ? मुझे यह भी खयाल आया कि मुझमें और जमनालालजी में कितना फर्क है कि वह कर लेते हैं, और दूसरों को कहने में उन्हें संकोच होता है। मैं दूसरों को झट से कह देती हूं। मैंने कह तो दिया, पर मैं विकल हो उठी। इच्छा हुई कि मैं भी धारासणा के लिए रवाना हो जाऊं। अपनी ननद केशरबाई तथा ऋषभदासजी रांका के साथ धारासणा के लिए रवाना हो गई। रात को तीन-चार बजे वलसाड़ स्टेशन पर पहुंचे। स्टेशन पर एकदम गंभीर और डरावना वातावरण था। अंधेरे में चारों ओर पुलिसवाले ही दिखाई पड़ते थे। उस गंभीर और अंधेरे वातावरण में रास्ता बताने वाला भी कौन होता ! आखिर तांगे वाले ने ले चलने को कहा। परंतु उसने दस-बारह रुपये मांगे। हमने कहा कि जो लेना हो सो ले लेना, पर हमें ६ बजे से पहले पहुंचा दे। लोग धारासणा न पहुंच पावें, इसलिए रास्ते भर में जगह-जगह पुलिस की चौकियां लगी हुई थीं। पर लोग जिधर धारासणा में कैम्प लगा हुआ था वहां पहुंच ही रहे थे। तांगे या दूसरे वाहन कठिनाई से जा पाते थे। स्त्रियां होने से हमारे तांगे को जाने दिया गया। तांगे वाला भी होशियार था। हमें उसने ६ बजने से पांच मिनट पूर्व ही धारासणा कैम्प में पहुंचा दिया।

उस दिन धावे के सरदार नरहरिभाई परीख थे। उनके सिर में डंडे की भयंकर चोट आई थी। उन्हें खून से लथपथ देखकर विट्ठलभाई पटेल स्तब्ध रह गये, उनकी भव्य और लंबी सफेद दाड़ी वाली मुद्रा पत्थर की मूर्ति-जैसी लगती थी, नरहरिभाई का घाव धोकर मर-हम पट्टी की गई, होश में आते ही वह आगे बढ़ने को तैयार हो गये। लेकिन समय हो जाने से सत्याग्रह बंद रखा गया, एक अजीब लड़ाई थी वह। कहते हैं कि लड़ाई में तो दोनों पक्षों की ओर से वार होता है, दोनों पक्ष अपनी-अपनी वहादुरी के दांव-पेंच बताते हैं और प्रायः समान शक्ति से भिड़ते हैं, पर यहां तो एक ओर पुलिस मारने में वीरता दिखा रही थी और दूसरी ओर स्वयंसेवक मार खाने में वीरता का परिचय दे रहे थे।

हम घायलों की टुकड़ी के साथ छावनी लौट आये। विलेपारले छावनी की टुकड़ी ने काफी वीरता दिखाई थी और वहां काम भी बहुत अच्छा होता था। सैकड़ों भाई जेल गये थे, और काम भी चलता रहा। आखिर सरकार यह सब कब तक सहन करती, इस काम को सर-कार के खिलाफ कहकर छावनी जब्त कर ली गई।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बाईस—

जब विलेपारले छावनी जब्त हुई, उस समय मैं माटुंगा मैं केशवदेवजी नेवटिया के यहां रहती थी। एक दिन पूज्य कस्तूरबा के साथ गोशी बहन, पेरीन बहन आदि चार-पांच बहनें आईं और कहने लगीं कि अब यहां बहनें पकड़ी जाने लगी हैं। आप भी पकड़ ली जायेंगी, जेल का मोह छोड़ो, काम चलना चाहिए, इसलिए अगर आप कलकत्ता जाकर विलायती कपड़े के बहिष्कार का काम हाथ में लें तो बहुत अच्छा होगा। वहां के मारवाड़ी-समाज में आप ज्यादा काम कर सकेंगी।

मेरा अधिक-से-अधिक उपयोग हो, इस खयाल से पेरीन बहन और कस्तूरबा आदि के समझाने पर मैं कलकत्ता के लिए तैयार हो गई। कमला मेरे साथ रही। बड़ी मुश्किल से उसकी सास ने दस दिन के लिए उसको मेरे साथ किया था, पर वह दो महीने मेरे साथ रह गई।

हम लोग वर्धा आये। मैंने जाजूजी से कहा कि मुझे कलकत्ता विलायती कपड़ा बंद कराने के लिए जाना है। उन्होंने कहा कि कलकत्ता भले ही जाओ, पर वहां विलायती कपड़े का बंद होना मुश्किल है। मैं सोच में पड़ गई कि अब क्या करूं। बंबई से कलकत्ता के लिए आई और वहां काम की उम्मीद कम ही है। फिर बिना बुलाये जाने पर काम कैसे होगा? इसलिए पहले बिहार जाने का तय किया। मैं कमला, मदालसा व महादेवलालजी सर्राफ के साथ बिहार गई।

उस समय वहां आतंक छाया हुआ था। सभा करना, सभा में जाना, भाषण करने वालों को ठहरने देना आदि अपराध माना जाता था। इस कारण लोग पकड़े जाते थे। जुर्माना भी होता था। लक्ष्मीबाबू हमारा इंतजाम करते थे। पर कहीं-कहीं तो ठहरना भी मुश्किल था। धर्मशाला आदि में ठहरना पड़ता था। गांव में जाने पर सभा की डोंडी पिटवाई जाती। जैसे-तैसे करके कुछ लोग सभा में आ ही जाते। पुरुषों को तो भाषण करते ही पकड़ लिया जाता, पर स्त्रियों को पकड़ने में वहां के अधिकारियों को संकोच होता। हमारी तो जेल जाने की तैयारी थी ही। एक महीने में हम ४५ गांव घूमे। एक-एक गांव में लगभग तीन-तीन सभाएं होतीं। एक सार्वजनिक, दूसरी व्यापारियों की और तीसरी बहनों की। महादेवलालजी तो सभा में बोलते ही कैसे? क्योंकि वह जानते थे कि बोलते ही पकड़ लिये जायेंगे। मदालसा कुछ-कुछ बोलती थी। अधिक तो मुझे ही बोलना पड़ता था। आखिर मेरा गला बैठ गया। मैं बोलती तो लोगों तक आवाज पहुंचना कठिन था, इसलिए एक दिन मैंने कमला से बोलने के लिए कहा।

कमला उसके लिए बड़ी मुश्किल से तैयार हो पाई। आखिर बहुत जोर देने पर एकदम उठी और बोली—"आप सब लोग बिल्ली की तरह क्या बैठे हो? नेता लोग तो जेलों में हैं।" इस तरह के दस-पांच शब्द बोलकर बैठ गई। यही उसका पहला और आखिरी भाषण था।

घूमते-घूमते हम दुमका पहुंचे। वहां हमारे कुछ संबंधी और परिचित लोग थे। लेकिन वे हमें अपने यहां उतारने और खुले दिल से हमारा सत्कार करने में डरते थे। हमने उन्हें अभयदान दे दिया और हम स्वयं ही एक धर्मशाला में जाकर ठहर गये। उन्होंने डरते-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

डरते किसीके हाथ एक खास किस्म के लोटे में, जो कि मारवाड़ी-समाज में शौच जाने के लिए होते हैं, गाय का दूध भरकर भिजवा दिया और एक कोने में रखकर इशारा कर दिया। यह भी कहलाया कि अगर दूकान पर आप लोग आयेंगे तो हमारी बड़ी मुश्किल हो जायेगी। लेकिन हमें तो सब दूकानों पर जाना ही था। लोगों में इतना आतंक था कि वहां हमारी सभा हो पायेगी या नहीं, इसमें शंका हो रही थी। डोंडी भी कौन पीटता ? हमसे बात करने में भी लोग डरते थे। दूकान से उठकर जाते तब उनकी कहीं जान में जान आती।

बिहार के इस दौरे में हमें बिहार वालों की सरलता, नम्रता और भोलेपन का बहुत अनुभव मिला। यों राजेन्द्रबाबू से पुराना परिचय था और उनकी नम्रता, सरलता और शांत-स्वभाव से हम सब परिचित थे; पर बिहार जाने पर बिहारियों के सद्गुणों का और भी अधिक परिचय मिला। दुमका से हम कलकत्ता पहुंचे। वहां हम बैरिस्टर कालीप्रसादजी खेतान के यहां गये। जमनालालजी उन्हींके यहां ठहरा करते थे। खबर लगते ही सुभाषबाबू मिलने आये। बड़े प्रेम से बातें कीं। उनकी इच्छा मुझे अधिक-से-अधिक सहयोग देने की थी। मैं तो विदेशी कपड़ों के बहिष्कार के लिए वहां गई थी। उन्होंने इस विषय में सलाह दी और दूसरे लोगों से भी बात की।

एक दिन मैं इसी सिलसिले में दासबाबू (श्री चित्तरंजनदास) के यहां गई। उनका तो सन् २४-२५ में स्वर्गवास हो चुका था। पर उनकी पत्नी वासंतीदेवी से बातें हुईं। मुझ पर तो आंदोलन का नशा छाया हुआ था। मैंने उनको उपदेश देना शुरू किया। मैंने कहा—"आप काम करें और जेल जायें तो लोगों पर बहुत असर पड़ेगा।" उनकी परिस्थिति की मुझे कल्पना ही नहीं थी। उनके पुत्र का भी देहान्त हो चुका था। विधवा बहू की जवाबदारी भी उन पर थी। इस विपत्ति में भी उन्होंने सहज भाव से उत्तर दिया कि विधवा बहू को अकेले छोड़ना कठिन है। जो महान होते हैं, वे दुःख में अपनी सहज नम्रता बनाये रखते हैं।

दो महीने तक मैं वहां रही। और कामों के साथ-साथ इन दिनों मैंने वहां खादी-प्रचार और परदा-निवारण का भी कुछ काम किया।

तेईस—

कमल की जचगी के समय नागपुर की अंग्रेज डाक्टरनी मिस एण्डरसन को बुलाया। बहुत सेवा-भावी डाक्टर थी। गरीबों की खूब सेवा करती। १५ रुपये फीस थी, लेकिन २ रुपये दे दो, या कुछ भी मत दो तो वह फिकर नहीं करती। रात-भर गरीबों की झोपड़ियों में बैठी रहती। कुरसी की कोई जरूरत नहीं, ईंट पर ही बैठ जाती। १६ भाई-बहन थे उसके। माता-पिता ने कहा कि एक बच्चा हिन्दुस्तान की सेवा को जाय, तो यह चली आई। ब्याह भी नहीं किया। बरसों बाद बहनों ने लिखा—अब वापस आकर देखो, तुम्हारे कितने भानजे-भानजी हो गये। मिस एण्डरसन ने उन्हें जवाब दिया, तुम लोग हिन्दुस्तान आओ। अपने हजारों बच्चे तुम्हें दिखाऊंगी।

कमलनयन छोटी उमर से ही विनोबाजी के आश्रम में रहता था। शुरू-शुरू में वही एक छोटा लड़का विनोबाजी के आश्रम में रहा था। विनोबाजी स्वयं उसकी देखभाल

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रखते थे और आश्रम के कामों के अलावा उसको लिखाने-पढ़ाने का भी खयाल रखते थे। कमलनयन का आश्रम के कामों में तो मन लग गया था, परन्तु लिखने-पढ़ने में उसका मन कम लगता था। जवाहरलाल जी और घनश्यामदास जी कमलनयन की लिखाई-पढ़ाई के बारे में जमनालालजी को ठपका देते रहते थे। एक दिन जवाहरलालजी ने बापू से कह दिया, "कमलनयन जमनालालजी का काम कैसे संभालेगा ? इसे बोलना-लिखना तो आना चाहिए। गढ़ा खोदने, संडास साफ करने, आटा पीसने, लकड़ी चीरने और रोटी बनाने वगैरा से आगे दुनिया में कैसे काम चल सकेगा ? कुछ पढ़ाई-लिखाई भी तो होनी चाहिए। कुछ अंग्रेजी भी तो सीखनी चाहिए।" बापू ने कहा—"कमलनयन की इच्छा हो तो पढ़ाई शुरू करवा सकते हैं। बाकी उसे आश्रम के ही कामों में रस आता रहा है, पढ़ाई में मन कम लगता है। विनोबा कहते हैं कि जब पढ़ाई की भूख लगेगी तब पढ़ लेगा।"

डांडी-मार्च के बाद और नमक-सत्याग्रह के दौरान कमल को गुजरात विद्यापीठ में स्वयंसेवक शिविर में रखा गया था। जब सत्याग्रह बंद हुआ तो उसकी इच्छा कुछ पढ़ने की हुई। बापूजी की सलाह से अंग्रेजी पढ़ाने का निश्चय हुआ। श्री बालजीभाई (बालजी गोविन्दजी देसाई) अपने स्वास्थ्य-सुधार के लिए अलमोड़ा जा रहे थे। बापूजी ने कमल को भी उनके साथ कर दिया। बालजीभाई ने काफी परिश्रम उस पर किया। इधर बापू गोलमेज-परिषद् (राउंड टेबल कान्फ्रेंस) में चले गये। उनके लौटने के पूर्व ही उत्तर प्रदेश में लगान-बंदी आंदोलन छिड़ गया। बापूजी ने आते ही, जितने डांडी-यात्री थे, उन सबको साबरमती-आश्रम में बुलवाया, जिससे आगे का कार्यक्रम निश्चित किया जा सके। कमल को भी इसी प्रकार का पत्र गया और उसमें ताकीद थी कि उसको सीधे आश्रम में आ जाना है, सत्याग्रह आदि के बारे में सोच लेंगे। कमल बालजीभाई से छुट्टी लेकर साबरमती जाने के लिए निकल पड़ा। दिसम्बर के आखिरी दिन थे। उन दिनों बागेश्वर में, जो कि अलमोड़ा से तीस-चालीस मील उत्तर में गोमती और सरयू नदी के संगम पर है, सालाना बड़ा मेला भरा करता है। उस मेले में तिब्बत के भोटिया लोग माल लेकर ऊपर से नीचे आते हैं और गर्मियों के शुरू में यहां से माल लेकर तिब्बत चले जाते हैं। कमल ने सोचा कि अलमोड़ा से नीचे उतरकर बागेश्वर होते हुए चला जाय तो मेला भी देखा जा सकेगा। साबरमती ठीक समय से पहुंचा जा सके, यह हिसाब देखकर वह अलमोड़ा से निकल पड़ा।

मेले के प्रबंध के वास्ते अलमोड़ा से कई कांग्रेसी कार्यकर्ता पहले से ही वहां पहुंच चुके थे। इसी बीच यू० पी० में लगान-बंदी आंदोलन शुरू हो जाने से मेले में गये हुए कार्यकर्ताओं को भी जोश था और उन्होंने एक मीटिंग बुलाने का ऐलान किया। मीटिंग का मुख्य उद्देश्य मेले में सफाई की व्यवस्था आदि के बारे में विचार करने का था, फिर भी कार्यकर्ता लोगों का राजनीतिक व्याख्यान करने का भी इरादा था। सरकार ने मेले के दौरान धारा १४४ लगाकर मीटिंग पर पाबंदी लगा दी। जिस रोज मीटिंग होने वाली थी उसी रोज कमल भी वहां पहुंचा। जब कार्यकर्ताओं को उसके पहुंचने की सूचना मिली तो वे सब उससे मिलने आये। वे लोग काफी जोश में थे और धारा १४४ का लगाना अपने स्वाभिमान के विरुद्ध समझकर उसे तोड़ने का निश्चय कर चुके थे। उन्होंने कमल से भी आग्रह किया कि मीटिंग में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बोलना होगा। कमल नमक सत्याग्रह में कई बार पकड़ा गया था, परंतु कम उमर का होने से छोड़ दिया गया था। इस कारण जेल से बचता गया। इसका उसके मन में असंतोष भी था। यहां स्वाभाविक ही उसको अच्छा मौका मिला, ऐसा उसको लगा। परंतु चूंकि बापूजी का आदेश आ चुका था, उसने कार्यकर्ताओं को समझाने का काफी प्रयत्न किया। उसने कहा कि बापूजी के आदेश को तोड़ना नियम के विरुद्ध होगा। उसने मीटिंग में भाग लेने की अपनी लाचारी प्रकट की। पर कार्यकर्ता आग्रही थे। वे बड़ी मुश्किल से इस बात पर राजी हुए। उन्होंने कहा कि कमल मीटिंग में जरूर शामिल हो, भले ही भाषण न दे। कमल इस बात को मान गया।

शाम की मीटिंग में सब लोग पहुंचे तो पता चला कि कार्यकर्ताओं ने कमल का नाम भी उससे बिना पूछे ही बोलने वालों में घोषित कर दिया है। यही नहीं पहले से ऐलान भी हो चुका है और पर्चे भी बंट चुके हैं। यह देखकर उसे ताज्जुब हुआ, पर खुशी भी हुई कि जेल जाने का मौका तो आया। लेकिन दूसरी ओर लाचारी भी महसूस होती थी कि बापूजी ने कानून-भंग करने को मना करके सीधे आश्रम पहुंचने को लिखा है। आखिर में बाध्य होकर उसने मीटिंग में बोलना ही ठीक समझा। वहां वह मेले की व्यवस्था आदि के विषय पर ही बोला। उसने साफ जाहिर कर दिया कि बापूजी के आदेशानुसार किसी तरह राजनीति के विषय पर बोलना अनुचित है। लेकिन मीटिंग होने पर अन्य लोगों के साथ कमल को भी पुलिस ने पकड़ लिया।

वहां मजिस्ट्रेट नहीं था। उसे अपने सदर मुकाम से बुलाना पड़ा। तब तक तीन-चार रोज सबको हिरासत में ही रखा गया। बागेश्वर में किसी ग्वाले के मकान के नीचे के हिस्से को, जहां ढोरों को रखा जाता था, हवालात का रूप दे दिया गया। मजिस्ट्रेट के सामने कमल ने अपनी अक्खड़ता के मुताबिक जवाब दिये, जिसकी वजह से उसका मुकदमा करने में मजिस्ट्रेट को बहुत देर लगी। मजिस्ट्रेट उसी रोज मुकदमा समाप्त करके अपने सदर मुकाम चला जाना चाहता था, परंतु रुकना पड़ा। इस नाराजी की वजह से या जो भी कुछ उसको लगा हो, उसने कमल को छः महीने की कड़ी सजा, कुछ जुरमाना और उसके बदले में सजा तथा 'सी' क्लास दिया। दूसरे रोज सबको पैदल ही सोमेश्वर तक लाया गया और वहां से बस द्वारा अलमोड़ा की जेल पहुंचा दिया गया। अलमोड़ा में कोई पंद्रह रोज रखा, फिर हरदोई-जेल में, जहां छोटे लड़कों के लिए प्रबंध था, कमल व दूसरे एक साथी लड़के का तबादला कर दिया गया। हरदोई-जेल में वह करीब चार-पांच महीने रहा। उसमें अधिकतर तो उसका समय 'सी' क्लास में ही बड़ी सजा के साथ कटा। करीब १७ वर्ष की उम्र में उसका ४२ पौंड वजन घट गया। इस बीच असेंबली आदि में सवाल-जवाब होने की वजह से उसे करीब दो-तीन हफ्ते अस्थायी तौर पर 'बी' क्लास दिया और बाद में 'ए' क्लास कर दिया गया। उसके बाद उसको बरेली डिस्ट्रिक्ट जेल में भेज दिया गया। बरेली में 'ए' क्लास रहने से खुराक कुछ अच्छी मिली। आराम और अच्छे साथियों में रहने से (साथियों में श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित के पति श्री आर० एस० पंडित भी थे। इनसे कमल का काफी निकट का परिचय था ही) उसके खोये हुए वजन में पंद्रह-बीस पौंड वापस मिल गये। जेल में सजा का बाकी भाग पूरा करने के लिए करीब एक महीना ही रहना पड़ा। जुरमाने की वसूली में पुलिस ने वर्धा की दूकान पर जाकर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कई चीजें जब्त कर लीं और उनको बेचकर किसी कदर जुरमाना वसूल किया।

जेल से छूटने पर उसने हिन्दी साहित्य सम्मेलन की प्रथमा की परीक्षा दी और १९३२ का सत्याग्रह बंद हो जाने पर बापूजी की सलाह से प्रोफेसर जे० जे० वकील के स्कूल में पूना और विलेपारले में करीब साल-भर पढ़ाई की और फिर हिन्दी साहित्य सम्मेलन की मध्यमा की परीक्षा दी। १९३५ में बापूजी ने उसकी अंगरेजी के अभ्यास के लिए सीलोन भिजवा दिया। इसी बीच कलकत्तावाले श्री लक्ष्मणप्रसादजी पोद्दार की लड़की के साथ उसकी सगाई की बातचीत चली।

सावित्री बहुत सुंदर थी, इसलिए मेरा मन तो उसकी ओर झुका हुआ था, पर काफी दुबली होने से मन में डर भी था कि इसके बाल-बच्चे कैसे होंगे ?

लड़की वालों के विशेष आग्रह पर बापू ने सगाई पक्की कर दी। कलकत्तावालों की स्वाभाविक इच्छा थी कि शादी ठाट-बाट से हो, बारात में काफी लोग आवें। बापूजी से सलाह करके बारात में पंद्रह आदमी ले जाना तय किया। जब पंद्रह की संख्या में जिनमें कि आधी स्त्रियां होंगी, बहुतों को निराशा हुई और कुछ को तो बुरा भी लगा।

विवाह में खादी का प्रयोग होना ही था। सावित्री की इच्छा जरी की साड़ी पहनने की थी। सो चर्खा-संघ को खास आर्डर देकर जरी की साड़ी मंगाई गई।

लड़की वालों ने कमलनयन के लिए खादी के ही कपड़े बनवाये। रेशमी शेरवानी और जरी का साफा। कलकत्ता से एक स्टेशन पहले ही वे कपड़े लेकर आये और उन्होंने चाहा था कि उन कपड़ों को पहनकर ही वह स्टेशन पर उतरे, पर कमलनयन वर्धा से ही सफेद कुर्ता, धोती, टोपी और केसरिया दुपट्टा लगाकर, रवाना हुआ था और इसी पोशाक में वह कलकत्ता उतरा। उसका कहना था कि खादी के सादे, अच्छे और सफेद कपड़े ही धार्मिक विधि के समय होने चाहिए। विवाह की वेदी पर भी उसने यही कपड़े पहने।

स्टेशन पर बारात के स्वागत का पूरा इंतजाम था। पर जब बारात में तेरह आदमी देखे तो लड़कीवालों का उत्साह ठंडा हो गया, क्योंकि उन्होंने बड़ी तैयारी की थी और समझा था कि कम-से-कम पचास-साठ लोग तो होंगे ही।

सुबह हम लोग पहुंचे और शाम को छह बजे फेरे हुए। दूसरे ही दिन हमें रवाना होना था। बिड़लाजी अपने यहां पार्टी देना चाहते थे। लड़की वाले अपने यहां जिमाना चाहते थे। जमनालालजी ने कहा कि हमको तो यहां एक भोजन करना है, कहीं भी हो। आखिर बिड़लाजी के यहां पार्टी हुई। लड़की वाले परिवार के सब लोगों के लिए कपड़े वगैरा देना चाहते थे। लेकिन हमने लेने से इनकार कर दिया। रामकृष्ण के लिए भी उन्होंने कमल के समान ही कपड़े और जेवर बनवाये थे, पर हमने कहा कि हम तो केवल वर के पांच कपड़े ले सकते हैं। मिलनी आदि के नेगचार हमने छोड़ दिये। कमलनयन अभी तक टीके का एक ही रुपया—शकुन के तौर पर लेता रहा।

चौबीस—

इधर सत्याग्रह चल रहा था, उधर मैं विदेशी कपड़े के बहिष्कार, शराब की दूकानों पर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पिकेटिंग आदि के कामों में लगी थी। जनवरी के दिन थे। लंदन में हो रही गोलमेज-परिषद् खतम हुई। बापूजी तथा और बड़े-बड़े नेता जेल से छूटे। गांधी-इर्विन समझौता हुआ। कराची में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। बापूजी दूसरी गोलमेज-परिषद् में विलायत गये। वहां से खाली हाथ लौटे और सत्याग्रह फिर शुरू हो गया। बापूजी तथा सारे नेता लोग गिरफ्तार हो गये। मैं भी सत्याग्रह के काम में लग गई। इस बार वर्धा में बहनों को इसमें भाग लेने के लिए तैयार करने लगी। वर्धा के मूलचन्दजी भैया की मां भी, जो पर्दे में रहने वाली और पुराने खयाल की मारवाड़ी महिला थीं, जेल जाने को तैयार हो गईं। मुझे जेल जाने की और बहनों को जेल के लिए तैयार करने की ऐसी धुन लगी, जैसे पीहर जाने का ही उत्साह हो। मेरा यह काम जोर से चलने लगा तब सरकारी अधिकारियों ने मेरा बाहर रहना खतरनाक जानकर गिरफ्तार कर लिया। दूसरे दिन जेल में ही मुकदमा हुआ और छह महीने की सजा दे दी गई।

जब तक मैं वर्धा-जेल में रही तब तक खाने का डब्बा घर से आता रहा, कुछ दिन पहले ही कमला के लड़का हुआ था और वह वहीं थी। उसका भी रह-रहकर ध्यान आता था। कुछ दिन वर्धा रहने के बाद नागपुर बदली का हुक्म आया। उस दिन रात को सोई तो सपने में कमला के बच्चे को झूला झुलाने लगी।

अब मैं नागपुर-जेल में थी। वहां के सुपरिण्टेण्डेण्ट अनुशासन के बड़े कठोर थे और कैदी उन्हें जालिम कहा करते थे। मैं वहां 'ए' क्लास में थी। उन्होंने मुझसे आवश्यक सामान आदि के बारे में पूछा। मैंने कह दिया—"और तो जो कुछ है उसी में चल जायेगा, लेकिन मेरा गाय के ही घी-दूध का नियम है।" उन्होंने कहा कि गाय का दूध तो यहां से दिया जायेगा, घी घर से मंगवा सकती हो।

ठंडा तथा रूखा खाने से मुझे दिन में तीन-तीन, चार-चार टट्टियां और उल्टियां होने लगीं। बुखार भी आने लगा। डॉक्टर ने दवा देने को कहा, पर मैंने दवा लेने से इनकार कर दिया। मेरी तबीयत दिन-पर-दिन बिगड़ती ही गई। कोठरी का ताला शाम को पांच बजे बंद हो जाता। रात को कोठरी में ही जो कमोड रखा जाता था उसीमें बार-बार टट्टी जाना पड़ता था। सात दिन में मेरा तेईस पौंड वजन घट गया।

जेल के अधिकारियों ने 'सी' क्लास की एक बहन को मेरे साथ रहने की अनुमति दे दी थी। मैंने मूलचन्दजी भैया की मां को अपने पास बुला लिया। इनकी सेवा और दुर्गाबाई जोशी के इलाज से ही मैं उस समय बच सकी। दोनों की सेवाओं को मैं कैसे भूल सकती हूं!

कुछ दिनों बाद खबर मिली कि बजाजवाड़ी, मगनवाड़ी और महिलाश्रम तीनों संस्थाएं जब्त हो गईं। तीनों जगह पुलिस की लारियां गईं और वहां का सामान उठाकर ले गईं। मुझपर सरकार ने एक हजार का जुरमाना किया था। हमें वह देना नहीं था। अधिकारी जब्ती करके चाहे जो ले जायें। बजाजवाड़ी में रात को सब सोये हुए थे। मेरी ननद गुलाबबाई राजस्थान से आई थीं। पुलिस ने सारा सामान जब्त करके मुहर लगा दी। बजाजवाड़ी की १२-१३ गायें भी जब्त हो गईं। पुलिस जब गायों का दूध बेचने हलवाइयों के पास गई तो उन्होंने जमनालालजी की गायों का दूध किसी भी भाव खरीदने से इनकार कर दिया। मुफ्त में भी वे दूध नहीं लेते थे। जब तक घास-चारा था तब तक तो गायों को मिलता रहा। बाद में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बंद हो गया। पर पुलिस को क्या चिंता ! बेचारी गायें भी भूख के मारे सूख गईं। वे भी मानो जेल भोग रही थीं।

दूकान में बड़ी-बड़ी तिजोरियां थीं, उनको उठाकर ले जाना हंसी-खेल थोड़े ही था ! दो-चार आदमियों के बस की बात नहीं थी। पुलिस वाले सुबह से शाम तक सिर पटककर हैरान हो गये। उन्हें तिजोरी उठाने के लिए कोई हमाल नहीं मिला। तिजोरियों को उठाने का एक तरीका होता है और यह काम हमाल लोग ही कर सकते हैं। हमालों ने साफ कह दिया कि हम जमनालालजी की तिजोरियां नहीं उठावेंगे। पुलिस वाले उनको दस रुपये रोज तक की मजदूरी देने को तैयार थे, परंतु हमालों में भी उस समय चेतना उमड़ पड़ी थी और देश-हित के लिए उन्होंने सरकार का साथ देने से इनकार कर दिया। आखिर शाम को पुलिस के अनेक सिपाहियों ने मिलकर किसी तरह तिजोरियां उठाईं। लेकिन इस काम में पुलिस वालों के अंगूठे पिचक गये, दरवाजों की चौखटें टूट गईं, फर्श फूट गया। जैसे-तैसे उन्होंने तिजोरियां बाहर पटकीं। पांच महीने तक तिजोरियां सरकार के कब्जे में रहीं। उनमें लोगों का, संबंधियों का बहुत-सा जेवर पड़ा था। शादी-ब्याह का मौसम था, गहनों की जरूरत थी, पर किया क्या जा सकता था ?

पच्चीस—

दूसरी लड़की मदालसा बचपन से ही आश्रम के वातावरण में रही थी। विनोबाजी के पास रहने के कारण उसमें अत्यंत सादगी और श्रमशीलता आ गई थी। शहरी या घर-गृहस्थी के प्रपंच से भी वह दूर रही।

एक बार महिलाश्रम की लड़कियों के माथे में जुएं पड़ गईं। बापू ने कहा कि बाल निकाल दो। लेकिन लड़कियों के बाल कसे काटे जायें ? बापू ने कहा तो सही, पर तैयार कौन हो ? लड़कियों के मां-बाप की इजाजत चाहिए ! लेकिन मैंने तो मदालसा को बापू के सामने कर दिया। और कहा, "बापूजी, इसके बाल काट सकते हैं।" बापू को क्या था, उन्होंने मशीन ली और अपने कांपते हुए हाथों से चलाने लगे। पूरा मुंडन कनु गांधी ने किया।

मैं उसको लेकर बजाजवाड़ी आई। सामने ही कुरसी पर दादीजी बैठी थीं। मदालसा को इस तरह देखकर वे रोने लगीं। जमनालालजी को भी इससे रंज हुआ। वह धीमे-से बोले, "बाल काटने की क्या जरूरत थी ?" पहले तो मैंने कह दिया कि क्या हुआ, काट दिये तो ? घास है, फिर उग आयेगी। पर बाद में मुझे भी बुरा लगा कि ब्याह योग्य लड़की के बाल कटाने की बजाय अपने कटाती तो विशेषता थी। पर मदालसा तो शुरू से ही उदासीन मीरा-सरीखी थी। इन सब बातों के होते हुए भी वह निर्विकार ही रही।

लखनऊ की कांग्रेस में श्रीमन्नारायणजी अग्रवाल पर जमनालालजी की निगाह पड़ी। श्रीमन्जी उस समय विलायत से लौटे थे। जमनालालजी ने सोचा कि इस लड़के को ध्यान में रखना है। वह श्रीमन्जी को वर्धा लाये। श्रीमन्जी काफी पढ़े-लिखे होने पर भी विनम्र थे। उनकी बुद्धि तेज थी। जिस काम को हाथ में लेते, उसे बड़ी लगन से करने की आदत थी। जमनालालजी ने उनकी रुचि और योग्यता का काम उनको सौंपा। वे मारवाड़ी विद्यालय का

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

काम देखने लगे। श्रीमन्‌जी डेढ़ वर्ष तक वर्धा रहे। वे तो सबको पसंद आ गये। बापू ने भी कहा कि लड़का तो ठीक है। बापू और विनोबा की अनुमति मिल गई।

उस समय मदालसा सफेद कपड़ों में रहती थी और बाल भी काटे हुए थे। जब श्रीमन्‌जी से पूछा गया, तब उन्होंने मदालसा के इस वेश को देखकर कहा कि क्या यह इसी वेश में रहेंगी? जमनालालजी ने हंसते हुए कहा कि शादी के बाद तो वह ढंग से ही रहेगी।

जमनालालजी मदालसा और श्रीमन्‌जी को साथ लेकर कलकत्ता कमलनयन के विवाह में पहुंचे। वहीं पर जमनालालजी ने कमलनयन के फेरे होते ही मदालसा की सगाई का टीका कर दिया और सगाई के दस दिन बाद ही वर्धा में ब्याह हुआ। उस समय बंगले पर कांग्रेस-कार्य-समिति की बैठक चल रही थी। देश के बड़े-बड़े मेहमान घर पर ही थे।

सुबह गांधी-चौक में सात बजे विवाह करना था। गांधी-चौक में ही हम रहते थे। तीन पीढ़ी में लड़की का ब्याह घर पर करने का यह पहला मौका था।

सुबह दही और तेल लगाकर मैंने मदालसा को नहलाया और मंडप में ले गई। उस समय उसकी हालत यह थी कि मानो सूली पर चढ़ाई जा रही हो। उसका लाल चेहरा जैसे फटा जा रहा था। फेरों के बाद उसने बापूजी को और बा को प्रणाम किया। उसने अपने ससुर को प्रणाम करके जैसे ही सास को प्रणाम किया, उन्होंने मदालसा को छाती से लगा लिया। इससे मदालसा को मानो आत्मीयता मिल गई। इस समय मदालसा के चेहरे और आंखों के भावों को पढ़कर कहा कि इसकी मां तो इसके लिए सास के समान है मां तो इसने आज पाई है।

छब्बीस—

जमनालालजी की पत्नी होने के कारण देश में मेरा नाम भी बहुत से लोग जानने लगे थे। मिश्री के साथ सूत भी मीठा हो जाता है और मिश्री के भाव बिकता है। लेकिन जिस कारण मेरी प्रसिद्धि रिश्तेदारों के बीच है, वह तो है कंजूसी। इस कंजूस-वृत्ति के कारण मेरा मजाक भी होता है। लोग परेशान भी होते हैं, उलाहना भी देते हैं, लेकिन जो स्वभाव बन गया है उससे छुटकारा पाना भी मुश्किल ही है।

जब मैंने अपने पोते राहुल से पूछा कि "बेटा, बताओ तुम्हारे मन पर मेरी कौन-सी बात जमी है?" तो उसने कहा, "आपके कंजूसपने की। जब दादाजी (जमनालालजी) गोपुरी में रहते थे और हम उनके पास जाते थे तब वह हमें ग्रामोद्योग का गोरसपाक देना चाहते थे, लेकिन आप रोक देती थीं।" तीन-चार वर्ष की अवस्था की वह बात अब भी उसको याद है।

बापू भी 'कंजूसों के सरदार' के रूप में प्रसिद्ध थे। लेकिन उनमें और मुझमें जमीन-आसमान का अंतर है। बापू अपनी कंजूसी को ऐसी बढ़िया रूप देते कि सामने वाला भी संतुष्ट हो जाता और सबक सीखकर लौटता। फिर भी इतना समाधान अवश्य है कि इतनी बड़ी दुनिया में कम-से-कम बापू ने तो मेरी कंजूसी की सराहना की थी। कंजूस की भाषा कंजूस ही समझ सकता है। उन्होंने तो मुझे सर्टिफिकेट भी दिया था।

बापू का एक कंबल छलनी-जैसा हो गया था। मैंने वह रफू करके और उस पर खादी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सींकर उनके पास भेज दिया। लंदन की गोलमेज परिषद् में जब वह गये तब वही कंबल उनके पास था।

मेरे कम खर्चीले स्वभाव के कारण साथवालों को कभी-कभी बड़ी परेशानी हो जाती। एक बार स्टेशन जाना था। दोपहर का समय था। मेरे साथ ननदोई डेडराजजी भी थे। मुझे तो धूप में चलने की आदत थी, पर वह बहुत परेशान हो गये। स्टेशन पहुंचते-पहुंचते वह तो पसीने से तर हो गये। बोले—"आगे से सेठानीजी का साथ राम ही बचावे ! बड़ी कंजूस है।" उनका गरम होना स्वाभाविक था।

और तो क्या, आज भी जमनालालजी सपने में मुझे कंजूसी का उलाहना देते दिखाई देते हैं। अभी-अभी की बात है कि उन्होंने मुझे स्वप्न में कहा कि देखो, देखो, मेहमान आये हैं, उन्हें अच्छे-अच्छे फल देना। उन्होंने यह कहा तो, फिर भी उनको मानो लग रहा था कि इससे यह होगा भी ?

सत्ताईस—

नामक-सत्याग्रह के बाद बापू ने प्रण किया कि आजादी मिलने पर ही साबरमती लौट सकते हैं। तब प्रश्न उठा कि अब बापू कहां रहें ? बापू को तो सभी प्रांत वाले अपने यहां बुलाने को उत्सुक थे, पर गुजरात वाले और खासकर सरदार चाहते थे कि बापू गुजरात में ही रहें। उनका कार्यक्षेत्र भी प्रारंभ में गुजरात ही रहा था। गुजरात के लोगों की उन पर अटूट भक्ति थी। उनके कार्यों और आंदोलनों को गुजरात ने शुरू से ही अपनाया था। इसलिए सरदार वल्लभभाई पटेल ने प्रयत्न किया था कि बापू गुजरात में ही रहें और बारडोली को अपना केन्द्र बनावें। पर जमनालालजी बापू को वर्धा लाना चाहते थे। यद्यपि महाराष्ट्र में गांधीजी के सिद्धांतों के अनुकूल वातावरण का अभाव था, फिर भी जमनालालजी के कारण उन्होंने वर्धा को पसंद किया। जमनालालजी विनोबा, काका कालेलकर आदि को पहले से ही वर्धा ले आये थे। जगह-जगह से और भी गांधीवादी रचनात्मक कार्यकर्ताओं को लाकर अनेक काम शुरू करवा दिये थे। धीरे-धीरे ऐसा वातावरण पैंदा हुआ कि बापूजी ने वर्धा को ही अपना कार्यक्षेत्र बनाया।

बापूजी को वर्धा में बसाने से जमनालालजी की मनमानी बात तो हो गई, लेकिन उनकी जिम्मेदारियां बहुत बढ़ गईं। बापू के विधायक काम ठीक तरह से चलें, इसलिए साधन और व्यक्तियों को जुटाना तथा आने-जानेवाले मेहमानों की अच्छी व्यवस्था रखना एक बड़ा सवाल था। परंतु वह इस काम में जुट गये, अपने-आपको उन्होंने बापू में ही मिला दिया—वे बापू में ही लीन हो गये। गांधीजी को वहां बसाने पर ग्रामोद्योग के लिए जमनालालजी ने अपना बगीचा उनको सौंप दिया। जब जमनालालजी ने यह बगीचा गांधीजी को सौंपने का निर्णय किया तब दूकानवाले सभी लोग नाराज हो गये और उनमें खलबली मच गई कि यह गांधी कहां से आ गया ? इसे तो जमनालालजी अपना सब कुछ लुटा देंगे। वे गांधीजी तथा उनके कामों के महत्त्व को क्या जानें ?

बगीचा सौंपने के बाद बापूजी ने जमनालालजी से कहा कि खादी के साथ-साथ ग्रामो-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

द्योग भी चलाने होंगे, हमें गांवों को स्वावलंबी बनाना है। इसलिए वहां ग्रामोद्योगों के प्रयोग शुरू करना तय हुआ। गांधीजी के एकनिष्ठ कार्यकर्ता और भतीजे श्री मगनलाल गांधी की मृत्यु बिहार में पहले हो गई थी। जमनालालजी को इसका काफी रंज हुआ था और वह मगनलाल की स्मृति के योग्य स्मारक बनाने की सोचते रहते थे। इसलिए उन्होंने उस बगीचे का नाम 'मगनवाड़ी' रखने की घोषणा की और वह बापू को भी पसंद आ गई। ग्रामोद्योगों के प्रसिद्ध अर्थशास्त्री और कार्यकर्ता श्री जे० जी० कुमारप्पा को बापूजी ने यहां लाकर बैठाया-बसाया।

बापू को जगह-जगह से हाथ की बनी चीजों की भेंटें मिलती थीं, उनके लिए संग्रह योग्य स्थान की जरूरत थी। इसलिए मगनवाड़ी में ही एक संग्रहालय बनाया गया, जिसका नाम भी 'मगन-संग्रहालय' रखा गया। उसमें गांधीजी की भेंट में मिली वस्तुओं के साथ-साथ खादी और ग्रामोद्योग की सारी सामग्री रखी गई। बापू भी आनेवालों से कहा करते कि मगन-संग्रहालय देखें।

उन दिनों बापू ग्राम-उद्योग और गांवों की सेवा वगैरा पर बहुत जोर देते थे। इस कारण बापू ने वर्धा-जैसे छोटे शहर के बजाय गांव में रहने का तय किया। वे सेगांव रहने चले गये। बाद में उसका नाम सेवाग्राम पड़ गया। वहां मीरा बहन की इच्छा से एक झोंपड़ी बनी थी। बापू के आग्रह के कारण कम खर्च में ही ज्यों-त्यों करके मिट्टी से एक झोंपड़ी बना ली। बाद में मीरा बहन बापू को अपनी झोंपड़ी दिखाने ले गई और बापू को पसंद आई तो बोलीं आप यहां रहिये।

गांव में बापू को बड़ी असुविधा हुई और कष्ट उठाना पड़ा। बापूजी के साथ एक हरिजन भी था। गांव के कुएं से औरों के साथ वह भी पानी भरता था। गांववालों ने उस कुएं का पानी पीना छोड़ दिया। दो साल तक बापू की हजामत बनाने में भी गांव का नाई डरता रहा। गांव के लोग कहते थे कि बापू की हजामत तो कर सकते हैं, पर उनके साथ हरिजन जो रहता है। इसलिए हम अगर बापू को छुयेंगे तो जातिवाले बहिष्कार कर देंगे।

बापू के सेगांव जाने पर सरदार बहुत बिगड़े। उनका कहना था कि ऐसी जगह, जहां सड़क, तार-टेलीफोन, पोस्ट आफिस सभी की असुविधा है, बापूजी का रहना कैसे हो सकता है। अगर कभी मौका आवे तो क्या कर सकते हैं और बापू कुछ करने भी देंगे ?

यह ठीक भी था। बापूजी से मिलने आनेवालों का अजीब तमाशा होता था। एक बार मैसूर की महारानी बापूजी से मिलने आईं। बैलों की टमटम गाड़ी सेवाग्राम गई। बारिश में कपड़े भीग गये। बापू ने सेवाग्राम में मीरा बहन के कपड़े दिये। लौटते समय बैलगाड़ी कीचड़ में फंस गई, तब उन्हें उतरकर पैदल चलना पड़ा। ऊपर से बारिश हो रही थी। पैरों में ऊंची एड़ी के सैंडल थे, जो कीचड़ में वजनदार हो गये और चलना कठिन हो गया। महारानी गीले कपड़ों और कीचड़ में लथपथ वर्धा पहुंचीं। यहां आने पर गरम पानी में नमक डालकर सेंका गया। कपड़े बदले। वह कहने लगीं, "यदि यह घटना मैसूर में होती तो मैं पंद्रह दिन बिछौने पर ही रहती, पर यहां तो मैं दूसरे ही दिन तैयार हो गई हूं।"

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आखिर वापू की अनिच्छा रहते हुए भी सड़क वन गई, डाकखाना खुल गया और टेलीफोन भी लग गया।

अट्ठाईस—

वजाज-कुटुंव राजस्थान में सीकर का रहने वाला है। सीकर जयपुर-राज्य का एक वहुत वड़ा ठिकाना था। सीकर के राजा रावराजा कहलाते थे। उनके अधिकार भी जागीरदारों से अधिक थे। हम लोग यद्यपि वर्धा में वस गये थे, फिर भी सीकर आना-जाना रहता ही था और वहां हमारा एक मकान भी था, जो 'कमरा' के नाम से प्रसिद्ध था। वहां के सार्वजनिक कार्यों और हलचलों में भी जमनालालजी का हाथ रहता था।

सीकर के रावराजा भले स्वभाव के थे और प्रजा के साथ सहानुभूति रखते थे। उनके तथा जयपुर-राज्य के वीच आपसी अधिकारों को लेकर कुछ-न-कुछ चखचख चलती ही रहती थी। रावराजा के उदार स्वभाव को जयपुर-राज्य तथा अंगरेज अधिकारी कैसे पसंद करते। देशी राज्यों की प्रजा में जागृति हो और राजा का प्रजा के साथ विशेष संपर्क वढ़े यह भी अंगरेजों को नापसंद था। इस कारण जयपुर राज्य और उसके प्रधान अंगरेज अधिकारियों ने सीकर के रावराजा के साथ के झगड़े को वहुत वढ़ावा दिया। सीकर के राजकुमार को शिक्षण के लिए विलायत भेजने के मामले को लेकर जयपुर राज्य के अधिकारियों ने रावराजा के कुटुंवियों पर रेल में ही गोली चलवा दी। इस घटना से सीकर की प्रजा वहुत उत्तेजित हो गई और जयपुर-राज्य के खिलाफ शस्त्रों से लड़ने की तैयारी शुरू कर दी। दोनों ओर से मोर्चेवंदी होने लगी।

मैं उन दिनों सीकर ही थी। राजपूत, ब्राह्मण, हरिजन, वनिया, मुसलमान सभी ने लड़ने की तैयारी कर ली थी। सीकर में अठारह दिन की जवरदस्त हड़ताल हुई। गांव में वहुत तीव्र उत्तेजना थी। मैं घर-घर में जाकर लोगों को समझाती थी कि भयभीत मत होओ।

एक वार मैं लोसल से सीकर आ रही थी। जयपुर-राज्य के सिपाहियों का आदेश था कि अगर कोई आदमी विना सूचना दिये सीकर जाये तो गोली चला दी जा सकती है। मैं इस वात से अपरिचित थी। सीधी चली गई। सैनिक ने भी शायद स्त्री समझकर मुझे चला जाने दिया होगा।

इस आपसी झगड़े को निपटाने के लिए जयपुर और सीकर दोनों के लोगों की तरफ से जमनालालजी के पास अनेक तार और चिट्ठियाँ आई थीं। राजाजी का संदेशा भी पहुंचा था। जमनालालजी ने दोनों पक्षों से यह जानना आवश्यक समझा कि अगर उनका उपयोग हो सके तो वे आवें, अन्यथा जाकर भी क्या होगा? अंत में उन्हें सीकर जाना पड़ा। एक वार तो जयपुर-राज्य और रावराजा में समझौता भी हो गया।

उसके वाद सीकर के रावराजा को अजमेर ले जाया गया और उन्हें 'पागल' ठहराकर सीकर राज्य की व्यवस्था कोर्ट ऑफ वार्ड के मातहत कर दी गई। इसके अलावा रावराजा को जयपुर-राज्य में प्रवेश करने की भी मनाही कर दी गई। इस वात से सीकर की प्रजा में काफी उत्तेजना फैल गई। जमनालालजी ने इस मामले में काफी समय और शक्ति लगाकर शांति से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इसे सुलझाने का प्रयत्न किया और इस तरह खून-खराबी रुकी।

जमनालालजी जयपुर-राज्य प्रजामंडल के अध्यक्ष थे। जयपुर-राज्य को उनका, संस्था का और कार्यकर्ताओं का बढ़ता हुआ प्रभाव कैसे अच्छा लगता? भीतर-ही-भीतर नाराज़गी बढ़ती जा रही थी। एक बार जमनालालजी प्रजामंडल की कार्यकारिणी बैठक के लिए जयपुर जा रहे थे। वह बैठक अकाल-सहायता के संबंध में ही होनेवाली थी। परंतु सवाई माधोपुर में ही पुलिस के गोरे अधिकारी ने उनके सामने हुक्म रख दिया कि उनके लिए जयपुर-राज्य में प्रवेश करना मना है।

जमनालालजी को यह बात बहुत खटकी। उन्होंने पुलिस-अधिकारियों से कहा कि यह बात अनुचित है। लेकिन इंस्पेक्टर-जनरल यंग ने कहा कि अभी तो आप मान जायें और वापस चले जायें, मैं यह हुक्म रद्द कराने की कोशिश करूंगा।

जमनालालजी सत्याग्रह के महत्त्व को समझते थे, इसलिए उन्होंने पहली बार मौका दिया कि अगर समझौते का कोई मार्ग निकलता है तो ठीक है। अतः वह लौट आये। अंत में बापू का आशीर्वाद लेकर उन्होंने १ फरवरी, १९३८ के दिन जयपुर-राज्य की आज्ञा का भंग करके राज्य की सीमा में प्रवेश कर दिया और इस तरह सत्यग्रह की शुरुआत हुई। पुलिस उनको पकड़कर मोटर द्वारा सीमा के बाहर छोड़ देती और वह पुनः भीतर प्रवेश कर जाते। जब दूसरी मोटर में से उतरने का आदेश दिया गया तब उन्होंने इस आदेश को अमान्य किया। जबरदस्ती उन्हें उतारा गया। उतरने की अनिच्छा के कारण उतारते समय उनके खरोंच आ गई और कुरता भी फट गया। सत्याग्रही जमनालालजी के चित्र में नाक के पास की खरोंच और बनियान पर लगा खून का दाग स्पष्ट है।

इस तरह सीमा के बाहर छोड़ देने के कारण उन्होंने अन्न का त्याग कर दिया और केवल गाजर पर रहने लगे। तीसरी बार उन्हें गिरफ्तार करके जयपुर से चालीस मील दूर रखा गया। वहां वह बारह-बारह मील रोज घूमते थे। घी तो उन्होंने शरीर में चरबी की अधिकता के कारण छोड़ दिया था। मोटी रोटी और साग अपने लिए बनवा लेते थे। इस प्रकार के खाने से उनके मन को भले ही संतोष रहा हो, पर उसका शरीर पर परिणाम हुए बगैर कैसे रहता? रूखे-सूखे भोजन के कारण कमजोरी बढ़ गई। घूमते भी बहुत थे। अंत में घुटने में दर्द बढ़ गया। इलाज कराया गया। पर इलाज के समय डॉक्टर की गलती से बिजली से पैर जल गया। इलाज बिजली का चल रहा था। पर गलती से मांस जल गया, घाव हो गया। वे सब सहते रहे और डॉक्टर भरोसे में रहा। डर के मारे डॉक्टर फरार हो गया। पर उसी दिन ड्रेसिंग के समय उन्होंने अभय-दान दे दिया। उनकी प्रकृति ही कुछ ऐसी थी कि अपने सुख-दर्द से वे हमेशा बेपरवाह रहते थे। जितने कठोर वह अपना दुख-दर्द सहने में थे, उतने ही नरम दूसरों के दर्द के प्रति थे। दूसरों का थोड़ा-सा दर्द भी असह्य होता था।

पैर में घाव होने के कारण उनको अब जयपुर के निकट रखना आवश्यक हो गया और उन्हें कर्णवती के बाग में रखा गया।

जब वह मीरासागर में रहते तब आसपास के गांवों में घूमते और लोगों के सुख-दुःख की बातें ध्यानपूर्वक सुनते और जो कुछ उनसे बनता, वह करते। वहां के लोगों को शेर के शिकार

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

का अधिकार न होने से शेरों का बहुत उपद्रव था। शेर जानवरों तथा आदमियों तक को ले जाते। इस बारे में उन्होंने राज्याधिकारियों से लिखा-पढ़ी की। इसी तरह एक गांव में पानी का बहुत कष्ट था। उन्होंने कहा कि गांववाले मिलकर कुआं खोद लें। अपनी ओर से रुपयों का भी आश्वासन दिया।

इधर सत्याग्रह जोरों पर था। करीब पांच सौ स्त्री-पुरुषों ने इसमें भाग लिया। श्री हीरालाल शास्त्री, राधाकृष्ण बजाज तथा उनके साथियों ने बहुत परिश्रम किया। बापूजी तथा जमनालालजी की इच्छा थी कि संस्था की अपेक्षा इसमें चुने हुए सत्याग्रही भाग लें।

जमनालालजी के जाने के बाद बात कुछ ऐसी हुई कि एक बार मुझे भी प्रजामंडल की अध्यक्ष बनना पड़ा। प्रजामंडल के सदस्यों में कुछ मतभेद था। शास्त्रीजी मेरे पास आये और बोले कि कोई रास्ता बैठाना है। मैंने कहा, "अगर मेरे अध्यक्ष बन जाने से दोनों पक्षों को समाधान हो तो मैं बन जाऊं।" मैं अपनी शक्ति को पहचानती तो थी, पर उनकी भावना समझकर मैंने कहा, "मेरा उपयोग करना चाहो तो कर सकते हो।" उन्होंने मुझे अध्यक्ष बना दिया।

देशी राज्यों के सत्याग्रह के संबंध में बापूजी की वाइसराय से भी कुछ बातें हुई थीं। जब कहा गया कि आपस में समाधान हो जायगा, तो सत्याग्रह बंद कर दिया गया। सत्याग्रही तथा जमनालालजी भी छूट गये। जयपुर-राज्य और प्रजामंडल में समझौता हो गया। प्रजा-मंडल की बातें स्वीकार कर ली गईं। जमनालालजी ने वहां बहुत दिनों तक रहकर कार्य की व्यवस्था जमाई।

उनतीस—

ओम् हमारी तीसरी लड़की थी। ओम् थैली में लिपटी हुई जन्मी, जिसे मारवाड़ी में 'कुतेवड़ो' कहते हैं। थैली फोड़कर उसे मेरी सास ने निकाला। बोलीं—"ए बाई, कियां गुलाब का फूल-सी सोवणी लागे, छोरी तो भागवान है।"

बचपन से पूजा-पाठ और 'ओम्' का नियमित जाप करने की मेरी आदत थी। लेकिन जापे में पूजा-पाठ में अड़चन आने लगी। इस बात का मन में कुछ विचार रहता। सोचा कि इस लड़की का नाम ओम् रखा जाय तो 'ओम्' का जाप इस निमित्त से होता रहेगा। मैं उसे 'ओम्', 'ओम्' कहने लगी। यों उसका नाम ही ओम् पड़ गया।

मुझे बच्चों को मारने की आदत शायद नौकरों के कारण पड़ी। नौकरों की बेपरवाही के कारण मुझे गुस्सा आता। मैं उनपर चिढ़ती। पर चिढ़ने पर वह काम छोड़कर चले जायेंगे, इस डर से गुस्से को दबाने की कोशिश करती, पर वह बच्चों पर उतरता और उसका सबसे ज्यादा शिकार बनी ओम्।

रामकृष्ण के जन्म की बात है। मैं जापे में थी। ओम् तो खेल में ही मस्त रहती थी। मैंने उसे किसी काम से बुलाया, उसने अनसुनी कर दी, जब आई तब मैंने इतने जोर से उसे मारा कि तपेली पिचक गई और मेरे हाथ को ऐसा झटका लगा कि उसका दर्द कई दिनों तक रहा।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

साबरमती-आश्रम में रहते थे, तब की बात है। ओम् के फोड़े और फुंसियां हो गई थीं। मैं उसे नहला रही थी। फोड़े धोते समय वह रोई। मैंने उसे चुप होने के लिए कहा और फोड़े धोती रही, तो वह और जोर-जोर से रोने लगी। मुझे गुस्सा आ गया। नहलाने का जो गिलास था उसीको सिर में दे मारा। चोट आई और खून बहने लगा। मैंने चोट धोकर पट्टी बांध दी। पट्टी भी खून से लाल हो गई। पर मेरे हाथ से छूटकर ओम् भागी और फिर खेलने चली गई।

ओम् मेरे मारने या गुस्सा होने पर भी वैसी ही रही। एक बार तो उसने मुझपर नाराज होकर तीन दिन तक कुछ खाया-पिया ही नहीं। उन दिनों बजाजवाड़ी में मीटिंगों की धूम थी। एक के बाद एक मेहमानों की पंगतें लगती और उठती। बच्चों के खाने-पीने की देख-भाल रह जाती थी। जब पता चला कि तीन दिन से ओम् ने खाना-पीना छोड़ रखा है, तो मुझे डर लगा कि जमनालालजी को पता चलेगा तो अनर्थ हो जायेगा। तब ओम् को खाना खाने को राजी करने लगी। वह पक्की हठीली थी। लेकिन जब उससे कहा कि उसके काकाजी को पता चलेगा और उनके मन को बड़ी तकलीफ होगी तो यह दलील काम कर गई और ओम् ने खाना खा लिया। बच्चों में हमेशा यह भावना रही कि उनके काकाजी किसी भी तरह से कष्टों से बचें। तीन दिन से भूखी-प्यासी थी, पर मजाल क्या कि चेहरे पर से कोई ताड़ सके।

बापूजी और जमनालालजी के जेल से छूटने पर बापूजी के हरिजन-दौरे की बात चली। सेठजी ने मुझसे पूछा कि ओम् को हरिजन-दौरे में बापूजी के साथ भेजा जाय तो कैसा रहे? मैं उसे बापूजी के साथ भेजने के लिए राजी हो गई, पर जमनालालजी को बापूजी से कहने में संकोच हो रहा था। बापूजी का दल छोटे-से-छोटा हो, ऐसा वह प्रयत्न कर रहे थे, लेकिन बापूजी के साथ जाने से उसका हित होगा, इसलिए वह बहुत संकोच के साथ बापूजी से बोले, "बापूजी, ओम् को साथ ले जाने में आप पर भार तो होगा ही, पर उसे लाभ होगा।" यह सुन बापूजी बोले, "भले, एनो शो भार थवानो, ए तो रमकडूं छै।" (कोई हर्ज नहीं। उसका भी कोई भार होगा। वह तो खिलौना है!)

एक वर्ष तक ओम् बापूजी के साथ रही। बापूजी ने उससे काम भी लिया और उसे सिखाते भी रहते। उसे बहुत सीखने को मिला। बापूजी ने दौरे से जो पत्र लिखे थे, उसमें उन्होंने ओम् के आनंदी और मस्त स्वभाव के बारे में लिखा था। वह काम हँसते-हँसते करती, पर खाने-पीने या रहने-करने की शिकायत के बारे में चुप ही रहती। बेफिक्र तो इतनी थी कि जहां भी सोने को मिलता, झट सो जाती। मोटर में बापूजी के पैरों के पास ही उनका सहारा लेकर सो जाती। बापूजी इसी कारण उसे 'सोती सुंदरी' कहते थे। उसका वजन भी काफी अधिक था। यात्रा से काफी मोटी होकर लौटी। इसी दौरे में बापूजी पर पूना में बम फेंका गया था। ओम् भी साथ में थी। बापूजी और ओम् आदि साथ के लोग बच गये। बापूजी 'सोती सुंदरी' के सिवा ओम् को 'पंडिता' भी कहते थे। पंडिता से उनका मतलब था दूसरे को उपदेश देने में कुशल। उसने बापूजी को अपना स्वास्थ्य अच्छा रखने के विषय में एक उपदेश-भरा पत्र लिखा था। उत्तर में बापूजी ने उसे पंडिता की पदवी दी थी।

जयपुर-सत्याग्रह के समय जमनालालजी का आगरे में राजनारायणजी के कुटुंब से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संबंध आया। घर के लोग भले और संस्कारी लगे। फिर जब राजनारायणजी के पिता स्वास्थ्य के लिए जुहू रहे तब जमनालालजी भी वहीं थे। उनसे अधिक संपर्क बढ़ा। बच्चों से भी उनका अधिक संपर्क आया।

जमनालालजी आगरे से विवाह का निश्चय करके लौटे। वह जिस दिन आये उस दिन से सातवें दिन विवाह था। पर जमनालालजी ने सावित्री और राम को व्यवस्था का काम सौंपा। मैं टाइफाइड से बीमार थी और मदालसा के घर थी। मैं तो सिर्फ फेरे के समय ही आई। विवाह की सारी तैयारी सावित्री और रामकृष्ण ने ही की थी। कपड़े-सामान से लगाकर खाने-पीने तक की व्यवस्था करनी थी। मिठाइयों के नाम खोज-खोजकर एक लंबी फेहरिस्त बनाकर सावित्री जमनालालजी के पास पहुंची। उन्होंने कहा कि इसमें से जो अच्छी लगे, वही एक मिठाई चुन लो और बनवाओ !

ओम् की विदाई के समय जमनालालजी की भी आंखें गीली हो गई थीं।

जब ओम् और राजनारायणजी नैनीताल थे, तब जमनालालजी वहां गये। उन्हें राजनारायणजी और ओम् का परस्पर प्रेम देखकर बहुत संतोष हुआ।

ओम् डेढ़-दो महीने से वर्धा ही थी। राजनारायणजी उसे लेने वर्धा आये। कुछ दिन रहकर दोनों बंबई गये। वहां से वे सीधे अपने कार्यक्रम के अनुसार नैनीताल जानेवाले थे, पर मन उचटा-सा रहा। उसने वापस वर्धा जाने की जिद की, मानो वर्धा उसे बुला रहा हो। सामान खरीदना छोड़कर वर्धा पहुंचे। राजनारायणजी साथ थे। वे दोनों जमनालालजी की मृत्यु के दिन सवेरे आठ बजे ही वर्धा पहुंचे।

जमनालालजी के जाने से आघात तो सबको लगा, पर कुटुंब वालों को स्वाभाविक तौर से अधिक ही लगा था। सब घरवालों के मन में यह भाव था कि हम उनके काम को करके उनकी आत्मा को सन्तोष दें। इसलिए सावित्री जब 'करेंगे या मरेंगे' आंदोलन में जेल जाने लगी तब राजनारायणजी ने भी ओम् को इजाजत दे दी। ननद-भौजाई को जेल जाते देखकर महिलाश्रम की लड़कियों को और भी उत्साह मिला और दस-दस की टुकड़ी में करीब ८० बहनें जेल पहुंच गईं।

तीस—

रामकृष्ण आखिरी संतान है। वह बचपन में बड़ा स्वस्थ और शान्त था। रोता भी कम था। एक बार बचपन में उसकी उंगली दरवाजे में दब गई और टुकड़ा कटकर गिर गया। उसे उठाकर वह दादीजी के पास गया और बोला, "देखो दादीजी, मेरी एक आंगली की दो आंगली होगी।" दादीजी ने उंगली के दो टुकड़े देखे तो वह रोने लगीं। यह देखकर वह भी रोने लगा। पहले तो उसे भान ही नहीं था।

बड़ों के सामने वह सीधा और आज्ञाकारी था, पर बराबरी वालों से सदा हंसी-मजाक किया करता। उसका यह स्वभाव आज भी है।

चौदह साल तक हममें से सभी सिनेमा से दूर रहे। मिठाई न तो घर पर ही बनती थी और न बाहर ही खाई जाती। कुंआरे लड़के-लड़कियों का शादी में जाना भी बंद था। एक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बार मेरी बड़ी भाभी आई तो मोतीचूर के लड्डू लाई होंगी। उन्हें देखकर राम बोला, "मामीजी, इसे क्या कहते हैं ?" वह बोलीं, "मोतीचूर के लड्डू।" बस, इतना सुनकर वह तो खेलने दौड़ गया, पर यह देखकर मेरी भाभी को रोना आ गया। वह बोलीं, "तुम्हारे इतने बड़े घर में बच्चे कैसे तरसते हैं। बाईजी, मैं तो अभी लड्डू बनवा देती, लेकिन आपके घर में तो ऐसी चीजें बनाने का हुक्म ही नहीं है।"

मेरी अनुपस्थिति में ओम् ने लड्डू खाया और मेरी भाभी से कहा—"मामीजी, मां से कहना मत, पर मेरे लिए लड्डू भेजना।"

मेरी भाभी ने इंदौर जाकर पार्सल भेजा। पारसल को खोला और देखा कि उसमें लड्डू हैं। तब विचार हुआ कि ये आये कहां से ?

ओम् दौड़कर दादीजी से धीरे-धीरे बोली—"दादीजी, ये तो मामीजी ने मेरे कहने से भेजे हैं।" तब जाकर पता चला कि यह सब ओम् की करामात है।

जब रामकृष्ण वर्धा में पढ़ता था तब उसने और उसके साथियों ने 'घनचक्कर-क्लब' चला रखा था, जिसमें सब बच्चे खेलते-कूदते थे। साथ-साथ देहातों में प्रौढ़-शिक्षण और चरखे का भी काम करते। इस क्लब में कभी-कभी बड़े-बूढ़े भी खेलते थे।

व्यक्तिगत सत्याग्रह चला और जमनालालजी जेल जाने लगे तो राम ने उनसे कहा कि परीक्षा के बाद मेरा भी सत्याग्रह करने का इरादा है। समय थोड़ा था, ज्यादा बात तो क्या होती, पर वह इतना ही बोले कि बापूजी की सलाह से जो कुछ करना हो, करना। तीन-चार महीने बाद परीक्षा हो जाने पर राम बापूजी के पास पहुंचा। उस समय उसकी उमर सोलह साल की थी। बापूजी बोले—"सत्याग्रह के लिए अभी छोटे हो।" जब वह आग्रह करने लगा तो बापूजी ने उसे तीन-चार दिन तक अपने पास रखकर उसकी जांच-पड़ताल की। उससे कहा कि जबतक यह सत्याग्रह चलेगा तबतक मुझको बार-बार जाना पड़ेगा। तुम्हारी तैयारी रहनी चाहिए। वह बोला—"आखिर कितने दिन तक जेल जाते रहना पड़ेगा ?" वह बोले—"कम-से-कम पांच वर्ष तो मान ही लेना चाहिए।" "मेरी पांच साल की तैयारी है।" वह अपने विचार पर पक्का रहा और बापूजी को इजाजत देनी पड़ी।

उसने सत्याग्रह किया तो पहली बार सौ रुपये जुरमाना हुआ, फिर दूसरी बार किया तो दो सौ, तीसरी बार चार महीने की सजा हुई, सजा पूरी कर शनिवार को आया, सत्याग्रही को दस रोज में वापस जाने का आदेश था, लेकिन उसकी तो फिर से जाने की तैयारी थी। दूसरे दिन रविवार आ गया, इसलिए रुकना पड़ा। उसने सोमवार को फिर सत्याग्रह किया और छः महीने की सजा हुई। जब सत्याग्रह स्थगित हुआ तब वह विनोबाजी के साथ छूटा।

जेल जाने से पहले वह मैट्रिक पास हो गया था। जेल से छूटने पर उसने पढ़ाई शुरू की। लिखा-पढ़ी के बाद कालेज में भरती हो सका। कालेज का सत्र तो बहुत पहले शुरू हो गया था, परीक्षा के लिए बहुत थोड़े दिन बाकी रह गए थे। इसलिए बड़ी मुश्किल से इजाजत मिली। परीक्षा दी और पास हो गया। इस अवधि में उसके पिताजी का स्वर्गवास हो गया। ऐसे समय में चित्त को स्वस्थ रखकर पढ़ाई करना कठिन था, पर उसकी तो सदा से ही यही आदत रही है कि जो काम सौंप दिया जाय उसीमें वह लग जाता है। जमनालालजी की मृत्यु से दूसरे दिन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भी उसे मैंने कालेज भेजा। यह बात दूसरी थी कि उनकी मृत्यु के कारण कालेज बंद रहने से उसे लौट आना पड़ा।

उसके काकाजी की मृत्यु के बाद कुटुंबवालों ने अपने बाल दिये, गंगाविशनजी, राधाकृष्ण आदि कुटुंबवालों ने मुंडन करवाया, तब राम को भी कहा गया। वह बोला—"बाल देने में क्या पड़ा है ! पिताजी के लिए हम जितना करें, उतना थोड़ा ही है।" उसने सिर नहीं मुंडवाया। उधर कमलनयन गोला गोकर्णनाथ में था। उसने भी मुंडन नहीं करवाया। कमलनयन जब वर्धा आया तब उसने मुझसे कहा कि बाल देने से तुझे अच्छा लगता हो तो दे दूं। पर मैंने भी देखा इसमें क्या धरा है। भाइयों के विचार में कितना साम्य था। फिर कमलनयन ने यह भी कहा कि पिताजी के दुःख को मनहूस चेहरा बनाकर क्या प्रकट करना ! जो दुःख हुआ उसका दिखावा थोड़े करना है। राम भी तीसरे दिन घनचक्कर-क्लब में खेलने चला गया।

फिर से जुलाई में गर्मियों की छुट्टी के बाद कालेज शुरू हुआ। लेकिन अगस्त में जब 'करो या मरो' आन्दोलन शुरू हुआ तब राम फिर जेल गया। १९४४ में छूटा। जेल में वह अपने साथियों से हिलमिल गया, जेल से छूटकर आनेवाले उसके विषय में प्रेम ओर आत्मीयता प्रकट करते।

उसने जेल में खेल-कूद, पढ़ने-लिखने और कातने में अपना समय मजे से काटा, हां, उसे यह डर अवश्य था कि बाहर निकलने पर भाई उसे व्यापार में लगा देगा। उसने अपने पत्र में लिखा भी था। तब मैंने उसे लिखा कि तुमको चिन्ता करने की जरूरत क्या ? जैसा तुम्हारा मन होगा वैसा बापूजी की सलाह से किया जायगा। और हुआ भी वैसा ही। बापूजी की सलाह से ही वह व्यापार में लगा, व्यापार में लगने तक देश का ही काम करता रहा। प्रथम बार जेल गया था तबसे अंतिम बार जेल से छूटने तक पौने चार साल हुए थे। उसने बापूजी से कहा—"आपको दिये पांच वर्ष में से पंद्रह महीने बाकी हैं, आप पंद्रह महीने चाहे जो काम लें ! बंगाल, आसाम और मदरास के दौरे में राम को बापूजी अपने साथ ले गये। उसपर हरिजन फंड और बापू के दस्तखतों के पैसे वसूल करने के अतिरिक्त बापू के सामान को सम्हालने की जिम्मेदारी थी। इसलिए मजाक में बापू उसे 'हमाल' (मजदूर) कहते थे। साथी भी उसे 'बापू का हमाल' कहने लगे। उसके बाद वह नौजवानों और विद्यार्थियों में काम करने लगा। उसने विद्यार्थी कांग्रेस के काम में काफी हिस्सा लिया। एक बार वह मध्यप्रदेश की विद्यार्थी कांग्रेस का अध्यक्ष भी बना। अ० भा० विद्यार्थी कांग्रेस का वह खजांची भी था। विद्यार्थी कांग्रेस की और से प्राग् में होनेवाली अन्तर्राष्ट्रीय विद्यार्थी कांग्रेस में भी वह गया था। युवक कांग्रेस शुरू करने में उसका हाथ रहा और उसका भी काम किया।

उसके विवाह की चर्चा जमनालालजी के सामने ही चल रही थी, लेकिन उस समय तो उसकी उमर उन्नीस वर्ष की ही थी। उन्हें इतनी जल्दी संबंध करना कम पसंद था। जब जेल से छूटा तब चर्चा चलने लगी। यों तो वातावरण ऐसा ही था कि अन्य जाति की अच्छी लड़की मिल जाय तो पहली बार दूसरी जाति से संबंध हो। बातें भी चलने लगीं, पर मेरा मन तो जाति की कन्या आवे तो अच्छा, ऐसा था। बातें हुईं, लेकिन अंत में उसका संबंध

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सावित्री की बहन विमला के साथ ही निश्चित हुआ। इस संबंध के मामले में सावित्री तो बिलकुल तटस्थ रही। दोनों भाइयों ने ही निर्णय किया और विवाह भी जैसे उनके पिताजी की इच्छा रही वैसा ही हुआ।

राम में आज भी अपने बड़ों के प्रति श्रद्धा है और बराबर बड़ों के अनुशासन में चलता है। मेहनत, काम की लगन एवं व्यवस्थितता के कारण वह व्यापार का बोझ अपने ऊपर होते हुए भी जमनालालजी के पत्रों का संकलन और डायरियों के प्रकाशन आदि करने में अपना समय देता है। 'पांचवें पुत्र को बापू के आशीर्वाद' में उसने बहुत मेहनत की। बच्चों को सदा अपने पिताजी की कीर्ति और कामों का खयाल रहता है।

इकतीस —

जमनालालजी के कान में दर्द रहा करता था। बहुत इलाज कराया, पर तकलीफ बनी रही। उसका मेरे मन पर भी बोझ रहता था। मेरी झुंझलाहट इसलिए भी थी कि वह अस्वस्थ होते हुए भी निरंतर कार्य में लगे रहते थे। मेरे कहने का क्या असर होता। यदि वह घर पर रहते तो आने-जानेवालों का तांता लगा रहता। बात-बात में बोलने के स्थान पर रोना आ जाता था।

मैं चाहती थी कि उन्हें थोड़ा आराम मिले। मुझे उनकी सेवा करने का थोड़ा मौका मिले। पर ऐसा बनना कठिन था। इसका मुख्य कारण था सार्वजनिक काम, मेहमानों का आना-जाना, सेक्रेटरियों और नौकरों से माथा-पच्ची। मैं सोचने लगी कि ये ही बातें हैं, जिनके कारण वे आराम करने से और मैं सेवा करने से वंचित हूं। आदमी मोह के कारण क्या-क्या सोचता है। सो मैं उनको परेशान और व्यस्त रखनेवाली इन सब बातों से चिढ़ने लगी। वह कोई सार्वजनिक काम की बातें करते या दौरे में साथ चलने को कहते तो मुझे गुस्सा आ जाता। दिनों-दिन हम दोनों के बीच खींचातानी बढ़ने लगी। वह स्वयं समाधान के लिए भरसक प्रयत्न करते थे और जानते भी थे कि दोनों में यह खींचातानी क्यों हो रही है, लेकिन उनका जीवन तो पूरी तरह से सार्वजनिक हो ही गया था। वह उससे चाहते तो भी छूट नहीं सकते थे। वह तो उसमें सिर से पैर तक डूब चुके थे। यह तो मेरा ही काम था कि मैं उनके स्वभाव और रुचि को समझकर उनका साथ देती और उनके आनंद में अपना आनंद मानती। इस तरह अगर होता तो उनके मन पर मेरा भार कम रहता।

उन्हें चना, मूंगफली, कच्ची मकई आदि अच्छी लगती थीं। श्री लक्ष्मीनारायण-मंदिर में प्रतिवर्ष उत्सव के अंतिम दिन तले हुए, काबुली चने प्रसाद के रूप में बांटे जाते थे। प्रसाद लेने के लिए भीड़ काफी होती थी। खाने में स्वादिष्ट लगते थे। एक वर्ष के उत्सव के समय जमनालालजी बाहर गये हुए थे। मैंने उनके लिए थोड़े चने बचाकर रख लिये थे। मैं चाहती थी कि वह अकेले में मिलें तो उनको ये चने खिलाऊं। अकेले में कोई चीज खाना उनके लिए जहर-सा था। सबको खिलाने में तथा सबके साथ खाने में ही उनको सुख मिलता था। मैं बार-बार टोकनी में वे चने छिपाकर ले जाती, पर अकेले में मिलना ही मुश्किल था। चने लेकर सामने जाती तो वह कोई-न-कोई काम बता देते। किसीको सेवाग्राम दिखाना है, किसीको बाथ-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रूम दिखाना है तो किसीके लिए कुछ और प्रबंध करना है। मैं रुंआसी हो जाती पर करती क्या ? एक रोज वह भोजन करके उठे। कुछ लोग सुपारी खाने में लगे थे और कुछ आगे निकल गये थे। उनको बरामदे में से जाते देखकर मैंने उन्हें चने दिखाये। वह यह तो जानते थे कि अगर वह कुछ खा लेंगे तो मुझको संतोष होगा, लेकिन रुकें भी कैसे ? सामने भी कुछ लोग थे और पीछे भी कुछ लोग थे। उन्होंने चने लिये और फंकी मार ली। अब उनकी बड़ी मुश्किल हुई। बोलना और चबाना एक साथ कैसे हो सकता था ? वह सारे चने निगल गये।

इस तरह मेरी अशांति बढ़ती गई। छोटी-मोटी बातों को लेकर असंतोष में भी वृद्धि होती गई और मैं चिड़चिड़ी बनती गई। नौकर भी बेपरवाह थे। जमनालालजी को खुश रखने के लिए तो वे खूब दौड़-धूप करते पर मेरी बात की अवहेलना कर जाते।

जमनालालजी के सेक्रेटरियों का ठाट तो और भी बढ़ा-चढ़ा रहता था। वह हमेशा नये-नये युवकों को सेक्रेटरी बनाते, व्यवहार की बातें सिखाते, उनकी जरूरतों का खयाल रखते। लेकिन जमनालालजी के कारोबार को देखकर उन युवकों में भी व्यापार करने और धन कमाने की इच्छा पैदा हो जाती। उनकी इच्छा को समझकर दो-तीन वर्ष बाद जमनालालजी अपने सेक्रेटरी को किसी अच्छे स्थान पर लगा देते।

वह किसी भी आदमी को रखते समय उसके लिए 'पीर-बवर्ची-भिश्ती-खर' वाली कसौटी तैयार रखते थे। वह यह कह देते थे कि उन्हें किसी भी समय कोई भी काम दिया जा सकता है। शुरू में उत्साह और चाह में हर आदमी उनकी बात मान लेता था और प्रेम भी वह ऐसा करते थे कि सेक्रेटरी भी उनका काम मन लगाकर करते थे।

दामोदरजी जमनालालजी के अंतिम सेक्रेटरी थे। मुझसे मीरा और दामोदरजी का परिचय कराते हुए जमनालालजी ने कहा था कि यह दम्पती बहुत सेवा-भावी और भावुक हैं। अपने पास रखने लायक हैं। तुम्हारी कसौटी के मुताबिक ही ये अपने पास निभने-जैसे हैं।

और दामोदरजी ने तो सचमुच ही जमनालालजी को बहुत प्रभावित किया और यहां तक अपना असर जमा लिया कि मुझे तो वह अपनी सौत-सी लगने लगे। वे मेहमानों के साथ खूब प्रेम से व्यवहार करते। सबकी जरूरतों को पूरी करने की धुन में लगे रहते और समान भाव से बरतते। मेहमानों को घर-सा ही लगना चाहिए, यह ध्यान रखते।

सेक्रेटरियों और नौकरों से मुझे जो परेशानी होती, उसे मैं विनोद में लेने और सहन करने का प्रयत्न करती। कहांतक सफल होती, यह तो भगवान ही जाने, पर मैं अपनी धुन में गुनगुनाती रहती :

राज सिकटरियों का भारी, राज सरवटों का भारी।

बत्तीस—

बापूजी के वर्धा आ जाने के बाद से वर्धा में नेताओं और कार्यकर्ताओं का आना-जाना बढ़ता गया। बंबई-कांग्रेस में बापूजी कांग्रेस से अलग हो गये और वर्धा में रहकर 'ग्राम-उद्योग-संघ' की स्थापना की। कन्याश्रम को छोड़कर बापू मगनवाड़ी में रहने लगे। बाद में सेवाग्राम

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गये। पर कांग्रेस कार्य-समिति (वर्किंग कमेटी) की मीटिंग अक्सर बजाजवाड़ी, वर्धा में ही होती। रचनात्मक कामों की अन्य सभाएं तथा सम्मेलन आदि भी वर्धा में होते ही रहते। बापूजी और जमनालालजी से मिलने-जुलनेवाले भी आते रहते। देशी-विदेशी यात्रियों, पत्रकारों, नेताओं, कार्यकर्ताओं के आवागमन से बजाजवाड़ी गुलजार रहती थी। लोगों का जमघट लगा ही रहता। इस कारण मेहमानघर बड़ा करना पड़ा। मकान और बनाने पड़े। भोजनालय की व्यवस्था बढ़ानी पड़ी। देश के बड़े-से-बड़े नेता से लगाकर राजे-महाराजे और साधारण कार्यकर्ता, सब वर्धा आते और बजाजवाड़ी में ठहरते। कभी कोई जान-पहचान वाला आता तो कभी बिना जान-पहचान वाला। कोई किसी काम से आता तो कोई योंही यात्रा के विचार से। किसी असमंजस में पड़े व्यक्ति को तांगेवाले ही बजाजवाड़ी ले आते। खादी पहननेवालों या कोई भी सार्वजनिक काम करने वालों के लिए बजाजवाड़ी एक धर्मशाला-जैसी बन गई थी। लेकिन आनेवाला कोई भी हो, जमनालालजी सबकी सुख-सुविधा का बराबर खयाल रखते।

सरोजिनी नायडू को तली हुई हरी मिर्चें पसन्द थीं। राजाजी के लिए रसम, मौलाना आजाद के लिए मोटी रोटी, जवाहरलालजी के लिए आलू, सूखी रोटी और मक्खन, कृपालानीजी के लिए गरम सूप और उसमें मक्खन, या क्रीम मिल जाय तो उत्तम, खानसाहब के लिए खिचड़ी में खौलता हुआ घी, डा० पट्टाभि सीतारामैया को भोजन के अंत में दहीभात, जयरामदास दौलतराम को उबली हुई सब्जी, शंकरराव देव को भात में छाछ, गोविन्दवल्लभ पंतजी को दाल में घी; और इनके अलावा जुदे-जुदे नियम और व्रत वाले लोगों की रुचि और आवश्यकता के अनुसार उसका पूरा ध्यान जमनालालजी रखते और धीरे-धीरे उन्होंने ऐसी व्यवस्था कर दी कि उनकी गैरहाजिरी में भी सब ज्यों-का-त्यों चलता।

मोतीलालजी वर्धा आये। जमनालालजी ने उनके ठहरने का पूरा इंतजाम किया। उन्हें दमे की बीमारी थी, सो चौकीदार आदि को रात में आवाज देने से मना कर दिया ताकि उन्हें ठीक से नींद आये। सुबह उठे तो पूछा रात को नींद ठीक आई न? मोतीलालजी ठहरे मजाकिया आदमी। बोले—एक बांसुरी की आवाज़ और भी चलती थी। जमनालालजी दंग। तहकीकात की कि कहां से आवाज़ आई, पर कुछ पता न चला। फिर मोतीलालजी ने कहा—नीचे किसीके दमे का सुर, ऊपर मेरे दमे का सुर मिलता था। तब खयाल आया कि नीचे काकाजी (कनीरामजी) थे—वह भी दमे से पीड़ित थे, किन्तु जल्दी में यह खयाल नहीं रहा कि उनकी आवाज भी ऊपर जायेगी। अब हंसें या अफसोस करें।

बंगले पर भोजन की पंगत भी अजीब होती थी। बड़े-से-बड़े नेता और साधारण-से-साधारण कार्यकर्ता एक ही पंक्ति में बैठकर भोजन करते। घर के नौकर, सेक्रेटरी, लड़के-लड़की, दामाद आदि भोजन परोसते थे।

कांग्रेस कार्य-समिति की दिमाग खपानेवाली गम्भीर चर्चाओं के बाद पंगत का वातावरण एकदम हंसी, व्यंग, चुटकी और कहकहों से गूंज उठता था। घंटी बजने पर पंगत बैठती थी, पर कभी मीटिंग जल्दी खतम हो जाती या विनोद में सरदार पटेल या कृपालानीजी या जवाहरलालजी पहले ही पंगत में पहुंच जाते और सामने रखी थाली को चम्मचों से बजाने लगते। पंगत में बैठे-बैठे ही कभी महादेवभाई धीरे-से कह उठते—"अरे भाई, देरी हो तो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पहले पापड़ ही परोस दो।" तब सरदार पटेल दूसरे कोने से गंभीर स्वर में बोलते—"अरे महादेव, यह मारवाड़ी का ढावा है। पापड़ संभलकर मांगना। पापड़ आया कि भोजन खलास !"

इसी पंगत में लड़कों-बच्चों के नामकरण, किसीकी सगाई, किसी लड़के के लिए लड़की की खोज, किसी लड़की के लिए लड़के की तलाश आदि का काम भी होता। मदालसा के बड़े लड़के 'भरत' का नाम इसी तरह की एक पंगत में रखा गया था।

पंगत में परोसने के नियम भी बने हुए थे। परोसने वालों को यह हिदायत थी कि भोजन करनेवाले को मांगना न पड़े और परोसनेवाले को भोजन करनेवालों से पूछना न पड़े और परोसना चलता रहे। इतने पर अगर थाली में जूठन किसीने छोड़ी तो जमनालालजी फौरन कहते—"आज फलां थाली में भोजन करनेवाले और उनको परोसनेवाले पर एक-एक रुपया जुरमाना किया गया।" कोई-कोई नेता या बालक थाली में जूठी चीजों पर उलटी कटोरी ढांक देता। जमनालालजी की निगाह इसे भांप लेती और कटोरी उलटने को कहा जाता।

शुरू-शुरू में जमनालालजी को होड़ लगाकर भोजन कराने का भी बड़ा शौक था। बगीचे में संतरों के पेड़ों के नीचे बैठकर शर्त लगाकर सैकड़ों संतरे इस प्रकार खिलाया करते थे। इसी प्रकार आम के दिनों में आम भी खिलाते थे। वर्धा में मौसम में हुड्डे (जवार के भुट्टे) भूनकर खाये जाते थे। मौसम में कई बार इसकी गोठ होती। इनमें भी होड़ रहती। इसी तरह 'वाणी' (कच्ची जवारी) का हलुवा, वाणी के ही दही-बड़े, बैंगन का भुरता, कच्ची मूली, अमरूद व तिल्ली की चटनी रहती थी। यह सब जवारी के भुट्टों की बनी चम्मचों से खाया जाता था। इस प्रकार पंगत की रंगत जमी रहती।

भोजन के बाद बीच के कमरे में बैठक जमती। बड़े-बड़े लोग बच्चों के खेल खेलते। जवाहरलालजी घोड़ा बनते। सरोजिनी नायडू सवार बनतीं, लेकिन अपनी भारी-भरकम देह को कैसे सम्हालतीं। दो-दो आदमी उनको पकड़कर बैठाते, लेकिन हंसी के मारे वह दुगुनी हो जाती थीं। बैरिस्टर आसफअली सरकस-जैसी कलाबाजी दिखाते। राजाजी माचिस की डिब्बी लेकर बच्चों को खेल दिखाते।

राजेन्द्रबाबू को दमे की शिकायत रहती थी। वे इन खेलों में शामिल न हो पाते थे। सो जमनालालजी उनके कमरे में जाकर शतरंज की बाज़ी लगाकर बैठ जाते।

ये सब दृश्य और रंगत आज सपने की बात हो गईं।

तैंतीस—

व्यक्तिगत सत्याग्रह में भाग लेनेवाले का जेल से छूटने पर पुनः जेल जाना आवश्यक था। लेकिन बीमार आदमी का सत्याग्रह में भाग लेना मना था। इस सत्याग्रह के प्रथम सत्याग्रही विनोबाजी चुने गये थे। इसके बाद तो एक-एक करके अनेक लोग जेल जाने लगे।

जमनालालजी को अस्वस्थता के कारण कुछ महीने पूर्व ही जेलवालों ने छोड़ दिया। बापूजी ने आराम करने को कहा, लेकिन उन्होंने कहा कि मैं बिना काम किये कैसे रह सकता हूं ? मुझे तो किसी-न-किसी काम में लग ही जाना चाहिए। बापूजी ने कहा कि कम-से-कम जेल

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

की अंतिम अवधि तक तो यह मानकर आराम करो कि अभी जेल में ही हो, मुद्दत पूरी होने के बाद काम के बारे में सोचेंगे। इसके बाद बापू ने उन्हें राजकुमारी अमृतकौर के यहां शिमला भेजा। उनकी बड़ी भारी कोठी है। उसमें उनके परिवार के पांच व्यक्ति रहते थे। एक कुत्ता भी था और नौकर थे ३५ !

जमनालालजी ने वहीं से बापू पर अपनी इच्छा प्रकट की, मुझे ऐसी आध्यात्मिक मां मिलनी चाहिए जो मुझे अपनी गोद में सुला सके। बात बड़ी विचित्र थी। और तो सब कुछ मिल सकता है, परंतु मां कहां मिल सकती है ? बापू ने कहा—"पहाड़ जैसे लड़के को गोद में सुलानेवाली मां कहां मिलेगी ?" फिर भी बापू ने उनको लिखा कि शिमला से लौटते समय देहरादून में कमला नेहरू की गुरुमाता आनंदमयी से मिलते हुए आना। जमनालालजी लौटते हुए वहां गये। गये तो थे केवल दो घंटे के लिए, पर रह गये पंद्रह दिन।

माता आनन्दमयी के पास हरेक भक्त एकांत समय में आत्म-निवेदन करता था। एक दिन जमनालालजी ने भी समय मांगा। उन्होंने कहा—"मां, क्या मैं आपकी गोद में सो सकता हूं ?" माता आनन्दमयी ने कहा—"मां की गोद में सोने में क्या हर्ज है ?" बस, जमनालालजी आंखें मूंदकर माताजी की गोद में ऐसे सो गये, मानो कोई प्रेत पड़ा हो। थोड़ी देर बाद आंखें खोलकर उन्होंने कहा—"अगर इस समय मेरे प्राण भी छूट जायं तो कोई बात नहीं। मेरा अब सब बात से मन भर गया।" उनकी आध्यात्मिक माँ की भूख आनंदमयी की गोद में सोने से पूरी हो गई। जमनालालजी ने माता से तीन बातों की मांग की :

१. मेरी इच्छा है कि आश्रम के निकट जमीन लेकर मकान बनवाऊं, ताकि कोई कार्यकर्ता आराम तथा मानसिक शान्ति प्राप्त करना चाहे तो उसे भेजा जा सके।

२. मुझे 'सेठजी' के बजाय किसी भी छोटे नाम से संबोधित किया जाय।

३. मैं तभी जलपान करूंगा जब आप बताओगी कि मेरी मृत्यु कब होगी।

पहली बात की स्वीकृति आसान थी, दूसरी बात की मांग में माताजी ने 'भैया' शब्द चुन लिया। लेकिन तीसरी माँग बड़ी कठिन थी। माताजी ने कहा—"यों मृत्यु का समय तो किसीको कैसे बताया जाय। हां, आदमी को यह समझना चाहिए कि हर क्षण उसके सिर पर उसकी मौत खड़ी है।" इससे जमनालालजी का समाधान कैसे होता। बोले—"यह तो ठीक है, पर समय बताओ।" आखिर माताजी ने कहा—"छः महीने की तैयारी से काम करो।" इस वचन पर जमनालालजी को दृढ़ श्रद्धा हो गई, ऐसा लगता है। उनकी डायरियों में मिलता है कि छः महीने तक वर्धा ही में रहना, रेल या मोटर में नहीं बैठना। यह निर्णय उन्होंने १५ अगस्त, १९४१ से १५ फरवरी, १९४२ तक के लिए किया था।

इन दिनों उनका आत्म-मंथन बड़ी तेजी से चल रहा था। वह व्यापारिक तथा अन्य कार्यों से निवृत्त हो गये और अपनी व्यापारिक बुद्धि के अनुसार ऐसा हिसाब बैठाया कि यदि इन छः महीनों में जाना पड़ा तो उसकी तैयारी रहे। ऐसी साधना करें कि अधिक-से-अधिक समय पारमार्थिक कामों और चित्त-शुद्धि में लगे और आगे रहना पड़े तो आदतें सुधर जायें। इसलिए घरबार से निवृत्ति लेकर जीवन को ऐसे कामों में लगाया, जिससे उनका आत्मीय भाव मूक प्राणियों तक बढ़े। इसीलिए उन्होंने गो-सेवा को चुना था। मानव-सेवा में कहीं-न-कहीं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कुछ संघर्ष होना संभव है। जमनालालजी संपूर्ण चित्त-शुद्धि में लग गये। हर क्षण का सदुपयोग करने के प्रयत्न में रहे।

जब उनकी जन्मतिथि आती तब वह अपने पिछले साल का लेखा लेते और नये साल में पदार्पण करते समय अच्छे संकल्प करते। वे संकल्प पूरे हों, इसलिए प्रातःकाल की प्रार्थना के बाद गुरुजनों के आशीर्वाद लेते। उसके बाद ही जल-पान करते।

बापूजी की सलाह से जमनालालजी ने गो-सेवा का कार्य अपने लिए पसंद किया था और गो-सेवा-संघ की स्थापना करके वह उस काम में लग गये। उन्होंने अपने-आपको इस काम में इतना तल्लीन कर लिया कि सिर्फ गो-सेवा की ही चर्चा करते थे। यों गो-सेवा-संघ की स्थापना तो अक्तूबर, १९४१ में हुई थी और उसके वह अध्यक्ष बने थे, पर उसकी तैयारी तो उन्होंने इसके पहले ही कर ली थी।

एक बार गाय का खुर उनके पांव पर पड़ गया। खुर गड़ गया। पैर में सूजन हो जाने से चलने में कष्ट होता था। लेकिन दोष अपने को ही देते—"मैं कैसा आदमी हूं जो सेवा के लायक नहीं, गाय तो पशु है।"

बछड़े पर हाथ फिराते और कहते—"इसपर हाथ फिराने से कितना सुख मिलता है। मूक पशु की सेवा में ही निःस्वार्थ प्यार है।"

वे चाहते थे कि अपना बचा हुआ जीवन प्राचीन ऋषियों की तरह कुटियों में बितावें। इसलिए एक कुटिया गोपुरी के पास बनाकर रहना चाहते थे, जहां रहकर वे गो-सेवा और आत्मचिंतन में समय बितावें। उन्होंने कुटिया बनवाना शुरू करा दिया था और ताकीद कर दी थी कि वह जल्दी-से-जल्दी बन जाय।

अधूरी बनी झोंपड़ी में दूसरे दिन ही से रहने चले गये। उन्हें पूरा एकांत चाहिए था। इसलिए मैं भी डरती हुई वहां उनके पास रहने कैसे जाती, क्योंकि मैं उनके खाने-पीने की या आराम की चिंता करूं, यह भी उन्हें असह्य था। वहां उन्होंने अपने पास कौसल्या नाम की एक गाय रक्खी थी। हाथ-मुंह धोकर वे उसकी सेवा करते, उसके बदन को सहलाते फिर वह अपनी मां के पास चले जाते और उनकी गोद में अपना सिर रखकर भजन सुनते और डायरी लिखते। उसके बाद प्रार्थना करके घूमने जाते। घूमते हुए सबसे मिलते, सुख-दुःख की बात पूछते और जिससे खास बात करनी होती, उसे साथ ले लेते। इस प्रकार रात-दिन जमनालालजी का चिंतन गो-सेवा-संबंधी कामों का ही चलता। कोई व्यापार की बात करता तो कहते—"मेरे साथ व्यापार की बात मत करो।" कुटिया का नाम 'जानकी-कुटीर' रखा था।

इसी बीच राधाकृष्ण खादी के काम से सीकर जाने लगा तो मैं भी उसके साथ चली गई। वर्षों से जमनालालजी का नया जीवन-क्रम देखकर मन कुछ खिन्न रहने लगा था। उनके काम में मेरा सहयोग तो संभव था नहीं। इस कारण मन के बहलाने के विचार से ही सीकर गई थी।

कुछ दिन बाद रामाकृष्ण (सबसे छोटा पुत्र) लेने आया। मैं वापस वर्धा पहुंची।

मेरे लौटने पर जमनालालजी बड़े खुश हुए और हंसकर बोले—"जानकीजी, आ गईं।' उन दिनों जमनालालजी नेत्र-यज्ञ तथा गो-सेवा-सम्मेलन के कामों में व्यस्त थे। मैं बंगले पर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रहने लगी। एक दिन वह बोले—"तेरा क्या मन है ? सेवाग्राम बापू के पास जाना हो तो वहां जा सकती हो। कुटिया पर आना हो तो कुटिया चलो।" मैंने कहा—"मैं तो कुटिया में चलूंगी।" जमनालालजी बोले—"ला, अपना विस्तर टमटम में रख।" मेरी तो मनभाती बात हो गई। जल्दी-जल्दी विस्तर लपेटकर मैंने टमटम में रखा और गोपुरी पहुंच गई। हम दोनों वहां पांच रोज ही साथ रह पाये।

मेरा मन किसी काम में लगा रहे, इस खयाल से गो-सेवा के लिए आये हुए एक साधु से उन्होंने कहा कि जानकीदेवी को सितार सिखा दो। मैं सीखने लगी, लेकिन जमनालालजी रात-दिन गो-सेवा के काम में ही लगे रहते थे।

गो-सेवा के कार्य को और बढ़ाने की दृष्टि से जमनालालजी ने बापूजी की सलाह से एक गो-सेवा-सम्मेलन का आयोजन किया। सम्मेलन सफलतापूर्वक हुआ। इसमें सारे हिन्दुस्तान से लोग भाग लेने के लिए आये। जमनालालजी को पुराने मित्रों और कार्यकर्ताओं से मिलकर बड़ी खुशी हुई।

चौंतीस—

सम्मेलन पूरा होने के वाद से उनके सिर में दर्द रहने लगा। उनकी आदत ऐसी थी कि दर्द को चुपचाप वरदाश्त करते। वहुत कम उसकी चर्चा करते। दर्द बहुत होता तभी उनके मुँह से बात निकलती।

मातादीनजी भगेरिया ने गांधीजी-सम्वन्धी काव्य लिखा था। इन दिनों वे आये हुए थे और जमनालालजी को सुनाना चाहते थे। जमनालालजी की ऐसी दशा कहां थी जो सुनें, पर उनका मन राजी रखने के लिए महिलाश्रम में उन्होंने एक दिन कार्यक्रम रखवाया, जिससे महिलाश्रम की लड़कियां भी सुन सकें। हम लोग भी पहुंचे। जैसे-तैसे वह थोड़ी देर वैठे। जव दर्द वर्दाश्त के वाहर हुआ तो उठकर जानकी-कुटीर में चले गये और सो गये। दूसरे दिन भी सिर में दर्द था। लेकिन उन दिनों सेवाग्राम में घनश्यामदासजी विड़ला ठहरे हुए थे। उनका फोन आया तो वह जाने के लिए तैयार हो गये। जव मैंने कहा कि आपने तो कहा था कि आज दर्द है, इसलिए यहीं रहेंगे। तो वह वोले—"आज बापू का मौन है। घनश्यामदासजी अकेले रहेंगे। उनसे कुछ हँसी-मजाक करेंगे। उनका दिल वहलेगा।" यह कहकर वह टमटम में वैठे और सेवाग्राम को रवाना हो गये। लेकिन उनका सिर-दर्द वढ़ता ही गया। वहां पहुंचने पर महादेवभाई, किशोरलालभाई तथा कृष्णदास गांधी से वोले कि मुझे आपसे वात करनी है, पर आज तो सिर-दर्द वहुत है, फिर आकर वात करूंगा। विड़लाजी से थोड़ी-वहुत वातचीत करके वापस आये। वापूजी से विदा लेने लगे, पर वह स्नानघर में थे। वह ऐसे ही लौट आये। वापूजी को मालूम हुआ तो उन्होंने कहा कि सिर में दर्द था तो मैं उन्हें रोक लेता।

सेवाग्राम से वह वापस आये। उन्हीं दिनों चीन-राज्य के प्रधान चांगकाई शेक के आने की बात थी, इसलिए वजाजवाड़ी में व्यवस्था समझाकर वह जल्दी ही जानकी-कुटीर लौटे और सो गये। दूसरे दिन सवेरे भी सिर में कुछ दर्द था। इसलिए एनिमा लिया। इससे दर्द कुछ हलका हुआ तो वोले—"देख, मैंने विना दवाई के ही वीमारी दूर कर ली।" फिर वह घूमने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चले गये। मैं भी साथ थी। बजाजवाड़ी पहुंचने पर चांग-काई शेक का कार्यक्रम रद्द होने की खबर मिली। वह लोगों से बातचीत करने लगे। मैं भी बंगले में काम देखने लग गई। बाद में उन्होंने बंगले की व्यवस्था आदि के बारे में बात की। उसके बाद दुकान जाने को रवाना हुए। उस दिन एकादशी थी और सावित्री ने फलाहार के लिए दुकान पर हम दोनों को बुलाया था। राजनारायणजी और ओम् भी उसी दिन बम्बई से आये थे। जमनालालजी बोले कि आज तो ताश खेलेंगे, जिससे सिर हलका हो। वह दुकान पर एक साल के बाद आये थे।

कुछ देर सुस्ताने के बाद फलाहार किया। दो बजे सेवाग्राम जाने के लिए टमटम तैयार करने को कहा। लेकिन ओम् बोली कि आज हमें आपके साथ चार बजे तक ब्रिज खेलना है। जमनालालजी बोले—"अच्छा, मैं थोड़ा आराम कर लेता हूं, तू चरखा लगा दे।" राजनारायणजी से बोले—"तुमसे डेरी-फार्म खोलने की बात करनी है, सो मैं उठूं तो याद दिला देना।" उसके बाद पन्द्रह-बीस मिनट सोकर शौच गये। लौटकर आये तो बहुत थके हुए थे, तकिए के सहारे पड़ गये। मैं उन्हें आराम करते देखकर दूसरे कमरे में चली गई। ओम् ने देखा कि काकाजी सोकर उठने के बाद तो चरखा कातनेवाले थे, यह बात क्या है? सावित्री और ओम् भागी आईं। जमनालालजी ने सावित्री से कहा—"मेनथाल हो तो लाओ।" वह दौड़ी-दौड़ी नीचे गई। घर में मेनथाल न मिलने पर दवाईवाले की दूकान से मंगाया। उस समय उसके सिर में भयानक दर्द हो रहा था। उन्हें उलटी आई। उसके लिए उठे। उलटी करके फिर लेट गये। मैंने पैरों में घी मसलने के लिए ओम् को बुलाया तो इशारा करके कहा कि तुम्हीं मलो। बहू और बेटी को पैर छुआने से वह बचते थे। मैं घी मलने लगी। सिर में दर्द ज्यादा बढ़ा तो वह बोले—"अरे, कोई एस्प्रीन ही दो।" इतना कहकर वह एकदम निढाल हो गये। उन्हें फिर उलटी हुई। इतने में डाक्टर भी आ गया। मैंने आंख खोलकर देखीं तो लाल सुर्ख थीं। डाक्टर ने रक्त-चाप लिया तो २५० था। उनकी नस काटने की बात डाक्टरों में चली, लेकिन किसीकी हिम्मत न पड़ी। थोड़ी देर के बाद सिविल सर्जन ने आंख देखी और वह बाहर चले गये। हमने समझा कि इन्हें कष्ट न हो, इसलिए वह बाहर चले गये हैं। लेकिन समझते देर न लगी कि सबकुछ समाप्त हो गया है। बात चारों ओर फैल गई। विनोबाजी आ गये। बापू को फोन गया। वह भी आये। जहां वे पहले सोते-बैठते थे और जहां बैठकर उन्होंने दादाजी को वैराग्य-भरी चिट्ठी लिखी थी, वहीं उनके प्राण गये। ओम् ने कहा कि भले ही उन्होंने घर त्यागकर झोंपड़ी में वास किया हो, पर वह राजयोगी थे, इसलिए महल में ही गये।

विनोबाजी तो आकर स्तब्ध बैठ गये, पर बापूजी ने आते ही जमनालालजी के सिर पर हाथ रखा। बापूजी को देखते ही मैं बोली—"बापूजी, आप इनके पास होते तो यह कैसे जाते। इनकी तबीयत बिगड़ते ही जल्दी खबर भेज दी जाती तो अच्छा होता। बस, अब तो आप इन्हें जीवित कर दीजिये। आप ही जिला सकते हैं।"

बापूजी बोले—"जानकी, तुम्हें अब रोना नहीं हैं, तुम्हें तो हँसना है और बच्चों को भी हँसाना है। जमनालाल तो जिन्दा ही है। जिसका यश अमर हो, उसकी मृत्यु कैसी? उसकी मृत्यु तो तभी हो सकती है, जब तुम उसके रास्ते न चलो। उसने परमार्थ की जिन्दगी बिताई। जो काम उसने अपने कन्धों पर लिया था, उसे अब तुम सम्हालो। मैं तुम्हें झूठा धीरज देने नहीं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आया। जमनालाल तो जिन्दा ही है। उसे जिन्दा रखना हमारा काम है।"

मैंने विनोबाजी की तरफ इशारा करके कहा—"तुम तो इनको भगवान के दर्शन कराओ।" पर वह चुपचाप बैठे रहे। बापू बोले—"जानकी, जमनालाल को तो भगवान के दर्शन हो चुके, अब तो तुम्हें करना बाकी है। उसकी तैयारी करो। जो काम उन्होंने आधा किया है, उसे पूरा करो। उसके लिए अपने सर्वस्व को होम कर दो।"

बचपन में सती होने की मेरी इच्छा थी, वह जाग उठी। मैं बोली—"बापूजी मैं सती होना चाहती हूं। आज्ञा दीजिये।" बापू बोले—"शरीर को जलाने से क्या फायदा? वह तो तुच्छ है, मिट्टी है। अपने सब दुर्गुणों को जला देना ही सतीत्व है। अपने सब दुर्गुणों का चिता में होम करो। फिर बाकी बचेगा, वह शुद्ध कंचन रहेगा। उसको कैसे जलाया जाय? उसे तो कृष्णार्पण ही किया जा सकता है। स्त्रियों को मैं त्याग-मूर्ति मानता हूं, क्योंकि हिन्दू-स्त्री विधवा होने पर सारे भोगों को तिलांजलि देती है, विकारों का शमन करती है। अब तुम त्याग-मूर्ति बन गईं। अपने अवगुणों को जमनालाल की चिता में जला दो। अपना जो कुछ हो, वह उसके काम में लगा दो। यही सती होना है। उठो, तुम सती हो जाओ।" मैं बोली, "मैं और मेरी सम्पत्ति उनके काम के लिए अर्पित है।"

खबर तो चारों ओर फैल ही गई थी। बम्बई से फोन आया कि लोग स्पेशल गाड़ी लेकर जमनालालजी की अन्तिम यात्रा में शामिल होना चाहते हैं। प्रश्न खड़ा हुआ कि क्या किया जाय, मेरे ध्यान में उनके वे शब्द आ गये, जो उन्होंने बम्बई में अभ्यंकरजी की मृत्यु पर कहे थे—"प्राण चले जाने पर शरीर का क्या? उसके लिए धूमधाम क्यों!" मैंने कहा—"मृत शरीर को रातभर रखना उनकी भावना के विरुद्ध है। सबको तकलीफ होगी। किसीका भी कष्ट उन्हें असहनीय था। तब यही निर्णय हुआ कि तुरन्त ही तैयारी की जाय।" राधाकृष्ण ने पूछा कि स्नान कहां कराया जाय? मैं बोली—"नीचे चौक में।" घर में गंगाजल का घड़ा था, वह लाया गया। उनकी देह नीचे ले जाने लगे। मैं हाथ पकड़कर 'ओम्-ओम्' कहती हुई चली। गंगाजल से जमनालालजी को नहलाया गया। मेरी चरणामृत पीने की आदत थी, सो मैंने अंजुली भरकर स्नान कराया हुआ गंगाजल पी लिया। मैंने उस जल से शीशी भर ली। पर बाद में विनोबाजी के समझाने पर उस जल को समाधि पर लगाये हुए पौधे पर चढ़ा दिया। समाचार मिलते ही लोग इकट्ठे हो गये। किसीको यह बात सच नहीं लगी। कोई कहता था कि हमने आज उन्हें गोरक्षण में देखा। कोई बोलता था कि बजाजवाड़ी में बैठे थे, किसी ने कहा, दुकान पर जाते मैंने देखा। यह कैसे हो सकता है? नहलाने के बाद बापूजी ने अपना दुपट्टा उतारकर उढ़ा दिया। जमनालालजी के लिए अन्तिम वस्त्र तो विनोबाजी के कते सूत की खादी का मंगाया गया। मैंने सोचा, बापूजी का दुपट्टा क्यों जलाया जाय, इसलिए उसे उठाकर मैंने गले में लपेट लिया, जो अब भी मेरे पास है।

जब अरथी को बांधने लगे तो दादीजी एकदम चिल्लाईं कि यह क्या कर रहे हो। अबतक तो वे यह समझती रहीं कि यहां कोई बड़ी सभा है, लोग इकट्ठे हुए हैं, गांधीजी भी आये हैं। उन्हें पता भी क्या लगे कि ऐसी भयानक घटना हो गई है, क्योंकि रोना-धोना तो सब मन में ही था। कोई भले ही चुपचाप इधर-उधर रो ले, लेकिन जमनालालजी की हिदायत रही थी कि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मौत के समय रोया-धोया न जाय, मौत को बुरा न माना जाय। दादीजी का रोना असीम था। बापूजी उन्हें बहुत देर तक समझाते रहे, पर उनके रुदन को रोकना असम्भव था। इसी स्थान पर उनके तीन बेटे और एक जँवाई गया था, उसका स्मरण कर उनका दुःख बढ़ता ही जाता था।

तैयारी होने पर अरथी चलने लगी। मैं भी ओम्-ओम् करती हुई अरथी पकड़े हुए जा रही थी। महिलाश्रम की लड़कियां, घर कुटुम्ब की औरतें, गांव के लोग मानो समुद्र ही उमड़ पड़ा हो। लड़कियां बोल रही थीं—"राम धुन लागी, गोपाल धुन लागी।" सब लोग यही बोलते हुए जा रहे थे। मैंने कहा कि जो कंधा देना चाहे, उसे देने दो। चाहे हिन्दू हो या मुसलमान, जमनालालजी तो सबके थे।

दाह-क्रिया गोपुरी में जमनालालजी की झोंपड़ी के सामने करना तय हुआ। चिता की तैयारी की गई। कपूर से चिता को प्रज्ज्वलित किया गया। मैंने बापूजी के हाथ में कण्डा दिया। मैं कहीं चिता में कूद न जाऊं, इसलिए बापूजी ने मुझे पकड़ लिया था। बापूजी ने विनोबाजी को वेद और उपनिषदों के मन्त्र-पाठ करने को कहा। विनोबाजी ने उपनिषदों के मन्त्रों का पाठ किया। परचुरे शास्त्री ने वेद-मन्त्र कहे। अम्तुस्लाम ने कुरान की आयतें कहीं। बा, महादेवभाई तथा भगवानदेवी सेकसरिया को तो मूर्छा आ गई, पर मैं शून्य भाव से चिता की ओर देखती रही। इस समय मन में यही भाव था मानो वह मुझमें प्रवेश कर रहे हैं। पर धीरे-धीरे ज्यों-ज्यों रात पड़ने लगी, खालीपन का अनुभव होने लगा। विनोबाजी रात-भर मेरे पास बैठे थे। मैं उनसे बार-बार पूछती कि अब वह कहां मिलेंगे।

जमनालालजी के जाने की वेदना तो बाद में धीरे-धीरे बढ़ने लगी और अब तो क्षण-क्षण उनकी कमी महसूस होती रहती है।

पैंतीस—

जब जमनालालजी का देहान्त हुआ तब कमलनयन गोला के शक्कर के कारखाने में था। उसे कलकत्ते से फोन मिला। जब फोन में कहा गया कि वर्धा में बहुत बड़ी दुर्घटना हो गई, तो उसके मन में यही विचार आया कि या तो काकाजी नहीं रहे या बापूजी नहीं रहे। लेकिन दूसरे ही क्षण यह विचार आया कि बापूजी की देश को बहुत जरूरत है और उनका रहना आवश्यक है। जब उसे निश्चित रूप से मालूम हुआ कि काकाजी नहीं रहे, तब उसने कारखाने के कार्यकर्ताओं और मजदूरों को जमा करके यह दुःखद संवाद बताया और कहा कि काकाजी के शोक में कारखाना बन्द नहीं होना चाहिए। ऐसी गम्भीरता उसमें उस समय थी। घटना हृदय को हिला देनेवाली थी। देश-सेवक पिता के गो-लोकवास की खबर पाकर बेटे द्वारा ऐसी बातों का किया जाना मामूली बात थोड़े ही थी। लेकिन हमारे यहां ये बातें जमनालालजी के आचरण और व्यवहार के कारण स्वाभाविक बन गईं थीं। गोला से रवाना होने पर उसे लखनऊ स्टेशन पर माता आनन्दमयी मिल गईं। उनकी वर्धा आने की तैयारी थी। जमनालालजी ने पिछले छह महीने में माता आनन्दमयी को वर्धा बुलाने के बहुत प्रयत्न किए थे, लेकिन सब प्रयत्न विफल रहे। जमनालालजी जब किसी को वर्धा बुलाने का निश्चय करते तब बुलाकर ही चैन लेते, पर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

माता आनन्दमयी के समक्ष एक न चली। पर अब वह आ रही थीं, यह अद्‌भुत घटना थी। कमलनयन ने जब उनको बताया कि काकाजी तो चले गये हैं, तब वह बोलीं कि 'भैया' को आत्म-दर्शन हो रहा है। उसके बाद वह रुक गईं और तीन दिन बाद वर्धा आई।

जमनालालजी के शरीरान्त की खबर सुनने के बाद कमलनयन ने जल भी छोड़ दिया। स्टेशन पर जब उसे मालूम हुआ कि विनोबाजी रामायण का पाठ कर रहे हैं तब वह नहाकर वहां पहुंचा। उस समय की उसकी दशा का वर्णन करना कठिन है। आते ही मेरे गले से लिपट गया। हम दोनों शून्यवत् थे। हमारे आंसू सूख गये थे। पर लोगों की आंखों से आंसू बह रहे थे। जब उसे छाछ पीने को कहा गया तब मालूम हुआ कि तीन दिन से पानी ही कहां लिया है। आखिर उसने मुझे छाछ पिलाकर ही स्वयं छाछ पी।

घर के लड़के-लड़कियों, बहुओं सबकी दशा एक-सी थी। जैसे जमनालालजी की आत्मा ने हम सबके अन्दर प्रवेश किया हो, इस तरह हम सब भावावेग में थे। सबके मन में एक यही बात रम रही थी कि उनके कार्यों में योग देकर उनके जैसे बनें। कमल ने वर्धा पहुंचने पर सबसे पहले यह जानने की कोशिश की कि उसके काकाजी ने किस संस्था के लिए क्या देने को कहा था या उनकी क्या इच्छा थी। उसने सर्वप्रथम उनके सब वचनों की पूर्ति की। पवनार का बंगला उसने विनोबाजी को अर्पित किया। बजाजवाड़ी में आने-जानेवालों के लिए जमनालालजी के द्वारा जैसी व्यवस्था चलती थी, वह चालू रखने के लिए एक लाख रुपये उसने लक्ष्मीनारायण-मंदिर में जमा करा दिये, जो सात साल में खर्च हुए और अब वह खर्च लड़के ही चलाते हैं। दोनों भाइयों ने विचार करके जमनालालजी की जो सम्पत्ति थी, उसका ट्रस्ट बनवा दिया। जब घन-श्यामदासजी बिड़ला ने घर का हिसाब देखा तो वह ताज्जुब में रह गये। बोले कि जमनालालजी तो धन के बल की जगह आत्मबल पर ही अपना काम चलाते रहे। बिड़लाजी उनके अभिन्न मित्र थे। उनको भी उनकी मृत्यु से बड़ा धक्का लगा। हमारे परिवार के प्रति उनकी जो आत्मीयता थी वह अबतक चल रही है।

जमनालालजी के शुरू किये गए रचनात्मक कामों को पूरा करने के प्रश्न पर विचार करने के लिए बापूजी ने जमनालालजी के मित्रों तथा स्नेहियों की एक सभा बारहवीं के दिन बुलाई, जिसमें बापू ने कहा कि जमनालालजी के चाहनेवालों, प्रेमियों और मित्रों का यह कर्त्तव्य है कि उनके कामों को करें, जिससे उनकी आत्मा को सन्तोष मिले। उन दिनों वातावरण में गम्भीरता थी और बापूजी, जमनालालजी के प्रति लोगों के हृदय में जो सद्‌भावना थी, उसे काम में लगाना चाहते थे। एक तो योंही मृत्यु के बाद वैराग्य की भावना उमड़ पड़ती है, फिर जमनालालजी जैसे कर्मशील और प्रेममूर्त्ति के वियोग से तो वैराग्यमय वातावरण और भी अधिक गहरा हो गया। उसपर बापूजी जैसे महापुरुष के बोलने का प्रभाव तो सबपर पड़ना ही था। उन दिनों मेरा हाल अजीब था। मेरे लिए यह आघात ऐसा था कि मैं सन्न-सी हो गई थी। अब उनके जीवन का महान उद्देश्य पग-पग पर याद आने लगा। उसकी सचाई प्रतीत होने लगी और उसको अपने जीवन में उतारा जाय यही भावना बढ़ती गई।

जमनालालजी के स्वर्गवास के बाद उनके शरीर की साक्षी देकर जो कुछ मेरे पास था उसके समर्पण का संकल्प तो मैंने कर ही लिया था, लेकिन अब अपने आपको काम में लगाने की

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बात थी। हमारे परिवार में बापूजी के विचारों का गहरा असर था। जो कुछ मुझसे बन पड़ा, उसका श्रेय तो बापूजी को ही है। पिछले बीस साल से जो उपदेश वह देते रहे थे, उसीका यह परिणाम था। मैं अपना एक-एक क्षण जमनालालजी के काम में लगाऊं, यही बापूजी चाहते थे। इसी कारण बापूजी ने मुझपर गो-सेवा की जिम्मेदारी डाली। मैंने गो-सेवा का काम करने का संकल्प तो कर लिया, पर जब मुझसे 'गो-सेवा-संघ' की अध्यक्षा होने के लिए कहा गया तब मैं सहम गई। मैंने बापूजी से कहा कि मैं काम तो करूंगी, लेकिन इतना बोझ मुझपर मत डालिये। तब मुझे चुप रहने का इशारा कर उन्होंने गो-सेवा-संघ के काम का बोझ मुझपर डाल दिया और कहा—"तुम्हें ऐसे लोगों की मदद मिलेगी जो तत्त्व और व्यवहार को संभाल सकें।" इस दृष्टि से विनोबाजी तथा घनश्यामदासजी बिड़ला उपाध्यक्ष बनाये गए। वातावरण ही ऐसा था कि बापूजी ने जो कुछ कहा, उसे मानना और अपनी शक्ति के अनुसार उस काम को करना, यही सबकी मनोवृत्ति थी। इसलिए विनोबाजी तथा घनश्यामदासजी ने भी स्वीकृति दे दी। बारहवीं को मृतक के पीछे सांड छोड़ने की प्रथा है। इसलिए पांच लाख के एक हजार सांड उनके पीछे छोड़ने का संकल्प रामेश्वरदासजी बिड़ला ने किया और उसे उन्होंने पूरा किया।

मैं 'गो-सेवा-संघ' की अध्यक्षा बनी। शांतिकुमार मुरारजी भी एक उपाध्यक्ष बने। संस्था के खर्च आदि का प्रबन्ध मुझसे कैसे होगा इसीकी चिन्ता रहती। शांतिकुमारजी विनोद से कहते—"मैयाजी, तुम सबसे डरती क्यों हो, या पूछती क्यों हो? जो जी में आवे सो करती जाओ, गाय को भैंस का पाड़ा होने से तो रहा।"

बापूजी ने बारह दिन के बाद मुझे सेवाग्राम बुला लिया। सावित्री भी मेरे साथ सेवाग्राम रहने चली आई थी। उसके जीवन में विशेष परिवर्तन आ गया था। सारे राजसी सुखों को छोड़कर वह आश्रम का जीवन बिताने लगी और वहां जो कुछ आश्रम का खाना मिलता, वही खाकर आश्रम में काम करती। जब बापू का 'करो या मरो' आंदोलन शुरू हुआ तब वह भी जेल गई। वह नाजुक तो थी ही और सुख-वैभव में पली थी। उससे जेल जीवन कैसे बरदाश्त होगा, यह प्रश्न था। लेकिन उन दिनों उस पर भी एक तरह का नशा छाया हुआ था। ओम् भी साथ गई। महिला-आश्रम की अस्सी लड़कियां भी निकल पड़ीं। यद्यपि सावित्री ने जेल-जीवन को बड़े उत्साह और आनंद के साथ बरदाश्त किया, मन को सम्हाले रही, तथापि शरीर को आखिर कैसे बरदाश्त होता? वह बीमार पड़ गई। जेल से छूटकर जब वह आई तब उसे कुरसी पर लाया गया। उसका चेहरा देखकर लोगों को रोना आ गया। जेल से उसके स्वास्थ्य पर हुए परिणाम को दूर करने के लिए उसे तीन साल मसूरी रहना पड़ा।

राम भी ९ अगस्त को बापू की गिरफ्तारी के बाद गांवों में जाकर उनका संदेश सुनाने लगा। पुलिसवाले तो पीछे पड़े ही हुए थे। वह उनको छकाकर गांवों में जाता और लोगों को समझाता। एक बार पुलिस वालों ने उसे खेतों में देख लिया। वे पीछे दौड़े। राम पुल के नीचे छिप गया। पुलिस वालों ने लकड़ी के कुन्दों से मार-मारकर राम को निकाला और बाहर निकालने पर उसे बहुत पीटा भी और अपशब्द भी कहे। तब उसने कहा—"तुमको मारना है तो जितना चाहो मार लो। लेकिन गाली क्यों देते हो?" उसे जेल ले गये। बापूजी ने 'करो या मरो' का नारा इस तरह लगाया था कि सबके ऊपर उसका गहरा प्रभाव पड़ा और सभी लोग मरने का

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

डर छोड़कर काम करने लगे। धीरे-धीरे सब लोगों को पकड़ लिया गया। कमल इसलिए रुक गया कि राधाकृष्ण के ऊपर सरकार ने ऐसा केस बनाया कि वह फांसी पर ही चढ़ाया जाय। उस केस के लिए उसे बाहर रहना पड़ा, पर वह हर तरह से आंदोलन को मदद पहुंचाता रहा। उसने भी तन, मन और धन से इस आंदोलन में साथ दिया।

मैं गो-सेवा के काम में लगी ही थी कि धीरे-धीरे सब लोग इस आंदोलन के कारण जेल चले गये। उस समय 'गो-सेवा संघ' के मंत्री स्वामी आनंद थे और सहायक मंत्री थे श्री रिषभ-दास रांका। वे भी जेल चले गये, और पारनेकरजी तथा स्वामी आनंद आंदोलन में लग गये। राधाकृष्ण पर जो केस चला, वह भयानक था। वह जेल में था ही। श्रीमन्‌जी भी पकड़े गये। बालुंजकरजी पहले तो आंदोलन के काम में लगे और बाद में वह भी जेल चले गये। जैसे-तैसे काम चलता रहा। मैं भी थोड़ी-बहुत देख-रेख करती; पर ४२ के इस महान् आंदोलन के आगे रचनात्मक कामों की ओर कुछ दिनों तक बहुत ही कम ध्यान दिया गया। सरकार ने भी दमन बड़े जोरों का किया। ऐसा मालूम पड़ता था कि अब दस साल तक कांग्रेस का उठना मुश्किल है। इस तरह से उसे कुचल दिया गया। बच्चों तक को 'महात्मा गांधी की जय' बोलने पर बेरहमी से पीटा गया।

इस आंदोलन ने अनेकों के बलिदान लिये थे। अनेकों ने कष्ट सहा था। बापू ने भी महादेवभाई को खोया। फिर बा भी गईं। ये आघात तो बड़े थे ही, पर बापू ने तो कई जहर के प्याले पिये थे, इसलिए वह बरदाश्त करते ही गये। यों बापूजी ने यह आंदोलन बहुत सोच-विचारकर और सरकार को बहुत मौके देकर शुरू किया था, अंग्रेजों को कठिनाई में डालने का उनका इरादा नहीं था। उनकी अड़चन से लाभ उठाना उन्हें नापसंद था। इसलिए उन्होंने बहुत मौका दिया। पर अंग्रेजों की नीयत साफ दिखाई न दी और क्रिप्स-मिशन के आने पर बातचीत में उन्हें संदेह का अनुभव हुआ तब तिलमिला उठे, जब वह दिल्ली से लौटे, तो बहुत ही गंभीर थे और उन्होंने निश्चय-सा कर लिया था कि अब कुछ कठोर कदम ही उठाना चाहिए। कांग्रेस की वर्किंग कमेटी की मीटिंगें हुईं। उनमें प्रायः सभी बापूजी के विचार के ही थे। राजाजी का विचार कुछ भिन्न था। वह कहते थे कि इस मौके से लाभ उठाना ही चाहिए। बापू कुछ ऐसा कदम उठाना चाहते थे कि जिससे या तो आजादी का निश्चित वचन मिले, वरना आत्मोत्सर्ग कर दें। सरकार पकड़े तो आमरण अनशन कर देह-त्याग कर दें। अब सब गंभीरता से सोचने लगे। साथियों में सलाह होने लगी। विनोबाजी से पूछा गया। महादेवभाई और किशोरलालभाई तो ऐसे अनशन का विरोध करते थे। बापू के साथ दलीलें चलती थीं, लेकिन विनोबाजी ने तो यह कह दिया कि बापू का विचार ही ठीक है। सब गंभीर और सुन्न हो गये।

जब बंबई के लिए बापू रवाना हुए थे, तब ऐसा ही लगता था कि अब बापू का लौटना कठिन है। बापू बा और महादेव भाई के साथ गये थे, लेकिन अब जेल से छूटकर लौटे तो बा और महादेवभाई का साथ छूट गया। उन्हें अकेले देखकर आश्रमवालों के हृदय विचलित हो गये। दुर्गाबहन की स्थिति का तो कहना ही क्या था।

बापू ने धीरे-धीरे अपने रचनात्मक कामों को देखना-भालना शुरू कर दिया और काम में जुट गये। यही उनकी विशेषता थी कि जैसी भी परिस्थिति हो उसमें अपने काम को कैसे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लाभ पहुंचायें, यह विचार कर काम में लग जाते। अपने पर संतुलन रखना उनकी विशेषता थी।

भणसालीभाई ने सेवाग्राम के खेत के लहसुन बहुत खाये। पेशाब में खून आया तो किसी ने जाकर बापू से कह दिया। बापू ने भणसालीभाई को बुलाया और पूछा—"क्या है, भणसाली ? इतना लहसुन खाते हो—पेशाब में खून आता है ?" भणसालीभाई बोले—"बापू, शरीर में मांस और लोहा ही तो है। अगर पेशाब में लोहा गया तो क्या बड़ी बात है ? इसके अलावा जायगा भी क्या ?"

बापू ने किसी तरह उनका लहसुन छुड़ाया और दूध पीने को कहा। फिर तो वह ३२ रतल तक दूध पीने लगे। आश्रम के बच्चों ने कहा कि सारा दूध तो काका ही पी जाते हैं, हमें क्या मिले ? इस पर दूध छोड़ दिया और खली खाने लगे। एक दिन सोचा कि गाय के गोबर में भी तत्त्व होता है तो बस गोबर खाना शुरू कर दिया। आश्रम के लोग डरे कि कहीं इन्होंने सत्याग्रह तो शुरू नहीं कर दिया ! किसी तरह मना करके उनका गोबर खाना छुड़ाया।

छत्तीस—

बापू ने जब फिर से रचनात्मक कामों की तरफ ध्यान दिया तब उनके सामने 'गो-सेवा-संघ' के काम का प्रश्न भी आया। नये सिरे से फिर 'गो-सेवा-संघ' का काम शुरू हुआ। जमनालालजी ने अपने रहते जो गोरस-भंडार शुरू करवा दिया था, वह चल रहा था। उसमें गायों का मनों दूध आता और बिकता रहता था। 'ग्राम-सेवा-मंडल', 'बच्छराज-खेती' तथा लक्ष्मीनारायण-मंदिर की डेरियां भी चल रही थीं। व्यक्तिगत रूप से ग्वाले भी गायें पालने लगे थे। इस तरह वर्धा में गायों के काम की बढ़ती हो रही थी, पर काम को बाहर फैलाने और उसे देशव्यापी बनाने के लिए, बापूजी चाहते थे कि मैं उसमें लग जाऊं। मैं बापूजी के कहने से इधर-उधर जाने लगी। राजेन्द्रबाबू की अध्यक्षता में गो-सेवा-सम्मेलन बुलाया गया। वह भी इस कार्य में रस लेने लगे और उन्होंने बिहार में भी काम शुरू करने की दृष्टि से सम्मेलन बुलाया। वहां काम शुरू हुआ। मैं आगरा, अमृतसर, पटना, भागलपुर, सीकर, कलकत्ता, बंबई आदि स्थानों में गई और काम बढ़ाने का यथासंभव प्रयत्न करती रही।

शांतिकुमार मुरारजी की बापूजी तथा जमनालालजी पर श्रद्धा तो थी ही। वह गो-सेवा का काम करने लगे और संघ के कुछ दिन मंत्री भी रहे। उनका वर्धा आना-जाना होता था और वे बड़े प्रेम और श्रद्धा से काम करते थे।

राधाकृष्ण इस काम में काफी रस लेता था और 'गो-सेवा-संघ' के काम की पुनर्रचना में उसका बहुत बड़ा हिस्सा रहा है। यों 'गो-सेवा-संघ' का काम तो वह करता ही था, पर दूसरे कामों की जिम्मेदारी भी उसपर इन दिनों थी और खासकर 'ग्राम-सेवा-मंडल' की जिम्मेदारी रहने से रिषभदासजी को फिर मंत्री बनाया गया। वह मेरे साथ कई जगह गये और काम को बढ़ाने की कोशिश करते रहे। लेकिन इस महान कार्य के लिए जो शक्ति चाहिए थी, उसकी मैं तथा मेरे साथी अपने में कमी पाते और इस काम की विशेष प्रगति रुकी रही। मैं कुछ दिन इस काम में लगी रही, पर न मालूम क्यों, उत्साह कम होता गया और बापूजी ने जितनी अपेक्षा रखी थी, उसमें भी असफलता रही, इसका मुझे भी रंज रहा। वह भी मुझे 'कामचोर' कहा करते थे।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

धीरे-धीरे मुझे उनके सामने जाने में संकोच भी होने लगा।

दिल्ली की भंगी-बस्ती में जब बापूजी रहते थे तव वहां एक वार मैं गई। बापूजी उन दिनों थकान के कारण चार घंटे मौन रहते थे। लेकिन मुझे देखते ही वह एकदम प्रेमवश बोल उठे—"चोर आ गई, चोर आ गई।" यद्यपि बापू ने यह विनोद में कहा था, लेकिन मैं उनकी हंसी में भाग न ले सकी, क्योंकि मैं जानती थी कि इसके लिए उनके मन में कितना दर्द है।

जिस दिन बापू के गोली लगने की खवर आई उसी दिन सवेरे राजेन्द्रवाबू वर्धा आये थे। सब लोग खवर मिलने पर राजेन्द्रवाबू के पास इकट्ठे हुए। प्रार्थना हुई। राजेन्द्रवाबू ने दिल्ली जाने का तय किया, पर सवकी राय यह रही कि रात को जाना ठीक न रहेगा। और वह रुक गये। लेकिन रात को एक बजे जवाहरलालजी का फोन आया कि उन्हें आना ही चाहिए। उनके लिए विमान की व्यवस्था की गई। उसमें मेरे लिए भी सीट रखी गई। जाने का मेरा मन तो था ही, लेकिन मैंने सोचा कि आश्रमवालों के लिए रोक है तव मैं ही कैसे जाऊं? वापूजी के गोली लगने की खवर से मन पर विचित्र तरह का असर हुआ। खयाल आया कि देखो, वापूजी ने मुझसे आशा रखी थी वह यों ही रही। अब जव उनकी आंख ही मुंद गई तो मेरा उनके सामने जाना धोखा देना है। यह सोचकर मैं रुक गई।

रामकृष्ण दिल्ली से वापस आया तो बोला कि मां, तू क्यों रह गई? तुझे तो आना चाहिए था। उसके कहने पर मुझे भी लगा कि अच्छा होता कि मैं आखिरी दर्शन कर लेती। अव पछताने लगी। मेरे सामने ही तो हवाई जहाज गया था और दूसरे दिन वाबूजी वापस भी आ गये। मैं भी आ जाती। सचमुच मैंने वहुत-कुछ खोया, ऐसा वाद में लगा।

बापूजी के जाने से देश में दुःख की लहर फैल गई और कई लोगों पर कई तरह से आघात हुए। हमारे यहां मदालसा पर वहुत ही असर पड़ा। उसने १२ रोज तक अन्न ही छोड़ दिया। उपनिषद् की प्रार्थना के कागज छपाकर वह घर-घर जाकर कहती—"अरे, अव तो जागो, बापू को खोकर भी क्या सोते रहोगे?" उसकी हालत विक्षिप्त जैसी ही गई थी। हम सवको वड़ी चिंता हो गई। श्रीमन्नाराणजी पर काम का इतना वोझ रहते भी उनका धीरज अपार था। इधर वापूजी के जाने का दुःख तो था ही, उधर मदालसा की यह हालत! हमें यह डर था कि विक्षिप्त दशा में वह कव क्या कर बठेगी? होंठों में खून आ रहा था। मुंह में छाले पड़ गये थे।

हमारे घर के सभी लोग ऐसा महसूस करने लगे कि बापू के जाने से हमारे ऊपर से छत्रछाया उठ गई। बच्चे बापूजी के जाने से अपने को विना वाप का मानने लगे, क्योंकि जमनालालजी के जाने के वाद वापू का हाथ उनके सिर पर था।

जव अखवारवालों ने पूछा कि वापूजी के विषय में कुछ कहिये तव मैंने कहा—"हम आज विना वाप के हो गये।" यह वात मैंने गोपुरी में कही। उधर वैसे ही शब्द कमलनयन ने वंबई में कहे।

वापूजी के जाने का मेरे मन पर पहले तो कम ही असर हुआ था, पर धीरे-धीरे जैसे-जैसे दिन वीतने लगे, वह असर वढ़ने लगा और मैं उनके अंतिम दर्शन से वंचित रही, इसका रंज मन में रहने लगा। जव उनकी भस्मी वदरी, केदार, गंगोत्री ले जाने की वात आई तव मेरे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मन में आया कि मैं भी उस पार्टी के साथ जा सकूं, तो अच्छा। पर मन में फिर संकोच हुआ कि भस्मी के साथ जानेवालों की संख्या सीमित है। मेरे जाने से असुविधा होगी। पर मैंने आखिर डरते-डरते व्रजकृष्णजी चांदीवाला से पूछा कि क्या मैं जा सकती हूं ? वह बदरी-केदार यात्रा की टोली के अगुआ थे। वह बोले कि पूछने का सवाल ही क्या है, आप मालिक हैं। यह सुनकर मुझे संतोष हुआ। मैंने सोचा कि बापूजी को गोली लगने के दिन जो संयम किया था, उसका प्रत्यक्ष फल मिल रहा है। मुझे ऐसा मालूम होने लगा, मानो बापूजी हाथ पकड़कर यात्रा करवा रहे हैं। मुझे आशा कहां थी कि मैं गंगोत्री, यमुनोत्री, बदरी-केदार की कठिन यात्रा कर सकूंगी। मैं यह जानती थी कि इस तरह भस्मी को बड़े-बड़े तीर्थों में ले जाना भी आडंबर है। पर लोक-भावना थी कि सैद्धांतिक दृष्टि से भस्मी ले जाना बापू को पसन्द न होने पर भी यह सब क्रिया-कांड अपने-आप होता गया। बापूजी की अस्थियों को स्पेशल ट्रेन से प्रयाग ले जाया गया था, तब भी मैं रुक गई थी। कमलनयन ही गया था। मेरे मन पर उस समय भी सिद्धांत की बात का ही असर था। पर इस बार मुझे ऐसा लगा कि मैं इस मौके को खो दूंगी, तो फिर कब मिलेगा। बापू के साथ मेरा उत्तरकाशी का कार्यक्रम था, लेकिन वह रह गया था। अब मुझे ऐसा ही लगा कि मैं बापू के साथ ही जा रही हूं। यद्यपि बापू की भस्मी जा रही थी लेकिन बापू से भी ज्यादा सम्मान उसका हो रहा था। टेहरी राज्य की ओर से बड़ी अच्छी व्यवस्था थी। झंडे लेकर लोग आगे चलते थे। बाजे बजाते हुए भस्मी ले जाई जा रही थी। कार्यक्रम निश्चित रहता था। जगह-जगह स्वागत होता जाता था। छोटे-बड़े, धनी-गरीब, स्त्री-पुरुष, विद्वान-अनपढ़, साधु-संन्यासी सभी भस्मी को प्रणाम करने और श्रद्धा भेंट करने आते थे। ऐसे-ऐसे साधु भी आये, जो कभी अपनी गद्दी से नीचे उतरना और किसीके सामने जाना छोटापन समझते थे। लेकिन बापू ने सबके हृदय में जो स्थान पाया था, वह अवर्णनीय था। हम लोगों की सुख-सुविधा की भी बहुत अच्छी व्यवस्था थी और गांधीजी के भक्त समझकर हमारे प्रति आदर प्रकट किया जाता था।

सैंतीस—

यों तो जमनालालजी के स्वर्गवास के बाद बजाजवाड़ी की चहल-पहल कुछ अंशों में कम हो गई थी, फिर भी जब तक बापू सेवाग्राम में थे तबतक आने-जानेवालों का तांता लगा ही रहता था। बापूजी के जाने के बाद लोगों का आना-जाना कम हो गया। लेकिन किशोरलालभाई के बजाजवाड़ी में बसने से एक तरह से वह उनकी बस्ती बन गई थी और वहां 'हरिजन' के काम के लिए कुछ काम करनेवाले रहते थे। इससे तथा किशोरलालभाई से मिलने-जुलने को आनेवालों से कुछ चहल-पहल रहती थी। जब मेरा मन न लगता तब उनके पास चली जाती। जब भी जाती वह और गोमतीबहन काम में लगे हुए दीखते। उन दोनों का शरीर तो हड्डियों का ढांचा मात्र था। बीमारी लगी ही रहती थी। कहते हैं, बीमारी से मनुष्य चिड़चिड़ा हो जाता है, पर किशोरलालभाई तो इतनी तकलीफ भुगतकर भी सदा हंसमुख ही रहे। मैं जाती तो काम छोड़कर देखने लगते और कहते—"केम न बोलवानुं प्रण कर्युं छे !" मतलब यह कि उनसे बात करूं। मुझे डर लगता था कि उनसे बात करने से उनकी दमे की तकलीफ बढ़ेगी। वे जसे महान् तत्त्व-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्ञानी, विचारक और सिद्ध पुरुष थे, वैसे ही व्यावहारिक भी थे। इसलिए उनसे व्यवहार की सलाह लेने को सभी आते थे। उनको थकान होगी, यह जानकर भी उनकी सलाह लेना सबको जरूरी मालूम देता था। मुझे वर्धा बजाजवाड़ी में अकेले रहते देखकर एक बार उन्होंने राम से कहा—"रामकृष्ण, जानकीबहन को यहां रखने की अपेक्षा या तो किसी काम में लगाओ या अपने पास रखो, क्योंकि इस तरह छोटे-छोटे कामों में उलझे रहना अनुचित है।" रामकृष्ण ने कहा कि तुम बंबई आ जाओ। पहले भी वह तथा घर के लोग बंबई आने को कहते ही रहते थे।

बजाजवाड़ी में बच्चों का खेलने का मैदान था। रामकृष्ण और उसके साथी वहां खेलते थे। वह जब जेल में था तब वहां से लिखता रहता था कि मैदान को अच्छा बनाया जाय। रोलर घुमाकर मैदान पक्का कर दिया गया था। पर जब बंगाल के अकाल के बाद देश को अनाज अधिक उपजाने की जरूरत पड़ी तब मुझे लगा कि इस जमीन का कुछ उपयोग होना चाहिए। उन दिनों किशोरलालभाई बजाजवाड़ी में घूम रहे थे। मैंने उनसे कहा—"इस मैदान में भी अनाज बोना चाहती हूं पर राम नाराज होगा। यह जमीन पक्की करने में काफी खर्च हुआ है। अब इसे तोड़ने में अधिक खर्च होगा। क्या किया जाय ?" वह बोले, "करो हिम्मत !" मैंने हिम्मत करके हल चलवाया और वहां मूंगफली की काफी अच्छी फसल हुई।

मशरूवाला-कुटुंब से हमारे कुटुंब की आत्मीयता पहले से ही थी। जमनालालजी का व्यापार में भी उनके कुटुंब के साथ संबंध था। किशोरलालभाई के त्याग से वे बहुत प्रभावित थे। वे हमेशा कहते कि देखो, ये कितने त्यागी, मितव्ययी, तपस्वी और ज्ञानी हैं। इनका शरीर इतना कमजोर है, फिर भी किसीसे सेवा लेने की बजाय देते ही हैं। और किसी के भी सुख-दुःख में पहुंच जाते हैं।

गोमतीबहन और मैं तो साबरमती, विलेपारले तथा सेवाग्राम में साथ-साथ रहे थे। उनका बजाजवाड़ी में रहना सब तरह से अच्छा लगता था और यही जी चाहता था कि वे हमेशा बजाजवाड़ी में रहें।

बंबई में किशोरलालभाई के स्वर्गवास का फोन आया। मैं हक्की-बक्की रह गई। गाड़ी छूटने में एक घंटे की देर थी। मैंने तैयारी कर ली, पर गाड़ी पर पहुंचा कैसे जाय। रामकृष्ण आया तब आधा घंटा रह गया था। रेल पकड़ना तो मुश्किल था। अब क्या किया जाय ? मैं तो किशोरलालभाई के जाने की खबर सुनने के बाद बंबई में रह ही कैसे सकती थी ! मेरे सामने यही दृश्य आने लगा कि गोमतीबहन की रात कैसे कटेगी। मैं जल्दी-से-जल्दी वर्धा पहुंचना चाहती थी। कैसे पहुंचूं ? आखिर विमान की बात सूझी। फोन से पूछने पर मालूम हुआ कि जगह भर गई है। शायद समय पर यदि कोई व्यक्ति न आये तो जगह मिल सकती है। यों तो विमान में जाने का खर्च बरदाश्त करने की हिम्मत बहुत कम पड़ती, लेकिन आज तो मुझे वर्धा ही सूझ रहा था। मैं और रामकृष्ण तो थे ही, नीलूभाई के बहनोई भी थे। इस प्रकार तीन जानेवाले थे। जब राम ने पूछा कि अगर जगह एक ही मिले तो कौन जायगा ? मैंने कहा—"मैं तो जाऊंगी ही।" हम विमान पर गये। संयोग से वहां तीन जगहें खाली मिल गईं। हम सुबह ५ बजे बजाजवाड़ी पहुंचे।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उस समय किशोरलालभाई को माथे के नीचे तकिये का सहारा देकर सुलाया था। गले में फूल और सूत की मालाएं पहनाई गई थीं। वह गाढ़ी निद्रा में सोये हुए लग रहे थे। चेहरे पर अपूर्व शान्ति थी। गीता का पाठ हो रहा था। वातावरण गंभीर और शान्त था!

सिरहाने गोमतीवहन वैठी थीं, मानो करुणा की मूर्ति हों। आंखों से आंसू वह रहे थे। आंखें सूज गई थीं, पर हिम्मत और धीरज से वह इस दु:सह दु:ख को सहन कर रही थीं। उन्होंने जीवन-भर किशोरलालभाई में लीन होने का प्रयत्न किया था। अव उनका इस तरह से चले जाना लोगों को भी असह्य था, तो फिर गोमतीवहन की तो वात ही क्या थी।

किशोरलालभाई वीमार ही रहते थे। कई वार तो उन्हें सांस लेने में भी कठिनाई होती थी। लेकिन आज जैसे उनकी सारी तकलीफें दूर हो गई हों। शांति से सोये हुए मालूम देते थे। श्रीकृष्णदास जाजू जैसे विरागी भी किशोरलालभाई के जाने से विह्वल हो गये।

उस समय ऐसा लगता था मानो किसी बड़े हवन या पूजन की तैयारी हो रही हो। अर्थी के साथ महिलाश्रम की लड़कियां, वहनें तथा हजारों लोग थे। गोमतीवहन भी साथ गईं। करीव दस वजे गोपुरी में जमनालालजी की समाधि के पास दाह-क्रिया हुई। दोनों में भाई-जैसा प्रेम और मैत्री थी। जाने के वाद दोनों की दाह-क्रिया भी पास-पास हुई।

वाहर के काफी लोग थे, क्योंकि किशोरलालभाई के मित्र और आत्मीय वहुत अधिक थे। उनको गोमतीवहन स्वयं अपने हाथ से चाय वनाकर पिलातीं। पीनेवालों को संकोच तो होता था, पर इलाज भी क्या था। अतिथि-सत्कार तो गोमतीवहन के स्वभाव में ही समाया हुआ था।

हम सवकी यही इच्छा थी कि गोमतीवहन वर्धा में ही रहें, पर वह वारडोली चली गईं और उनके जाने से बजाजवाड़ी की चहल-पहल और भी कम हो गई।

अड़तीस—

विनोवाजी को पहले-पहल मैंने सावरमती में देखा। वह तथा उनके भाई वालकोवाजी दिनभर गढ़े आदि खोदते रहते। हमने सुन रखा था कि वह श्रम करके कम-से-कम में—आने-दो-आने में—अपना खर्च चलाते थे। वह बोलते कम थे। गीता का वर्ग लेते थे। उनके वर्ग में स्त्रियां भी जाती थीं। पढ़ाते समय समझाते वहुत अच्छा थे। समय के बड़े पावन्द थे। वर्ग में अगर कोई विद्यार्थी एक मिनट भी देर से पहुंचता तो उसे वर्ग के बाहर खड़ा रहना पड़ता। वह पढ़ाते समय इतने जोर से बोलते कि स्वयं पसीना-पसीना हो जाते। जब गीता का वर्ग शुरू करने की वात चली, तव उन्होंने पढ़ने की इच्छा रखनेवाले विद्यार्थियों की योग्यता की जांच करने के लिए एक-एक को बुलाकर सबसे गीता के पांचवें अध्याय का नौवां श्लोक पढ़ने के लिए कहा। मैं भी उनमें थी। आगे चलकर मालूम हुआ कि यह श्लोक गीता में सबसे ज्यादा संयुक्ताक्षरवाला है।

विनोवाजी तथा उनके दोनों भाई वालब्रह्मचारी हैं। विनोवाजी विद्वान् तो हैं ही, इसलिए उनका हम लोगों पर बहुत प्रभाव था और हमारी उनके प्रति श्रद्धा भी खूब थी। लेकिन उनसे बोलने की हिम्मत किसकी हो, क्योंकि वह बहुत कम बोलते थे। मेरे मन पर भी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उनका प्रभाव था। मैं सोचती थी कि मेरे बच्चे भी उनके जैसे ही बनें। एक दिन जब जमनालालजी ने मुझसे पूछा कि मैं अपने बच्चों को क्या बनाना चाहती हूं तो मैंने कह दिया कि विनोबा-जैसा फकीर बनाना चाहती हूं। मैंने तो ये शब्द भावनावश कह दिये थे, पर जमनालाल जी तो उनके गंभीर अर्थ को समझते थे और यह भी जानते थे कि यह अपने हाथ की बात थोड़े ही है। उन्होंने विनोबाजी के सामने ही मुझसे कहा, "शब्द तो बड़े-बड़े सीख गई हो, पर उसका अर्थ भी जानती हो?"

मैं यही सोचती थी कि मेरे बच्चे भीष्म के समान ब्रह्मचारी और विद्वान् बनें। शादी-ब्याह तो सब करते हैं, लेकिन इससे बचने में ही विशेषता है। इसकी बच्चों के सामने चर्चा चलती। एक बार कमलनयन मजाक में बोला, "तू तो नौ बरस की विवाह कर लियो, म्हांने फकीर बणाने में तने के जोर आवे?" हमारे परिवार में तीन पीढ़ी के बाद बच्चे हुए थे। उनपर सबका लाड़-प्यार रहना स्वाभाविक था। फिर भी मैंने भावना और श्रद्धावश बच्चों को विनोबाजी के पास सीखने के लिए छोड़ दिया। केवल लड़के ही क्या, पंद्रह-पंद्रह बरस की लड़कियों को भी उनके हवाले कर दिया। जहां विनोबाजी के आश्रम में लड़कों का रहना कठिन था, वहां लड़कियों को भी रखना आसान थोड़े ही था! विनोबाजी के लिए लड़के और लड़की समान ही थे। सबसे समान परिश्रम कराते थे।

साबरमती में उनके प्रति जो श्रद्धा पैदा हुई थी, वह वर्धा में उनका संपर्क बढ़ने पर बढ़ती ही गई। जमनालालजी और बापू के चले जाने पर जो रीतापन अनुभव हुआ उससे विनोबाजी के और निकट जाना आवश्यक हो गया। मैं उनके साथ अनेक स्थलों पर घूमती रही। विनोबाजी का खान-पान- रहन-सहन, चलना-फिरना सब मुझे मनभाता लगता है। उनके साथ रहने में मुझे जीवन की सार्थकता महसूस होती है।

एक बार मैंने सपने में देखा कि मुझे मेरा स्वर्गीय छोटा भाई हाथ के झाले देकर बुला रहा है। जागने पर मैं उस सपने को भुला न सकी। खादी का कुरता पहने, सफेद टोपी लगाये स्वर्गीय भाई का मुझे 'बाई आओ, बाई आओ' कहकर बुलाना ऐसा लगा, मानो अब मृत्यु का बुलावा आ गया है। मेरे मन में एक प्रकार का वहम घुस गया कि मैं अब बारह महीने में मर जाऊंगी। मैंने तय किया कि जो हो, बारह महीने तक विनोबाजी के साथ ही रहना चाहिए। अगर मैं मर जाऊं तो उनकी उपस्थिति में मरूं। इस तरह मैं विनोबाजी के साथ बारह महीने रही। बारह महीने पूरे होने पर मुझे विश्वास हो गया कि अब मैं एक बार तो बच ही गई।

शादी के बाद जब ओम् लाल-पीले कपड़े पहनकर विनोबाजी को नमस्कार करने गई तब वह बोले, "आओ होलिकाजी।" मैंने कहा, "यह शादी के बाद आई है। आपने इसे होलिका कैसे कहा?" बोले, "लाल रंग तो होलिका का है।" मैंने पूछा, "फिर अच्छा रंग कौन-सा है?" उन्होंने कहा, "हरा रंग अच्छा, क्योंकि इसमें सृष्टि का स्वाभाविक सौंदर्य भरा है।" मुझे बात जंच गई। मैंने अपने तकली पर कते सूत के ढाई गज लंबे दुपट्टे बनवाये। चालीस बने। उन्हें मैंने हरा रंगवाया और बापूजी के भस्मी-प्रवाह के दिन, यानी १२ फरवरी को, जिस दिन पवनार में मेला लगता है, मैंने एक-एक दुपट्टा विनोबाजी तथा तुकड़ोजी को भेंट किया। विनोबाजी ने उस हरे दुपट्टे को दुपहरी की धूप में सिर पर ओढ़ लिया। जब मैंने तुकड़ोजी से उस दुपट्टे के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हरे रंग तथा तकली के सूत का इतिहास बतलाया तो उन्होंने उस दुपट्टे को गले में लपेट लिया। विनोबाजी ने तो अपनी सर्वोदय-यात्रा तथा तेलंगाना की यात्रा में उस दुपट्टे का अच्छी तरह से उपयोग किया। मुझे ऐसा लगता है कि तकली से फुरसत में कते सूत, विनोबाजी के सुझाये रंग और मेरे प्रेम से भेंट करने के कारण उस दुपट्टे ने यह स्थान पाया। आज भी विनोबाजी उसका उपयोग भूदान-यात्रा में करते हैं। महादेवी ताई ने फिर तो विनोबाजी की चद्दर आदि हरे रंग के ही रंगा लिये।

एक बार जमनालालजी ने विनोबाजी से चर्चा की थी कि राम-लक्ष्मण की तो सब पूजा करते हैं, पर तपश्चर्या तो भरत ने ही ज्यादा की थी। हर जगह मंदिर भी राम के ही देखने में आते हैं। उन्होंने कहा कि मंदिर तो क्या बनेगा; लेकिन अपने मंदिर में भरत की मूर्त्ति रखी जाय तो अच्छा। इसके कुछ दिनों बाद जमनालालजी जेल चले गये। पवनार में खुदाई के समय मूर्त्तियां निकलती रहती थीं। विनोबाजी गढ़ा खोद रहे थे तो वहां भरत-भेंट की मूर्त्ति मिल गई। विनोबाजी को जमनालालजी की इच्छा स्मरण हो आई। उन्होंने वहां एक छोटे-से मकान में उस मूर्त्ति की स्थापना की और खुद वहां पाठ करने लगे। पाठ इतने जोर से करते कि पसीने में तर हो जाते। पाठ के समय ऐसे तन्मय होकर बोलते कि उस अद्भुत दृश्य को देखने के लिए गांव तथा आसपास तक के लोग इकट्ठे हो जाते। जैसे विनोबाजी का यह प्रयोग चल रहा था, वैसे ही पवनार में कांचन-मुक्ति का भी वे प्रयोग कर रहे थे। वे चाहते थे कि संस्थाएं परावलंबन से छूटें, परिश्रम पर ही उनका खर्च चले। पेट में फोड़ा (अल्सर) हो जाने से उन्होंने परिश्रम करके अपना स्वास्थ्य ठीक करने का निश्चय किया। उनका प्रवास के लिए मन कम था। पर जब हैदराबाद के सर्वोदय-सम्मेलन में उनका हाजिर रहना कार्यकर्त्ताओं को आवश्यक मालूम दिया तब उन्होंने वहां जाने का निर्णय किया। इस तरह की यात्राएं करने की उन्हें पहले से ही रुचि थी।

विनोबाजी ने वर्धावासियों से ८-३-५१ को विदा ली। लक्ष्मीनारायण मंदिर में प्रार्थना के बाद विदाई का भाषण हुआ। उसमें उन्होंने कहा—"संभव है, हैदराबाद से आगे भी बढ़ूं। इसलिए यह विदाई आखिरी भी हो सकती है।" वह ऐसी गंभीरता के साथ बोले, मानो वह आखिरी विदाई हो रही हो। इसलिए वह प्रसंग वर्धावासियों के लिए राम-वनवास जैसा ही लगा।

मैं उनका विदाई का भाषण सुन अपने-आपको रोक न सकी। मैंने उनसे कहा, "जैसे आपको जाने का अधिकार है, वैसे ही हमको लाने का भी है। भरत की तरह हम लोग आपको वापस लिवाने आ सकते हैं। हम विमान में भी उड़ा ला सकते हैं।" मैं पहले पड़ाव तक उनके साथ गई। उस दिन चौदह मील पर पड़ाव था। उनके हैदराबाद पहुंचने के पहले ही मैं सात मील के मुकाम पर पहुंची। मैं जब उनके साथ चलती हूं तब वह प्रति घंटा साढ़े तीन मील की चाल चलते हैं। लेकिन उन दिनों उनकी चाल पांच मील प्रति घंटा हो गई थी। उस दिन सात मील ही चलना था, इसलिए साढ़े चार मील की रफ्तार से चले। इससे मैं एकदम थक गई। पड़ाव पर पहुंचते ही बांस के टट्टे की बनी झोंपड़ी में जाकर सो गई। उधर से धूप तप रही थी। उठकर ठंडे पानी से नहाई। कपड़े धोकर सुखा दिये। उस दिन रसोड़े में पूरणपोली और भजिये

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बने थे। ये पक्वान्न स्वाद लगने से ज्यादा खाने में आयेंगे, इस डर से मैं घर से लाई हुई बासी पूड़ियां ही खाकर सो गई। उससे बुखार आ गया। महावीरप्रसादजी पोद्दार सम्मेलन में आये हुए थे। उनके प्राकृतिक इलाज से कुछ दिनों में तबीयत तो ठीक हुई, पर सर्वोदय-सम्मेलन में विशेष हिस्सा न ले सकी और तबीयत ठीक न होने से विनोबाजी के साथ तेलंगाना भी न जा सकी। तेलंगाना-यात्रा में मदालसा हठ करके चली ही गई। हैदराबाद से लौटते समय भूदान-यज्ञ प्रारंभ हो गया था। विनोबाजी मध्यप्रदेश में भी आये तो वहां भी वह काम चला। शुरू से ही विनोबाजी का प्रत्येक काम मुझे अच्छा लगता रहा। इसलिए यह भी अच्छा लगा। पर यह काम इतना बड़ा है, यह मैं क्या जानूं। चांडिल-सर्वोदय-सम्मेलन में गई तब वहां का उत्साह और वातावरण ही कुछ दूसरा था। सबमें उत्साह था और सबको ऐसा लग रहा था कि इस यज्ञ में सबको भाग लेना चाहिए। राजेंद्रबाबू का भाषण बहुत प्रभावशाली हुआ, लेकिन विनोबाजी का भाषण तो अद्भुत था। सबकी चेतना को उसने जगा दिया। बीच के समय में स्त्रियों का सम्मेलन था। निर्मला के कहने से मैं अध्यक्ष बन गई और मैंने बहनों से कांचन-मुक्ति के लिए अपील की कि वे अब जेवर छोड़ दें।

एक बंगाली लड़की ने अंगूठी लाकर दी। विनोबाजी आ गये थे। मैंने वह अंगूठी उनकी अंगुली में पहना दी। फिर बहुत-सी बहनें एक-एक करके जेवर लाने लगीं। एक बहन ने मंगल-सूत्र भेजा। मैंने विनोबाजी के गले में पहनाया तो वह दाढ़ी में उलझ गया। बस हंसने लगे। कइयों को तो यह बात अचरजभरी लगी कि इतने गम्भीर संत से विनोद करने की हिम्मत भी किसीकी हो सकती है। जयप्रकाशजी ने कहा कि विनोबाजी से आप इतना मजाक कर लेती हैं! वहां करीब अट्ठाइस तोला सोना इकट्ठा हुआ। मैंने कहा कि बहनों की तो गायों पर ही भक्ति होती है, इसलिए इसे गो-सेवा में ही खर्च किया जाय। वह बोले कि भूदान की जमीन में कुओं की जरूरत तो होगी ही, इसलिए उससे गाय और खेती दोनों को लाभ होगा।

उन्तालीस—

१९५३ में सर्वोदय सम्मेलन चांडिल, बिहार में हुआ था। तब बहनों के सम्मेलन का आयोजन किया गया और बिना पूर्व सूचना के मुझे अध्यक्ष बनाया गया। मैं सर्वोदय और भूदान की क्या बात कहती जो सूझा बोल दिया। मैंने कहा :

"आजकल विनोबाजी कांचन-मुक्ति की बात करते हैं। बहनों को तीस बरस पहले पूज्य बापूजी ने अलंकार-दान की बात कही थी। मैं उस समय उनके साथ बिहार में घूमती थी। पूज्य कस्तूरबा भी साथ में थीं। बहनें अलंकार देने के लिए बापूजी के पास नहीं पहुंच पाती थीं। नतीजा यह होता कि जब हम मांगने के लिए आगे बढ़तीं तो हमारी तरफ आभूषणों की बौछार होने लगती और दोनों हाथों से हमें आभूषण झेलने पड़ते। कितनी ही बहनों ने उस समय अलंकार दान करने के साथ-साथ अलंकार का संन्यास भी ले लिया। मेरे अपने करीब एक लाख के जेवर थे। अगर मैं जेवरों का मोह रखती तो वे आज तक वैसे ही धरे रहते। उसी एक लाख के पांच लाख हो गये और वह रकम गौ-सेवा के काम आई। विनोबाजी इस समय भूमिहीनों को भूमि दे रहे हैं; लेकिन बिना कुएं के भूमि क्या उपजाये? पानी होगा तो हरा घास होगा। गो-सेवा भी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होगी, बच्चों को अच्छा खाने-पीने को मिलेगा। अगर मातायें चाहें तो एक-एक कुआं सहज ही दे सकती हैं। विनोबाजी आवेंगे तो उनको सूत की माला पहनाने के बजाय हम अपने गले की सोने की माला पहना दें तो कितना अच्छा ?"

विनोबाजी आये। बहनें एक-एक करके गहने देने लगीं। मैंने वे जेवर विनोबाजी को पहना दिये। अधिकतर बहनें पुरूलिया की थीं। उस दिन २७ तोला सोना आया। मैंने विनोबाजी से पूछा कि इन जेवरों का किस काम में उपयोग किया जाय। मेरे मन में कुएं की बात चल रही थी और मैंने उसका उपयोग कूपदान के काम में करने को कहा। विनोबाजी को वह बात जंच गई ओर कूपदान आंदोलन चल पड़ा।

मैं चांडिल-सम्मेलन के बाद बिहार में रह गई और घर-घर जाकर मां-बहनों से कुओं का दान मांगने लगी। माताएं धार्मिक भावना वाली होतीं हैं। उनकी भावना को चाहे जिस ओर मोड़ा जा सकता है। चाहिए केवल उनकी भावना का ठीक-ठीक उपयोग करने वाला। समय और स्थान का भी मान भूली हुई मैं फिरती रही। गयाजी में मेरी कोई विशेष जान-पहचान थोड़े ही थी। घर-घर बहनों के पास जेठ-बैसाख की धूप में भी घूमती। तीन-तीन, चार-चार मंजिल पर चढ़ती और अपनी बात समझाती। आजकल मांगने वालों से कौन खुश होता है, पर मुझे तो धुन लगी हुई थी। मेरे मन में विचार आया कि एक सौ आठ कुएं हों। जप-माला के मनकों की यह संख्या होती है। पहले महीने में सिलसिला थोड़ा ही जमा। निराशा-सी होने लगी। मन डगमगाने लगा कि एकसौ आठ की जगह आठ भी हो जायं तो बड़ी बात है। जब मैं कहती कि गायों के लिए पानी का कष्ट है तब बड़े घरों की स्त्रियां कहतीं कि पानी तो बहुत है। तब मैंने कहा कि एक दिन देहात में चलो। गया के श्री भूपराजा बड़े भावनावाले जमींदार है। वह गांधी जी के बड़े भक्त हैं, लेकिन उनको या उनके घरवालों को यह कल्पना ही कहां थी कि दरअसल कुओं के बिना गांवों में पशु तथा मनुष्यों को कितना कष्ट होता है। मोटर में बैठाकर उन्हें तथा उनके घरवालों को देहात में ले जाने का कार्यकम बनाया। हम जब देहातों में पहुंचे तो उन्होंने देखा कि गरमी में चारों ओर सूखा-ही-सूखा है। गरमी में पशुओं की हड्डियां दिखाई दे रही हैं और बिना पानी और चारे के वे बेहाल हो रहे हैं। पचास घरों के बीच केवल एक कच्चा कुआं था, सो भी बारिश में बन्द हो जाता था। उन्हें हर साल नया खोदना पड़ता। चूना, ईंट, सीमेंट से पक्का बनाने की उनकी शक्ति कहां थी ! यह हाल देखकर बहनों का हृदय पसीज गया। वे बोलीं—"सौ तोले की जगह हम दस तोला सोना पहन लेंगी, लेकिन कुआं बनवायेंगी।" फिर गांववालों को इकट्ठा करके उनसे बात की। गांववालों ने कहा कि हम कुआं खोद लेंगे, ईंट बना लेंगे। हमें चूना और सीमेंट आदि ही चाहिए। गांववाले अपने श्रमदान से कुआं बना लेंगे, इसलिए पांच सौ रुपये एक कुएं के लिए मिलने से काम चल जायगा। १०८ कुओं के लिए कम-से-कम पचास हजार रुपया होना चाहिए। हवा फैल गई। गया में लक्ष्मीनारायणजी डालमिया रहते हैं। साधु-संतों के भक्त हैं। उन्होंने दस तोला सोना दिया और सत्यदेवजी से भी मैंने दस तोला सोना लिया। धीरे-धीरे वहां ३६ कुएं खुदे और ३० के वचन मिले। दूकान पर सीमेंट लेने लगे तो लारी वाले बिना किराये के सामान पहुंचाने लगे, सिर्फ पेट्रोल ही लेते।

गया जिले में रजोली नामक गांव में बाबा राघवदासजी ने दो बहनों को पानी के लिए

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

झगड़ते देखा तो बाबाजी ने वहीं किसी भाई से कुदाली मांगकर कुआं खोदना शुरू कर दिया और कुछ दिनों में श्रमदान से वहां कुआं बन गया। विनोबा जी ने भी दूसरी बार गया जिले में रजौली थाने में ही प्रवेश किया।

विनोबाजी पैदल घूमकर एक महीने में रांची आये और मैं गया से रेल से गई। रांची में भी घर-घर समझाने लगी कि विनोबाजी आवें तो उनको कुओं की भेंट दी जाय। १३॥। तोला सोना और तीस कुओं के लिए पांच-पांचसों के वचन मिले। वर्षा शुरू होने से कुएं बनाने का काम तो कैसे हो सकता था, इसलिए रकम वहीं पंचों के पास रखकर मैं कलकत्ता आ गई। वहां ६१ कुओं के लिए तीस हजार पांच सौ रुपये तथा ४॥ तोला सोना मिला। यह रकम खादी-भंडार में जमा करा दी गई।

रांची के बाद मैं जुलाई मास में कलकत्ता पहुंची। सीतरामजी सेकसरिया के यहां ठहरी। यहां कूपदान मांगने के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान मीलों दूर जाना पड़ता। मुझसे न तो टैक्सी या रिक्शा का खर्च होता और न मुझे वाहन के लिए कहना अच्छा लगता। इसलिए मैंने एक योजना बना ली कि कोई परिचित कहीं गांव में जाता हो उससे पहले बात कर उसके साथ चली जाती। वापस लौटते समय भी वैसा ही करती और कोई मोटर न मिलती तो पैदल ही पहुंच जाती। सीतारामजी मोटर के लिए आग्रहपूर्वक कहते पर मैं संकोच ही करती। यहां मैंने ६५ कुएं प्राप्त किये थे।

जुगलकिशोरजी बिड़ला से मिली। पहले तो उन्होंने कहा कि गांधीजी, जवाहरलालजी ने मुसलमानों को बहुत चढ़ा दिया; अब विनोबा से कहो कि वे तो उनको बढ़ावा न दें। मैंने कुओं के विषय में काम की जानकारी दी। वे बोले यह काम तो बहुत अच्छा है। मुझे आफिस जाना है, कहकर उन्होंने खड़े होकर प्रणाम किया, तो मैं बहुत सकुचाई। बोली—भाईजी आप तो बड़े हैं फिर छोटों को प्रणाम कैसे ? वे बोले—"हां, है तू छोटी पर है साध्वी, बड़ो भलो काम करै है।" वे मोटर तक छोड़ने आये।

सोहनलालजी दूगड़ बड़े भावुक थे। उन्होंने भी मेरे काम में साथ दिया। वे दान देने में तो बड़े उदार थे। सेठजी के प्रति उनकी बड़ी श्रद्धा थी। उन्होंने तीन कुओं के १५०० रुपये दिये। उनकी मोटर में वापस घर आने तो निकली, पर पछतावा ही रहा कि उनको कहीं काम होगा तो उन्हें दिक्कत होगी।

एक बात मुझे बहुत मीठी लगती है। मुझे जब कोई बड़ी मां कहता है तो वह शब्द मुझे बहुत अच्छा लगता है। कलकत्ता में पन्ना और विजया बड़ी मां कहती और लक्ष्मी निवास बिड़ला भी मुझे एक बार बोले—"बड़ी मां ! म्हारा अठे ही क्यों नहीं उतरो।" मुझे बहुत अच्छा लगा।

कलकत्ता में सभी लोग परिचित थे। मैं इस तरह घर-घर घूमूं, यह उन्हें कब पसन्द था। वे बोले कि आपको एक-दो जगह से रकम मिल जाय तो काम हो सकता है, फिर इस तरह क्यों घूमती हो ? मैं बोली—"मुझे तो स्त्रियों में प्रचार और देश की मांग की जानकारी कराने के लिए घूमना है।" इसलिए घर-घर घूमती रही। जब मैं लेक पर, जहां लोग सवेरे घूमने आते हैं, कुएं मांगने पहुंचती तो घनश्यामदासजी बिड़ला हंसकर कहते, "आज मैयाजी की झोली में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कितने कुएं पड़े?" मैं कहती, "आज दो पड़े, या आज तो खाली ही है।" मैं उनसे तो क्या मांगती!

पर एक दिन घनश्यामदासजी बोले, "बिड़ला-पार्क आना।" यों जब भी कलकत्ते जाने का काम पड़ता और वे मिलते तो बुलातेही रहते। मैं भी जब कलकत्ता जाती तब मिलने जाया करती। मैं मिलने गई। उस दिन उनसे कई बड़े-बड़े लोग मिलने आये थे और वह काम में बहुत घिरे थे। परन्तु खबर मिलते ही वह एकदम बाहर आकर मेरे पास बैठ गये और प्रेम से पुरानी बातें करने लगे। बोले, "मेरा और जमनालालजी का क्या संबंध था, यह तुमसे क्या छिपा है।" यह सुनते ही मेरी आंखों में आंसू आ गये। वह भी गंभीर हो गये। थोड़ी देर बाद बोले, "पांच कुएं तुम्हारी झोली में गिराने हैं।" मैं बोली, "इतने तो बहुत हैं, एक आदमी का एक कुआं बस।" वह बोले—"मेरे तीन बेटे और तीन बहुएं हैं। तो छः कुएं ले लो। तब मैं बोली, "पाणी तो बेटा-बहू ही पीसी। म्हें बिनाइ पाणी रेस्यां ?" इसी बीच जुगलकिशोरजी एक कुएं के लिए पांच सौ रुपया कह चुके थे।

यों तो कलकत्ते से आने का मेरा मन कम था, वहीं पर कुओं का काम करना था, पर गायों के विषय में एक शिष्ट-मंडल जवाहरलालजी के पास जा रहा था, उसमें जाने के लिए मुझे दिल्ली बुलाया गया, इसलिए मुझे वहां जाना पड़ा।

जब मैं दिल्ली पहुंची तो वहां वालों ने कहा कि यहां कुओं का काम होना मुश्किल है, यहां रोज ही चंदे हुआ करते हैं। फिर भी मैं वृजकृष्णजी चांदीवाला तथा नन्दलाल मेहता के पीछे पड़ी और मैंने घर-घर फिरना शुरू किया। सवेरे आठ बजे से वही धुन। एक दिन बाबा राघवदासजी बोले, "जवाहरलालजी से कुआं कौन लाये ?" मैंने कहा, "मैं लाऊंगी।" ११ सितम्बर, शुक्रवार को ग्यारह बजे उनसे मिली। उस दिन विनोबाजी का जन्म-दिन था। मैं रामेश्वरी बहन तथा ओम् के साथ पहुंची। जवाहरलालजी पार्लियामेंट से आये ही थे। थके हुए, मानो सोकर उठे हों। देखकर दया-सी आई और ऐसा लगा कि ऐसे थके हुए से बात कैसे करूं। मगर समय लिया तो बात करनी ही थी। मैंने कहा, "आज विनोबाजी का जन्मदिन है, आपको हंसना पड़ेगा।" वह बोले, "खूब हंसूंगा।" बैठ गये और फिर कूपदान की बातें चलीं। रामेश्वरी बहन ने कहा कि ये औरतों से जेवर लूटती हैं और इस कार्य में जोरों से लग गई हैं। उन्होंने वह जेवर देखा, जिसको मैंने विनोबाजी के गले में पहनाया था। फिर मैंने कहा, "भीष्म पितामह को अर्जुन ने पृथ्वी में बाण मारकर पानी पिलाया था, वैसे ही आप तीर मारकर पाताल फोड़िये, जिससे विनोबाजी को पानी ही पानी मिल जाय।" वह खूब हंसे। मैंने कहा कि अपने नाम का एक कुआं दीजिए, आपका आशीर्वाद चाहिए, रामेश्वरी बहन ने कहा कि राजघाट की प्रार्थनामें आपका संदेश चाहिए। वह बोले, मैं भेज दूंगा। उन्होंने संदेश के साथ एक कुएं का आश्वासन याद करके भेज दिया।

शाम को राजघाट की प्रार्थना में राजेन्द्रबाबू आये। उनका भूदान के विषय में अत्यंत महत्त्वपूर्ण भाषण हुआ और उन्होंने कूप-दान की भी महत्ता बताई। मैंने कहा कि आपकी तरफ से एक कुंआ छपरे में बन जाय। वह बोले, "एक छपरे में तो कह ही दिया। एक अबोला में भी बन जाय।" इस तरह दो कुओं का दान उनकीओर से मिला। उन्होंने एक हजार रुपये रामेश्वरी बहन के पास भिजवा दिये। उनके व्याख्यान के बाद मैंने पूछा, "बाबूजी मैं बोलूं क्या ?" वह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बोले, हां, हां बोलो। मैंने कहा, "बाबूजी ने तो बहुत प्रेमपूर्वक गंभीरता के साथ आपसे कहा है। यह तो संत हैं। मैं तो आपसे बहन के नाते प्रार्थना करती हूं कि आज १०८ कुएं पूरे कर दीजिए।" सवेरे तक ७९ हुए थे, एक जवाहरलालजी का इस तरह ८० हुए। एक आदमी पांच हजार रुपये नगदी दस कुओं के लिए ले आया। एक गुजराती भाई ने ८ कुओं का वचन दिया। इस तरह ९८ हो गये। उम्मीद ही कहां थी कि इतने कुएं हो जायेंगे। बाबूजी भी बहुत देर तक बैठे रहे। घर पहुंची तो श्रीमन्‌जी ने कहा कि १०७ तो हो गये हैं, एक बाकी है। वह एक गांव में मीटिंग के लिए गये और वहां से करीब ११॥ बजे रात को आये। बारिश हो रही थी। उन्होंने दरवाजा खटखटाकर कहा, "माताजी, एक कुआं आपके लिए ले आया हूं और वह भी दो-ढाई हजार वाला बड़ा।" मेरा जी भर आया, अनुभव किया कि यह बापू और विनोबा के तप का ही फल है कि मेरा संकल्प इस तरह पूरा हुआ।

उन दिनों विनोबाजी कांचन-मुक्ति पर ही जोर देते थे, इसलिए पैसों का आकर्षण तो उन्हें क्या होता। जब कोई उनको रुपया-पैसा देता तो वह वापस कर देते। बिहार में भूदान-यज्ञ में किसी बहन ने आकर एक रुपया और दूसरी ने पांच रुपये दिये तो उन्होंने वापस कर दिये। नवादे में जयदयालजी डालमिया की बहन सौ रुपये का नोट लाईं तो वह भी वापस कर दिया। हां, जब बहनें जेवर देतीं तब वह मुझे कूप-दान के लिए सौंप देते। कहते, बहनों का यह सच्चा त्याग है। पर सब बहनें जेवर दें, यह संभव कहां था और पैसे तो वह लौटा देते थे। तब क्या किया जाय ? रांची में एक बहन ७ तोला सोना और दूसरी पांच सौ रुपये लाईं। मैंने सोचा कि रुपये तो लेंगे कहां, फिर क्या करें ? पर एक बार देकर तो देखें। मैं उन बहनों को लेकर गई। विनोबाजी ने रुपये लेकर मेरे हाथ में दे दिये। तब मैंने कहा कि चलो, अच्छा हुआ। रास्ता खुला। इस तरह कूप-दान में रुपये लिये जाने लगे। जब कृष्णदासभाई मिले तो बोले कि आप तो विनोबाजी से भी बढ़कर निकलीं कि उनको पैसा लेना सिखा दिया। विनोबाजी इसीलिए कहा करते हैं कि जानकी बहन 'अपवाद' हैं।

विनोबाजी के पेट में अलसर है। ऊपर से पैदल चलना और भ्रमण करना। खाना बच्चों जितना। डाक्टर लोग हैरान हैं। कहते हैं, हमारी डाक्टरी के अनुसार तो विनोबाजी मर चुके हैं। इन्हें आराम करना चाहिए, दवा लेनी चाहिए। विनोबाजी कहते हैं—आकाश के नीचे भ्रमण करना अमृत-बाण दवा है। लेकिन डाक्टर इस चीज को कैसे समझें।

एक बार बातचीत के सिलसिले में विनोबाजी ने कहा कि रेल से आते समय सारे मान-पत्र मैंने नदी में डाल दिये। सहसा मेरे मुंह से निकल गया, कौन-सी बड़ी बात करी—खुद ही नदी में पड़ जाते। विनोबाजी एकदम चुप हो गये। मैं भी सोच में पड़ गई। आखिर इसमें भी विद्वानों की विद्वत्ता ही होगी। लेकिन एक बात तो है ही। चांदी और कांच में मढ़े चित्रों की उन्हें क्या परवा ?

स्त्रियों की एक सभा में जेवर के त्याग पर मैं बोल रही थी। वैसे मुझे सभाओं में भाषण देने की आदत नहीं है। लेकिन अगर किसी चीज के बारे में मुझे श्रद्धा हो गई हो कि वह चीज उचित है, तो फिर बोलते समय मैं भाषा की परवा नहीं करती, दिल से बोलती हूं। और मैंने देखा है कि सुननेवालों पर उसका असर भी होता है। इस सभा में मेरे भाषण के बाद कई स्त्रियां

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अपने जेवर उतार-उतारकर देने लगीं। दो-चार बहनों ने सोने की चूड़ियां लाकर दीं। मैंने सोचा, चलो विनोबा को ही यह सोने का दान दे दो। इतने में एक छोटी लड़की, तीन-साढ़े-तीन वर्ष की होगी, कांच की चूड़ी हाथ से निकालकर मां की गोद में बैठें-बैठे देने लगी। मैंने सोचा, यह सोने-चांदी की थोड़े ही है, जो पैसे मिलेंगे। परन्तु मन में भाव आया कि इस बच्ची को तो सोने-चांदी और कांच का भेद थोड़े ही है। दूसरी बहनें दे रही थीं तो इसकी मां ने भी सोचा होगा कुछ देना चाहिए। वातावरण के प्रभाव से वह अछूती थोड़े ही रह सकती थी। मैंने विनोबाजी को वह चूड़ी दिखाकर कहा—"इसे तो अपने पास रखनी चाहिए।" भाई दामोदर की तो आंखों में पानी भर आया इस दृश्य को देखकर !

राजस्थान के दौरे के समय विनोबाजी मेरे पीहर लक्ष्मणगढ़ भी आये। उनके स्वागत के लिए पूरा प्रबंध किया गया। लेकिन गांव की राजनीति के कारण दो दल बन गये। एक दल का कहना था कि विनोबाजी इस रास्ते से जायं, दूसरा कहता—नहीं उस रास्ते से। मैं डर रही थी कि कहीं ये लोग विनोबाजी के सामने उपद्रव न करें। और वही बात हुई। विनोबाजी के गांव में प्रवेश करने के पहले ही दोनों दलों में झगड़ा हो गया। दोनों दलों के नेता आपस में गुथ गये। विनोबाजी को यह सब-कुछ अच्छा नहीं लगा। मैं तो अपराधी की तरह एक तरफ खड़ी रही। अंत में विनोबाजी को भी तनिक रोष हो आया। उन्होंने एक नेता का गुलबंद पकड़कर जबरदस्ती हटाया और कहा—"मैं तुम्हें एक घण्टा देता हूं—आपस में तय कर लो, मुझे किधर से जाना है—तभी मैं गांव में जाऊंगा वरन् नहीं।" यह कहकर वह पास के पेड़ के नीचे बैठ गये। मैं भी शर्मिंदा होकर पास ही बैठ गई—उनसे कुछ बोलने की हिम्मत नहीं थी। साथ ही झगड़ा निपटाने की भी सामर्थ्य नहीं थी। थोड़ी देर बाद मैं धीरे-से बोली, "विनोबाजी, मैं सोच रही थी यहां आपका स्वागत कैसे किया जायगा। ३५ वर्ष पहले जब जमनालालजी यहां आये थे तो दामाद का स्वागत गोबर फेंककर किया था। और समधी का स्वागत ऐसे हुआ।"

विनोबाजी ने मेरी ओर देखा और थोड़ा-सा मुस्कराये। मुझे विश्वास हो गया कि अब उनके मन में तनिक भी रोष नहीं है। लगभग ५० मिनट वहां बैठे रहे, तब जाकर दोनों दलों में समझौता हुआ और विनोबाजी ने गांव में प्रवेश किया।

कालड़ी में श्रीमन्जी ने जवाहरलालजी और विनोबाजी की मुलाकात का प्रबंध कराया। विनोबाजी दरवाजे पर नेहरूजी की अगवानी के लिए खड़े थे। काफी समय बाद बापू के राजनीतिक और आध्यात्मिक शिष्यों का मिलन होनेवाला था।

नेहरूजी कार में से उतरे। श्रद्धा से हाथ जोड़कर उन्होंने विनोबा का अभिवादन किया। विनोबाजी ने उनके हाथ अपने हाथ में ले लिये। भावविह्वल हो गये। आंखों की कोरों से अश्रु-धारा बह निकली। हाथ पकड़े ही विनोबाजी नेहरूजी को कमरे में ले गये। मैं खिड़की की दरार में आंखें लगाये देख रही थी। विनोबाजी के आंसू रोके नहीं रुक रहे थे। नेहरूजी भी गुमसुम बैठे थे। कुछ देर बाद उन्होंने रूमाल से अपनी नाक पोंछी। दोनों में से कोई भी बात करने की स्थिति में नहीं था।

हृदय का भार कुछ हलका हुआ तो विनोबा ने बोलना शुरू किया। मर्यादा पुरुषोत्तम की तरह जवाहरलालजी निगाह उठाकर फिर नीचे झुका लेते थे। विनोबा भी बोलते हुए एक-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

टक उनकी ओर ही देखते रहे।

आदत के मुताबिक एक बार जवाहरलालजी के हाथ सिर खुजाने के लिए कान तक उठे और फिर नीचे आ गये। अव दोनों बात कर रहे थे और आमने-सामने देख रहे थे। वातचीत चलती रही। एक घंटे का समय तय हुआ था—पर वहां तो बात की कीमत थी, समय का क्या महत्त्व था ?

इस बीच नंदाजी आ गये। चलते समय नेहरूजी ने पूछा, "रात को समय होगा क्या ? आठ बजे फिर मिलने का तय हुआ।

दामोदर ने कहा, "भरत-मिलाप हो गया।" मेरी भी आंखें भरी हुई थीं। जवाहरलालजी की मोटर गई। जाते समय मैंने नेहरूजी से कहा कि आज तो विनोवा मां स्वरूपरानी की तरह ही रो पड़े।

वह प्रसंग देखकर मुझे वास्तव में मां स्वरूपरानी की याद हो आई। जवाहर उनका एक ही वेटा था। महीनों-वरसों बाद जवाहर घर आते तो मां बड़े थालों में जवाहर के लिए खाने की चीजें सजाकर रखती। पर वेटे को देखते ही रोना शुरू हो जाता कि जाने कव चला जायेगा। थाल धरा रहता; मां सोचती, वच्चा खाना शुरू करे, बच्चा सोचता मां रोना बंद करे तो शुरू करूं !

चालीस—

जब मैं कूपदान के लिए कलकत्ता में प्रयत्न कर रही थी तब भागीरथ कनोडिया बोले कि आपको यदि सरकार 'पद्मविभूषण' की पदवी दे तो ले तो लेंगी ? आपपर विनोबाजी का प्रभाव है। सो पदवी मिलने पर कहीं 'ना' तो न कर देंगी ?

मैंने इसमें कोई दिलचस्पी नहीं बताई, क्योंकि मुझे न तो इस वात में कुछ सार ही लगा और न ही इस विषय की कुछ जानकारी ही थी।

कुछ दिन बीते, मैं तो उस वात को भूल ही गई थी; पर बंबई में कमल ने एक दिन इस वात की चर्चा की। उसके पास पू० राजेन्द्रवाबू का पत्र आया था, जो उसने मुझे पढ़कर सुनाया। मैंने कहा, "वावूजी व पंडितजी तो महान् हैं। वे तो सबको सम्मान देकर वड़ा ही बनाना चाहते हैं, लेकिन मैं उस योग्य नहीं हूं। तेरे काकाजी की बात तो अलग थी, उन्हें अंग्रेज सरकार ने रायवहादुर की पदवी दी थी; पर उन्होंने तो उसे वापस भी कर दिया था। हां, उसमें फर्क तो जरूर है। वह पदवी तो विदेशी सरकार अपने को गुलाम बनाने के लिए देती थी। वह किसी स्वाभिमानी पुरुष के लिए शोभनीय नहीं हो सकती, पर आज तो यह अपनी सरकार की ओर से पदवियां दी जाती हैं। सरकार में अपने बुजुर्ग और अपने लोग ही हैं। पर मुझसे विशेष सेवा तो कहां वन पड़ती है। सवकुछ छोड़-छाड़ देने के वाद भी घरवाले और घर का मोह तो बना हुआ ही है। इसलिए जो निःस्वार्थ सेवा करते हैं, उन्हींको सम्मान मिलना चाहिए।"

इसपर कमल वोला,"पूज्य वावूजी व पंडितजी यह सब सोचने के बाद ही तो सम्मानित करेंगे। वे जो कुछ करते हैं, वह सोच-समझकर ही तो करते हैं। उसमें अपने को या और किसी को कहने के लिए क्या रह जाता है !"

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फिर मैंने उससे पूछा कि पदवी का नाम क्या है और वह किस तरह की पदवी है।

कमल ने कहा कि उसे 'पद्मविभूषण' कहते हैं और राष्ट्रपतिजी देश में सेवा करनेवालों को इस पदवी को देकर सम्मानित करते हैं। पिछले साल आशादेवी को भी इसी तरह की पदवी दी गई थी, पर 'सर्व-सेवा-संघ' में होने से उन्होंने स्वीकृति देने में लाचारी बताई थी।

मैंने कहा, "हां, यह बात तो मैं जानती हूं, पर यह मेरे नाम के आगे कैसे शोभा देगी ?"

कमल ने कहा, "यह आवश्यक थोड़े ही है कि उसे सदा नाम के साथ लगाया जाय।"

मुझे विचार आया कि कहीं मुझे घमंड या मोह तो नहीं हो जायगा। मैंने अपना यह डर भी कमल को बताया। वह बोला, "जब तुमने सबकुछ अर्पण कर रखा है, तो इसका क्या मोह होगा ? ऐसी कमजोरी मन में क्यों आने देनी चाहिए।"

मैं कुछ देर तक सोचती रही और कमल से बोली, "बाबूजी और पंडितजी जो कुछ करें, उन्हें 'ना' कैसे कहा जा सकता है ?"

कमल बोला, "यह 'ना' बोलना भी एक तरह का घमंड हो सकता है।"

मैं बोली, "तेरे काकाजी बाबूजी को हमेशा अपने बड़े भाई के समान मानते थे। वह अपने घर के बड़े आदमी हैं, उनकी भावना का आदर करना ही योग्य है। मैं असमंजस में पड़ गई हूं। एक ओर तो अपने को इस सम्मान के योग्य नहीं मानती और दूसरी ओर बाबूजी, पंडितजी जैसों की भावना। उनकी इच्छा अपने लिए आशीर्वाद ही है। फिर भी, मेरे जीवन की उन्नति की दृष्टि से या मुझसे अधिक सेवा हो सके, इसलिए वे जो उचित समझें वही करें। उनका आशीर्वाद तो हर हालत में अपने साथ ही है। वे जो कुछ करेंगे, उसमें मुझे संतोष ही है।"

यद्यपि पू० विनोबाजी का प्रभाव तो मुझपर है ही, पर वह मुझे अपवाद कहा करते हैं। इसलिए इस विषय में भी अपनेको अपवाद माना। फिर भी, मुझे कमल की चर्चा से भी ऐसा नहीं लगा कि मुझे पदवी मिलेगी ही। कुछ समय और बीत गया।

१५ अगस्त, १९५६ को मैं वर्धा थी। महिलाश्रम की लड़कियां और शान्ताबहन मेरे हाथ से झंडा चढ़ाना चाहती थीं। मैं वहां गई। प्रथम कताई का कार्यक्रम हुआ। कताई कर हम सब झंडे के मैदान में आये। इतने में थत्तेजी रेडियो सुनकर आये और बोले कि मैं एक खुशखबरी सुनाता हूं। माताजी को राष्ट्रपतिजी ने 'पद्मविभूषण' की पदवी से विभूषित किया है।

यह सुनकर लड़कियां और शान्ताबाई को बहुत खुशी हुई। मेरे मन में भी खुशी हुई, पर खुशी प्रकट करने में शरम मालूम होने लगी। अचरज भी हुआ और इस विचार से आंख में आंसू आ गये कि वास्तव में मैं इस योग्य नहीं हूं। यह पदवी तो जमनालालजी के लिए ही योग्य थी, मैं तो उनके सामने इस योग्य कहां हूं ?

पर इस पदवी ने मेरे पीहर में तो रोना-पीटना मचा दिया था। मेरे भाई रेडियो सुन रहे थे। जब यह सुना कि जानकीदेवी बजाज पद्मविभूषण हुई तो वह समझे परमपद प्राप्त हुई। मेरे भाई रामानुज सम्प्रदाय के होने से मृत्यु के लिए 'परमपद' शब्द का उपयोग करते हैं। यह सुनते ही वह हक्के-बक्के रह गये। हमारे परिवार के वैदजी से किसीने पूछा कि चिरंजीलालजी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जाजोदिया की वहन की मृत्यु हो गई, वहां वैठने गये थे क्या ? तव वैदजी को अचरज हुआ। वह वोले—कल रात को ही तो राष्ट्रपतिजी ने उन्हें पद्मविभूषण की पदवी दी और आज यह क्या हो गया ? वह घर आये और पूछने लगे कि भाईजी, खवर कव आई ? तव मेरे भाई वोले कि कल रात को रेडियो पर सुना था। वैदजी वोले कि भाईजी, वाई को तो 'पद्मविभूषण' की पदवी दी गई है। उसकी खवर थी, आपने गलत समझ लिया। फिर भी भाई को विश्वास नहीं हुआ। जव अखवार मंगाकर देखा तव उनकी चिन्ता दूर हुई।

आज सोचती हूं तो लगता है, मैंने पद्मविभूषण स्वीकार करके ठीक किया। पूज्य राजेन्द्र-वावू और पंडितजी के स्नेहपूर्वक दिये हुए सम्मान को लेने से किसी दंभ में इनकार कर देती तो वात हमेशा खटकती रहती।

इकतालीस—

नेहरू-परिवार से वजाज-परिवार का संवंध तीन पीढ़ियों का है। हमारे यहां पंडित मोतीलालजी पूज्य वापूजी से भी पहले वर्धा आये थे। वह कहां उतरे थे, ये वात मुझे अवतक याद है। पंडित मदनमोहनजी मालवीय और वह साथ आये थे। मालवीयजी को ठहराया गया था सीढ़ियों के पासवाले कमरे में और मोतीलालजी को हवेली के आखिरी कमरे में, जहां हम रहते थे। मुझे पिछले कमरे में भेज दिया गया था। पंडितजी की नींद में खलल न पहुंचे, इसलिए चौकीदार को 'ऑलवेल' की आवाज न देने की सेठजी ने ताकीद कर दी थी।

जव सेठजी ने दूसरे दिन सुवह-सुवह जाकर उनसे पूछा कि आपको नींद तो अच्छी आई न, तव पंडितजी ने हँसते हुए कहा, "हां, नींद तो ठीक ही आई, पर वीच-वीच में वांसुरी सुनाई देती थी।"

वात दरअसल यह थी कि नीचे के कमरे में कनीरामजी (दादाजी) सोये हुए थे और उन्हें थी दमे की शिकायत। सांस लेने पर सड्-सड् की ऊंची आवाज होती थी। उन्हींकी आवाज को लक्ष्य करके पंडितजी ने वांसुरीवाली वात कही थी। सुनकर सेठजी को बुरा लगा कि यह वात पहले ध्यान में क्यों नहीं आई ? आ जाती तो उनके सोने का वंदोवस्त किसी दूसरी जगह करवा देते।

सेठजी भी वीच-वीच में कई वार पंडितजी से मिलने इलाहावाद जाया करते थे। मैं साथ होती तो मैं भी जाती। उन दिनों मैं प्रायः घूंघट में ही रहा करती थी।

एक वार की वात है, जव हम इलाहावाद गये और आनंदभवन पहुंचे, तो कमलाजी सोई हुई थीं और उनकी वेटी इंदिरा खेल रही थी, वगीचे में। हमारे वहां पहुंचते ही कमलाजी ने कहा—"वेटी को वुलाओ।" वह आई। उस दिन पहली वार मैंने इंदिराजी को देखा।

१९३० में नमक-सत्याग्रह के सिलसिले में जव पं० मोतीलालजी नेहरू वंवई आये तो विलापार्ला छावनी में भी आये थे। उन्होंने वहां चलनेवाला सारा काम देखा और विशाल जन-समूह में व्याख्यान दिया। व्याख्यान में उन्होंने वहनों और कार्यकर्ताओं की भूरि-भूरि प्रशंसा की थी।

विलापार्ला छावनी को जव सरकार ने जब्त कर लिया, तो मैं मध्यप्रदेश, विहार होकर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विदेशी कपड़े के बहिष्कार के काम के लिए कलकत्ता पहुंची। मुझमें और मेरी सहयोगी बहनों में इस काम के प्रति बहुत जोश था। लोग, आन्दोलन चले तबतक, विदेशी वस्त्र न बेचें, गांठें बांधकर रख दें, यह प्रयत्न था। मैंने सोचा, इसमें क्या कठिनाई है। कपड़ा बांधकर रखनेवालों को पैसे की तंगी पड़ेगी, तो मैं ५-७ लाख रुपये वर्धा से मंगवाकर उन लोगों को कर्ज के बतौर दे दूंगी। यह तो बाद में पता लगा कि बाजार में तो विलायती कपड़ा करोड़ों रुपये का है। इसके बाद सत्याग्रह करने और धरना देने की बात सोची गई। मुझमें इतना उत्साह था कि मुझे उसमें आनेवाली अड़चनों का ख्याल भी नहीं आया।

कलकत्ते की मारवाड़ी बहनें व्यापारियों को समझाने के काम में या सभाओं में तो साथ दे रही थीं किन्तु सत्याग्रह या धरने के लिए तैयार नहीं थीं। मैंने सोचा, वर्धा से महिलाश्रम की २०-२५ बहनें बुला लूंगी।

उन्हीं दिनों पं० मोतीलालजी भी कलकत्ता आये हुए थे। मैं उनके पास पहुंची और मैंने सत्याग्रह की संपूर्ण योजना पंडितजी के सामने रख दी। सब बातें सुन लेने के पश्चात् वह बोले, "आपका सत्याग्रह सरकार अधिक चलने नहीं देगी। बीस-पच्चीस बहनों से यह काम नहीं चलेगा। उन्हें सरकार पकड़कर जेल में रख देगी, तब आप क्या करेंगी?" तब मेरे ध्यान में आया कि बिना हजारों बहनों के सत्याग्रह सफल नहीं हो सकता। कलकत्ता में बहनों की बहुत बड़ी सभा हुई। उसमें पूज्य स्वरूपरानीजी व कमलाजी भी आई थीं। स्वरूपरानीजी के ये शब्द आज भी मुझे अक्षर-अक्षर याद हैं—"हमारे लाल जेल में पड़े हैं। हमें खादी पहनने को कहा जाता है, हमसे वह भी नहीं होता। हमें मोटी खादी तो क्या जरूरी हो तो दरियां भी पहन लेनी चाहिए।

इसके कुछ दिनों बाद मोतीलालजी बीमार हो गये। बीमारी के समय और फिर बाद में भी सेठजी इलाहाबाद गये थे।

जवाहरलालजी और सेठजी तो एक-दूसरे को भाई की तरह मानते थे। उनका पारस्परिक प्रेम अद्भुत था। आना-जाना और मिलना तो प्रायः होता ही। किन्तु मैं उनके सामने जाने में सकुचाती थी और यदि उनके सामने जाने का काम पड़ भी गया, तो चुप रहा करती थी। वह जब-जब वर्धा आते, मैं उन्हें दूर से देखकर अपने भाग्य पर गर्व कर लेती थी।

एक बार की बात है, दिन-भर वर्किंग कमेटी की बैठक चलती रही। शायद चर्चा ज्यादा गंभीर रही हो; सबके दिमाग भारी हो गये थे। मैंने देखा, बैठक खत्म होने के बाद, बजाजवाड़ी की बैठक में हँसी-मजाक से थकावट मिटाने का प्रयत्न हो रहा था शायद। जवाहरलालजी घोड़ा बने हुए थें और उनपर सवार थीं सरोजिनी देवी। वह घुटनों और हाथों के बल चलते, तो सरोजिनी लुढ़क जातीं। सुचेताजी उनका हाथ पकड़कर उन्हें बैठातीं।

इस तरह के आमोद-प्रमोद प्रायः ही देखने को मिलते।

वर्किंग कमेटी की बैठक जब-जब बापूजी के पास सेवाग्राम में होती, तो नेतागण मोटर में बैठकर सेवाग्राम जाते।

एक बार जवाहरलालजी, सरदार वल्लभभाई पटेल, राजेन्द्रबाबू आदि मोटर में बैठे ही थे कि मेरी नज़र गाड़ी के भीतर चली गई। गाड़ी में एक सीट खाली थी। ज्योंही गाड़ी स्टार्ट होने को हुई मेरे दिमाग में आया यह सीट खाली क्यों जाय। मैंने ड्राइवर से कहा—ठहरो,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एक सीट खाली है तो मैं किसीको बुला लाती हूं। मैं चाहती थी कि जब मोटर जा ही रही है तो पेट्रोल का पूरा उपयोग हो। पास में सेठजी खड़े थे। उन्होंने ड्राइवर को तुरंत रवाना हो जाने के लिए कहा। उन लोगों के चले जाने के बाद मेरी ओर मुड़कर बोले—तुम नहीं जानतीं कि इन लोगों का समय कितना मूल्यवान् है। आगे से खयाल रखना।

नेहरू-परिवार के साथ जमनालालजी के संबंध कितने निकट के थे, इस बात की मुझे जानकारी मिली, कमलाजी की बीमारी में। कमलाजी, क्षयरोग होने के कारण, भुवाली में रहती थीं। वह बीमार पड़ती नहीं तो होता क्या, जवाहरलालजी का तो एक पैर सदैव जेल में ही रहता। और स्वयं कमलाजी भी देशभक्ति में उनसे पीछे कहां थीं। फूल-सी कोमल कमलाजी भी सत्याग्रह आंदोलन में अग्रपंक्ति में रहीं, अपने स्वास्थ्य और आराम का खयाल न कर प्रचार के लिए यहां से वहां घूमती रहतीं। यात्राएं भी उन्होंने कीं। देशभक्ति की तीव्र भावना और उस भावना के अनुसार प्रयत्नों से कमलाजी का बीमार होना स्वाभाविक ही था। उन्हें क्षय हो गया। डॉक्टर की सलाह थी कि वह भुवाली सेनिटोरियम में आराम करें।

जिन दिनों कमलाजी भुवाली में रह रही थीं उन दिनों भी जवाहरलालजी जेल में ही थे। कमलाजी ने बापूजी को पत्र लिखा था कि वह भुवाली आ सकें, तो अच्छा। बापूजी यदि भुवाली जाते भी तो वहां अधिक नहीं रह पाते, इसलिए उन्होंने यह उचित माना कि उनके बजाय जमनालालजी कुछ दिनों वहां रहे। जमनालालजी वहां कुटुंब-कबीले-सहित पहुंच गये। एक बंगला किराये पर लिया गया। उसमें मैं अपने बच्चों के साथ तो थी ही; हमारे ही साथ नर्मदा, सोफिया आदि भी थे। लक्ष्मण रसोइया भी था।

जमनालालजी के भुवाली पहुंच जाने से कमलाजी को बहुत संतोष हुआ और जमनालाल-जी वहां पहुंचते ही कमलाजी की देखभाल, सेवा-सुश्रूषा में जुट गये। वह उनकी इलाज-संबंधी छोटी-से-छोटी बात का खयाल रखते थे। उनके खाने के लिए भी कुछ-न-कुछ बनवाकर अवश्य ले जाया करते। उस समय पूरा नेहरू-परिवार वहीं था। वे अलग बंगले में रह रहे थे—स्वरूप-रानीजी, विजयालक्ष्मी, कृष्णा, इन्दु, मौसीजी आदि सभी लोग उन दिनों वहीं थे। जमनालालजी जिस प्रकार कमलाजी के लिए खाने का डिब्बा ले जाते उसी प्रकार नेहरू-परिवार के लिए भी कुछ-न-कुछ चीज बनवाकर ले जाया करते। एक बार वह भोजन के साथ कढ़ी ले गये। स्वरूप-रानीजी कढ़ी खाते हुए बोलीं—हमारे यहां कढ़ी में, मेरी मां फूल की तरह मुलायम पकौड़े डाला करती थीं। घर आते ही उन्होंने लक्ष्मण को आदेश दिया, बोले—"बहुत मुलायम और फूले हुए फूल जैसे पकौड़े बनाकर कढ़ी में डालना, कल मैं स्वरूपरानीजी के लिए ले जाऊंगा।" दूसरे दिन वैसी ही कढ़ी ले गये।

भुवाली में रहे तब जवाहरलालजी भी बीच-बीच में कमलाजी से मिलने सरकारी गाड़ी में आया करते। बड़ा ही करुण दृश्य उपस्थित होता। स्वरूपरानीजी की आंखों में आंसू होते और जब जमनालालजी वापस जाते तो सभी स्तब्ध बनकर उनकी ओर देखते रहते। कमलाजी के मन की उस समय स्थिति क्या होती होगी, यह तो परमेश्वर ही जाने, पर वह बहुत धैर्य रखतीं। उनकी मुद्रा गंभीर रहती।

डॉक्टरों ने जवाब दे दिया कि कमलाजी का इलाज यहां नहीं हो सकता, उन्हें स्विट्जर-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लैंड ले जाना ही हितकर होगा।

आखिर विदेश ले जाना ही निश्चित हुआ। नैनी से जवाहरलालजी को मोटर से लाया गया। स्वरूपरानीजी भी बंगले से आईं। सेनिटोरियम के आगे कमलाजी को ले जाने मोटर आई। जवाहरलालजी ने उन्हें गोद में उठाकर मोटर में रखा। साथ में इंदिरा भी थी। स्वरूपरानीजी की आंखों से अविरल आंसुओं की धाराएं बह रही थीं। सभी लोग गंभीर भाव से स्तब्ध से खड़े थे। जब कमलाजी की मोटर स्टेशन की ओर और जवाहरलालजी की जेल की ओर बढ़ी तो खड़े हुए लोगों का हृदय ही फट गया। सब सोच रहे थे, क्या जाने कमलाजी और जवाहरलालजी फिर मिलेंगे या नहीं? देखा नहीं जाता था, बड़ा ही करुण दृश्य उस समय उपस्थिति हो गया था।

गुजरे हुए दिनों की यादें आती हैं तो लगता है कि नेहरू-परिवार ने देश के लिए क्या नहीं भुगता और नेहरूजी की एकमात्र लाड़ली पुत्री इंदिरा को भी पूरे जनम तपना ही पड़ा। नेहरू-परिवार को उसपर प्यार तो था, किंतु उससे प्यार करने की फुर्सत किसे थी! दादा-दादी, मां सभी देशकार्य में लगे रहे और देश के लिए जूझते हुए ही प्राणार्पण किया।

आखिर पाषाण-हृदय सरकार भी इस ताप के आगे पिघली और उसने कमलाजी की तबीयत अधिक बिगड़ जाने पर नेहरूजी को रिहा किया। वह कमलाजी के पास स्विट्जरलैण्ड पहुंचे, किंतु उनका असीम प्यार और निकट सहवास कमलाजी को नहीं बचा पाया। नेहरूजी जब वहां से वापस लौटे तो अपने साथ कमलाजी की भस्मी लाये थे।

नेहरू-परिवार ने देशभक्ति की आग में अपना सबकुछ स्वाहा कर दिया। नेहरू-परिवार की मालकिन की ही आहुति जब इस यज्ञ में दे दी गई, तो फिर धन-संपत्ति तो उसके सामने मामूली बात थी। आजादी की लड़ाई के बाद खर्च-ही-खर्च होता गया इससे पहले कमलाजी की बीमारी में भी खर्च कम नहीं हुआ था। कैसी-कैसी चीजें उन लोगों को बेचनी पड़ी थीं कि वह सब याद आता है तो जी भर आता है। जेवर बेच दिये गए और उसके बाद जवाहरलालजी के चांदी के वे खड़ाऊं जिन्हें उन्होंने जनेऊ के वक्त पहना था, वे भी कलकत्ता के किसी जौहरी को बेच दिये गए। वे खड़ाऊ फिर से मिल सकें तो नेहरू-संग्रहालय की अनमोल वस्तु ठहरें।

इंदिरा जब विलायत से लौटकर पहली बार वर्धा आई थी तो उसे देखकर मेरा हृदय भर आया था। छोटी-सी उमर में क्या-क्या देखना पड़ा। बचपन में पिता राष्ट्रीय कार्यों के सिलसिले में जेल में ही रहा और अब मां भी बीमार होकर चल बसी।

मैं दूर-दूर से उसकी ओर देखा करती, पर न जाने क्यों, उसके सामने पास जाकर प्यार प्रगट करने की हिम्मत नहीं होती थी। वह काम मैंने जमनालालजी को सौंप दिया। मैंने जमनालालजी को उसकी पीठ पर प्रेम से हाथ फेरते देखा है। उसे बैलों की टमटम में बैठाकर सेवाग्राम ले जाते। उसपर उनका पितृवत् प्रेम था।

हम आजाद हुए, देश की बागडोर जवाहरलालजी के हाथ में आई। देश की बागडोर संभालने के पहले सभी नेता वर्धा में इकट्ठे हुए थे और गंभीर वातावरण में निश्चय कर दिल्ली गये, वह दृश्य भी देखा।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

देश की बागडोर संभालने के बाद जब जवाहरलालजी पहली बार वर्धा आए तो पिंपरी में उनके स्वागत के लिए मंडप बनाने की चर्चा चली। मैंने कहा—उनके लिए तो दूधी (लौकी) का स्वाभाविक मंडप ही अच्छा रहेगा। उनका स्वागत लौकी की बेल से बने स्वाभाविक मंडप में ही किया गया।

वह तब पूरे-पूरे दिन काम में लगे रहते, इसलिए उन दिनों उनसे मिलने और बात करने में मुझे बहुत संकोच रहता। किंतु जब कूपदान का काम मैंने अपने हाथ में लिया तो उनके पास पहुंच ही गई। उन्होंने ११ सितम्बर को ११ बजे का समय मुझसे मिलने के लिए निकाला। मैं, रामेश्वरीबहन व ओम् तीनों उनसे मिलने पहुंची। उस दिन शुक्रवार था। पंडितजी किसी सभा से लौटे ही थे। काफी थके हुये थे। उनका थकान से भरा चेहरा देखकर मैंने कहा—"आज विनोबाजी का जन्मदिन है। आज तो आपको हँसना ही पड़ेगा। इतना गंभीर रहे आज काम नहीं चलेगा।"

पंडितजी मुसकुराते हुए बोले—"जरूर हँसूँगा तब तो···।" और खिलखिलाकर हंस पड़े।

मैं बोली, "अर्जुन ने जमीन में तीर मारकर भीष्म पितामह को पानी पिलाया था। आप भी ऐसा तीर चलाइये कि पाताल फूट जाय और भारत में इतना पानी हो जाय कि सारी धरती हरी-भरी होकर लहलहा उठे, जिसे देखकर विनोबा खुश हो जायं।"

पंडितजी ने एक कूप-दान देने का आश्वासन दिया और राजघाट पर होनेवाली सभा में सन्देश भी दिया :

"आज आचार्य विनोबा भावे का जन्म दिन है। इस दिन को हमें इस प्रकार मनाना चाहिए जिससे उनके काम में उन्हें सफलता मिले। काम उनका नहीं है, हम सबका है, हमारे देश का है।

"देश-भर में बड़ी-बड़ी यात्राएं करके उन्होंने हमारी जनता में एक नई जान डाली है। भूदान-यज्ञ के सिलसिले में उनकी आवाज देशभर में गूंज रही है, बहुतों ने उसको सुना है और बहुतों ने उसका यथाशक्ति जवाब भी दिया है। मैं आशा करता हूं कि आज के दिन इस महान कार्य को और भी बढ़ाने की हम सब कोशिश करेंगे।

"अब विनोबाजी ने एक नई बात देश के सामने रखी है और भूमिहीन किसानों को जमाने के लिए और उनकी सहायता के लिए संपत्ति-दान की चर्चा भी की है। विशेषकर नये कुएं बनाने के लिए उन्होंने कहा है। किसान को खाली भूमि मिलने से, बगैर किसी और सहायता के बहुत लाभ नहीं होता। कुओं की सारे देश में बड़ी जरूरत है। मैं आशा करता हूं कि सब लोग विनोबाजी के नये सन्देश पर विचार करेंगे और विशेषकर कुएं बनवाने में मदद करेंगे।"

जवाहरलालजी ने अंत तक सेवा करते-करते देश के लिए प्राण दिये। लोगों ने अपने प्यारे नेता का जो आदर किया वह उनके रक्षा-कलश को दिल्ली से प्रयाग ले जाते समय देखा। मैं उस ट्रेन में थी। लोगों ने, जवाहरलालजी को लाल फूल प्यारे थे, इसलिए उन्हें लाल फूलों की कलश पर वर्षा कर जिस तरह आदर व्यक्त किया वह भुलाया नहीं जा सकता।

भले ही मेरे मन में इंदिराजी के लिए अथाह प्रेम भरा हो, पर मैं उसे प्रगट करने में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सदैव ही सकुचाती रही। अभी-अभी जब आजादी के सैनिकों को ताम्रपत्र भेंट किये गए, तो मेरा दिल्ली जाने का इरादा नहीं था, आग्रहवश गई। उस समय इंदिराजी से मिलने का समय मेरी ओर से मांगा गया। मैं घर पहुंची। जो समय दिया गया था उसमें ५-१० मिनिट देरी हो गई, तो आते ही उन्होंने उसके लिए खेद प्रगट किया। मैंने कहा...कोई खास बात नहीं। मुझे यहां दूसरा काम भी क्या है ?

वह डेढ़ घंटे बैठीं। पूरे समय मेरे मुंह की ओर सहानुभूति और करुणा से देखती रहीं, क्योंकि कमल की मृत्यु के बाद वह मुझसे पहली-पहली बार मिली थीं। उनकी भावना तो मैं उनके पत्र से ही जान चुकी थी। मैं भी उनके मुंह की ओर देखती रही। बहुत कम बात हुई, पर जो हुई वह उनकी देश की चिंता पर प्रकाश डालनेवाली थी।

वह बोलीं, "आप घोड़ा-गाड़ी रख लें। मोटर का उपयोग न करें, क्योंकि देश में पेट्रोल की अबतक कमी है।" शायद उन्होंने यह बात जमनालालजी ने मोटर में न बैठा कर बैलगाड़ी में बिठाया था, उसकी याद करके कही हो।

आगे उन्होंने कहा—"आप इस बात का अधिक-से-अधिक प्रचार करें कि लोग हवाई जहाज में कम बैठें, क्योंकि हमारे पास हवाई जहाज चलानेवाले कम हैं और वे कम होने से हमें परेशान करते हैं। देखिये न, मुझे पॉकेट-खर्च के लिए १९५० रुपया मिलता है जबकि उनको इससे बहुत अधिक मिलता है, फिर भी उन्हें संतोष नहीं है।"

मैं समझ सकी कि उन्हें सबसे अधिक चिंता देश की है, देशवासियों की है; और वह हर पहलू पर व्यावहारिक दृष्टि से सोचती हैं।

बयालीस—

बापूजी के वे शब्द मेरे हृदय पर अंकित थे—"अपना जो कुछ हो वह उसके कामों में लगा दो। यही सती होना है।" इसलिए मेरे मन में यही बात घूमने लगी कि उनके अंतिम कार्य 'गोसेवा' को मैं कैसे अधिक बढ़ाऊं। मैंने जो कुछ अपने पास था वह तो समर्पित कर ही दिया था, पर अब साधना करने की बात थी, काम में लगना था। बापूजी भी यही चाहते थे।

जमनालालजी की तरह दूसरों का उपयोग लेकर काम को आगे बढ़ा सकूं, यह मेरी शक्ति नहीं थी। वह तो सैकड़ों लोगों का संपर्क कर उन्हें अपना बनाते और उसकी विशेषता का उपयोग लेकर काम को जमाते। कोई भूल करता तो उसे संभाल लेते, उसे समझाकर फिर भूल न करे, ऐसा प्रयत्न करते। यह माथापच्ची मुझसे होने से रही थी। मुझसे जो कुछ हो सके वह तो मैं करने को सदा तैयार रहती। मैंने कभी अपने शरीर या सुख की पर्वाह नहीं की। दूसरे काम करें, तो मैं उसमें बाधक तो नहीं बनती, पर दूसरों को प्रेरणा देकर या उसकी विशेष शक्ति को जानकर काम लेना, यह मेरे बस की बात नहीं और जमनालालजी की तरह यह उदारता भी नहीं कि काम बिगड़ने पर उसे सुधारने के लिए फिर मौका दे सकूं। मेरी विवशता थी। जमनालालजी का रहा अधूरा काम मुझसे पूरा कराने की बापू की तीव्र इच्छा को मैं समझती थी, इसलिए प्रेमभरा कटाक्ष कर वह मुझे कामचोर कहते थे। उनकी मृत्यु के बाद यह बात मुझे और भी तीव्रता से महसूस होने लगी। जमनालालजी और बापू की कमी पूरी करने के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लिए मैं विनोबाजी के संपर्क में अपना रीतापन दूर करने लगी।

वह भूदान में घूमते तो मैं भी साथ जाने की कोशिश करती और अपना गो-सेवा का राग अलापती रहती। कूपदान की सूझ के पीछे भी गो-सेवा की भावना ही थी।

खासकर राजस्थान में मैंने विनोबाजी तथा जाजूजी के साथ लम्बे दौरे गोसेवा के काम की दृष्टि से किये। राजस्थान में गोसेवा की भावना बहुत व्यापक है। केवल राजस्थान में ही ३५० गोशालाएं हैं, जिनमें लाखों की संपति हैं। बड़े-बड़े मकान, खेत, कुएं बनाकर सेठ लोगों ने गायों को रखने के लिए सुविधाजनक स्थान बनाये। पूर्वजों की बनाई हुई गोशाला पर आज भी उनके बेटे-पोते खर्च करते हैं, पर जिस तरह से गोशालाएं चलानी चाहिए, नहीं चलतीं। वहां सेठजी के बूढ़े मुनीम या उनके घर के लोग ही काम करते हैं, जिन्हें गो-पालन किस तरह किया जाय इसका शास्त्रीय ज्ञान तथा दीर्घदृष्टि नहीं होती। इस कारण गाय को पूज्य मानकर, पूजा करके भी हम उसकी ठीक से सेवा नहीं कर पाते।

मेरे मन में कई बार विचार भी आया। ये गो-शालाएं मिलकर ठीक योजनापूर्वक काम करें, तो गाय की बहुत बड़ी सेवा की जा सकती है, उसे बचाया जा सकता है। गो-संवर्धन का शास्त्रीय ज्ञान देकर कार्यकर्ता तैयार किये जायं और वे गो-शालाओं के द्वारा नस्ल-सुधार व गोदुग्ध की पूर्ति का काम करें, तो ये गो-शालाएं घाटे के स्थान पर कमाई कर गोसेवा के लिए अच्छे साधन बढ़ा सकती हैं। गाय के प्रति हिन्दू साधुओं में भी बहुत भक्ति है और वे गाय को बचाने के लिए कई बार प्राणार्पण तक की तैयारी कर लेते हैं। यदि वे गोसेवा के काम में लग जायं, तो जो काम कानून से होना कठिन है वह कार्य वे अपने पुरुषार्थ से कर सकते हैं। यदि सच्चे सेवक हों, तो धन की तो कमी नहीं पड़ेगी। जो बुजुर्गों द्वारा गो-शालाएं बनी हुई हैं, उनमें कुएं हैं, खेती है, जमीन-मकानात हैं। कई जगह तो सन्त-महात्माओं के रहने का स्थान भी हैं। इन गो-शालाओं में अपाहिज जानवरों को कौवे आदि का उपद्रव न हो, इसलिए उनके रहने के स्थान में जालियां भी लगी हुई हैं। पानी पीने के लिए खेल बने हुए हैं, पर उनका उपयोग आज ठीक नहीं होता। निस्स्वार्थ सेवा करनेवाले साधु-महात्मा यदि यह काम हाथ में लें तो बहुत-कुछ हो सकता है। पर उनमें केवल गाय के लिए पूज्य भाव हो इतना ही काफी नहीं वरन यह जानकारी भी जरूरी है कि गाय को किस तरह पाला जाय जिससे उसकी नस्ल का सुधार होकर दूध भी बढ़े।

यह काम तो बहुत बड़ा है। इसमें सिर्फ गोशाला सुधरे इतना ही काफी नहीं है, व्यापक पालन तो तब हो सकेगा जब किसान गाय को पाले। वह तभी संभव होगा जब हर किसान गाय को पालेगा और गाय के लिए चारा उपजा सकेगा, और यह बिना सिंचाई की व्यवस्था के संभव नहीं। इसलिए जगह-जगह नहरें, तालाब और कुएं हों और किसानों के पास जो दूध हो उसे बेचने की व्यवस्था हो। आज तो शहरों में लोग गाय का दूध भी नहीं पीते, क्योंकि उसमें मलाई कम होती है। भैंस के दूध से गाय का दूध गुणकारी अधिक है, यह सभी डाक्टर-वैद्य या आचार-शास्त्री कहते हैं, फिर भी गाय का दूध कई शहरों में गाय की पूजा करनेवाले तक नहीं पीते। इसलिए गो-सेवा-व्रती व्यक्ति बढ़ाने का प्रयत्न बापूजी ने किया था और मैं तो वर्षों से स्वयं गाय के दूध-घी का ही प्रयोग करती हूं और दूसरों को भी वही बात कहती हूं। जब लोग गाय के घी-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दूध का प्रयोग अधिक करेंगे तो गायें अधिक पाली जायंगी। उनका दूध शहरों में ले जाने की व्यवस्था हो। आज जो अच्छी नस्ल की गायें शहरों में जाकर खत्म होती हैं, वे भी बच जायंगी।

कलकत्ता में हरियाणे की अच्छी नस्ल की गायें जाकर सूखने पर कसाइयों के हाथों मारी जाती हैं। इस बात का मुझे बड़ा रंज है और मैंने इसके लिए व्यापारियों, नेताओं तथा सरकार के प्रमुख लोगों से भी बहुत चर्चा की। राजेन्द्रबाबू जब राष्ट्रपति थे तब मैंने कहा था कि हरियाणे से गायें कलकत्ता जाने के लिए आप पाबंदी कर दें, तो वह बोले—"ऐसा विचार चला था तब हरियाणे के लोग आकर बोले कि ऐसा होगा तो हमारा बहुत नुकसान होगा। हमारी बहुत बड़ी आय इस पशु-पालन के उद्योग से होती है। यदि वहां गायों का जाना बन्द हो गया, तो हमारा बहुत नुकसान होगा।" फिर गायें सूखने पर बंगाल या बिहार के जंगलों में, जहां चारा-पानी है, वहां उन्हें रखकर पालन का प्रस्ताव रखा। लालबहादुर शास्त्री रेल-मंत्री थे, उन्होंने वैगनों की सहूलियत से देने की बात भी कही, व्यापारी इस काम के लिए पैसा देने को भी तैयार हो गये, पर मुझे वहां जो कमी मालूम दी वह इस योजना को अमल में लानेवाले प्रशिक्षित तथा निस्स्वार्थ कार्यकर्ताओं की थी।

मैं इस बात का अनुभव सदा करती हूं कि बापूजी कहते थे कि गाय का काम स्वराज्य-प्राप्ति से भी कठिन है, परन्तु हिन्दुस्तान को गाय बचानी ही होगी, बिना गाय के कृषि-प्रधान भारत और भारतीय संस्कृति बच नहीं सकती।

अब मेरी उम्र, मानसिक और शारीरिक अवस्था ऐसी हो गई है कि मैं कहीं वर्धा से बाहर और विनोबाजी का सत्संग छोड़कर जाना पसंद नहीं करती। पर आज भी कलकत्ता की गायें बचाने के लिए या गोसेवा के लिए कहीं जाना पड़े, तो मैं कलकत्ता जाने को तैयार हूं, क्योंकि बापू के प्रिय काम और जमनालालजी के अंतिम संकल्प की पूर्ति उससे होती है। मेरे लिए उससे बढ़कर दूसरो कोई बात इतनी महत्त्वपूर्ण नहीं है, क्योंकि मैं इसे अपने जीवन की साधना मानती हूं और, आज जब कमल चला गया है और मैं उतनी विचलित नहीं हूं, जितनी ऐसी हालत में कोई मां हो सकती है, तो लगता है, कि शायद यह इसीलिए संभव हुआ कि मैं बापू के कहने के अनुसार काम में जुट गई।

तैतालीस—

कमल के जन्म की खुशी में बंदूकें चली थीं। बजाज-परिवार और उनको चाहनेवालों में उसके जन्म की बहुत खुशी थी, क्योंकि बजाज-परिवार की तीसरी पीढ़ी में घर में लड़का पैदा हुआ था। बच्छराजजी के पुत्र न होने से रामधनदासजी को गोद लिया था और रामधनदासजी की गोद जमनालालजी आये थे। सामने रहनेवाले दामोदर खरे वकील कहने लगे—"आप तो खुशियां मनाते हैं, पर घर में जो जापेवाली है उसके कानों में यह आवाज कैसे सुखप्रद हो सकती है ?"

आज देखते-देखते क्षण में ही सब क्या तमाशा हो गया ? जमनालालजी ५३ वर्ष की अवस्था में इहलोक से विदा हुए, तब मुझे व अन्य लोगों को लगा ४-५ वर्ष और रह जाते तो कितना अच्छा होता ?आश्चर्य होता है, वह चार-पांच वर्ष कमलनयन को कैसे मिल गये, वह ठीक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

५७ वर्ष की उम्र में अपने पिता से जा मिला। भगवान की अनुपम लीला है। किसकी कव सुन लेते हैं! कमलनयन की बहुत-सी बातें अव याद आती हैं।

जब कमलनयन पेट में आया उस समय उसके पिता जमनालालजी के विचार अत्यन्त शुद्ध व सुन्दर हो गये थे। हमेशा शुद्ध खाना व सत्संग का ही ध्यान रखते थे। मैं भी भगवान् श्रीकृष्ण का ही ध्यान रखती थी। सोचती थी कि जो वालक हो उसके वाल काले-घुंघराले हों, चेहरा अपने पिता के समान सुन्दर व तेजस्वी हो। सब गुण-सम्पन्न, वीर्यवान, निर्भीक तथा साहसी हो। कमलनयन पैदा हुआ तव मुझे ऐसी ही प्रतीति हुई। मैं वार-वार ऐसी ही कामना करती कि मेरा वेटा कृष्ण की तरह योगी वने, उसके द्वारा देश और संसार की भलाई हो। अपनी यह कामना वहुत अंशों में सफल मानती हूं, क्योंकि कमल निडर, निर्लोभी और योगी की तरह निर्लेप था। उसमें दीर्घ दृष्टि थी, वात का पक्का था, भगवान पर अपूर्व निष्ठा थी, अमीरी का उसमें मोह नहीं था, पर बोलता अधिक था, उसमें कुछ मेरी तरह कंजूसी भी थी।

आठ महीने के इस वालक को सर्वप्रथम मैं अपने पीहर जावरे ले गई तव सवने कहा—"कपड़े से ढंककर रखो, नहीं तो नज़र लग जायगी।" मुख पर ऐसी दीप्ति थी कि लोग सहज ही आकर्षित हो जाते थे। वम्बई में भी जव मैं कमलनयन को ले गई तो लोगों ने कहा कि वच्चे को अधिक कपड़े पहनाकर ढंककर रखो। कमलनयन अपने वंश में जन्मा हुआ पहला लड़का था। उसकी सब ओर से देखभाल होती। मां का दूध पर्याप्त व अच्छी मात्रा में मिले, इसलिए मैं खूव दूध, घी, वादाम खाती व मालिश कराती। अच्छी तरह खाने के कारण मेरा दूध कमल को पिलाने के वाद भी वाकी रह जाता था, जो कि मैं अपने भाई की लड़की को भी पिला देती थी। मुझे गाय का दूध अच्छा मिले, इस कारण गाय को दूध, वादाम, गेहूं आदि खिलाते थे। एक वर्ष वाद जव मेरा दूध पीना छोड़ा तव उसके लिए अलग गाय रख दी थी। उसकी वड़ी वहन कमला की भी अलग गाय थी। वच्चों को उन्हींकी गायों का सिर्फ एक उफान का दूध ठंडे पानी के वर्तन से थोड़ा हिलाकर पीने लायक करके दिया जाता था।

कमल को उसके जन्म से चार साल तक चर्म-रोग रहा, पर दवा-दारू कुछ नहीं की। घी, मक्खन, शहद से विलकुल ठीक हो गया। कमल का दस-ग्यारह वर्ष तक कोई खास अध्ययन नहीं हुआ, कारण मैं अनपढ़ थी, कुछ समझ नहीं सकती थी। कुछ समय वाद जव वापूजी व विनोवाजी का अधिक संपर्क वढ़ा, तो सेठजी तथा मुझे लगा कि सरकारी स्कूलों की पढ़ाई की अपेक्षा उसे विनोवाजी के साथ रखें, ताकि उसपर उनके संस्कार हों और उन जैसा ब्रह्मचारी वनकर देश की सेवा और अपनी उन्नति करे। इसलिए उसे आश्रम में भर्ती करा दिया गया। वहां उसे सभी छोटे-वड़े काम करने पड़ते थे। उसकी घर में रहकर खाने-पीने की अपनी कई आदतें थीं, जिनसे प्रारम्भ में उसे आश्रम में बहुत तकलीफ होती थी।

दूध उसे मलाई का तथा ठंडा पसंद नहीं था। वहां उसे जैसा चाहिए वैसा कौन पिलाता? आश्रम के नियम इतने कठिन थे, पर कमल वरावर उनका पालन करता था और हम भी उसमें उसकी सहायता करते थे। मैंने कभी भी कमल को घर से कुछ खाने-पीने को नहीं भेजा। इतना ही नहीं, घर आता तव उसका मन न चले इस कारण उसके सामने मिष्ठान्न या स्वादिष्ट भोजन न खाते थे, न वनाते थे।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इसी बीच उसे काली बुखार हो गई। उस समय वह विनोबाजी के पास था। हम उसका इलाज न करा सकते थे, न पूछ सकते थे। घनश्यामदासजी बिड़ला ने कहा कि मैं इसे कलकत्ता ले जाऊंगा, वहां डाक्टरी इलाज से उसे ठीक कराऊंगा। पर मैंने व जमनालालजी ने साफ मना कर दिया। फिर विनोबाजी के इलाज से ही ठीक हुआ।

हिन्दी, संस्कृत आदि तो उसने आश्रम में सीखीं। किन्तु व्यापार संभालने के लिए अंग्रेजी आवश्यक थी। पंडित जवाहरलालजी और घनश्यामदासजी बिड़ला का आग्रह था कि उसे आश्रम के बाहर भिजवाकर उच्च शिक्षा दी जानी चाहिए। इस कारण विनोबाजी ने उसे सिलोन भेजने की इजाजत दी। पूज्य बापूजी की सलाह से उसकी शिक्षा का कार्यक्रम बना। सिलोन जाते समय मैंने कमल से चाय न पीने के लिए कहा। उसने कभी चाय नहीं पी। पहले भी कभी नहीं पी थी। बात का इतना पक्का था कि मैं भी हिल जाती।

नमक-सत्याग्रह में मैंने कमल को भेजा उस समय वह बीमार था। १०४ डिग्री बुखार में मैं उसे वर्धा से साबरमती बापूजी के पास ले गई। जमनालालजी को और मुझको यह धुन थी कि आजादी की लड़ाई में बजाज-परिवार का अधिक-से-अधिक बलिदान हो। वह बीमार तो था ही रास्ते में उसकी आंखों की ज्योति जाती रही। तब गांधीजी ने उसे गुजरात विद्यापीठ में भेज दिया, जहां इलाज से फिर ज्योति आई, क्योंकि सत्याग्रही घर वापस नहीं जा सकता था। मैं उस समय मां होकर भी यह सब उत्साह में करती जाती थी।

स्वतन्त्रता की लड़ाई में अलमोड़ा जाते समय कमल ने एक व्याख्यान दे दिया। वह निडर तो था ही। व्याख्यान में उसने कुछ ऐसी बातें कहीं कि उसे जेल हुई और 'सी' क्लास में रख दिया गया। वहां उससे उसका नाम पूछा गया। उसने कहा—"हैवान…।" जेल में उसने मांग की—"झाड़ू लगाने का काम करूंगा और नहाने व कपड़े धोने के लिए साबुन चाहिए।" तब उसे काल-कोठरी में डाल दिया गया। वहां उसने सात दिन तक कुछ नहीं खाया। आठवें दिन पूछा—"क्या चाहिए ?" फिर उसने वही जवाब दिया—"झाड़ू और साबुन चाहिए।" मालूम हुआ कि जमनालालजी का लड़का है तब उसे 'बी' क्लास में भिजवा दिया गया। वहां उस समय बड़े-बड़े क्रांतिकारी रखे गये थे और उनमें से उसके साथ भी कुछ थे। काल-कोठरी में उसका १८ पौंड वजन घट गया था। वह सब 'बी' क्लास में रखने पर वापस आ गया। बस यही उसकी विशेषता थी—मिला तो भोगा—न मिला तो जो मिला उसमें ही खुश। वह मस्तमौला था। कोई लालसा, लिप्सा, तृष्णा नहीं। फक्कड़ व मस्तमौला; ऐसा था मेरा कमल।

जबतक उसके पिता जमनालालजी थे तबतक उसको किसी तरह की चिन्ता व बोझ नहीं था, पर उनकी मृत्यु ने उसके जीवन को बड़ा धक्का पहुंचाया। उनकी मृत्यु के समय वह उनके पास नहीं था, गोला था। वह मरते दम तक उस सदमे को न भूल सका। अपने पिता के काम की जिम्मेदारी सब तरह से उसने अपने कंधों पर उठा ली, जिसमें अपने शरीर का भी ध्यान न रखा। बाहर से हँसी-मजाक करते हुए कमलनयन ने अपने पिता के व्यापार और इज्जत का बहुत ध्यान रखा। ऐसा लगता है कि हृदय और चीनी की बीमारी ने उसे ऐसा ग्रसा जैसे चन्द्रमा को राहू ने। पर फिर भी उसकी मृत्यु भीष्म पितामह की मृत्यु के समान इच्छामृत्यु ही हुई। वह एक योगी के समान जिया और परलोक सिधारा।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मृत्यु के समय उसने किसीको किसी प्रकार का दुःख नहीं दिया। चुपचाप धरती-मां की गोद में लेटकर चिर-निन्द्रा में सो गया। जिस साबरमती के किनारे आश्रम व गुजरात विद्यापीठ में बचपन के दिन बिताये थे और प्यारे बापू के सामने खेलता-कूदता रहा, उस साबरमती के किनारे जाकर चिर-निद्रा में सो गया। मृत्यु के दिन ही उसकी वहीं घूमने जाने की इच्छा थी, वह प्रभु ने पूरी की। इस त्यागी ने जीवन से ही नहीं, मौत से भी हँसी की। वह हमेशा निर्भय रहा। मृत्यु को उसने स्नेहवत् गले लगाया, कारण, इस संसार में उसके समस्त कार्य पूरे हो गये थे। तृष्णा उसमें थी ही नहीं। कर्म करते हुए मरना, यही उसे मान्य था। कार्य करते ही वह निकल भागा। वह गृहस्थ रूप में सन्त था। संत तो हमेशा ऐसे ही हुआ करते हैं।

कमल के जाने की खबर तो ११ बजे ही वर्धा में पहुंच गई थी, पर मुझे यह बात कौन कहे ? मुझे विनोबाजी के पास ले जाया गया। कहा गया, विनोबाजी ने बुलाया है। विनोबाजी तो भगवान को भी नहीं बुलाते और मुझे बुलाया है तो मैं समझी कोई खास काम है। मैं पवनार पहुंची। यों विनोबाजी के पास जाती हूं तो बालबुद्धि से उनसे हँसी-मजाक करती रहती हूं। हूं भी तो विनोबाजी से २-३ साल बड़ी। फिर मैं अपना अधिकार तो उनपर चलाती ही हूं और विनोबाजी भी कहते हैं—जानकीबाई की बालबुद्धि है सो सदा ऐसी ही बनी रहे। मैं पवनार पहुंची। आज विनोबाजी को गंभीर देखा, चुपचाप बैठे थे, मुझे देखकर आहिस्ता-से बोले—"बात तो कठोर है, पर बतानी ही पड़ेगी।"

मैंने मन में सोचा—"हे भगवान ! क्या कठोर बात है ?" वह बोले—"श्रीमन्‌जी का अहमदाबाद राजभवन से फोन है, कमलनयन देवलोक को गया।" मैं खड़ी थी, दोनों हाथों से आंखें मूंदकर बैठ गई। मेरे आंसू सूख गये। चारों ओर लोग स्तब्ध खड़े थे। इन दिनों मुझे भय ही लग रहा था, कमल के लिए। उसके पैरों में सूजन आ गई थी और अंगूठे के नख नरम हो गये थे। उससे बात करना तो कठिन ही था। कोई भी उसे उसकी तबीयत के बारे में पूछता तो लड़ पड़ता और भाषण दे डालता। कहता—"क्या है एक दिन मरना तो है ही।" उससे बोले तो क्या बोले ?वह बोलने में तो तेज था ही, अपनी कहे जाता, दूसरे को बोलने का मौका ही नहीं देता। मन में लगता था, कब क्या बुरी खबर सुनने को मिले। इस विचार से कभी-कभी आंखों में आंसू भी आ जाते। परंतु गया तब आंसू नहीं आये। कासी, गोदावरी तो फूट-फूटकर रो रही थी। इन नौकरानियों को हम कुटुम्बी जैसी मानते आये, उनका रोना देखा नहीं गया।

पहले दिन खबर सुनी तब तो स्तब्ध रह गई। धीरे-धीरे जब कमल की मृत्यु की सारी विगतवार खबर सुनी तो ऐसा लगा, भगवान उसे फूल की तरह ले गये। ज़रा भी तकलीफ उसे नहीं हुई, किसीकी सेवा उसने नहीं ली। ऐसी मौत के लिए रोना कैसा ?

कमल के काकाजी हमेशा कहा करते—"ऐसी मौत आवे जिससे किसीको तकलीफ न हो।" कमल को भगवान ने वही मृत्यु दी और ऐसी जगह दी, जिसे वह प्रिय मानता था, जिस जगह के लिए उसके मन में आदर था। ऐसी मृत्यु के लिए रोना क्या समझदारी है ? बापू, विनोबाजी और जमनालालजी से फिर पाया तो क्या पाया ? उनसे जो पाया उसीसे तो इतना बड़ा आघात सहजभाव से सह सकी। अपने मन के भाव नीचे लिखी टूटी-फूटी पंक्तियों में व्यक्त कर रही हूं, जिसमें कमल के प्रति मेरी कुछ भावनाएं प्रकट होती हैं :

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बेटे कमल,
सफल हुए तुम आज
मां का ले लो
झोली भर-भर आशीर्वाद।
तुम फूलो-फलो कमल समान
गंदगी रहे सदा ही दूर,
सुगंधी फैले इतर समान।
मैं पैदा हुई नवाबी ठाठ में
इच्छा सब पूरी हुई बापू के चरणों में
रही एक मन में
इतर गुलाब की
गांधी वातावरण में।
यही भेंट मैं, तुझको दे,
मंशा पूरी करती
साथियों-सहित खुशबू फैले देश सारे में।
कमल रहता है वारी बीच
भाव तुम्हारे उड़ते अम्बर बीच,
लोग रहते दुनिया में,
निभना होगा सब ही में।
बड़ा था नाक पिता का भी,
फुलाना तुम्हें न होगा जी।
तुम थे फकीर स्वभाव
पर
पहचाना किसने जी!
कागा किसका धन हरे
कोयल किसको देत,
जीभड़ल्या अमृत बसे
जग अपना कर लेत।

चवालीस—

मेरी कथा पूरी हुई, पर जीवन-यात्रा अभी जारी है। नौ बरस की उमर में जावरे से वर्धा अपरिचितों के बीच रहने गई। छोटी-सी कच्ची उमर में ही माता-पिता से जो संस्कार मिल सके, उनको लेकर ससुराल गई। जब होश सम्भाला तो सास और दादा-ससुर का साया उठ चुका था। जमनालालजी से संपर्क और परिचय बढ़ने लगा और उन्होंने मेरा जीवन अपने विचारों के अनुकूल ढालना शुरू कर दिया। जो बात अच्छी होती थी, उस ओर इशारा-मात्र कर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

देते थे। इस प्रकार जीवन चल रहा था कि गांधीजी आये। उन्होंने तो हमारे जीवन में तूफान की तरह प्रवेश किया। सारा जीवन बदल गया। उसके बाद विनोबाजी से परिचय और संपर्क बढ़ा। इस प्रकार मेरा जीवन आज जो कुछ है, वह माता-पिता के संस्कारों के अलावा जमनालालजी, बापूजी और विनोबाजी का बनाया हुआ है। बापूजी को तो अपनी जीवन साधना करने में प्रयत्न करना पड़ा था। उन्होंने नियम से, दृढ़ता से, परिश्रम से अपना जीवन साधा। विनोबा के लिए सब सहज है। इस प्रकार इन तीन साधकों और महापुरुषों के निकट संपर्क में रहकर और अपनी शक्ति-भर प्रयत्न करते रहने पर जैसी मैं बनी और हूं, उसकी झलक इस पुस्तक में है।

रह-रहकर मेरे मन में यह विचार उठता है कि यह कथा क्या किसीके काम की होगी भी ? लोग इसमें से क्या लेंगे ? मेरे पोते-पोती तो इसे जब यह लेख-माला के रूप में निकल रही थी, पढ़कर इसके कुछ प्रसंगों की हँसी उड़ाया करते थे। मेरे बड़े पोते राहुल ने तो एक दिन बचपन की मेरी उस घटना का जिक्र करते हुए, जबकि मेरी सास ने मुझे व जमनालालजी को एक कमरे में सुलाया था और जमनालालजी ने मेरे पैर में चिकोटी काटी थी, पूछा, "दादीजी, आप तो सो गई थीं। आप को कैसे पता चला कि दादाजी ने चिकोटी काटी ?" मैंने उससे कहा, "अरे राममार्या, तूने और भी कुछ पढ़ा या इसीपर ध्यान गया ?" इस तरह मुझे शंका ही है कि यह किसीके कुछ मतलब की होगी भी ? दुनिया में पढ़ने और मनन करने को इतना पड़ा है, तो उसमें और कोरे कागजों को काला करके कूड़ा क्यों बढ़ाया जाय ? पर कई ऐसे भाइयों की तरफ से, जो इस प्रकार के संस्मरणों में दिलचस्पी रखते हैं और अच्छा समझते हैं, सूचना आई कि इन्हें पुस्तक का रूप देना चाहिए। कुछका विशेष आग्रह भी हुआ। हारकर, मैं इसके लिए तैयार हो गई।

मेरे जीवन पर जिन तीन महापुरुषों की गहरी छाप पड़ी, उनमें जमनालालजी और बापूजी तो अब चले गये। विनोबाजी हैं। पर वह तो छोटे भाई के जैसे लगते हैं। उनके पास तो मैं निस्संकोच ही पहुंच जाती हूं। बापूजी के सामने जाने में डर-सा लगता था। उसका एक कारण यह भी हो सकता है कि जमनालालजी ने उनको पिता माना था, सो मैंने भी अंतःकरण के किसी कोने में उनको ससुर-सा समझकर उनका डर बसा लिया हो। जमनालालजी से तो उनके कामों को लेकर एक प्रकार की ईर्ष्या-सी होती थी। उनसे लड़-झगड़ भी लेती थी। उनको राजी रखने का भी प्रयत्न करती थी, पर इन दोनों के चले जाने से एक अभाव-सा, रीतापन-सा महसूस होता है। पर उन दोनों की मृत्यु के समय, उनके विचारों में पली होने के कारण, धीरज रख सकी। मुझे अंदर से काम करने की प्रेरणा होती है, उत्साह भी है। पर कोई हाथ पकड़कर काम करा ले, ऐसा मन में होता रहता है। विनोबाजी के भूदान में, कूपदान में, मन लगता है, अच्छा भी लगता है, काम भी करती रहती हूं, पर मन की शांति तो कुछ और ही चीज है। शक्ति भी अब शरीर में दिन-पर-दिन कम ही होती जाती है, लेकिन रह-रहकर यह बात मन में आती है कि कोई खींचकर काम करा ले।

जब काम-काज में लग जाती हूं, घूमती रहती हूं तब घर के लोगों को भूली-सी रहती हूं। पहले भी यही हाल था। अब भी यही है। पर जब परिवार के बीच रह जाती हूं तो फंस

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जाती हूं। यों सब लड़के, लड़कियां, दामाद सुखी हैं, अपने-अपने काम-धन्धे में लगे हैं। अपनी शक्ति और सामर्थ्य के अनुसार सब सेवा-कार्य भी करते ही हैं। यह मेरे लिए संतोष-प्रद है।

कभी वर्धा, कभी दिल्ली, कभी बंबई और कभी विनोबाजी के साथ घूमती रहती हूं। सबसे ज्यादा संतोष मुझे विनोबाजी के पास मिलता है। बंबई में तो मेरे आकर्षण का केन्द्र मेरी तीन सहेलियां—श्रीमती शारदादेवी बिड़ला, सरस्वतीदेवी गाड़ोदिया और शांतीबाई पित्ती हैं। उनमें शारदाबाई तो चली गईं। यों विचारों में हम सब भिन्न हैं, पर बंबई में जहां कोई सभा-सम्मेलन हो, कथा-कीर्तन हो या तालाबों में नहाने जाना हो तो हम इकट्ठी हो जाती हैं। पर इस मंडली में घूमते-घामते भी, खादी, प्राकृतिक चिकित्सा, गो-सेवा और सबसे ज्यादा कूपदान में अपनी शक्तिभर कोशिश करती रहती हूं। साथ ही, बापूजी और जमनालालजी की आत्मा से सदा यह आशीर्वाद मांगती रहती हूं कि जितनी सेवा हो सके, करते रहने की प्रेरणा वह देती रहे।

बहुत दिनों पहले मैंने प्रार्थना-स्वरूप कुछ तुकबन्दियां रची थीं। कविता करना मैं क्या जानूं! पर मन में जो भाव आये, वे उल्टे-सीधे जोड़ लिये थे। इन पंक्तियों के साथ यह कथा समाप्त करती हूं।

हे परम सृष्टि-करतार,
मानूं मैं तेरा उपकार!

दिया पति मुझको अपन समान
दिये सब साधन औ' सब साज
धाम, धन, बुद्धि, कुटुंब, समाज
कमी क्यों दया-धरम की की?
बनाओ मेरा हृदय उदार,
हे परम सृष्टि-करतार।

रूप बिन खूब बचाई जी,
रूप बिन खूब संभाली जी,
मिलता जो यदि रूप तो मैं
आकाशां उड़ती जी,
किया तुमने मेरा उपकार,
हे परम सृष्टि-करतार॥

संगति गांधी अलबेले की
लाज बचाई इस मेले की,
अंत में की कैसी खिलवार
बताओ दुनिया के रचनार।
हे परम सृष्टि-करतार॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लगाई तुमने दारुण चोट
दूर करने को मेरी खोट,
जगाने को अथवा, हे देव,
छुड़ाने को ममता की टेव ?

तुम्हारी माया अपरंपार,
हे परम सृष्टि-करतार।
मानूं मैं तेरा उपकार ॥

•

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

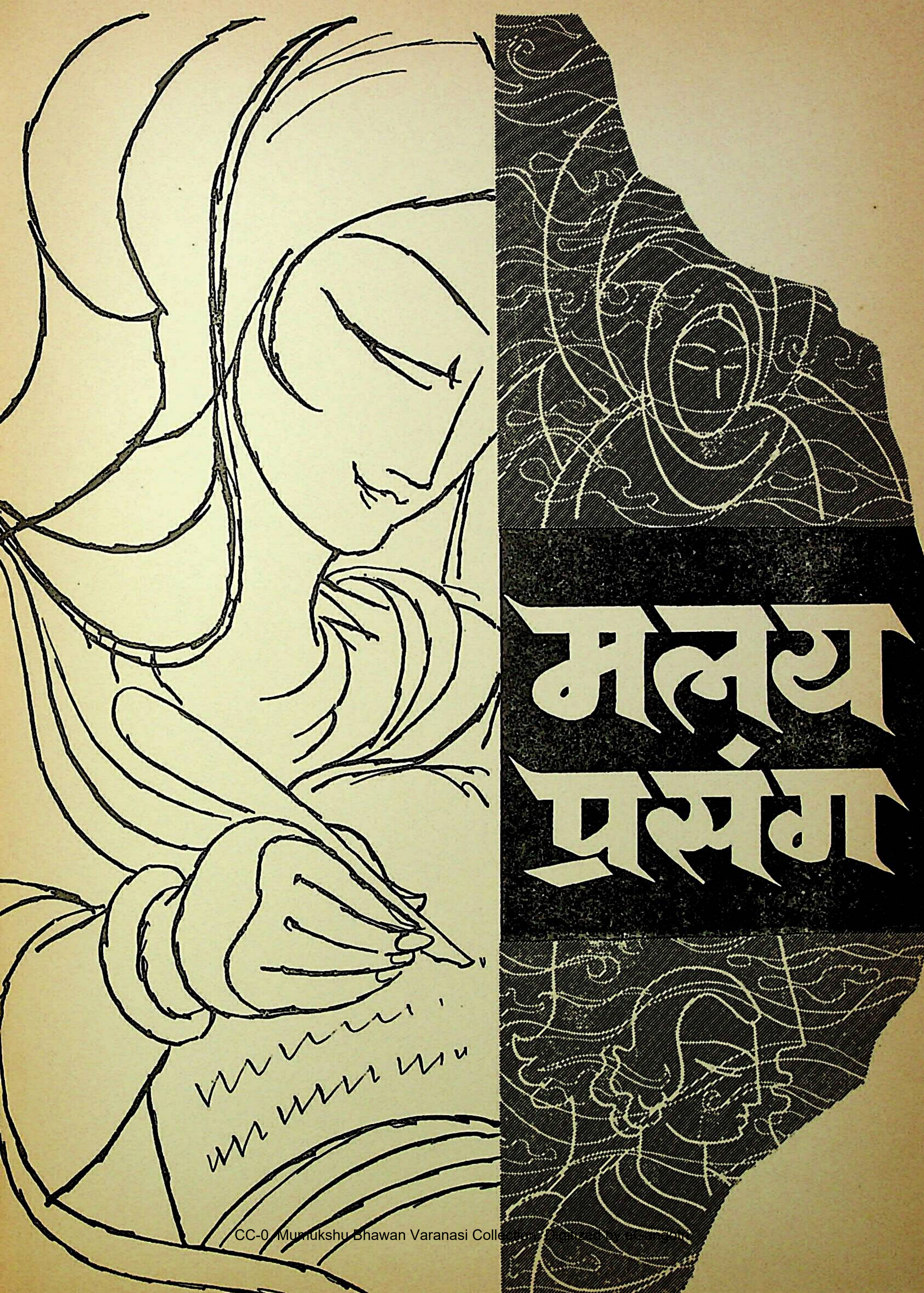

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

त्याग की प्रतिज्ञा

मो० क० गांधी

११ फरवरी को जब मैं जमनालालजी के द्वार पर पहुंचा, तो उनका देहांत हो चुका था। मेरे पास वर्धा से संदेशा तो सिर्फ यही आया था कि खून का दौरा कम करने की दवा भेजें। मैं दवा भेजकर अपने दिल की तसल्ली कर सकता था, लेकिन उस दिन मैंने महसूस किया कि नहीं, मुझे खुद ही जाना चाहिए। जब वहां पहुंचा, तो मामला कुछ और ही पाया। मैं उस अवसर पर निर्दयी बन गया।

"जानकी, अब तुम्हें रोना नहीं है। तुम्हें तो हँसना है और बच्चों को हँसाना है। जमनालाल तो जिन्दा ही है। जिसका यश अमर है, तो फिर उसकी मृत्यु कैसी ? उसकी मृत्यु तो तभी हो सकती है जब तुम उसके मार्ग का अनुसरण करने से मुंह मोड़ो। जमनालाल ने परमार्थ की जिंदगी बिताई। तुम्हारी जैसी साध्वी स्त्री उसे मिली, तो फिर रोना कैसा ? जो काम उसने अपने कंधों पर लिया, उसे अब तुम संभालो। उसी ध्येय के लिए तुम अपने-आपको संपूर्णतया अर्पण कर दो और जमनालाल जिंदा ही है, ऐसा मानो। तुम जानती हो कि मृत सत्यवान को सावित्री ने अपने तप से पुनर्जीवित कर लिया था। वह पुनर्जीवन शरीर का क्या हो सकता था ? शरीर तो नाशवान ही है। सावित्री ने अपने तप से सत्यवान के पद को सदा के लिए अमरत्व दे दिया। यही सावित्री-सत्यवान की कथा का सच्चा अर्थ है। तुम भी अपने तप से अपने पति के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यश को जाग्रत रक्खोगी तो फिर जमनालाल जिंदा ही है, ऐसा हम मान सकते हैं।

"मैं तुम्हें झूठा धीरज देने नहीं आया हूं। जमनालाल का शरीर मर गया, पर असल जमनालाल तो जिंदा ही है और आगे के लिए उसे जिंदा रखना हमारा काम है।..."

जानकीदेवी पति के साथ सती होने की वात कर रही थी। मैंने कहा, "सचमुच सती वनना है तो जीती-जागती सती वन जाओ। धन का जितना त्याग कर सको, कर दो।" यह तो उसके लिए मामूली वात थी। आखिर धन से वह कितना सुख और आराम उठा सकती थी! लेकिन उसके सिवा जो मैंने कहा, वह आसान नहीं था। मैंने कहा, "तुम अपने पति का स्थान ले लो।" इतना कठोर मैं वन गया। मैंने प्रतिज्ञा ही करा ली।...

जमनालालजी की आंख मुंदते ही मैंने उनके वोझ का वंटवारा कर लिया है।...उसमें उनके आखिरी काम (गो-सेवा) को पहला स्थान मिला है। यह काम स्वराज्य-प्राप्ति के काम से भी कठिन है। स्वराज्य मिलने से वह अपने-आप ही नहीं हो जायगा। यह सिर्फ पैसे से होने वाला काम नहीं। मैं इस वात का साक्षी हूं कि आजीवन अलौकिक निष्ठा से काम करनेवाले उस व्यक्ति ने किस अपूर्व निष्ठा से इस काम को शुरू किया था। उन्हें इस तरह काम करते देख एक दिन सहज ही मेरे मुंह से निकल गया था कि जिस वेग से वह इस काम को कर रहे हैं, उसको उनका शरीर सह सकेगा या नहीं? कहीं वीच में ही तो वह धोखा नहीं दे जायगा! आज मेरा वह कथन भविष्यवाणी सिद्ध हुआ है, मानो उस समय भगवान ही मेरे मुंह से वोल रहे थे। सारांश यह कि ऐसे काम पैसे से नहीं, एक निष्ठा से होते हैं।

जानकीदेवी ने तो ढाई लाख की रकम दान की है, उसमें ढाई हजार रुपये खादी के काम में खर्च करने का वह पहले ही संकल्प कर चुकी थी। इसके सिवा वर्धा में एक प्रसूति-गृह बनाने की उनकी इच्छा थी। कुछ रुपया उसमें लगेगा। वाकी करीव सवा दो लाख गोमाता के काम के लिए रह जाता है। वीस-पच्चीस हजार रुपया अखिल गो-सेवा संघ का था, वह भी आज हमारे पास है। जानकीदेवी के दान की रकम मिलकर यह रकम हमारी आज की आवश्यकता के लिए काफी है।

इस तरह जानकीदेवी ने त्याग की प्रतिज्ञा ले ली है।

उनकी एक विशेषता : बाल-वृत्ति

विनोवा

जानकीदेवी को जो भी विद्या मिली है, अनुभव से मिली है। इसमें पढ़ाई-लिखाई का ज्यादा अंश नहीं है। इसलिए उनकी यह कहानी[1] बहुत ही सरल भाषा में कही गई है। यह

१. मेरी जीवन-यात्रा (आत्मकथा), प्रकाशक : सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लिखी नहीं गई है। जवानी कही गई है। इसलिए यह 'कहानी' है, और मैं मानता हूं, यह पारिवारिक वर्तुलों में रोचक भी होगी।

जानकीदेवी की एक विशेषता है कि अभी तक उनका बचपन कायम है। बात करने में उनको बहुत संकोच या हिचकिचाहट नहीं रहती। इस कहानी में भी उसका अनुभव आयगा। इस कारण उनका भाषण काफी असर डालता है। जमनालालजी को इतना वक्तृत्व नहीं सधता था। जानकीदेवी ने उसका एक बहुत ही सरल कारण बताया। वह बोलीं, "जैसा बोलो वैसा करो, यह एक नाहक का भूत जमनालालजी के पीछे लगा हुआ था। बोलने में कहीं अतिशयोक्ति न हो, इसकी उनको फिकर रहती थी। इसलिए वक्तृत्व उनकी वाणी से झरता ही नहीं था। हमको ऐसी कोई कैद नहीं, तो क्यों वक्तृत्व नहीं सधेगा ?" जमनालालजी की वृत्ति का जो विश्लेषण इसमें किया गया है, वह मार्मिक और यथार्थ है। इसकी ताईद सभी परिचित लोग करेंगे। लेकिन जानकीदेवी के भाषणों में जो निःसंकोच वृत्ति दीखती है, उसका कारण वास्तव में उनकी बालवृत्ति है। बोलने के अनुसार कृति करनी पड़ती है, इसका भान उनको भी है। किये हुए संकल्प के पीछे वह कितना एकाग्र हो सकती हैं, इसका खयाल १०८ कूपदान-पत्रों का जो जिक्र उन्होंने किया है, उसपर से आ सकता है।

भूदान यज्ञ में उन्होंने जो विशेष पराक्रम किया है, उसका जिक्र इस कहानी में नहीं है। पाठकों से यह बात छिपी नहीं रहनी चाहिए। बिहार की भूदान-यात्रा खत्म करके हम बंगाल में प्रवेश कर रहे थे, उस दिन जानकीदेवी हमारे साथ थीं। भीड़ बहुत थी, जिनमें लड़कों की भी बड़ी तादाद थी। भीड़ में से मार्ग निकालने के लिए मैंने लड़कों के हाथ पकड़कर दौड़ना शुरू किया। बुजुर्ग लोग पीछे रह गए। लड़कों के साथ हम दौड़ते हुए आगे चले गए। मुझे खयाल न रहा कि ६२ साल की एक बालिका भी लड़कों के साथ दौड़ती आ रही है। दौड़ते-दौड़ते वह गिर पड़ीं। उनके घुटने में चोट आई। दर्द शुरू हुआ, जो कम-बेसी आजतक जारी है। अब वह दौड़ तो क्या सकेंगी, पर ज्यादा चल भी नहीं सकतीं। पर उनका मन दौड़ता ही रहता है।

परमेश्वर से मेरी प्रार्थना है कि जानकीदेवी की यह बालवृत्ति अंत तक कायम रहे और हम सबको उसका स्पर्श हो।

सच्ची शिक्षा और सेवा की प्रतिनिधि

काकासाहेब कालेलकर

"स्कूल या कॉलेज में जाकर जो पढ़ते हैं वही सुशिक्षित, बाकी के अनपढ़", ऐसा मानने का एक रिवाज हो गया है। उस हिसाब से माता जानकीदेवी अनपढ़ थीं सही, लेकिन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बिलकुल छोटी उम्र में शादी होने के कारण श्री जमनालालजी जैसे पुरुषार्थी, व्यवहार-चतुर और आदर्शपरायण पति का सत्संग मिला। पति ने प्रत्यक्ष सहवास के द्वारा, नित्य चर्चा के द्वारा, और दूर रहने पर पत्रव्यवहार के द्वारा, जानकीदेवी की सर्वांगीण शिक्षा अपने हाथ में ले ली।

जमनालालजी सामान्य पुरुष नहीं थे। उन्होंने देश के सर्वोच्च नेताओं के साथ घनिष्ठ परिचय प्राप्त किया। उनकी संस्थाओं में जाकर रहे। उनको नई-नई संस्थाएं खोलने में मदद दी और ऐसे जीवन में हमेशा जानकीदेवी को अपने साथ में रखा। अपने हरेक काम का महत्त्व वह अपनी सहधर्मचारिणी को समझाते रहे।

उन्होंने गांधीजी से श्री विनोबाजी की सेवाएं मांग लीं और तबसे विनोबाजी का संबंध सारे बजाज-परिवार के साथ बढ़ता ही गया। स्वयं गांधीजी ने, और विनोबाजी ने भी, जानकीदेवी के विकास में पूरी दिलचस्पी ली।

इस तरह जो शिक्षा जानकीदेवी को मिली, उसका महत्त्व स्कूल और कॉलेज की शिक्षा से अनंत गुना अधिक था।

आजकल की स्कूल-कॉलेज की शिक्षा में अनुपयोगी बोझ कम नहीं रहता। शिक्षा-संस्था में रहकर अपनी पढ़ाई चलाने के दिनों में विद्यार्थियों को विशाल समाज के परिचय से अलिप्त रहना पड़ता है। अपने-अपने विषयों में डूबे हुए अध्यापकों से सामान्य ज्ञान, जो जीवन के लिए अत्यंत महत्त्व का होता है, मिलना आसान नहीं होता।

जानकीदेवी इस तरह के बोझ से मुक्त रहीं और जमनालालजी-जैसे देश के नेता के साथ अखंड रहने का और तरह-तरह की राष्ट्रसेवा करनेवाली अनेक संस्थाओं का निरीक्षण करने का मौका उन्हें मिला। इससे बढ़कर दूसरी कौन-सी शिक्षा हम पसंद कर सकते हैं?

मैं तो कहूंगा कि जमनालालजी का और जानकीदेवी का पत्र-व्यवहार जो प्रकाशित हुआ है, उसको पढ़ना असंख्य राष्ट्रसेवकों के लिए विविध और उपयोगी शिक्षा ही है। इसके अलावा जानकीदेवी ने अपनी जो कहानी लिखी है, उसमें तो चिंतन करने की उनकी योग्यता और गांधीजी की प्रेरणा से मिली हुई सत्यनिष्ठा, यह एक अद्भुत वस्तु है। जब-जब मैं जानकीदेवी से मिला हूं तब-तब मैंने समाज-कल्याण का चिंतन करनेवाली एक अनुभवी राष्ट्रसेविका को ही उनमें देखा है। जब-जब हम मिले हैं, हर प्रसंग में मैं तो उनकी नम्रता बढ़ती हुई देख सका और उसी कारण मेरा उनके प्रति आदर बढ़ता ही गया। हम क्यों मानें कि कमलनयन, रामकृष्ण जैसे लड़के और कमला, मदालसा और उमा जैसी लड़कियों को जो संस्कार मिला है, उसमें केवल जमनालालजी, विनोबाजी और महात्माजी का ही हाथ है। मैं तो बजाज-परिवार के सारे वायुमंडल में जानकीदेवी के चारित्र्य की सुगंध भी देखता हूं। जिस तरह जमनालालजी का जीवन-चरित पढ़े बिना, गांधीजी को हम पूर्णरूप से समझ नहीं सकते, उसी तरह जानकीदेवी के परिचय के बिना जमनालालजी और बजाज-कुटुंब की संस्कारिता और सेवा का पूर्ण अनुमान हमें नहीं हो सकता। जानकीदेवी जैसी अनेकानेक संस्कारी, नम्र सेविकाओं के चित्र के बिना गांधी-युग का चित्र भी अपूर्ण ही रहेगा। सचमुच जानकीदेवी का व्यक्तित्व अविस्मरणीय है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सेवा और त्याग का जीवित आदर्श

हरिभाऊ उपाध्याय

मैयाजी पढ़ी-लिखी विशेष न थीं, तो भी उन्हें बहुत-से अच्छे संस्कार छुटपन से ही मिले थे। बहुत-से अच्छे-अच्छे श्लोक तथा धार्मिक कथाएं (श्लोकबद्ध) छोटी उम्र में ही उन्हें याद करा दिये गए थे, जोकि उनको अभी तक याद हैं। अपने बच्चों को वह उन्हें बराबर भक्तिभाव से सुनाया करती थीं। "धरती माता तू बड़ी, तुझसे बड़ो न कोय", यह सुबह खुद भी भक्ति-भाव से कहतीं और बच्चों से भी कहलवातीं। इस अभ्यास के ही कारण जमनालालजी की अन्त्येष्टि-क्रिया के समय तथा विनोबाजी के साथ कई श्लोक स्पष्टता के साथ बोल रही थीं।

मैयाजी को शुरू से ही श्रद्धा का अच्छा संस्कार मिला था। जब कई तरह की दिक्कतें व परीक्षाएं आतीं तब बड़ी हिम्मतवाला मनुष्य भी डिग सकता था, पर मैयाजी की श्रद्धा ने हमेशा उन्हें अपने रास्ते पर कायम रखा। पतिसेवा—पति का अनुगमन करना—यह श्रद्धा बड़े जोरों से उनके हृदय में समाई हुई थी। उसीसे उन्होंने जमनालालजी के पीछे-पीछे चलने में कोई कठिनाई महसूस नहीं की, नहीं तो एक जबर्दस्त समाज-सुधारक, देश-सेवक और सो भी जमनालालजी जैसे अग्रगामी पुरुष की पत्नी बनना आसान बात नहीं थी। जमनालालजी का तो आग्रह रहता था कि जो वह बोलते, वह पहले खुद के और घरवालों के आचरण में आना चाहिए। पहले उन्होंने परदा छोड़ने की बात कही, मैयाजी ने मान ली और जेवरों को भी तिलांजलि देकर मारवाड़ी महिलाओं के समक्ष आदर्श उपस्थित किया।

उस समय यह बड़ी मुश्किल बात थी, खासकर एक मारवाड़ी स्त्री के लिए, जो कि खुद अपढ़ हो और उन्हीं जैसी कट्टर स्त्रियों से घिरी रहती हो। जब उन्होंने घूंघट हटा लिया, तो दूकान के लोग, जो सामने से निकलते, बेचारे खुद ही मुंह फेर लेते। मैयाजी ने किसी भी चीज को जो एक बार पकड़ा, तो फिर उसे आखिर तक निभाया। पीछे फिरकर देखा ही नहीं। न अफसोस किया, न कभी पश्चात्ताप।

फिर आई खादी की बारी। घर में सब कहीं, बिस्तर में, गहनों के डब्बों में, घाव पर पट्टी बांधने में खादी के अलावा कुछ भी नहीं होता था। विलायती कपड़ों की तो होली ही हो गई। वर्धा में उस समय जितनी बड़ी होली विदेशी कपड़ों की हुई, उतनी शायद ही दूसरी जगह हुई हो। खादी के अलावा एक चिंदी भी घर में न हो, ऐसा आग्रह रखती थीं। जमनालालजी तो निश्चय कर लेते थे, पर चीजें जुटाना और निभाने का भार पड़ता था मैयाजी पर। किंतु इसमें कभी ढिलाई नहीं की, यहांतक कि एक समय जब जमनालालजी मिल खरीदने की सोचने लगे थे, तब मैयाजी बापूजी के पास पहुंचीं और उन्हें ऐसा करने से रुकवाया।

फिर साबरमती में उन्होंने बापूजी के सामने गाय के घी का नियम लिया। नियम कई लोगों ने लिया, पर करीब-करीब सभीका छूट गया। किंतु आजतक मैयाजी का व्रत अखंड चल रहा है। कभी-कभी कई दिनों तक बिना घी के रहना पड़ा, फिर भी व्रत नहीं छूटा और इस बारे में उन्हें कभी दुःख भी नहीं होता, न ऐसा ही लगता है कि कोई बड़ा त्याग किया है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जमनालालजी ने तो जब १९४२ में गो-सेवा संघ खोला तब नियम लिया, पर मैयाजी का तो पहले से ही चालू था।

फिर आया हरिजन-गृह-प्रवेश का कार्यक्रम। वैष्णवों के परिवार में पैदा हुई मैयाजी को यह बात बड़ी कठिन मालूम हुई और आजतक इस बात को वह अपना नहीं सकी हैं। वैसे सिद्धान्त तो उनको मान्य हो गया है, पर अरुचि अब भी कायम है। जो एकदम सफाई से रहता है, उससे उन्हें ज़रा भी घृणा नहीं आती। एकदम सफाई नहीं हो तो सहन नहीं होता। अपनी सहेलियों को छोड़कर दूसरे मांस-मच्छी खानेवालों से दूर रहना ही उन्हें पसंद पड़ता है। किंतु जमनालालजी के आग्रह के सामने उन्होंने कभी 'ना' नहीं कहा। जमनालालजी ने तो हरिजनों का गृह-प्रवेश ही नहीं, रसोई-प्रवेश भी कराया और मैयाजी ने उसे धीरज के साथ सहा।

जमनालालजी ने अग्रवाल-महासभा का काम शुरू किया, तो मारवाड़ी महिलाओं में काम करने का जिम्मा मैयाजी के सिर आ गया। १९३३ में कलकत्ता में अखिल भारतीय अग्रवाल महिला-परिषद् की सभानेत्री बनकर गईं और पर्दा आदि हटवाने का खूब आंदोलन किया। बंगाल-बिहार में जोरों का दौरा किया। एक-एक दिन में दो-दो और तीन-तीन गांवों का दौरा होता था।

नागपुर-जेल में बड़े संकट से रहीं। 'ए' वर्ग मिला था, पर सबके साथ में 'बी' में रहीं। किसीके हाथ का खाती नहीं थीं, इस कारण कच्चे दूध का ही दही खाती थीं, दवा नहीं लेतीं थीं। बच्चों को प्रथमा की परीक्षा में बैठाना था। वे मानते नहीं थे, तो खुद परीक्षा में बैठना तय किया और बच्चों को बैठाया। रात-दिन पढ़तीं, पर पास तो कहां से हो सकती थीं? फिर मध्यमा की इजाजत मिलने पर उसमें भी बैठीं।

गुस्सा था अधिक ही। जमनालालजी पर आता था और वह निकलता था बच्चों पर। नहाते समय या और समय वे रोते तो मार खाते। फिर हाथ में चाकू है या गिलास, उसका खयाल नहीं रहता था। लेकिन खून निकलते ही मरहम-पट्टी भी खुद ही करतीं।

उनकी कर्तव्य-निष्ठा का एक नमूना लीजिये। रामकृष्ण दिसंबर १९४१ में जेल से छूटा था। वाइस चांसलर की खास इजाजत से जनवरी ४२ में कॉलेज में भर्ती किया गया था। बाद में पूरी हाजिरी देना जरूरी था, यह मैयाजी को मालूम था। उसी बीच ११ फरवरी को जमनालालजी का देहांत हुआ था। १२ फरवरी को, याने दूसरे ही दिन, मैयाजी अपने-आप रामकृष्ण से कहती हैं, "राम, तू कालेज चला जाना। एक दिन भी क्यों खोता है?" सभीको बड़ा अजीब-सा लगा।

वैश्य-कुल, फिर धनी कुटुंब, में दान तो बहुत दिया जाता है, परंतु त्याग कठिनाई से होता है। त्याग में भी जानकीदेवी जमनालालजी से कम नहीं साबित हुईं। पुराने रूढ़ि-मार्गी कुटुंब में जन्म लेकर उन्होंने जमनालालजी जैसे महान सुधारक के चरण-चिह्नों पर चलकर एक नहीं, अनेक बार अद्‌भुत साहसिक त्यागशीलता का परिचय दिया है। विदेशी वस्त्रों तथा गहनों का त्याग करके उनके मुकाबले में मामूली ठहरता है। फिर वह त्याग का ढिंढोरा नहीं पीटतीं। जमनालालजी तो फिर भी देश-सेवा के ही खातिर सही, उसका थोड़ा-बहुत व्यापार कर लेते थे। जमनालालजी की मृत्यु के बाद का उनका सर्वस्व-त्याग तो ऐतिहासिक गिना जायगा। बापू

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के संकेत-मात्र से अपने पास की सारी धन-दौलत उसी क्षण 'गो-सेवा-संघ' को दे दी। अपना जीवन भी होमने—सती होने—की तैयारी थी। बापू ने शरीर को रखकर जीवन होमने का मार्ग सुझाया। वह उसपर उसी क्षण से चल पड़ीं। बापू ने कहा, "अब संन्यासिनी—भिखारी—बनकर रहना है।" उन्होंने फौरन कहा, "बापूजी, जैसी आपकी आज्ञा। धन को तो मैंने मिट्टी माना है। मुझे चाहिए भी क्या? खाने-भर को तो मेरे बच्चे भी मुझे दे देंगे। आप हैं, भगवान हैं, यह संसार है। मुझे कौन भूखों मरने देगा? इसलिए मेरी संपत्ति और मैं सब कृष्णार्पण। मेरे लिए वह जो-कुछ छोड़ गये हैं, सो सब मैं उनके काम के लिए अर्पण करती हूं।" इस प्रकार दो-ढाई लाख की रकम गो-सेवा के लिए अर्पण कर दी।

बापू ने कहा, "अब सब धन कृष्णार्पण करके तुम भिखारिन बन गई हो। अब लड़के तुम्हें खिलायेंगे तो तुम खाओगी, नहीं तो तुम्हें मेरे पास आना है। अब तुम्हें अपने लिए नहीं, बल्कि जमनालाल के इस गो-सेवा-कार्य के लिए ही जीना है, तुम्हें अब जमनालाल की गोपुरी में रहना है।"

तबसे कमल के घर रहना भी उन्हें पसंद नहीं। "बेटों पर अब मेरा क्या अधिकार है?" बेटे सब तरह उनका प्रबंध करने के लिए तैयार रहते हैं, परंतु उसे स्वीकार करना उन्हें अपना व्रत-भंग मालूम होता है। एक धनी कुटुंब की स्वामिनी के मन की इतनी उच्च अवस्था! जमनालालजी को धन के प्रति जो निर्मोह जन्मजात था वह जानकीमैया के लिए अपनी तत्पश्चर्या से, जमनालालजी के उदाहरण तथा बापू और विनोबा के आशीर्वाद से, सहज हो गया। वैश्य तथा धनी परिवार में पति और पत्नी दोनों के त्याग का—हार्दिक त्याग का—ऐसा उदाहरण शायद ही कहीं मिले। अब भी शरीर वृद्ध, अस्वस्थ, रहते हुए भी मैयाजी कम-से-कम खर्च में अपना काम चलाती हैं। इसके लिए वह बंगले की जमीन से अन्नादि उपजाने की कोशिश करती हैं। निकटस्थ व्यक्तियों से नित सलाह-मशविरा करती रहती हैं कि "कैसे मैं भी शरीर-श्रम से जीवन-निर्वाह चलाऊं। लड़के लोग सब प्रकार व्यवस्था करते हैं, पर मुझे रुचता नहीं। मुझे तो मजदूरी करके ही पेट भरना चाहिए। क्या करूं?" किंतु यह पूरी तरह सध नहीं पाता, इसी उधेड़-बुन में वह परेशान रहती हैं।

नौ साल की अवस्था में ही ब्याह हो गया था। बच्छराजजी की पिछली कई पीढ़ियों में जानकीदेवी ही ऐसी बहू आई, जिसने बजाज-परिवार को संतान-रत्न प्रदान किये। वह बहुत रूपवती नहीं थीं, अतः सगाई के समय उनके रूप-रंग की चर्चा भी चली, तो सदीबाई ने कहा कि इतनी रूपवती बहुएं आईं—वंश किसीसे नहीं चला। मुझे तो अब कुरूप ही बहू चाहिए। जानकीदेवी न केवल घर की लक्ष्मी, बल्कि देवी साबित हुईं। उनके पदार्पण के बाद बच्छराजजी के घर में केवल धन-धान्य, पुत्र-लक्ष्मी आदि ही नहीं, सेवा तथा त्याग का जीवित आदर्श भी झूमता हुआ आया। आज जमनालालजी नहीं हैं, परंतु उनके दिव्य आदर्श तथा उच्च चरित्र की जीवित ज्योति हम जानकीमैया में देख रहे हैं—हालांकि कुटुंब तथा बालबच्चों के मोह से वह पूर्ण मुक्त नहीं हो पाई हैं, प्रयत्न चलता रहता है, पर सफलता नहीं मिलती है। इस कारण जमनालालजी की शक्ति एवं प्रभाव का व्यापक रूप चाहे हमें उनमें न दिखाई दे, परंतु उसकी पवित्रता का केन्द्र जानकी मैयाजी में सुरक्षित है, इसमें कोई संदेह नहीं है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उनके स्वभाव की कुछ विशेषताएं

दादा धर्माधिकारी

मेरा एक स्वभाव-दोष है। किसी व्यक्ति की प्रशंसा में मैं कोई खास बात नहीं कह पाता। किस्सा कुछ स्तोत्र लिखनेवालों जैसा हो जाता है। आप किसी भी देवता या देवी का स्तोत्र उठाकर पढ़ लीजिये। सबकी शैली और आशय प्रायः एक ही होता है। संसार में दुर्गुण और सद्गुण दोनों परंपराएं निर्धारित हैं। किसीकी निन्दा करनी हो, तो दुर्गुणों के भंडार में से कुछ उठाकर उसके नाम पर चिपका दीजिये। किसीकी प्रशंसा करनी हो, तो सद्गुणों की निधि में से कुछ उठाकर उनसे उसके व्यक्तित्व को विभूषित कर दीजिये। और हो भी क्या सकता है? इसलिए मेरी मति कुंठित हो जाती है।

दूसरी खामी और है। मेरी स्मरणशक्ति निरंकुश है। जब मैं किसी घटना या प्रसंग को याद करना चाहता हूं तो मेरी स्मरणशक्ति हड़ताल बोल देती है। किसी भाषण के सिलसिले में घटनाएं और प्रसंग अपने-आप याद आ जाते हैं। यह मेरे वश की बात नहीं है।

माताजी (जानकीदेवी) से मेरा संबंध लगभग सैंतीस-अड़तीस साल पुराना है। उन्हें नजदीक से देखने का सद्भाग्य भी मुझे मिला है। फिर भी मेरा यह अनुभव है कि किसीको यह दावा हर्गिज नहीं करना चाहिए कि वह किसी दूसरे व्यक्ति को पूरी तरह या अच्छी तरह जान सका है। हां, किसी औपचारिक प्रसंग में चार औपचारिक बातें भले ही कर लें।

जानकीदेवी में औपचारिकता का आत्यंतिक अभाव है। वह 'बनना' जानती ही नहीं। उनके पास अपने नैसर्गिक चेहरे के सिवा और कोई मुखौटा है ही नहीं। उनके चारित्र्य का उपादान है सच्चाई, ईमानदारी, बाहर-भीतर एक-समान! बाल-सदृश निष्कपटता और निश्छलता से उनका पिंड बना है। उन्हें बात बनाना या बात संवारना आता ही नहीं।

सन् १९३५ में मैं बजाजवाड़ी में रहने गया। मेरी बेटी की एक सहेली को हम सब बहुत प्यार करते थे। दिन में कई बार उसका उल्लेख और सराहना करते थे। एक दिन हमारे परिवार की एक बालिका हमारे घर मेहमान आई। हम लोगों की बातें सुनकर वह उस लड़की को देखने के लिए चंचल हो उठी। सहसा उसे निहार-निहारकर देख आई। कहने लगी, "बड़ी तारीफ सुनती थी। मालूम है, बड़ी खूबसूरत है। मुरब्बे के आंवले की तरह सारा मुंह चेचक से छिदा हुआ जो है।" माताजी ने यह सब सुन लिया। फौरन उस बालिका के सामने बैठकर कहने लगीं, "उसे क्या कहती है? मेरा मुंह देखले। चटनी बांटने की सिल जैसा है न? वह कम-से-कम गोरी तो है! यहां तो रंग भी पक्का है। सूरत क्या देखती है! भीतर तो मुरब्बे के आंवले की मधुरता है। कसैलापान नहीं है।"

भाषा मेरी है। आशय माताजी का है। अपने ऊपर भी मजाक करने में उन्हें आनंद आता है। यही तो विनोद-बुद्धि का मर्म है न?

कोई पैंतीस-छत्तीस वर्ष हुए होंगे। देहरादून के कन्या गुरुकुल के वार्षिकोत्सव की अध्यक्षता माताजी को करनी थी। परेशान थीं। विद्वानों की सभा में क्या बोलूंगी? मेरे पास

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दौड़ी आईं। कहने लगीं, "अच्छा, भाषण लिख दो।" मैंने बहुतेरा समझाया कि आप जो बोलती हैं, वही सुभाषित है। उनके जी एक न भाया। हारकर मैंने भाषण लिख दिया। वह छपवाया गया। बाद में कहने लगीं, 'मैं इसे कंठ करूंगी। तुम मेरे साथ देहरादून चलो। ट्रेन में इसे रटती चलूंगी।" मैं क्या करता ! उनका स्नेह मेरे लिए जीवन की अनमोल निधि जो थी।

ट्रेन में भाषण लगातार रटती रहीं। देहरादून पहुंचे तो मुझसे सभा में चलने का आग्रह करने लगीं। मैंने कहा, "एक शर्त पर चलता हूं। वहां मेरे नाम का जिक्र आप न करें।" बात उन्होंने मान ली। सभा में भाषण करने खड़ी हुईं तो शुरू में ही कहा, "यह छपा हुआ भाषण दादा धर्माधिकारी का लिखा हुआ है। मैं तो अपढ़ और अनाड़ी हूं। ऐसी विद्वत्ता मेरे पास कहां ? इसलिए मैं इस भाषण को नहीं पढ़ूंगी। अपने मन से ही बोलूंगी।" और फिर जो भाषण किया, वह जीवंत वाणी का अनूठा आविष्कार था। उसमें प्रांजलता थी, सजीवता थी, ताज़गी थी।

जानकीदेवी बार-बार कहती हैं कि मौत से मैं बहुत डरती हूं। यह वही जानकीदेवी हैं, जो जमनालालजी के साथ सती होना चाहती थीं। बापू के समझाने पर भी मुश्किल से रुकीं। अब पूछने पर कहती हैं, "उस वक्त एक आवेग था, एक उमंग थी। आवेश में और भावना के जोश में तो मनुष्य मृत्यु का आलिंगन शौक से कर लेता है, लेकिन मृत्यु का डर इस तरह नहीं जाता।"

सीधी-सादी बात में तत्त्वज्ञान का रहस्य भरा पड़ा है। जब मरने के लिए कोई प्रयोजन न हो, मरण में कोई 'शहादत' या 'शोहरत' न हो, किसी महान उद्देश्य की प्रेरणा न हो, तब मनुष्य मृत्यु के सामने क्या स्वस्थचित्त से उपस्थित हो सकता है ? बड़े-बड़े अध्यात्मवादियों के चित्त की समता और शक्ति भी बिना तत्वज्ञान के पुट के ठहर नहीं सकती। "महद्भयं वज्र मुद्यतम्।" माताजी एक आध्यात्मिक अवस्था का उल्लेख अपनेको निमित्त बनाकर करती हैं, लेकिन उसमें सचाई है, बनावटीपन नहीं है।

माताजी के स्वभाव में कुछ ऐसी विशेषताएं हैं, जो बिलकुल बेसिर पैर की हैं। उनसे आप पचास पैसे या बीस रुपये मांगिये तो बहुत आनाकानी करेंगी, लेकिन एक रुपया या सौ का नोट मांगिये तो तुरंत दे देंगी, क्योंकि संख्या में बीस और पचास की अपेक्षा 'एक' कम है।

उनकी बड़ी आकांक्षा थी कि उनकी कोई कन्या 'विनोबा' बने। अपनी तरफ से उन्होंने कुछ भी उठा नहीं रखा। इतनी पारदर्शी प्रामाणिकता बहुत कम माताओं में देखने को मिलेगी। जानकीदेवी का व्यक्तित्व स्फटिकवत् पारदर्शी द्रव्य से बनाया गया है। उसमें छल-प्रपंच या दुराव-छिपाव कहीं नहीं है। दोहरा जीवन नहीं; दोहरा व्यक्तित्व नहीं। अपने दोषों और त्रुटियों के लिए उन्हें दुःख और शर्म है, परंतु अपने जीवन के विरोध और विसंगतियों को छिपाने या रमणीय रूप देने की चतुरता नहीं है। क्या ऐसा व्यक्तित्व लुभावना नहीं है ? यह मधुर प्रांजलता उनकी मुद्रा पर भी प्रकट होती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मंगल स्मरण

बालकोबा भावे

श्रीमती जानकीदेवी बजाज को निमित्त मानकर ग्रंथ प्रकाशन की योजना बहुत अच्छी है। मुझसे उनके संबंध में संस्मरण की अपेक्षा आपने रखी है। साबरमती-आश्रम में स्व० जमनालालजी बजाज के साथ पूज्य गांधीजी को मिलने के लिए माताजी आती होंगी, लेकिन मेरा कभी साबरमती-आश्रम में माताजी से मिलना हुआ नहीं। १९३१ के साल में जब मैं विनोबाजी के वर्धा आश्रम में रहने आया, उस समय माताजी जमनालालजी के साथ विनोबाजी से मिलने आया करती थीं। मैं दूर से कभी उन्हें देखता था। लेकिन उनसे मिलना नहीं हुआ। सेवाग्राम-आश्रम से १। मील दूर मैं एकांत में झोंपड़ी में रहता था। तब मैं तपेदिक से बीमार था। मेरे पास सुबह-शाम गांधीजी आया करते थे। उनके साथ जमनालालजी और माताजी बातें करते-करते आते थे। तब उनका दर्शन हो जाता था। लेकिन उनके साथ बोलना कभी नहीं हुआ। उस समय इतना मैंने सुना था कि माताजी में पति-भक्ति यानी जमनालालजी के प्रति बहुत भक्ति-भाव था। जमनालालजी जब स्वर्गवासी हो गये तब उन्हें भी उनके साथ स्वर्गवासी होने की तीव्र इच्छा हो गई। उनके लिए जीना कठिन हो गया। मगर गांधीजी का सत्संग था, इसलिए यह जो उनपर वज्राघात हुआ था उसमें से धीरे-धीरे संभल गईं।

१९६१ साल में मेरा ब्रह्मविद्या मंदिर पवनार ६ महीने के लिए आना शुरू हुआ तब वह बीच-बीच में मुझसे मिलने आया करती थीं। कभी कमलनयनजी के साथ मुझसे मिलती थीं। उस समय उनके स्वभाव का कुछ परिचय हुआ। उनका विनोदी स्वभाव है, यह छाप जब भी मुझसे मिलती थीं, तब पड़ जाती थी। मैं सर्दी के दिनों में गरम बंडी पहन सकूं, इसलिए एक बार एक अच्छे-से-अच्छा गरम कपड़ा लाकर दिया और कहा कि उसकी बंडी बनवाकर तुम सर्दी के दिनों में पहना करो। मैंने उसकी बंडी बनाई और हर साल जाड़े के दिनों में उस बंडी को पहनता हूं, तब उनका स्मरण हो जाता है।

दो साल पहले की बात है। विनोबाजी से वह पवनार में मिलने आई थीं, तब मेरे पास आकर बैठीं और कहा कि दिल्ली में श्री घनश्यामदासजी बिड़ला गांधीजी जहां-जहां गए, उनके लिए गद्दी बनाते गए। साथ में तकिया भी। अब वे काफी इकट्ठे हो गए हैं। घनश्यामदासजी ने मुझसे कहा कि ये सब गद्दियां और तकिया तुम ले जाओ। मैं वर्धा तुम्हारे पास लारी में इन गद्दियों और तकियों को भेजता हूं। तुम उन्हें जहां ठीक लगे, वहां स्मारक के तौर पर रखो। इतनी सब गद्दियां सेवाग्राम में रखना संभव नहीं था। तब माताजी ने मुझसे कहा कि घनश्यामदासजी ने गद्दियां और तकिये भेजे हैं उनमें से एक गद्दी और एक तकिया आप रख लेंगे तो ठीक रहेगा। मैंने "हां" कहा और उसे उरुलीकांचन ले गया। साथ में एक बड़ा तकिया भी दिया। मैं उन दोनों का उपयोग रोजाना करता हूं, तब माताजी का और गांधीजी का स्मरण होता है।

इतनी बड़ी उम्र होते हुए भी उन्होंने अपनी सेहत अच्छी रखी है। विनोदी स्वभाव है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आनंद में रहती हैं। विनोबाजी के प्रति बहुत भक्ति-भाव है। इसलिए उनसे मिलने आया करती हैं। उस समय मुझसे भी मिलती हैं। कमलनयनजी के देहांत से उन्हें भीतर आघात तो हुआ, मगर विनोबाजी के पास आकर उस समय रहने से उस आघात से मुक्त हो गईं। उनके जीवन की यही पूंजी है। उस संत-भक्ति के आधार से उनका जीवन सफल समझता हूं।

सादगी और सचचाई की मूर्ति

रं० रा० दिवाकर

श्रीमती जानकीदेवी को देखकर हमारे मानस-पटल पर एक ऐसा व्यक्ति उभर आता है, जिसमें बालक के समान सादगी और सच्चाई है, लेकिन साथ ही दूसरों की भलाई करने का स्पष्ट दिशा-बोध तथा ऐसी सहिष्णुता भी, जो एक निष्ठावान समाज-सेवी में होनी चाहिए। स्व० श्री जमनालालजी के जीवन-काल में भी वह भारत के उन नेताओं की सर्वोत्तम मेजवान थीं, जो समय-समय पर बजाजवाड़ी आते रहते थे। उनके न केवल गौरवशाली पति थे, अपितु गौरवशाली पुत्र स्व० कमलनयनजी थे। उनके सक्रिय युवा-पुत्र रामकृष्णजी तथा सादी-सच्ची पुत्री मदालसाजी आज भी विद्यमान हैं।

मुझे प्रसन्नता है कि वृद्धावस्था तथा उनके मार्ग में आनेवाली कठिनाइयों के बावजूद श्रीमती जानकीदेवी अपना अधिकांश समय जरूरतमंदों की सेवा में व्यतीत करती हैं।

निस्स्वार्थ समाज-सेवी और साध्वी

मोहनलाल सुखाड़िया

श्रीमती जानकीदेवी बजाज के बारे में कुछ भी लिखना आसान नहीं है। मेरा जीवन में राष्ट्र और समाज-सेवा करनेवाली कई महिलाओं से संपर्क हुआ, लेकिन जिस निस्स्वार्थ भावना से श्रीमती जानकीदेवी बजाज रात-दिन समाज और राष्ट्र की सेवा में लगी हैं, उसको देखकर उनके समक्ष मस्तक अपने-आप झुक जाता है। वह करोड़पति के परिवार की महिला होते हुए भी जिस त्याग के साथ जीवन-यापन करती हैं उसको मैंने अपनी आंखों से देखा है। वह साध्वी हैं और भारतीय महिलाओं के लिए एक आदर्श हैं। महात्मा गांधी के संपर्क में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रहकर उन्होंने बहुत-कुछ सीखा। अपने जीवन में इने-गिने व्यक्तियों को ही ऐसा सौभाग्य प्राप्त हुआ है। अभी अपने ज्येष्ठ पुत्र श्री कमलनयन बजाजजी के देहावसान के समाचार पर भी उन्होंने जिस शांति और धैर्य का परिचय दिया, उससे यह स्पष्ट होता है कि वह सामान्य मानव से ऊपर उठ गई हैं। परमात्मा उनको दीर्घायु करें।

उनके असामान्य गुण

कृष्णचन्द्र

श्रीमती जानकीदेवी, जिनको हम 'माताजी' के नाम से पुकारते हैं, सेवाग्राम-आश्रम में भी पूज्य बापूजी के पास आती-जाती होंगी, लेकिन उनसे जिसे परिचय कहना चाहिए वह तो यहीं निसर्गोपचार आश्रम में ही हुआ। वह यहां कई बार आ चुकी हैं और कम-ज्यादा समय के लिए रहीं भी। इसमें उनका हमेशा यह प्रयत्न रहा कि घर के बाल-बच्चों तथा नवयुवा बहुओं को आश्रम का संस्कार मिले और पूज्य बालकोबाजी के सत्संग का लाभ हो। इसलिए इन लोगों को खींच-खींचकर लातीं। उनको प्राकृतिक चिकित्सा की तरफ भी प्रवृत्त करतीं, करवातीं। उनके लिए सुविधाजनक अच्छी जगह मिले, इसकी कोशिश करतीं, यद्यपि वह स्वयं तो कहीं भी रह लेतीं। हमें उनका भार कभी लगा ही नहीं कि कोई सेठानीजी आई हैं कि उनकी कोई विशेष आव-भगत करनी होगी। हम लोगों के साथ वह बिलकुल हिलमिलकर रहतीं, यहांतक कि यहां के कार्यकर्ताओं से भी वह कुछ अदब-से ही व्यवहार करतीं। यह भी उनकी नम्रता और सहज अपनत्व का द्योतक है।

दूसरी बात जो हमने उनमें देखी वह यह कि उनको चीजों की बरबादी से बहुत दर्द होता था। भाजी-तरकारी की सफाई करते समय डंठल-छिलके निकलते हैं तो उनका भी उपयोग किसी-न-किसी रूप में क्यों न कर लिया जाय! नींबू का रस निचोड़ लेने के बाद बचे हुए छिलके का अचार बना लेने का आग्रह वह करतीं। उनकी बात हमें जंचती जरूर, लेकिन परिस्थिति में व्यावहारिक न होने के कारण उनके पुनः-पुनः आग्रह से हमें ज़रा परेशानी भी होती और माताजी से हम कहते भी, लेकिन उनके दिल की कचोट उनसे कहलाये बिना न रहती।

उनके भाषण सुनने को हमें विशेष मौके तो नहीं आये, फिर भी एकआध बार जो यहां बोलीं, उसपर से लगा कि वह उसमें बिलकुल रंग जाती हैं। सुननेवाले का ध्यान उन्हें नहीं रहता। वह अपने प्रवाह में बोलती जाती हैं। यहां एक बार मरीजों के सामने उनका भाषण हुआ। किस प्रसंग पर था, याद नहीं, लेकिन मारवाड़ी वचन उसमें बार-बार आते थे, जो लोगों की समझ में नहीं आते थे। आखिर माताजी को बताना पड़ा और वह बिना बुरा माने आगे चलने से रुक गई। ऐसी हैं हमारी जानकीमैया। ईश्वर उन्हें स्वस्थ शतायुषी करें।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्पष्टवादी तथा जिज्ञासु

सत्यभक्त

श्रीमती जानकीदेवी से मेरा परिचय ३६ वर्षों से है। कई वार वह मेरे आश्रम में आई हैं और कई वार सत्संग तथा प्रवचन में सम्मिलित हुई हैं। उन अवसरों पर जहां उनकी जिज्ञासा-वृत्ति का परिचय मिला, वहां उनकी स्पष्टवादिता भी सामने आई। साधारणतः महिलाओं में इतना साहस कम ही होता है कि लोक-विख्यात लोगों के समक्ष निर्भयता से मन की वात कह सकें और उनकी ठीक आलोचना भी कर सकें, पर यह साहस मैंने जानकीदेवी में पाया।

वह एक श्रीमन्त घराने की वेटी और विख्यात श्रीमंत घराने की वहू एवं पत्नी थीं। उनके पति, पुत्र, जमाई भारत के प्रसिद्ध नेता थे। इस प्रकार हर तरफ से उन्हें असाधारण गौरव प्राप्त था, पर इतना गौरव और इतनी संपन्नता होने पर भी उनकी जैसी सादगी तथा मिलनसारिता अन्यत्र दुर्लभ है। इतने गौरव और वैभव के होने पर भी किसी प्रकार का अहंकार न आना वहुत कम व्यक्तियों में पाया जाता है।

विद्या, कला आदि में पारंगत होकर लोग दिव्यता को पा लेते हैं, परंतु उनमें मनुष्योचित गांभीर्य, श्रम, सेवा-भाव आदि नहीं आ पाते, जवकि इस मनुष्यता के विना दिव्यता का गौरव नाममात्र का रह जाता है। दिव्यता की अपेक्षा मनुष्यता का मूल्य वहुत अधिक है।

मानता हूं हो फरिश्ते शेखजी,
आदमी होना मगर दुश्वार है।

तप, त्याग और सेवा की त्रिवेणी

काशिनाथ त्रिवेदी

वापू ने हिन्दू समाज की विधवा को 'त्यागमूर्ति' कहकर विधवा-जीवन के धर्म को सटीक रूप से मुखरित किया था। सदियों से हिन्दू समाज में, विशेषकर ऊंची जातियोंवाले हिंदू-समाज में, विधवा स्त्री का जीवन वहुत ही दीन, दयनीय और दलित वना रहा। परिवार में उसकी स्थिति अत्यन्त गौण वना दी गई। उसे अशुभ और अमंगल का प्रतीक मान लिया गया और स्त्री-जीवन के सारे स्वस्थ और सहज अधिकारों से उसे वंचित कर दिया गया। परिवार में उसका स्थान दासी के स्थान से भी घटिया वनकर रह गया। उसपर सारे परिवार की सेवा और परिचर्या का असीम भार डाल दिया गया। वाल-विधवाओं की स्थिति तो अत्यन्त असहनीय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बना दी गई। उनको अपमानित, प्रताड़ित और कलंकित करने में अपनी ओर से समाज ने कोई कसर छोड़ी नहीं। उनके शरीर, मन और आत्मा की भरपूर उपेक्षा की गई। उन्हें जीतेजी घोर नरक की यातनाएं सहनी पड़ीं। उनके दुःख, क्लेश, कष्ट, पीड़ा, व्यथा और वेदना का कोई पार नहीं रहा। उसपर तुर्रा यह कि यह सब धर्म के नाम पर, स्त्री के शील और उसके चारित्र्य की रक्षा के नाम पर किया गया। समाज में कुलीन हिन्दू स्त्री का वैधव्य उसके लिए एक अटल और अकथ अभिशाप बन गया। उसके जीवन की करुण कथा ने किस सहृदय व्यक्ति के दिल और दिमाग को कसकर झंझोड़ा और झकझोरा नहीं होगा ?

एक जमाना था, जब हिंदू-समाज की कुलीन कही जानेवाली जातियों में पति की मृत्यु के बाद पत्नी का जीवनाधिकार ही छीन लिया गया था। उसे जीतेजी अपने मृत पति के साथ जल जाना पड़ता था। इसे स्त्री का 'सती' होना कहा जाता था और समाज में इसको ऊंची प्रतिष्ठा का निमित्त बना दिया गया था। जो स्त्री सती नहीं हो पाती थी, समाज उसे तिरस्कार और संदेह की दृष्टि से देखता था। उस जमाने में यह सती-प्रथा भी हिंदू-समाज के धर्म का एक अविभाज्य अंग बन चुकी थी। आगे चलकर इसने धर्मांधता का रूप धारण किया और शास्त्र से रूढ़ि को प्रबल और अटल माननेवाले लोगों ने अपने ही समाज की उन अनगिनत स्त्रियों पर अवर्णनीय अत्याचार किये, जो स्वेच्छा से अपने मृत पति के शव के साथ जिन्दा जलने को तैयार न हो सकीं।

कुलीन और सम्पन्न हिंदू-विधवा के जीवन की इस ऐतिहासिक पार्श्वभूमि में जब हम अपनी 'माताजी' के, अर्थात् पूजनीया श्री जानकीबहन बजाज के, जीवन को निहारते हैं, तो हमारी आंखों के सामने जो सुभग चित्र उभरता है, वह अपने-आपमें कितना सुहावना, पवित्र, पावन और मनभावन बन जाता है ! एक दिन था, जब पुराने हिंदू संस्कारों से प्रेरित होकर जानकीबहन के मन में भी अपने पुण्यश्लोक पति की चिता पर चढ़ने और जलकर सती बनने की प्रबल भावना जागी थी। पर हिंदू धर्म के मर्म को उसके शुद्ध और शाश्वत रूप में समझनेवाले बापू ने, बजाज-परिवार के पिता और विधाता बापू ने, जानकीबहन को नवजीवन का जो नया मंत्र दिया, उसके कारण वैधव्य एक विभूति में बदल गया। स्त्री के सतीत्व को एक नई दिशा, नई दृष्टि और नई प्रतिष्ठा प्राप्त हुई। बापू ने कहा, "जमनालाल ने अपने अंतिम दिनों में स्वेच्छा से गोपाल बनकर गो-सेवा का जो व्रत अंगीकार किया था, उसे अपने शेष जीवन का व्रत बनाकर उसकी सिद्धि में तन-मन-धन से लगी रहोगी, तो न केवल तुम अपना जीवन सफल करोगी, बल्कि अपने पति के संकल्प को सिद्ध करके उनकी आत्मा को भी अमित शान्ति पहुंचा सकोगी।"

इस बात को तीस बरस बीत चुके हैं। सती की साधना अविरत गति से आगे बढ़ती रही है। जानकीमैया भारत की गैया को एक क्षण के लिए भी भूल नहीं पाती हैं। भारत का गो-धन नष्ट होने से बचे, गो-वंश की समुचित वृद्धि हो, गाय का जीवन देश में निरापद बने, उसका सही पालन-पोषण, संवर्धन हो, सारा भारत गोकुल बने, भारतवासियों को गाय के ही दूध, दही, मक्खन, मठा और घी का भरपूर लाभ मिले, इन वर्षों में यही उनकी आंतरिक चिंता का और चिंतन का विषय रहा है। जब वह देश के गो-धन को कसाईखानों में जाते और

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कटते देखती-सुनती हैं, तो उनकी आत्मा रो उठती है, उनकी आकुलता और व्याकुलता बढ़ जाती है। वह समझ नहीं पातीं कि गो-वंश के संहार की इस करुण गाथा के कितने कठोर और कड़ुए कुफल इस देश और समाज को भुगतने पड़ेंगे ! कौन, कव, किस प्रकार, इस अनर्थ परंपरा का सफल प्रतिकार कर पायगा, इसके वारे में भी वह गंभीर भाव से सोचती रहती हैं। उन्हें जव, जहां अपना कोई मिल जाता है, तव वह उसे पूछे विना रह नहीं पातीं कि इस देश के गो-धन का क्या होगा ? कैसे उसका संहार रुकेगा और किस तरह उसका विकास हो सकेगा ? अपनी गति, मति और शक्ति के अनुसार वह इस देश के गो-धन के हित और उत्कर्ष के लिए वरावर सोचती, कहती और लिखती-लिखाती रहती हैं। उनके तन और मन की शक्ति को मर्यादित करनेवाला बुढ़ापा भी उन्हें अपने इस प्रिय काम से विरत नहीं कर पाता।

जव युवक जमनालाल वजाज ने गांधीजी को पत्र लिखकर उनसे विनती की कि वह उन्हें अपना पांचवां पुत्र मानकर उनसे पुत्रवत् काम लें और उन्हें देश और समाज की उत्तमोत्तम सेवा की दीक्षा दें, तव समूचे वजाज-परिवार के जीवन में एक नया और मूलगामी मोड़ आया और उसने परिवार के प्रत्येक सदस्य को विवश किया कि वह अपनी रहन-सहन, खान-पान, वोल-चाल, वेश-भूषा और आशा-आकांक्षा को इस तरह वदले कि सारा जीवन तप, त्याग, सेवा और समर्पण की एक जीती-जागती मिसाल बन जाय। वापू के पांचवें पुत्र के नाते जमनालालजी ने न केवल अपनेको लोक-सेवक के नये ढांचे में ढालना शुरू किया, वल्कि अपनी पत्नी, पुत्री, पुत्र और परिवार के अन्य सदस्यों, मित्रों और परिचितों को भी नए जीवन की दीक्षा जाग्रत भाव से देनी शुरू कर दी। एक सुखी, संपन्न और प्रतिष्ठित परिवार की बहू के नाते जानकीवहन का जो जीवन वजाज-परिवार में बना था, वापू के अद्‌भुत स्पर्श से उसमें क्रांति-कारी परिवर्तन होने शुरू हुए। परदा छूटा। गहने छूटे। विलास और वैभव के प्रतीकरूप कीमती और विदेशी वस्त्र छूटे। नौकर-चाकर के सहारे चलनेवाली गृहस्थी में गृहिणी का अपना श्रम, अपनी सेवा और अपनी साधना जुड़ी। परिवार की सीमाएं विस्तृत हुईं। गिनती के कुछ व्यक्तियों का छोटा परिवार बढ़कर, फैलकर, समूचे राष्ट्र का एक अविच्छिन्न अंग वन गया। जाति, वर्ण, धर्म, देश, विदेश की सारी मर्यादाएं लुप्त हो गईं। वजाज-परिवार ने महामानवों के एक विशाल परिवार में अपनी एक खास जगह वना ली। बापू के कारण बजाज-परिवार भारतीय राष्ट्र की स्वतंत्रता के लिए जूझनेवाले योद्धाओं का एक यजमान-परिवार वन गया। इस विलक्षण परिवार की गृह-स्वामिनी के नाते जानकीवहन को सन् १९२०-२२ से लेकर आजतक कितने कठोर तप में से, त्याग में से और कितनी विविध सेवाओं में से गुजरना पड़ा है और किस प्रकार एक महान् लक्ष्य एवं आदर्श को आत्मसात् करने की दृष्टि से समर्पित जीवन जीने के लिए सतत खपना, खटना पड़ा है, उसकी अपनी एक अद्‌भुत रामकथा ही बन गई है। स्वयं श्री जानकीवहन ने वड़े ही रोचक और सरल ढंग से अपनी यह कहानी अपने शब्दों में लिख डाली है। गांधी-युग के प्रतापी और पराक्रमी स्पर्श को मुखर करनेवाली उनकी वह जीवन-कहानी आज की नई पीढ़ी के लिए भी दिशा-बोध की अनमोल सामग्री प्रस्तुत करती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आज की माताजी को, जानकीमैया को, जो उन दिनों जानकीदेवी बजाज के नाम से जानी-पहचानी जाती थीं, मैंने और मेरी पत्नी ने सबसे पहले सन् १९२८ में उस समय देखा था, जब वह अजमेर के निकट हटूण्डी गांव में बने गांधी-आश्रम में पधारी थीं। स्वर्गीय श्री हरिभाऊजी उपाध्याय इस आश्रम के संस्थापक और संचालक थे और उस समय तक वह बजाज-परिवार के एक अत्यंत विश्वसनीय, आदरणीय और स्पृहणीय सखा एवं साथी बन चुके थे। मुझे अच्छी तरह याद है कि अपनी इस हटूण्डी-यात्रा के चलते, आश्रम की बहनों से माताजी की जो भेंट-मुलाकात हुई, उसमें मेरी पत्नी के शरीर पर कुछ गहने देखकर उन्होंने कहा था, "देखो बहन, मैं तो एक लखपति सेठ की सेठानी हूं, पर मेरे बदन पर गहनों का नाम नहीं है। तुम इन गहनों का बोझ क्यों लादे हुए हो? स्त्री की शोभा और शक्ति उसके गहनों में नहीं, अंतर के गुणों में छिपी है। तुम गुणवती बनो और गहने छोड़ो तो बात बने!" दो साल के अंदर ही मेरी पत्नी को बापू ने भी यही सलाह दी और हमारे परिवार के जीवन में से गहनों की आसक्ति सदा के लिए लुप्त हो गई। बापू का और माताजी का यह आशीर्वाद हमें जिस तरह फला, वैसा सबको फले, यही हमारी आंतरिक कामना और प्रार्थना रही है और रहेगी। माताजी की ८०वीं वर्षगांठ के पुण्य प्रसंग पर उनके चरणों में हमारी यह नम्र भेंट है।

उनके रचनात्मक कार्य

रिषभदास रांका

स्व० जमनालालजी ने राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के कार्यों में स्वेच्छा से पुत्र बनकर जो कार्य किया था उसका उल्लेख जमनालालजी के चले जाने पर महात्मा गांधी ने इन शब्दों में किया था :

"जमनालालजी मेरे पांचवें पुत्र बने। इस स्वेच्छा से गोदआये पुत्र ने कितना कुछ किया, इसका पता बहुत कम लोगों को होगा। मैं कह सकता हूं कि इससे पहले किसी मनुष्य को ऐसा पुत्र नसीब नहीं हुआ होगा।...

"जमनालालजी ने बिना किसी संकोच के अपने-आपको और अपने सर्वस्व को मुझे समर्पित कर दिया था। मेरा शायद ही कोई ऐसा काम होगा, जिसमें मुझे उनका हार्दिक सहयोग न मिला हो, और जो अत्यंत कीमती साबित न हुआ हो।"

स्व० बजाजजी ने स्वयं को गांधीजी को समर्पित करते समय संत तुकाराम की जिस उक्ति को ध्यान में रखा था, वह है—"त्याची वंदावी पाऊले" अर्थात् जो जैसा बोले, वैसा ही आचरण भी करे, उसके चरण वंदनीय हैं। इस कसौटी पर स्वयं को उतारने के उनके प्रयत्न में माता जानकीदेवी का क्या योगदान रहा, उसका मूल्यांकन करना आसान नहीं है, क्योंकि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जानकीदेवी के परिचय में आनेवालों को उनका जीवन-व्यवहार बजाज के आचार-विचारों से भिन्न दिखाई देता है। माताजी के जीवन के अंतरंग को समझे विना उनके परिचय में आनेवाले पर सहज में ही यही प्रतिक्रिया होती है कि उनका जीवन जमनालालजी के जीवन के अनुकूल नहीं था। परंतु जब कोई उनके जीवन की विशेषताओं को समझने की चेष्टा करे, तो उसे भिन्नता में भी अभिन्नता का दृढ़ आधार स्पष्ट दिखाई देगा।

मैंने माताजी को अत्यंत निकटता से देखा-परखा है। उनके साथ कार्य किया है और उनकी कार्य-प्रणाली को सूक्ष्मता से देखा है। उन्होंने अपना अंतःकरण जिस प्रकार मेरे समक्ष प्रकट किया है, शायद ही किसी अन्य के समक्ष प्रकट किया हो। उनके स्वभाव में कंजूसी है, किंतु हृदय में उदारता जमनालालजी की तरह ही है। पैसे-पैसे की कंजूसी करनेवाली माताजी की उदारता भी महान है। पैसे-पैसे के लिए कंजूसी करनेवाली जानकीदेवी और उदार जमनालालजी में स्पष्ट अंतर दिखाई देने पर भी कोई उन्हें उनकी अनुगामिनी कैसे स्वीकार करे? जमनालालजी की मृत्यु हो जाने पर अपने पति के साथ सती होने की इच्छा रखनेवाली जानकीदेवी से जब गांधीजी ने कहा, "सच्ची सती तो वह होती है जो अपने पति के कार्यों के लिए सर्वस्व समर्पण कर दे" तो जानकीदेवी ने तत्काल अपनी सारी-की-सारी पूंजी (अढ़ाई लाख रुपये) बजाजजी के गो-सेवा-कार्य के लिए दे दी। तत्काल, बिना किसी हिच-किचाहट के, अपनी सारी पूंजी वह दान में दे देंगी, इसकी तो किसी को अपेक्षा भी नहीं थी।

पति के प्रति जो श्रद्धा और समर्पण-भाव माताजी में है, उसे वह कभी शब्दों में नहीं कहतीं, बल्कि कार्य रूप में व्यक्त करती हैं; लेकिन इन पंक्तियों के लेखक से अभी कुछ दिनों पहले ही उन्होंने सहजभाव से जो शब्द कहे थे, वे अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। माताजी ने प्रसंगवश गौरवपूर्ण ढंग से कहा, "इस युग में अपने पति की आज्ञा का पालन कर सर्वस्व त्याग करने-वाली कस्तूरबा थीं और दूसरी है जानकी बजाज।"

निष्कपट हृदय से अपने अंतर की भावना व्यक्त करनेवाली माताजी के इन शब्दों में पाठकों को अहं अथवा आत्मश्लाघा प्रतीत हो सकती हैं, किंतु शब्दों की लाग-लपेट या शब्दजाल उन्हें नहीं आता। उनके इस कथन में अहं की अपेक्षा गौरव का भाव ही अधिक था।

जानकीदेवी को न धन का मोह रहा, न पुत्रों का। पति की आज्ञा उनका धर्म था।

माता को अपना पुत्र कितना प्रिय होता है, इसका ठीक अनुभव तो माताओं को ही हो सकता है और अपने सुपुत्र कमलनयनजी बजाज के लिए उनके हृदय में कितनी गहरी भावनाएं थीं, कितना अगाध प्रेम था, यह सब उनकी डायरियों से सहज ही जाना जा सकता है। जमनालालजी की इस इच्छा के लिए कि "आजादी के इस महायज्ञ में हमारे परिवार और प्रियजनों की बलि भी चढ़ानी पड़ी, तो मुझे संतोष होगा," ऐसे प्रिय पुत्र को आजादी की लड़ाई में खुशी और उत्साह से स्वयं भेजा।

नमक-सत्याग्रह के लिए गांधीजी का साथ देनेवाले सर्वस्व त्यागियों में जानकीदेवी ने कमलनयन का नाम लिखवाया। वर्धा जाकर १०४ डिग्री बुखार में बीमार कमलनयनजी को स्वयं लेकर आईं और सत्याग्रही-टोली में शामिल किया।

गांधीजी ने पहले तो नाबालिग होने के कारण कमलनयनजी को उस टोली में भर्ती

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करने से इंकार कर दिया था, किंतु जानकीदेवी के आग्रह और कमलनयनजी की इच्छा के आगे उन्हें झुकना पड़ा। जानकीदेवी की प्रबल हार्दिक अभिलाषा थी और आज भी है कि उनके परिवार का कोई एक बालक ब्रह्मचारी रहकर विनोबाजी की तरह सेवा करे। ये भावनाएं, ये कार्य, माताजी के हृदय की अनासक्ति एवं त्यागभाव को उद्‌घाटित करते हैं।

जिस मर्यादित वैष्णव परिवार में नल का पानी भी नहीं पिया जाता हो, छुआछूत और संस्कार-असंस्कारों का पूरा असर हो, उस परिवार में पली-पनपी जानकीदेवी ने अछूतो-द्धार के लिए लक्ष्मीनारायण मंदिर को खुला करने में जिस उत्साह से जमनालालजी का साथ दिया, यह उनकी अपने पति के प्रति निष्ठा का परिचायक है।

वह कहती हैं, "मेरे लिए बजाजजी का आदेश ही सबकुछ रहा। मैं मानती हूं कि पति के आदेश का पालन ही पत्नी का सबसे बड़ा धर्म है।" सती-धर्म का पालन करने के संस्कार उनमें बचपन से ही जमे हुए थे और यही कारण है कि जानकीदेवीजी ने जमनालालजी के हर कार्य में संपूर्ण रूप से अपना सहयोग दिया। क्या खादी-कार्य, क्या पर्दा-निवारण, क्या गो-सेवा और क्या आजादी की लड़ाई, जब काम किया तो पूरी लगन, निष्ठा और सारी शक्ति लगाकर, अपने-आपको पूरी तरह समर्पित करके ही किया। काम की धुन में अपने-आपको इस कदर भूल जाती हैं कि खाने-पीने तक की भी उन्हें सुध नहीं रहती।

नमक-सत्याग्रह के समय जमनालालजी के जेल जाने पर वह विलेपार्ले की छावनी में थीं। तब मैंने निकट रहकर अनुभव किया था कि वह किसी खतरे की परवा किये बिना धरने या सरकार-विरोधी प्रचार में ऐसी लगी रही थीं। उस कार्य के सिवा उन्हें अन्य कुछ सूझता ही नहीं था।

विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार और खादी-प्रचार के कार्य में बिहार और बंगाल में उन्होंने जो काम किया, वह अद्‌भुत था। कई बार अपनी धुन में वह ऐसी बातें भी सोच लेती हैं और कर डालती हैं, जो अव्यावहारिक होती हैं, किंतु धुनी व्यक्ति की धुन ही तो वैसा करा सकती है। वह विदेशी वस्त्रों के खिलाफ सत्याग्रह करने के लिए पं० मोतीलालजी नेहरू से सलाह लेने गईं। बोलीं, "विलायती कपड़े की बिक्री के विरोध में सत्याग्रह करना चाहती हूं।"

मोतीलालजी बोले, "बात तो ठीक है, पर आपके पास सत्याग्रह करनेवाले कितने लोग हैं?"

जानकीदेवी ने जवाब दिया, "यहां तो अधिक नहीं हैं, पर वर्धा से २०-२५ बहनें बुलवा सकती हूं।"

मोतीलालजी ने जवाब दिया, "इससे काम नहीं चलेगा। इन बहनों को सरकार गिरफ्तार कर लेगी तब? सत्याग्रह करना ही है तो वह कुछ दिन निरंतर चले, ऐसी व्यवस्था अवश्य होनी चाहिए और इसके लिए हजारों बहनों की जरूरत होगी।" मोतीलालजी के समझाने पर उन्हें सत्याग्रह की वास्तविकता का ख्याल आया।

माताजी केवल प्रचार का ही काम करती हों, ऐसा भी नहीं है। खादी के रचनात्मक कार्य में भी उन्होंने बराबर योगदान दिया है। कताई में अच्छी पूनियों की जरूरत होती है, इसलिए कपास की खेती करके, उस कपास की पूनियां बनवाकर, चर्खे का वर्ग चलाने आदि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कार्य भी उन्होंने स्वयं किये। आज भी वह सभा में बैठी हों या बात कर रही हों, उनकी तकली तो चलती ही रहती है।

अपने कते सूत का कपड़ा बनवाकर उसे हरे रंग से रंगवाकर अपने आत्मीयजनों को भेंट देना तो उनकी हॉबी ही बन गई है। माताजी को अपने इस कार्य के पीछे यह विश्वास है कि भारत की गरीबी यदि दूर करनी है, तो उसके लिए खादी ही सबसे अधिक उपयुक्त साधन है।

खादी-कार्य की ही तरह उनकी गो-सेवा के कार्य में भी बहुत निष्ठा है। वह बापूजी के इस विचार को हृदयंगम कर चुकी हैं, "गो-सेवा-कार्य स्वराज्य प्राप्ति से भी अधिक कठिन कार्य है और भारत को यदि जीवित रखना है, तो गायों को बचाना ही होगा!"

इस कार्य के लिए वह राजस्थान, महाराष्ट्र, बिहार, बंगाल आदि प्रदेशों में बहुत घूमी हैं। उन्होंने इस काम के विषय में बहुत गहराई से सोचा भी है, इसीलिए वह कहा करती हैं कि यदि गायों को बचाना हो, तो गोवध का कानून ही पर्याप्त नहीं होगा। निस्स्वार्थ गो-सेवा करनेवाले जीवनदानी सेवक ही गायों को बचा सकते हैं। भारत में आज भी गोसेवा की भावना है। उसके लिए अर्थ की कमी नहीं है, यदि कमी है तो सच्चे गो-सेवकों की। गो-रक्षा आंदोलन में लगे साधुओं से भी वह कहती हैं कि आप गोरक्षा-आंदोलन में लगे हैं सो तो अच्छा है, किंतु पहले आप स्वयं गो-सेवा का व्रत लीजिए। जानकीदेवी ने लगभग ५० वर्ष पूर्व केवल गाय के दूध-घी के सेवन का व्रत लिया था, जिसका वह आज भी पालन कर रही हैं।

उनकी इस उम्र में भी गो-सेवा के लिए काम करने की तीव्र इच्छा है। वह कहती हैं— "अब तो मुझे वर्धा रहना ही अधिक अच्छा लगता है। फिर भी यदि कहीं जाने को मन करता है तो मैं गो-सेवा के कार्य के लिए कलकत्ता जाना अधिक पसंद करूंगी। वहां भारत की अच्छे नस्ल की अधिक दूध देनेवाली गायें आकर दूध सूखने पर कसाई के हाथों बिककर कटती हैं। इससे गायों की उत्तम नस्लें खत्म हो रही हैं। पर मेरा साथ देनेवाला कोई तुम जैसा मंत्री मिल जाय तो वह काम मुझे बहुत प्रिय है। दूध सूखने पर उन गायों को खरीदकर ऐसे स्थान पर रखा जाय, जहां चारा सस्ता हो और उनकी उचित देखभाल की सुविधाजनक व्यवस्था हो सके और अच्छे सांड़ से गाभिन कराकर ब्याने का समय निकट आने पर उन्हें पुनः कलकत्ता भेजा जा सके। इस काम के लिए उन्होंने सरकार तथा मंत्रियों से भी बात की थी और शास्त्रीजी ने उन्हें आश्वासन भी दिया था कि सस्ती दर से ऐसी गायें लाने ले जाने के लिए सहूलियत दर से वह रेल के डब्बों की व्यवस्था करवा देंगे।

बजाज-परिवार की विनोबाजी के प्रति बड़ी भक्ति है। उसमें भी माताजी आगे ही हैं। भूदान-आंदोलन में वह उनके साथ आंध्र, राजस्थान, बिहार, बंगाल आदि क्षेत्रों में लगातार महीनों घूमी हैं।

भूदान में कुओं का महत्त्व समझकर उन्होंने कूपदान-आंदोलन शुरू किया और चलाया। हजारों नये कुओं का निर्माण करवा दिया। कूपदान में बहनों के जेवर लेकर उन्हें कांचन-मुक्ति की सीख दी। धनवान, जमींदारों से ही नहीं, बल्कि मंत्रियों तथा उच्चाधिकारियों तक से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उन्होंने मांग की। उनसे न तो प्रधानमंत्री जवाहरलालजी ही बच पाये, न तत्कालीन राष्ट्रपति राजेन्द्रप्रसादजी ही। कूपदान के लिए वह पंडितजी के पास चंदा मांगने पहुंचीं। वर्तमान प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिराजी भी अपने पिता के पास बैठी थीं। जानकीदेवी नेहरूजी के नाम का एक कुआं बनाना चाहती थीं और एक कुएं की लागत ५००रु० होती थी। जानकीदेवी ने कहा कि रुपयों का महत्त्व नहीं है, आपका इस कार्य में आशीर्वाद और सहयोग चाहिए। इंदिराजी ने कहा कि इस महीने तो बजट में से ५०० रुपये निकालने संभव नहीं हैं, लेकिन मैं अगले माह आपको रुपये भिजवा दूंगी। बाद में रुपये भिजवा दिये गए।

जब वह कूपदान के लिए घूमती थीं, तो न तो वाहन की परवा करती थीं और न धूप-सर्दी की। खाने-पीने के तो ऐसे हाल थे कि उन्हें देखकर घरवालों या आत्मीयों को भले ही चिंता हो, पर वह इस ओर से बिलकुल उदासीन थीं। बस, काम हो जाय, यही उनकी भावना रहती थी।

माताजी की इन समस्त विशेषताओं के साथ-साथ उनमें कुछ ऐसी भी बातें हैं जो उनके व्यक्तित्व को ठीक से समझने में बाधक बनती हैं और हैं भी अति तक पहुंची हुई।

सिर्फ खर्च की ही बात लें। थोड़ी-सी फिजूलखर्ची भी वह बर्दाश्त नहीं कर सकतीं, संतुलन तक खो देती हैं। पर इसके विपरीत वह स्वयं ही फल तथा सब्जियां इतनी अधिक खरीद लेती हैं कि सड़ने लगती हैं। सड़ी हुई वस्तुएं फेंकना भी उनके बस का नहीं, इसलिए कई बार तो सड़े हुए फलों में से अच्छे अंश निकालकर खाती हुई भी वह देखी जाती हैं।

उनकी इस आदत के लिए कमलनयनजी कहा करते थे, "मां, तू ये सड़े हुए फल क्यों खाती है? अच्छे ही क्यों नहीं खा लिया करती? आखिर तो आज के खरीदे हुए फल कल सड़ ही जायंगे!"

दान देने में रुपया-दो रुपया हाथ से देना भले ही उन्हें अखरे, किंतु आप हजारों के चैक पर उनसे हस्ताक्षर करा सकते हैं। अभी-अभी की बात है। उनको लगा, एक जगह काम के लिए दान दिया जाय, पर उनको पचास हजार से एक लाख देना बेहतर लग रहा है, क्योंकि पचास से एक का अंक छोटा है!

कंजूसी की ही तरह दूसरी अति है सफाई के मामले में, जिसका मैं स्वयं शिकार हुआ हूं। मेरी पत्नी ने उनसे सफाई की बात सीख ली। माताजी स्वयं भी तो उसे अपनी चेली मानती हैं। चौके की बात तो छोड़ दीजिए, पर संडास में भी वह दूसरे को जाने देना पसंद नहीं करतीं। इतनी अधिक साफ-सफाई पसंद होने के कारण ही माताजी को नौकर संतोष नहीं दे पाते। ऐसे नौकरों के कारण ही सेठजी के साथ भी कभी-कभी माताजी की गर्मा-गर्मी हो जाया करती थी।

मैं माताजी से कहा करता हूं, "माताजी, आप छोटी-छोटी बातों में अनुदार किंतु बड़े-बड़े कार्यों को करने में किसीसे पीछे नहीं रहतीं। लेकिन इन छोटी-छोटी बातों के कारण ही आपके विषय में बाहरी लोगों को गलतफहमी हो जाती है, इसलिए क्या आपको इन बातों को छोड़ देना ठीक नहीं लगता?"

वह जवाब देती हैं, "मैं जानती हूं कि इससे केवल मेरे लिए गलतफहमी ही नहीं होती,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पर इससे मेरे स्वयं के मन में भी अशांति रहती है, पर करूं क्या, स्वभाव पड़ गया है, कोशिश करती हूं, पर छूट नहीं पाती, इस स्वभाव से।"

माताजी अपनी अनेक विशेषताओं और स्वभाव के बावजूद समर्पित हैं। उनका समर्पण बापू, विनोबा एवं अपने पति जमनालालजी की त्रिमूर्ति के प्रति रहा और है। ऐसा समर्पण-भाव विरलों में ही मिलता है।

जीवित सती

बलवंतसिंह

श्रीमती जानकीदेवी बजाज के साथ मेरा बहुत ही निकट का संबंध है। जो गो-सेवा-कार्य मुझे प्रिय है, उसीके लिए वह जीवित रही हैं, नहीं तो वह पूज्य जमनालालजी के साथ ही सती होनेवाली थीं। जो गो-सेवा जमनालालजी को प्राणों से भी प्यारी थी, उनकी मृत्यु के बाद जीवन-पर्यन्त अपनेको मिटाकर इस काम को करते रहना सती होना ही है। इसलिए वास्तव में तो वह जीवित सती ही हैं।

जब कभी उनसे मिलना होता है तब मुझे देखते ही बड़े प्यार से कहती हैं, "अरे दुश्मन, तू आ गया ?" मैं भी हँसकर उनकी थैली टटोलने की कोशिश करता हूं कि कुछ खाने को मिल जाय। फिर उनकी वही गाय के कष्टों की रामकहानी आरंभ होती है, "अरे, देखो, कलकत्ता में इतनी गायें मर रही हैं, उनके लिए कुछ करो। वहां के लोग कुछ करना चाहते हैं, उनकी मदद करो। उस गोशाला को हाथ में लेकर उसे सुधारो। अच्छे सांड़ नहीं मिलते हैं, इसके लिए कुछ करो।" उस समय उनका करुणा से भरा चेहरा देखने योग्य होता है। वह समझती हैं कि इतना सब करने की शक्ति और सत्ता मेरे पास है और मेरे मंत्र फूंकने से ही सबकुछ हो जायगा। मुझे अपनी लाचारी पर शर्म आती है और उनकी बातों को टालना पड़ता है। कभी-कभी कहती हैं, "अरे, देश में इतने साधु हैं, जिनके पास कुछ भी काम नहीं है। अगर एक-एक गोशाला में एक-एक बैठ जायं तो कितना अच्छा काम कर सकते हैं ?" उनकी बहुत-सी कल्पनाएं शेखचिल्ली की-सी होती हैं। ऐसी भोली-भाली गोभक्त मां के लिए मैं कुछ भी न लिखूं तो मेरा धर्म-चूकने जैसा होगा।

मैं सोचने लगा कि मेरे लेख का शीर्षक क्या हो ? वह मुझे अपना दुश्मन मानती हैं और मैं उन्हें पागल मानता हूं। सोचा, 'पगली मां' ही अच्छा शीर्षक है। फिर जब मैं अतीत की तरफ मुड़कर सोचने लगा तो मुझे वह दिन याद आ गया जब ११ फरवरी, १९४२ की शाम को स्व० जमनालालजी की चिता धांय-धांय करके जल रही थी और वह उनके साथ सती होने के लिए उसमें कूदने का प्रयत्न कर रही थीं। तब बापूजी ने उनको समझाते हुए कहा था,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

"जमनालालजी के मृत शरीर के साथ जल जाने से धर्म का पालन थोड़ा ही होता है। धर्म का पालन तो जिसके लिए उन्होंने अपना जीवन समर्पण किया था, उसको पूरा करने से होगा। किसीके प्रेम या मोह के वश होकर प्राण देना आसान है, लेकिन उसके काम के लिए जीना भारी काम है और वही उसके लिए सच्ची भक्ति और प्रेम है। बस, आज से यह संकल्प करो जमनालालजी का काम तुम्हें पूरा करना है।"

बापूजी के इस गीता-ज्ञान का उनके चित्त पर इतना गहरा असर हुआ कि उसी अग्निदेव की साक्षी में उन्होंने अपना तन, मन और धन जमनालालजी को प्राणों से प्रिय गो-सेवा के काम के लिए समर्पण कर दिया और दृढ़ निश्चय कर लिया कि अब उन्हींके काम को पूरा करने के लिए जीना है।

"तन तो जलकर खाक हुआ, पर मन को मिला विश्राम रे।"···

इस भजन की टेक के अनुसार उनका तन तो उसी दिन जलकर खाक हो चुका था, लेकिन उनके मन को विश्राम जरूर मिला।

उनके पास न तो गोसेवा का शास्त्रीय ज्ञान था, न जमनालालजी के जैसा प्रभाव ही था, न बोलने और समझाने की कला ही थी। लेकिन शबरी की तरह राम के दर्शन, पति के अधूरे काम को पूरा करने की धुन थी, मीरा की तरह भगवान को खोजने (गोसेवा के मार्ग खोजने) का पागलनपन था, दर्द था।

"दर्द की मारी मीरा वन-वन डोले, मेरा दर्द न जाने कोय।
मीरा की सब पीर मिटै, जब वैद्य सांवरिया होय।"

सचमुच ही वह उसी सांवरिया की खोज में पागल हैं, जो गाय को आकर बचाये। उनके मुंह से यही निकलता है, "हे भगवान, गोमाता कैसे बचेगी ?"

यों तो बापूजी और विनोबाजी के जो भी रचनात्मक काम हैं और उनके सामने जो भी काम आ जाता है, सबमें ही वह हाथ बंटाती हैं। भूदान और कूपदान के लिए घर-घर भटकी हैं। अच्छे घरों की सेठानियां तो माताजी को देखकर घबरा जाती हैं कि कुछ मांगने ही आई होंगी। माताजी भी गोह की तरह ऐसी चिपकती हैं कि बिना कुछ लिये पिण्ड ही नहीं छोड़तीं। इस प्रकार मांग-मांगकर उन्होंने अनेक कुएं बनवाये हैं।

गोमाता के लिए उनके मन में जो तड़प है, इस कारण वह इतनी बात करती हैं कि उनकी बात सुननेवाले भी उकता जाते हैं। लेकिन उनकी उन भोली-भाली बातों के पीछे उनके दिल की गहराई में गोमाता का कितना दर्द भरा है, इसका अन्दाज लगाना कठिन होता है। अगर उनको कोई यह विश्वास दिला दे कि आपकी रीढ़ की हड्डी से गाय बच सकती है तो दधीचि ऋषि की तरह वह अपनी रीढ़ की हड्डी खुशी से दे देंगी।

पूरे ३० वर्ष से वह जिस निष्ठा से गोसेवा, भूदान और कूपदान के काम में लगी हैं और आज भी इस उम्र में उनकी वही धुन कायम है, उसे देखकर उत्साह और आनन्द का अनुभव होता है। उनकी सादगी, श्रमशीलता, कमखर्ची तो कृपणता को भी लज्जित करनेवाली है। मैं तो उनसे कहा करता हूं कि आपका न मालूम कौन-सा पुण्य आड़े आ गया, जिससे जमनालालजी के साथ शादी हो गई, नहीं तो आपका स्थान तो···होता। वह भी मुझे प्रेम से खूब गालियां

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुनाती हैं और मैं भी कहने में नहीं चूकता हूं। लेकिन वह समझती हैं कि मैं उनका ही काम कर रहा हूं और मैं समझता हूं कि मैं और भी अच्छा काम करूं, इसलिए प्यार से गालियां सुनाती हैं। हमारे इस गूढ़ स्नेह का दूसरों को पता कैसे चले ?

एक वार विनोवाजी से मुझे वजाज-परिवार के ही एक सज्जन के खिलाफ शिकायतें करनी थीं। सवको वाहर निकाल दिया, क्योंकि उनसे अकेले में वात करनी थी। वहींपर माताजी भी वैठी थीं। उन्होंने विनोवाजी की तरफ देखकर कहा, "क्या मैं भी वाहर चली जाऊं ?" विनोवाजी ने मेरी तरफ इशारा किया—इनसे पूछो। मैंने कहा, "नहीं, आप वैठ सकती हैं।" मैंने खूव पेट भरकर शिकायतें कीं। विनोवाजी ने माताजी से पूछा, "वोलो, आपकी क्या राय है ?" माताजी वोलीं, "वलवन्तसिंह ठीक कहता है।" विनोवाजी हँस दिये। ऐसा हमारा एक-दूसरे के साथ घनिष्ठ संवंध है। धना भगत का भजन है :

रामवाण वाग्या होय ते जाणे,
ध्रुव ने वाग्या, प्रह्लाद ने वाग्या, ठरी वैठा ठेकागें।
गर्भवासमां शुकदेवजी ने वाग्या, वेद वचन परमाणें ॥

इस भजन में अनेक भक्तों के नाम गिनाये हैं कि भगवान ने अनेक भक्तों को उवारा है। उसीने माताजी को भी काल के मुंह से वचाकर अमृत पिलाया है, जिसमें गुरुभक्ति और पति-भक्ति दोनों की साधना चल रही है।

राम का वाण जिसको लगा हो, उसका क्या परिणाम होता है और उसकी कितनी गहरी चोट लगती है, यह इस भजन में कवि ने वताया है। यही चोट माताजी के दिल पर वापूजी के इन वचनों के वाण की लगी—"किसीके प्रेम या मोह के वश होकर प्राण देना आसान है, लेकिन उसके काम के लिए जीना भारी काम है। उसी भारी काम के पीछे माताजी अपने प्राणप्रिय पति के अधूरे संकल्प को पूरा करने के लिए अपने प्राणों की जीवित आहुति दे रही हैं। ऐसी वहनों का अभिनन्दन करना मानो राष्ट्र की उस गोभक्ति की भावना का आदर करना है, जिसके आधार पर हमारी सारी संस्कृति टिकी है।

वापूजी ने कहा है कि अगर हिन्दुस्तान की संस्कृति की व्याख्या एक शब्द में करनी हो तो वह गाय के साथ जुड़ी संस्कृति है। उस संस्कृति की रक्षा करने में जिन्होंने अपना जीवन खपाया है और आज भी खपा रही हैं, उनका जितना सम्मान किया जाय, थोड़ा है। यह सम्मान उनका व्यक्तिगत नहीं, राष्ट्र की गोमूलक भावना का है, स्व० जमनालालजी की उस पवित्र भावना का है, जो अन्तिम समय पर उनके मन में रही थी और जिसके लिए उन्होंने अपने आपको समर्पित किया था और जिसके लिए विनोबाजी ने कहा था कि जमनालालजी के साथ मेरा २० साल का परिचय था, लेकिन उनके मन की जैसी उन्नत अवस्था मैंने इन सवा दो महीनों में देखी, वैसी कभी नहीं देखी थी। मन की ऐसी उन्नत अवस्था में मृत्यु प्राप्त करना वहुत ही दुर्लभ है, जो जमनालालजी प्राप्त कर सके। उसी पवित्र भावना की प्रेरणा का वल माताजी के साथ भी रहा है, नहीं तो ऐसे जर्जरित और रोगी शरीर से इतना वोझा उठता ही नहीं। जव इनसव भावनाओं का विचार करता हूं तो मेरा हृदय स्व० जमना-लालजी के पवित्र स्मरण से भर आता है कि अगर उनको भगवान ने हमारे बीच में लम्बे समय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तक रखा होता तो गोसेवा और गोरक्षा का प्रश्न जरूर हल होकर ही रहता। माताजी ने उस पौधे को अपना सर्वस्व लगाकर सींचा है, इसलिए उनकी इस तपश्चर्या के लिए मेरे दिल में बहुत आदर है।

प्रभु से प्रार्थना है कि वह स्वस्थता से स्व० जमनालालजी की उस उच्च भावना के प्रतीक रूप में हमारे बीच में लम्बे समय तक रहकर उस पौधे को सींचने का काम करती रहें, जिसे जमनालालजी ने रोपा था।

उनका अद्भुत वात्सल्य

मा० म० शाह

पूजनीय माताजी से मेरा सम्बन्ध सन् १९४१ में स्थापित हुआ जबकि मैंने वर्धा के कॉमर्स कॉलेज में प्राध्यापक के रूप में अपनी सेवाओं का प्रारंभ किया। माताजी में सेवा-परायणता संयम तथा सहिष्णुता आपाद-मस्तक समायी हुई है। उनका कार्यक्षेत्र गृहणियों की पुरानी अवांछनीय कुप्रथाओं को दूर करना, गोसेवा, खादी का प्रचार, सात्विक जीवन-निर्वाह मुख्य रूप से रहा है। उनका जीवन तीन युगपुरुषों के संपर्क से कंचन के समान दमक रहा है। पहले हैं उनके पति स्व० जमनालालजी बजाज (गांधीजी के पांचवें पुत्र), दूसरे गांधीजी और तीसरे विनोबाजी। प्रथम दो युग-पुरुषों की वजह से उन्होंने गहने और परदा छोड़ा, खादी के प्रति अटूट श्रद्धा पैदा हुई, गोसेवा में संलग्न हुईं और सात्विक जीवन-यापन किया। विनोबाजी का सान्निध्य दुःख-सुख सभीमें मिला है। प्रथम वज्राघात पति की मृत्यु का था। उस समय गांधीजी ने कहा था, "जानकी, तुम्हें अब रोनानहीं है। तुम्हें तो हँसना है और बच्चों को भी हँसाना है। जमनालाल तो जिन्दा ही हैं। जिसका यश अमर हो, उसकी मृत्यु कैसी ? उसकी मृत्यु तो तभी हो सकती है जब तुम उसके रास्ते न चलो।...हिन्दू-स्त्री विधवा होने पर सारे भोगों को तिलांजलि देती है, विकारों का शमन करती है।" गांधीजी की इस शिक्षा के कारण वह अपने को सम्हाल सकीं। दूसरा दुःख का पहाड़ तब टूटा जब उनके ज्येष्ठ पुत्र श्री कमलनयनजी का देहावसान एक हजार मील दूर गुजरात के राज्यपाल श्रीमन्नारायणजी के यहां १ मई, १९७२ को अहमदाबाद में हुआ। इस समय माताजी वर्धा में थीं। यह दुःखद समाचार पहले विनोबाजी को मिला। उन्होंने ही माताजी को जानकारी दी एवं सांत्वना भी।

इतने दुःख सहन करने के बाद भी माताजी आज सभीको मातृत्व-प्रेम देती हैं। संयम एवं सादगी का जीवन व्यतीत करते हुई कई बार हमारे महाविद्यालय में विद्यार्थियों और प्राध्यापकों को जीवन की अमूल्य मूलभूत बातें बतलाती रहती हैं। मांस-मछली, शराब आदि बुराइयों से दूर रहकर गो-माता की सेवा करने पर जोर देती हैं। सादा जीवन के लिए तड़क-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भड़क से दूर रहना उनका मूल-मंत्र है। वह कहती हैं कि आडम्बर से बचे बिना संयम से रहना संभव नहीं हो सकता।

विज्ञान के क्षेत्र में वर्धा नगरी के विद्यार्थियों को ज्ञानार्जन हेतु पूज्य माताजी के ज्येष्ठ चिरंजीव स्व० श्री कमलनयनजी बजाज ने मातुश्री के नाम पर सन् १९६२ में 'जानकीदेवी बजाज विज्ञान महाविद्यालय, वर्धा' की स्थापना की। माताजी की शिक्षा-दीक्षा कम होने पर भी भारत के तीन युग-प्रवर्तक रत्नों के संस्कार के कारण महाविद्यालय की विभिन्न प्रवृत्तियों में वह काफी दिलचस्पी लेती हैं। विज्ञान-प्रदर्शनी, स्नेह-सम्मेलन तथा अन्य समारोहों में इस वृद्धावस्था में भी मनोयोग-पूर्वक विद्यार्थियों एवं प्राध्यापकों का मार्गदर्शन करती रहती हैं। इससे हमें शिक्षा के प्रति उनकी गहरी रुचि का पता चलता है। इसके साथ ही वह स्पष्टवक्ता हैं। गांधीजी, विनोबाजी, जमनालालजी एवं अन्य भारतीय नेताओं तथा महात्माओं के पुराने संस्मरण जब वह बतलाती हैं तब ऐसा जान पड़ता है मानो पुरानी सभी बातें अभी हाल ही में घटित हुई हों। उनकी स्मरण-शक्ति ज्योति के समान प्रखर एवं तीव्र है।

जब-जब माताजी से मिलता हूं, मातृत्व एवं वात्सल्य प्राप्त होता है। उनके सान्निध्य में मैं सब दुःख भूल जाता हूं और असीम सुख का अनुभव करता हूं।

परमपिता परमेश्वर से माताजी की दीर्घायु की मंगल कामना करता हूं।

उनके जीवन का आध्यात्मिक पहलू

सिद्धराज ढड्ढा

माता जानकीदेवी का व्यक्तित्व सचमुच विलक्षण है। उनको देखकर किसी प्रकार की असाधारणता या विशेषता का भान नहीं होता, बल्कि साधारण व्यक्तित्व से भी कुछ न्यून ही उनका दर्शन है। पुराने जमाने के मारवाड़ी-परिवार की करीब-करीब निरक्षर महिला के व्यक्तित्व के भी कई पहलू इतने संस्कारयुक्त और चमकदार होंगे, यह कल्पना भी होना मुश्किल है। आजादी के जमाने के प्रथम पंक्ति के एक राष्ट्रीय नेता और धनवान व्यक्ति की पत्नी तथा करोड़पति संतान की माता होते हुए भी जानकीदेवीजी ने समझ-बूझकर अपने जीवन को सादा और संयमी रखा है, यह अपने-आपमें एक बड़ी बात है। गो-सेवा के लिए उनके मन में अगाध लगन है, मानो जमनालालजी के अंतिम दिनों की भावना को उन्होंने संजोकर रखा है। जब मिलते हैं तब एक वाक्य तो वह जरूर कहती है, "अरे भाई, तुम लोग इतना काम करते हो, गायों के लिए भी कुछ करो न !" भूदान-आंदोलन के उत्कर्ष के दिनों में कूपदान का उन्होंने उल्लेखनीय काम किया था। कई भूमिहीन लोगों की, जिनको भूदान में जमीनें मिलीं, जमीनों पर जानकीदेवीजी के प्रयत्न से कुएं भी बने।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लेकिन उनके व्यक्तित्व की आध्यात्मिक गहराई का पता तो उस दिन चला, जिस दिन भाई कमलनयन का स्वर्गवास हुआ। वह सेवाग्राम में थीं। कमलनयन की मृत्यु अहमदाबाद में हुई। विनोबाजी ने खासतौर से संदेश भेजकर जानकीदेवीजी को सेवाग्राम से अपने पास पवनार बुलाया। संत विनोबा को भी सोचना पड़ा होगा कि एक वृद्ध माता को उसके पुत्र की मृत्यु का संवाद किस प्रकार सुनाया जाय। उस तरह की कोशिश भी की गई, लेकिन संवाद सुनने पर जानकीदेवीजी की जो अनासक्तवृत्ति प्रकट हुई, वह सचमुच आश्चर्यजनक थी। परिवार के लोगों ने भी संदेश भेजा कि वह अहमदाबाद न पहुंच सकें तो घरवालों के पास बंबई या पूना ही पहुंच जायं, लेकिन जानकीदेवीजी की प्रतिक्रिया थी कि बेटा तो मर ही चुका है, अब भागदौड़ करने से क्या फायदा !

असाधारण पहलू तो अनेक लोगों के व्यक्तित्व में होते हैं, लेकिन प्रकाश में वे कुछ लोगों के ही आते हैं। प्रकाशमान व्यक्तित्ववालों से कहीं ज्यादा संख्या शायद उन पहलेवाले लोगों की होती है। माता जानकीदेवीजी की गिनती निश्चित ही इन लोगों में हो सकती है।

चरैवेति-चरैवेति

देवेन्द्रकुमार गुप्त

बापू के संपर्क में जो भी आया, उसके अंतर की क्षमताओं को अपने-आप उभरने का मौका मिला। इसमें अनजाने वह सहायक होते थे। उनके स्वभाव की यह खूबी थी। माता जानकीदेवी की प्रतिभाओं को प्रशस्त करने में बापू की कीमिया काम कर रही थी। जब जमनालालजी गये, उनके अधूरे काम को पूरा करने की लगन और उत्साह जानकी माता में उत्पन्न करने का कार्य बापू ने किया। अभी पिछले मास विनोबाजी विनोद से कह रहे थे, "बापू ने १२५ बरस जीने का हिसाब बताया है, जानकीदेवी को। अपने और काकाजी के दोनों के बरस पूरे करने हैं, इसलिए अपने शरीर को सेवा के लिए खूब संभालकर रखना है।"

माताजी से मेरा संबंध कुछ दूर-दूर का ही आया, पर पिछले २६ सालों से मैं उनको सतत चलते देख रहा हूं। 'चरैवेति चरैवेति' का मंत्र अपने गुरु विनोबा से उन्होंने सीखा दीखता है। जब मगनवाड़ी में था, तो ग्रामोद्योगों के प्रयोगों में उनको रस लेते देखा—चक्की के सुधारों का उपयोग करते। चरखा-तकली का साथ तो वह छोड़ ही नहीं सकतीं। भूदान के दिनों में कूपदान का काम हाथ में लिया और स्त्री-शक्ति-जागरण का कार्य भी किया। गोसेवा का तो काम सदा था ही। दिल्ली में जब भी आती हैं और राजघाट समाधि के पास मिलती हैं तो कुछ-न-कुछ सुझाव उनके मन में रहते हैं। सतत विचार चलता रहता है। अभी कह रही थीं कि बापू की समाधि पर फूल चढ़ाते हैं, यह ठीक नहीं। बापू फूलों का तोड़ना पसंद नहीं करते थे। यहां

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तो सूत की आंटी ही चढ़ाने का प्रबंध करना चाहिए।

इस प्रकार उनका विवेक, सतत सेवा, चिंतन-शीलता जाग्रत रहती है। वह अपने जीवन से हम सबको सन्मार्ग पर चलने को प्रवृत्त कर रही हैं।

उनकी सहज ऋजुता

दत्तोबा दास्ताने

मैं विनोबाजी के आश्रम में सन् १९२६ में आया। विनोबाजी को वर्धा लाने का सारा श्रेय स्व० सेठ जमनालालजी को है। इसलिए विनोबाजी के साथ बजाज-परिवार का स्नेह सहज ही जुड़ गया। लेकिन बजाज-परिवार के साथ दास्ताने-परिवार भी विनोबाजी के माध्यम द्वारा जुड़ गया। १९२९ में मेरी माताजी स्व० बारूताई दास्ताने को जमनालालजी वर्धा बुला लाये और विनोबाजी के आश्रम के पड़ोस में कार्यकर्ताओं की लड़कियों की पढ़ाई और सार-संभाल के लिए 'कन्याश्रम' की स्थापना की। इस कन्याश्रम की कुल-माता की जिम्मेदारी काकाजी ने बारूताई दास्ताने को सौंप दी। इतना ही नहीं, बल्कि अपनी दो लड़कियों—मदालसा और ओम् (उमा)—को भी इस कन्याश्रम में अन्य लड़कियों के साथ रहने और शिक्षण पाने के लिए श्रीमती बारूताई के सुपुर्द किया।

जमनालालजी को आमतौर से लोग 'सेठजी' कहते थे, लेकिन परिचित और निकटवर्तियों में वह 'काकाजी' कहलाते थे। जमनालालजी के जीवन में 'सेठ' का कोई भी लक्षण नहीं था। रहन-सहन और वेषभूषा नितांत सादी थी। चेहरे पर स्मित ऐसा कि सामान्य व्यक्ति भी उनका प्रेम पात्र बनने में हिचकिचाता नहीं था। इसलिए सेठजी की अपेक्षा यथार्थ में वह काकाजी थे।

काकाजी के इस सादेपन की छाप श्रीमती जानकीदेवी के रहन-सहन और वेशभूषा पर भी पाई जाती है। उनकी खादी की साड़ी महीन नहीं, बल्कि खद्दर की मोटी होती है। वर्धा में जमनालालजी की प्रतिष्ठा सामाजिक और राजनैतिक दृष्टि से भी ऊंची थी। फिर भी जानकीदेवीजी के व्यवहार में कहीं आडंबर या बड़प्पन की भावना नहीं दिखाई देती थी। हिंदू स्त्री के नाते अपने पति के हर प्रकार के जीवन में वह छाया की तरह साथ रहीं। इतना ही नहीं, बल्कि मारवाड़ी समाज में उस जमाने में मानी जानेवाली सबसे कट्टरपन की निशानी पर्दा का भी उन्होंने त्याग किया। स्वयं तो पर्दे से मुक्त हुई ही, मारवाड़ी स्त्रियों का पर्दा हटाने के प्रचार में भी वह अग्रसर रहीं।

सन् १९२८-२९ की बात है। विनोबाजी के आश्रम में भोजन सादा रहता था। मिर्च-मसाले का उपयोग तो था ही नहीं, बल्कि नमक भी ऊपर से दिया जाता था। बीच-बीच में काकाजी और माताजी (जानकीदेवीजी) आश्रम में आकर सादा का सादा लेकिन सुस्वादु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भोजन करके जाते थे। आश्रम में गाय के दूध और घी का नियम था। घी पूरी मात्रा में मिलता नहीं था, इसलिए फुलके पर अलसी का तेल लगाया जाता था। माताजी मारवाड़ी-परिवार की थीं। जिंदगी में कभी तेल खाया नहीं, छोंक में भी घी पड़ता था। वह आश्रम के लोगों को हमेशा सुनातीं, "तेल खाय जोड़ा और चना खाय घोड़ा।" तेल और चना कोई आदमी का खाना है ? एक बार आश्रमवालों ने तय किया कि माताजी को तेल लगाये फुलके परोसकर देखा जाय कि वह खा सकती हैं या नहीं। लेकिन यह बात उनको पहले बताई न जाय। माताजी के लिए, जब भी वह आश्रम में भोजन करतीं, घी लगाई रोटी परोसते थे। उस दिन माताजी तेल लगाई रोटी खा गईं। खा ही नहीं गईं, बल्कि पूछने लगीं कि इतना अच्छा घी कहां से लाये ? गरम फुलके पर अलसी का तेल लगाने पर एक विशेष प्रकार की सुंगध रोटी से आती है। इसीलिए माताजी को लगा कि घी ही है। भोजन कर लेने के बाद उनको बताया गया कि वह 'अच्छा' घी अलसी का तेल था !

जानकीदेवी यद्यपि पढ़ी-लिखी नहीं हैं, फिर भी उनका वाक्चातुर्य और सभाओं में निर्भयता के साथ भाषण देने की पटुता सामान्य प्रचारक से बढ़कर है। विनोबाजी के भूदान, ग्रामदान आंदोलन के प्रारंभ में माताजी को कूपदान की धुन लगी। विनोबाजी के भाषण के बाद उनका भाषण होता था कूपदान के लिए। एक कुंए के लिए पांच सौ रुपये का दान, यह उनकी मांग होती थी। सभा में ही यह दान वह प्राप्त कर लेती थीं। किसीने गहने दिये तो उन्हें भी स्वीकार कर लेती थीं। इस प्रकार करीब चालीस-पचास हजार रुपये का दान उन दिनों में जानकीदेवी ने विनोबाजी के साथ घूम-घूमकर प्राप्त किया था।

जमनालालजी का मानस अंतिम दिनों में अंतर्मुख और अध्यात्म-प्रवण बना था। विनोबाजी के सान्निध्य से वह उस दिशा में तेजी से प्रगति कर पाये थे। श्रीमती जानकीदेवी का मन भी पिछले कुछ वर्षों से विनोबाजी के आध्यात्मिक विचारों के प्रति विशेष रूप से आकर्षित हो चला है। इसी सत्संग का पाथेय उनको श्री कमलनयनजी की आकस्मिक मृत्यु के समय संबलरूप बना था। विनोबाजी के ब्रह्मविद्या मंदिर में अब उनको मानसिक शांति और आध्यात्मिक प्रेरणा मिलती है। इस उम्र में भी उनका उत्साह और कार्य-शक्ति क्षीण नहीं हुई है।

हम भगवान से प्रार्थना करें कि वह "जीवेत शरदः शतम्" अपने जीवन में सिद्ध करें और अखंड सत्संग का लाभ उनको मिलता रहे।

समर्पण-योगिनी

दामोदरदास मूंदड़ा

जमनालालजी पूज्य बापू के पांचवें पुत्र बने। स्वेच्छा से बने। बापू ने यथार्थ ही लिखा है, "इस स्वेच्छा से गोदआये पुत्र ने कितना कुछ किया, इसका पता बहुत कम लोगों को

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होगा।"

जो आगे लिखा है वह विशेष मननीय है, "मैं कह सकता हूं कि इससे पहले किसी मनुष्य को ऐसा पुत्र नसीब नहीं हुआ होगा।"

एक अपूर्व और अद्वितीय निवेदन है बापू का। कैसी ऊंचाई थी जमनालालजी की कि बापू उनपर ऐसे मुग्ध हो गये !

"किसी मनुष्य को ऐसा पुत्र नसीब नहीं हुआ होगा।" बार-बार शब्दों की गहराई को देखकर मस्तक झुक जाता है—दोनों के चरणों में। धन्य पिता, धन्य पुत्र !

किंतु पुत्र के इस समर्पण-योग में जानकीदेवीजी का जो गुप्त दान रहा है। बापू के ही शब्दों में कहना हो तो "उसका पता भी बहुत कम लोगों को होगा।" एक पत्र में बापू ने जानकीदेवीजी तथा उनकी कतिपय सहेलियों से जोगिन बनने की अपेक्षा प्रकट की थी। लिखा था, "जोगिन बनकर बाहर निकलना होगा। शोभित होना होगा। शोभित करना होना।"

बापूजी की अपेक्षा ठीक ही निकली। माताजी जमनालालजी के साथ सती होना चाहती थीं। बापू ने समझाया कि वह क्रिया आसान है। नित्य जलते रहना कठिन है। माताजी सती होने के बजाय नित्य सतीत्व का—चिता पर नित्य चढ़े रहने का—जोगिनी की तरह नित्य जलते रहने का—अनुभव कर रही हैं, जिसके कारण निश्चय ही जमनालालजी और बापू दोनों को समाधान हुए बिना नहीं रहेगा।

माताजी का नाम तो मैंने विद्यार्थी दशा में ही सुन रखा था। करांची-कांग्रेस के समय करांची शहर में एक महती सार्वजनिक सभा में उनका भाषण भी रखा गया था। बड़ी-बड़ी स्त्रियां करांची-कांग्रेस के लिए प्रतिनिधि बनकर आई थीं। किंतु करांची नगर में भाषण का आयोजन माताजी के लिए ही हुआ था। यह आयोजन देखकर उनके वैशिष्ट्यपूर्ण व्यक्तित्व ने मुझे तभीसे आकर्षित कर लिया था। किंतु निकट से देखने का अवसर तो आगे मिला।

उन दिनों बापू के उपवासों के कारण जमनालालजी पूना में ही थे। सेठ रामनारायणजी रुइया के आलीशान बंगले पर उनका निवास था। माताजी भी उनके साथ थीं। मुझे और मेरी पत्नी को मिलने के लिए यहीं बुलाया गया था। हम लोगों को जमनालालजी का वह कमरा दिखाया गया, जहां वह बैठते-उठते थे, लोगों से मिलते थे। सामने के बरामदे में हमने देखा कि बिल्कुल फर्श पर, बिना कुछ बिछाये, हाथ का तकिया बनाये, अत्यंत सादे वस्त्र पहिने, जो बहुत साफ भी नहीं थे, कोई महिला लेटी हैं। सारे घर में बिजली का विशेष प्रबंध था। पंखों की व्यवस्था थी। किंतु मुक्त पवन का स्वेच्छा से स्पर्श होने देने का आनंद वह महिला लूट रही थी। हमने तो यही समझा कि कमरों में विश्राम लेने का अधिकार न रखनेवाले व्यक्तियों में से ही कोई हो सकता है। कामधंधों से फारिग होकर, मालिक लोग विश्राम कर लें तबतक थोड़ा आराम अपन भी पालें, यह सोचकर चंद मिनिट चुपचाप जमीन से पीठ छुआने का प्रयत्न करने-वाले व्यक्तियों में से ही कोई हों, किंतु हमारी बिदाई की बेला में 'जानकीजी' को जब सेठजी ने बुलाया और हम लोगों का परिचय कराया तो हमने प्रणाम तो किया ही, किंतु मैंने अपने मन में क्या-कैसा अनुभव किया होगा, वाचक उसकी कल्पना कर सकते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कुछ लोगों के व्यवहार के नाप दोहरे होते हैं—घर में एक, घर के बाहर एक। सार्वजनिक सभा के लिए एक, शादी-ब्याह के लिए एक। संतों के सम्मुख एक, दुनिया के लोगों में एक। किंतु माताजी में जो सादगी उस दिन दिखाई दी, वही आजतक देख रहा हूं। उनके जीवन में दोहरे मान कभी भी नहीं देखे। यह इसलिए संभव हुआ कि जमनालालजी को बापू के विचारों ने जैसा पागल किया, वही पागलपन माताजी पर भी सवार था। पति से त्याग और बलिदान में वह किंचित् कभी पीछे नहीं रहना चाहती थीं। नहीं रहीं। उनकी सादगी का जन्म खादी के विचार से हुआ है और इसीलिए वह स्थायी रह सका है। खादी के विचार के पीछे जो पागलपन है, उसकी छू भी उन्हें पूरी-पूरी लग चुकी है। नागपुर में बापू ने जब विदेशी वस्त्रों की होली की बात कही और गहनों के बारे में कहा तो जमनालालजी ने माताजी को किंचित संकेत भर किया, "तुम गहना छोड़ दो तो मुझे अच्छा लगे।"

हिंदू स्त्री के लिए पति का संकेत भी परम तारक आज्ञा का रूप होता है, और गहनों में कपड़ों का समावेश हो ही गया है, ऐसा ही माताजी ने माना। हीरे और मोतियों के गहने, सब उतारकर रख दिये। माशा भर भी सोना नहीं रखा। आजतक छुआ नहीं। माताजी कहती हैं, "मुझे इच्छा भी कभी नहीं हुई।" 'सुवर्ण मृग' की इच्छा करनेवाली जानकीजी भी माताजी पर मुग्ध हुए बिना नहीं रहतीं—उनकी ऐसी वासना-मुक्ति को देखकर! गहनों में पांव की कड़ियों का किस्सा वह बहुत मजेदार ढंग से सुनाती हैं: "पांव की कड़ियां तो मरने पर ही निकलती हैं, सुनार ही निकालता है। मुझे उन कड़ियों से आसक्ति तो ज़रा भी नहीं थी, पर लोगों का डर था।" माताजी और डर? डर काहे का था उन्हें? डर यही कि लोग क्या कहेंगे, क्योंकि पांव की कड़ियां—जैसे उन्होंने ऊपर कहा—या तो मरने पर सुनार निकालता है या एक विशिष्ट अवस्था में हर स्त्री को कुंकुम और गहनों के साथ निकाल देनी पड़ती हैं। डर इसीका था, किंतु माताजी कहती हैं:

"मेरे लिए तो जमनालालजी की इच्छा ही प्रमाण थी। मैंने कड़ियां उतारकर रख दीं। बस, गांव में एक ही चर्चा, बजाजों की बहू ने तो गहने उतारकर रख दिये। विधवा बन गई, वगैरा-वगैरा।"

खादी का, जिसकी कोख से प्राय: सादगी का जन्म हो ही जाता है, माताजी कहती हैं, "मुझपर तो पागलपन पूरा ही सवार था, क्योंकि मेरे लिए तो खादी के सभी वस्त्र विदेशी थे। यह ख्याल ही नहीं किया कि वे स्वदेशी होंगे और उनकी होली की बात बापू ने नहीं कही थी।" बड़े-बड़े रेशमी वस्त्र, हज़ारों रुपयों की कीमती चीजें, छत्र, चामर, बागें, सबकुछ हवन करदिया। एक बड़ा छत्र था, उसकी होली कैसे करें, सोचकर उसे मगनवाड़ी के कुएं में डलवा दिया। विवाह के समय के भारी-भारी जरी के रेशमी कपड़े सब अग्नि में स्वाहा कर दिये। आज लगता है कि वे कपड़े, जो ज्यादातर स्वदेशी थे (गोटा तो चांदी-सोने के तारों का होता है) रहते, तो शायद विनोबाजी किसी संग्रहालय में रखवा देते। पर मुझपर तो एक ही धुन सवार थी—होली।"

धुन केवल खादी की ही सवार नहीं है।

जमनालालजी ने जो-जो काम हाथ में लिये, सबकी समान धुन माताजी पर सवार होती गई, आज भी सवार है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गो-सेवा का व्रत तो ऐसे उनका बहुत पुराना है। कितना ही शारीरिक कष्ट क्यों न सहना पड़े, यदि गाय का घी-दूध नहीं मिला, तो माताजी ने सेवन नहीं किया, चाहे कितने ही दिन बिना घी-दूध के क्यों न रहना पड़े और उसके कारण कितनी ही हैरानी क्यों न उठानी पड़े। उठानी पड़ी ही है—और गंभीर रूप में उठानी पड़ी है। गो-सेवा उनके लिए केवल गोमाता की हद तक सीमित नहीं, पशु-सेवा के प्रतीक के रूप में ही उन्होंने उसे समझा और स्वीकारा है। इसलिए जब गाड़ी में या हल में जुते बैलों को कीलवाली लकड़ी से टोचा जाता है, तो माताजी को बहुत दुःख होता है। प्राणियों का यह कष्ट बंद हो, इसका वह सदा से प्रयत्न करती रही हैं। वह बंद नहीं हो पाया है, इसका उन्हें बहुत दुःख भी है। माताजी सिर्फ सेवा का यह आनंद अपने लिए सीमित नहीं रखतीं। जो-जो गो-सेवक हो, माताजी के स्नेह का भाजन बन जाता है।

जामनगर के बारदानवालों का किस्सा वह उस दिन कितने प्रेम से सुना रही थीं, मानो किसी भक्त का कीर्तन स्वयं भगवान करते हों। "उनकी सेवा तो अद्भुत देखी। उन्होंने अपनी चौदहसौ गायोंवाली गो-शाला मुझे दिखाई। क्या दोष निकालूं उस सेवा में? मैंने तो उन्हें जीव-दया का महान् पुजारी ही पाया। जो भी प्राणी उस गोशाला में आवे, चाहे गाय हो या भैंस, कबूतर हो या तीतर, जो कोई भी दे जाय, जिस किसी स्थिति में दे जाय, सबको प्रेम से रख लिया जाता है, सबकी प्रेम से सेवा की जाती है। एक बैल के सींग में कैंसर हो गया। डाक्टर लोग उस बैल की सेवा में जुटे हुए थे और वहां तो मैंने डाक्टरों को भी बिना कुछ लिये पशु-सेवा में जुटे पाया। यह उन बारदानवालों के कारण संभव हो सका था। उन्हींकी भक्ति की शक्ति का प्रभाव था।"

और फिर श्री बारदानवाला के साथ की बातचीत का जिक्र करते हुए कहा :

"माताजी, बापूजी ने अपने आश्रम में एक बछड़े को वेदना-मुक्ति की भावना से ही क्यों न हो, शांत करा दिया। कलकत्ता के लोग नाराज हैं। हम इस पाप को अपने सर लेते हैं, माताजी। पर अपने कलकत्ता के मित्रों के सहयोग से इतना तो करा दीजिए कि कलकत्ता की गाय बच सके।"

कलकत्ता में मारवाड़ी समाज बहुत बड़ी संख्या में रहता है। श्री जमनालालजी को माननेवाले लोग हैं। श्री बारदानवाला को लगा कि माताजी के प्रयत्नों से वहां की यह घोर हिंसा रुकने-रुकाने में कुछ सफलता शायद मिल सकती है।

माताजी ऐसे बाहर किसीके यहां खाना-पीना अक्सर कम ही करती हैं, परंतु इस गोभक्त के आग्रह को नहीं टाल सकीं। "मैंने क्या देखा कि उस घर में प्याज-लहसुन का नाम नहीं। चाय-कॉफी कोई पीता नहीं और घर में भी पांच गायों की उत्तम सेवा होती है। घर में चारों ओर कृष्ण की मूर्तियां ही दिखाई देती हैं। एक मूर्ति तो डेढ़ हाथ ऊंची पूरी थी। अति सुन्दर, मनोहर रूप। मुख पर अद्भुत हास्य। लगता था, बस मूर्ति अब पटपट बोलेगी ही।" अपनी बात को जारी रखते हुए वह बोलीं, "हम लोग मेज पर ही भोजन कर रहे थे। जो भी आवे, वहीं उसी मेज पर भोजन के लिए बैठ जाओ। सामने ही मेहमान-घर है। पचासों पलंग लगे हैं। गरीब आओ। धनी आओ। सबकोई वहां रह सकते हैं। यहां घर में, इसी मेज पर सब भोजन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कर सकते हैं।" इस गलतफहमी को टालने के लिए कि शायद यह सारी सेवा नौकर-चाकरों के भरोसे होती होगी, माताजी ने तुरंत स्पष्ट किया, "दामोदरभाई, आपको आश्चर्य होगा कि इतने बड़े काम के लिए नौकर सिर्फ तीन, क्योंकि सारा घर ही सेवा में जुटा रहता है।"

किसी कीर्तनकार की तरह माताजी गोमाता के और बापू के उस भक्त का गुणगान करती ही चली जा रही थीं। उन्हें किंचित् भी यह मान-अभिमान नहीं था कि बजाजवाड़ी में बापू के पांचवें पुत्र द्वारा देशभर के सेवकों का सदा से ही ऐसा स्वागत होता रहा है। वहां तो अनेक बार ऐसा भी दृश्य हमने स्वयं देखा कि जाड़े के दिन हैं, पर्याप्त गरम कपड़ों की अतिथि के पास कमी है, तो तुरन्त खादी-भंडार से आवश्यक कपड़ों का प्रबंध करवा दिया गया है, और स्वीकार करनेवाले के प्रति कृतज्ञता की भावना के साथ यह सत्र होता। कांग्रेस की कार्यसमिति की सभाओं के लिए आनेवाले कुछ अतिथि, खासकर स्त्रियां, तो जमनालालजी के घर को मैका समझकर ओमबहन आदि से फरमाइश भी निस्संकोच कर दिया करती थीं कि बेटा, तुम उधर जाओ खादी भंडार की तरफ, तो चार साड़ियां ले आना, दो गिलाफ ले आना, इत्यादि-इत्यादि। हम लोगों में किसीको अटपटा न लगे, इस ख्याल से माताजी इस सबके पीछे की भावना को बड़े प्रेम से समझातीं, "दामोदरभाई, ये लोग तो यही समझते हैं कि यहां जो कुछ भी है, सारा देश का ही है। किंतु ये समझते हैं, इसका अचरज क्या, स्वयं जमनालालजी ऐसा ही समझते हैं। और बात है भी ठीक। ऐसा ही है भी, तो वे फरमाइश करें, इसमें गलत क्या ?"

माताजी बात तो गोमाता की और उसको बचाने के उपायों की कर रही थीं, पर न जाने उनके मस्तिष्क में क्या-क्या विचार चल रहे थे। पास में ही 'इलस्ट्रेटेड वीकली' की एक प्रति पड़ी हुई थी। माताजी स्वयं तो अंग्रेजी पढ़तीं नहीं। फिर भी उस अंक के मुखपृष्ठ पर इंदिराजी की एक बड़ी अच्छी तस्वीर छपी हुई थी। चुनावों में अपूर्व यश प्राप्त करने के बाद की थी वह तस्वीर। उस अंक को माताजी ने तुरंत हाथ में उठा लिया और सहसा कोई महत्त्व की बात कहना चाहती हों, इस भावना से पुनः शुरू किया, "देखो दामोदरभाई, कैसी सुन्दर तस्वीर है। सर पर से साड़ी ओढ़ती है। कितनी मर्यादा पालन करती है ! यह मर्यादा भारत की मर्यादा है।"

और फिर एक क्षण रुककर भाव-भीने स्वर में कहा, "मुझे तो इंदिरा बहुत प्यारी लगती है।"

और तुरंत चुनाव, उसका पूर्व यश, उस यश के कारण प्राप्त सत्ता, उस सत्ता की अपार शक्ति, उसमें निहित संभावनाएं—सबकुछ जैसे स्पष्ट आंखों के सम्मुख उपस्थित-सा देखकर कहने लगीं, "गाय का चिह्न लिया है न ! तो मैं कहती हूं—गोमाता ने तुझे बचाया है। तुझे गो-माता को बचाना ही होगा।"

कलकत्ता के संदर्भ में उस गोभक्त द्वारा प्रस्तुत किये आह्वान का मानो ठीक जवाब वह पा गई हों, ऐसे विश्वास से वह कभी उस चित्र की ओर तो कभी सामनेवाले सरस, नीरव, सुंदर नीलाकाश की ओर देखती-बोलती चली जा रही थीं। विनोबाजी के साथ की बातचीत के संदर्भ में कहने लगीं, "विनोबाजी को मेरी यह कल्पना ठीक लगी है। शायद इसीलिए उन्होंने मुझसे कहा—"जाओ। दिल्ली जाओ और इंदिरा से मिलो और कहो कि गोसेवा का काम हाथ में लो। और यह भी कहो कि मैं उसकी जिम्मेदारी ले सकती हूं।"

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

किसी अज्ञात किंतु सात्विक समाधान की रेखा उनके मुखपर इस समय बड़े अद्‌भुत प्रकाश के साथ आलोकित हो रही थी। इसके पहले कि कोई पूछ बैठे—"माताजी, आपने फिर विनोबा को क्या जवाब दिया", उन्होंने स्वयं और तत्काल कहा, "और मैंने भी कह दिया कि हां, ले सकती हूं।"

और फिर कुछ क्षणों के लिए तो वातावरण में गंभीर शांति छा गई।

मुझे सहसा स्मरण हुआ, उस ऐतिहासिक पत्न का, जो बापू ने अपने लाड़ले पांचवें पुत्र के चले जाने के बाद स्व०भाई कमलनयन के नाम लिखा था। उस पत्र में बापू ने जमनालालजी के उत्तर जीवन के पारमार्थिक कामों के भविष्य के बारे में चिंता प्रकट करते हुए लिखा था, "जमनालालजी को मैं खो बैठा हूं, ऐसा ज़रा भी आभास मैं अपने मन में नहीं होने देना चाहता। उसकी कुंजी तुम्हारे हाथ में है, राधाकृष्ण के हाथ में है, और जानकीदेवी के हाथ में है।" किंतु जानकीदेवी के जख्मों को वह जानते थे। जानते थे कि बहादुर है, फिर भी जख्म तो अपना असर लाता ही है। दुनिया माताजी की विरह-वेदना से परिचित नहीं हो, बापू से किंतु कोई चीज छिपी नहीं थी। इसलिए जहां वह कमलनयनजी, राधाकृष्णजी से आशा करना योग्य समझते थे और माताजी की क्षमता से भी परिचित थे, वहां अब उन्हें माताजी के बारे में कुछ चिंता-सी थी और इसलिए उन्होंने उस समय उस पत्र में लिखा, "जानकीदेवी से जिस विकास की मैंने आशा रखी थी, वह तो जमनालाल के जाने के बाद सूख ही गई।"

यद्यपि जमनालालजी के प्रति माताजी के समर्पण-योग की दृष्टि से बापू का यह एक बड़ा गौरव-स्वरूप निवेदन भी माना जा सकता था, फिर भी एक प्रकार की निराशा की भावना तो बापू के उन शब्दों में स्पष्ट दिखाई देती ही है।

किंतु आज बापू होते और विनोबाजी के साथ का उपरोक्त संवाद वह सुन पाते तो नाचते और धन्यता का अनुभव करते, इसलिए भी कि बापू के जितने भी रचनात्मक काम हैं, गोसेवा को वह सबसे कठिन मानते थे। बेलगांव के भाषण में उन्होंने स्वीकार किया था कि स्वराज्य दिलाना मुझे आसान लगता है, किंतु गाय को बचाना बहुत ही कठिन प्रतीत होता है।

उनके पांचवें पुत्र ने उनका यह अत्यंत कठिन कार्य ही अपने आखिरी काम के रूप में स्वीकारा था, और माताजी आज इस अत्यंत कठिन काम के लिए बड़े आत्म-विश्वास के साथ—बापू की आत्मा को भी समाधान प्रतीत हो, ऐसे आत्म-विश्वास के साथ—कटिबद्ध हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उदारचेता, करुणामयी तथा कर्मनिष्ठ

प्रभुदास गांधी

भारत की भूमि पर बापू के सत्याग्रह-आश्रम का अरुणोदय कोचरब में हुआ, तो इसका मध्याह्न वर्धा में। एकादशव्रतों को सफलतापूर्वक अपने जीवन में सुप्रकाशित करके आचार्य विनोबा वर्धा सत्याग्रह-आश्रम का संचालन करने गये। प्रतिवर्ष एक महीना गांधीजी भी वर्धा के सत्याग्रह-आश्रम को और भी ओजस्वी और प्रकाशमय बनाने को रह आया करते थे। जिस प्रकार आश्रम के उषाकाल में आश्रम के यज्ञ में अभिवृद्धि करनेवाली श्रीमती अनसूयावहन आश्रम-परिवार की स्वजन बनीं, उसी प्रकार आश्रम की मध्याह्न वेला में सत्याग्रह-आश्रम के यश को और भी उज्ज्वल बनानेवाली श्रीमती जानकीवहन बजाज आश्रम-परिवार की निकटतर और निकटतम सदस्या बन गईं।

अनसूयावहन पढ़ी-लिखी विदुषी महिला थीं। फिर युवावस्था में ही अपने गृहस्थी जीवन को वानप्रस्थी जीवन की ओर उन्होंने मोड़ दिया था। सत्याग्रह-आश्रम में गांधीजी ने आध्यात्मिक साधना का जो आदर्श स्थापित किया था, उसे आत्मसात करने के लिए यथा-शक्ति जीवन-भर मनन, चिन्तन और अनुशीलन करती रहीं।

जानकीवहन का व्यक्तित्व उनसे अलग ही देखने में आया। मुझे जानकीवहन को देखने का पहला अवसर मिला, वह थोड़ा-सा मनोरंजक और संकोच में डालनेवाला था। मैं उसे भूल नहीं पाया हूं।

वर्धा के सत्याग्रह-आश्रम का पहला वर्ष भी पूरा नहीं हो पाया था, तभी की बात है। एक दिन शाम हो चुकी थी। धूप के रहते ही नियमानुसार आश्रमवासियों का समुदाय भोजन से निबट चुका था, चौका-बर्तन आदि के बाद विधिवत सायंकालीन प्रार्थना और विनोबा का प्रवचन भी समाप्त हो गया था। दिनभर में हम लोगों को यही आध-पौन घंटा घूमने-फिरने, सुस्ताने को मिलता था, वैसे रात-दिन समय की लगाम खिंची हुई रहती थी।

विराम के इस समय का लाभ लेकर मैं रसोई की कोठरी में जा पहुंचा और लालटेन के सहारे प्रातःकाल की रसोई के लिए पूर्व-तैयारी में लग गया। उस कोठरी में मैं अकेला ही था। पता नहीं चला, कब तीन-चार महिलाएं इकट्ठी उस कोठरी में आ गईं। रसोई खड़े-खड़े करने की वहां व्यवस्था थी। ईंट के बने-बनाये, मेज-जैसे चबूतरे के जिस ओर मैं था, उसके सामने आकर वे सब चूल्हे पर झांकने लगीं।

सबने सुंदर साड़ियों पर महीन चादरें ओढ़ रखी थीं, इसलिए समझ में आ गया कि ये सब मारवाड़ी बहनें हैं। सबसे आगेवाली बहन ने अपना घूंघट काफी ऊंचा उठा रखा था। उसने प्रश्न किया, "यह क्या कर रहे हो ?"

मैंने सरलता से उत्तर दिया, "सवेरे की रसोई की तैयारी कर रहा हूं।"

"अभी से ? सवेरा होने में तो सारी रात बाकी है !"

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

"सवेरे सात वजे से पहले रसोई पूरी कर लेनी होती है। सात से बुनाई का काम शुरू हो जाता है।"

"भोजन कब करते हो ?"

"दोपहर में बुनाई-कताई से थोड़ी देर छुट्टी मिलती है तभी सब एक साथ भोजन करते हैं। उस समय रसोई बनाने के लिए समय नहीं रहता।"

"रसोई ठंडी हो जाती होगी। रोटी भी सवेरे ही बना लेते हो ? इसी चूल्हे पर ?"

"रोटी बनाने में सहायता करनेवाले आवें, इससे पहले और सब रसोई बन जानी चाहिए। इतना काम कर लेने की जिम्मेदारी मुझपर है। मुझसे जल्दी नहीं होती, इसलिए सोने जाने से पहले ही सारी तैयारी कर लेता हूं।"

"चूल्हे पर इन बरतनों में क्या रखा है ?"

"बड़े में चावल पकाने का पानी, छोटे में दाल पकाने का।"

"और ये लकड़ियां भी अभी से चूल्हे में रख दीं ?"

"प्रातः चार बजे की प्रार्थना, फिर स्नान, यह सब करने में देर हो जाती है। इसलिए लकड़ियां ठीक से लगाने का काम अभी कर लेना पड़ता है।"

मेरे इस उत्तर से वे सभी महिलाएं मुस्कराने लगीं। आपस में बोलीं, "रसोई का पानी तो सवेरे ताजा होना चाहिए।"

फिर जिसने मुझसे प्रश्न किये थे, उसने मेरे हाथ के कपड़े के टुकड़े और लालटेन की ओर संकेत करके कहा, "तो इसे मिट्टी के तेल में भिगोकर आग भी अभी सुलगा देना। सवेरे का समय बच जायगा।"

इतना कहकर वह महिला-वृंद जिस खामोशी के साथ रसोईघर में आ धमका था, उसी खामोशी और तत्परता से बाहर निकल गया। उनकी पीठ पर लहराती चादरों को देखते हुए मैं मन में सोचता रहा कि इन्होंने मेरा अच्छा मज़ाक बनाया। इन बरतनों में पानी छानकर भरा है। रातभर ढंका रहेगा। इसमें बासीपन क्या आ जायगा ?

उन महिलाओं के जाने के बाद मुझे आश्रम के एक साथी ने बताया कि प्रश्न करनेवाली स्वयं जानकीदेवी बजाज ही थीं। बड़े घर की हैं, इसलिए बाजार से होकर दिन में निकलना टालकर संध्या को वह आश्रम देखने आईं। वहां वह घूंघट नहीं करतीं। बड़े तेज स्वभाव की हैं।

सत्याग्रह-आश्रम के काम से कभी-कभी शहर में जाने की मेरी बारी भी आ जाती थी। तब बाजार के एक सिरे पर बच्छराज कंपनी का एक बड़ा मकान और उससे सटा लक्ष्मीनारायण मंदिर भी अंदर प्रवेश किये बिना देख लेता था। एक तो हम आश्रमवासी छुआ-छूत नहीं मानते थे, दूसरे भगवान की मूर्ति के सामने चढ़ाने के लिए हमारे पास कुछ भी नहीं होता था। इसलिए सेठों के भवन और भद्र लोगों के देवमंदिर की सीढ़ियों पर चढ़ने का मन में साहस नहीं होता था। बच्छराज कंपनी के विशाल चौक में चक्कर लगाकर अंदर दुकान में बहीखाते लिखनेवालों को और आंगन में खेलनेवाले बालक को देखकर अनुमान होता था कि सेठ जमनालाल बजाज कितने बड़े होंगे। उनको भी पास से देखने का मुझे विशेष अवसर नहीं मिला था। आंगन में खेलनेवाले आठ-दस वर्ष के बालक को मैं सेठजी का लड़का समझता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

था। कई महीनों बाद पता चला कि वह 'कमल' नहीं, 'कमला' है और लड़का नहीं, सेठजी की बड़ी पुत्री है। साड़ी पर चादर ओढ़कर ही घर से बाहर निकलनेवाली जानकीबहन ने अपनी पुत्री को बड़ी होने तक लड़के की वेशभूषा में रखा, यह आश्चर्य की बात थी।

थोड़े ही महीने वर्धा-सत्याग्रह-आश्रम में रहने के बाद वहां से लौटकर पुनः मेरा साबरमती-सत्याग्रह-आश्रम में आना हुआ। जानकीबहन को दुबारा देखने का अवसर मिला तब-तक वह नई ही जानकीबहन बन चुकी थीं। वर्धा में एक बार उनको देखा था। उसके चार-पांच वर्ष के बाद का यह प्रसंग था। साबरमती-आश्रम में इमामसाहब बाबा झीर के रहने के मकान से जमनालालजी के लिए खपरैल का एक नीचा, छोटा-सा नया मकान बन गया था। उसमें अपने बाल-बच्चों के साथ रहने के लिए जानकीबहन आई थीं। अब न वह रंगीन चमकीली साड़ी और न वह मलमल की बारीक चादर उन्होंने पहनी थी। गहनों का ठाठ भी बिलकुल नहीं था। खादी की मोटी साड़ी पहने हुए वह हमारे आश्रम की अन्य माताओं के समान ही एक बन गई थीं।

एक बार सवेरे नौ बजे के लगभग मैं किसी काम से आश्रम की गोशाला में गया। देखा, गाएं बाहर चरने चली गई थीं और उस लम्बे-चौड़े छप्पर के फर्श पर पड़े हुए गोबर को बटोरने और झाड़ू से जगह स्वच्छ करने के काम में दो बहनें लगी हुई थीं। उनमें एक जानकीबहन थीं। मैं उनके पास जाकर खड़ा रहा। वह कितनी लगन से उस काम में तन्मय थीं, यह देखता रहा। जानकीबहन ने मुझको देखा तो बोलीं, "बुड्ढे ने (गांधीजी) कहा कि खाद के गड्ढे में गोबर सावधानी से डालना सीख लो, ताकि मक्खियों का उपद्रव न हो। पता नहीं, यह बुड्ढा क्या-क्या सिखायेगा। आजकल रोज सवेरे यह काम मेरे जिम्मे कर दिया है। देखो, हो गई न यह गोशाला साफ ?" कहते-कहते उन्होंने सारे गोशाला खंड को मधुर मंद हास्य से भर दिया। मुझ जैसे आश्रम के जवान लड़कों के करने का कठिन श्रम भी उत्साह और प्रसन्नता से ऐसी बड़े घर की बहनजी भी कर रही हैं, यह देखकर मेरे चित्त पर उनकी सरलता और मानवीयता का गहरा प्रभाव पड़ा। उनके सामने पड़ने में जो संकोच होता था, वह मिट गया।

'रघुवंश' में कविवर कालिदास ने राजा दिलीप का वृत्तान्त दिया है कि राजमहल छोड़कर वह सम्राट गुरु वसिष्ट के आश्रम में जाकर किस तरह पर्णकुटी में रहे और ग्वाले की तरह राजा-रानी ने किस प्रकार आश्रम की नंदिनी गाय की सेवा की। जब कभी उस वर्णन को पढ़ता हूं, मुझे साबरमती-आश्रम की जमनाकुटीर में बसनेवाले बजाज-परिवार का स्मरण हो आता है। हमारे युग में सांस्कृतिक विकास का सेठजी का आश्रमवासी जीवन बिताने का अभ्यास करना, यह कम विशिष्ट घटना नहीं थी।

दिवंगत कमलनयन बजाज बड़े विनोदी थे। एक दिन उन्होंने बताया कि जब वर्धा-आश्रम में मुझे पिताजी ने भेजा तो वहांपर सवेरे के नाश्ते में अपने सामने दूध देखकर मैं चक्कर में पड़ गया। मैंने कहा, "यह दूध है ? दूध तो पीला होता है। यह सफेद दूध कहीं पिया जाता है ?" बड़ी मुश्किल से मैं समझ पाया कि मुझे घर पर तो रोज केसर डाला हुआ मीठा दूध ही मिलता था। यहां आश्रम में सादा दूध ही मिलेगा। इस घटना से अनुमान किया जा सकता है कि जानकीबहन ने अपने बालकों-सहित अपने जीवन में कितना भारी परिवर्तन कर दिया।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बाद में तो वह दिन आया जब आश्रम में मेरी माता के पास मदालसाबहन पुत्रीवत् आने-जाने लगीं। जमनालालजी का परिवार आश्रमवासियों का परिवार ही बन गया, यहांतक कि मेरे विवाह-संस्कार की विधि वर्धा में पूज्य गांधीजी और कस्तूरबा ने अपनी उपस्थिति में आशीर्वाद देकर करवाई। उस समय सारी वैधानिक क्रियाएं जानकीबहन ने स्वयं परिश्रम से संचालित कीं। गांधीजी ने मेरे माता-पिता को लिख दिया था कि गुजरात से इतनी दूर आने का रेलभाड़ा खर्चा करना उचित नहीं है। वहीं से आशीर्वाद दे देना। मैं और बा दोनों यहांपर हैं ही।

ऐसे अवसर पर जानकीबहन ने बड़ी घनिष्टता और आत्मीयता से मेरी माता का स्थान स्वयं स्फूर्ति से ले लिया। लग्न-मंडप में जाने से पहले, नई संशोधित विधि के अनुसार, कूप-सेवा, वृक्ष-सेवा, गोसेवा, कताई और गीता-पाठ के पंच यज्ञ का संचालन जानकीबहन से करवाया। कुएं पर कीच की सफाई में वह हमारे साथ रहीं और पुरोहित द्वारा संस्कार-विधि समाप्त होने पर नववधू को नये घर में बहुत अपनेपन से प्रवेश करवाया। नववधू ने संस्कार-विधि के समय भी किसी प्रकार का आभूषण नहीं पहना था। उसने अपने विद्यार्थी-जीवन से ही संकल्प-पूर्वक आभूषण परित्याग कर रखा था। जानकीबहन नववधू को लेकर बापूजी के पास पहुंच गईं और बापूजी से उन्होंने बलात् सम्मति प्राप्त की कि कम-से-कम हाथ में हाथकते सूत की बनी चूड़ी तो वधू को पहननी ही चाहिए। बापूजी ने अपनी सम्मति देने के साथ यह भी कहा कि जब गरीबी का जीवन जीना है तब सादगी घटे नहीं, यह ध्यान रखना।

धनी व्यक्ति अपने धन का स्वामी नहीं है, ट्रस्टी है—यह पाठ गांधीजी से सीखने और तदनुसार अपना जीवन बनाने में जानकीबहन ने जो यश पाया है, वह साधारण कोटि का नहीं, विरला है।

जीवन के उत्तरार्ध में अपनी संपत्ति गोसेवा के कार्य के लिए समर्पित कर देने का गांधीजी का सुझाव भी जानकीबहन ने समझ-बूझकर अपना लिया और संपत्ति के साथ-साथ अपनी सेवा भी गोसेवा-समिति को दी।

प्रायः दस वर्ष का प्रसंग है। आचार्य विनोबा की भूदान-पदयात्रा राजस्थान में चल रही थी। वहां के समाज में जमनालालजी और जानकीबहन का स्थान मूर्धन्य रहा है। एक बार आचार्य कृपालानीजी के एक व्याख्यान में कही हुई बात याद आ रही है। उन्होंने कहा था, प्रत्येक प्रदेश की संस्कृति और समाज में अपनी-अपनी मौलिकता रहती है। कवि रवीन्द्रनाथ ने बंगाल में जन्म लिया और जमनालाल बजाज ने राजस्थान में। राजस्थान में गुरुदेव जैसा कवि-सम्राट पैदा नहीं हो सकता और बंगाल में जमनालाल जैसा आदर्श व्यापारी पैदा नहीं हो सकता। भौगोलिक कलेवर एक ठोस बात है। दादा कृपालानी की इसी बात को ध्यान में रखकर कह सकते हैं कि जानकीदेवी जैसी पराक्रमशील, व्यवहार-चतुर और प्रबल अभिव्यक्ति का प्रकाश राजस्थान की भूमि द्वारा प्राप्त होता है। वहां के समाज का सहज नेतृत्व उनके हाथ में है।

ऐसी प्रतिष्ठित, ऐसी श्रीमान, जानकीबहन ग्रामीण-जीवन से ओत-प्रोत बनकर पदयात्रा कर रही थीं। यात्रियों के साथ ही सोना, नहाना, खाना चल रहा था। छोटा-सा बिस्तर और कातने की तकली, यह उनका सामान था। व्रतधारी आश्रमवासी के अपरिग्रहीपन को उन्होंने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संकल्प-पूर्वक अपनाया था और चिंतन उनका करुणा से भरा हुआ था।

विनोबा ग्रामदान, कूपदान, कृषि-साधन-दान, संपत्तिदान, बुद्धिदान आदि नये-नये दान का जाप जपते आगे-ही-आगे चल रहे थे और जानकीबहन अपने परिचय और प्रभाव से जगह-जगह कूपदान, संपत्तिदान आदि दिलवाती जाती थीं। यह इनकी सेवा-निष्ठा थी, संत-शक्ति थी। परंतु उनकी अपनी स्वतंत्र प्रतिभा भी काम कर रही थी। एक पड़ाव पर स्नानादि से निवृत्त होकर वह कुंए से लौट रही थीं और मैं उस ओर जा रहा था। मैंने प्रणाम किया। अपनी प्रसन्न मुद्रा में वह बोलीं, "क्या है, यह स्नान-पूजा है।" हमारे लोग पूजा में भी ज़रा-सी बुद्धि से काम नहीं लेते। बस, रिवाज को पकड़े रहते हैं। किस जमाने में हम लोग हैं, यह भी नहीं सोचते। मंदिरों में जो दीप जलाया जाता है, वह घी से क्यों जलाया जाय ? तेल क्या कम शुद्ध है ? और घी जला-जलाकर मंदिर की दीवार काली तक कर देते हैं। पूजा करो, मंत्र बोलो, आरती करो, सब ठीक है, परंतु जब गांव-गांव में गरीबी है, कइयों को अन्न भी नहीं मिल पाता, तब घी का ऐसा गलत उपयोग क्यों किया जाय ? मैं जहां जाती हूं, बड़े सेठों से भी कहती हूं कि बंद करो यह ठाकुरजी के सामने घी का दिया जलाना। तेल का जलाओ दिया, और ढोंग क्यों करते हो तुम ? पूजा के लिए जो घी पुजारी को देते हो, वह कहां सच्चा घी होता है ? घी के नाम से वनस्पति घी ही तो जलाते हो। वह तेल नहीं है तो क्या है ? मैंने तो अपनी पूजा में घी का दिया जलाना छोड़ ही दिया है, तेल का ही जलाती हूं।" ऐसा कहकर वह अपने काम पर चली गईं।

खादी की साड़ीवाली यह महिला किसी धनी परिवार की है, ऐसा आभास भी उनको देखने से नहीं होता था। किसी प्रकार की विद्वत्ता नहीं दीख रही थी, परंतु उनकी वाणी में तेज भरा हुआ था, कारुण्य मूर्तिमंत हो रहा था। समाज-हित का कितना गहन चिंतन स्वतंत्र रूप से वह कर रही हैं, यह प्रकट हो रहा था।

संपूर्ण मानव-समाज को उत्तरोत्तर ऊंची मानवीयता प्राप्त हो, इस दिशा में गांधीजी ने अपना सारा पुरुषार्थ केंद्रित कर रखा था। इसी ध्येय को लेकर उन्होंने जगह-जगह आश्रम चलाए और चलवाए। सामूहिक जीवन के विकास के इस गंगा-प्रवाह में बहुत सारे नर-नारी अवगाहन करने आये। हजारों ऐसे रहे, जिन्होंने आश्रमवासी न बनते हुए भी गांधीजी के सत्याग्रह आश्रम के साधनामय जीवन को अपनाया। मानव-जाति की इस दिशा में जो कुछ प्रगति हो पाई है, इसका लेखा-जोखा जब कभी कोई प्रतिभासम्पन्न इतिहासवेत्ता अंकित करेगा तब पहली पंक्ति में आनेवाले नामों में जिस प्रकार अहमदाबाद की दयापूर्ण, सेवा-परायण, यशस्वी अनसूयाबहन साराभाई का नाम रहेगा, उसी प्रकार उदारचेता, करुणामयी, क्रान्तिदूत जानकीबहन बजाज का भी नाम रहेगा।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समर्पित जीवन

जेठालाल जोषी

पूज्य बापू तथा पूज्य विनोबाजी की प्रवृत्तियों से परिचय रखनेवाला हर समाजसेवी व्यक्ति श्रीमती जानकीदेवी को अच्छी तरह जानता है। अब तो श्रीमती जानकीदेवी को 'माता-जी' के रूप में सभी सर्वोदयी कार्यकर्ता जानते ही नहीं, इसी 'माताजी' शब्द से उनका संबोधन करते हैं और उनका परिचय देते हैं।

श्रीमती जानकीदेवी ने बापू तथा उनके बाद विनोबाजी की सर्वोदयी प्रवृत्तियों को अपना समग्र जीवन अर्पित कर दिया है। पहले जैसे कस्तूरबा 'बा' शब्द से संबोधित की जाती थीं और पहचानी जाती थीं, इसी तरह आज श्रीमती जानकीदेवी 'माताजी' के पवित्र शब्द से पहचानी जाती हैं।

श्रीमती जानकीदेवी श्री जमनालालजी बजाज की अर्धांगिनी हैं। सेठजी की सभी राष्ट्रीय, सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक प्रवृत्तियों में श्रीमती जानकीदेवी का पूरा समर्थन तथा सक्रिय साथ रहा है।

प्रारंभ के दिनों में जमनालालजी बापू के साथ सत्याग्रहाश्रम, साबरमती में सपरिवार रहते थे। बापू सेठ श्री जमनालालजी को अपना पांचवां पुत्र मानते थे। बापू का वर्धा-सेवाग्राम जाने का मूल कारण भी तो जमनालालजी का आग्रह ही था।

मैं सन् १९२५ के दिसम्बर की चौथी तारीख को अहमदाबाद आया। उन दिनों बापू साबरमती सत्याग्रहाश्रम में निवास करते थे। उन दिनों हम युवकों के लिए साबरमती-सत्या-ग्रहाश्रम में बापू की प्रार्थना में जाने का क्रम रहा करता था और आश्रम में जमनालालजी से भेंट हो जाया करती थी।

सन् १९२६ की बात है। मैं वनिता विश्राम-महिला विद्यालय की तेरह बालाओं को लेकर आश्रम में बापू के दर्शनार्थ गया था! बापू हृदयकुंज में निवास करते थे। कस्तूरबा भी उसी मकान में रहती थीं। उन दिनों जमनालालजी 'नंदिनी' भवन में रहते थे। बाद में वह सपरिवार जमना-कुटीर में रहने चले गये थे। इस समय हम सबने बापू के दर्शन किये, कस्तूरबा ने इन बालाओं को खादी पहनने की सीख दी। सेठजी ने भी बापू की बातों को समझ-कर जीवन में अपनाने की सलाह दी। कु० मीराबहन से भी मिले। यहीं श्रीमती जानकीदेवी से भी शायद मिले थे!

बापू बाद में वर्धा चले गये। वर्धा हर राष्ट्रीय प्रवृत्ति का संगम-स्थान बन गया। मुझे राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के सदस्य की हैसियत से कई बार वहां जाना पड़ता है। प्रारंभ के दिनों में अर्थात् १९३७ से १९४६ के दिनों में वर्धा समिति के सदस्यों के लिए अतिथिगृह जमनालालजी की कोठी रहता था। यहां आतिथ्य का उत्तरदायित्व श्रीमती जानकीदेवी ही संभालती थीं, इसलिए उनसे भेंट हो जाती थी। वह आग्रहपूर्वक हर अतिथि की सुविधा का ध्यान रखते हुए आवश्यकतानुसार सूचनाएं सहयोगी कार्यकर्ताओं को देती थीं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एक प्रसंग याद आता है। समिति के कुछ मकान बन गये थे। इसलिए समिति के सदस्यों के ठहरने का प्रवंध समिति में ही करना चाहा था। श्रद्धेय पुरुषोत्तमदासजी टंडन समिति की बैठकों में उपस्थित रहते थे। श्रीमती जानकीदेवीजी को यह पता चला कि इस बार सदस्यों के ठहरने का प्रबंध किसी और स्थान पर किया जानेवाला है तो उन्होंने तुरन्त संदेशा भेजा कि समिति के सभी मेहमानों के ठहरने की व्यवस्था यथावत् उनके निवास-स्थान पर ही होगी। यह सौजन्यपूर्ण आत्मीयताभरा व्यवहार हमारे लिए प्रेरणादायी था।

समिति के अपने अतिथिगृह का निर्माण हो जाने के बाद समिति के अतिथिगृह में ठहरा करते थे।

श्रीमती जानकीदेवी अक्सर विनोबाजी के पवनार-आश्रम में रहा करती थीं। इन्होंने अपना जीवन विनोबाजी के सर्वोदयी काम के लिए अर्पण कर दिया है। मैं तथा भाई श्री कान्तिलाल वर्धा जाते तब कभी-कभी श्रीमती जानकीदेवी से मिलने जाते थे। एक बार उनसे मिलने गये। वह उन दिनों मैथी का प्रयोग कर रही थीं। उनके घुटनों में वात के कारण कुछ कष्ट था। माताजी ने बताया कि डाक्टरों के इंजेक्शनों की अपेक्षा यह मेरा मैथी का प्रयोग बड़ा कारगर है। वह प्रतिवर्ष मैथी का प्रयोग करती थीं। उनका मैथी का प्रयोग इस प्रकार है: प्रतिदिन पांच तोले मैथी, पांच तोले चावल इन दोनों की खिचड़ी पकाई जाती है। इस खिचड़ी में काजू, द्राक्ष, पिस्ता इत्यादि कुल चीजें डाल दी जाती हैं और घी भी। यह खिचड़ी सात दिन खानी पड़ती है। इन दिनों परहेज भी रखना पड़ता है, अर्थात् खिचड़ी खाई जाय। उन दिनों बिलकुल बंद कमरे में रहना होता है और खिचड़ी के अलावा दूसरा कोई पदार्थ नहीं खाया जाना चाहिए। इस प्रकार चौदह दिन परहेज रखना पड़ता है।

कभी-कभी माताजी गोपुरी में भी रहती हैं। गोपुरी में विनोबाजी का भी निवास रहा करता था। एक बार हम विनोबाजी के दर्शनार्थ गये। वहीं पर माताजी श्रीमती जानकीदेवी से भेंट हो गई। माताजी ने दर्द-भरी बात बताई कि आजकल लोग बापू की महत्वपूर्ण बातें ही भूलते जा रहे हैं। उन्होंने इन बातों की ओर विशेष ध्यान दिलाया : १. गोसंरक्षण २. मद्यनिषेध और ३. खादी। माताजी ने आग्रहपूर्वक कहा कि इस ओर बराबर ध्यान रखना चाहिए। एक बार जब गोपुरी में माताजी से मिलने गया, तो उन्होंने बताया कि आजकल की मंहगाई के कारण लोगों का चरित्र गिरता जा रहा है। मंहगाई की हद हो गई है। मंहगाई दूर किये बिना लोगों को न तो संतोष होगा, न उनकी जरूरतें पूरी हो सकेंगी।

एक और प्रसंग यहां याद आ रहा है। वर्धा समिति के प्रांगण में देशभर के हिन्दी के साहित्यकारों तथा गण्यमान्य हिंदी-सेवियों का सम्मेलन था। वर्धा समिति ने यह सम्मेलन इसलिए बुलाया था कि हिंदी के सब कर्णधार, विद्वान, साहित्यकार मिलकर हिंदी साहित्य सम्मेलन को मुकदमेबाजी से बचाकर उसको स्वस्थ स्थिति में लायें।

उस समय मैंने टंडनजी से कुछ निवेदन ज़रा उग्रता से किया था। उससे माताजी को कुछ लग गया और बाद में मुझसे कहा कि तुम बाबूजी से इस प्रकार झगड़ते हो? मेरी बात तो सही थी। इस प्रकार सम्मेलन की मुकदमेबाजी में फंस जाना पड़ा, यह मुझे बहुत बुरा लग रहा था। इसीसे ज़रा उग्रता से टंडनजी को निवेदन किया था।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीमती जानकीदेवी राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा के रजत जयंती समारोह की स्वागताध्यक्षा मनोनीत की गई थीं। उन्होंने इस उत्तरदायित्व को संभालने का कष्ट उठाया था।

श्रीमती जानकीदेवी श्री श्रीमन्नारायण के गुजरात के राज्यपाल नियुक्त होने पर कई बार अपनी पुत्री श्रीमती मदालसाबहन से तथा श्रीमन्जी से मिलने अहमदाबाद आया करती थीं। मैं दो-तीन बार उनसे राजभवन में मिला हूं। एक बार राजभवन में श्रीमद्भागवत के पारायण का आयोजन था। आचार्य थे श्रीयुत पंडित विष्णुदेवभाई। माताजी नियमित पारायण में बैठती थीं और बड़ी श्रद्धा से श्रीमद्भागवत की कथा सुनती थीं। एक अति करुण प्रसंग का यहां उल्लेख करना चाहता हूं। श्रीमती जानकीदेवी के बड़े पुत्र श्रीयुत कमलनयन बजाज का अहमदाबाद के राजभवन में अचानक हृदयगति बंद हो जाने से निधन हो गया। उस करुण अवसर पर हमें श्री कमलनयनजी का वसीयतनामा पढ़ने को मिला। उसमें उन्होंने अत्यंत वीतराग वृत्ति से कुटुंबी जनों को सलाह दी थी कि मेरी मृत्यु के कारण कोई मंगल कार्य न रोका जाय। मेरा शोक सिर्फ तीन दिन का ही रहे; मेरी देह का अग्निसंस्कार वहीं किया जाय, जहां मेरा देहावसान हुआ हो। इस प्रकार की मोहमुक्त बातों का निर्देश बताता है कि उनकी जीवन-शिक्षा उच्चकोटि के माता-पिता के संरक्षण में हुई थी। ऐसे सुपुत्र की माता श्रीमती जानकी-देवी जैसी ही माता हो सकती हैं। श्रीमती जानकीदेवी भारत की सभी साध्वी नारियों की पहली पंक्ति में बैठनेवाली उच्च तथा आदर्श महिला हैं।

मैं उनके प्रति अपनी हार्दिक अभ्यर्थना अर्पित करते हुए परम कृपालु परमात्मा से प्रार्थना करता हूं कि हम भारतीयों को इनके उज्ज्वल शील चरित्र से बहुत-कुछ सीखने का बल प्राप्त हो।

धुन की पक्की

रामेश्वरदयाल दुबे

वर्धा में 'माताजी' का अर्थ होता है—जानकीदेवी बजाज। वर्धा, सेवाग्राम, पवनार में विभिन्न रचनात्मक संस्थाएं हैं और इन संस्थाओं में सैकड़ों कार्यकर्ता हैं। इन सबके बीच जानकीदेवी बजाज 'माताजी' के नाम से पहचानी जाती हैं। सफेद खद्दर की साड़ी, हाथ में हरा झोला, पैर में पुरानी चप्पलें—बस यही माताजी की वेश-भूषा है। वर्धा में होनेवाली प्रायः प्रत्येक सभा में वह उपस्थित रहती हैं। चुपके-से आकर पीछे बैठ जाती हैं। उनपर निगाह पड़ते ही संयोजक कार्यकर्ता उन्हें आग्रहपूर्वक मंच पर ले जाते हैं। माताजी के हाथ तकली चलाने में व्यस्त रहते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पिछले चालीस वर्ष से बजाजवाड़ी-स्थित सेठ जमनालाल बजाज का एक बंगला राष्ट्रीय नेताओं का तथा भारत के विशिष्ट व्यक्तियों का स्थायी अतिथिगृह रहा है। आज भी यह क्रम चालू है।

स्व० सेठ जमनालालजी विनम्र मेजवान थे। नेताओं और विशिष्ट व्यक्तियों को प्रेमभरा आतिथ्य देने में उन्हें विशेष संतोष प्राप्त होता था। उसी परंपरा को माताजी अभी तक निभाती आ रही हैं। आये हुए मेहमान को, किस समय क्या चाहिए, इसकी चौकसी माताजी करती हैं। बजाजवाड़ी के अतिथिगृह में परोसा जानेवाला भोजन कोई विशेष भोजन नहीं होता। वह सादा, सात्विक, साधारण भोजन ही रहता है, परंतु उसमें आत्मीयता का रस मिला रहता है, इसलिए उसकी मिठास अनूठी होती है।

माताजी सभी मेहमानों की 'माताजी' बन जाती हैं। उनकी बातों में सीधा-सादा घरेलूपन रहता है। आये हुए लोग उनके निकट परिवार के ही लोग बन जाते हैं। वह जब अपने जीवन के पिछले प्रसंग सुनाने लगती हैं तब सुननेवालों को तो मज़ा आता ही है, उन्हें भी कम मज़ा नहीं आता।

पिछले प्रसंग सुनाने में माताजी को इतना आनन्द आता है कि एक ही प्रसंग को एक ही व्यक्ति को बार-बार सुना जाती हैं। गांधीजी के वर्धा आ जाने के बाद यात्रियों, पत्रकारों, नेताओं, कार्यकर्ताओं के आवागमन से सेठजी की बजाजवाड़ी सदा गुलजार रहती थी। आने-वाला कोई हो, सेठजी के अतिथिभवन का द्वार सदा खुला रहता था। मेहमानों की पूरी देखभाल का समुचित प्रबंध था। सन् १९३६ से लेकर सन् १९४५ तक मेहमानों की धूम मची रहती रही। इस अवधि में देश के प्रायः सभी नेताओं से माताजी का निकट से परिचय हुआ। माताजी को इस बात का पूरा ज्ञान हो चुका था कि किस नेता को भोजन में क्या चीज पसंद है।

अपनी स्मृति के सहारे वह आज भी बता देती हैं कि सरोजिनी नायडू को हरी मिर्च पसंद थी, राजाजी को रसम, मौलाना आजाद को मोटी रोटी और पंडित नेहरू को आलू। खानसाहब के लिए खिचड़ी में खौलता हुआ घी डालना जरूरी था और शंकरराव देव को भोजन के अंत में भात और छाछ मिलना ही चाहिए था।

बजाजवाड़ी के भीतरी बरामदे में नेतागण जमीन पर बैठकर भोजन करते थे। आमने-सामने दो पंगतें लगती थीं। भोजन के समय इन पंगतों में क्या-क्या रंगत रहती थी, उसकी न जाने कितनी रोचक घटनाएं माताजी से सुनी जा सकती हैं।

माताजी की स्कूली शिक्षा बहुत कम हुई है, यों कहना चाहिए हुई ही नहीं, किंतु अनुभव की पाठशाला का उनका अध्ययन गहरा है। सस्ता साहित्य मंडल से प्रकाशित उनकी पुस्तक 'मेरी जीवन-यात्रा' में यत्र-तत्र उनके अनुभव पाठकों के लिए उपयोगी हो सकते हैं।

समय-समय पर उनके मन पर एक धुन सवार हो जाती है। तीन-चार वर्ष पहले जब उन्हें यह ज्ञात हुआ कि कॉलेज में पढ़नेवाली होम साइंस विषय लेनेवाली लड़कियों को उनकी इच्छा न रखते हुए भी अंडे से बननेवाले खाद्य-पदार्थ बनाने पड़ते हैं, तो उन्हें अच्छा न लगा। माताजी दिन-रात इसीकी चर्चा करने लगीं। भले कोई किसी काम से उनके पास आया हो, माताजी कालेज के गृह-विज्ञानवाले विषय पर अवश्य चर्चा करतीं। इतना ही नहीं, उन्होंने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विश्वविद्यालय के अधिकारियों को भी पत्र लिखवाये, प्रयत्न किया। कहना न होगा कि माताजी अपनी धुन की पक्की हैं।

अभी हाल की घटना है। पता नहीं, किस घटना से उनके मन में यह विचार आया कि आजकल नेताओं को फूल की मालाओं से जो लाद दिया जाता है, वह उचित नहीं। यह तो फूलों का दुरुपयोग है। बस, माताजी की दिन-रात की चर्चा का यह विषय बन गया। उस दिन प्रांगण में एक विशिष्ट व्यक्ति का सम्मान था। माताजी की ओर से दो बार टेलीफोन आया और उसमें यही आदेश था कि फूल मालाएं न पहनाई जायं। सूत की गुंडी की माला पहनाना उचित होगा। दो बार कहकर ही माताजी को संतोष न हुआ। वह दूसरे दिन प्रातःकाल घर पर ही आ गईं और उसी फूलमालावाली बात को दुहराया-तिहराया ही नहीं, चौहराया भी। जब मैंने कहा कि मेरे पास उतनी गुंडी नहीं हैं, तो उन्होंने कहा, "किसी आदमी को भेज दो, मेरे यहां से गुंडी ले आवेगा।"

माताजी किसी विषय को कितनी दृढ़ता से पकड़ती हैं, इसका यह प्रमाण है।

माताजी अपने 'विशारद परीक्षा' फेल होने की घटना को बड़े गौरव के साथ सुनाया करती हैं। उनके शब्द होते हैं—"दुबेजी, आपको मालूम है, मैं विशारद फेल हूं। कहो तो तुम्हारी (राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की) परीक्षाओं में भी बैठकर फेल होकर दिखा दूं।"

बात यह हुई थी कि स्व० जमनालाल बजाज चाहते थे कि उनके बच्चे हिंदी का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लें, सम्मेलन की परीक्षाएं पास कर लें। इसके लिए श्री लोढ़ेजी को शिक्षक (ट्यूटर) के रूप में नियुक्त किया। बच्चों की हिंदी-पढ़ाई शुरू हुई। बच्चे पढ़ने में अधिक रुचि लें, इस उद्देश्य से माता जानकीदेवी ने भी 'विशारद' का आवेदन-पत्र भर दिया। घर-गृहस्थी के काम में फंसी रहनेवाली महिला पास हो जाती, तो आश्चर्य होता। माताजी फेल हो गईं और जो फेल हो गईं सो फेल ही बनी रहीं। माताजी बड़े गौरव से कहा करती हैं, "'विशारद' परीक्षा पास कर लेनेवाले अपने को केवल 'विशारद' कहा करते हैं, मैं तो 'विशारद फेल' हूं। मेरी डिगरी उनसे ज्यादा बड़ी है।"

माताजी विनम्रता की मूर्त्ति हैं। उनके रहन-सहन, बातचीत को देख-सुनकर कोई यह अनुमान ही नहीं कर सकता कि वह एक उच्च धनी परिवार की महिला हैं।

बजाज-परिवार के ही लोग नहीं, वर्धा के नागरिक और विभिन्न संस्थाओं के कार्यकर्ता आज भी माताजी से स्नेह पाकर संतोष अनुभव करते हैं और भविष्य में करते रहना चाहते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उनके दुर्गुण दीखनेवाले गुण

यशपाल जैन

जानकीदेवीजी को हम लोग 'मैयाजी' कहा करते हैं। उनसे पहली बार कब और कहां मिलना हुआ, अब याद नहीं आता है, लेकिन इतना ध्यान है कि उनकी पहली छाप मेरे मन पर अच्छी नहीं पड़ी थी। ऐसा अनुभव हुआ था कि उन्हें ढंग से बोलना नहीं आता। जो दिल में आता है, अनगढ़ शब्दों में कह देती हैं। दूसरे, एक ही बात को बार-बार कहती हैं। यह नहीं सोचतीं कि वह जो कह रही हैं, उसमें सुननेवाला दिलचस्पी ले रहा है या नहीं। तीसरे, यह कि वह बहुत ही कंजूस हैं।

लेकिन बाद में ज्यों-ज्यों उनके संपर्क में आता गया, मैंने पाया कि जिन्हें मैं उनके दुर्गुण मान बैठा था, वे उनकी ऐसी विशेषताएं हैं, जिन्होंने उनके व्यक्तित्व को असामान्य विशिष्टता प्रदान की है। आज अपने समाज में हम ऐसे व्यक्तियों का प्राधान्य पाते हैं, जिनकी बातों में कृत्रिम माधुर्य अधिक, वास्तविक हार्दिकता कम होती है। कहा जा सकता है कि वे उन भावनाओं को व्यक्त करते हैं, जो उनके दिल से नहीं उठतीं। जो दिल से उठती हैं, उन्हें वे कहते नहीं। यही कारण है कि उन्हें चुने हुए शब्द बोलने के लिए विवश होना पड़ता है। मैयाजी के साथ ऐसी कोई विवशता नहीं है। उनके दिल में जो कुछ आता है, बिना लाग-लपेट के कह देती हैं। उन्हें इस बात की चिंता नहीं रहती कि उनके शब्दों से कोई नाराज होगा या खुश। उनसे मिलने के जाने कितने अवसर प्राप्त हुए हैं, बंबई में कई बार हम लोग साथ रहे हैं, और विनोबाजी के भूदान-यज्ञ के सिलसिले में साथ-साथ पैदल-यात्राएं भी की हैं। पर मैयाजी की वाणी में मैंने कभी शब्दों का आडंबर नहीं पाया।

कभी-कभी उनके हृदय की अकृत्रिमता बड़ा रोचक रूप धारण कर लेती है। एक बार वह दिल्ली आईं हुईं थीं। कोई विशेष अवसर था। उन्हें कुछ लोगों को भोजन कराना था। उन्होंने फोन किया। पूछा, "तुम कौन जात हो ?"

मैंने कहा, "हरिजन।"

बोलीं, "नहीं, ठीक बताओ।"

मैंने गंभीर भाव से कहा, "मैं सच कह रहा हूं।"

"अच्छा, तुम्हारी औरत ?" उन्होंने पूछा।

मैंने कहा, "हरिजन की औरत हरिजन। मेरी स्त्री भी हरिजन है।"

बोलीं, "ठीक-ठीक क्यों नहीं बताते ?"

मैंने कहा, "पहले आप यह तो बताइये कि यह सब क्यों पूछ रही हैं ?"

बोलीं, "खाना खिलाना चाहती हूं।"

"यह पहले ही क्यों नहीं बता दिया ?" मैंने हँसते हुए कहा, "आप ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहती हैं। मैं भी कर्म से ब्राह्मण हूं।"

बोलीं, "अच्छा-अच्छा, खाना खाने आ जाओ। अपनी औरत को भी साथ ले आना।"

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इसके कुछ समय बाद श्रद्धेय दासाहब (श्रीहरिभाऊजी उपाध्याय) ने किसी उत्सव के समय हम लोगों को हटूंडी बुलाया। मैयाजी भी वहां गईं। एक प्रमुख हरिजन मंत्री आये। जब हम भोजन करने बैठे तो मंत्री को मेज-कुर्सी दी गई। हम लोग जमीन पर बैठे। मैयाजी मेरे बराबर थीं। मुझे पुराना प्रसंग याद आ गया। मैंने कहा, "मैयाजी, आपने देखा—दासाहब ने कितना पक्षपात किया है। हरिजन को ऊंचा स्थान दिया है, हम लोगों को नीचा !"

मैयाजी मेरे विनोद को नहीं समझीं। बोलीं, "तुम्हें मालूम नहीं है, एक दुर्घटना में इन मंत्रीजी के पैर में चोट आ गई थी। इसलिए वह नीचे नहीं बैठ सकते।"

मैंने अपनी हँसी को दबाते हुए कहा, "मैं दासाहब को खूब जानता हूं। उन्होंने ऐसा जानबूझकर किया है। मैं तो इस अन्याय को सहन नहीं कर सकता !"

बोलीं, "तुम कैसी बात करते हो ? हरिभाऊजी कभी ऐसा भेदभाव नहीं करते।"

फिर तो ऐसी हँसी फूटी कि मुंह पर रूमाल रखकर मुझे जबर्दस्ती उसे रोकना पड़ा।

एक बार सर्वोदय-सम्मेलन में मैयाजी ने स्त्रियों से अपील की कि वे भूदान के लिए अपने आभूषण दान में दे दें। विनोबाजी मंच पर खामोश बैठे थे। किसी बहन ने ऊपर आकर उनकी अंगुली में अपनी अंगूठी पहना दी और दूसरी ने अपने गले का मंगलसूत्र उतारकर उनके गले में डाल दिया। मैं सामने ही बैठा था। थोड़ी देर बाद मुझसे मिलीं तो बोलीं, "इन मरी औरतों को देखो, विनोबाजी को अंगूठी और मंगलसूत्र पहना दिया। अरे, उन्होंने कौन ब्याह किया है, जो इन चीजों के महत्व को जानें !"

इतना कहकर वह हँस पड़ीं। मैं उनकी ओर देखता रह गया।

इस प्रकार बीसियों अवसरों पर मैंने देखा है कि वह बनावटी भाषा बोल नहीं सकतीं। मैं मानता हूं कि ऐसी भाषा उस हृदय से ही निकल सकती है, जिसमें कलुष न हो और जो किसी के प्रति दुर्भावना न रखता हो।

उनकी एक ही बात को बार-बार कहने की आदत से शुरू में मुझे बड़ा अटपटा लगा। जिन दिनों वह कूपदान के कार्य में संलग्न थीं, उनकी एक ही रट थी, "इतने रुपये इकट्ठे हो गये हैं। महावीरप्रसादजी (पोद्दार) से कहो कि बिहार में कुएं खुदवा दें।" बार-बार एक ही बात सुनते-सुनते मैं तंग आ गया। मैंने कहा, "आप ही उनसे क्यों नहीं कहतीं ?"

बोलीं, "वह मेरी सुनते हैं ?"

मैंने कहा, "जब आपकी नहीं सुनते तो मेरी कैसे सुन लेंगे !"

इसका उनपर कोई असर नहीं हुआ। घुमा-फिराकर फिर वही बात आ गई। मैंने कहा, "मैयाजी, आपके पास रुपया है, तो उससे कोई अच्छा काम कीजिये। उसे कुएं में क्यों डालती हैं ?"

मैयाजी की वह रट जाने कबतक चलती रही। सोते-जागते, उठते-बैठते, उसीके सपने उन्हें आते रहे।

एक बार वर्धा में बोलीं, "हाय मैया, गजब हो गया !"

मैंने पूछा, "क्या हुआ ?"

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बोलीं, "यहां कालेज के पास मुर्गीपालन का काम शुरू होनेवाला है। लड़के-लड़कियां अंडे खायेंगे।"

मैंने कहा, "आप कालेज के अधिकारियों से बात कीजिये।"

बोलीं, "यह तो सरकार की ओर से हो रहा है। सरकार से कहना चाहिए। तुम दिल्ली में हो। वहां सरकार से कहो, ऐसा तो नहीं होना चाहिए।"

एक दिन तक हर घड़ी उनके मुंह पर यही बात रही।

एक बार दिल्ली आईं। फोन किया, "कलकत्ता में अच्छी-से-अच्छी गायें कटती हैं। उसे कैसे रोका जाय। मदालसा वहां जा रही है। विनोबाजी बड़े दुखी हैं।"

मैंने कहा, "मैयाजी, आज देश में हवा ही कुछ ऐसी चल रही है। आप गाय की बात कहती हैं। आज तो आदमी आदमी को खाये जा रहा है। चीजों में मिलावट का मतलब क्या है?"

"सो तो ठीक है।" वह बोलीं, "लेकिन अच्छी गायों की तो रक्षा होनी ही चाहिए।"

उन्होंने इस बारे में दर्जनों लोगों को फोन किया, सैकड़ों से चर्चा की।

आखिर ऐसी बात क्या है, जो वह एक ही चीज के इतने पीछे पड़ जाती हैं? लोग ऊब जाते हैं, पर वह नहीं थकतीं। इसका एक ही कारण है और वह यह कि समाज और देश के कल्याण के लिए उनमें असीम लगन है। लोकहित की जो भी बात उनके मन में उठती है, उनका हृदय और मस्तिष्क उससे आक्रांत हो जाता है। यदि जन-कल्याण को चोट पहुंचानेवाली कोई बुराई है तो उसका निराकरण होना चाहिए, यदि जनता की भलाई की कोई बात है तो उसको मूर्त रूप मिलना चाहिए, इस चीज की उत्कटता उन्हें चैन नहीं लेने देती। मैंने देखा है कि यदि बात पार नहीं पड़ती तो वह बड़ी वेदना अनुभव करती हैं और अपनी लाचारी को अंत में मन मारकर सहन कर लेती हैं।

उनकी कंजूसी कुछ समय तक बड़ी अखरी, पर बाद में मैंने देखा कि उन्होंने अपनी इच्छाओं को बेहद सीमित कर लिया है। अपरिग्रह का पाठ पढ़ना है, तो कोई उनके जीवन से पढ़ सकता है। उनके सामान को देखकर लगता है कि वह जीवन के सारे वैभवों को त्याग चुकी हैं। उनके परिवार में किसी चीज का अभाव नहीं है, पर वह जानती हैं कि इच्छाएं करो तो उनका अंत नहीं होता और एक बार परिग्रह के चक्कर में पड़ो तो मकड़ी के जाले की तरह उसमें फंसते जाते हैं। अपने पति के जाने के बाद वह स्वेच्छा से सबकुछ त्याग कर अकिंचन बनीं। वह नहीं चाहतीं कि समाज में एक देने और दूसरा लेने की स्थिति में रहे। उनके सामने बापू का आदर्श है।

उनकी कंजूसी का मुझे बड़ा विचित्र अनुभव हुआ है। मैयाजी के थैले में आंवले के टुकड़े रहते हैं। जब साथ होती हैं तो मैं बार-बार आंवलों की मांग करता रहता हूं। कभी वह दो-चार छोटे-छोटे टुकड़े दे देती हैं, कभी टाल जाती हैं। पर जब मैं पिछली बार अफ्रीका जाते हुए एक दिन उन लोगों के साथ बंबई में ठहरा तो चलते समय देखता क्या हूं, मैयाजी ने प्लास्टिक की एक थैली में आंवले भर रखे हैं। उस थैली को मेरी ओर बढ़ाते हुए बोलीं, "यह लो, सफर में काम आवेंगे।"

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मेरी आंखें डबडबा आईं। जिसे मैं उनकी कंजूसी मान बैठा था, वह वास्तव में कंजूसी नहीं है, वस्तुओं को अपव्यय से बचाने और उनका सदुपयोग करने की वृत्ति है। दूसरे, वह अपने पर इतना कम खर्च करने का प्रयत्न करती हैं कि उसमें कंजूसी की झलक दिखाई देने लगती है।

मैयाजी की ये विशेषताएं आज के युग में दुर्लभ हैं। भौतिकता के उपासक मानव के लिए आज, जबकि वह मुख्यत: अपने लिए जीता है, मूल्य कुछ और ही हो गये हैं। इसीसे आज चारों ओर अशांति और त्रास है। समाज का नव-निर्माण मानवीय मूल्यों के आधार पर हो, यह मैयाजी की हार्दिक अभिलाषा है और उनके जीवन की उपरोक्त विशेषताएं उसी शिक्षा का साकार प्रयास हैं।

मैयाजी को दीर्घायु मिले, वह स्वस्थ रहें और उनके स्वप्न उनके जीवन-काल में ही चरितार्थ हों, ऐसी मेरी कामना और प्रभु से प्रार्थना है।

अंतर्मुखी क्रांति की प्रतीक

जमनालाल जैन

सन् १९५३ या ५४ की बात है। बातों-बातों में चर्चा चली कि माताजी (श्रीमती जानकीदेवी बजाज) की जीवन-कथा लिखी जानी चाहिए। श्री रिखभदासजी रांका ने माताजी से बात की। लिखने का काम मेरे जिम्मे रहा।

शुरू-शुरू में माताजी के मुंह से दो-चार घटनाएं सुनीं, बड़ी अच्छी लगीं। मुझे उनमें सहज मानवीय स्पर्श का अनुभव हुआ। लगा कि यह चीज पाठकों तक पहुंचनी ही चाहिए। अब यह सवाल था कि यह जीवन-यात्रा लिखी किस तरह जाय। मेरा विचार था कि जीवन की घटनाओं में तारीखों के क्रम को कोई विशेष महत्त्व नहीं दिया जाना चाहिए। जीवन-कथा इतिहास नहीं होती और जीवन तारीखों के अनुसार ढलता भी नहीं है। जीवन की यात्रा पारिवारिक संस्कारों अथवा परंपरा के अनुसार चलती है। घटनाओं का सिलसिला इस तरह बैठाया जाय कि किसी एक भावना का, संस्कार का विकास-क्रम ठीक समझ में आ जाय। मतलब यह कि चार वर्ष की उम्र में अगर कोई घटना छोटे-से रूप में घटी है, तो उस प्रकार की घटनाओं का सिलसिला अबतक कैसे-कैसे चलता गया है, इसका दर्शन होना चाहिए। इससे जीवन-संस्कार को समझने में मदद होगी। जीवन में गुणों के विकास की प्रगति अथवा उतार-चढ़ाव को समझने में, वृत्ति को समझने में मदद मिलती है। जीवन-कथा में हम घटनाओं को नहीं, व्यक्तित्व को समझना चाहते हैं। मेरा यह विचार सबको पसन्द आया।

लेकिन इस प्रकार लिखना आसान नहीं था। यह तो एक-एक घटना के साथ जीवन-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मंथन की बात थी। माताजी एक ही घटना को बार-बार स्मृति के अनुसार विभिन्न ढंग से सुनाती थीं और मुझे बार-बार उसमें संशोधन करना पड़ता था। इसमें भी उनका एक आग्रह तो बड़ा विचित्र था। वह चाहती थीं कि उनकी पुस्तक में 'नहीं' शब्द को टालना ही चाहिए। भाषा में 'नहीं' शब्द का अपना स्थान और महत्त्व है, उसकी उपयोगिता है। लेकिन मैं कैसे समझाता कि कहीं-कहीं इस शब्द के बिना भाव को व्यक्त करने में कितनी कठिनाई होती है। खैर, सिलसिला शुरू हो गया।

माताजी रोज बजाजवाड़ी से रामनगर तक कभी पैदल तो कभी तांगे में आती थीं। ३-४ महीने तक यह सिलसिला चला। 'मेरी जीवन-यात्रा' के नाम से यह पुस्तक 'सस्ता साहित्य मंडल' से प्रकाशित हुई।

माताजी की जीवन-यात्रा राजमार्ग की यात्रा नहीं है। इस यात्रा के प्राण-तत्त्व सेठ जमनालालजी बजाज थे। उनकी जीवन-संगिनी होने के कारण माताजी को भी जमनालालजी के साथ-साथ अनेक उतार-चढ़ावों से गुजरना पड़ा है। अपने मानसिक संस्कारों के साथ जूझना पड़ा है और कांटों की राह अपनानी पड़ी है। इस पुस्तक में माताजी ने अपने मानसिक संघर्ष, विचार तथा वृत्तियों का घटनाओं के आधार पर जो विश्लेषण किया है, वह बड़ा ही मार्मिक है। एक सामान्य महिला को, संपन्न परिवार में, वैभव में, आने के बाद किस तरह अपनेको ढालना पड़ा तथा बाद में एकाएक किस तरह इस वैभव के बीच भी कमल की तरह निर्लिप्त होकर सादगी की तरफ, मलमल से खादी की तरफ, रचनात्मक कार्य की तरफ जाना पड़ा, यह सब एक भारतीय नारी की सचमुच बड़ी कठोर यात्रा है।

प्रत्येक व्यक्ति का जीवन अनेक अन्तर्विरोधों का समुच्चय होता है। माताजी भी इसकी अपवाद नहीं हैं। भावुक होकर भी वह निर्भय हैं।

बापू और विनोबा जैसे महापुरुषों की संगति के कारण उनमें एक ऐसी दृढ़ता आ गई कि उन्होंने अपनेको देश की सेवा में खपा दिया। जमनालालजी ने इसमें उनकी मदद अवश्य की, लेकिन माताजी के व्यक्तित्व का स्वतंत्र विकास एक अनोखी विशेषता है। तभी तो सेठ-जी के अवसान के बाद वह अपनी सारी संपत्ति गोसेवा के लिए अर्पित कर सकीं। उनका भग-वान पर बड़ा विश्वास है। उनको इसका बड़ा गर्व है कि वह बजाज-परिवार में आईं और उन्हें देश की सेवा का मौका मिला। माताजी के देखते-देखते सेठजी गये, महादेवभाई गये, बा गईं, बापू गये और अन्त में उनके ज्येष्ठ पुत्र कमलनयनजी भी चले गये। इतनी बड़ी-बड़ी सभी व्यथाओं को उन्होंने जिस दृढ़ता से झेला है, उसे देख-समझकर भगवान में उनके विश्वास की गहराई की कुछ प्रतीति हो सकती है।

सवाल उठ सकता है कि उन्होंने नारी-जागरण के इस युग में क्रांति का कितना साथ दिया ? माताजी का जीवन समर्पित जीवन रहा है, विद्रोही नहीं। इस समर्पित जीवन की साधना में उन्हें अपने से जो संघर्ष करना पड़ा, उसका विश्लेषण कैसे किया जा सकता है ! उनकी क्रांति अन्तर्मुखी रही है और इस अन्तर्मुखता ने उनको मातृत्व की महानता तक पहुंचा दिया है।

मुझे माताजी का स्नेह और वात्सल्य बराबर मिलता रहा है। जब भी उनसे भेंट हो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जाती है, परिवार के समाचार पूछती हैं। उनकी 'जीवन-यात्रा' पुस्तक के वहाने उनकी विशेषताओं, भावनाओं, संस्कारों का जो अंतरंग दर्शन हुआ, वह मेरे लिए वड़ा ही मूल्यवान सिद्ध हुआ है।

कुछ न भूलनेवाली घटनाएं

उमाशंकर शुक्ल

माताजी को 'पद्मविभूषण' की उपाधि मिली थी। मैं उनके पास उनका अभिनंदन करने पहुंचा और कहा कि आप इस प्रसंग पर कुछ कहिये, तो वह वोलीं, "मैं क्या कहूं, कुछ समझ में नहीं आता! और यह देखिये, मेरे पास देश के कोने-कोने से ढेर सारे पत्र आ रहे हैं। मैं किसीको जवाव नहीं दे रही हूं।" मैंने कहा, "ऐसा क्यों? आपको जवाव देना ही चाहिए," तो मुस्कराकर वोलीं, "मैं तो हमेशा घूमती रहती हूं। जहां-जहां जाऊंगी, वहां-वहां के लोगों को मिलकर उनके पत्रों के लिए धन्यवाद दे दूंगी।" इतना कहकर वह हँसने लगीं। उनकी दृष्टि में 'पद्मविभूषण' की उपाधि का कोई विशेष महत्त्व न था।

० ० ०

माताजी अधिक पढ़ी-लिखी नहीं हैं। लेकिन वातें वड़े पते की कहती हैं। उनके अनेक व्याख्यान सुनने को मिले। मैंने एक दिन पूछ ही लिया कि माताजी, आप इतना अच्छा व्याख्यान कैसे दे लेती हैं? उन्होंने उत्तर दिया, "सत्संगति का असर है।" गांधीजी जैसे महान नेताओं से लेकर छोटे-छोटे नेताओं तक उनका संपर्क रहा है। सभी नेताओं की मनोरंजक वातों का उनके पास भण्डार है। जमनालालजी का नाम वल्लभभाई पटेल ने 'शादीलाल' कैसे रखा, यह वात माताजी ने ही वताई थी और तभी से वह वहुत प्रचलित हुई।

० ० ०

जमनालालजी के वंगले के सामने एक पुराना तालाव है। एक दिन माताजी के ध्यान में आया कि तालाव का जीर्णोद्धार कराना चाहिए। तालाव कमेटी वन गई। मैं उसका सचिव वन गया और भाई गंगाविसनजी वजाज वने उसके अध्यक्ष। माताजी ने जीर्णोद्धार के लिए चंदा इकट्ठा किया और उसका पाई-पाई का हिसाव रखा। खूव काम चला। वड़े-वड़े नेताओं से उन्होंने तालाव की खुदाई के लिए कुदाली चलवा ली। रफी अहमद किदवई के हाथों उसके जीर्णोद्धार का आरंभ कराया। कुमारप्पाजी, जाजूजी, मशरूवालाजी, श्रीमन्जी आदि सवसे तालाव खुदवाया गया। माताजी स्वयं भी कुदाली चलाती थीं। वह काम काफी दिनों तक चला।

० ० ०

विनोवाजी से माताजी उमर में दो-तीन साल वड़ी हैं और इसलिए वह उनसे विनोद

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भी खूब करती हैं। उनके साथ वह भूदान-यात्रा में कुछ समय तक पैदल भी घूमी हैं। एक बार विनोबाजी ने उनसे कहा कि विष्णु सहस्रनाम की तरह आप एक हजार ऐसे व्यक्तियों के नाम उनके संक्षिप्त परिचय के साथ लिखें, जिनसे आपका संबंध आया हो। माताजी ने करीव एक साल में वह सूची पूरी कर दी और विनोबाजी ने उसको देखकर प्रसन्नता प्रकट की। उसका नाम उन्होंने रख दिया, 'जानकी सहस्रनाम'। जिस-जिससे उनका परिचय जीवन-काल में आया, उन सबके नाम उसमें है। विनोबाजी के जन्म-दिवस पर वह 'जानकी सहस्रनाम' उनको भेंट किया गया।

० ० ०

आचार्य श्रीमन्नारायणजी की साठवीं वर्षगांठ पर मैंने एक अभिनंदन-ग्रंथ कुछ महीनों पहले तैयार किया। राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के प्रांगण में वह समर्पित किया जानेवाला था। माताजी ने मुझे तीन-चार दिन पहले बुलवाया और कहा, "आप लोग श्रीमन्‌जी को सूत के हार अर्पण करें। फूलों के हार में पैसे व्यर्थ खर्च न करें।" हमने वैसा ही किया। माताजी फिजूल-खर्ची से स्वयं बचती हैं और दूसरों को भी बचाती हैं। मोटर-रिक्शे में बैठने की बजाय वह पैदल चलना पसंद करती हैं, दूर जाना हो तो बात दूसरी है। अपने सुख के लिए वह दूसरों को कष्ट पहुंचाना नहीं चाहतीं।

० ० ०

माताजी 'अखिल भारत गोसेवा संघ' की अध्यक्षा रह चुकी हैं और गायों के प्रति उनके मन में बड़ी आस्था है। वर्धा में गाय के दूध की नदियां बहें, इसके लिए वह बहुत ही प्रयत्नशील रहीं। गोरस भंडार की उन्नति के लिए उन्होंने बहुत ही परिश्रम किया। गाय के दूध-घी का व्रत लिया है और गायों के विकास के लिए वह अभी भी जहां जाती हैं, प्रचार करती रहती हैं।

० ० ०

माताजी का जीवन सेवा, त्याग और साधना का त्रिवेणी-संगम है। वह किसीपर नाराज होती हैं, लेकिन उनकी नाराजी अस्थायी होती है। थोड़ी ही देर बाद वह उसे पुचकार लेती हैं और खूब प्यार करती हैं। मेरा बजाज-परिवार से चालीस वर्ष पुराना संबंध है। माताजी का हृदय बहुत ही विशाल है। भगवान उन्हें शतंजीवी करें।

मां ने क्या पाया, क्या खोया ?

रामकृष्ण बजाज

[२६ दिसम्बर, १९७२ को श्री रामकृष्ण ने ब्रह्म-विद्या-मंदिर, पवनार में विनोबाजी से भेंट की और अपनी माताजी (श्रीमती जानकीदेवीजी) को ध्यान में रखकर कुछ प्रश्न पूछे। ये प्रश्नोत्तर बड़े रोचक और उद्बोधक हैं। उन्हें यहां दिया जा रहा है।—संपादक]

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रश्न : महिला-विकास के लिए पुरुषों के समान अधिकारों हेतु आन्दोलन अधिक उपयोगी है अथवा सेवा और समर्पण का वह मार्ग, जिसे कस्तूरवा और मां ने अपनाया ?

उत्तर : मैं सेवा और समर्पण का मार्ग पसंद करता हूं, पहला नहीं। पुरुषों के साथ समान अधिकार चाहिए, लेकिन किस बात में ? पुरुष बीड़ी पीता है तो क्या स्त्री भी बीड़ी पीये ? इसलिए पुरुष के समान अधिकार स्त्री का नहीं होना चाहिए। पुरुषों से बहुत बड़ा अधिकार है उनका। इसलिए सेवा और समर्पण मैं मानता हूं।

प्रश्न : सेवा और समर्पण से वा ने और मां ने क्या पाया और क्या खोया ?

उत्तर : मां से ही पूछो। मेरी दृष्टि से तो संतोष पाया और अभिमान खोया।

प्रश्न : बड़े-से-बड़ा त्याग सहज में करनेवाली मां छोटी-छोटी बातों में उलझ जाती है। उसका कारण क्या है ?

उत्तर : (हँसकर) यह आदत तो यहां भोजन करने से ही जायगी। छोटी-छोटी बातों को महत्व देना बापू ने भी सिखाया और जमनालालजी की मां ने भी इन्हें सिखाया। जमनालाल-जी की मां अपने जो बाल निकलते थे, उनकी रस्सी बनाकर चरखे को माल लगाती थीं। उस चरखे से जो सूत निकलता था उसका कपड़ा हमें मिलता था। आजकल बाल अमेरिकावाले चाहते हैं और उसके बदले में डालर देते हैं।

प्रश्न : मां ने धुन में कई काम इतनी तन्मयता से किये कि वह अपने-आपको भूल जाती है, खाना-पीना, शरीर या परिवार तक का ध्यान नहीं रहता। यह धुन बनी कैसे रहे ?

उत्तर : मां की धुन कैसे बनी रहे, यह सवाल बेटा पूछता है। (हँसी) मां की धुन है वह अच्छी है, बुरी नहीं। तुम पूछते हो, इसका कारण यह है कि तुम मारवाड़ी हो और यह मालवी है। मारवाड़ी और मालवी में इतना फरक है (हँसी)। यह शरीर को भूल जाती है, फिर भी शरीर मजबूत है और (रामकृष्ण की ओर इशारा करके) ये लोग शरीर को याद रखते हैं, फिर भी इनका शरीर खराब है।

प्रश्न : मां को ८० वर्ष पूरे होने जा रहे हैं। अब उसके लिए क्या करना श्रेयस्कर होगा ? वह कहती है, निवृत्ति में मन नहीं लगता। कौन-सी प्रवृत्ति श्रेयस्कर होगी, जो वह वर्धा में या आपके पास करे ?

उत्तर : निवृत्ति में मन लगता नहीं। कुछ-न-कुछ प्रवृत्ति चाहिए। इसीलिए बाबा ने सफाई का काम शुरू किया। थोड़ा-थोड़ा कचरा इकट्ठा होता है। (माताजी से) आपकी माला चलती है कि नहीं ? लेकिन कबीरदास ने सूचना दे रखी है : "माला तो कर में फिरै। जीभ फिरै मुख मांही। मनुआ तो चहुं दिस फिरे। ये तो सुमिरन नाहीं ॥" आपका मनुआ दिल्ली—उमा के पास, अहमदाबाद—मदालसा के पास जाता होगा। कहां-कहां जाता है, लिख रखना। आपके लिए एक प्रवृत्ति है लक्ष्मीनारायण मंदिर, दूसरी प्रवृत्ति है सेवाग्राम, तीसरी प्रवृति है शांति कुटी, चौथी प्रवृत्ति है महिलाश्रम, पांचवीं प्रवृत्ति है, पवनार-ब्रह्म-विद्या मंदिर। इन पांचों जगह जाना, खुशहाल पूछना, बीमारों को सलाह देना, प्राकृतिक उपचार लोगों को सिखाना।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रश्न : आपको मां से इतना प्रेम क्यों है ?

उत्तर : मां को ही पूछना चाहिए। (हँसी) हमारा प्रेम है, क्योंकि मां निर्वैर है। माताजी को वैर भी किसीसे नहीं और लगाव भी किसीसे नहीं। कमलनयन गया तो माताजी ने कहा, रोना क्या ? अच्छा हुआ। एक घंटे-भर में मर गया, अच्छा ही हुआ। यह माताजी की अनासक्ति है, नहीं तो पुत्र के वियोग के कारण माताएं वेहाल हो जाती हैं।

प्रश्न : मां ने क्या हासिल किया ?

उत्तर : (माताजी से पूछते हुए) कुछ हासिल हुआ क्या ? (माताजी ने कहा—"जीवन-मुक्ति, ब्रह्माण्ड हासिल हुआ।")

जमनालालजी की मृत्यु के वाद माताजी ने सती हो जाने का विचार किया था। वापू ने खूब समझाया। तव माताजी ने अपनी संपत्ति भगवान को अर्पण करने का तय किया। वैसा ही किया भी। अपनी संपत्ति नहीं रखी। तवसे माताजी मुक्त हैं। वापू ने अगर सती हो जाने के लिए 'हां' कहा होता, तो माताजी सती हो जातीं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अपने : जानकीदेवी की दृष्टि में

बापू : मेरे श्वसुर

सन् १६१५ के आसपास जमनालालजी बापू के संपर्क में आये। और उसके बाद तो बापूजी ने हमारे जीवन में तूफान की तरह प्रवेश किया। सन् १६२० में जमनालालजी बापूजी के 'पांचवें' पुत्र बने। तबसे लेकर अंत समय तक बापूजी परिवार के एक बुजुर्ग की तरह हम सबके सुख-दुःख की खबर रखते थे। बहुत ही अद्‌भुत युग था वह। मैं एक अपढ़, गहनों से लदी, परदे में रहनेवाली मारवाड़ी युवती। लेकिन गांधीवादी विचारों का एक झोंका आया और हमारे अंध-विश्वासों को, रूढ़िगत मान्यताओं को अपने साथ बहा ले गया।

जब भी बापूजी का जिक्र होता है—उस जमाने की पूरी तस्वीर गुज़र जाती है, आंखों के सामने से। लेकिन कुछ बातें—कुछ संस्मरण—कुछ तस्वीरें विशेष रूप से उभरती हैं।

एक तस्वीर है बापूजी की पं० जवाहरलाल नेहरू के साथ, जिसमें दोनों महापुरुष खिल-खिलाकर हँस रहे हैं। पंडितजी बापू से मिलने आये। बातचीत के दौरान जवाहरलालजी ने मजाक में बापूजी से कहा—"बापूजी, आपके पास आयें तो कैसे आयें, बोलें तो कैसे, बैठें तो कैसे ?" बापू ने पूछा—"क्यों, क्या बात है ?" बा ने कहा—"आप लहसुन जो खाते हो।" इस-पर बापू और नेहरूजी दोनों खिलखिलाकर हँस पड़े। बा की बात सुनकर बापू ने कहा, "यह तो फिर हिंसा हुई। मुझे लहसुन खाना बंद कर देना चाहिए।" इसपर बा ने कहा, "लेकिन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बापू वह तो आपके ब्लडप्रेशर की दवा है।" बापू ने जवाब दिया, "दवा हो या और कुछ, है तो हिंसा ही।" और लहसुन खाना उन्होंने छोड़ दिया। बाद में लोगों के कहने-सुनने और जोर देने पर उन्होंने फिर से शुरू किया।

बापू के संबंध में एक बात का और ध्यान आ जाया करता है—और वह है उनका पत्र-लेखन। संसार में शायद ही अन्य कोई महापुरुष होगा जिसने इतनी व्यस्तता और परेशानियों के बीच इतना पत्र-व्यवहार किया हो। बालक, वृद्ध, युवक, पुरुष, महिला, अमीर, गरीब, नेता, कार्यकर्ता, राजे-महाराजे—किन-किन श्रेणियों के व्यक्तियों का पत्र-व्यवहार बापू से हुआ है। स्वयं बापू के हाथ से लिखे पत्रों की संख्या इनमें कम नहीं है। मेरा और बापूजी का जो पत्र-व्यवहार हुआ उसमें बापूजी के लिखे दो पत्रों से उनकी शैली, भाव और प्रभाव का अच्छा-दिग्दर्शन हो जाता है। एक पत्र तो वह है जो उन्होंने २०-८-३२ को यरवदा-जेल से लिखा था।

दूसरा हरिजनों के लिए प्रसिद्ध आमरण उपवास शुरू करने के पहले दिन का लिखा है।[1]

विनोदप्रियता तो बापू की प्रसिद्ध है ही। लेकिन कोरा विनोद ही नहीं, विचारों की गहनता व दृढ़ता भी बापू के संभाषण व पत्रों से भरपूर मात्रा में मिलेगी। जमनालालजी जैसा पति और बापूजी का सान्निध्य पाकर मैं भी अपनी बुद्धि व सामर्थ्य के अनुसार कुछ देश-सेवा व रचनात्मक कार्य करती रहती थी। बापू के पत्रों व उनसे वार्तालाप के द्वारा मुझे बहुत उत्साह मिलता था। सन् १९३३ में जब मैं अखिल भारतीय मारवाड़ी महिला सम्मेलन की अध्यक्षता करने १० बहनों के साथ कलकत्ता गई तब बापूजी ने एक पत्र मुझे वर्धा भेजा।[2]

० ० ०

"पर उपदेश कुशल बहुतेरे" या "दियातले अंधेरा" वाली श्रेणी में बापूजी नहीं थे। वह जो दूसरों से कहते थे पहले स्वयं आचरण में लाते थे। दरिद्रनारायण की सेवा की बात बापूजी अक्सर कहते थे। मेरे ऐसे कितने ही संस्मरण हैं, जिनमें बापू के अंदर मैंने दरिद्रनारायण के दर्शन किये।

एक सुगृहिणी की तरह बापू छोटी-से-छोटी चीज को संभालकर रखते थे। एक बार बिड़ला-हाउस से बापू दौरे पर जानेवाले थे। उनके सामने एक तख्ती रहती थी, जिसपर सब भाषाओं में लिखा एक कागज लगा रहता था। जब सामान बंधने लगा, तो बापू ने कमलनयन (मेरे ज्येष्ठ पुत्र) से कहा कि तख्ती के पेंच खोलकर कागज में लपेट ले। कमल के ऐसा करने के बाद बापू ने कहा, "ला—पेंच दे।" चार को जगह तीन ही पेंच मिले। एक पंच कमल के हाथ से गिरकर गलीचे वगैरा के नीचे चला गया होगा। बापू ने तीन पेंच बड़ी सावधानी से एक डिब्बी में डाले और कहने लगे—"कहने को तो सिर्फ एक पेंच कम है। लेकिन अब अगले मुकाम पर पहुंचकर कहूंगा पेंच चाहिए, तो एक मोटर दौड़ेगी—फिर दूसरी दौड़ेगी। और वे लोग एक डिब्बा पेंच ले आयेंगे।

१. देखिए बापू का पत्र १९.९.१९३२
२. देखिए बापू का पत्र २५.१०.१९३३

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नोआखाली-यात्रा के पहले भंगी कालोनी में बापूजी उठे और एक-एक अलमारी खोलकर देखने लगे। मैंने पूछा, "बापू यह क्या कर रहे हैं आप ?" तो बोले, "अरे—ये छोकरियां जो हैं। अगले मुकाम पर पहुंचकर कहेंगी मेरा ऐनक रह गया—मेरे ऐनक का घर रह गया। इससे अच्छा तो यह कि चलने के पहले ही सबकुछ संभाल लिया जाय।"

० ० ०

एक दिन साबरमती में रामकृष्ण (मेरे कनिष्ठ पुत्र) को पांव में कुत्ते ने काट खाया, पर उसने बताया नहीं। दो-तीन दिन बाद मैंने देखा तो उसके पैर में पस पड़ गया था। मैंने पूछा क्या हुआ ? तो बोला—कुत्ते ने काट लिया था। मैं तुरंत बापू के पास गई। बापू ने कहा—डाक्टर का इलाज करवाना हो, तो चाहे डॉक्टर को यहां बुलवा लो, चाहे राम को अहमदाबाद ले जाओ, वह तो १४ इंजेक्शन लगाएगा, रोज आना-जाना होगा। लेकिन अगर मन मानता हो तो काली मिट्टी भिगोकर बांध दो। रामदास के हाथ में खुजली हो गई थी—डॉक्टर के इलाज से लाभ नहीं हुआ तो मैंने गीली मिट्टी पुलटिस की तरह सारे हाथ में बांधी, उसीसे वह ठीक हुआ।

आखिर मैंने मन पक्का कर लिया, गीली मिट्टी पांव पर बांध दी। दिन में दो बार बदल देती। धीरे-धीरे पस निकलकर घाव बिलकुल सूख गया, हालांकि कई दिन तक मन में डर बना रहा कि कहीं कुत्ता पागल तो नहीं था।

० ० ०

श्रीगोपाल नेवटिया बहुत विनोदी प्रकृति के हैं। कमलनयन को लंगोटी लगाए खेतों में काम करते देखकर हँसते और कहते—"यह काला भूत-सा घूमता है, जमनालालजी का व्यापार क्या चलाएगा, कुछ पढ़ना-लिखना भी तो चाहिए इसे।" लेकिन हमने तो उसे बापू-विनोबा को सौंप दिया था और हमें विश्वास था कि सच्चे अर्थों में उसकी पढ़ाई हो रही है।

कुएं की मुंडेर पर खड़े होकर उस में छलांग मारने का उसे बहुत शौक था। घंटों कुएं में नहाया करता। इसी बीच उसे मलेरिया का बुखार रहने लगा, जो २-२॥ बरस तक चला। विनोबाजी अपने ढंग का इलाज करते थे। हम तो हालचाल पूछने जाते हुए भी डरते थे, कारण कि जायंगे और प्रेमवश कुछ खिलाने-पिलाने का मन करेगा, तो उससे आश्रम की मर्यादा भी भंग होगी और उसकी तबीयत पर भी असर पड़ेगा।

० ० ०

साबरमती में बाढ़ आई तब की बात है। जोरों से वर्षा होती थी और चारों तरफ पानी-ही-पानी। धूप के दर्शन तीन-तीन दिन तक लगातार नहीं होते। ओम और मदालसा के शरीर में फोड़े हो गए। ओम के फोड़े तो कुछ दिन में ठीक हो गए, लेकिन मदालसा का फोड़ा ५-६ महीने तक ठीक ही नहीं हुआ। बापू घूमकर लौटते समय रोज खुद आकर उसकी मरहम-पट्टी करते। एक दिन बोले—इसे अरंडी का तेल पिलाना चाहिए। मदालसा तो अड़ गई—नहीं पिऊंगी। रोने लगी। बापू ने उसे समझाते हुए कहा—"पी ले बेटी ! मुझे जाकर नवजीवन का लेख लिखना है।" लेकिन मदालसा के कान पर जूं तक न रेंगी। मैंने उसे डांटा तो बापू ने मुझे मना किया। इतने धीरज और प्रेम से वह समझाते थे कि देखकर आश्चर्य होता। इतने व्यस्त समय में से एक ही रोगी के लिए इतना समय निकालना और उसके साथ इतने धीरज से बर्ताव करना

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कोई आसान काम नहीं है।[1]

बापूजी को सेवाग्राम में मैंने कहा, "राधाकृष्ण को लड़की हुई है।" बापूजी बोले, "जानकी बेन—आपको उसे समझाना चाहिए कि इतने बच्चे ठीक नहीं।" मैंने कहा, "हे राम! तीन लड़के थे सो एक लड़की तो होनी ही चाहिए।" बापू मुस्कुराकर चुप हो गये।

ओम् की पहली जचकी थी। उसने बापू से कहा—"बापू मेरे बेटा ही होना चाहिए।" हुई लड़की। बापू को दुकान से फोन किया, तो बापू बोले—"लड़की होने से ओम् रोई तो नहीं?" फिर अमतुलबहन को अपनी चादर, शहद, पानी आदि देकर बच्ची को घुट्टी देने भेजा कि ओम् को इससे अच्छा लगेगा।

ओम् की जचकी के लिए भी बापू ने ही सुशीलाबहन नायर को भेजा था। बच्चा होने पर अंदर की बहन को छूना नहीं आदि का मैं बहुत विचार करती थी। जो चीज चाहिए बाहर से ही दी जाती है। सुशीलाबहन बाहर आकर गद्दे पर बैठने लगीं, तो मैंने कहा—अंदर की बहन को नहाये बिना छुआ नहीं जाता।

जब बापू ओम् को देखने आये तो सुशीलाबहन ने बापू से कहा, "बापू ये जानकीबहन छूआछात बहुत मानती हैं।" बापू ने मुझसे पूछा, "केम जानकी बेन?" तो मैं बोली, "बापू, सेवा-चाकरी तो बराबर करनी ही चाहिए, लेकिन जचकी की गंदगी को क्या लाड़ करना? बापू कुछ बोले नहीं। शायद मेरी बात उन्हें सही लगी हो।

० ० ०

महिला-आश्रम में बापूजी ने सात दिन का उपवास किया। मुझे पहरे पर रखा था। डॉ० लीलावती मिलने आई बापू से, तो मैंने उसे अंदर जाने से रोक दिया। वह महादेवभाई के पास गई और बोली कि मुझे जानकीबाई ने बापू के पास नहीं जाने दिया, तो अब मैं जाऊंगी ही नहीं। महादेवभाई जमनालालजी के पास गए और मज़ाक में बोले कि यह पहरा तो बहुत कड़ा है, मैं जाऊं और मुझे भी रोक दें तो? खैर—महादेवभाई और जमनालालजी दोनों साथ आये और मज़ाक की बातें होने लगीं।

रात को जब घर लौटी तो जमनालालजी के कान में से खून निकलते देखा। कान की तकलीफ तो उन्हें वर्षों से थी, लेकिन उन दिनों कुछ ज्यादा हो गई थी। डॉक्टरों ने कहा था कि अगर कान में खून दिखे तो फौरन आपरेशन के लिए बंबई आ जाना। अब तो मैं बहुत डरी। मन-ही-मन प्रार्थना करूं—हे भगवान्—सुबह खून नहीं दिखे तो १०० रु० बापू को शुभ कार्य में लगाने के लिए दूं। सुबह बापू को कहा, तो उन्होंने फौरन बंबई जाने की सलाह दी। मैं चिंता में पड़ गई। जमनालालजी ने कहा कि अगर आपरेशन करवाना होगा तो खबर करूंगा, तब आ जाना। वहां डॉक्टरों ने आपरेशन करने का तय किया तो स्वामी आनंद को वर्धा भेजा कि बापू को यह खबर देना और जानकीबाई को लेते आना।

मैं तो आपरेशन के नाम से ही डरूं। मेरी इच्छा तो थी कि आपरेशन के समय बापूजी वहां रहते। लेकिन यह तो असंभव ही था। महादेवभाई को भी कैसे ले जाऊं; बापू को कौन

१. देखिए, बापू का पत्र ३०.१.१९३४

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संभालेगा ? इसी धुकुर-पुकुर में बंबई गई। गाड़ी ८ बजे पहुंचती थी और आपरेशन ९ बजे होनेवाला था। एक तरह से यह अच्छा ही था, वरना अगर मैं काफी जल्दी पहुंच जाती तो डॉक्टरों से बहस-मुबाहिसा करती रहती और उनके काम में बाधा पहुंचती।

आपरेशन के बाद वर्धा गई तो बापू से १०० रु० वाली बात कही। बापू बोले—तो लाओ १०० रु०, दूसरे दिन खून तो दिखा नहीं। मैंने कहा—खून नहीं दिखे मतलब आपरेशन नहीं हो तभी तो १००रु० मिलते। इस तरह कई दिनों तक यह मज़ाक चला।

० ० ०

बालकोबाजी को टी० बी० थी। बापू ने उन्हें अपनी देख-रेख में रखा और उनकी चिकित्सा का भार अपने ऊपर ले लिया। प्राकृतिक चिकित्सा से उनका उपचार किया। रोज उनके पास जाते—उनके खाने-पीने का इंतजाम करते। आश्रमवासियों को उनकी तरफ जाना मना था। बालकोबाजी की प्रकृति भी इतनी नाजुक कि चिड़ियों की आवाज भी उन्हें असह्य थी। १०-१२ वर्ष बापू ने उनकी सेवा की। उनकी सेवा का ही परिणाम है कि आज बालकोबा बिलकुल स्वस्थ हैं, जेठ की दुपहरी में भी खेत में गढ़े खोदते हैं, अपना सामान खुद उठाकर चलते हैं और सर्दी हो या बरसात, ठंडे पानी का ही उपयोग करते हैं। दूध भी गरम करते हैं तो दही जमाने के लिए।

० ० ०

हर चीज में नये प्रयोगों के लिए बापू हमेशा तैयार रहते थे। नीम की चटनी का प्रयोग शुरू किया तो पंगत में प्रसाद-स्वरूप नीम की चटनी बंटने लगी। कुछ लोग तो खुशी से खा लेते कि चलो खून शुद्ध होगा। काम-काज के कारण भूख भी लोगों को ज्यादा ही लगती थी। कुछ लड़कियां नीम के नाम से ही डरती थीं—जीभ पर नीम की चटनी लगातीं और मुंह बनातीं। कई लोग धीरे-धीरे आदी हो गये थे और नीम के पत्ते ही चबा जाते थे। लेकिन जो नीम की चटनी जीभ पर लगाने में ही डरें उन्हें कैसे खिलाई जाय ? ऐसे लोगों को बापू बिलकुल थोड़ी ही देते—लेकिन उससे बच कोई नहीं सकता था।

वर्धा की गर्मी में दोपहर के समय आनेवाले लोगों को चाय की जगह कुछ तो देना ही चाहिए। सो बापूजी ने इमली और गुड़ का शर्बत मटके में ठंडा करके देने को कहा। मारवाड़ में तो कहावत है—गुड़ खाए घोड़ा, तेल खाए जोड़ा (जूता)। और इमली का तो सवाल ही कहां ? लेकिन बापूजी के आश्रम में तो अनहोनी बातें ही होती थीं। खर्च और स्वास्थ्य की दृष्टि से इमली और गुड़ का शर्बत बहुत ही उपयुक्त है। मुझे डर था तो सिर्फ मदालसा का कि इसे वैसे ही फोड़े-फुंसी बहुत होते हैं। लेकिन वह भी विनोबा के पास रहकर पक्की हो गई थी। आश्रम में तो "नीम, इमली, गुड़ का बोलबाला और चाय-चीनी का मुंह काला" हो गया था।

० ० ०

जब बापूजी ने साबरमती-आश्रम की स्थापना की, तो कई लोग वहां आकर बसे और उन्होंने अपना सारा जीवन बापूजी को सौंप दिया। इसमें से कई तो अकेले रहते थे और कई सपरिवार। पुरुष देश को स्वतंत्र कराने का जोश लेकर स्वेच्छा से आये थे, लेकिन स्त्रियां तो अपने पतियों के पीछे ही आई थीं। बापू ने सोचा कि जबतक स्त्रियों के लिए आश्रम में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जबर्दस्त आकर्षण पैदा नहीं होगा तवतक वातावरण पैदा होने में कठिनाई होगी। पुरुषों के काम में भी अड़चन होगी। इस दृष्टि से बापू ने आश्रम-जीवन का ठोस कार्यक्रम आश्रमवासियों के सामने रखा। स्त्रियों में आश्रम-जीवन के प्रति दिलचस्पी पैदा करने का उन्होंने प्रयत्न किया। स्त्रियों के लिए कक्षाएं शुरू की गईं—स्वयं बापूजी भी पढ़ाते थे। धीरे-धीरे उन्हें सूत कातने, खादी पहनने, जेवर छोड़ने, प्रार्थना में शामिल होने, काम-काज में स्वावलंबी होने, मितव्ययिता वरतने आदि की शिक्षा दी गई। बापू की कार्य-प्रणाली के प्रति स्त्रियों में आकर्षण तो था ही। उनकी शिक्षाओं का प्रभाव भी उनपर पड़ने लगा और अपनी शक्ति के प्रति वे अधिकाधिक सजग होने लगीं। यह सब बापूजी ने इतनी सरलता, सहजता और स्वाभाविकता से किया कि किसीको पता भी नहीं चला कि उनका दृष्टिकोण वदला जा रहा है, उनका कायापलट हो रहा है। बापू बड़ी ही आत्मीयता से घर-बाहर की खबर लेते रहते और दुःख निवारण करने की कोशिश करते।

जो लोग अपने परिवार के साथ रहते थे, उन्हें इतनी आजादी थी कि वे अपने घर पर भोजन कर सकते थे, वरना तो आश्रम के नियम सबके लिए समान थे। लेकिन कुछ समय बाद आश्रम-जीवन में एकरूपता और समरसता लाने की दृष्टि से बापू ने सार्वजनिक रसोड़ा आश्रम में खोलने का निश्चय किया। इसमें दो लाभ वह सोचते थे—एक तो इससे आश्रमवासियों में सम्मिलित परिवार की भावना पैदा होगी और दूसरे सेवा के लिए समय का सदुपयोग होगा। लेकिन वह किसीपर जोर-जबर्दस्ती करना नहीं चाहते थे। उनका कहना था कि स्त्रियों को स्वेच्छा से ही इस नियम को अपनाना चाहिए।

स्त्रियों में बापू के इस विचार से काफी खलवली मची। यह तो वे जानती थीं कि काम जितना घर पर करना पड़ेगा, उससे ज्यादा काम तो है नहीं। लेकिन घर जो चाहो, जब चाहो खानेवाली आजादी सार्वजनिक रसोई में कहां से आ सकती थी? यहां तो जो मिले, वह खाओ और वह भी घंटी के समयानुसार। यह बंधन ही स्त्रियों को अप्रिय था। लेकिन बापू ने अपनी सेवाभावना, दूरदर्शिता, स्नेह और वात्सल्य से स्त्रियों को अपने वश में ही कर रखा था। बहस करने में तो बापू से कौन जीत सकेगा? खुद बा भी बापू के सामने चुप रह गई थीं, जिस दिन बापू ने एक हरिजन कन्या को बा की गोद में देकर कहा था कि इसे मनु की तरह ही संभालना।

सार्वजनिक रसोई के विचार से अगर सबसे अधिक खुशी हुई तो मुझे हुई। मेरे लिए तो यह मनभाती वात हो गई। रसोई बनाना मुझे आता ही नहीं था, तो उसमें आनंद क्या आता? सो मेरी तो झंझट छूटी।

साबरमती-आश्रम में अचानक एक बछड़ा बीमार पड़ गया। गोशालावालों से जितनी बन पड़ी उसकी सेवा की। पर वह संभल नहीं सका। जब डॉक्टरों ने कह दिया कि वह लाइलाज है तो बापू ने आश्रमवासियों को बुलाकर पूछा कि अब उसका क्या करना चाहिए? वह हिलडुल नहीं सकता, मक्खियां उसपर भिनभिनाती हैं, कौए नोंचते हैं, कीड़े-मकोड़े तंग करते हैं।

ऐसी आंतरिक व वाह्य वेदना यदि किसीके अपने बच्चे की भी हो, तो उसके माता-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पिता उसे दुःख से छुटकारा दिलाने के लिए चाहेंगे कि सुख से इसकी मृत्यु हो। लेकिन बापू के प्रश्न के उत्तर में आश्रमवासी क्या कहते ? चुप हो गये। वातावरण गंभीर हो गया। अचानक बापू ने मुझसे पूछा, "जानकीबेन, तुम्हारी क्या राय है ?" अब इतने सब लोगों के बीच में बोलती भी क्या ? संकोच अलग। बापू फिर बोले, "तुम तो पानी में आग लगा दो—ऐसी हो, चुप क्यों हो गई ?" मैं एकदम हक्की-बक्की रह गई। बापू ने सब लोगों के सामने यह क्या कह दिया ?

अंत में शाम की प्रार्थना के बाद बापू ने डॉक्टर से कहा कि कल सुबह इंजेक्शन लेकर आ जाना। जब बापू 'हृदय कुंज' में पहुंचे तो बा ने कहा, "आप अगर बछड़े को मरवा देंगे तो पाप लगेगा न !" बापू बोले, "तुम तो खुद उसे देख आई हो—कौए आंखें नोचते हैं, मक्खियां तंग करती हैं, अगर तुम उसके पास बैठो, मक्खियां उड़ाओ तो बोलो।" बा क्या बोलतीं ? चुप हो गईं।

दूसरे दिन सुबह बापू के सामने उस बछड़े को इंजेक्शन दिया गया और वह बेचारा दुःख से छुटकारा पाकर शांत हो गया। इस घटना को लेकर सारे भारत में जो हलचल मची, वह सब जानते ही हैं—बापू ने जिंदा गाय का बछड़ा मरवा दिया, गोली से मरवा दिया आदि। जो कुछ हुआ वह उन सबने अपनी आंखों से थोड़े ही देखा था—बस सुनी-सुनाई बातें। उनका यही कहना था—बापू के आश्रम में यह हुआ कैसे ? लेकिन बछड़े के बीमार पड़ने से लेकर उसके शांत होने तक बापू का कितना विचार-मंथन चला होगा, वह या तो बापू ही जानें या भगवान !

शाम की प्रार्थना के बाद बापू ने आश्रमवासियों से कहा—यदि हमें जिंदा रहना है, तो गाय को जिंदा रखना होगा। गाय है तो बैल है, बैल है तो खेती है, और खेती है तो हम सबका जीवन है। स्वार्थ में ही परमार्थ निभता है। गाय को माता कह देने-भर से उसे कितने दिन जिंदा रखा जा सकता है। उन्होंने आश्रमवासियों से कहा कि हम लोग आग्रह रखें कि गाय का ही घी-दूध खायेंगे। बाकी काम घानी के तेल से चलाया जाय। बापू के कार्यक्रम ऐसे ठोस अनुभवों में से निकलते थे।

बापू के विचारों के मंथन में से ऐसे विचार आते रहते थे।

० ० ०

साबरमती-आश्रम में मिस स्लेड आईं। वह अविवाहित थीं—बापू ने उनका नाम मीरा-बेन रख दिया। धीरे-धीरे उनपर बापू का रंग चढ़ता गया। खान-पान, उठना-बैठना, सबमें हिंदुस्तानीपन। जिस स्वाभाविकता से आश्रम-जीवन को उन्होंने अपना लिया वह बापू की ही प्रेरणा से संभव हो सकता था।

वर्धा आने पर एक दिन मीराबहन ने बापू ने कहा, "बापू आपको तो गांव में रहना चाहिए।" तब बापू मगनवाड़ी वर्धा में रहते थे। बापू ने जमनालालजी से कहा, "मीरा कहती हैं कि मुझे गांव में रहना चाहिए।" जमनालालजी बोले, "अभी कुछ ही दिन हुए मुझे 'सेगांव', जो यहां से ४-५ मील दूर है मिला है, वह मैं मीराबहन को दिखा दूंगा। उन्हें पसंद आया तो वहां रहने का इंतजाम किया जा सकता है।"

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जमनालालजी ने वह जगह मीराबहन को दिखाई। बैलों के कोठे, एक झोंपड़ी, एक कुआं वगैरा वहां पहले ही बने हुए थे। मीराबहन ने कहा कि अगर बापू के लिए एक कुटिया बन जाय, तो चल सकता है। बापू बोले, "मेरे साथ रहने का लोभ छोड़कर एक-एक गांव की सेवा करने का काम तुम लोगों को लेना चाहिए।" मीराबहन बोलीं, "तो बापू—मैं वहां चली जाती हूं।" तब भी मीराबहन की यही इच्छा थी कि एक कुटिया बापू के लिए बन जाय तो उन्हें भी वहां ले जाया जाय। लेकिन बापू से इजाजत लेने में तो सबको चतुराई ही बरतनी पड़ती थी। सो जमनालालजी ने बापू से कहा, "मीराबहन के लिए भी एक कुटिया तो वहां बनानी ही चाहिए, आखिर तो अंग्रेज बहन है, रहने की कुछ सहूलियत तो करनी ही चाहिए।" बापू बोले, "कुटिया बनाने में मुझे एतराज नहीं है, लेकिन वह खुद अपने हाथ से बनाए और खर्च अधिक-से-अधिक १००) रु० हो। मीराबहन राजी हो गईं—उन्होंने मन में सोचा कि मैं बापू के रहने लायक झोंपड़ी अपने हाथ से ही बनाऊंगी।

मीराबहन बापू की सेवा करतीं और खाली समय में झोंपड़ी बनातीं। कच्ची मिट्टी की दीवारें उठाकर ऊपर फूस का छप्पर डाला। आखिर, झोंपड़ी बनकर तैयार हुई। अब मीरा की चतुराई चली। वह बापू से बोलीं, "बापू, मैंने इतनी लगन से यह झोंपड़ी बनाई है, इसमें आपको रहना चाहिए।" बापू उससे भी ज्यादा चतुर थे। बोले, "तू इससे आगे के गांव में जा, तो मैं यहां आता हूं।" मीरा इसपर भी राजी हो गईं और जमनालालजी से दूसरी जगह देखने को कहा। जमनालालजी ने पास ही के बरोड़ा गांव में जगह बताई। जब झोंपड़ी तैयार हो गई, तो मीराबहन वहां चली गईं। लेकिन वहां से मीराबहन लगभग रोज ही सेगांव आतीं—कभी सोड़ा लेने, तो कभी नमक। कस्तूरबा मजाक में कहतीं—"सोड़ा अनेमीठूं रोज कई ओछू खलास थाय छे ! पण मीराए बापूनी पास रोज आवूंज जोइये।"[1]

० ० ०

बापू सेवाग्राम में आये तो मानो वर्षा ने भी लोगों की परीक्षा लेना तय किया। घनघोर वर्षा—कई घर बह गए। बापू के विरोधी लोग कहते कि जबसे यह गांधी आया है, पानी ने पीछा पकड़ा है। अनुयायी लोग कहते—जो कुछ बचा है, वह गांधी का पुण्य समझो।

स्टेशन से सेगांव ५ मील और बजाजवाड़ी से ४ मील। जमनालालजी अतिथियों को स्टेशन से बजाजवाड़ी लाते, झटपट तैयार और नाश्ता कराके ७-८ बजे सेवाग्राम भेजते, ताकि वे लोग ११ बजे भोजन के समय तक वापस बजाजवाड़ी आ जायं। दोपहर की गाड़ी से जाने वालों को खाना खिलाकर स्टेशन रवाना करते।

भारी संख्या में लोग बापू से मिलने आते थे। बापू तबतक स्थायी रूप से वहां बसे नहीं थे। अतः लोग सोचते कि पता नहीं कब बापू चल दें। कोई पैदल पहुंचता, तो कोई बैलगाड़ी में। बापूजी मजाक में पूछते, "अपने पैरों से आये हो या जमनालाल के ?"

इन मिलनेवालों की भी मुसीबत रहती थी। जल्दी से सेगांव पहुंचो और ११ बजे

१. सोड़ा-नमक कोई रोज-रोज खतम थोड़े ही हो जाता है। लेकिन मीरा को तो रोज बापू के पास आना है न!

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

खाने की घंटी बजने के पहले बजाजवाड़ी आ जाओ। उधर बापू का डर, इधर जमनालालजी का डर। सेगांव का रास्ता खेतों में होकर जाता था। रास्ता क्या था पगडंडियां थीं। बरसात में कीचड़, वह भी काली चिकनी मिट्टी का। हाथ, पैर, कपड़े, सब कीचड़ में। बहनों की तो चप्पलें कीचड़ में ही रह जायं। एक हाथ से धोती ऊंची किये हुए और दूसरे हाथ में जूते-चप्पल उठाए लोग-बाग सेगांव और बजाजवाड़ी के बीच चक्कर लगाया करते थे।

सरदार पटेल और घनश्यामदासजी ने बापू से कहा कि सेगांव तक का रास्ता तो पक्का ही होना चाहिए। बापू ने कहा, "अगर रास्ता पक्का ही करना था, तो फिर देहात में आने की मुझे क्या जरूरत थी? पैरों से रास्ता खुद ही बन जायगा, पैसा खर्च करने की क्या जरूरत?" जमनालालजी बोले, "रास्ता तो म्यूनिसिपैलिटी भी बनवा सकती है।" बापू ने मना किया, "जरूरी काम तो वैसे ही चल जाता है।" पर सरदार यों ही छोड़नेवाले नहीं थे। बोले, "बापू, आखिर हमारे समय की भी तो कोई कीमत है। सड़क, डाकघर, टेलीफोन, सवारी कुछ तो सहूलियत होनी चाहिए। इधर आपका डंडा—समय पर आओ, तो मुलाकात होगी, उधर जमनालालजी का डंडा—घंटी पर पहुंचो तो खाना मिलेगा।" लेकिन ८-१० महीने तक यही क्रम रहा। बरसात रुकने पर कीचड़ तो सूख गया, लेकिन रास्ता तो वही खेतों में से ही था।

बापू के पास तो सभी जाति-धर्म के लोग रहते थे। रहनेवालों का जीवन भी संन्यासियों के जैसा था। चाय, बीड़ी, तमाखू-पान, नशा सब छोड़कर खादी, चर्खा, स्वावलंबन, सात्विक भोजन का कार्यक्रम! लेकिन वहां गांव में रहनेवाले स्थानीय लोग इनसब बातों को क्या समझें? सेगांव के कुएं से आश्रमवासी पानी निकालने लगे, तो गांववालों को कठिनाई हो गई कि बापू के साथ सभी जात-धर्म के लोग हैं, हम इस कुएं का पानी कैसे पियें? बापू के बाल काटने के लिए नाई को बुलाया तो बोला, "महाराज! मैं काट तो दूं, लेकिन जातवाले मुझे जात-बाहर कर देंगे।" बापू ने कहा, "ठीक है, जितना जातवाले सहन करें उतना ही उसे करना चाहिए।" दो वर्ष तक नाई को बापू की सेवा से वंचित रहना पड़ा।

लेकिन धीरे-धीरे गांव की कायापलट होने लगी। जिस गांव में पहले दो आने रोज की भी मजदूरी मुश्किल से मिलती थी, वहां धीरे-धीरे कताई, बुनाई आदि उद्योग शुरू हो गये। पढ़ाई का सिलसिला भी जारी हो गया। बापू ने गांव को अपना कुटुंब ही बना लिया। और आज तो यह गांव एक तीर्थ बन गया है।

सेगांव का आश्रम बढ़ने लगा। गायें रखना जरूरी हो गया। बापू मीरा की कुटिया में और मीरा अगली कुटिया में गई। जगह की खींचातानी थी ही। बापू की कुटिया में एक कोने में खान अब्दुल गफ्फार खां, एक कोने में महादेवभाई का दफ्तर, एक तरफ बापू का खाना-पीना। ऊपर से मुलाकातियों की भीड़।

एक बार सेगांव में मलेरिया फैला तो डाक्टरों ने बापू को सलाह दी कि जमीन पर सोने की बजाय पलंग पर मच्छरदानी लगाकर सोना चाहिए। लेकिन जगह की तंगी में बापू यह सुझाव कैसे मानते? और फिर उनका कहना था कि मच्छरों से बचाव तो सभीके लिए आवश्यक है और जब सब लोगों के लिए ऐसा प्रबंध होना कठिन है, तो मैं अपने लिए कैसे कर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सकता हूं ? तो बापू ने एक तरीका निकाला—सोते समय जितना बदन खुला रहता उसपर घासलेट का तेल मल लेते। केवल मुंह ढंकने के लिए मच्छरदानी बनाई।

बापू प्रार्थनावाली जगह पर खुले में ही लकड़ी के पाटे पर सोते थे। जब "ब्लड-प्रेशर" रहने लगा तो सिरहाने की तरफ पटिया एक बालिश्त ऊंचा कर लिया। सब आश्रमवासी चारों तरफ जमीन पर ही बिस्तर बिछाकर सोते थे। प्रार्थना की जमीन पर रेत बिछाकर जगह समतल कर ली गई थी।

जमनालालजी, घनश्यामदासजी और अन्य लोगों ने बहुत जोर दिया कि सुविधा की दृष्टि से कुछ झोंपड़ियां और बनवा लेना अच्छा होगा। लेकिन बापू टस-से-मस नहीं हुए। एक बार बंबई से रुस्तमजी बापूजी से मिलने सेवाग्राम आये थे। दोपहर के खाने के बाद आराम के लिए जगह तलाश करने लगे, लेकिन चारों तरफ धूप-ही-धूप। पेड़ों के नीचे कुछ छांह जरूर थी, लेकिन लू में कौन सो सके ? घंटेभर बाद जब बापू से फिर मुलाकात हुई तो बोले, "बापू मेरे सरीखा तो दुबारा यहां आने से रहा। कहीं घड़ी-दो घड़ी बैठने की तो जगह हो। आप कहें तो मैं छांह का कुछ प्रबंध कर दूं।"

उन्होंने इजाजत दे दी। एक पंक्ति में ६-७ झोंपड़ियां बनीं, जिनका नाम "रुस्तम-भवन" रख दिया गया।

बापू मालिश तो धूप में लेटकर कराते थे। फिर एक टीन के टब में लेटकर स्नान कर लेते थे। वहीं दाढ़ी भी बना लेते थे। स्नान के बाद बाहर निकलते तो एकदम तरोताजा होकर।

रोज शाम को घूमने जाते समय बापू दो बच्चों के कंधों पर हाथ रखकर चलते। दिन-भर पढ़ने-लिखने का काम करते तो आंखों को आराम देने के लिए घूमते समय आंखें बंद करके चलते, इसे वे "आंखमिचौनी" कहा करते थे। इस तरह तीन मील आंखें मीचे हुए चलते। कई बार रास्ते में पत्थरों से ठोकर लग जाती, क्योंकि रास्ता साफ नहीं था। तो बापू ने सोचा कि जब रोज इस सड़क पर घूमने जाते हैं, तो इसकी सफाई भी हमें ही करनी चाहिए। अगले दिन से उन्होंने पत्थर उठाने शुरू कर दिये। जब साथवालों ने बापू को पत्थर उठाते देखा तो वे उनके आगे-आगे चलकर पहले ही पत्थर उठाने लगे और पास के खेतों में फेंकने की बजाय एक जगह उनकी ढेरी लगाने लग गए। अब सवाल उठा कि इन ढेरियों का क्या किया जाय। वहीं सड़क के किनारे बा के हाथ से एक वृक्ष लगवाया गया था, सो लड़कियों ने उन पत्थरों का ही एक चबूतरा उस पेड़ के चारों तरफ बना दिया। जो पत्थर बचे उन्हें प्रार्थना-भवन के सामने रास्ते में बिछा दिया।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जमनालालजी : मेरे पतिदेव

वैसे तो प्रत्येक व्यक्ति का जीवन घटनापूर्ण होता है, लेकिन जमनालालजी का जीवन तो विविधताओं, संघर्षों और परीक्षाओं से भरा हुआ था। सुयोग भी उन्हें साथ-साथ मिलते रहे और बापू के रूप में तो मानो उन्हें मनभाते भगवान ही मिल गए।

सीकर में कनीरामजी के यहां उनका जन्म हुआ और वर्धा में बच्छराजजी के पौत्र बनकर वह गोद आये। बच्छराजजी केवल २८ अक्षर के पंडित थे। घर से नाराज होकर वह भागे और वर्धा में नौकरी करके व्यापार में पड़े। व्यापार में उन्होंने लाखों कमाया। ब्रिटिश सरकार ने बच्छराजजी को 'रायबहादुर' की उपाधि भी दी। इस तरह धन और इज्जत दोनों उन्हें मिलीं।

जमनालालजी की भी पढ़ाई-लिखाई तो साधारण ही हुई। दादाजी से सवाई समझो। फिर उन्हें भी रायबहादुरी मिली। उस जमाने में रायबहादुरी का खिताब मिलना मानो भगवान के दर्शन होने जैसा था। लोगों को बड़ी तपस्या के बाद मिला करती थी। लेकिन जमनालालजी को तो अनायास ही मिल गई।

और जितनी अनायास मिली, उतनी ही अनायास गई भी। गांधीजी का फर्मान निकला कि सरकार-तंत्र बहिष्कार के अंतर्गत सरकारी उपाधियां भी लौटाई जायं। जमनालालजी के मन में लहर चली कि शुरूआत मुझसे ही हो। स्वभावानुसार सब शुभचिंतकों से सलाह ली। सभीने मना किया। तब उन्होंने अपने परम हितैषी और कानूनी सलाहकार श्रीकृष्णदास जाजू से पूछा। वह असमंजस में पड़ गये। कर्तव्यवश मुझसे भी पूछा, हालांकि वह जानते थे कि इन बातों में सलाह दे सकने की योग्यता मुझमें कहां थी। अंत में उन्होंने बापूजी से ही पूछा। बापूजी तो ऐसे शिकार की तलाश में ही रहते थे। हालांकि जमनालालजी मन में तो निश्चय पहले ही कर चुके थे। जो व्यक्ति एक बार धन-सुख और सर्वस्व छोड़कर साधु बनने के लिए घर से भाग चुका हो उसके लिए रायबहादुरी छोड़ना 'महाबहादुरी' थोड़े ही थी। ऐसा करने में जोखिम तो थी थोड़ी, लेकिन जोखिम के डर से आत्मा को दबाना जमनालालजी को कभी नहीं रुचा। उन्होंने, बंदूक, तलवार, पिस्तौल आदि के लाइसेंसों के साथ-साथ जिस दिन सरकारी उपाधि लौटाई उस दिन बच्छराजजी के पुराने गुमाश्ते-नौकर सब आंसू बहाने लगे। कहते—"गांधी ने तो भारी आंधी चलाई। जमन पर जादू ही कर दियो।" छोटूजी रसोइया वगैरा कहते—"सेठ भोलो है। गांधी टोपीवाला तो बीने बाबा करके छोड़सी। बीनणी भी गणा-कपड़ा लुटाया लागी। टाबर छोटा है—आश्रम में के निहाल होसी? बीनणी के करे—जमनो केवे जैंयाई करे है। अब ई घर को के हाल होसी?"[1] उनका ऐसा कहना स्वाभाविक ही था, क्योंकि यह तो उनके दिल जानते

१. सेठ भोले हैं। गांधी टोपीवाले तो उन्हें बाबा बनाकर ही छोड़ेंगे। बहू भी गहने-कपड़े लुटाने लगी। बच्चे छोटे हैं, आश्रम में जाकर वे क्या निहाल होंगे। लेकिन बहू भी क्या करे, जमन जैसा कहते हैं, वैसा करती है। क्या हाल होगा इस घर का?

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

थे कि कितनी कठिनाइयों के बाद ये अधिकार बच्छराजजी ने प्राप्त किये थे। आज गांधी के चक्कर में आकर छोटे सेठ क्या कर रहे हैं ? अगर सरकार अपना रूप दिखाये तो ? ये विचार उन लोगों के मन में आते थे। लेकिन फिर तो बापू के उपदेशों से त्याग में ही उन्हें भोग दिखाई देने लगा।

रायबहादुरी लौटाने के वक्त की ही घटना है। वृद्धिचंदजी पोद्दार जमनालालजी को समझाने गए। जमनालालजी पूजा में बैठे थे। वृद्धिचंदजी ने कहा—तुम्हारे पर सरकार की निगाह आ गई है, वह तुम्हारी बर्बादी के लिए लग जायगी। तुम अपनी जायदाद बाल-बच्चों और मित्रों के नाम कर दोगे तो पीछेवालों को आराम रहेगा आदि।

जमनालालजी बोले—"आप कहते हैं वैसा करूंगा तो जनता पर उसका असर उल्टा पड़ेगा। जनता कहेगी कि जायदाद बचाकर देशभक्ति करते हैं। यह जायदाद सरकार जब्त करेगी या हजम कर जायगी तो जनता में सरकार के प्रति अधिक रोष पैदा होगा, उससे सरकार की बाजू कमजोर होकर जनता का पक्ष प्रबल होगा।"

बच्छराजजी स्वाभिमानी होने के कारण घर से भाग निकले थे और पुरुषार्थ से पैसे-वाले बने। वह हृदय के सरल लेकिन स्वभाव के क्रोधी थे। गुस्सा आने पर वह फिर आगापीछा भूल जाते थे और कटुवचनों व गालियों की बौछार लगा देते थे। दूसरे ही क्षण सामनेवाले को बोलते—"अरे मेरी गाली तो घी की नाली है। ले, ये दो रुपये ले जा, अपने बच्चे को लड्डू खिला देना।" नौकरों-गुमाश्तों को उनके क्रोध की आदत-सी हो गई थी।

इसके विपरीत बच्छराजजी की पत्नी सद्दीबाई में धार्मिकता कूट-कूटकर भरी हुई थी। प्रतिदिन वह धार्मिक पुस्तकें बांचतीं, कथा सुनतीं। वर्धा में जितने भी साधु-संत आते उनके लिए घर में लंगर हर वक्त खुला रहता। सद्दीबाई बच्छराजजी के लिए ८ बजे कलेवे का डिब्बा कारखाने में भेज देतीं और स्वयं ६ बजे भोजन कर लेतीं। कहतीं कि मैं तो "पतिव्रता" की जगह 'पेट-भर्ता' हूं। बच्छराजजी के निर्देशानुसार उनका भोजन छींके पर रख दिया जाता था। वह जब भी आते, ठंडा, कच्चा-पक्का या अलूना, जैसा भी भोजन होता सब मिलाकर खा लेते। जल्दी से खाकर तुरंत फैक्टरी पहुंच जाते।

अन्न की आलोचना करना ही वह पाप समझते थे। यही उनका धर्म था। इसके अलावा दान-धर्मादि उनकी पत्नी के ही जिम्मे था।

जमनालालजी बचपन में यह सब देखते थे। गुण-ग्राहकता तो उनके स्वभाव में थी ही। सो हंस की तरह उन्होंने दोनों के गुण ग्रहण कर लिये। अपने दादा की तरह ही भोजन में मीन-मेख निकालना जमनालालजी पाप समझते थे। हां—मेहमानों का वह पूरा ख्याल रखते थे। अपनी दादी की तरह अतिथि-सत्कार में उन्हें बहुत प्रसन्नता होती थी। व्यापारी-बुद्धि उन्हें बच्छराजजी से मिली और व्यापार में धार्मिकता की भावना उन्हें दादीजी से प्राप्त हुई। ईमान-दारी और सचाई से ही धन कमाना वरना व्यापार छोड़ देना—यह उनका सिद्धांत बन गया। इस बारे में पुराने मुनीम-गुमाश्तों से उन्हें काफी संघर्ष करना पड़ा और अंत में उन लोगों को जमनालालजी की बात ही माननी पड़ी। यही कारण था कि व्यापारी समाज में उनकी साख बढ़ी। व्यापार भी दिन दूना रात चौगुना बढ़ा। आज तक वह साख कायम है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कांग्रेस-अधिवेशन में जाते समय बापू एक महीना वर्धा रुके। सब नेतागण व बापू के अन्य भक्त लोग उनसे मिलने वहीं आते थे। यहां जमनालालजी की व्यापारी-बुद्धि खूब चली। वह ज्यादा-से-ज्यादा लोगों को सपरिवार बुलाकर अपने पास प्रेम से रखते। फिर बापू से समय लेकर उन्हें मिलाने ले जाते। सपरिवार बुलाने का मकसद यह रहता कि यदि कुटुंब के लोग तैयार हो जायं तो किसी व्यक्ति को बापू के काम में जीवन लगा देने की अड़चन नहीं होती।

बापू तो अपना असर डालने में जादूगर थे ही, लेकिन कार्यकर्ताओं को बुलाकर फंसाने में जमनालालजी 'दलाल' का काम करते थे। बापू की चौमुखी प्रवृत्तियों के लिए कार्यकर्ता इसी तरह फंसते जाते थे। काका कालेलकर, किशोरलालभाई, महादेवभाई आदि तो बापू के पुराने साथी थे, लेकिन जाजूजी, हीरालालजी शास्त्री, सीतारामजी सेक्सरिया आदि कितने ही महानुभावों को फंसाने में जमनालालजी का पूरा हाथ था।

जयपुर सरकार ने जमनालालजी को मोरांसागर में नजरबंद कर दिया था। एकांत और शांति होने से विचारों का संघर्ष और मनोमंथन चलता ही था। वहां उन्होंने संपूर्ण रामायण का पाठ शुरू किया, और हरेक प्रसंग पर गहरा विचार किया।

जयपुर से लोग मिलने जाते। लौटकर कहते—काकाजी के पास जाते हैं तो छाती से लगाकर ऐसे प्रेम और सद्भावना से मिलते हैं कि दिल गद्गद् हो जाता है, ऐसा विचार आता है कि इनके लिए क्या नहीं कर डालें। घर-बार, बच्चों की पढ़ाई, कारोबार सब बातों को पूछते हैं और भरसक मदद करने का प्रयत्न करते हैं, ऐसा आत्मीय व्यक्ति नहीं देखा, आदि।

जमनालालजी पढ़े-लिखे कम थे, लेकिन गुने ज्यादा थे और जो कुछ पढ़ते उसे जीवन में उतारने को उतावले रहते। रामायण के भरत-मिलाप के प्रसंग का उनपर गहरा प्रभाव पड़ा था—और अपने मित्रों से वैसे ही मिलते थे। "मिलत एक दारुन दुःख देहीं, बिछुरत एक प्राण हर लेहीं—इस चौपाई का भी उनपर गहरा प्रभाव था—अपनी डायरी में भी उन्होंने इसे नोट करके रखा था।

अपने लिए किसीको कष्ट देना जमनालालजी को पसंद नहीं था। हैजे से मृत्यु की बहुत तारीफ करते थे कि २-४ घंटे से ज्यादा सेवा नहीं लेनी पड़ती। लेकिन जबसे हार्टफेल से मृत्यु होने का सुना तो इस तरह की मृत्यु पर फिदा हो गये। कहते थे, "इस मृत्यु से जानेवाले को दूसरों की सेवा का कर्ज नहीं लेना पड़ता, दूसरों को कष्ट भी नहीं होता, और वेदना भी नहीं भोगनी पड़ती। ऐसी मृत्यु पानेवाला तो महान आत्मा ही होता होगा।"

"बीमारी से मुझे हमेशा बहुत डर लगता है। यहांतक कि घर में भी कोई बीमार हो जाय, तो मैं तो उसके पास जाने तक से कतराती हूं। और छूत की बीमारी से तो राम ही बचाये। यों मृत्यु का डर नहीं है। मृत्यु हो तो बस ऐसे बैठे-बैठे हो जाय। लेकिन बीमारी के कष्ट भोगना मेरे बस का नहीं।"

मोरांसागर में चौकीदार-नौकर किसीके भी साथ घूमने जाते और चर्चा करते रहते। दूर के कुओं से स्त्रियां पानी भरने जातीं तो उन्हें देखकर जमनालालजी को बहुत संताप हुआ कि ये औरतें कितना कष्ट पाती हैं। किसीने कुछ खिलाया तो भीलनी का प्रसाद समझकर खा लेते। जाट स्त्रियों ने नाच-गाना दिखाया, तो उनके बच्चों पर अपना प्यार बरसा दिया। लेकिन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इनसब चीजों का बदला कैसे चुकाएं—आखिर थे तो कैदी ही। इसका उन्हें बहुत मलाल रहता।

मैं, कमला, ओम वगैरा कोई मिलने जाता तो कहते—इन स्त्रियों का गाना-नाच देखना और इनके पानी के घड़ों में रुपये डालना, प्रसाद के रूप में इन्हें कुछ वांटते जाना वगैरा। परमार्थ की भावना तो ऐसी थी कि बस उतावले रहते कि हर किसीको हर किसी तरह सुखी कर दें।

गांववालों को शेर का खतरा था तो नजरबंद होते हुए भी राज से शिकायत की। झगड़ा किया। कुएं दूर थे तो गांव में ही कुआ बनाने को उत्सुक—आधा खर्च मैं दूंगा आधा श्रमदान करो। उनका कहना था कि अगर सच्ची जरूरत होगी तो श्रमदान करके कुआं बनाएंगे।

कुछ समय वाद तो गांववालों ने अपनी मुसीबतें जमनालालजी से कहना ही छोड़ दिया कि हम तो सहज कह देंगे, लेकिन सेठजी उन्हें दूर करने के लिए दिल-जान लगा देंगे।

हम जब भी उनसे मिलने जाते, वह जयपुर के सब मित्रों और कार्यकर्ताओं के घर का हालचाल पूछते। हमसे कहते कि हमें उन सबके यहां जाते रहना चाहिए, उनके दुःख-दर्द पूछना चाहिए, कोई भी अड़चन हो तो मुझे कहना आदि।

जेल से पत्र लिख-लिखकर वह कार्यकर्ताओं का हौसला वढ़ाया करते थे। देश के काम में परिवार के लोग आगे बढ़ें, इसके लिए वह हमेशा सबको प्रोत्साहित करते रहते थे। विले-पारले छावनी में मैं शराब की दुकानों पर पिकेटिंग करती, भाषण देती। जमनालालजी जेल में थे। मेरे भाषण वगैरा की खबरें जमनालालजी जेल में पढ़ते। सो जेल से मुझे एक पत्र लिखा—

"अभी तक लोग तुम्हें जमनालालजी की पत्नी के रूप में जानते हैं लेकिन जब मैं जेल से छूटकर आऊंगा तो लोग कहेंगे कि जानकीदेवी के पति आये हैं।"

उनका वड़प्पन इसीमें था कि छोटे-से-छोटे व्यक्ति को भी इतना वढ़ावा देते कि वह अधिक उत्साह और तेजी से काम करने लगता।

धुलिया-जेल में जमनालालजी को 'ए' वर्ग मिला था—लेकिन उन्होंने जान-बूझकर, "सी" वर्ग लिया। जेलर तो चाहते थे कि वे 'ए' में ही रहें तो अच्छा वरना ये दूसरे कैदियों को "विगाड़ेंगे"। "सी" वर्गवालों को मशक्कत करनी पड़ती है। जमनालालजी ने भी काम मांगा। उन्हें सब काम बता दिये गए। उन्होंने बैलों की जगह खुद मोठ से पानी निकालने का काम चुना। उन्हें प्रसन्नता थी कि हमारे द्वारा निकाला गया पानी बहनों की बैरक में भी जाता है।

जेल जाने के पहले जमनालालजी ने वर्धा में मुझे कह दिया था कि मदालसा और ओम को झंडा लेकर धुलिया से सत्याग्रह में भिजवा देना। उन्हें संतोष था कि वे दोनों भी इसी जेल में अन्य बहनों के साथ रहेंगी। जेल में उनसे मिल पाना तो असंभव रहता, लेकिन यह अहसास तो उन्हें रहता ही कि मेरी लड़कियां इस दीवार के पीछे अन्य बहनों के साथ हैं।

ओम् और मदालसा को धुलिया से सत्याग्रह में भेजना—यह बात वर्धा में तो मुझे जंच

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गई। लेकिन जब कुछ ही रोज बाद एक आदमी धुलिया से आया—ओम् और मदालसा को लेने तो ममतावश मैं असमंजस में पड़ गई। ओम् को भेजने में संकोच कम था—कारण कि वह शरीर से मजबूत थी। लेकिन मदालसा की तबीयत ठीक नहीं थी और वैसे भी वह कुछ ज्यादा ही नाजुक थी। मेरे मन में विचार था कि वह जेल-जीवन को कैसे बर्दाश्त कर पायगी। मैंने उस धुलियावाले आदमी से कहा—भाई इन १२-१५ वर्ष की लड़कियों को जेल क्या भेजना ? सो वह लौट गया।

बाद में जब जमनालालजी को पता लगा, तो बोले—भेज देतीं उन्हें तो तुम्हारा क्या बिगड़ता ? मैं भी सोचती कि भेज ही देती तो अच्छा था। कुछ अनुभव मिलता इन लड़कियों को। मदालसा को तो अब भी अफसोस है कि सारा देश जेल गया, लेकिन मां ने ममतावश मुझे ही जेल की तपश्चर्या से वंचित रखा।

जमनालालजी पुलिस-कचहरी के हमेशा विरुद्ध थे। जहांतक बन पड़े अपने झगड़े आपस में ही निबटा लेने चाहिए, ऐसा वह सोचते थे और ऐसा ही प्रयत्न भी करते थे। वर्धा की दुकान पर एक मुनीम थे—बहुत पुराने और ईमानदार। एक बार उनके लड़के ने दुकान पर चोरी कर ली। उन्होंने फौरन पुलिस को बुलाया और लड़के को पुलिस के हवाले कर दिया। जमनालालजी कहीं बाहर गये थे। लौटकर आये तो उन्हें पता चला। उन्हें बहुत दुःख हुआ। पुलिस बुलाकर मुनीमजी ने अपने लड़के और घर की इज्जत गंवाई। और जेल जाकर यह १६ वर्ष का लड़का सुधरने से तो रहा, बल्कि एक बार जेल जाकर तो वह और भी बेशर्म हो जायगा, अगर आज मेरा लड़का चोरी करता तो आदि विचार उन्हें आये। लड़के को उन्होंने बुलाया और ऊपर ले जाकर घंटों उसे समझाया, लड़के ने भी गलती कबूल कर ली। हो सकता है कि पुलिस के सामने वह गलती कबूल ही नहीं करता।

दृढ़ता और निर्भीकता जमनालालजी के विशेष गुण थे। राजस्थान के बगड़ गांव में जमनालालजी ने सेवा-समिति की स्थापना की। राज ने सोचा—जरूर यह कोई साजिश है। सेवा-समिति के सदस्यों को पकड़कर बन्द कर दिया; उन्हें तितर-बितर करने के लिए घोड़े दौड़ाये। जमनालालजी को लोगों ने बंबई तार किया। जमनालालजी राजा से मिलने बगड़ गए। राजा ने कहा—बगैर टोपी पहने मिलो। जमनालालजी ने निर्भीकता से कह दिया—"टोपी नहीं उतारूंगा। मिलना हो तो मिलो।" राजा मिले—जमनालालजी ने उन्हें समझाया। वह मान गए और लोगों को छोड़ दिया।

स्कूल-कालेज की पढ़ाई में हालांकि जमनालालजी अधिक आगे नहीं बढ़ सके, फिर भी अध्यवसाय से अपना व्यवहार ज्ञान उन्होंने इतना बढ़ाया था कि व्यावसायिक और सार्वजनिक जीवन में उन्हें अत्यधिक सफलता मिली। बड़े-बड़े व्यापारी और नेतागण तक इनसे सलाह-मशविरा किया करते और उनके व्यवहार-ज्ञान की दाद देते थे।

रुइया-परिवार से हमारा घनिष्ठ संबंध था। जमनालालजी का उस परिवार में बहुत असर था। हालांकि पश्चिमी ढंग का रुइयाओं पर काफी प्रभाव था, फिर भी जमनालालजी तो अपना जादू चलाते ही थे।

एक बार गर्मियों में रुइया-परिवार के साथ धुम्मस का प्रोग्राम बनाया। शाम के समय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रामनारायणजी रुइया की पत्नी के साथ हम सब घूमने जाते। अब मेरे सामने समस्या कि रोज नये कपड़े कहां से लाऊं। तो मैंने नया तरीका निकाला। एक ही साड़ी और ब्लाउज दो दिन चलाती। तीसरे दिन बदलती। वे लोग मेरी सादगी की बड़ाई करते। मैं कहती—जी, रोज घूमने जाना और आधा घंटा यही तय करने में लगाना कि आज कौन-सा कपड़ा पहनें, इससे अच्छा दो दिन एक ही कपड़े पहनना—दो दिन का तो आराम रहे।

सुव्रताबाई को जमनालालजी धर्म-बहिन मानते थे। उनका नाम सुबटाबाई था, लेकिन जमनालालजी ने बदलकर सुव्रताबाई रख दिया। चूंकि उस परिवार में पश्चिमी जीवन का ज्यादा रंग था, इसलिए जमनालालजी की इच्छा रहती कि उन्हें साधु-संतों की संगति मिले।

रामनारायणजी बीमारी से पीड़ित थे। डॉक्टरों का इलाज तो चलता ही था, लेकिन जमनालालजी ने सोचा कि अगर इन्हें आध्यात्मिक खुराक भी मिले, तो उससे आराम मिलेगा। इस विचार से जमनालालजी ने अच्युतस्वामी से उनका साथ कराया। फिर श्री केदारनाथजी का साथ करने का सोचा। लेकिन उसके लिए सुव्रताबाई और रामनारायणजी को भी राजी करने की समस्या थी। नाथजी श्री किशोरीलालभाई के गुरू थे। और जमनालालजी भी उन्हें बहुत मानते थे। घर-बार, खर्चे व्यापार, आदि सबमें उनसे सलाह लेते थे। लेकिन रामनारायणजी को साधु-संतों से काम ही क्या? अंत में जमनालालजी की बात का उनपर असर हुआ और नाथजी के आध्यात्मिक ज्ञान का उनपर अच्छा प्रभाव पड़ा।

बापूजी के 'पांचवे पुत्र' बनने के पहले जमनालालजी तीन वर्ष तक सर जगदीशचंद्र बोस के पुत्र बनकर रहे थे। कलकत्ता में कई बार उनके दर्शनों के लिए जमनालालजी मुझे उनके यहां ले जाते थे। उनकी बहुत ही तारीफ करते थे। पर मैं क्या समझती कि विज्ञान के क्षेत्र में उन्होंने कितना भारी योगदान दिया है? दिखने में तो बिलकुल ही साधारण व्यक्ति लगते थे। फटी गुदड़ी पर एक कोने में बैठे रहते थे। रौब का तो काम ही क्या था? पर मुझे जानना चाहिए था कि गुदड़ी में भी लाल होते हैं।

एक बार वर्धा स्टेशन से गुजरे तो जमनालालजी कमला और कमल को स्टेशन ले गए थे। बेटे की बेटी आई है, तो उसे प्रेम-भेंट देनी, यह सोचकर श्री बोस ने अपने हाथ की चांदी की चौकोर घड़ी कमला को दी। कई वर्षों तक वह घड़ी मैंने इस्तेमाल की। एक बार लक्ष्मणगढ़ गई थी तब वह चोरी हो गई। मुझे उस घड़ी के चले जाने का बहुत अफसोस हुआ था और आज भी है।

जगदीशचंद्र बोस की लेबोरेटरी के लिए जमनालालजी ने बहुत सहायता की थी। वह बोस को बहुत ही तपस्वी, विद्वान और देश का भला करनेवाला मानते थे। मैं जब-जब उनसे मिली, उनकी सरलता और सहृदयता की ही छाप मुझपर हमेशा पड़ी।

राजाजी बापू के मित्र व समधी भी थे। दोनों के विचारों में अक्सर मतभेद हो जाता। तब कई दिन तक आश्रम में बैठकर विचार-विनिमय करते रहते। एक दिन तो घंटों कुटिया के बाहर खटिया पर बैठे आपस में बातें करते रहे। प्रार्थना का समय हुआ, तो बापू को हमने यह कहते हुए सुना—"राजाजी, मैं आपको अपने विचार शब्दों में समझाने में असमर्थ हूं।" राजाजी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ने जवाब दिया—"बापू, मेरा भी यही हाल है।" दोनों अपने-अपने विचारों में पक्के थे। लेकिन दोनों के बीच प्रेम और श्रद्धा अटूट थी। दरअसल उस जमाने की राजनीति का स्तर इतना ऊंचा था कि विचार-भेद कभी व्यक्तिगत मनोमालिन्य का कारण नहीं बना।

राजाजी अक्सर कांग्रेस कार्यसमिति की बैठकों में भाग लेने वर्धा आया करते थे। हमारे परिवार से घनिष्ठता होती गई और फिर तो वह भी परिवार के सदस्य की तरह ही हो गये। मद्रासी भोजन रसम आदि के वह बहुत शौकीन थे और खुद ही रसोड़े में आकर मसाला वगैरा जो चाहिए इधर-उधर तलाश करके ले लेते।

नागपुर झंडा सत्याग्रह में जमनालालजी जेल गए। उस दिन सारे वर्धा में सन्नाटा छाया हुआ था। रात को गांधी चौक में राजाजी का भाषण हुआ। बहुत ही मार्मिक भाषण था वह। उन्होंने कहा कि राम-वनवास के समय जो हाल अयोध्या नगरी का था वही हाल आज जमनालालजी की जेल-यात्रा के कारण वर्धा-नगरी का हो रहा है।

राजाजी की बड़ी पुत्री "पापा" बाल विधवा थीं। जमनालालजी उसे अपनी पुत्री की तरह ही चाहते थे। उन्होंने मद्रास में एक छोटा-सा मकान खरीदा था। बाद में उसे पापा के नाम कर दिया।

माखनलाल चतुर्वेदी (दादा) को जमनालालजी अपने बड़े भाई के रूप में आदर देते थे। उनसे हर बार मिलकर उन्हें बहुत ही आनंद होता था। दादा विद्वान तो थे ही, त्याग और सादगी की भी वह एक मूर्ति थे। इन तमाम गुणों के कारण "एक भारतीय आत्मा" (जिस उप-नाम से वह कविताएं लिखा करते थे) नाम बहुत ही सार्थक लगता है। जमनालालजी जब खंडवा के आस-पास भी जाते, तो खंडवा जाकर दादा से मिलने की कोशिश उनकी हमेशा रहती।

एक बार दादा वर्धा आये तो जमनालालजी बहुत खुश हुए। सुभद्राकुमारी चौहान और दादा की कविताएं सुनीं और भावविभोर हो गये। दादा के गुणगान करते तो वह थकते ही नहीं थे।

दादा से मिलकर मुझे भी कविता लिखने का शौक चर्राया। कविता बनाने में मुझे रस तो बहुत आता है, लेकिन तुक मिलाना बहुत कठिन लगता है। और फिर अलंकार, अनुप्रास का भी ज्ञान नहीं!"

कमल का जन्म हुआ तो स्त्रियों ने कहा—बाप बेटे को गोद में ले तब हाथ में कुछ देता है। तुम्हें तो क्या कमी है, लेकिन कई पीढ़ियों में पुत्र-रत्न हुआ है तो कुछ शकुन करना ही चाहिए। ४० दिन बाद जमनालालजी जापे की कोठरी में आये। मैं कमल को गोद में देने लगी तो पहले तो शरम से गोद में लें ही नहीं। उस जमाने के रीतिरिवाज ऐसे ही थे। मैंने उनसे कहा —स्त्रियां कहती है कि बेटे के हाथ में शगुन का कुछ देते हैं। वह बोले—छोटी दुकान में तुम्हारे पीहर का ५०० रु० जमा है, उसीमें १००० रु० और जमा करा देंगे। बेटे का इनाम मां को मिला, इसमें शायद थोड़ी खुशी हुई हो, बाकी पैसा आने की खुशी का सवाल ही कहां? जेवर, कपड़ा, फल, कुछ भी लो और सही कर दो—नकद लेने-देने से तो भगवान ने हमेशा ही बचाया।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जेवर भी डालूराम नौकर संभालता था। ताला-कुंजी मुझे देने में भी डरते थे कि मैं कहीं खो दूं—या कुछ दे डालूं किसीको। फिर बापू के आने के बाद ताला-कुंजी लगाते भी कहां। खुद ही गुमे पड़े थे। इसलिए मेरे लिए हजारों, लाखों 'कागज के टुकड़ों' की कीमत क्या हो। हां—, छोटी थी तब जावरा—मेरे पीहर—में मालिनों से आम-जाम वगैरा लेते थे, तो उसे धेला-छदाम कुछ देते थे। इसलिए आना, पैसा, पाई से जितना प्यार है उतना रुपये के नोटों से नहीं।

जब राम का जन्म हुआ तब जमनालालजी नागपुर-जेल में थे। अब बेटे की बधाई में मुझे पत्र लिखा तो खुश (राजी) करने के लिए क्या लिखें ? सो याद आया होगा कि कमल को १००० रु० दिये थे। तो पत्नी को खुश करने के लिए रकम का आंकड़ा लिखो। अगर वह वर्धा में ही होते उस समय, तो यह "तुच्छ" विचार रुक जाता। पर दूर थे, तो ११०० रु० लिख दिये। मुझे तो क्या खुशी होती ? मेरे लिए तो एक लाख रुपया या एक रुपया समान था। अतः मैंने उनके उसी पत्र में लिख मारा कि जब हमें अपना जीवन सार्वजनिक सेवा में ही लगाना है, तो पैसों का 'मूल्य' तो नहीं रहा।

गांधी चौक में हमने तो सारी रकम बेटे और बहुओं में बांट दी। व्यापार आदि की झंझट से मुक्ति पाने की कोशिश में ऐसा उन्होंने किया होगा। मैंने मजाक में सहज भाव से कह दिया कि मुझे तो आपने कभी एक कौड़ी भी नहीं दी। मेरे पीहर के ५०० रु० थे, वे भी राम जाने। तब थोड़ी गंभीरता से वह बोले—तुम्हें पैसों का करना ही क्या है ?लेकिन बाद में दुकान-वालों से उन्होंने कहा कि २५००० रु० जानकीदेवी के खाते में छोटी दुकान में डाल देना। पैसे के कारण मुझे हर्ष या शोक होने से रहा। सारा मंत्र एक ही तो था। मैंने वह सारी पूंजी खादी में ही खर्च करने का तय किया। कारण कि मेरा खर्च तो कुछ खास था नहीं। जहां घर में १००-५० मेहमान रहते ही थे हमेशा, वहां एक मैं भी। जमनालालजी की संपत्ति गो-सेवा और बापू के अर्पण ही थी। जहां का फूल वहीं चढ़ गया।

मैं स्वभाव से कंजूस हूं। लोग भी कहते हैं और मैं भी जानती हूं। एक बार सुमन (कमल की लड़की) ने कहा—"दादीजी, आप फटी साड़ी भी नहीं दे सकती हो किसीको, तो नई तो क्या दोगी ?"

एक बार राम ने मजाक में कहा कि मां को सेकंड-हैंड चीजों की दुकान खोल देनी चाहिए। उसने भले ही मजाक में कही हो, लेकिन यह बात मुझे बहुत ही पसंद आई। मन में विचार आया कि जो चीज कोई बेकार समझे वह दे जाय और किसीको वह चीज अच्छी लगे और जरूरत हो तो सुविधाजनक कीमत पर ले जाय, उसमें हर्जा क्या है ? मैं इधर-उधर का निरुपयोगी सामान जुटाती हूं और संस्थाओं में जहां उनका उपयोग होता है या हो सकता है, दे आती हूं।

एक बार गाडगे महाराज को जमनालालजी ने लक्ष्मीनारायण मंदिर के उत्सव में बुलाया। कीर्तन-भजन चल रहा था कि गाडगे महाराज मुझसे बोले—"जमनालालजी के महल-मालियों को अपना मानोगी तो इतना ही तुम्हारा है, और इनको छोड़ोगी तो जग तुम्हारा होगा। मुझे देखो, मैं एक मिट्टी की लुटिया रखले फिरता हूं तो सारी दुनिया मेरी है, हजारों लोटे भेंट में आते हैं और मैं बांट देता हूं"।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कई बार यह भी ख्याल आ जाता है कि अपने लक्ष्मीनारायण मंदिर में थोड़ी सफाई करके, झाड़ू निकालकर खाने में भी हरजा नहीं है—हां, यह बात जरूर है कि रसोई बनाने और झाड़ू निकालने का मुझे संताप ही रहा है। और वैसा निभ भी गया मेरा। कारण कि बापूजी की चर्चाओं आदि से प्रभावित होकर गेहूं की रोटी के बदले कच्चा गेहूं भिगोकर खाने में ज्यादा सुख मिलता है। इस तरह मेहनत से भी बचे, गेहूं भी कम लगा और लाभ तो ज्यादा है ही—कम-से-कम मुझे तो।

सोने के बारे में भी यही हाल है। जबसे साबरमती में यह सुना कि कड़ी चीज पर सोने से रीढ़ की हड्डी सीधी रहती है तो वह बात मेरे गले उतर गई। तबसे हमेशा लकड़ी के पाटे के पलंग पर ही सोना शुरू कर दिया—निवाड़ के पलंग पर सोना ही छूट गया। जमीन पर सोना तो सबसे अच्छा लगता है। निवाड़ का पलंग या लकड़ी के पाटे का पलंग कहीं मिले, न मिले, लेकिन जमीन तो हर जगह होती है।

रुई का व्यापार घर में था, लेकिन मेहमानों का तांता लगा रहता था, सो उस भीड़-भाड़ में रजाई-गद्दी अपनेको कहां मिले? फिर हर बार धोने वगैरा की भी झंझट। सो कंबल पर जूनी—पुरानी धोतियों का खोल बनाकर अपना काम सुख से चल जाता है। जमनालालजी कहीं भी जाने के पहले मना कर देते कि उनके बिस्तर में रजाई-गद्दी नहीं रखी जाय, कारण कि बिस्तर भारी हो जाता है और नौकर को उठाने में कष्ट होता है। लेकिन मेहमानों के लिए हर चीज़ का होना उनकी दृष्टि से जरूरी था—इस हद तक कि कई बार तो मुझे झुंझलाहट हो जाती।

कमला को बच्चा होनेवाला था तब की बात है। उसके लिए एक बहुत ही नरम और बढ़िया रजाई मैंने बनवाई। वह कमरे में रखी हुई थी। उसी दिन शाम को एक बहन ट्रेन से आईं और बजाजवाड़ी में ही ठहरीं। १०३ डिग्री बुखार और शरीर में फोड़े। जमनालालजी तो बस उतावले—इसके लिए बिस्तर लगाओ, रजाई लाओ वगैरा-वगैरा। उनके हुक्म के आगे फिर नौकर और किसकी सुनें? बस, फौरन बिस्तर लग गए और कमलावाली रजाई उसे उढ़ा दी। मैंने सोचा—हे राम! न जाने कैसा बुखार है, क्या बीमारी है और कमला की नई रजाई उढ़ा दी। अब यह रजाई कमला के काम कैसे आयगी? और फिर वह कमला के काम आई ही नहीं।

ऐसे ही एक बार कोई मेहमान वर्धा से गुजरनेवाली थीं। जमनालालजी मिलने स्टेशन गए। वहां गाड़ी ३-४ घंटे लेट। मेहमान को टी० बी०! सो जमनालालजी ने नौकर दौड़ाया कि बंगले से जाकर बिस्तर ले आओ—उन्हें क्यों बार-बार लाना ले जाना। आदमी आया और ताबड़तोड़ सामने जो भी बिस्तर बंधा दिखा ले भागा। जब मुझे पता चला कि यह बिस्तर तो उस टी० बी० की मरीज के लिए मंगाया गया है, तो मेरी तो ऊपर की सांस ऊपर और नीचे की नीचे। "हे राम। यह कहां की मेहमानवाजी! घरवालों का तो कुछ ख्याल करना चाहिए।" लेकिन जमनालालजी की तो बस यही इच्छा कि जिसकी जितनी सेवा इस जन्म में हो सके कर लें।

तो इनसब झमेलों से छुट्टी पाने के लिए यही तय किया कि रुई के बिस्तर के इस्तेमाल

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

से ही बचना।

एक बार मैं सावित्री के पास मसूरी गई थी। उसने मेरे लिए निवाड़ के पलंग पर विस्तर लगवा दिया। मैं काफी थकी हुई थी, सो लेट गई। लेकिन नींद नहीं आवे। फिर मुझे ख्याल आया कि पलंग की ही गड़वड़ है। अव जमीन पर सो जाऊं तो नींद तो आ जाय, लेकिन नौकर लोग जूते पहनकर घूमते हैं। फिर सुवह जल्दी उठने की आदत नहीं—और बहू अगर ऐसा सोते देख लेवे तो उसे बुरा लगे। जैसे-तैसे रात काटी। सुवह सहज भाव से बहू से गई रात का किस्सा सुनाया। वह वोली—तो फिर आप नीचे ही सो जातीं—कम-से-कम नींद तो आ जाती। तो मुझे चैन आया कि चलो जमीन पर तो सो सकूंगी अब। लेकिन सावित्री तुरंत रिक्शे में बैठकर बाजार गई और लकड़ी के पाटे का आर्डर देकर आई जो उसी दिन शाम तक आ गये। मैंने पूछा कितने के हैं तो वहां कौन बतावे। वाद में पता चला कि ३५ रुपये के थे। सोने को तो मैं उनपर सुख से सोई, लेकिन जब मसूरी से आने लगी तो जी दुखा कि अब इन पाटों का क्या होगा? घर के बच्चे उनपर सोएं तो उनकी कमर सीधी हो जाय। लेकिन उन्हें तो चाहिए निवाड़ का पलंग और मोटे-नरम गद्दे। आज के फैशन के जमाने में ये चीजें मेल थोड़े ही खाती हैं!

जमनालालजी का स्वर्गवास

स्त्री को पति का सही महत्त्व उसकी अनुपस्थिति में ज्यादा महसूस होता है। वैसे तो बेटे-बेटियां-पोते आदि की ममता भी स्त्री के लिए कम नहीं होती, पर पति के समय घर में जो अधिकार स्त्री का होता है वह बच्चों-बेटों के राज में नहीं होता। यदि स्त्री उदास है, उसके मन में कुछ दर्द या कष्ट है, उसकी आंख में पानी है, तो पति पिघल जाता है, और वह जिस तरह पत्नी को खुश करने के लिए उत्सुक रहता है वह बात बेटों, पोतों में कैसे आ सकती है। सिर में दर्द है, पत्नी का चेहरा उदास है तो पति चाहे जितना थका हुआ हो, अपनी थकावट और कष्ट भूलकर पहले पत्नी को संभाल लेगा। उसे संतोष देने का प्रयत्न करेगा। पर कोई यह समझ ले कि पति-पत्नी में इतना अधिक स्नेह और आत्मीयता होने पर भी उनमें झगड़ा न होता हो तो वह भूल होगी। यदि अधिक-से-अधिक झगड़ा किसीमें होता हो तो पति और पत्नी में ही। पति यदि अपना सारा गुस्सा कहीं उतारता है तो पत्नी पर ही। पति के लिए पत्नी से बढ़कर दूसरा कोई इतना निकट का आत्मीय नहीं होता।

जमनालालजी का मुझपर वेहद प्रेम था और मेरा उनके प्रति अत्यधिक स्नेह और आदर! यदि एक तरफ भगवान हों और दूसरी तरफ जमनालाजजी हों तो मैं भगवान की तरफ न देखकर जमनालालजी के साथ रहना ही अधिक पसंद करूंगी। यह कोई शारीरिक आकर्षण की वात नहीं थी, क्योंकि वह संबंध तो हमने कई वर्षों पहले ही त्याग दिया था। फिर भी न मालूम उनके प्रति ऐसा कौन-सा आकर्षण था कि मैं उनकी सेवा और सुख-सुविधा के पीछे पागल बनी रहती थी। यह तबकी वात है जब हमारी उम्र काफी प्रौढ़ हो गई थी और हमने शारीरिक संबंध सर्वथा त्याग दिया था। अब रात को जब भी आंख खुलती तो देखती कि कहीं वह जग तो नहीं गये और वह न भी जगे हों तो जग जायंगे और मैं सोती ही रहूंगी, ऐसी चिंता सदा मन में बनी रहती थी। जागने पर उनके विषय में हजार तरह की चिंताएं आती रहतीं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हमारे परस्पर के प्रेम में न मालूम कितने हिस्सा बटानेवाले थे, जो हमें निकट नहीं आने देते। इससे आपस में चखचख चलती ही रहती। मैं चाहती थी कि वह सेवा लें तो मुझसे ही लें। उन्हें कोई अपनी सेवा करवानी हो तो मुझसे करवायें और कहें। लेकिन उनकी सेवा करने के लिए तो एक फौज-सी ही तैयार रहती थी। मुझे अवसर ही कहां मिलता। नौकर, सेक्रेटरी, कार्यकर्ता आदि के कारण उनके और मेरे बीच जो खाई बन गई थी उसे कैसे पाटा जाय। यदि उन्होंने स्नान के लिए कपड़े मांगे तो नौकर दौड़े। वाहर जाना है और पानी पीना है तो पानी लेकर दूसरे ही तैयार रहते, सर में दर्द हो रहा है तो मलने के लिए मेरा नंबर ही नहीं लगता। मेरी व्यथा वह जानते न हों सो वात नहीं, पर दूसरे का मन भी दुखाना नहीं चाहते थे। मेरा मन दुखने पर मुझे तो समझा भी सकते थे और आखिर मैं तो उनकी थी ही, पर दूसरों की मनोभावना का ख्याल तो उन्हें प्रथम करना पड़ता था, इसलिए मैं रात-दिन ईर्ष्या की अग्नि में जला करती थी।

यह वात सही है कि वह महान थे। उनका काम करना या अनुकरण करना मेरे वस की वात नहीं है। पर जितना कर सकती हूं उतना ही करूं, कुछ तो इस विचार से और कुछ अधिकार-रहित बन जाने के कारण मेरी गुस्सा पीने की आदत वन गई है, क्योंकि अब मेरे गुस्से का मूल्य भी क्या है और जलन तो मिट ही गई है। यही कारण है कि मैं उनके बिना भी इतनी दीर्घ अवधि तक जीवित हूं और अच्छी तरह जीवित हूं। अब रात को जल्दी सोकर भी ६ बजे तक सोती रहती हूं। पहले तो नींद खुलती और उनकी चिंता करती, अब न उनकी चिंता ही करनी पड़ती है और न उनकी सेवा, दूसरे करें, ऐसी डाह ही रही है। फिर मैं यह कैसे कहूं कि उनके जाने से मुझे दुःख हुआ और यदि हुआ तो अपने स्वार्थ के लिए ही हुआ था। वह जाने से इसलिए सुखी हुए कि उन्होंने सेवा में अपने शरीर को इतना घिस डाला था कि वह बिलकुल खोखला बन गया था। हां, यह बात सही है कि यदि वह आज रहते तो देश का, हजारों नहीं लाखों का भला करते। पर वह कैसे टिकते, उनके कष्टों को देखकर ही तो भगवान ने उनपर दया की। उन्हें अपने पास बुला लिया।

९ फरवरी, १९४२ की बात है। राधाकृष्ण एक पुराने नौकर बृजलालजी को जमनालालजी के पास गोपुरी ले गया और बोला—"बृजलालजी का दुकान या ग्राम-सेवा-मंडल कहीं भी जमना मुश्किल है, तो आप कहें वैसा करें।" जमनालालजी ने कहा—"बृजलालजी, तुम फिकर मत करो, काम बहुत हैं। दो दिन में गोपुरी से काकावाड़ी के रास्ते में जो गड्ढे हैं और जो ऊबड़-खाबड़ हिस्सा है उसे पाट दो।"

बृजलालजी ने १० ता० को ही सारा रास्ता साफ करवा दिया। ११ ता० को सुबह जमनालालजी उस साफ रास्ते से होकर आस-पास की संस्थाओं का चक्कर लगाते हुए लक्ष्मी-नारायण मंदिर, खादी भंडार और वहां से दुकानवाले घर पर गये। उसी दिन ३-४ बजे उनका शरीरांत हुआ। अजीब संयोग है। वर्षों तक उस ऊबड़-खाबड़ रास्ते पर चले, अंतिम समय साफ रास्ते पर होकर गये। उस दिन सभी बातें अर्थभरी हुईं—आज सोचने पर ऐसा लगता है। सुबह दुकान जाते समय मुझसे बोले—"लोगों के आने में देर है, तुम साथ चलो—रास्ते में बातें करते चलेंगे।" इतने में रामनारायणजी चौधरी वगैरा आ गये तो उनसे बोले—"अभी तो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जानकीदेवी को समय दिया है।" सो वे लोग राजी से अलग दूर चलने लगे। मुझे कुछ डर-सा लगने लगा—आखिर आज खास बात क्या करनी है मुझसे ? मेरे पास तो इधर-उधर की शिकायतों के अलावा और बात ही क्या—और उससे उन्हें तो खुशी होने से रही। तो मैं बोली—"आज ही ऐसी क्या बात है ? इन लोगों से बातें करो।" खैर—वह उनसे बातें करते हुए चले। लेकिन मुझे अब भी सोच बना रहता है कि ऐसी क्या बात है, जो उस दिन मुझसे करना चाहते थे।

दो-एक दिन पहले ही उन्होंने मुझसे कहा था कि मृत्युपत्र ले आना, उन्हें रद्दी कर देंगे। मैं बोली—"दुकान की तिजौरी में रखे हैं, जाऊंगी तब लेती आऊंगी।" ११ ता० को जा रही थी तो लेती आती—लेकिन मौका ही नहीं आया। फाड़ने से रह गए तो अच्छा ही हुआ—उनसे जमनालालजी के बचपन से लेकर अंत तक के विचारों का पता चलता है।

जमनालालजी का मनोमंथन :

जमनालालजी के मन में किशोरावस्था से ही आध्यात्मिक उन्नति व शांति के लिए विचारमंथन चलता था। उनके जीवन का यह एक महत्त्वपूर्ण पहलू था। जीवन के अंतिम काल में माता आनंदमयी से मिलकर उन्हें असीम समाधान मिला था। विचारों की यह उथल-पुथल किन्हीं विशेष कारणों से थी और उसके समाधान के लिए उनकी छटपटाहट अंत तक बनी रही। वे कारण विशेष क्या थे यह जानने के लिए जरूरी है कि, पुनरावृत्ति होने पर भी, संक्षेप में जमनालालजी के जीवन का लेखा-जोखा लिया जाय।

सीकर के काशी-का-वास नामक गांव में जमनालालजी का जन्म हुआ। पिता कनीरामजी तीन भाई थे। तीनों भाइयों के परिवार एक ही हवेली में रहते थे, हालांकि चूल्हा-चक्की अलग था। ३०-३२ जनों से भरीपूरी हवेली थी यह। कनीरामजी की पत्नी बृद्धिदेवी सुंदर थीं और जमनालालजी भी अपनी मां पर ही गये थे। गोरा चेहरा और भरा बदन; मांजी उनके चेहरे पर जगह-जगह काला रंग लगा देती थीं कि कहीं नज़र न लग जाय। खाना-पीना, खेलना-कूदना—ऐसे ही जीवन गुजर रहा था।

वर्धा के सेठ बच्छराज बजाज सीकर आये। बच्छराजजी पांच भाई थे, लेकिन किसीको भी संतान नहीं थी। सो बच्छराजजी अपने दत्तक पुत्र रामधनदासजी को जात दिलाने सीकर गए। वहीं अकस्मात् रामधनदासजी की मृत्यु हो गई। सीकरवासी बहुत परेशान हुए, उन्होंने सोचा कि इन्हें तो अब बच्चा देकर ही वापस भेजना चाहिए। रामधनदासजी के भी कोई संतान नहीं थी। सो वे बच्छराजजी कासी-का-वास कनीरामजी के यहां आये। बच्छराजजी की पत्नी सद्दीबाई भी काफी सुंदर थीं। उन्हें पीढ़े पर बैठाया। कुछ ही दिन पहले जमनालालजी की दादी (कनीरामजी की माता) का स्वर्गवास हुआ था। सद्दीबाई को देखते ही जमनालालजी "दादी आ गई—दादी आ गई" कहते हुए सद्दीबाई के पास आ गये। सद्दीबाई बोलीं कि यह तो मेरे पास आ रहा है। जमनालालजी की मां ने कहा—"आपका ही है।" सद्दीबाई ने गांठ बांध ली। जब कनीरामजी और बृद्धिदेवी को बच्छराजजी के कासी-का-बास आने का कारण पता चला तो वह बहुत असमंजस में पड़े। बच्छराजजी और सद्दीबाई ने जमनालालजी को दत्तक लेने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

का सुझाव कनीरामजी के सामने रखा। वृद्धिदेवी अपने बेटे को बहुत ही चाहती थीं। जमनालालजी के अलग होने का सपने तक में ख्याल नहीं कर सकती थीं। अंत में कनीरामजी ने वृद्धिदेवी से कहा—"हमें अपने वचन का तो पालन करना ही चाहिए, चाहे फिर वह बात सहज भाव से ही क्यों न कही गई हो।"

बच्छराजजी ने कनीरामजी को भेंट स्वरूप कुछ धन देना चाहा। लेकिन कनीरामजी बहुत स्वाभिमानी व्यक्ति थे। वह इसके लिए किसी भी तरह तैयार नहीं हुए। अंत में बच्छराजजी व गांव के अन्य लोगों के बहुत आग्रह करने पर कनीरामजी ने कहा कि यदि आप कुछ करना ही चाहते हैं तो इस गांव में एक कुआं खुदवा दीजिए ताकि यह गांव जल-कष्ट से मुक्ति पा सके।

इस तरह ५ वर्ष की उम्र में जमनालालजी बच्छराजजी के दत्तक पौत्र होकर राजस्थानी क्षेत्र कासी-का-वास से महाराष्ट्र में वर्धा गए। प्रांत बदला, भाषा, रहन-सहन, खाना-पीना सब कुछ बदल गया। फिर कासी-का-वास में चहल-पहल से भरा घर, उन्मुक्त वातावरण था। वह सब छोड़कर वर्धा के सुनसान घर में आना पड़ा जहां जमापूंजी तीन प्राणी, बच्छराजजी, सद्दीबाई और गोद की विधवा मां बसंतीबाई। न किसीसे जान न पहचान।

बच्छराजजी की पत्नी सद्दीबाई बहुत ही धार्मिक प्रवृत्ति की भली स्त्री थीं। जमनालालजी पर उनका बहुत असर था। अपनी जन्म की मां की दूरी को वह सद्दीबाई की वजह से थोड़ा-बहुत शायद भुला भी पाते, लेकिन जमनालालजी के ११ वर्ष के होते-न-होते सद्दीबाई का भी स्वर्गवास हो गया। इससे जमनालालजी अनमने-से रहने लगे। स्नेह का एक बहुत बड़ा आधार टूट गया था।

सद्दीबाई के जाने से बच्छराजजी को भी बहुत आघात लगा। उन्होंने सोचा कि पोते की शादी कर दें तो अच्छा, बहू का मुंह तो देख लें। १३ वर्ष की उम्र में जमनालालजी का विवाह मुझसे हुआ। मैं तो ९ वर्ष की बच्ची ही थी। हम दोनों ही विवाह के महत्त्व से अनभिज्ञ और एक-दूसरे से बिलकुल अपरिचित थे।

विवाह के समय जमनालालजी के जन्मपिता कनीरामजी को भी सपरिवार सीकर से बुलाया था। साथ में जमनालालजी के छोटे भाई बद्रीप्रसादजी भी थे। विवाह के बाद ही बद्रीप्रसादजी को मियादी बुखार आया और ९ दिन के बाद ही वह चल बसे। उनकी उम्र कोई ११ वर्ष की रही होगी। जमनालालजी और कनीरामजी पर तो जैसे दुःख का पहाड़ ही टूट पड़ा। लेकिन अभी तो और भी दुःख उनके भाग्य में बदे थे। करीब १० महीने बाद ही जमनालालजी की दत्तक मां का भी देहांत हो गया। वर्धा का सुनसान घर और भी सुनसान हो गया।

जब जमनालालजी १७ वर्ष के हुए तब एक ऐसी घटना घटी जिससे उनकी संपूर्ण मनःस्थिति, संस्कार, भाव-स्वभाव का पूरा दिग्दर्शन हो जाता है। जमनालालजी को बाहर गांव किसी विवाह में जाना था। वह तैयार होकर दादा बच्छराजजी के पास आये। बच्छराजजी ने कहा कि कान में मोती की बाली तो पहन लो। जमनालालजी ने इतना ही कहा कि न पहनने से क्या फरक पड़ता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बच्छराजजी भले ही तेज स्वभाव के हों और हमेशा गालियों में ही बात करते हों, लेकिन जमनालालजी को वह बेहद प्यार करते थे। जमनालालजी का भी उनसे लगाव होना स्वाभाविक ही था। इस घटना के कुछ महीनों बाद ही बच्छराजजी का स्वर्गवास हो गया। जमनालालजी को आघात लगा। अगर कोई धीरज था तो यही कि जमनालालजी के सगे बड़े भाई माधवलालजी साथ में ही थे और बच्छराजजी का कारोबार अच्छी तरह संभालते थे। विधि को शायद यह भी मंजूर नहीं था। कुछ समय बाद माधवलालजी को मियादी बुखार चढ़ा और नौ ही दिन में वह भी चल बसे। बहुत भारी सदमा जमनालालजी को लगा। वह इसे सह नहीं पाये और बेसुध हो गये। दादी का निर्मल प्यार, मां का लाड़, दादीजी का स्नेह और भाइयों की ममता की याद उन्हें सताने लगी। उनका जन्मजात वैराग्य और भी तीव्र हो उठा, वह साधु बनने तथा गंगा के किनारे कुटिया बनाकर रहने की बात सोचने लगे।

अपनी बहनों की ओर से भी जमनालालजी को चिंता और दुःख था। मेरी तीन ननदें थीं—तीनों ही मुझसे छोटी। एक दातारामगढ़ में ब्याही थीं,विवाह के बाद एक बच्चा होने पर चल बसीं।वह बच्चा भी न रहा। दूसरी बहन गुलाबबाई का विवाह डेडराजजी खेतान से हुआ था। उनके कोई बालबच्चा न होने से वह भी दुःखी। तीसरी केशरबाई। १२ वर्ष की उम्र में केशरबाई का विवाह फतेहपुर के जोरावरमलजी पोद्दार से हुआ। जोरावरमलजी अपनी गोद की चाची मां के कहने में थे, सो केशरबाई ने बहुत दुःख भोगा। जमनालालजी ने दोनों में मेल कराने की दृष्टि से दोनों को वर्धा लाकर रखा, बाद में बंबई में व्यवसाय खुलवा दिया। कुछ समय बाद जोरावरमलजी, केशरबाई और उनके तीन बच्चों को वर्धा बुला लिया और वे साथ ही रहने लगे। समय आनंद से गुजर रहा था कि जोरावरमलजी विषम ज्वर में चल बसे। बहन के वैधव्य का दुःख भी जमनालालजी को झेलना पड़ा। अबतक हमारे भी तीन बच्चे हो चुके थे। जमनालालजी चाहते थे कि केशरबाई के बच्चों की देखभाल हमारे बच्चों की तरह ही हो। मैं भी इस बात का बराबर ध्यान रखती। पहनने-ओढ़ने, खान-पान, रहन-सहन में सादगी रखती। लगभग केशरबाई की तरह ही रहती। कुछ समय तो यह ठीक चला, लेकिन बाद में छोटी-छोटी बातों पर कभी कहासुनी भी हो जाती। कुछ तो वह भी केशरबाई के बच्चों का ही पक्ष लेते। समय पाकर मेरे मन में यह असर होने लगा कि जमनालालजी से लेकर घर के सब लोग केशरबाई का ही पक्ष लेते हैं। मेरे इस भाव का भी जमनालालजी के मन पर बोझ रहता था।

इसबीच जमनालालजी का संपर्क बापूजी से हुआ। उन्हें तो मानों मनभाते भगवान ही मिल गए। इतने दुःखों से तप्त उनके हृदय को बापूजी के कार्य, जीवन, विचार और शब्दों का चंदन मिला। उन्हें लगा कि बापू से एक नई जीवन-दिशा उन्हें मिलेगी। बापू के हर आदर्श को, हर विचार को अपने जीवन में उतार लेने की उनकी साध सतत रहती। इस ओर वह मुझसे अधिकाधिक अपेक्षा रखने लगे। मेरे लिए तो उनकी वाणी वेदवाक्य थी। सो जैसा वह कहते करने का पूरा प्रयत्न रखती। गहना छूटा, घूंघट छूटा, विदेशी कपड़ों की होली जलाई, खादी को अपनाया, सत्याग्रह में भाग लिया, जेल गई, आश्रम-जीवन अपनाया, सब किया। इस बारे में जमनालालजी को मेरी ओर से काफी संतोष था। और ऐसा वह कहते भी थे। अपने कई पत्रों में इसका जिक्र भी उन्होंने किया है। हालांकि यह अतिशयोक्ति ही थी, लेकिन वह मुझसे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कहा करते थे कि त्याग में तो तुम मुझसे आगे हो। एक बार उन्होंने बापू के सामने अपनी सारी जमीन-जायदाद छोड़ने की बात कही। बापू ने मुझे बुलाकर कहा कि यह जमीन-जायदाद तुम्हारे नाम कर दें ? मैंने कहा—"बच्चे अपने भाग्य का खायंगे। मेरा भाग्य तो इनके साथ बंधा है। जैसा ये खाएंगे पहनेंगे, वैसा मैं भी खाऊंगी-पहनूंगी। जिस सांप को ये छोड़ रहे हैं, उसे मैं गले में क्यों लपेटूं।"

लेकिन जहांतक उदारता व प्रेम का प्रश्न था, मैं उसे व्यावहारिक मर्यादा से ऊपर नहीं अपना सकी थी। उन्हें तो अपने और पराए बच्चों में समानता लगती थी। महिलाश्रम की लड़कियों की सम्हाल रखते और मुझसे कहते इनकी मां बन जाओ। लेकिन मैं दूसरे बच्चों को अपने बच्चों जैसा प्यार कैसे कर पाती ! मैं तो अपने बच्चों को भी जैसा चाहिए वैसा प्यार नहीं कर पाई। उनके जैसी समान दृष्टि लाऊं, तो कहां से लाऊं। हर व्यक्ति को कुटुंबी-जन के जैसा चाहना—यह हो सकना मुझसे कठिन था। उन्हें मेरा यह स्वभाव अच्छा नहीं लगता था। वह चाहते थे कि उदारता और प्रेम में मैं उनसे आगे निकलूं। पर यह मुझसे अंत-तक नहीं बन पाया। दरअसल उनकी अति उदारता की वजह से मुझपर उसका उलटा ही असर पड़ता था। मैं सोचती—बाल-विवाह के कारण पीहर अधिक नहीं रह पाई, बच्ची होने के कारण ससुराल में भी आनंद नहीं मिला, जब समझने योग्य हुई तो पति के साथ सुख और सौभाग्यवती होते हुए भी विधवा का-सा उदास और खिन्न जीवन ही बिताना पड़ा।

और भी कई बातें ऐसी थीं जिनसे मुझे बहुत परेशानी होती थी। जमनालालजी के कान और सिर में बहुत दर्द रहा करता था। बहुत इलाज कराया, पर कोई लाभ नहीं हुआ। मेरी झुंझलाहट इसलिए भी थी कि वह अस्वस्थ रहते हुए भी हमेशा नए-नए 'झंझट' मोल लेते रहते थे। अमुक स्त्री का पति मर गया, अब उसके घर का प्रबंध कैसे क्या होगा, अमुक की शादी करवानी है, फलां कार्यकर्ता बहुत मुसीबत में है, आज जो लोग आनेवाले हैं उन्हें कहां ठहराना और उनके लिए खाने में क्या बनेगा आदि। ऊपर से राष्ट्रीय सार्वजनिक कार्यों का बोझा। मैं चाहती थी कि वह कुछ आराम करें, लेकिन वह तो जैसे दूसरों के दुःख-दर्द को अपना दुःख-दर्द माने बैठे थे। अंत में वह इतना थक जाते कि मुझे भी उनसे बात करने में दया-सी आने लगती और मैं अपने बच्चों को भी उनके पास जाने और बोलने से रोकती। इस तरह जीवन में अस्वाभाविकता-सी आने लगी। गुस्सा तो मन में रहता ही। लेकिन क्या करती।

मेरी इस दिन-रात की अतिचिंता के कारण यदि मैं उनसे कुछ कहती, तो वह दुराग्रह की सीमा तक पहुंच जाता। इससे उन्हें झुंझलाहट और बेचैनी होती।

धीरे-धीरे मेरी अशांति बढ़ती गई। छोटी-मोटी बातों को लेकर असंतोष भी बढ़ता गया और मैं चिड़चिड़ी बनती गई। मेरे स्वभाव को चिड़चिड़ा बनाने में नौकरों ने भी मदद की। जमनालालजी को खुश रखने के लिए तो वे बहुत दौड़-धूप करते, पर मेरी बात की अवहेलना की जाती। नौकरों के प्रति जमनालालजी का स्वभावगत उदार-व्यवहार भी मुझे असह्य होने लगा।

जमनालालजी के सेक्रेटरियों का ठाठ तो और भी बढ़ा-चढ़ा रहता था। जमनालालजी उनको बहुत स्वतंत्रता देते थे, उनके गुणों को खोजकर उनसे काम ले लेते थे। लेकिन मुझे तो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उनमें कमियां और बुराई ही दिखाई देती थीं। जमनालालजी को मेरे इस व्यवहार से बहुत तकलीफ होती थी। वह चाहते थे कि मैं अपने स्वभाव को बदलूं। अक्सर इन बातों को लेकर वह अपनी परेशानी भी जाहिर करते, मुझे टोंचते भी। मानसिक संताप के इन क्षणों में मुझे भी कई बार बेकार की-सी बात पर भी गुस्सा आ जाता। एक बार तो मन में आया कि तालाब में कूद जाऊं। लेकिन तभी ख्याल आया कि एक बार फाटक खोलकर बाहर आई, तो फिर वापस आने की सुध भी नहीं रहेगी, मौत से डर तो लगता ही था। फिर यह भी सोचती कि जमनालालजी मेरी मृत्यु को सहन कैसे कर पायंगे। कारण कि यह तो पूरा विश्वास था कि जमनालालजी मुझे अत्यधिक प्रेम करते हैं। जब वह मुझसे दूर चले जाते थे, तो उन्हें पश्चात्ताप होता था। पत्रों में वह ऐसा लिखते भी।

व्यक्तिगत सत्याग्रह में जमनालालजी जेल गए। वहां उन्होंने स्वास्थ्य-साधना की। लेकिन उससे उन्हें काफी कमजोरी आ गई। जब लौटकर आये तो सबको चिंता हुई। बापूजी की सलाह से राजकुमारी अमृत कुंवर के यहां शिमला जाना उन्होंने तय किया। जाने के पहले मदालसा से बोले—"जा तो रहा हूं, लेकिन तेरी मां की चिंता है। तेरी मां को दुःखी देखकर मुझे बहुत दुःख होता है। मैं उसे हमेशा हँसती देखना चाहता हूं।" मदालसा ठहरी बच्ची। लेकिन हमारी खींचतान से बच्चे अनभिज्ञ थोड़े ही थे। सो मदालसा बोली—"ऐसा क्यों कहते हैं, काकाजी ?" उन्होंने कहा—"तेरी मां के लिए मेरे मन में बहुत आदर है। उसने बहुत साथ दिया है। जब घर आता हूं और उसे दुःखी देखता हूं तो बहुत बुरा लगता है।" मदालसा ने कहा—"मां तो खुश ही रहती है। जब आप नहीं रहते तो बहुत मस्त रहती है।" वह बोले—"यही तो बात है, मेरे सामने कुछ और मस्त क्यों नहीं रह सकती।" मदालसा ने कहा—"कैसे रहे ? आप सबको एक-सा प्यार देना चाहते हैं, पर ऐसा कर नहीं पाते। गुस्सा मां पर करते हैं, विश्वास व प्यार औरों पर—तो वह समान प्यार कहां हुआ ? आप सिर्फ मां से ही आशा क्यों रखते हैं ? इसमें तो मां पर अन्याय होता है। मां को गुस्सा आता है और उनके गुस्से से आपको गुस्सा आता है। यह तो आपके सोचने की बात है।" जमनालालजी पर मदालसा की बात का काफी असर हुआ। दिल्ली से उन्होंने मदालसा को लिखा। "...तुमसे बात हो सकी उससे मुझे सुख व संतोष मिला। मन में यही रह गया कि ज्यादा समय मिलता तो ठीक रहता। खैर, फिर मिलेगा। तुम्हारी मां के तुम नज़दीक आ रही हो और वह भी अपने स्वभाव में परिवर्तन कर रही है, यह अच्छे चिह्न हैं। मैं भी देखता हूं कि मैं अपने स्वभाव और वर्ताव में कुछ परिवर्तन कर सकता हूं क्या ?"

सो इस तरह के अंतर्विरोधी वातावरण में हम रह रहे थे। एक बार कलकत्ता से केशरबाई की बेटी नर्मदा के आने की खबर आई। जमनालालजी ने किसानों की एक बड़ी सभा बजाजबाड़ी में उस दिन बुलाई थी। मुझसे उन्होंने कहा कि स्टेशन जाकर नर्मदा को ले जाना। मेरे मुंह से फौरन निकला, "वह खुद ही चली आयगी, मैं क्यों जाऊं ?" मेरे एक वाक्य से उनकी सारी आशाएं, योजनाएं ढह पड़ीं। थोड़ी देर बाद मैं छत पर गई, तो देखा कि जमनालालजी अकेले गुमसुम बैठे हैं। उनकी आंखों में आंसू भी थे। मैंने पहली बार जमनालालजी की आंखों में आंसू देखे। मैं ठगी-सी खड़ी रह गई। उनकी अंतर्वेदना देखकर मुझे बहुत संतोष हुआ। मुझे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

देखकर वह नीचे चले गए। कुछ बोलना चाहते थे—पर बोल नहीं सके। राम जाने क्या कहना चाहते थे। इतना कष्ट उन्हें भोगना पड़ा, मेरे स्वभाव-दोष के कारण। लेकिन मैं भी क्या करती।

यह तो हुई स्वभाव-भेद व विचार-भेद के कारण पैदा हुए मानसिक संताप की बात। कुछ और भी कारण थे, जिनसे जमनालालजी को मानसिक वेदना होती थी। वह चाहते थे कि बापूजी के आदर्शों और विचारों को जीवन में पूरी तरह उतार लिया जाय, जिससे आदर्शपूर्ण जीवन का निर्माण किया जा सके। बापू के एकदश व्रतों के अनुसार जीवन बरता जाय, तो धन्यता महसूस हो। प्रौढ़ावस्था में ब्रह्मचर्य का व्रत हमने लिया। अपने काम के सिलसिले में अक्सर जमनालालजी बाहर रहते थे, सो वह निभता ही था। लेकिन जब भी संयम टूटता, तो जमनालालजी बहुत उद्विग्न हो उठते थे। इस उद्विग्नता में से उनका मानस-मंथन शुरू हो जाता। उनकी मानसिक उथल-पुथल को देखकर कई बार मुझे लगता कि कहीं वह आत्मघात न कर लें। जीवन में अंतिम दिनों में तो उनमें गहरी निराशा आ गई थी। समय-समय पर विभिन्न लोगों को लिखे उनके पत्रों से ऐसा आभास भी होता है। आत्महत्या तक के विचार उनके मन में आये। मुझे उसमें कुछ असाधारण बात नहीं दिखाई देती है। अपने जीवन के इस काल में आत्मोन्नति की साधना की एक ऊंची भूमिका वह निभा रहे थे, उनका आत्मपरीक्षण सूक्ष्म होता जा रहा था। जब भी आचरण में सत्य, अहिंसा, क्षमाशीलता, आदि की सूक्ष्माति-सूक्ष्म कमी उन्हें महसूस होती, वह अपने-आपको अपराधी मानने लगते, उनका मानसिक अंतर्द्वन्द्व शुरू हो जाता कि लोग मुझे शुद्ध समझते हैं, लेकिन मैं दोषी हूं, मेरे मन में विकार आते हैं, मैं लोगों के प्रेम के लायक नहीं हूं, आदि।

अजीब-सी परिस्थिति थी। गृहस्थ जीवन में रहते हुए वैराग्य साधना कैसे सधे, यह उनकी समस्या थी। इसके अलावा जो लोग उनके पास आते थे, वे अपनी पारिवारिक या गृहस्थ जीवन की समस्याएं भी लेकर आते। जमनालालजी इन समस्याओं का निबटारा करने की भरसक कोशिश करते। तो ऐसे वातावरण के बीच रहकर मन में विकार आने से कैसे रोकें? बापूजी से उन्होंने इस बारे में रूबरू और पत्रों में भी चर्चा की। बापू का कहना था कि मनुष्य को अपने दोषों का चिंतन न करके गुणों का करना चाहिए, क्योंकि मनुष्य जैसा चिंतन करता है, वैसा बनता है। इसका अर्थ यह नहीं कि दोष देखे ही नहीं। देखे तो जरूर, लेकिन उनका विचार करके पागल न बने। लेकिन बापू की ओर से इस बारे में उन्हें पूरी तरह समाधान नहीं हो पाया।

देहरादून में माता आनंदमयी से मिलने पर उन्हें बहुत शांति मिली, ऐसा उन्होंने कहा, पत्रों में लिखा और अपनी डायरी में भी जिक्र किया है। मुझे उसमें भी कोई आश्चर्य की बात नहीं लगी। कारण कि जब पहली बार वह बापूजी से मिले थे, तब भी उन्हें ऐसी ही शांति मिली थी। कितने ही सांसारिक आघात झेलने के बाद बापूजी से उनका संपर्क हुआ था। जीवन को नई दिशा मिलने की आशा उनमें जगी और क्रमशः वह उन्हें मिली भी। उनको लगा कि गृहस्थ और सार्वजनिक जीवन में रहते हुए भी शांति मिल सकती है। फिर विनोबा से परिचय हुआ। आध्यात्मिकता की खुराक उन्हें मिली। जीवन में और अधिक समाधान उन्हें मिलने की आशा हुई, लेकिन फिर जीवन में सार्वजनिक प्रयोगों का श्रीगणेश हुआ। कौटुम्बिक जीवन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उसके अनुरूप मिल नहीं पाया। बापू और विनोबा के बाद जीवन में एक "आध्यात्मिक मां" की कमी उन्हें खलती थी। ४-११-३८ के अपने पत्र में बापूजी को वह लिखते हैं, "मुझे तो लगता है कि अभी तक मेरी बुद्धि काम दे रही है। मेरे में जो कमजोरियां हैं, व वे जिन कारणों से घुसी हैं, वे भी मालूम हैं, उनको निकालने की इच्छा भी है। यह इच्छा तीव्र बनाई जा सकती है। परन्तु मेरे पास याने मेरे साथ कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है, जिसमें प्रेम, सेवा व उदारता भरी हुई हो, जिसके पवित्र चरित्र व प्रेममय वातावरण या सेवा से मेरे मन को शांति मिले। क्या इस प्रकार की बहन या भाई आपकी निगाह में हैं ? अगर निगाह में हो, तो क्या उसका मेरे साथ रहकर मेरी सेवा करना संभव है ?..."

ऐसी मनोदशा लेकर वह माता आनंदमयी से मिलने गये। जीवन में शायद पहली बार ऐसा शांत, सात्विक, प्राकृतिक वातावरण उन्हें मिला था। कुटुंब-कबीले की चिंताओं, सार्वजनिक समस्याओं, कार्यकर्ताओं की दिक्कतों से कोसों दूर, ऐसा रमणीक वातावरण पाकर शांति का आभास होना स्वाभाविक ही था। ऐसे शुद्ध वातावरण में जब माता आनंदमयी से उनकी भेंट हुई तो उन्हें मनभाती-सी चीज मिल गई। मां से अन्य बातों के अलावा जमनालालजी ने एक इच्छा प्रकट की—"मां, मैं आपकी गोद में सो सकता हूं ?" वर्धा में भी जब जमनालालजी तड़के सुबह उठते तो अक्सर अपनी जन्म की मां की गोद में सिर रखकर लेट जाते थे और उनसे भजन गाने को कहते। इससे उन्हें बहुत शांति मिलती थी। सो मैं कल्पना कर सकती हूं कि इतने वर्षों के व्यवधान के बाद जब वह माता आनंदमयी की गोद में सिर रखकर लेटे होंगे, तो उनके रोम-रोम को कितनी शांति मिली होगी।

कुछ दिन पहले इसी विषय पर श्रीमन्‌जी से चर्चा हो रही थी। उन्होंने बताया कि मनोविज्ञान की खोजों से यह सिद्ध हुआ है कि कुछ व्यक्तियों को अपनी माता से बहुत लगाव होता है और वृद्धावस्था तक में उन्हें अपनी मां की गोद की लालसा होती है। मन में यदि विकार आते भी हों, तो मां की गोद में उन्हें एक मोड़ मिल जाता है और वे उच्च व पवित्र विचारों में बदल जाते हैं[1] इस चर्चा के बाद मुझे जमनालालजी के जीवन, उनकी "आध्यात्मिक माता" की भूख और जीवन के अंत में मिली शांति में काफी संगति लगी। सारा सिलसिला मानो अपने-आप जुड़ता चला गया।

तीन चीजों की कमी बचपन से ही जमनालालजी को सहनी पड़ी। पिता का स्नेह, मां की ममता और गुरु का सान्निध्य। कालांतर में बापू से उन्हें पिता का मार्गदर्शन मिला और विनोबा से गुरु का ज्ञान। लेकिन संपूर्ण शांति तो उन्हें मां की गोद पाकर ही मिल सकती थी। वह भी ऐसी मां जो आध्यात्मिकता की खुराक उन्हें दे सके। बापू का मार्गदर्शन और विनोबा का ज्ञान पाकर जमनालालजी को एक उच्च आदर्श जीवन की कल्पना तो मिली, उस आदर्श के अनुरूप जीवन बरतने की अदम्य इच्छा भी उनके सहवास से जमनालालजी में गहरी हुई। लेकिन उस ध्येय तक पहुंचने के लिए सतत उत्साह बनाये रखनेवाली मां उन्हें अबतक नहीं

१. सुप्रसिद्ध मनोविज्ञान शास्त्री फ्रायड के अनुसार इस स्थिति को 'ओडिपस काम्पले (oedipus complex) कहते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मिल पाई थी और इस संबंध में उनका मानस-मंथन तीव्रतर होता जा रहा था। माता आनंदमयी से मिलकर "आध्यात्मिक मां" की उनकी खोज पूरी हुई।

माता आनंदमयी के पास से लौटकर वह वर्धा आये। सब सार्वजनिक व व्यापारिक कामों से उन्होंने अपने-आपको मुक्त कर लिया। सिर्फ गोसेवा का काम उन्होंने अपने जिम्मे लिया और गोपुरी में एक झोंपड़ी बनवाकर उसमें रहने लगे। कुछ समय बाद मुझे भी वहां ले गये। अब उनका चित्त काफी शांत हो गया था। बापू को उन्होंने लिखा भी—"मुझे अपने काम में, गोसेवा संघ में व पू० विनोबा के साथ या अकेले ही देहातों में घूमने से ठीक शांति व उत्साह मिलता जा रहा है। मेरी गाड़ी ठीक चल रही है।"

११ फरवरी, १९४२ को रक्तचाप बढ़ जाने के कारण जमनालालजी का देहावसान हुआ। इस सारे जीवन पर दुबारा नज़र डालती हूं, तो लगता है कि हमारे जीवन में जो स्थिति निर्माण हो गई थी उसके कारण यदि जमनालालजी न जाते तो मुझे जाना पड़ता। उनके जाने की तात्कालिक प्रतिक्रिया मेरे मन पर यही हुई कि मैं उनकी चिता में जलकर सती बनूं। बापूजी से मैंने वैसा कहा भी। आज सोचती हूं तो लगता है कि एक समय वह इच्छा जरूर थी, लेकिन उस समय तो वह बात मैंने केवल आवेश में ही कही थी। उनके जाने बाद ३० वर्ष मैंने निकाल दिये, मेरा कहीं कुछ तो नहीं हुआ। खाती हूं, पीती हूं, सभी काम तो चल रहे हैं। बल्कि यह कहूं तो भी झूठ न होगा कि मैं आज विशेष दुःखी भी नहीं हूं, क्योंकि मेरी ईर्ष्या व जलन छूट गई, जमनालालजी की चिंता नहीं रही और उनके गुण-ही-गुण याद आते हैं।

जब मैंने अपने मन की स्थिति स्व० महादेवभाई की पत्नी दुर्गाबहन को कही जो रो-रोकर महादेवभाई के पीछे आधी रह गई थी तो वह कहने लगीं—"जानकीबहन, यह क्या कहती हो कि जमनालालजी के चले जाने से तुम्हें दुःख नहीं हुआ ?" मैंने कहा, "दुर्गाबहन, यदि मैं उन्हें प्राण देकर भी बचा सकती तो जरूर बचाने का प्रयत्न करती। लेकिन जब देखा कि मैं इसमें कुछ नहीं कर सकती, तो फिर रोना और दुःखी होना व्यर्थ माना। बस ! अब तो मुझे यही अच्छा लगता है कि मैं कर सकूं उतना उनका काम करूं। रोने-धोने से लाभ भी क्या है ? उल्टे कहते हैं रोने से जाने वाली आत्मा को कष्ट होता है।"

जमनालालजी के पूरे जीवन पर जब भी सोचती हूं, तो हमेशा यही लगता है कि वह एक 'योगभ्रष्ट योगी' थे। कुछ जीवन बाकी रह गया था, वही भोगने आये थे।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विनोबा : मेरे भाई

विनोबाजी २२-२३ वर्ष की उम्र में घर से विरक्त होकर निकले थे। निकले तो थे हिमालय जाने के लिए, लेकिन रास्ते में बापू-रूपी हिमालय उन्हें मिल गए। बापू के बनारस के भाषण से इतने प्रभावित हुए कि उन्हीं में रम गए। प्रायः मौन ही रहते थे और आवश्यकता के अलावा बोलना उन्हें कांटों के समान लगता था। जमनालालजी के आग्रह से बापू ने उन्हें सत्याग्रह-आश्रम की शाखा खोलने के लिए वर्धा भेजा। अभ्यास करना-कराना, संस्था में जमीन खोदने आदि के कार्य में सतत लगे रहना और शरीर-श्रम करके ही कमाना, व उसीमें निर्वाह करने का प्रयत्न करना—यह उनकी तपस्या थी। एकादशव्रत में जो दस कठोर व्रत दिये हैं, उन्हें पूरी तरह जीवन में उतारने की साधना उन्होंने की है।

दस आश्रमवासियों के बीच १०० रु० मासिक लेना विनोबाजी ने जमनालालजी के आग्रह से माना था। हर महीने मोघेजी वर्धा की दुकान से १०० रु० ले जाते थे। एक दिन विनोबाजी उस तरफ घूमने जा रहे थे, तो मोघेजी से कहते गये कि मैं दुकान की तरफ जा रहा हूं, तो पैसे मैं ही लेता आऊंगा। दुकान पर जाकर बोले—"आश्रमाचे पैसे द्या !"[1] दुकानवाले बोले—"मलातर शेठजीनी सांगीतले नांही।"[2] सुनकर विनोबाजी तो चल दिये। उनके लिए तो वह पैसे मांगने का पहला व आखिरी अवसर था। जब जमनालालजी को यह खबर लगी तो उन्होंने दुकानवालों की खूब खबर ली। "तुम लोगों को पैसों की कीमत है, आदमियों की नहीं। मैं कितनी मुश्किलों से लोगों को लाता हूं और तुम लोगों को कोई कदर ही नहीं।" इतना डांटा कि दुकानवालों की आंखों में पानी आ गया।

देश जब विनोबाजी को जानता भी नहीं था, तब व्यक्तिगत सत्याग्रह के लिए पहले सत्याग्रही के रूप में बापू ने विनोबाजी को ही चुना था। सत्य का आग्रह तो बापू और विनोबा में समान ही रहा। बापू अगर बहिर्मुखी और आत्मनिष्ठ थे, तो विनोबा अंतर्मुखी व ब्रह्मनिष्ठ हैं। दोनों ने एक-दूसरे को इस कदर साध लिया था कि दोनों एकरूप ही हो गये थे।

दिल्ली में बापूजी ने २१ दिन का उपवास किया। सबको चिंता होना स्वाभाविक ही था। महादेवभाई ने सोचा कि विनोबा को वर्धा से बुला लिया जाय, तो बापू को आत्मिक खुराक मिलेगी। फिर प्रार्थना में भी इतने लोग आते हैं, तो बापू का बोझ कुछ हलका हो जायगा। सबको यह बात जंची। महादेवभाई ने यह भी सोचा कि इस बारे में अगर बापू से पूछा और उन्होंने मना कर दिया तो बात वहीं खतम हो जायगी। सो बापू से पूछे बगैर उन्होंने वर्धा फोन किया कि बापू ने उपवास शुरू किया है, अगर विनोबा आ जायं तो बापू को आत्मिक बल मिलेगा। मैं, कमल, राधाकृष्ण और धोत्रेजी विनोबा के पास गए। विनोबा टहल रहे थे। हम लोग बैठ गये, तो विनोबा भी आकर चुपचाप बैठ गये। आखिर कमल हिम्मत करके

१. आश्रम के रुपये दे दो।
२. हमें तो सेठजी ने इस बारे में कुछ कहा नहीं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बोला, "वापू का उपवास चला है सो तो आप जानते ही हैं। अभी दिल्ली से महादेवभाई का फोन आया था कि विनोवा आ जायं तो वापू को अच्छा रहेगा, प्रार्थना का लाभ मिलेगा।" विनोवा सुनकर चुप रहे। फिर आहिस्ता-से बोले, "वापू को कोई खतरा नहीं है। उनके साथ भगवान हैं।" अव हम सव चुप। फिर थोड़ा ठहरकर विनोवा ने पूछा, "वापू ने वुलाया है क्या ?" हम क्या जवाव देते ? फोन तो महादेवभाई का था। हम एक-दूसरे का मुंह देखने लगे। उन दिनों विनोवाजी प्रतिदिन पास के गांव सुरगांव में सफाई के लिए जाते थे। एक वर्ष के लिए क्षेत्र संन्यास सरीखा ही था। यह वात वापूजी को मालूम थी। हम सव अपना-सा मुंह लेकर वजाजवाड़ी लौट आये। दिल्ली फोन किया कि विनोवा पूछते हैं वापू ने वुलाया है क्या ? यह सुनकर महादेवभाई भी असमंजस में पड़ गए कि वापू से पूछे वगैर फोन किया था, लेकिन अव तो वापू से कहना ही पड़ेगा। सो डरते-डरते वापू के पास गए और कहा कि हमने विनोवा को वुलाने वर्धा फोन किया था, ताकि प्रार्थना में सहूलियत रहे और आपको भी अच्छा लगेगा। लेकिन विनोवा पूछ रहे हैं—"वापू ने वुलाया है क्या ?"

यह सुनकर वापू भी चुप हो गये। फिर धीरे-से उन्होंने पूछा, "विनोवा आना चाहते हैं क्या ? हम एक-दूसरे के पास ही हैं।" इतना तादात्म्य स्थापित हो गया था एक-दूसरे में। विनोबा पूछते हैं, "वापू ने वुलाया है क्या ?" वापू जवाव देते हैं, "विनोवा आना चाहते हैं क्या ?"

दरअसल दुनिया वात ज्यादा करती है, काम कम। विनोवा ने कभी वापू से वहस नहीं की। वापू ने कहा और विनोवा ने शुरू कर दिया। कभी आगे रहकर कुछ पूछा नहीं। हां, वापू के सामने जब कोई धर्म-संकट आता तो वह विनोवा को बुलाकर उनकी राय जरूर लेते। वरना दोनों के मिलने का क्या काम।

जमनालालजी विनोवा से शुरू से ही वहुत प्रभावित थे। नागपुर-जेल में जव हम उनसे मिलने जाते, तो वह विनोवाजी की ही चर्चा करते रहते। वाद में धुलिया-जेल में तो जमनालालजी और विनोवाजी का साथ ही हो गया। जमनालालजी की इच्छा वनी रहती कि उनके सान्निध्य का जितना लाभ लिया जा सके उतना अच्छा। जेल में यह अनुकूलता भी ज्यादा थी। जमनालालजी के आग्रह से विनोवा ने गीता का समश्लोकी अनुवाद मराठी में किया, जो वाद में "गीताई" नाम से प्रकाशित और प्रसिद्ध हुआ।

विनोवाजी जमनालालजी से पहले ही जेल से छूटकर आ गये थे। आते समय जमनालालजी ने उनसे कहा कि कमल तो जेल में है ही, मदालसा और ओम् का शिक्षण आपकी ही देखरेख में हो तो अच्छा। वर्धा स्टेशन पर उतरकर पहली वात विनोवजी ने मुझे कही तो वही—मदालसा-ओम् के शिक्षण की। मुझे भी आश्रम में ही रहने को कहा। इस तरह दोनों लड़कियों की पढ़ाई शुरू हो गई। मैं भी श्रद्धापूर्वक कक्षा में आती-जाती।

लड़कियों को पढ़ाने का विनोवाजी का यह पहला अवसर था। इससे पहले वे लड़कों को ही पढ़ाते थे और पढ़ाई के सिवा वोलना तो मानों उनकी जीभ में कांटा ही लगता था। आश्रम के नियम लड़कों के लिए भी इतने कड़े थे कि लड़कियों की तो वात ही क्या। लेकिन विनोवाजी के पढ़ाने की खूवी थी कि जो भी विद्यार्थी एक वार उनके पास गया वह उनका ही होकर रह गया।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कृष्णदास गांधी और सरलादेवी चौधरी के पुत्र दीपक चौधरी उस समय करीब १४-१५ वर्ष के थे और आश्रम में ही रहते थे। दोनों-के-दोनों बहुत ही नाजुक और सुंदर। आश्रम में उन्हें दाल-चावल चुनते देखती तो सोचती कि इनके मां-बाप कैसे हैं जो इतने नाजुक सुंदर बच्चों को आश्रम में भेज दिया, यह भी कोई पढ़ाई है ? लेकिन यह विनोबाजी का प्रभाव था कि कुछ समय बाद हमने भी कमल को वहीं पढ़ने के लिए रखा।

वह विनोबाजी के यहां उनके आश्रम में रहता था। खाना खाते समय एक दिन विनोबाजी ने कमल से पूछा—यहां का खाना तुझे अच्छा लगता है न ? कमल ने कहा—अच्छा तो बिलकुल नहीं लगता। विनोबाजी उसके जवाब से खुश हुए और बोले—देखो, लड़का रोज यही खाना खाता है और कभी शिकायत नहीं की, लेकिन पूछने पर इसने साफ-साफ बता दिया। होना भी ऐसा ही चाहिए।

हर रविवार को आश्रमवासी आश्रम का सामान लाने बाजार जाते थे। कमलनयन को धूप में नंगे पैर कंधे पर आलू की बोरी लटकाए आश्रम जाते देख वर्धा के लोग कहा करते—कई पीढ़ियों में तो भगवान ने लड़का दिया, लोग बैठे-बैठे इनकी गद्दियां फाड़ रहे हैं और ये लोग गांधी के चक्कर में पड़े हुए हैं, आज बच्छराजजी होते तो ऐसा करने देते क्या ? मेरे जेठ का लड़का राधाकृष्ण तो विनोबा के शिष्यत्व में रहकर इतना पक्का हो गया कि लोग उसे "छोटा विनोबा" ही कहते हैं। एक रोज शाम की प्रार्थना में राधाकृष्ण नंगे बदन बैठा था। एक भौंरा उसके शरीर पर रेंगता हुआ कंधे तक आ गया। लेकिन राधाकृष्ण तो आंखें मूंदे वैसे ही बैठा रहा।

मदालसा का शिक्षण विनोबा ने "ज्ञानेश्वरी" द्वारा चलाया। विनोबाजी के दोनों भाई—शिवाजी और बालकोबाजी भी वहीं थे। तीनों भाई ब्रह्मचारी हैं और त्याग-विद्या-ज्ञान में एक-दूसरे से बढ़कर नमूने ही हैं। बालकोबाजी संगीत में निपुण हैं। हमारे बच्चों को उनसे सितार का शिक्षण मिला। शिवाजी को चित्रकला में अभिरुचि है। वह चित्र बनाते और फाड़कर फेंक देते। कमल ने पूछा—आप इतनी मेहनत से चित्र बनाते हैं, फिर फाड़कर क्यों फेंक देते हैं। शिवाजी बोले—अपने शौक के लिए बनाया—फिर संग्रह क्या करना।

ऐसे ही विनोबाजी बापू के पत्रों को पढ़कर फाड़ दिया करते। लोगों ने कहा—"विनोबाजी, बापूजी के पत्र तो सहेजकर रखने चाहिए।" विनोबा का जवाब यही रहता—पढ़ लिया, काम हो गया, उसको रखने का मोह क्यों ?

कमलनयन की उम्र उस समय कोई १२-१३ वर्ष की रही होगी। आश्रम के नियम बहुत कड़े थे। विनोबाजी का कहना था कि बच्चों के माता-पिता आश्रम के सब बच्चों के साथ समान व्यवहार करें। जमनालालजी के लिए तो यह स्वाभाविक ही था, लेकिन मेरा तो कमलनयन से बोलना-चालना, मिलना-जुलना तकरीबन बंद ही हो गया। मैं समान-दृष्टि लाऊं तो कहां से लाऊं ?

मेहमानों के लिए बगीचे से फल आये थे। मैं बरामदे में बैठी फल खा रही थी कि कमल वहां से गुजरा। आश्रम के नियम तो ठीक थे, लेकिन मां का दिल तो नियमों में बंधने से रहा। मैंने सोचा कि मैं फल खा रही हूं—बेटे ने देख भी लिया है और मैं उसे फल भी नहीं दे सकती।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तो ख्याल आया कि कुछ फल आश्रम के रसोड़े में दे आऊं। भावना तो स्वार्थ की ही थी कि उस वहाने कम-से-कम मेरे वेटे को भी मिल ही जायगा। सो मैं २०-२५ अमरूद लेकर रसोड़े में गई और वहां की अलमारी में रख आई।

उन दिनों रोटी वनाने का काम वालकोवाजी करते थे। तोलकर रोटी दी जाती थी। परोसने का काम विनोवाजी करते थे। परोसने के समय विनोवाजी ने अलमारी खोली तो वहां अमरूद। पूछा—कहां से आये। किसीने कहा—जानकीवाई रख गई हैं। विनोवाजी ने अमरूद काटे, तोले और उतनी ही मात्रा में रोटी कम कर दी। उनका कहना था कि अमरूद में रोटी के ही गुण और ताकत मौजूद है, ज्यादा खाने से पचाना मुश्किल होता है। वाद में जव मुझे पता चला तो मैंने सोचा—चूल्हे में पड़े, उन्हें तो देना ही वेकार है।

घर में दूध तो गाय का ही आता था। एक वार काफी दूध वच गया तो मैंने सोचा इसका मावा वनाकर वरफी वनवा ली जाय। जमनालालजी से पूछा। उन्हें तो लोगों को खिलाना अच्छा लगता ही था। वोले—हां, वरफी तो वन सकती है, लेकिन कमल पास में ही रहता हैं, यह सोच लेना। मैंने कहा—उसे फल देना ही मुश्किल है, मिठाई की तो वात ही क्या? कई वार वुरा भी वहुत लगता था—खाने-पीने और ओढ़ने-पहनने किसी भी चीज की तो कमी नहीं, लेकिन फिर भी अपने वच्चों को अनुशासन और नियमों के कारण कुछ दे नहीं सकते।

एक वार दोपहर के समय कस्तूरवा वकरी का दूध लेकर वापू के लिए विस्कुट वनाने आईं। कमलनयन अपनी चटाई का आसन ठीक करने देने के लिए उधर आया। वा ने उसे वुलाकर एक विस्कुट दे दिया कि खाकर देख कैसा वना है? उसने विस्कुट लिया कि मैं एकदम चौंककर वोली—"हैं?" उसे भी तुरंत ख्याल आ गया कि आश्रम के नियानुसार मैं कैसे ले सकता हूं? विस्कुट उसके हाथ से छूट गया और वह भाग गया। वा ने कहा—जानकीवेन यह क्या किया? वच्चा खा लेता तो क्या था? मुझे भी लगा कि वा के हाथ का प्रसाद खा लेने में कोई हर्ज नहीं था। लेकिन आश्रम के नियमों का भूत तो सिर पर चढ़ा हुआ था न!

पवनार में लाल वंगले के पास ही काले पत्थर का पहाड़ है। विनोवाजी प्रतिदिन ८ घंटा खोदने का काम करते थे। आसपास की संस्था के लोग भी समय निकालकर कुदाल-फावड़ा लेकर कुआं खोदने में मदद करते थे। कोई मिनिस्टर या वड़े नेता विनोवाजी से मिलने आते, उन्हें भी वह काम करना पड़ता था। १५ दिन मैं भी गई। विनोवाजी ने कहा—८ घंटे श्रम करो तो १३ आने मिलेंगे और तभी कोई रोटी खाने का अधिकारी हो सकता है। तो मैं १ घंटा चक्की पीसना, १ घंटा कुएं पर रहट चलाना और छः घंटा झूठमूठ खाली-भरी टोकरी कुएं पर इधर से उधर देने का खेल कर देती थी। खाना भी क्या मिलता था—दाल, ज्वार की रोटी, मूंगफली का मक्खन और सब्जी। विनोवाजी कहते थे कि दूध, दही, घी, तेल तो तव मिले जव कुआं खुदे, उसमें से पानी मिले, पानी से खेती हो, खेती से घास-दाना हो, जिससे गाय रखी जाय। तवतक इसीसे काम चलाना होगा।

आज के मशीनी-युग में रहनेवालों को यह वात हास्यास्पद लग सकती है। लेकिन आगे-पीछे लोगों को यह मानना ही पड़ेगा कि देश की असली तरक्की तभी हो सकती है जव श्रम का मूल्य समझा जायगा और हम अपने पैरों पर खुद खड़े होंगे।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शुरू में तो डर था कि गुड़ और मूंगफली के मक्खन से पेट दुखेगा। लेकिन २-१ दिन बाद आदत हो गई और वह अच्छी भी लगने लगी। कमला का लड़का सुशील बंबई से आया तो विनोबा ने उससे भी कुंए पर काम करवाया, पत्थर डलवाए, टोकरियां उठवाईं। यह काम करके उसे बड़ा गर्व मालूम हुआ, ऐसा साफ लगता था। सदा से आश्रम में विनोबा के साथ रहनेवाले और यह भोजन खानेवाले तो सर-पिंजर हो गये थे, लेकिन उनके उत्साह में कोई कमी नहीं थी। काश—आज सारे देश में यही मनोभावना पैदा हो जाय तब तो इस देश की कायापलट होते देर नहीं लगेगी।

कस्तूरबा ग्राम, इंदौर में विनोबाजी ठहरे थे। सात दिन सात विषयों पर उनका प्रवचन हुआ—कीर्ति, श्री, वाणी, स्मृति, मेधा, धृति, क्षमा। सुबह सवा पांच बजे सबसे विदा लेकर ३॥ मील दूर के गांव की ओर चले। मैं और कमल का छोटा लड़का शिशिर भी साथ थे। १॥ मील दूर जाकर खेत में बैठ गए। सूर्योदय होनेवाला था। विनोबाजी कहने लगे—रात्रि ६ से १२ बजे का समय भोगियों का, १२ से ३ चोरों का और ३ से ६ योगियों का होता है। यह योगियों का समय ही लोग गंवा देते हैं।

तमाम प्रवास में शिशिर को बहुत उत्साह रहा और शहरी जीवन व रहन-सहन का आदी वह लड़का इस जीवन से बहुत प्रभावित हुआ।

विनोबाजी मसूरी जानेवाले थे। ओम् तब वहीं थी। उसे पता लगा कि विनोबाजी बिड़ला हाउस में ठहरनेवाले हैं तो उसने दामोदर को लिखा। विनोबा ने लिखवाया कि हमें तो मालूम नहीं था कि ओम् वहां है—"माझी झोंपड़ी आहे ती बरी आहे[1]।" ओम् की खुशी का क्या कहना। विनोबा आते ही ओम् से बोले—"मैं २० वर्ष पहले घर से निकला था, हिमालय जाने के लिए, पर रास्ते में गांधीजी रूपी हिमालय मिल गये, मैं उन्हींमें लीन रहा। अब मीरा-बहन ने आग्रह किया तो प्रश्न उठा कि मसूरी आऊं उनसे मिलने या वह आये ? तो एक पंथ दो काज। मैंने ही मसूरी आने का सोचा। तुम्हारे पास तो अच्छा ही है।" शाम की प्रार्थना के बाद ओम् की बेटी रुचिरा से बोले—"पाटी-कलम लाओ, तुम्हें अक्षर बताएंगे।" वह पाटी-कलम लाई। उन्होंने पाटी पर कुछ चित्र-सा बनाया। मैं बोली—बापू के चेहरे जैसा लगता है। मेरा बोलना था कि उन्होंने हाथ फेरकर मिटा दिया। मैंने कहा—"मिटाया क्यों ? और लिखो।" बोले—"लिखने से थोड़े ही बनेगा अब ! बन गया सो बन गया।" बाद में वह रुचिरा को अक्षर बताते रहे।

तब मुझे एक बात याद आ गई। एक बार वर्धा में मदालसा के घर आये थे तब सहज में बोले कि गृहस्थ लोग साधु-संतों की सेवा अनेक तरह से करते हैं, पर संत लोग भी बदले में ज्ञान-उपदेश तो देते ही हैं। बिना श्रम के कुछ भी न लेना विनोबा की अब की नहीं, शुरू की आदत है।

११ फरवरी जमनालालजी की पुण्यतिथि। मैंने विनोबा से कहा कि वर्धा में आज के दिन गीता के अठारह अध्यायों का पाठ होता है। आज यहां मसूरी में भी हो। वह बोले कि

१. मेरी तो वह झोंपड़ी ही भली है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१८ अध्याय का मोह छोड़कर कुछ पाठ कर लिया जाय। मैंने कहा—१८ अध्याय तो वैसे ही वंच जाते हैं, आज तो आप भी हमारे वीच हैं। फिर यजमान जैसा कहे वैसा करना चाहिए। घरवालों की इच्छा मानकर शुरू किया। पर ११वें अध्याय में विराट-रूप दर्शन तक आते-आते भावावेग इतना वढ़ गया कि आंखों से अश्रुधारा बहने लगी। इतने गद्‌गद् हो गए कि आगे चलना मुश्किल हो गया, शब्द निकलना ही रुक गया। किसी तरह रुकत-रुकते १८ अध्याय पूरे हुए। दूसरे दिन मैंने विनोवाजी से कहा—आगे से, मैं मर जाऊं तव भी, आपसे १८ अध्याय का पाठ करने की तो वात ही न करूं।

दरअसल विनोवाजी वहुत ही भावुक-हृदय हैं। उनके अनेक भावावेग के दृश्य मैंने देखे हैं। वंगलौर में जब जवाहरलालजी विनोवा से मिलने उनकी कुटिया में आये, तो विनोवा को भावातिरेक से अपने-आपको बचाना असंभव हो गया। जवाहरलालजी को देखते ही उनकी आंखों से स्नेहसिक्त आंसुओं की धारा वह निकली और कुछ समय तक तो वह उनसे वात ही नहीं कर सके, कंठ विलकुल अवरुद्ध हो चुका था।

एक वार जमनालालजी ने विनोवाजी से चर्चा की कि राम-लक्ष्मण की सब पूजा करते हैं, पर तपश्चर्या भरत की कम नहीं थी। फिर भी भरतजी का मंदिर कहीं देखने में नहीं आता। उन्होंने कहा कि मंदिर तो क्या वनेगा, लेकिन अपने वर्धा के लक्ष्मीनारायण मंदिर में ही भरत की मूर्ति रख ली जाय तो अच्छा। इसके कुछ दिनों वाद जमनालालजी जेल चले गए। एक दिन पवनार में गढ़ा खोदते-खोदते विनोवाजी को भरत-भेंट की मूर्ति मिल गई। विनोवाजी को जमनालालजी की इच्छा स्मरण हो आई। उन्होंने पवनार के पास ही एक छोटी-सी झोंपड़ी में उस मूर्ति की स्थापना की और खुद वहां पाठ करने लगे। पाठ करते समय इतने तन्मय और भाव-विभोर हो जाते थे कि इस अद्‌भुत दृश्य को देखने के लिए गांव तथा आसपास तक के लोग इकट्ठे हो जाते।

लगभग इसी समय पवनार में विनोवाजी कांचन-मुक्ति का भी प्रयोग कर रहे थे। वह चाहते थे कि संस्थाएं परावलंवी न रहें, परिश्रम पर ही उनका खर्च चले। ज्ञान, कर्म और भक्ति के त्रिवेणी-संगम का दर्शन उस समय सारे देश ने किया था।

अहिंसा को विनोवा ने पूरी तरह जीवन में उतारा है। अपने कारण किसी को जरा भी तकलीफ हो, यह उनकी वर्दाश्त के बाहर है।

मसूरी में ३-४ दिन से लगातार वर्षा हो रही थी। मैंने विनोवा से कहा कि पहाड़ की इसी झड़ी में कपड़ों तक का सूखना मुश्किल हो गया है। विनोवाजी जव नहाने गए तो लौटकर उन्होंने वही धोती पहन ली।

ऐसे ही एक वार बीकानेर से विनोवा नागोर गए। वहां पानी की कमी थी। स्त्रियां सिर पर पानी के घड़े रखकर कुओं से लाती थीं। पद-यात्रावालों को मारवाड़ का अनुभव था नहीं। उन लोगों ने खूब सारे कपड़े धोने के लिए निकाले। मैं बोली—नागौर में पानी का अकाल है, स्त्रियों को सिर पर रखकर लाना पड़ता है। दूर-दूर से या फिर ऊंटों पर आता है। विनोवा भी पास ही में बैठे थे। कुछ देर वाद वह नहाने गए और वही धोती पहन ली।

विनोवाजी ने राजस्थान का दौरा किया तब मुझे यह देखकर वहुत ही दुःख हुआ कि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एक-दो को छोड़कर अधिकतर सेठ विनोबाजी के स्वागत के लिए आये तक नहीं। शायद उनके मन में यह आशंका हो कि बाबा न मालूम क्या मांग लें ? यदि सरकार का कोई मंत्री आता, तो वे जरूर आते।

इस बात ने मुझे यह सोचने पर मजबूर किया कि अगर आज जमनालालजी होते, तो क्या करते ? वह व्यापारियों को उनसे मिलाने का प्रयत्न जरूर करते—उनसे मिलो, उन्हें अपनी अड़चनें सुनाओ, उनकी भी बात सुनो और बाद में जो जंचे सो करो, लेकिन अगर डरकर दूर रहेंगे तो ज्ञानी के ज्ञान-लाभ से वंचित ही रह जाएंगे।

विनोबाजी व्यापारियों के लिए कहते कि व्यापारी लोग बुद्धिमान हैं, मिट्टी में से सोना बनाना जानते हैं, दानी भी हैं, जिससे समाज का हित होता है, लाखों का हिसाब उंगलियों पर कर लेते हैं, इतने होशियार हैं।

सर्व सेवा संघ की बैठक थी। किदवईसाहब भी विशेष रूप से निमंत्रित थे। चर्चा का विषय था कि सरकार की दुग्ध-वितरण योजना का सरकार को क्या जवाब देना। चर्चा के बाद यह नतीजा निकला कि शहरों को मदद नहीं करना।। मैंने पूछा—"गो-सेवा की अध्यक्षा के नाते मैं बोल सकती हूं क्या ?" धीरेनभाई बोले—"गो-सेवा अब रहा कहां है ?" लेकिन मेरा तो रुकना कठिन ही था। मैं बोली—अध्यक्ष नहीं तो मध्यक्ष ही सही। लेकिन आखिर आप लोगों ने किदवईसाहब को यहां बुलाया क्यों था, इतनी आशा से आपने उन्हें बुलाया और जब उन्होंने आपकी बातें मान लीं तो अब नखरे क्यों करते हैं आप लोग ? क्या आपने उन्हें राज्य के कार्य-भार से इस्तीफा देने के लिए बुलाया था ? और धीरेनभाई—आप लकड़ी जैसे कड़े हैं। (अपने दृष्टिकोण में) इसीलिए आपकी कमर टूट गई। आपको तो अब इस्तीफा दे देना चाहिए। असल में कानून-कायदे की बातें कुछ ज्यादा ही होने लगी हैं। विनोबाजी को भी जब शुरू में थोड़ी जमीन मिली थी तो वह (वितरण का काम) किसी तरह चला लेते थे, लेकिन जब लाखों एकड़ जमीन मिलने लगीं, तो वे भी कायदे का सहारा लेने लगे हैं। सरकार सर्व सेवा संघ के पास आती है, खादी को प्रोत्साहन देती है, और भी सहयोग देती है तो आप लोग दूर क्यों भागते हैं सरकार से ? शक्ति नहीं है तो साफ कहो, ये पालिसी की बातें क्यों कर हो ?" जोश में इतना बोलकर मैं बैठ गई। लेकिन जिस तरह कुछ देर बैठक में सन्नाटा छा गया उसे देखकर लगा कि मेरी बात का कुछ असर भी हुआ है।

बाद में सतीशबाबू बोले—"आप तो कहती हैं कि मुझे समझाना नहीं आता, लेकिन आज तो आप इतना अच्छा बोलीं।"

कार्यकर्ताओं की एक सभा में विनोबाजी का भाषण था। ११ बजे का समय था। विनोबा-जी ने कहा कि यह समय तो कार्यकर्ताओं के सोने का है—वे सुनेंगे क्या मेरा भाषण ? मैं मज़ाक में बोली—आप खाने में से नमक-मिर्च निकाल देने की बात कहते हैं—तो समाधि तो आप ही लगवाते हैं इनकी। ये लोग नमक-मिरची खाएंगे तो शरीर में चेतनता तो रहेगी।

विनोबाजी की प्रार्थना में विष्णु-सहस्रनाम का पाठ होता है। मैंने विनोबाजी से कहा—"मैं तो वैष्णवों की बेटी ठहरी—९-१० वर्ष की थी तबसे १९ वर्ष की उम्र तक दोनों समय विष्णु सहस्रनाम का पाठ करने के बाद भोजन करती थी। शुद्ध और अशुद्ध का तो राम मालिक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लेकिन हजार नाम का पुण्य तो मिलता ही था। लेकिन आपके लप्पड़-सप्पड़ धर्म ने सब भुला ही दिया।" विनोबाजी बोले—"हमने कब भुलाया ?" तो मैंने कहा—"आपने नहीं तो आपके बाप-गांधीजी ने सही। अब ४७ वर्ष बाद पाठ करें, तो कैसे करें। तब तो लप-सप जो भी आता बोल लेती। लेकिन आपके साथ पाठ करने में उच्चारण का भी तो चक्कर है।"

मेरे जीवन पर तीन महापुरुषों की गहरी छाप पड़ी, उनमें अब जमनालालजी और बापूजी तो अब रहे नहीं। विनोबाजी हैं। पर वह तो छोटे भाई के जैसे लगते हैं। उनके पास जाने में मुझे ज़रा भी डर नहीं लगता। बापूजी के सामने जाने में डर-सा लगता था। उसका एक कारण यह भी रहा हो कि जमनालालजी ने उनको पिता माना था। सो मैंने भी अन्तःकरण के किसी कोने में उनको श्वसुर-तुल्य समझकर उनका डर बसा लिया हो। जमनालालजी से तो उनके कामों को लेकर एक प्रकार की ईर्ष्या-सी होती थी। उनसे लड़-झगड़ भी लेती थी। उनको राजी रखने का भी प्रयत्न करती। लेकिन विनोबा से मनोविनोद भी होता रहता है, उनके भूदान और कूप-दान के कामों में रस भी आता है।

पंजाब में पठानकोट में एक बार विनोबाजी अकेले मस्त बैठे थे। मैं भी पास जा बैठी। गपशप करने बैठ जाती हूं तो वह ध्यान से मेरी बातें सुनते हैं। वह सोचते हैं कि जानकीबाई बच्चे की तरह निस्संकोच बोलती हैं तो सुन लो। कुछ भावना, स्नेह, उदारता भी रहती है। मैं बोली, "हां और ना" पर सारी भाषा बनी है, लेकिन "ना" को अपशकुन मानते हैं। तो क्या केवल "हां" से काम चल सकता है? पहले के लोग "नहीं" कहना अपनी कायरता मानते थे। सब बातें "हांजी" "हांजी" कहते थे और अपना वचन निभाते थे। लेकिन आजकल तो जीवन नौकरों के सहारे चलता है। स्कूली शिक्षण के कारण स्वतंत्रता भी अधिक आ गई है। घर में कोई कुछ मांगे तो झट-से कहते हैं—"नहीं है।" कौन उठे, देखे।"

विनोबाजी सारी बातें बड़े मजे में सुनते रहे। उनके अपने विचार भी चल रहे होंगे। लेकिन मुझे भी राजी तो करना था, सो एक वाक्य में उत्तर दिया—"नहीं" में भी तो आखिर "हां" ही है।" यह सुनकर मैं तो चुप हो गई। लेकिन अब भी यही लगता है कि जब ईश्वर की सृष्टि में परिपूर्णता है तो "ना" का तो निषेध होना ही चाहिए।

विनोबाजी कम बोलते हैं, और जब बोलते हैं तो कम शब्दों में बोलते हैं। उनका भाषण और लेखन साधारण बोलचाल की भाषा में होता है और उनके विचार इतने तर्कपूर्ण और युक्तिसंगत होते हैं कि सहज ही मानस में पैठते चले जाते हैं। अक्सर हमारी लिखित बात-चीत भी होती रहती है।

एक बार मैंने कागज के पुर्जे पर लिखा—"अमरावती में भागवत सुनकर आई थी। रात को स्वप्न में गांधीजी का चेहरा दिखा। तुरंत बाद नंदजी की गोद में कृष्ण दिखे। फिर गुम हो गए।

इसपर विनोबाजी ने लिखा—"ये अच्छे लक्षण हैं। धीरे-धीरे सूक्ष्म दर्शन भी होंगे।"

इसी तरह एक अन्य मौके पर मैंने लिखा—"आपके लिए तो सब दिन एक समान हैं। लेकिन अभी दीवाली की सफाई में सब जगह गंदगी फैलेगी। आपको वहीं जंतु लग जाय तो ? सो कम-से-कम दीवाली हो जाने दीजिए तब जाइएगा।" इसके उत्तर में विनोबाजी ने केवल

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एक वाक्य लिखा—"विजयादशमी सीमोल्लंघनम् ।"

वर्धा की बात है। मैंने कागज के टुकड़े पर लिखा—१. बापू ने बजाज-परिवार पर बड़ा उपकार किया। अब बापू की जगह आप हैं। २. बापूजी, जवाहरलालजी, जमनालालजी—बजाजवाड़ी में ये त्रिमूर्ति थे। बाबा, राधाकृष्णन्, श्रीमन्—ये आज हैं।

विनोबाजी ने उसी कागज के टुकड़े पर नीचे लिखा—"१. बापू की जगह बाबा किसी हालत में नहीं ले सकता। २. पंडितजी की जगह राष्ट्रपति की हो नहीं सकती। ३. जमनालालजी की हैसियत श्रीमन्जी की नहीं हो सकती। आपके तीनों सिद्धांत गलत साबित होते हैं।

वैसे ही जब मैंने यह लिखा कि "आप जमनालालजी के साथ शतरंज खेलते थे। अब कमल के साथ खेलें, तो शतरंज लाना सफल है।" तो विनोबाजी ने एक ही वाक्य में जवाब दिया—"जमनालालजी का काम कमलनयन शुरू करेगा—उसके बाद खेलेंगे।"

एक दिन मैंने सहज ही विनोबा से पूछा—आज जमनालालजी होते तो क्या करते ? यह सुनकर विनोबाजी एकदम गंभीर हो गये—इतने कि मुझे डर लगा कि अब इनकी अश्रुधारा बहने लगेगी। थोड़ी देर बाद बहुत ही मुश्किल से बोले—जमनालालजी १६ वर्ष की उम्र में केजाजी महाराज[1] से मिले होंगे। उनसे मिलकर केजाजी महाराज बोले कि हीरा तूने कचरे में खो दिया, यानी कि अनमोल जीवन धनी के घर धन में खो जायगा। तबसे ही वह अंत तक धन-व्यापार का मोह छोड़ने का प्रयत्न करते रहे और उसमें काफी हद तक सफल हुए।

महर्षि रमण और अरविंद के दर्शन करके जब जमनालालजी वापस वर्धा लौटे तो मनः-स्थिति काफी शांत थी। लेकिन विनोबा से उन्हें हमेशा अधिकाधिक प्रेरणा और शांति मिलती थी। कहते थे—पहाड़ों और कंदराओं में संतों को खोजने की क्या जरूरत, जबकि विनोबा जैसे संत अपने घर में ही हैं। अपनेको तो इनसे बहुत ही संतोष है। मृत्यु-पत्रों में भी जमनालालजी ने विनोबा का नाम लिखा है कि मेरे बाद परिवार के सदस्य गुरु समझकर विनोबाजी से हर मामले में सलाह लें।

त्याग, तपश्चर्या और ज्ञान तो विनोबाजी में भरपूर है ही। व्यावहारिकता की थोड़ी कमी लगती थी, लेकिन बापू के जाने के बाद जबसे उन्होंने भूदान का कार्य संभाला, वह भी कमी पूरी होती जा रही है। यूं लगता है कि बापू अब उनमें ही प्रवेश कर गये हैं और दोनों की शक्ति एक जगह इकट्ठी होकर चमक उठी है।

१. जमनालालजी की दादी सद्दीबाई साधु-संतों पर श्रद्धा रखती थीं। केजाजी महाराज ऐसे ही एक संत थे और बहुत सिद्ध-पुरुष माने जाते थे।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

राजेन्द्रबाबू : सादगी और सरलता की मूर्ति

श्रद्धेय राजेन्द्रबाबू का हमारे परिवार से पिछले ३०-३५ वर्षों का संबंध रहा। उनके बारे में जितना याद करूं थोड़ा है। शांत-सरल स्वभाव, अभिमान से कोसों दूर। इतने वर्ष गुजर गए, इतने उतार-चढ़ाव आये—उनके जीवन में भी और देश के इतिहास में भी। लेकिन राजेन्द्रबाबू तो जैसे तब थे, वैसे ही अंत तक रहे। मुझे तो उनके जितने भी संस्मरण याद आते हैं, सबमें उनकी सादगी, सहजता, सरलता और शांत-स्वभाव के ही दर्शन होते हैं।

बाबूजी को पहली बार साबरमती में देखा। बापू के पास वह आये थे। दुर्बल शरीर, ऊंची धोती, काली खादी की लंबी बाहोंवाली रुई की सदरी और सिर पर बेतरतीब टोपी। कौन जानता था कि सादगी का यह प्रतीक आगे जाकर भारत का राष्ट्रपति बनेगा।

साबरमती में वर्षों तक बाबूजी सकुटुंब रहे। उनके पुत्र मृत्युंजयबाबू आश्रम में पढ़ाते थे। मैं भी उनकी कक्षा में आ जाती थी। प्रश्न बहुत पूछती—इतने कि एक दिन मृत्युंजयबाबू ने कहा कि बाल की खाल नहीं निकालते हैं। तबसे मैं तो चुप रहने लगी।

वर्धा में जब कांग्रेस कार्यकारिणी की बैठक होती थी तब बहुत चहल-पहल रहती। सब नेताओं का भोजन आदि बजाजवाड़ी में ही होता। जमनालालजी खुद अपनी देख-रेख में सारी व्यवस्था करवाते, हर व्यक्ति की रुचि का भोजन बनवाते तथा सुख-सुविधा का ख्याल रखते थे।

भोजन के बाद बीच के कमरे में बैठक जमती। जवाहरलालजी, सरोजिनी नायडू, बैरिस्टर आसफअली, राजाजी आदि खेलकूद में लग जाते। लेकिन राजेन्द्रबाबू को दमे की बीमारी थी तो वह इस उछलकूद में हिस्सा नहीं ले सकते थे। वह अतिथिगृह में ही रहते। जमनालालजी वहां जाते और उनके साथ घंटों शतरंज खेलते, ताकि उन्हें बोलने से बचाया जाय। शतरंज के खेल को जमनालालजी 'बुद्धिबल' कहा करते थे।

रात को एक तरफ बाबूजी और दूसरी तरफ किशोरलालभाई मश्रूवाला सोते। दोनों को ही दमा। जब दमे का जोर होता तो किसीको भी पूछने की हिम्मत नहीं होती। सुबह किशोरीलालभाई कहते—"रात को तो होड़ लगी थी कि किसकी आवाज जोर से निकले।" संतों को तो कष्ट भी शांति से ही झेलने पड़ते हैं न!

गो-सेवा-संघ की जो मीटिंग वर्धा में हुई थी उसमें राजेन्द्रबाबू अध्यक्ष बने। राधाकृष्ण ने बाबूजी से कहा कि अब तो आपको गाय के घी-दूध का नियम लेना चाहिए। बाबूजी ठहरे सरल आदमी। बिना सोचे-विचारे ही कह दिया—'अच्छा'।

बापू को इस बात का पता तो लगना ही था। बोले—"राजेन्द्रबाबू इस नियम का पालन आपसे कैसे होगा। आपको तो खाने में कच्चे-पक्के का भी ध्यान नहीं रहता, जो सामने आया, जैसा भी आया, खा लिया।" मैं बोली—"हां बापूजी, सेक्रेटरी भी उनके हैं तो मथुराबाबू। अगर इनकी थाली बाबूजी के सामने चली गई और बाबूजी के गाय के घी का भोजन खुद खा लिया तो भी दोनों के ध्यान में आना कठिन है।" फिर तो हँसी का ऐसा फव्वारा छूटा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कि बस ! किंतु बाबूजी ने गंभीरता से कहा कि मैं अध्यक्ष वना तो गोव्रती भी वनना लाजिमी ही है। उसके बाद उन्होंने काफी कड़ाई से पालन भी किया। मैं तो अवश्य यह मानती हूं कि बाबूजी के दमे को कम करने में गाय के घी-दूध ने चमत्कार ही दिखाया है।

राष्ट्रपति चुने जाने के बाद बाबूजी वर्धा आये और बजाजवाड़ी में ही ठहरे। पंगत में जीमकर उठे और हाथ-मुंह धोने गये तो चक्रधरबाबू बोले—"माताजी, अब तो बाबूजी राष्ट्रपति की हैसियत से आयंगे तो आपके यहां थोड़े ही ठहरेंगे, और ठहर सकेंगे भी कैसे, इनका स्टाफ वगैरा जो साथ होगा। सरकारी रेस्टहाउस में ही उतरना ठीक होगा।" मैंने बाबूजी से पूछा, "चक्रधरबाबू कहते हैं आप अब आयंगे तो यहां नहीं ठहरेंगे क्या ?" बाबूजी तुरंत बोले— "तो और कहां जायंगे ?" इतनी नम्रता और सरलता से उन्होंने यह बात कही कि हृदय पिघल गया।

एक बार बाबूजी कहीं बाहर जा रहे थे। बोले—हमारे हवाई जहाज में केवल दो ही जनों की जगह है, सो आप भी चलिए। मैं तैयार हो गई। तमाम रास्ते हवाई जहाज के बारे में बातें समझाते रहे—हवा आदि के संबंध की। इसी तरह एक बार बाबूजी हवाई जहाज से कलकत्ता जा रहे थे। मैं भी साथ जानेवाली थी। सीतारामजी सेक्सरिया को कलकत्ता जाना था—गाड़ी में रिजर्वेशन नहीं हुआ। मैंने बाबूजी से कहा कि सीतारामजी भी जाना चाहते हैं। बाबूजी ने तुरंत इंतजाम कर दिया। लेकिन सीतारामजी नहीं गये। बाबूजी ने याद करके पूछा भी था। रास्ते में बहुत मज़ा आया। मथुराबाबू लुगाई जैसे बोलते—बाबूजी यह देखिये, नीचे देखिये, इधर देखिये, उधर देखिए। और बाबूजी का धीरज तो अपार। किसी भी तरह झुंझलाहट नहीं चेहरे पर।

एक रोज लक्ष्मीनारायणजी गाडोदिया की पत्नी सरस्वतीदेवी बोलीं—"हमें भी राष्ट्रपतिजी की कोठी दिखा दो।" मैंने कहा—"चलो राजवंशीदेवीजी से मिलने चलें।" बिना इजाजत के जा सकते थे, सो गये। सारी कोठी देखी। बाबूजी नहीं मिले। मिलते तो कहती कि आप गाड़ोदिया बैंक जाया करते थे, वहां खाना खाते थे। अब राजधानी के ठाट-बाट का खाना हमें भी खिलाओ। धनंजयबाबू की पत्नी से कहा कि तुम कह देना। उन्होंने कहा, "आप चिट्ठी लिख दीजिए, मैं दे दूंगी।" मैं चिट्ठी लिखकर रख आई। बाबूजी ने फोन करवाया कि सरस्वतीजी को लेकर आप सब भोजन पर आइये। सरस्वतीजी तो सुबह ही बंबई चली गई थीं। मैं, कमलनयन, श्रीमन्नजी, कमला, राजनारायणजी, मदालसा, ओम् वगैरा गए। बाबूजी ने फौरन पूछा—"वह कहां हैं सरस्वतीदेवी ?" मैंने कहा वह तो सुबह ही बंबई चली गई अचानक !

भू-दान की एक सभा में बाबूजी राजघाट आये थे। मैंने वहीं कूप-दान की अपील की थी तो बाबूजी की उपस्थिति में ही १५-२० हजार रुपयों की कीमत के ३० कुएं लोगों ने दिये। बाबूजी देर तक बैठे रहे। सरदी के कारण खांसी बढ़ जाने की आशंका थी। सो उनके ए०डी० सी० ने मुझसे कहा कि बाबूजी को अब जाने दीजिए। उनकी तबीयत के बारे में मुझे भी फिक्र हो रही थी। लेकिन वह खुद ही बोले—"होने दो, कार्य होता है तो चलने दो।"

यह मेरे लिए गौरव की ही बात थी कि बाबूजी के द्वारा मुझे पद्म-विभूषण का पदक मिला।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लेकिन मेरा दिल भर आया था कि यह चीज तो जमनालालजी की है, मैं इसके काबिल कहां हूं। कमलनयन ने मज़ाक किया कि मेरा पदक अगर वह लगा ले तो कौन जानेगा ? देखा तो पता चला कि उसपर नाम लिखा ही नहीं है। बाद में जब बाबूजी पूना में राजनारायणजी (मेरे दामाद) की तबीयत का हाल पूछने ओम् के घर आये तो मैंने उनसे कहा कि यह पदक जो आप देते हैं उसपर नाम तो खुदा होना चाहिए। अगर जवाहरलालजी का 'भारत-रत्न' का पदक म्यूजियम में रखा हो तो किसे पता चलेगा यह उनका पदक है ? श्रीप्रकाशजी भी साथ में थे। बाबूजी ने फौरन अपनी सेक्रेटरी से कहा—"ज्ञान, यह बात सोच-विचार की है, तुम ध्यान करके याद दिलाना।" पीछे तो बाबूजी की तबीयत खराब हो जाने की वजह से वह बात वहीं रह गई।

राष्ट्रपति होने के बाद बाबूजी एक बार वर्धा आये। अतिथिगृह में ठहरे। मैंने घर का आंवले का मुरब्बा उनके हाथ में रख दिया—कुछ सांवला-सा हो गया था। उन्होंने झट मुंह में रख लिया। कमल बोला—"क्या दे दिया बाबूजी को यह काला-सा ?" मैंने कहा—"भाई, घर का आंवला ही तो दिया है।" लेकिन फौरन मुझे बापू की बात याद आ गई—राजेन्द्रबाबू, आपको खाने में कच्चे-पक्के का भी ध्यान नहीं रहता, जो सामने आया, जैसा भी आया खा लिया।

इसी तरह एक बार राजधानी में बाबूजी की वर्षगांठ पर मैं कुछ तुलसीदल ले गई। फूल-माला तो क्या ले जाती। मैंने उनके हाथ पर रखकर कहा—बाबूजी, यह तुलसाजी तो आप आप खा सकते हैं। उन्होंने झट मुंह में डाल ली।

जमनालालजी और बाबूजी में सगे भाई जितना प्रेम था। एक बार दिल्ली में मैं बाबूजी के साथ मोटर में जा रही थी। जाने किन विचारों में थी कि अचानक मैंने कहा—आज आपको देखकर जमनालालजी कितने खुश होते ? बाबूजी की आंखें लाल-लाल होकर डबडबा गईं। मैं चुप हो गई। उन डबडबाई आंखों के पीछे उमड़ता स्नेह का समुद्र मुझसे छिपा थोड़े ही रह सकता था।

महादेवभाई : बापू के गणेश

महादेवभाई और जमनालालजी गांधीजी के लिए मानो देवदूत बनकर ही आये थे। सगे भाइयों से बढ़कर आपस में दोनों का प्रेम था। दोनों सब प्रकार के दिखावे से दूर रहकर बापू के कार्यों की उन्नति के ही चिंतन में हमेशा लगे रहते थे। महादेवभाई जानते थे कि बापू के दिमाग में से रोज नई योजनाएं निकलती हैं, जिन्हें पूरा करने के लिए भरपूर साधन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आवश्यक हैं, क्योंकि बापू खुद तो दरिद्रनारायण का चोला पहने बैठे हैं। उनकी योजनाओं को पूर्ण करने के लिए भगवान ने जमनालालजी को ही मानो कुबेर बनाकर भेजा है, ऐसा महादेवभाई मानते थे और मज़ाक में कह भी देते थे। जमनालालजी भी यह समझते थे कि व्यासजी को महाभारत लिखाने के लिए जैसे गणेशजी मिले, वैसे ही बापू की दिमागी योजनाओं को लेखनी में उतारनेवाले महादेवभाई बापू को मिले हैं।

बापू की योजनाओं को कार्यरूप देने के लिए वे दोनों एक-दूसरे की उपयोगिता को अच्छी तरह समझते थे और इसलिए दोनों में अटूट प्रेम होना स्वाभाविक ही था। आत्म-निरीक्षण की बातें दोनों आपस में अक्सर किया करते थे।

बापू ने २१ दिन का उपवास किया, शायद तबकी बात है। जमनालालजी महादेवभाई से बोले—"हम अपने मित्र या पुत्र की मृत्यु भी शायद सहन कर लें, लेकिन बापू के बारे में तो सोचना भी कठिन है। अगर बापू को कुछ हो गया तो ?" फिर दोनों ही बहुत गंभीर हो गये। बापू का जीवन ही इन दोनों का सुहाग था। पर शायद इन दोनों को यह पता नहीं था कि वे दोनों भी बापू के सुहाग थे, वरना दोनों-के-दोनों बापू के सामने ही न चले जाते। एक तरह से यह अच्छा ही हुआ। शायद बाद की भारत की दशा और बापू पर बाद में आनेवाले संकटों को आंखों से देखना उनके लिए असह्य हो जाता।

महादेवभाई वैसे तो रामचंद्रजी के सेवक हनुमान-सरीखे थे, किंतु बापू के प्रयोगों के प्रति तटस्थ ही रहते थे। इनसब झमेलों से दूर वह मगनवाड़ी में ही सपरिवार रहते थे, जो बापू के रहने की जगह सेवाग्राम से करीब ५ मील दूर है। रोज सुबह ५ मील पैदल चलकर सेवाग्राम जाते और पैदल ही लौटते। जमनालालजी बहुत चाहते कि महादेवभाई के लिए सवारी का इंतजाम कर दें, पर वह हमेशा मना कर देते। उनका कहना था कि जमनालालजी पर बापू की वजह से पहले ही बहुत बोझ पड़ रहा है, मैं उसमें और क्यों वृद्धि करूं ? यह भी कहते कि ५ मील चलना तो व्यायाम में ही आ जाता है,५ मील और सही। और फिर सवारी के भरोसे रहनेवाले व्यक्ति का समय और वह खुद भी पराधीन हो जाता है। साथ ही डर भी था कि बापू पूछेंगे कैसे आये तो क्या जवाब दूंगा ?

महादेवभाई गये यह खबर मिलते ही रात को करीब आठ बजे कमल सेवाग्राम फोन करने लगा। मैंने कहा—"रात को फोन क्यों करता है ? दुर्गाबहन की रात कैसे कटेगी ?" तो कमल चिढ़कर बोला—"ऐसी बात कोई छुपती है क्या ? तू तो अब राजी हो गई होगी।" उस समय तो मैं चुप रही। बाद में जब कमल से पूछा कि ऐसा तूने कैसे कहा तो बोला—"अपना घर जलता देखकर दुःख होता है, लेकिन दूसरे का घर भी जलता हो तो धीरज बंधता है।" एक तरह से कमल की बात सही थी। मैंने सोचा कि महादेवभाई तो बापू की आंख सामने ही चले गये, तो जमनालालजी को बापू कैसे बचा सकते थे। और इसी विचार से मन का दुःख मेरा कम होता था।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

खान अब्दुल गफ्फार खां : सरहदी गांधी

खान अब्दुल गफ्फार खां के और हमारे परिवार के बीच घर का-सा ही संबंध हो गया था। बादशाह खान जब जेल से छूटे तो वर्धा आये। सीमाप्रांत में उनके जाने पर प्रतिबंध था। सो वह सेवाग्राम में बापूजी की कुटिया में ही रहते थे। बापू के ही कमरे में उनका दफ्तर भी खुल गया।

जेल में बादशाह खान की तबीयत बहुत खराब रही थी, वह बहुत कमजोर हो गये थे और उनका वजन भी काफी घट गया था। हालांकि जेल-अधिकारियों ने उन्हें सब सहूलियतें देने के लिए जोर दिया, लेकिन उन्हें अपने लिए कोई भी सुविधा लेना पसंद ही नहीं था।

सेवाग्राम में भी उनके लिए विशेष कुछ बने यह वह नहीं चाहते थे। जो कुछ आश्रम में बनता वही वह खाते और उसीसे संतुष्ट रहते। अण्डा-मांस आदि तो आश्रम में बनने से रहा—लेकिन उन्हें कोई शिकायत नहीं थी।

एक दिन बापूजी ने जमनालालजी से कहा कि खानसाहब का वजन तो बढ़ना ही चाहिए। जमनालालजी ने कहा—"यदि आप कहें और खानसाहब मान जायं तो मैं इन्हें बजाजवाड़ी ले जाऊं। वहां इनके खाने आदि का प्रबंध भी ठीक तरह से हो सकेगा। यहां तो इनका आना-जाना रहेगा ही।" बादशाह खान तैयार हो गये, बापू की इजाजत भी मिल गई और बजाजवाड़ी में उनके रहने का स्वतंत्र प्रबंध करवा दिया गया।

हालांकि बापूजी मांसाहारी खाने के विरुद्ध थे, किंतु वह अपने विचार किसी पर थोपते नहीं थे, खासकर उन लोगों पर जो इस प्रकार के खाने के इस कदर आदी हो गये थे कि एकाएक केवल शाकाहारी भोजन शुरू करना उनके स्वास्थ्य पर भी असर कर सकता था। इसी दृष्टि से एक दिन बापू ने बादशाह खान से कहा कि आप चाहें तो आपके लिए अंडों का इंतजाम अलग से हो सकता है, आपके स्वास्थ्य की दृष्टि से भी एकदम सब चीजें छोड़ देना ठीक नहीं। जमनालालजी भी बोले कि उनके लिए अलग प्रबंध करने में कोई असुविधा नहीं होगी।

लेकिन बादशाह खान ने जवाब दिया, "बापू, मैं जमनालालजी के घर में ठहरा हूं, मांस-अंडे की बात सोचना भी कठिन है, और फिर अगर खुदा इस खिदमतगार को जिंदा रखना चाहता है तो बगैर अंडे भी रख सकता है, मरना होगा तो अंडा खाकर भी मौत हो सकती है।" और अंत तक उन्होंने घर में बना भोजन ही खाया। हां, उनकी खिचड़ी में खूब गरम किया हुआ घी जरूर होना चाहिए था और हर रोज जमनालालजी खुद देखते थे कि वह उनकी खिचड़ी में डाला गया है।

बाद में तो बादशाह खान के बड़े भाई डा० खानसाहब, उनकी लड़की, दोनों लड़के—वली और लाली, डॉ० खान की लड़की वगैरा भी आ गये और इस तरह हमारे परिवार में इतने सदस्य और बढ़ गये।

डॉ० खान, खानसाहब से चौदह वर्ष बड़े थे, लेकिन दिखते छोटे थे। गोरा, गठा हुआ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शरीर और मिज़ाज से मस्त-मौला। हँसी-मजाक करते रहते—उदासी तो उनके पास फटकती तक न थी।

खानसाहब का लड़का सादुल्ला भी बहुत हृष्ट-पुष्ट और सुन्दर था। छोटा होने के कारण वह और भी प्यारा लगता था। जमनालालजी उसे कमल-राम की तरह ही मानते थे। जब वह उनके साथ बाहर जाता तो लोग उसे उनका ही लड़का समझते थे।

सादुल्ला की शादी सोफिया से तय करने के जिम्मेदार जमनालालजी ही थे। लंबाई, सुंदरता, विद्वत्ता और योग्यता की दृष्टि से यह जोड़ी बहुत उपयुक्त थी। जब यह शादी तय हुई तो गांधीजी ने जमनालालजी से कहा भी—"शादी-विवाहों की जिम्मेदारी तुमने ली और निभा भी रहे हो, लेकिन यह जोड़ी मिलाने में तो तुमने कमाल ही कर दिया।"

सोफिया बंबई की थी और स्वयं सेविकाओं की नायक थी। जमनालालजी उसे अपनी बेटी मानने लगे थे और मदालसा की तरह ही रखना चाहते थे। लेकिन मैं उसे चूल्हे-चौके के काम से बचाती थी। जमनालालजी मेरे स्वभाव को जानते ही थे। सोफिया भी बेचारी मेरे संस्कारों का बहुत ख्याल करती थी। लेकिन बच्चे मेरे स्वभाव का मजा लिया करते थे। उन सबमें ओम् बहुत चंट थी। वह खानसाहब के बच्चों को हाथ में पापड़ देकर मेरे पलंग पर बैठा दिया करती और फिर सब बच्चे मेरे गुस्से का जायका लेते। हालांकि जमनालालजी मेरे स्वभाव से परिचित थे, लेकिन वह मेरे विचारों को बदलने की हमेशा कोशिश करते थे। खाने की घंटी बजने पर जमनालालजी सोफिया से कहते—"सोफिया, खाना खिलाने की तैयारी करो।" अब बेचारी सोफिया की हालत बुरी—कभी मेरी तरफ देखती, कभी जमनालालजी की तरफ।

खानसाहब जेल जानेवाले थे उस दिन की बात है। जैसा मुस्लिम रिवाज है, परिवार के सब लोग साथ बैठकर एक ही थाली में खाना खा लेते हैं। सो जमनालालजी ने सबको एक ही थाली पर बैठाया और साथ में खुद भी खाने लगे। अचानक ही उस दिन मैं अतिथिशाला में चली गई। उन्हें इस प्रकार खाते देख मैं तो दंग ही रह गई। जमनालालजी ने भांप लिया कि मुझे यह सब अच्छा नहीं लगा। बाद में मुझे समझाने लगे कि ये लोग एक साथ बैठकर खाना प्रेमसूचक मानते हैं, और फिर खानसाहब की विदाई का दिन है आज।

मैंने कहा, "बस, साथ बैठकर खाने से ही प्रेम दिखता है क्या ? लेकिन मैं जानती थी कि सफाई और जूठे आदि का जहांतक सवाल था जमनालालजी मुझसे कहीं अधिक ख्याल रखते थे। यहांतक कि उनकी जूठी थाली में मेरा खाना तक उन्हें पसंद नहीं था। मेरा तो ज्यादा दिखावा ही था।

आजादी के बाद एक लंबे अरसे तक खान-परिवार से संपर्क कुछ छूट-सा गया। हालांकि इन तमाम वर्षों में बादशाह खान पर जो मुसीबतें आईं और जिस बहादुरी और दृढ़ता से उन्होंने इन मुसीबतों को झेला इनसब बातों को हम दिलचस्पी और सहानुभूति से देखते रहे। अभी पिछले वर्ष कमलनयन व मदालसा बादशाह खान से मिलने अफगानिस्तान गये थे। उन्हें इस बात का बहुत अफसोस है कि जिस लगन और तत्परता से खुदाई-खिदमतगार हिन्दुस्तान की आजादी के लिए लड़े, आजादी के बाद हिन्दुस्तानियों ने उन्हें भुला दिया। हालांकि उनकी उम्र और स्वास्थ्य ढल गया है, लेकिन उनका हौसला अब भी बुलन्द है। अफगानिस्तान से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उनके खत आते रहते हैं। १८-८-६५ को लिखे उनके पत्र से उनके दिल के दर्द और भारत के प्रति उनकी मोहब्बत का अच्छा दिग्दर्शन होता है। वह पत्र इस प्रकार है :

दारुलैमान, काबुल

प्यारी बहेन,

खुश और सलामत रहो। तस्लीमात।

आपका रहम और मोहब्बत से भरा हुआ खत कमलनयनसाहब के हाथ से मिला। यादावरी का बहुत-बहुत शुक्रिया। आप लोग मुझे भूले हुए नहीं और मैं कैसे आप लोगों को भूल सकता हूं ?

हम लोग तो एक घर और एक खानदान के लोग थे। लेकिन बदकिस्मती से बंटवारे ने हमें जुदा कर दिया। हमारे जिस्म तो एक-दूसरे से जुदा हैं, लेकिन दिल जुदा नहीं। मुझे इस बात की खुशी भी है और रंज भी। खुशी इस बात की है कि हमने आप लोगों को नहीं छोड़ा और रंज इस बात का है कि कांग्रेस ने हमें छोड़ दिया, और हमारी बदकिस्मती यह थी कि महात्माजी हमारे बीच से चले गए। मैं कोशिश करूंगा कि जब भी ऐसा मौका परमात्मा पैदा करेगा तो जरूर वर्धा आऊंगा।

आखिर में दुआ करता हूं कि आप लोगों को आफाद बलयाद से हमेशा के लिए सलामत और दूर रक्खे। फक्त

अब्दुल गफ्फार खां

कस्तूरबा : प्रेम की प्रतिमा

बा सरलता, व्यवस्थितता, सफाई और प्रेम की मूर्ति ही थीं। वह बोलती कम थीं और जब बोलतीं तब नपा-तुला और काम की ही बात बोलतीं। कभी भाषण का भी काम पड़ा, तो दो शब्दों में प्रेमभरे और हृदयस्पर्शी शब्द बोल जाती थीं।

साबरमती-आश्रम की बात है। बापूजी आश्रमवासियों को हर रोज कुछ-न-कुछ सुनाया करते थे। एक दिन उन्होंने कहा—"मनुष्य के लिए अपरिग्रह जरूरी है।" जितना सामान आवश्यक हो उतना ही रखना चाहिए। ज्यादा रखने से संभालने की जवाबदारी बढ़ती है। मानों मैं जाऊं, और मेरा ऐनक है, तो बा को वह आफिस में जमा कर देना चाहिए। जिसके उपयोग का होगा उसके उपयोग में आ सकता है।" प्रार्थना के बाद आश्रम की कुछ बहनें जब बा के पास बैठीं तब बा ने कहा—"आज बापूजी क्या बोले, मेरी समझ में नहीं आया कि धणी (पति) की वस्तु की धणियाणी (पत्नी) मालकिन नहीं हो सकती !" बा की सरलता पर बहनों को हँसी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आई। मैं भी उस समय वहां मौजूद थी। वहनों ने कहा—"वा, वापूजी ने तो यह कहा है कि अपनी जरूरत की चीज ही अपने पास रखनी चाहिए—ज्यादा रखने से जवावदारी बढ़ती है। इसपर वापूजी ने अपने ऊपर कहा कि मानों मैं मर जाऊं, तो मेरे चश्मे का वा क्या करेंगी। उसका काम है कि आफिस में जमा करा दे। यह तो उन्होंने आश्रमवासियों के लिए समझाने के लिए कहा था।"

जव वापू ने आगाखां महल में उपवास किया तव हम लोग उनसे मिलने जाया करते थे। तो एक रोज वा वोलीं, "देखो, वापूजी रोज उपवास करके बैठ जाते हैं। सवको चिंता रहती है कि अव क्या होगा ?" फिर वापूजी के पास हम सवको दर्शन कराने के लिए ले गईं और वापूजी से वोली, "तमे आखी जिंदगी जेल मां रहशो, अने त्यां उपवास पण करशो। तमारो स्वराज कौन जाने क्यारे मलसे पण लोकों ने जेल मां पूर्या पछी तेवो ना वालकों अने अत्नी नो शूं'।[1] ये कितना वड़ा उद्‌गार है वा के हृदय का कि वापू जन्मभर जेल में रह सकते हैं, पर जो हजारों लोग जेल में जाते हैं उनके स्त्री-वच्चों और परिवार का क्या हाल होता होगा। जब कोई वा से मिलता तो वा उसे कुछ-न-कुछ खाने को जरूर देतीं। और लेनेवालों को ऐसा लगता कि मेरी मां मुझे प्रसाद दे रही है। पर जेल में वा को इस बात के लिए भी बड़ा भारी संयम करना पड़ता था। वैसे तो आश्रम-जीवन भी संयम का ही घर था।

वा के जाने के वाद वापूजी के मुंह से ऐसे शव्द निकले कि वा की मौजूदगी में अव्यवस्था कैसे हो सकती थी ? एक दिन सेवाग्राम में वापू की खड़ाऊं गुम हो गई, तो वा एकदम घवरा गईं कि कैसे भूल हो गई; वापूजी का समय हो गया है। अब क्या कहेंगे ? खड़ाऊं कहां गई ? किसी ने कहा—"वा, मैं अभी दौड़कर वाजार से ले आऊं ?" पर वा तो जानती थीं कि लानेवाले तो वहुत हैं, पर पहननेवाला तो एक ही है। उनसे कैसे पूछें। वा गंभीर हो गईं। ऐसी छोटी-छोटी वातों को वा को कितना सहन करना पड़ता होगा, यह सोचने की वात है। वा ने अपना जीवन ही ऐसा वना लिया था कि सारा नापतौल और टाइम का काम। एक रोज वा ने कहा, "मुझे एक साड़ी की जरूरत है।" वापूजी वोले, "मेरा काता हुआ सूत पड़ा है, उसकी वनवा लो।" मदालसा ने कहा, "वापूजी सेवाग्राम से वर्धा जाते हैं तो भंडार से ले आयंगे।" वापूजी ने कहा, "अपने तो दरिद्रनारायण हैं। जनता के पैसे का ऐसे थोड़े ही उपयोग कर सकते हैं।" फिर वा तो चुप ही रह गईं और धीरे-से वोलीं, "सूत तो मेरे पास भी अपने हाथ का कता पड़ा है।" इस तरह साड़ी की वात वा के मुंह से कहने के वाद भी वहीं रह गई। फिर मदालसा ने खादी भंडार में जाकर वा के लिए एक विस्तरवंद जवरदस्ती सिलवा दिया। वह सिलकर आया तो वा ने वापूजी को दिखाया। वापूजी वोले कि तुम्हें जरूरत है क्या ? वा वोलीं—जरूरत तो खास नहीं थी, मदालसा ने सिला दिया, मैंने तो मना ही किया था। वाद में मदालसा ने वहुत कोशिश की, लेकिन वा फिर उसे थोड़े ही ले सकती थीं। वरसों तक पड़ा रहा। आखिर मैं काम में ला रही हूं।

ये वातें देखने में छोटी-छोटी लगती हैं, किंतु महान पुरुषों के पीछे स्त्रियों को सहन तो

१. आप तो जीवन-भर जेल में रहोगे और वहां उपवास भी करोगे। आपका स्वराज तो कौन जाने कव मिलेगा, लेकिन इन हजारों लोगों के जेल जाने पर इनके वच्चों व पत्नियों का क्या होगा ?

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करना ही पड़ता है। लेकिन परिग्रहवालों की अपेक्षा अपरिग्रह के आनंद का सुख भी अपार होता है कि जहां जाओ-आओ, थोड़े में से ही निभाने की आदत हो जाती है। सबका काम आराम से चलता है।

बापू का यह तरीका था कि जिसके घर ठहरें, उनके घर की बहनें चाहें तो बापू के लिए खाना ले जाकर दे सकती थीं। तैयार तो कस्तूरबा तथा आश्रम की बहनें कर देती थीं। खाने में बकरी का दूध, फल और खांकरा, गेहूं के आटे के बने पतले पापड़ आदि चीजें होती थीं। बापू नपातुला खाना लेते थे। संतरों पर अक्सर झगड़ा होता। बापू कहते थे—तीन संतरे छीलना। देनेवाली बड़े-से-बड़े संतरों और चौथे की एकाध फांक कम करके देती थी, पर बापू तो सब ताड़ लेते थे। यह झगड़ा अक्सर चलता ही रहता।

एक दिन तैयार की हुई थाली को बापू तक पहुंचाने के लिए मैंने कस्तूरबा से कहा कि मैं दे आऊं। बा ने मुझे दे दी। छोटी कांसी की थाली, बकरी के दूध का कांसी का गिलास, छिले हुए संतरों का कटोरा, एक चम्मच और यह सब लकड़ी की पतली-सी थाली से ढंका हुआ। बा ने तो मेरे आग्रह पर दे दिया। पर बापू तक पहुंचाने के लिए भी तो तरीका आना चाहिए। बापू ऊपर विनोबा के कमरे में रहते थे। कमरे के बाहर मेरे हाथ से ऊपर की ढंकी हुई लकड़ी की थाली गिरकर दो टुकड़े हो गई। मूर्खता से किये हुए नुकसान का बापू पर क्या असर होगा, यह मैं जानती थी। यह भी ख्याल आता कि अब बा भी क्या कहेंगी। डरते-डरते बापू के पास गई और दोनों टुकड़े दिखाकर बोली—"बापू, यह तो मुझसे टूट गई।" बापू हँसे तो सही और बोले—"तुमसे तो उम्मीद ही यही थी। पर बा से क्या कहोगी ?" बापू के खा चुकने के बाद मैं डरते-डरते बर्तन लेकर बा के पास गई और टुकड़े सामने रख दिये। बा देखते ही हक्की-बक्की रह गईं। जिस बात का डर था वही हुआ। बापू का व्यवस्थित टाइम का काम, पुरानी चीज का प्रेम, ग्रामोद्योग की बनी चीज हर जगह मिलेगी कैसे ? फिर बापू की इजाजत भी लेना जरूरी थी। और अपने लिए बाजार से मोल मंगाना भी उनके लिए असह्य था। मेरा 'मालिकपन' का अभिमान खत्म हुआ।

रामदासभाई : बापू के तीसरे पुत्र

रामदासभाई बापू के तीसरे पुत्र थे। जमनालालजी को गांधीजी ने अपना 'पांचवां पुत्र' माना था। इस नाते जमनालालजी को रामदासभाई, उम्र में बड़े होते हुए भी, आदर और मान की नज़र से देखते थे। जमनालालजी भी उन्हें भाई की तरह मानते थे और गांधीजी के परिवार का पूरा ख्याल रखते थे। अब रामदासभाई के चले जाने से गांधीजी और उनके पुत्रों का एक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

युग समाप्त हो गया। जमनालालजी गांधीजी के पांचवें पुत्र थे, पर वह तो सबसे पहले ही चल बसे थे।

गांधीजी अपने सब पुत्रों में रामदासभाई का कुछ ज्यादा ख्याल रखते थे। उनकी पढ़ाई-लिखाई और लड़कों की अपेक्षा कम हुई थी और उनके जन्म से पहले बा की तबीयत भी खराब रहती थी। इससे वह शरीर से कमजोर थे और मानसिक विकास भी और बच्चों की अपेक्षा कुछ कम ही था। पर जहां बापूजी के विचारों को समझने और उनपर अमल करने की बात होती, वहां वह एक आदर्शवादी की तरह ही सोचते और बरतते थे।

जब रामदासभाई का विवाह हुआ उसके बाद बापूजी ने उनसे कह दिया कि अब तुम आश्रम में मेरे पास नहीं रह सकते। सो कुछ दिन उन्होंने बारडोली-आश्रम में खादी का काम किया। फिर सन् १९३० के आंदोलन में जेल जाना-आना लगा रहा। १९३३ के बाद जब गांधीजी वर्धा रहने लगे, तो जमनालालजी ने रामदासभाई के लिए पहले एक प्रेस खोलने की व्यवस्था कराई, पर रामदासभाई की सिद्धांत-दृढ़ता से वह चालू नहीं हो पाई। उस व्यवस्था में भागीदारी के समझौते में एक शर्त ऐसी थी जिसे सिद्धांत रूप में रामदासभाई गलत मानते थे और नतीजा यह हुआ कि वह भागीदारी बनने से पहले टूट गई। फिर नागपुर में टाटा की वस्तुओं की एजेंन्सी जमनालालजी के प्रयत्नों से उनको मिली। उसमें भी वेतन और कमीशन के मामले में रामदासभाई का आग्रह यह रहा कि अपने खर्चे से ज्यादा नहीं लिया जाय। और खर्चा बापूजी के आश्रम-जीवन जैसा ही सादगी के आदर्श के अनुरूप था। इसका नतीजा यह होता कि निर्मला-बहन को घर-गृहस्थी की सार-संहाल करने में ज्यादा सहन करना और कष्ट भी उठाना पड़ता था।

चालीस-बयालीस बरस पहले जब रामदासभाई का विवाह हुआ तो बापूजी ने रामदासभाई और निर्मलाबहन को हाथ का कता-बुना एक थान, तकली, "आश्रम भजनावली" और "भग-वत्गीता" की एक-एक प्रति दी और कहा कि रामदास को संभालने में निर्मला को पूरा ध्यान देना होगा, क्योंकि रामदास आदर्शवादी ज्यादा है और व्यवहार की कुछ कमी उसमें है।

रामदासभाई नम्र, सहिष्णु, सेवा-भावी और जिज्ञासु थे। हर बात समझते और समझकर उसपर चलने का प्रयत्न करते थे, अमल करते समय जहां सिद्धांत में बाधा आती वहां वह आदर्श और सिद्धांत को पहला स्थान देते थे। यह मानना पड़ेगा कि पिछले चालीस वर्षों में रामदास-भाई की सिद्धांत-प्रियता के कारण निर्मलाबहन को बहुत जागरूक रहना पड़ा था और हमेशा रामदासभाई के मन-स्वभाव और कार्य का ध्यान रखना पड़ता था कि जिससे रामदासभाई का आदर्श भी निभे और व्यवहार भी चले।

सुना था कि बापूजी को गोली मारनेवाले नाथूराम गोड़से से भी रामदासभाई जेल में मिलने गये और उन्होंने गोड़से को समझाने की कोशिश की थी कि तुमने मेरे पिताजी को मारा, इससे मेरे मन में तुम्हारे प्रति कोई क्रोध या घृणा नहीं है। पर तुम्हारा यह काम मेरी समझ में नहीं आया सो तुम्हारा मानस समझने आया हूं। गोड़से रामदासभाई को क्या समझाता, पर रामदासभाई की वृत्ति और मानस का इस घटना से अच्छा आभास होता है।

रामदासभाई ने गुजराती में अपने संस्मरण लिखे हैं। इतने बड़े पिता के पुत्र होने का

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उनको गौरव मिला था, पर उसका कभी भी उनके मन में कोई गुमान नहीं था। उनकी नम्रता, सरलता, सभ्यता और सज्जनता से वह पुस्तक भरी हुई है।

रामदासभाई के चले जाने से गांधी-युग से संपर्क का एक और सूत्र टूट गया।

भणसालीभाई : हठयोगी

भणसाली भाई ने चिमूर अत्याचार के विरोध में बजाजवाड़ी वर्धा में ६३ दिन का ऐतिहासिक उपवास किया था। वहां "भणसाली कुटीर" नाम का पाटिया भी लगा है। मैंने इनको करीब ३० वर्ष पहले साबरमती-आश्रम में बापू के पास देखा था। भणसालीभाई उपवास के 'शौकीन' थे। उन्होंने १७, २५ और ५१ दिन के उपवास साबरमती में किये थे। बापू ने तो स्वयं अधिक-से-अधिक २१ दिन के उपवास किये थे। पर वह एक आश्रमवासी की हिम्मत पर गर्व करते थे, क्योंकि प्रयोगों का बापू को भी शौक था। इसीलिए उन्होंने इजाजत दी, पर शर्त रखी कि घबराहट हो उसी समय छोड़ देना है। बापू ने कहा कि उपवास करना ही है तो बंधनमुक्त होकर करो। वह उपवास केवल पानी पर ही करते हैं। भणसाली भाई मन में तो जितने दिन के उपवास करने हैं, उतना विचार रखते ही थे। साथ ही अपने आत्मविश्वास और बापू के साथ की चर्चाओं से प्रफुल्लित व निश्चिंत रहते थे। वल्लभभाई पटेल व अंबालाल साराभाई वगैरा पूछते थे "बापू ! आ घड़िये-घड़िये उपवास करवानो कयो ढंग चाले छे ?"[1] बापू हँसते हुए कहते, "यह आश्रम तो प्रयोगशाला है, इसमें हठयोग को स्थान नहीं है, पर भणसालीभाई के उत्साह का एक नाप है। सहज स्वभाव से हो सके वहांतक की मर्यादा तो रखी है।"

एक बार भणसालीभाई अपने होंठों को सिलाने के लिए सुनारों के पास गये। सुनारों ने कहा कि यह पाप बाबा कैसे किया जाय ? तब एक सीधे-सादे सुनार को यह कहकर भणसाली-भाई ने पटा लिया कि "तुझे धर्म होगा और मैं झूठ बोलने से बचूंगा।" होंठ सिलवाकर वह मगनवाड़ी आये। कुएं से पानी निकालने जैसा रस्सा कमर में बांधते थे, और मोटे टाट के टुकड़े को लंगोट की तरह कमर में लपेटते थे। एक कटोरे में एक पाव आटा घरों से मांगकर लाते और कच्चा आटा पानी में घोलकर सू-सू करके पी लेते। कड़वे नीम के पत्ते एक अंगुली से मुंह में दबाकर चबाते रहते।

आहार में नीम की मात्रा ज्यादा होने से सारे शरीर में नींबू के जैसे पीप के फोड़े होने लगे। उनमें से कुछ अपने-आप बैठ जाते थे और कुछ उभर आते थे। इलाज वगैरा का तो ख्याल

१. ये बार-बार उपवास करने का क्या ढंग चल रहा है ?

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ही कहां था ? यह सब हाल देखकर बापू हैरान होकर बोले "भणसाली ! यह तो अघोरी धंधे हैं।" मुंह के सिले हुए तार तुड़वाए तो लिखकर बापू से कहा कि आपसे ही बोलूंगा जिससे झूठ बोलने से बचा रहूं। टाट छुड़ाकर खादी का लंगोट लगवाया। उसके बाद कातना, पढ़ाना और कच्ची सस्ती चीजें जैसे कांदा, मूली, गाजर टोकरी में भरकर चबाते रहना, यह क्रम उनका नियमितरूप से चलने लगा। खुद कच्चा खाते, पर आश्रमवासियों के लिए रात को १२ से ४ बजे के बीच में आटा पीसकर रख आते थे, यह सोचकर कि ४ बजे दूसरों के पीसने का समय हो जायेगा और उस समय चक्की खाली नहीं मिल पायगी। बापू भी कड़ुवा नीम पीसकर सबको खिलाने लगे थे और खुद भी दूध में मिलाकर पीते थे। एक बार सेवाग्राम की खेती में लहसुन ज्यादा हुआ। यह देखकर भणसालीजी उसीको ज्यादा खाने लगे। तो पेशाव में खून आने लगा। किसीने बापू से कह दिया। बापू ने कहा "भणसाली आ शुं ?" तो वह बोले "शरीर मां मांस अने लोही तो होय, एमां शूं ?"[1] तो बापू ने लहसुन छुड़वाया और दूध पीना शुरू करवाया। अब ३२ सेर दूध पीने लगे। जब आश्रम के बच्चों ने मज़ाक में कहा कि गोशाला का दूध तो काका ही पी जाते हैं तो वह गाय के खाने की खल्ली (मूंगफली की ढेप) खाने लगे। एक दफा उन्होंने सोचा कि गाय के गोबर में भी सत्व तो रहता ही है, और अनाज के दाने भी रहते हैं, बस बीन-बीनकर खाना शुरू कर दिया। आश्रमवासियों ने घबराकर सत्याग्रह की धमकी देकर छुड़वाया।

भणसालीभाई बापू की सेवाग्राम कुटी में घड़ी का समय मिलाने रोज जाते थे। बापू उन्हें देखते ही समय बता देते और वह चले जाते। यह उनका रोज का मिलन समझो। भणसाली काका का सोने का भी अपना अनोखा ही ढंग था। रात को गायों के पानी पीने की हौदी में ठंडे पानी में सिराहने पत्थर लगाकर सोते थे, वह भी सर्दी के मौसम में। दोपहर को १२ बजे धूप में कंकड़ों पर सोते थे। पर उनका शरीर सदा स्वस्थ रहता। वह सदा अवधूत के समान मस्त रहते। १९४२ में बापू आगाखां महल में नजरबंद थे तब चिमूर के अत्याचारों पर तरस खाकर भणसाली भाई बोले कि अब तो अनशन करके मरना ही अच्छा है, कारण कि बापू को पता ही नहीं कि देश में क्या हो रहा है; ऐसी दशा में जीवन व्यर्थ है।" और वह पैदल ही सेवाग्राम से चिमूर के लिए चल पड़े। वर्धा में लक्ष्मीनारायण मंदिर से उनको विदा किया और ३-४ मील तक लोग साथ गये। आगे एक मोहनलाल नाम के आदमी को साथ ले गये। १८-२० मील जाकर गिर पड़े। पुलिसवाले उठाकर सेवाग्राम में छोड़ गये। इस तरह से दिनों-दिन शक्ति टूटने लगी। गांव में चिंता फैल गई। दूर-दूर से दर्शनार्थी आने लगे। सरकार से समझौता कराने की कोशिश होने लगी। पर मामला संभल नहीं सका। इस तरह १४ रोज तक बिना जल लिये १८-२० मील जाना, और पुलिस द्वारा लाकर छोड़ जाना, यही क्रम चलता रहा। पानी का सिर्फ कुल्ला करते थे। चलते समय पैरों को घसीटकर चलते थे और फिर रामभरोसे चलते जाते। जहां गिरते वहां से पुलिसवाले वापस ले आते। तब कमलनयन को बम्बई से बुलवाया और उसने बालकपन के अधिकार से समझाया, "काका, यह क्या करते हो ?" वह बोले "मरना ही है तो

१. शरीर में मांस और खून ही तो होता है; उसमें क्या हुआ ?

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जल्दी मरना। पानी पीने से दो महीने तक सेवा लेनी होगी। इससे क्या लाभ ?" तब कमल ने कन्हैयालालजी मुंशी को बंबई से बुलवाया। और सब तो समझाकर हार गये थे। मुंशीजी ने कहा कि प्रचार के लिए तो मौका मिलने दो। जब काका ने पानी पीना शुरू किया तो १८-२० सेर तक पी लेते थे। बजाजवाड़ी में कीर्तन भजन और दर्शकों की भीड़ का तांता लगा रहता था। प्रभाकरजी ने खूब प्रेम से सेवा की। चालीसवें रोज बैठाकर तस्वीर खींची। गले में बापू के हाथ की सूत की माला अमतुलबहन ने पहनाई। बाद में तो लेटे हुए ही बातें करते थे। १४ दिन बिना पानी पिये २०-२० मील चलने से कमर के नीचे का भाग लथड़ा हुआ-सा हो गया था। उसका बाद में भी कमर पर असर रहा।

एक रोज मुझसे बोले, "मां, एक बात करोगी ?" मैं तो डर गई कि पता नहीं क्या बोल उठेंगे। हां व ना कहना कठिन था। पर वह ही बोले, "एक लकड़े की पट्टी पर कीलों की पट्टा लगाकर मुझे उसपर सुला दो।" 'हाय राम !' कहकर मैं धीरे से बोली, "काका खाने की घंटी बज गई !" वह बोले, "जाओ मां, खाना खाओ।" रोज बंबई से १०-१० भाइयों की टुकड़ियां आती-जाती थीं। मैं जमनालालजी छोटी कुटिया में मुंशीजी से बोली, "भगवान ने आज गजब कर दिया। कहते हैं कि लोहे की कीलें ठुकवाकर लकड़ी की पटिया पर मुझको सुला दो।" तो मुंशीजी बोले, "तुम खाना खाओ, मैं वहां जाता हूं।" फिर मुंशीजी ने उन्हें समझाया, "काका, आपने जानकीबहन से क्या कह दिया ?" वह बोले, "हां, मुझे कीलों पर सुला दो।" तो मुंशीजी बोले, "काका, यह गृहस्थियों का घर है।" काका ने कहा, "तो मुझे बाहर सड़क पर ले चलो ना ?" मुंशीजी ने कहा, "काका ! आज जमनालालजी नहीं हैं, तो जानकीबहन पर इतना संकट डालोगे क्या ?" यह सुनकर सरलस्वरूप बालक के जैसे भणसालीभाई चुप रह गये। १०-१० रोज के बच्चों को लेकर भी बहनें दर्शनों के लिए आतीं और काका की तरफ देखकर रोती थीं कि ये कैसे जियेंगे ? कमल कहता था, "काका तो अमर हो जायंगे, ऐसी मौत किसको मिलती है ? पर बापू के आंदोलन की संकल कैसे चलाई जाय ?" काका कालेलकर व अमतुल बहन ने अपने नाम दिये। पर इस तरह से मरना कोई खेल थोड़े ही था ! रोना इसलिए आता था कि जो दो चम्मच गुड़ के पानी पिलाने से जी सकता है, उसका मरना कैसे देखा जायगा ?

एक रोज वह बोले, "मां, मेरी आंखें, जीभ अंदर खिंच रही है। मैं बेहोशी में कुछ खाने को मांगू तो भी मत देना, मेरा व्रत भंग हो जायगा। माताएं तो फूट-फूटकर रोतीं थीं।

काका समझाते थे, पांच तत्त्व का शरीर है, पांचों तत्त्वों में मिल जायगा। इसकी चिंता क्या ? सरकारी इंतजाम था कि भणसालीभाई मरें तो चुपके से दवा दिये जायं, और बंबईवालों का प्रोग्राम था कि स्पेशल ट्रेन लेकर आवें। अखबारवालों ने इंतजाम किया था कि अखबार में "ज्योति" निकाली जाय। जिस दिन अखबार में 'ज्योति' न निकले, उस दिन भणसालीभाई गये ऐसा समझ लेना। क्योंकि तार, डाक टेलीफोन से खबर देना सरकार ने बंद कर दिया था। सरकारी अफसर छुट्टियों पर घर नहीं गए। २१ दिन के बाद आज मरेंगे, आज मरेंगे, सोचते-सोचते ५५ दिन हो गए। अब अफसरों ने कहा कि इनको रात को कुछ खिलाते होंगे, वरना पानी पर कैसे जी सकता है इतने रोज ? अनेक तरह की अफवाहें उड़ती थीं। नागपुर से अफसर आये और भणसालीभाई के शरीर को देखकर घबरा गये। उन्होंने माफी मांगी। मर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जायंगे तो आफत हो जायगी। इसपर मुंशीजी और कमलनयन ने भणसाली भाई को खबर दी कि सरकार आपसे माफी मांगती है, आप उपवास छोड़ दीजिये। गांव में डोंडी पीटी गई और लोग जमा हो गये। डी० सी० और उनकी पत्नी भी आये। फूलों की मालाएं पहने हुए भणसालीभाई का चेहरा चमक रहा था। वह शरीर का मोह छोड़कर ऊपर ही ध्यान करते थे, इसलिए उनके शरीर का खून चेहरे पर चमकता था। डी० सी० देखते ही रहे। तब मैं समझ गई और काका के पेट से चादर हटा दी। उनकी नाभि और पीठ की हड्डी एक दूसरे से चिपक गई थी, यह देखकर वह दंग रह गए और बोले कि ऐसी तपश्चर्या हिंदुस्तान के सिवाय किसी देश में देखने को नहीं मिलती।

जब प्रार्थना के बाद उपवास छूटा तो काका की तो वही बात, कच्चा आटा घोलकर पिला दो। पर अपना मन कैसे माने। हमने समझाया कि डाक्टरों के हिसाब से आपको आज तो मौसंबी-संतरे का रस ही लेना पड़ेगा। संक्रांत के कारण माताएं तिलों के लड्डू और फल भेंट करने लाईं, तो काका लड्डू उठाकर खाने लगे। अब-इस बाल-हठ को कैसे रोकें ? मुझे आकर लोग कहते थे कि काका तो लड्डुओं पर टूट रहे हैं। आप समझाओगी तभी मानेंगे। मैं बार-बार दौड़कर जाती थी, "काका यह क्या करते हो ?" तो कहते, "कुछ नहीं होगा।" जब कहते कि काका, हम तो डरते हैं तब वह मान जाते।

अब भणसालीभाई ने नागपुर के पास टांकली में आश्रम खोल रखा है। बहन पुष्पाजी उसे चलाती हैं। नागपुरवासी सब तरह की मदद करते हैं। अभी फिर से सुना कि ६६ दिन के उपवास काका ने शुरू कर दिये। लगता है कि उनका रहना और जाना अमर ही है, लेकिन लोगों से सहन होना कठिन है। अनसूयाबाई का पत्र आया कि वह खुश हैं और जरूरत पड़ेगी तो प्रभाकरजी को बुला लेंगे, ऐसा कहते हैं।

भणसालीभाई अपने स्वभाव के निराले ही हैं। इनके मददगार तो भगवान ही हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

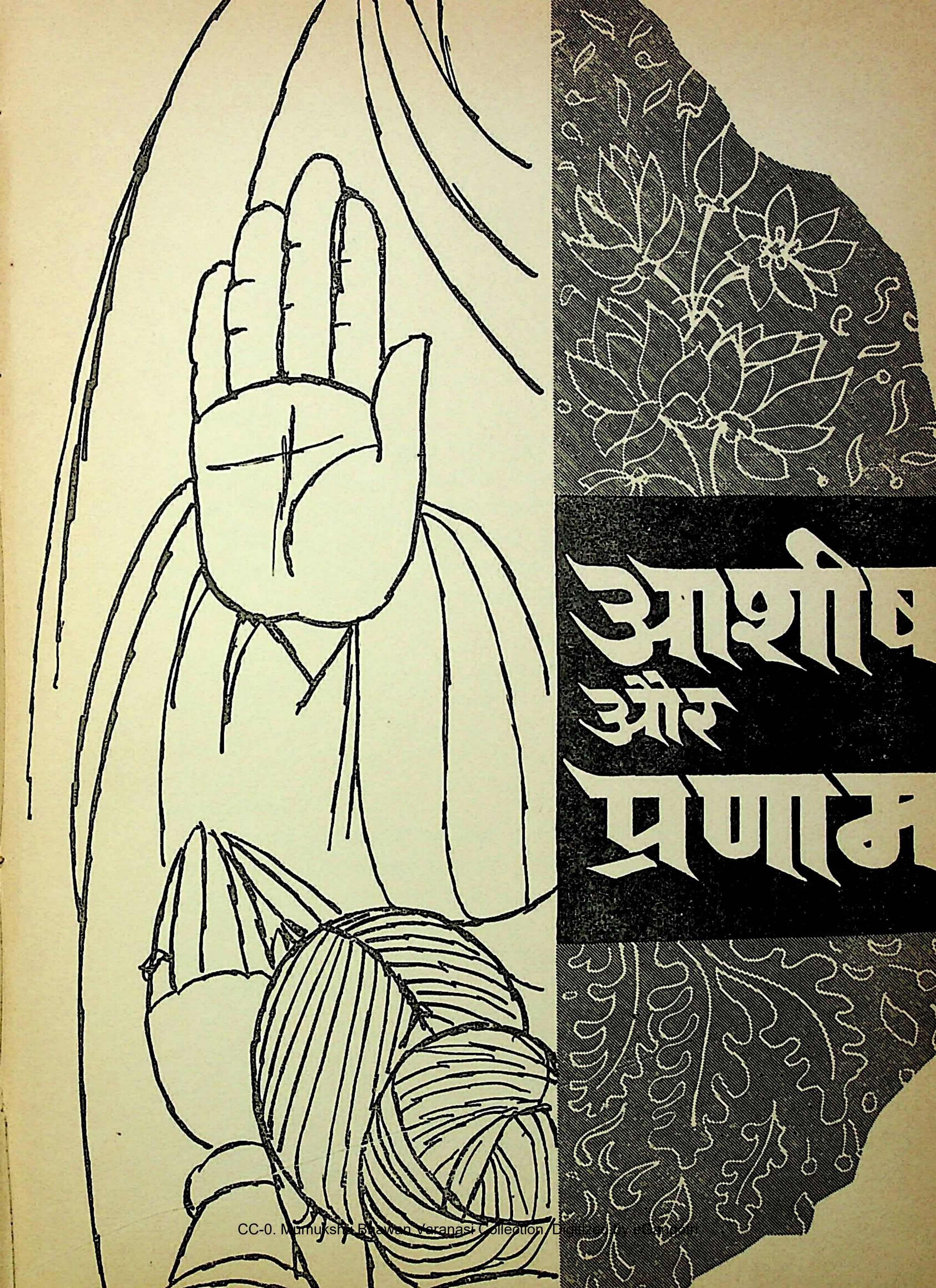

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कुछ चुने हुए पत्र

बापू की ओर से

य० मं०[1]

चि० जानकीबेन, २७-७-३०

तुम्हारा पत्र मिला। अब उत्साह क्यों न होगा ? अब तो भाषण करती हो, अखबारों में भी नाम आता है। समय-समय पर जब जानकीबाई बजाज का नाम अखबारों में देखता हूं तो उससे ऐसा ही लगना चाहिए न कि जमनालाल और हम सब भले ही जेल गये और वहीं रहें ! मुझे तो विश्वास था ही कि तुम्हारे दिखाई देनेवाले अविश्वास के पीछे पूरा आत्मविश्वास था। ईश्वर उसमें वृद्धि करे। कमलनयन को जल्दी नहीं करनी है। खादी-उत्पत्ति के काम में अभी भले ही लगा रहे। टुकड़ी के बाहर निकलने पर बालजीभाई को लिखे।

बापू के आशीर्वाद

•

य० मं० २०-८-३२

चि० जानकीमैया,

खूब ! आखिर पेंसिल की दो सतरें लिखने की तकलीफ की तो ! जेल जाकर भी आखिर आलस्य नहीं गया न ? 'अ' वर्ग देने में ही भूल हुई। 'क' वर्ग देकर खूब काम कराना चाहिए था। आलस्य का तो ठीक, परंतु अब शरीर की हालत ठीक कर लेना। विनोबा के शिकंजे में खूब फंसी हो। पत्र बराबर नहीं आयेंगे तो सजा मिलेगी। पुरानी कामली, जिसपर तुमने खादी सीकर फिर से नई बनाई थी, वह राजमहल में हो आई, यह बात मैं कह चुका हूं न ? यहां भी वह है। अभी तो बहुत चलेगी।

बापू के आशीर्वाद

•

१. 'यरवडा-मंदिर' अर्थात् यरवडा सेंट्रल जेल, पूना।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जानकीदेवी की ओर से

वर्धा, अगस्त, १९३२

पूज्य बापूजी,

आपका कार्ड ता० १५-८ को मिला था। उसमें आपने शिवाजी वगैरा की खबर मंगवाई थी। उसका उत्तर पहुंच गया होगा।

आपका पत्र ता० २०-८-३२ का भी मिला। ओम कहती है कि बापूजी को विशेष काम नहीं होगा, जिससे बड़े-बड़े विशेषण लगाते हैं। मेरा 'अ' वर्ग आपको खटकेगा, यह मैं जानती थी। आप 'क' वर्ग के लिए इच्छा रखें या उससे भी नीचे के वर्ग के लिए। अगर आप मुझे रसोई सिखाना चाहते हों, तो यह हो नहीं सकता। और यहां वर्धा तहसील की १०० बहनें होने के कारण दूसरी मेहनत करना चाहूं तो भी आलस्य में ही समा जाती हूं। लेकिन मुझे तो एक ही भय था कि कहीं 'क' की खुराक से मर जाती तो?

आप आलस्य-आलस्य कहते हैं, पर २०पुस्तकें जो जिंदगी में नहीं पढ़ी थीं, सो पांच मास में पूरी कीं। यहां आते ही दूसरी जेल में फंस गई! ता० ४-८-३२ को छूटी और ता० ७-८ को हिंदी-साहित्य की प्रथमा परीक्षा का फार्म भर दिया। ओम, प्रह्लाद, उसका छोटा भाई श्रीराम, परीक्षा में बैठनेवाले थे ही। कमल को भी फंसा दिया। मुझे तो आप वहीं से आशीर्वाद दें कि जिससे मैं पास हो जाऊं।

आप दूसरों को कहते हैं कि दया करो और अपने बीमार हाथ से कितना काम लेते हैं। आपने विनोबा के शिकंजे में आने का लिखा सो तो ये कांटे आप ही के बोये हुए हैं। लेकिन एक नई खबर सुनाती हूं कि विनोबाजी भी अब मेरे शिकंजे में आने लगे हैं। वह भी आज आपको पत्र देनेवाले हैं।

आपने पुरानी कामली की याद कराई सो ऐसे काम तो बिना आलस्य के ही हो सकते हैं!

मेरी तबीयत ठीक है। कमला का वजन बिना कोशिश के ही सपाटे से बढ़ रहा है। ४४ पौंड हो गया था, सो ३५ तो भर आया, अब न बढ़े तो अच्छा है।

जानकी का प्रणाम

•

बापू की ओर से

चि० जानकीमैया,

य० मं० १९-९-३२

'क' वर्ग का खाना खाकर मरने का भय तुम जैसों को होता है, इसीसे बिना खाये जीने का रास्ता मैंने पकड़ा है। कल से यह देख लेना। खा-खाकर तो सारा संसार मरता है। 'अ' वर्ग का खाकर कितना जी लोगी, यह देख लेंगे। परंतु अनशन करते-करते जीने की कला कैसी है! एक शर्त जरूर है। तमाम मैयाओं को जोगन बनकर बाहर निकलना पड़ेगा और अस्पृश्यों को

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्पृश्य बनाकर खुद भी ईश्वरी शक्ति होने का दावा साबित करना पड़ेगा। इतना करना और फिर 'अ' वर्ग का ही खाना खाती रहना। परंतु यदि कोई 'अ' वर्ग का न दे तो 'क' वर्ग के खाने से भी संतोष मानना।

परंतु मान लो कि जोगनों का भी कोई वस न चला तो भले ही यह मिट्टी का पुतला टूटकर अभी गिर जाय, मैं तो जीनेवाला ही हूं। जबतक एक भी मैया मेरा काम करती होगी, तवतक कौन कहेगा कि मैं मर गया ? भले ही आत्मा की अमरता-संबंधी गीता का तत्त्वज्ञान हम छोड़ दें, जो अमरता मैंने वताई है, वह तो हम चर्म-चक्षुओं से भी देख सकते हैं। इसलिए खबरदार जो जरा भी घवरा गईं तो ! शोभित होना और शोभित करना। तन, मन, धन ईश्वर को सौंपकर सुखी होना व रहना। नखरीली ओम को और ज्ञानी मदालसा को आज नहीं लिख सकूंगा।

यह तुम सवके लिए है, ऐसा समझना। तुम्हारा सौभाग्य अखंड रहे।

बापू के आशीर्वाद

•

वर्धा, २५-१०-३३

प्रिय भगिनी,

आप बहनों से परदा तुड़वाने के लिए कलकत्ता जा रही हैं, इसलिए धन्यवाद। परदा वहम ही नहीं है, उसमें मुझे पाप की बू आती है। परदा किससे रखें ? क्या पुरुषमात्र विषयासक्त रहते हैं ? क्या स्त्री अपनी पवित्रता और परदा नहीं रख सकती है ? पवित्रता मानसिक बात है, जो सभी पुरुषों में सहज होनी चाहिए। यदि इस बुद्धि-प्रधान युग में स्त्री धर्म की रक्षा करनी चाहती है तो उसे दरिद्रनारायण की सेवा करनी होगी, शिक्षण लेना होगा। दरिद्रनारायण की सेवा करने का अर्थ खादी-प्रचार, कातना इत्यादि; हरिजनसेवा का अर्थ अस्पृश्यतारूपी कलंक धोना। ये दो बड़े भगवान के कार्य (हैं)। और विद्या पाने का कार्य परदा रखने के साथ कभी नहीं चल सकता है।

परदा रखकर सीता रामजी के साथ जंगलों में भटकी होंगी ? सीता से बड़ी पवित्र स्त्री जगत में कभी हुई है ? बहनों से कहो, परदा तोड़ो, धर्म रखो।[1]

आपका

मोहनदास गांधी

•

१. जानकीदेवी अखिल भारतवर्षीय मारवाड़ी महिला सम्मेलन की अध्यक्षा होकर कलकत्ते गई थीं। गांधीजी ने उनकी मार्फत उपर्युक्त संदेश वहां की बहनों के लिए भेजा था।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चि० जानकीवहन,

यदि दिमाग की कमजोरी के कारण जमनालाल को गुस्सा आता हो तो उसमें शिकायत की क्या बात है ? बीमार के गुस्से पर भला कोई ध्यान देता है ? बीमार की चिढ़ तो हमेशा पी ही ली जाती है। या केवल विनोद के लिए मुझे पत्र लिखा है ?

बापू के आशीर्वाद

•

पंचगनी, ३१-७-४४

चि० जानकीवहन,

ईश्वर की कृपा होगी तो तुम्हारी खबर लेने के लिए तीसरी तारीख को पहुंच रहा हूं। 'कृपा' तो भूल से लिख गया। ईश्वर की तो हमेशा कृपा ही होती है। हम उस कृपा को न पहचान सकें, यह हमारी मूर्खता है। पर उसकी इच्छा के तो हम अपनी इच्छा या अनिच्छा के अधीन हैं ही। अर्थात् उसकी इच्छा होगी, तो तीसरी को मिलेंगे। मदालसा और ओम् वहां होंगी, यह ठीक है। सावित्री की अनुपस्थिति खलेगी। कमला का तो कहना ही क्या ? वह तो बहुत जंजाली है। अब और नाम भरने लगूंगा तो दूसरी चिट्ठी लेनी पड़ेगी और फिर वक्त ?

बापू के आशीर्वाद

•

विनोबा की ओर से

नालवाड़ी, ४-३-३८

श्री जानकीबाई,

आपने तार देकर मुझे बुलाया। तुम तीनों[1] वहां हो और तीनों के लिए मुझे श्रद्धा है। इसलिए स्वाभाविक रूप से आने का विचार भी हो रहा था, लेकिन आखिर न आने का ही तय किया। वहां आकर भी मैं आपको क्या शांति दे सकनेवाला था ? मेरी मनोवृत्ति जरा और तरह की है। संसार को मिथ्या मानकर बैठा हुआ मैं, एक रसहीन आदमी, वहां के नैसर्गिक आनन्द में, शायद नमक की डली बन गया होता। रविबाबू ने एक गीत लिखा है। उसमें कहा है :

"एकला चलो, एकला चलो,
ओरे ओरे ओ अभागा …"

१. जानकीदेवी, महादेवीताई और मदालसा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

"ऐ अभागे। तू अकेला ही चल।" यह गीत मैं हमेशा अपने ऊपर लागू करता हूं, लेकिन 'अरे अभागे' नहीं कहता, 'अरे भाग्यवान' कहता हूं।

मेरा स्वास्थ्य ठीक है।

विनोबा

•

जानकीदेवी की ओर से

श्रीहरि

वर्धा, १४-६-१४

श्रीयुत प्राणनाथ,

जोग लिखी वर्धा से आपकी दासी का प्रणाम बंचना। पत्र आपका आया, पढ़कर बड़ा आनंद हुआ। प्रेम का ऐसा आनंद दूसरों के लिए भी होना चाहिए। मुझे चिंता है कि मैं आपके विचारों के माफिक अभी हूं नहीं। आपके साथ रहने से शायद बन जाऊं। दानीजी के यहां अच्छी व्यवस्था के साथ आप रहते हैं, सो ठीक है। आपने लिखा कि दानीजी दूसरी जगह जाने नहीं देते। सो कोई हरज नहीं। आपका रहना भला किसको भारी पड़ेगा। वहां जाने से मानसिक चिंता बहुत कम हो गई लिखा, सो आनंद की बात है। आपके गुणों के पीछे किसी बात की कमी नहीं है, फिर भी मनुष्य-शरीर है। थोड़ी-बहुत चिंता हो ही जाती है।

आपने लिखा कि तुमने प्रेमपूर्वक मंगल-कामना चाहते हुए मुझे विदा किया और इसके लिए आपने बहुत आभार भी माना, लेकिन मुझे तो यही हर्ष है कि आपके-जैसा सरल स्वभावी ईश्वर-रूपी मनुष्य पति के रूप में मुझे मिला है, और शोक यह है कि ऐसे मनुष्य फिर कहां मिलेंगे। ईश्वर से मेरी यही प्रार्थना है कि वह मेरा मन भी आपके जैसा निर्मल करे और जनम-जनम आपका साथ दे। मुझपर ईश्वर की कृपा है कि इसी जन्म में हीरा हाथ लग गया है, लेकिन मेरे से लाभ उठाया नहीं जाता।

अक्षरों में या समाचारों में गलती हो तो क्षमा करेंगे। वर्धा से वहां चिंता कम रहती है, लिखा सो ठीक ही है। कारण यहां आपके साथ बातचीत करनेवाले कोई थे नहीं। वहां सब प्रकार की संगत रहती है।

आपका पत्र आने से दिल पर बहुत असर हुआ है। आपका जैसा हुकुम है, वैसा ही खाने-पीने का ख्याल रखूंगी। आप कोई चिंता न करें। डालूराम वगैरा के बारे में भी जो आपने लिखा है, वह करूंगी। चिट्ठी आने से एक बार मिले बराबर लगता है। आप चित्त को सब प्रकार प्रसन्न रखियेगा। एक-दो रोज ज्यादा लग जाये तो फिकर नहीं।

कमला को आपकी तरफ से प्यार किया है।

आपकी शुभचिंतक

सौ० जानकीबाई

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जमनालालजी की ओर से

कलकत्ता,
पोष ब० ६, सं० १९७४
(६-१-१७)

श्रीमती प्रिय देवी,

सप्रेम आशीर्वाद। विवाह, कांग्रेस, सभा, मिलने आदि की गड़बड़ में पत्र नहीं दिया गया। स्वास्थ्य बहुत ठीक है।

यहां मारवाड़ी जाति में विद्या-प्रचार हो, उसका प्रयत्न हो रहा है। श्री परमात्मा ने थोड़ी सफलता भी प्रदान की है। आशा है और भी सफलता मिलेगी। श्री गांधीजी महाराज, उनकी धर्मपत्नी व पुत्र यहां आये थे। अपनी तरफ से ही सब प्रबंध किया गया था। दस रोज़ तक इनकी सेवा करने का अच्छा मौका मिल गया।

अब मेरा विचार रंगून की तरफ जाने का है। टिकट अभी तक नहीं मिला है, कारण कि स्टीमर थोड़े जाते हैं और जानेवाले बहुत हैं। अगर ता० ११ जनवरी तक टिकट मिल जायगा तो १५-२० रोज उधर घूम आऊंगा। बहुत दिनों से इच्छा है। अगर टिकट नहीं मिला तो ४-५ रोज में वर्धा आ जाऊंगा।

तुम्हारे कारण घर की, वर्धा की तरफ की, कोई फिक्र नहीं है। कमला, बाबू, मदालसा को बहुत राजी रखना। कमला को पढ़ाने के लिए मास्टर बराबर आता होगा। पढ़ाने का बराबर ख्याल रखना।

और तो इन दिनों सब ही आनंद रहा, केवल श्री दामोदरदासजी राठी के स्वर्गवास होने के समाचार सुनकर चित्त थोड़ा व्याकुल हुआ था। परंतु अच्युत स्वामीजी महाराज के सत्संग का सौभाग्य मुझे कई दिनों से मिलता आया है, इसलिए जीवन-मरण का प्रपंच थोड़ा-बहुत समझ सका हूं। संसार स्वप्नवत् है, इसमें सुख है नहीं, जो भी है सब कल्पित है, इस प्रकार विचार करने से शांति मिलती है। सुख, दुख और यह संसार सब मिथ्या है। इसलिए शरीर से जो कुछ सेवा बन सके, वह निःस्वार्थ भाव से करने का हमेशा प्रयत्न रखना ही मनुष्य-जन्म का मुख्य कर्तव्य है। आशा है, तुम भी यदि यही ध्येय सामने रखकर कार्य करोगी तो तुम्हें भी अवश्य शांति मिलेगी।

सरकार से 'राय बहादुर' की पदवी मिलने के कारण कई जगह से मित्रों के बधाई के तार-पत्र आदि आते हैं। यह सब तो आडंबर है। तथापि श्री परमात्मा ने किया तो इस तरह के आडंबर का भी सेवा करने में उपयोग हो सकेगा। ईश्वर से यही प्रार्थना हमेशा करते रहना आवश्यक है कि वह सद्बुद्धि प्रदान करें, निःस्वार्थ भाव से सेवा करने के लिए बल प्रदान करें।

पत्रोत्तर देने की आवश्यकता नहीं। कोई चीज चाहिए तो लिख देना।

तुम्हारा,
जमनालाल बजाज

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जानकीदेवी की ओर से

वर्धा, १३-५-२१

श्रीयुत प्राणनाथ,

प्रणाम। ता० ५ का पत्र मिला। ता० ५-६ को आपको भी मेरा पत्र मिला होगा। बाद में फुरसत नहीं मिली होगी। मेरे पत्र से आपको किंचित दुःख हुआ होगा। परस्पर बातचीत का मौका कम होने के कारण मन के भाव लिखने से मन साफ हो जाता है। इसलिए कुछ लिखा था। बाकी आपके लिखे अनुसार आनंद में रहती हूं। घर में सतोगुण से सतयुग का वास हो गया है। इससे ज्यादा हमें और चाहिए भी क्या ? परमात्मा करे आपकी इच्छा पूर्ण हो। आप चाहते हैं कि आपकी इच्छानुसार मेरा स्वभाव बने। मुझे आशा है कि आपके साथ रहने से वह अवश्य हो जायगा। मैं देखती हूं दिन-दिन फर्क तो पड़ता ही जाता है।

आप अपने शरीर को संभालते रहिये। शरीर के पीछे ही तो सारी बात है। बीच-बीच में आराम लेने से काम ज्यादा होता है। बाकी शुद्ध मन रहने से तो ईश्वर आप ही शक्ति देता है। मुसाफिरी की बात तो आपके हाथ में है नहीं। उमाबाई तथा सब बच्चे राजी हैं। देश की तरफ जाने का यदि काम पड़े और उचित समझें तो हमें भी ले चलें।

पहली तारीख तक स्वदेशी का पूर्ण प्रचार हो जाय। दिन थोड़े हैं, परमात्मा कैसे लाज रखेगा ? ईश्वर को इस वक्त तो हिंदुस्तान की लाज रखनी ही चाहिए। परीक्षा बड़ी है, हमारी शक्ति कम है।

मारवाड़ी और व्यापारी भाइयों को यह सोचना चाहिए कि इस आपत्-काल में वे अपना धन लगायें। अगर इस समय वे अपने धन को काम में न लायेंगे तो क्या मरने से पीछे लावेंगे ? यह कमाई इस देश के लोगों के ही तो काम में आयेगी। जीतेजी तो पेट भरता ही है, होना होगा सो होगा ही। ऐसा अच्छा अवसर फिर हाथ न आयेगा। बापू को बड़ी तकलीफ है। ईश्वर रक्षा करेगा। यहां खादी का प्रचार ज्यादा तो कुछ होता नहीं। गांववालों पर असर नहीं होता। दौरा करना लियाकत के बिना उचित नहीं। होता है उतना ही करती हूं। आप किसी प्रकार की चिंता न करके आनंद के साथ काम करते रहिये। आनेवालों का हम यथायोग्य ध्यान रखते हैं, कारण दिन-पर-दिन हमारा अनुभव बढ़ रहा है। विशेष समाचार है नहीं।

आपकी हितेच्छु,
जानकी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जमनालालजी की ओर से

पटना के नजदीक (रेल में),
१५-८-२१

प्रिय देवी,

सप्रेम वन्देमातरम्। तुम्हें बहुत दिनों से पत्र लिखने का विचार था, परंतु लिख नहीं पाया। बंबई में स्वदेशी का कार्य ठीक चल रहा है। तुम्हारे लिए साड़ी का कपड़ा नमूने के लिए भिजवाया है, सो मिला होगा। अब बापूजी के साथ रहने से मुझे तो बहुत फायदा पहुंचेगा, ऐसा मेरा विश्वास बंध गया है। मेरी इच्छा तो यह है कि तुम और मैं दोनों उनके साथ भ्रमण में रहा करें, जिससे उनको सेवा करने का मौका भी मिले तथा हमारा ज्ञान भी बढ़े। ईश्वर की दया से हमारी यह इच्छा भी पूर्ण हो जायगी।

एक बार देश में जाने का बहुत मन होता है। पूज्य बापूजी छुट्टी देंगे तो वहां तुम्हें भी साथ ले जाने का विचार है। अगर कलकत्ते जाना हुआ तो तार से दुकान पर खबर दे दूंगा। वहां के पते पर तुम्हारे मन के विचार पूरी तरह लिख भेजना।

घर में आये हुए अतिथि की सेवा तथा प्रबंध बराबर रखना।

अहमदाबाद से 'हिंदी नवजीवन' ता० १९ को निकलेगा। इसे पूरे ध्यान से पढ़ा करना।

तुम्हारा,
जमनालाल

•

तेजपुर (आसाम)
भादवा बदी ४, सं० १९७८
(२२-८-२१)

प्रिय देवी,

सप्रेम वन्देमातरम्। पत्र तुम्हें पटना से पोस्ट किया था, वह मिला होगा। उसमें सब बात लिखी ही थीं। पटना से एक रोज कलकत्ता ठहरते हुए ता० १८ को गोहाटी पहुंचे। श्रावणी पूर्णिमा उसी दिन थी। रास्ते में रेलवे स्टेशन पर स्नान करके पूज्य बापू के हाथ से नई जनेऊ पहनी व उसी रोज शाम को ही राखी बंधवाई। कलकत्ता से हाथ का कता हुआ और कुसुम्ब में रंगा हुआ सूत का तार साथ ले आया था। उन्होंने बड़े प्रेम और प्रसन्नता से राखी बांधी। मैंने राखी बांधने की दक्षिणा के लिए पूछा तो उन्होंने विरासत संभालने के लिए कहा। तब मैंने कहा कि आप आशीर्वाद के द्वारा मेरा आत्मिक बल इतना बढ़ा दीजिये। यह बात तुम्हारे ध्यान में रहे, इसलिए लिखी है। रक्षा-बंधन का दिन खाली नहीं गया। मेरी समझ से तो बापू ने इस भाव से राखी अभी तक और किसी को नहीं बांधी होगी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जिस तरह हम लोगों की जवाबदारी बढ़ती जाती है उसी तरह परमात्मा हमारी ताकत भी बढ़ा देगा, ऐसा मुझे विश्वास है। अपनी दिनचर्या हम जितनी सादगी और सत्संगति में वितायेंगे साधना में उतनी ही सफलता हमें प्राप्त होगी। मुझे तुमको यही लिखना है कि गृहस्थी के छोटे-छोटे प्रपंचों की तरफ विशेष ध्यान न रखकर मनुष्य के असली कर्तव्य की तरफ अपना ध्यान मोड़ो। हमें हमेशा प्राणिमात्र के लिए प्रेममय बर्ताव कायम रखते हुए आनंदमय जीवन विताना है। यह आनंद जितना बढ़ेगा उतनी ही जल्दी हमें ध्येय की प्राप्ति होगी। इसलिए मन लगाकर कर्तव्य करती जाओ। खूब प्रसन्न रहो। जिंदगी को भार-रूप मत समझो। जहांतक स्वराज्य नहीं प्राप्त हो वहां तक स्वराज्य के सिवाय दूसरी वातों का खयाल भी हमें नहीं आना चाहिए। इतना मन उसमें लगा दो। सत्याग्रह-आश्रम में हमेशा जाया करती होगी। वहां जाने से मन को अवश्य शांति मिलेगी। यदि पूज्य विनोवाजी का तुम्हारे ऊपर विश्वास पैदा हो गया तो आध्यात्मिक ताकत वढ़ाने का मार्ग भी वह तुम्हें वतायेंगे। उनकी सत्संगति से तुम्हारी दिन-चर्या अवश्य सुधर जायगी।

सब बच्चों तथा कुटुंबियों से खूब प्रेम का बर्ताव रखना। अतिथियों का पूरा ध्यान रखना।

तुम्हारा,
जमनालाल

•

जानकीदेवी की ओर से

वर्धा, ४-९-२१

श्रीयुत प्राणनाथ,

नमस्कार-प्रणाम।

आपके तीन पत्र मिले। पढ़कर आनन्द हुआ। पत्रों से मन पर असर भी खूब होता है। आपके कार्य में बाधा होगी, इसलिए आपके हाथ का पत्र नहीं मंगवाना चाहती।

मंदिर में तो विदेशी कपड़ा नाम के लिए भी नहीं है। मुकुट चांदी-सोने के वनवाने का विचार है। फिलहाल खादी के वना लिये हैं।

घर के लिए फर्नीचर की भी अड़चन है। उसमें विचारों के माफिक फेर-फार हो रहा है। अलग एक कमरे में नया कपड़ा रखा है, उसमें घर का तो एक हजार से ज्यादा नहीं है, किंतु मंदिर की हजारों रुपये की पोशाकें हैं। उसके बारे में जैसा सोचा जायगा, वैसा करेंगे। अपने तो प्राण ही बापू के अर्पण हैं। दूसरी तो बात ही क्या ? मुझे तो स्वप्न में भी बापू ही दीखते हैं। सोकर उठती हूं तो बापू की आज्ञानुसार खादी के कपड़े पहने हुए परमात्मा से आशीर्वाद मांगती हूं कि बापूजी का आत्मबल बढ़े। उन्हें कार्य में सफलता हो। आपकी इच्छानुसार आपको तथा मुझे वह सद्‌बुद्धि प्रदान करें।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मुझे तो पूर्ण आशा है कि हमें कार्य में सफलता जरूर मिलेगी। बाकी लोगों का तो उत्साह जितना सामने रहता है, उतना पीछे नहीं रहता। लेकिन समय आने पर ईश्वर आप ही शक्ति देगा।

बंबई से कपड़े भिजवाये थे, जिनमें कुछ का एक तथा कुछ के दोनों सूत मिल के थे। वे कपड़े लोगों के विश्वास पर भिजवा दिये गए थे। किंतु अपने लिए तो दोनों सूत हाथ के ही होने चाहिए, ऐसी इच्छा रहती है। आश्रम में तो ऐसा है ही। धोती-जोड़ा और मंदिर के प्रसाद के चने पुलगांववाले मुनीमजी के साथ आपके लिए भेजे हैं। धोती-जोड़ा वजन में बहुत ही हल्का है। उसके सूत हाथ के हैं। आप उन्हें पहनना। वैसे मेरे भी काम आ जायगा।

देस जाने के बारे में आपने पूछा है, सो वहां आपका ज्यादा रहना तो होगा नहीं। अकेली मैं भी नहीं रह सकूंगी। बच्चों का साथ, पसली का दर्द, ठंडा मुल्क। तकलीफ होती है। जाने की इच्छा यों थी कि आपके साथ स्त्रियों की एक-दो सभाएं भी हो जातीं। स्त्रियों में आपकी मांजी भी प्रचार तो करती ही होंगी। आप आनन्द के साथ कार्य करते रहिये। इधर आने का कार्यक्रम अपनी जरूरत के माफिक रखना। काम के साथ आराम की भी जरूरत है, कारण, ज्यादा मेहनत किसी-न-किसी रूप में फिर तकलीफ देती ही है।

आप कहीं भी रहें, परमात्मा से यही प्रार्थना है कि आपका कुशल समाचार मिलता रहे। यों साथ रहने की मेरी बहुत इच्छा रहती है, किंतु बच्चे छोटे हैं, उन्हें अकेला छोड़ना ठीक नहीं, साथ लेना भी ठीक नहीं। आश्रम में जाती रहती हूं। आपने लिखा है कि माया जितनी कम हो उतनी ही अच्छी, सो सच्ची बात तो यह है कि आपको बापूजी के साथ की जितनी जरूरत है उतनी ही मुझे आपके साथ की है। गहना-कपड़ा तो मुझे बेड़ी के माफिक हो गया है। आपकी आज्ञा हो तो एक सफेद साड़ी पहनकर रह सकती हूं। उसमें तो बहुत आनन्द है। परन्तु हमारे नसीब में वह है कहां ? कुछ लायक बनें तभी वैसा आनंद ले सकते हैं। जेवर जितना है, बापूजी की सलाह से उसका चाहे जो उपयोग करने का अधिकार आपको है। अहमदाबाद-कांग्रेस के बाद अपने को साथ ही रहना चाहिए, कारण, 'पराधीन सपनेहु सुख नाहीं', इसका अनुभव मुझे हो रहा है। यों तकलीफ कुछ नहीं है। आप चिंता न करें।

गुलाबबाई वगैरा सब राजी हैं। आपके लिखे मुताबिक समझा देती हूं। मानती भी हैं। गुलाबबाई के कपड़े खादी के हो जावेंगे। बच्चों की पढ़ाई ठीक चल रही है। अमृतलाल मास्टर मुझे बहुत पसंद हैं।

केशरबाई की सास (गोद की) आई है। मैंने कह दिया है कि "आप बारह-छह महीने यहां रहें, मन मिलाइये, मिल गया तो केशरबाई को ले जाइये। घर आप ही का है। चाहे जहां रहिये। परंतु अब बार-बार हमारा भेजना और आपका उनको घर से निकालना ठीक नहीं है।" चार रोज से अपने ही पास बहुत प्रेम के साथ रहती है। खादी पहनने पर भी मन चलता है केशरबाई का। मैं सब ठीक कर लूंगी। आप चिंता बिलकुल न करें।

स्वदेशी के बारे में घर को तो चाहे जैसा बना सकते हैं, पर अकेली होने से गांव की स्त्रियों का उत्साह नहीं बढ़ा सकती। इतना दुःख रहता है। बाकी आपके लिखे मुताबिक सहज आनंद में जो कुछ बने, वही करते जाने की बात मुझे भी पसंद है। पास आवे तो अछूता नहीं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

छोड़ते। वात तो इसके सिवा दूसरी अच्छी ही नहीं लगती। खादी-ही-खादी दीखती है।

'हिंदी नवजीवन' वरावर पढ़ती हूं। तीसरा अंक आज ही आया है। आप आसाम की ओर वापू के साथ थे, इसलिए चिंता नहीं हुई। आपकी इच्छा के माफिक तो मैं आपके साथ रहने में ही वन सकती हूं, अन्यथा कठिन है। आपको समय मिले तो समाचार देना। कुछ जल्दी नहीं है। मैं कुशल हूं। आप निश्चिंत रहिये। प्रेमानंद रखिये।

आपकी प्रेमालु,
कमला की मां

•

जमनालालजी की ओर से

वर्धा, ६-११-२४

प्रिय देवी,

मैं काफी समय से तुम्हें पत्र लिखना चाहता था, परंतु लिख नहीं सका। दीपावली के निमित्त भी तुम्हारे नाम से पत्र नहीं भेज सका। तुमने जिस प्रेम व श्रद्धा-भक्ति से मेरी सेवा की और मेरे कारण कई तरह के कष्टों का सामना तुम कर रही हो, वह मुझे भली प्रकार ज्ञात है। इसके अलावा तुम्हारे सरीखी पवित्र देवी के साथ जिस निर्मल प्रेम व भक्ति के साथ मेरी ओर से व्यवहार होना चाहिए वह नहीं हो सका, इसका भी सुख-दुख व स्मरण वना रहता है, तुम्हारे साथ वातचीत करते समय जितना प्रेम हृदय में रहता है, वह मैं प्रकट नहीं कर सकता। इस त्रुटि का मुझे पता है। परंतु मैं तुम्हें इतना ही विश्वास दिलाना चाहता हूं कि वहुत अंशों में मैं तुमको अपने-आपसे ज्यादा पवित्र समझता हूं। तुम्हारे हृदय में उदारता व प्रेम अधिक वढ़ते हुए देखने की मेरी इच्छा रहती है। आशा है, आश्रम-जीवन से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष लाभ तुम्हें अवश्य मिलेगा, जिससे हम लोगों के भावी जीवन में सुख की वृद्धि होगी। मुझमें जो टोकने की आदत पड़ी हुई है, उसका दुखदायक उपयोग वोलचाल में होता है। आशा है, इसे तुम क्षमा करोगी। असल में मेरी यह इच्छा रहती है कि तुम मुझसे अधिक उदारता, प्रेम व सत्यता अपने जीवन में प्राप्त करो।

कमला के विवाह के लिए फतेहपुर लिख दिया गया है कि मेरे विचार तो उन्हें मालूम ही हैं। इतने पर भी उनकी इच्छा हो तो वे जिस महूर्त पर चाहेंगे विवाह कर दिया जायगा।[1]

•

१. यह पत्र अधूरा ही मिला है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वंबई, (१०-१-२६)

प्रिय जानकीदेवी,

पत्र तुम्हारा मिला। मैं रात पूना से वापस आया। चिरंजीव कमला के विवाह के वारे में चिरंजीव मणिवहन का पत्र मिला। वर्धा में विवाह होता तो खुशी होती, अगर दोनों ओर से सिद्धांत के माफिक विवाह होने में पूरी सुविधा होती। वह नहीं है। सामनेवालों को वर्धा में इस प्रकार विवाह करने में वहुत-सी बाधाएं हैं। इससे आश्रम का ही नक्की करना उचित है।

कुछ रोज बाद सावरमती जाने का मेरा विचार है। तव और खुलासा वातें पूज्य वापूजी से कर ली जायंगी। पूज्य वापूजी ने पूज्य काका साहव आदि को पहले से ही कमला का विवाह आश्रम में करने का विचार लिख दिया है। मुझे यह पूना में मालूम हुआ।

कमला का मन जिन-जिन गहने-दागीनों पर हो, वे अवश्य उसे दे दिये जायं। इसमें मेरी पूर्ण संमति है। परंतु मेरी समझ यह है कि गहनों पर जितना ज्यादा तुम मन समझती हो, उतना शायद नहीं है। गहने नहीं मिलते, इसलिए वह पढ़ाई पर मन नहीं लगाती, यह वात मेरे विचार से सही नहीं है। मेरी समझ से एक तो उसके आस-पास का वातावरण वहुत पुराने ढंग का है, दूसरे उसकी याददाश्त थोड़ी कमजोर है, इसलिए उससे याद करना आदि नहीं वनता। उसे ठीक तरह से समझाकर पढ़ाया जाय तो लाभ हो सकता है। अव तो पढ़ाई का भार मणिवहन पर छोड़ दिया है, उसे ठीक लगे उसके मुताविक किया जाय।

जमनालाल का वंदेमातरम्

•

जानकीदेवी की ओर से

सावरमती, १५-११-२६

प्राणेश्वर,

दीपमालिका की पूजन वापू ने कराई सो ठीक। आपको काम था, सो आपको तो छिप जाने पर भी लोग छोड़ेंगे नहीं।

आपने लिखा कि वापूजी की संगत से उदार तथा ध्येयपूर्ण जीवन विताने का निश्चय करके आओगी, सो उदारता में तो, मैं जानती हूं, थोड़ा फरक जरूर पड़ेगा। कारण, यहां पैसों की छूट न होने पर भी, जरूरत होने पर राजाओं से ज्यादा उदारता देखकर वार-वार विचार आया करता है। जीवन-भर का निश्चय करना खेल थोड़े ही है; वह तो मुश्किल से होगा। जैसे-जैसे ज्ञान होगा, त्याग हो जायगा। त्याग से ज्ञान नहीं होगा। मैं देखती हूं और अनुभवी विद्वानों की सलाह तो यही मिली कि इच्छा के विरुद्ध करने से वेलावेन को अभी तक शांति नहीं हुई। इतनी समझदारी से रहती है, खुद समझदार भी है, परंतु जवरन शांति रखनी पड़ने पर तारावेन व वेलावेन को हिस्टीरिया की वीमारी हो गई। और इन वातों का असर पुरुषों को भी अशांत

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करता होगा। बाकी मेरे लिए यह बात तो नहीं है।

आपने लिखा कि घर का परिवर्तन होना चाहिए, सो मेरी पूरी इच्छा है। परंतु एक बरस आप घर पर रहकर एक बार पटरी बैठा दो। कारण यह है कि आजतक तो मैंने घर का भार कभी उठाया नहीं, और अब हिम्मत करूं तो कुछ स्वार्थ हो तभी कष्ट उठाया जाय। स्वार्थ यही कि घर के आदमी से ही घर कहलाता है। दूसरी बात तो फिर आप से आप ही हो जाती है। आपकी कमजोरी तो मैं संभालने की चेष्टा करूं, हिम्मत भी रखूं लेकिन कमजोरी तो मुझमें भी है। आपके साथ रहने से जोखिम भी मालूम होती है। बाकी ब्रह्मचर्य के बारे में आपकी जो पालन करने की इच्छा है, वह मेरे लिए भी यह आत्मा से व्रत-सा हो गया है। घर के बारे में बापूजी को अपनी स्पष्ट इच्छा बता दूंगी। आप चिंता न करिये।

मुझे आपके खाने-पीने से अशांति रहती है। यदि आप घर का बना घी और घर का पिसा आटा खाने का भी नियम ले लो तो पूरी शांति हो जाय। परंतु आप तो मूंगफली खाते हो। सिर में चक्कर आवें तब भी उसका दोष नहीं समझते। इसमें सस्तेपन के सिवाय दूसरी विशेषता मुझे नहीं दीखती।

आपने लिखा कि तुम्हें आत्म-विश्वास होना चाहिए सो उस बारे में मैं कुछ नहीं कह सकती, कारण कि आत्म-विश्वास हुआ तो 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' होने में क्या देर है।

खैर, आपके पत्र से मुझे शांति मिली और मेरा विचार आपकी इच्छानुसार करने का है। घर का भार तो हरेक स्त्री उठाती है और अब उठाये बिना, जो दूसरे भी काम हम जमाना चाहते हैं सो, वैसा होना कठिन है। अपने घर का रंग कुछ निराला ही था। आपको भी इसका अनुभव तो हुआ ही है। अब आप ही ठीक हो जावेगा। आपने आदर्शपन का भार लेने को लिखा सो इसे मन में रख के चलें तो हो सकता है।

कमला की मां

•

विलेपार्ले-छावनी
(जवाब दिया, २७-६-३० को)

प्राणेश,

शांतिबाई ने आज छावनी में आकर पत्र दिये। शांतिबाई दो-चार दिन यहां रहने को आयेंगी। छावनी से २० कदम पर भाड़े से घर लिया है। राजकुमारी और मदु भी वहां रहती हैं। रात को कभी मैं सोने चली जाती हूं। मेरा और रिषभदासजी का खाना छावनी में होता है। रिषभदासजी छावनी में ही सोते हैं। उन्होंने जवाबदारी भी अच्छी ले रखी है। शांतिबाई भी वहीं रह जायेंगी। भाड़ा, खाना-खर्च अपना ही लिखाती हूं।

हमारी जरा देर की गिरफ्तारी और छूटने की खबर आप जान गये। अभी औरतों को पकड़ना मुश्किल है। जेल के बारे में दीवाजीभाई समझानेवाले हैं। मेरी तबीयत अब ठीक है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मेरी स्वार्थ की भावना ही मन को दुःख देती है, पर अब ठीक हो जायेगी। और बातों में तो हिम्मत बढ़ती जाती है। खाने-पीने का अब ठीक कर लूंगी। यहां छावनी में अनुभव का लाभ भी बहुत है। अगर सूरत की तरफ के आश्रमों में रहती तो मेरा टिकना मुश्किल हो जाता। यहां भी, स्वभाव में मन की स्थिरता न होने से, कभी-कभी कहां जाऊं, क्या करूं, ऐसा हो जाता है। पर फिर कहती हूं कि भरतजी ने तो चौदह साल निकाले थे। उस परिमाण में तो यह समय कुछ भी नहीं है। कठिनाई तो आप लोगों की है।

'सी'-क्लास की खुराक खरी-भावना से लेने से प्रसन्नता तो जरूर रहेगी, पर वजन एकदम कम हो जायगा और कमजोरी से खांसी वगैरा का भी डर है। परन्तु आप लोग तो सभी चतुर हो, इसपर विचारोगे ही। आपको संगति इच्छानुसार ही मिलती जा रही है, यह भी प्रभु की कृपा ही है। अपने कुटुंब के लिए सचमुच मन में तो अभिमान आता है, पर व्यवहार में संभाल नहीं पाती हूं। मैं तो अपने-आपको धन्य मानती हूं कि इस युग में स्त्री-जन्म मिला। निर्बुद्धि, निर्बल कहलानेवाली स्त्रियों से सरकार कांपने वाली है और स्वराज्य स्त्रियों के हाथ से आनेवाला है। मैं तो मानती हूं कि इसे वानर सेना ही जीतेगी, न कि विद्वान-बलवान लोग। इसलिए आप सुख से बैठे रहें।

मुझे टोकने के बारे में तो आप निश्चिंत रहिये। जिसपर पूरा विश्वास और अधिकार हो, उसे ही टोका जा सकता है। मैं तो गुलाबबाई से मजाक करती रहती हूं कि अब मैं मिलने नहीं जाऊंगी। मुझसे हमेशा लड़ते हैं। पर हम सब लड़ते-लड़ते ही चढ़ेंगे। मरने के बारे में, समय आवेगा, तब देखेंगे कि हँसना आता है कि रोना। भावी अच्छा होगा तो अच्छी मृत्यु होगी। दूसरे की चिंता करने का समय नहीं है, यह बिलकुल ठीक है।

कमलनयन को, जहां खास लड़ाई का सामना हो, वहीं भेजें तो कर्तव्य किये का संतोष हो। पर बंबई में यहां छावनी के अन्दर जगह कम है। बरसात के दिनों में मलेरिया हो जाने का भय है। और ताप आ जाय तो मुझे पास जाने की इच्छा हो जाय। उसका शरीर थोड़े दिन से ही तो खानपान से व्यवस्थित हो पाया है। वह और विद्यापीठवाले छोटी उमर के चार लड़के हैं, बापू की टुकड़ी के। वे चाहे सो करें। चारों वही हैं। उनसे मैं कुछ भी नहीं कहती हूं। गोमतीबहन बहुत ही हिम्मत और जवाबदारी से काम करती हैं।

सचाई से काम करने से ईश्वर सहायता देता है। घर में खुराक इतनी भी नहीं ले सकते थे, पर यहां ठीक चलता है। आपके सब पत्र मैंने पढ़े हैं। दिनचर्या आपकी बहुत सख्त है। मैं तो इतना कुछ नहीं करती हूं। शाम को ६ बजे से पहले सोने से नींद पूरी होती है। गोमतीबहन भी कहती थीं, देखना कमजोरी आ जायगी। रूखी रोटी तो अपनको अनुकूल आनी मुश्किल है।

धर्मानंदजी कौसांबी की पुस्तक देखेंगे। पर मुझसे और मुझ-जैसी स्त्रियों से पुस्तक मुश्किल से पूरी होती है। वह यहीं रहते हैं। समय हो तो मदू का आधा घंटा वर्ग लेते हैं। आपको नमस्कार कहा है उन्होंने। वह सुपरिन्टेंडेंट को पत्र भिजवा देंगे। गोमतीबहन को सब पत्र पढ़ा दिये। दिनचर्या का पत्र प्रार्थना में पढ़ेंगे। 'टाइम्स' में छावनी की खबर देनेवाले हैं।

कमला की मां का प्रणाम

•

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विलेपार्ले, १९-८-३०

पूज्य श्री,

ता० ११ का पत्र मिला। आपने बहुतों से कहलाया, पर आपके कहने का मुझपर पूरा असर नहीं होता है। यह अपने सबके स्वभाव में है कि जब हम अपने आदमी को देखते हैं तो मन कुछ दूसरा ही हो जाता है। हम जो पूरे सच्चे हों, तो बन्धन से ही छूट जायं न!

मुझे आप पहले साथ रखने को कहते थे, पर मैं इन्कार कर देती थी। अब इच्छा हुई है, पर अब कौन जाने कितनी परीक्षा के बाद मौका आता है! बड़ी परीक्षा यह भी तो है कि अपने स्वभाव में, कुछ अंश में, मुझे परिवर्तन भी करना पड़े। खैर, यह भी देख लेंगे। यह भी एक आनंद है।

जेल से बचे रहने की तो इच्छा नहीं है। पर जब काम ढीला पड़ा है तो किसी ने पकड़ा नहीं। अब जब काम जोर से चलता है तब लोगों के कहने से यह लगता है कि जेल जाने के बजाय काम ही करना चाहिए। जैसे आप जेल गये तो आपकी वह जगह तो भरी नहीं। फिर बाहरवालों का कहना भी ठीक लगता है और मुझे भी समाधान है। पर अभी तो स्त्रियों से सरकार भी डरती है। पर जेल का प्रसंग आना मुश्किल नहीं है। कठिन प्रसंग आवेगा तो जेल जाना ही है और समझौता पंद्रह आने तो होगा नहीं, ऐसा लगता है।[1] इतने से में स्वराज्य आया तो टिकेगा कैसे? इसमें न सरकार को लाभ, न हमें। यह कैसे सुलझ सकेगा, यह ईश्वर जाने। पर अभी सबकी दृष्टि रुक-सी रही है। नया काम किसी को सूझता नहीं। वैसे जोश दिनोंदिन बढ़ता ही है। कमल का हटूंडी (अजमेर) जाना सब तरह से योग्य है।

मुझे छगनलालभाई दीवावाले जेल नहीं जाने देते। कहते हैं कि तुम्हें कीर्ति की बड़ी इच्छा है, काम करते हुए पकड़ लेंगे तो पकड़ लेंगे। मैं क्या करूं? परंतु पहले मैं उनकी अकल से चलती थी, अब अपनी भी लगाऊंगी। जेल की मेरी पूरी तैयारी है। आपने जो चिट्ठियां भेजीं सो मिल गई हैं। बापूजी की भी। सूंठ के बारे में हम आवेंगे तब आप कहेंगे जैसी भेज देंगे। आपको कौन-सी पसन्द आई, यह मालूम पड़ना चाहिए।

मेरा प्रणाम

•

१. इन दिनों श्री सप्रू व जयकर जेल में महात्मा गांधी और पं० मोतीलाल नेहरू से मिलकर समझौते की बातचीत कर रहे थे।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जमनालालजी की ओर से

नासिक रोड जेल,
पौष सुदी १४, संवत् १९८७
(३-१-३१)

प्रिय जानकी,

तुम्हारा, श्रीकृष्णदासजी व चि० मदालसा के पत्र पढ़कर खुशी हुई।

अगर श्री सीतारामजी को फंसाने का सौभाग्य मुझे ही है तो मुझे उसके लिए सुख व संतोष है। परन्तु भाई सीतारामजी में सेवावृत्ति बहुत पहले से जागृत थी। वही अव काम आ रही है। मैंने तो इनसे बड़ी आशाएं बांध रखी हैं।

परदे के बारे में तुमने लिखा सो ठीक है। फैशन, नाटक, तमाशे, पहाड़ों पर या दूसरे मुल्कों में जाकर लोग पर्दा नहीं करते। याने पर्दा करना लोग नहीं चाहते हैं, परन्तु समाज के मिथ्या डर व सेवावृत्ति की कमी के कारण उन्हें पर्दा करना पड़ता है।

परदे के रिवाज से देश की बड़ी भयंकर हानि हुई है। जिसके हृदय में न्याय व सत्य के साथ सेवावृत्ति है, वह तो इस राक्षसी प्रथा को जड़ से ही नष्ट करने का प्रयत्न करेगा। लोगों को यह डर है कि परदा चले जाने से आंख की शर्म व मर्यादा भी चली जायगी। सो मुझे तो इसका डर कम है। अगर वह एक बार चली भी जाय व थोड़ी हानि भी पहुंचे तो भी अंत में तो परिणाम उत्तम ही होगा। सो तुम इस विश्वास को खूब समझाकर जोर देकर व्याख्यानों के सिवाय खानगी बातचीत में भी उपयोग करती रहना।

रानीगंज में सुन्दर काम हुआ। और भी देहातों में श्री महावीरप्रसादजी व कृष्णदासजी के साथ जाना पड़े तो जरूर जाओ। वहां भी अच्छा परिणाम आना संभव है। अगर बंगाल में प्रतिष्ठावाले व प्रामाणिक थोड़े लोग भी जी तोड़कर इस काम के पीछे पड़ जायं, तो बहुत लाभ पहुंचे। आज तो विदेशी वस्त्र का पूर्ण बहिष्कार होने पर ही भारत को सच्चा स्वराज्य प्राप्त होना व टिकना संभव दिखाई देता है। बंगाल में तुम्हें दो-चार मास भी रहना पड़े तो जरूर रहना। चि० मदालसा को बराबर समझा देना।

तुमने लिखा कि अनुभव खूब मिल रहा है, सो यह अनुभव तो जिंदगी-भर काम आयेगा व बाद में मेरे साथ घूमने में भी खूब मदद देगा। घर को ठीक तौर से संगठित करने में भी इससे सहायता मिलेगी। मेरी बहुत वर्षों से यह इच्छा थी कि तुम व बालकों की कद्र मेरे कारण न होकर अपने पवित्र सेवा-कार्य के कारण हो; क्योंकि उसमें तुम्हारा व बालकों का ही नहीं, मेरा भी श्रेय व गौरव है। इस इच्छा की पूर्ति अब जल्दी ही परमात्मा की दया से व पूज्य बापू के आशीर्वाद से देखने को मिल रही है।

केसर ने चि० प्रह्लाद को दूसरी बार भी हिम्मत से जेल भेज दिया, यह देखकर आनन्द होता है। अपने घर में अब सब छोटे-बड़े कम-ज्यादा प्रमाण में सेवा-कार्य करनेवाले निकलेंगे, ऐसा विश्वास होता जा रहा है। सेवाधर्म में जो अलौकिक आनन्द व सुख मिलता है, वह संसार की किसी अनमोल वस्तु, मान-सम्मान या वैभव से प्राप्त नहीं हो सकता। थोड़े समय के लिए

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चाहे वह अपने को मोह-माया के कारण सुखी समझने लग जाय, परन्तु वनावटी सुख ज्यादा टिक नहीं सकता। परमात्मा हमें सच्ची सेवावृत्ति वनाये रखने की सद्‌बुद्धि प्रदान करें, यही प्रार्थना हम सवोंको हमेशा करते रहनी चाहिए। दूसरी प्रार्थना की आवश्यकता ही नहीं।

मदालसा के पढ़ाने की व्यवस्था करदी, सो ठीक किया। श्री महाबीरजी व सीतारामजी ने शिक्षकों को पसंद किया है तो अवश्य ही चरित्रवान होंगे। मेरा यह मानना है कि चरित्रवान की संगत से जो लाभ वालकों को हो सकता है, वह केवल विद्वान की संगत से नहीं हो सकता। उल्टे बहुत वार उससे हानि का ही डर रहता है।

आज मुझे पू० राजेन्द्रवावू मिल गये। आनन्द हुआ। तुमसे वह ता० ८ या ९ जनवरी को कलकत्ता में मिलेंगे।

अभी इसी २७ तारीख को विड़ला-परिवार, जो वंबई में था, सव छोटे-वड़े सहित मुझसे मिल गया है। आनंद आया। वाजरे की रोटी और दही सवोंने दो रोज खूव खाया; और भी कई चीजें उनके प्रेम के कारण खाईं।

प्रिय कृष्णदासजी से कह देना कि उनका पत्र पढ़कर मुझे सुख मिला। ईश्वर अवश्य सफलता देगा। तुमको वह चाहें तवतक कलकत्ता रख सकते हैं। श्री वैजनाथजी केड़िया को जेल में मेरा नाम लेकर कहलाने से शायद कुछ फायदा पहुंचे। उन्हें बहका दिया गया होगा कि मार-वाड़ियों के हाथ से रोजगार निकलकर मुसलमानों के हाथ चला जायगा। उन्हें समझाना चाहिए कि मान लो ऐसा ही होगा तो इतना अपवित्र धंधा वे लोग करना चाहें तो करें। मार-वाड़ी जाति तो उस घोर पाप से वच जायगी, जो उसने जानकर या अनजान में किया है। खूब जोर से काम होने से वंबई के माफिक रास्ता बैठ जायगा।

मेरा पत्र प्रेस में न छपे व ऐसे लोगों के हाथ में न जाने पावे, जिससे दुरुपयोग किया जाय। मुझे बीच-बीच में वंवई द्वारा खवर भेजते रहें, यह भी कह देना।

मेरा स्वास्थ्य बहुत ठीक है। अभी तो वड़ा उत्साह व ताकत मालूम देती है। श्री नरी-मानजी को तो मैंने भगाते हुए, पांव में मोच पड़ने से, दो-चार रोज के लिए लंगड़ा भी कर दिया है।

भाई सीतारामजी ! तुम्हें मैं क्या लिखूं। तुम्हारी व पन्ना की माता की सेवावृत्ति व चेहरा जव-जव याद आता है, वड़ा सुख मिलता है। अभी तो पूरी ताकत मेरी समझ से विदेशी वस्त्र बहिष्कार पर ही लगानी उचित होगी। इसमें किसीके प्रति दया या उदारता दिखलाने का हमें हक नहीं है। जितना ज्यादा परिचय व प्रेम-संवंध हो, उतना ही ज्यादा जोर अहिंसावृत्ति पर कायम रहना चाहिए।

जमनालाल का वंदेमातरम्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पवनार (वर्धा), कार्तिक सु० १२, सं० १९९५
जन्मदिन, (४-११-३८)

प्रिय जानकी,

मुझे यहां ठीक शांति मिल रही है। मुझे ४९ वर्ष पूरे हो गये, पचासवां वर्ष चालू हुआ है। तुम तो भली प्रकार जानती ही हो कि मुझे कुछ वर्षों से जीने में उत्साह नहीं मालूम देता है। इसका कारण तो साफ ही है कि मेरा जीवन शुद्ध नहीं रह सका। मेरे मन की महत्त्वाकांक्षा मन में ही रही है। मेरा संकल्प तो यह रहता आया है कि मैं जनता-जनार्दन की सेवा पूरी प्रामाणिकता एवं सच्चाई के साथ करूं। परंतु देखा जाय तो मैं तुम्हारे-जैसी पवित्र व पूजने-योग्य देवी का भी समाधान नहीं कर सका। तुमने मेरे पीछे जो त्याग किया, जिस प्रकार उत्साह के साथ मदद की, वह मैं कैसे भूल सकता हूं! तुम्हारा उपकार क्या थोड़ा है! परंतु दुःख है कि मैं उसके लायक नहीं निकला। मैंने तुम्हें खूब सताया और अभी भी सता रहा हूं। क्या करूं, कोई उपाय दिखाई नहीं दे रहा है। कई बार मन में निश्चय करता हूं कि मैं तुम्हें अब नहीं सताऊंगा, तुम्हारी इच्छा पूरी करने की कोशिश करूंगा। परंतु पता नहीं, जब बात होती है तो ज्यादातर मुझे क्रोध आ जाता है। तुम्हारे प्रति अन्याय कर बैठता हूं। बाद में दुःख व पछतावा भी होता है। परंतु उपाय नहीं सूझता। यह तो तुम भी कबूल करोगी कि तुम्हारे प्रति मेरा प्रेम तो है ही। तुम्हें सब प्रकार से ऊंची उठी हुई देखने की मेरी कितनी इच्छा रहती है; इसलिए तुमसे जरा-सी भी भूल हो तो मुझसे बरदाश्त नहीं होती। इसके विपरीत मैं तो भयंकर भूल कर बैठता हूं, फिर भी तुम्हें सताने को तैयार रहता हूं। मालूम नहीं, क्यों ऐसा होता है? मेरे मन में भीतर-ही-भीतर खूब संघर्ष चलता रहता है। उसका परिणाम अब इस निराशा में प्रकट होने लगा दिखाई देता है।

यह बात तो सत्य है कि मेरे सोचने-विचारने का तरीका तुम्हारे तरीके से बिल्कुल उल्टा है। कितना अच्छा होता अगर मेरा तरीका मैं तुम्हें समझा पाता या तुम्हारा तरीका मैं ग्रहण कर पाता। परंतु अब तो यह असंभव है। कमल को यहां रख लेने में मेरे मन में तुम्हारा भी विचार रहा करता था कि वह तो भी तुम्हें संतोष पहुंचा सकेगा और मैं स्वतंत्रतापूर्वक अपनी उन्नति का मार्ग साधने में लग जाऊंगा। तुम मेरे अपराधों को उदारतापूर्वक माफ कर सको तो कर दो व परमात्मा से प्रार्थना किया करो कि मुझे सद्बुद्धि प्रदान करे। मुझमें जो कमजोरियां आ गई हैं या आना चाहती हैं, उन्हें न आने देवें, और जो हैं वे जल्दी निकल जायं।

तुम भी अपनी कमजोरियां तुम्हारे स्वास्थ्य को बर्दाश्त हो, उस मुताबिक धीरे-धीरे, निकालने का प्रयत्न रखोगी तो उसका लाभ तुम्हें अवश्य मिलेगा। साथ में मुझे व सब घर के लोगों को सुख व शांति मिलेगी। तुम्हारे प्रति सबका प्रेम व भक्ति बढ़ेगी। ज्यादा क्या लिखूं? तुमसे कई बार बहुत स्पष्ट बातें कीं व करने का प्रयत्न किया, परंतु उससे तुम्हें भी लाभ नहीं पहुंचा व मुझे भी शांति नहीं मिली। इसलिए चर्चा बंद करनी पड़ी, क्योंकि झूठ बोलने का मौका आवे या विचार भी आवे तो उससे तो कोई लाभ पहुंच ही नहीं सकता।

अब मेरी तुमसे यही प्रार्थना है, जो बहुत वर्षों से रही है, और यह तुम भली प्रकार जानती हो—कि तुम मेरा पांव न धोया करो। मुझे उस समय प्रायः हमेशा ही दुःख पहुंचता है। कारण साफ है। मैं अपने-आपको उसके योग्य नहीं समझता। आशा है, इस प्रार्थना का तुम

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उल्टा अर्थ नहीं करोगी। मैंने जिस भावना से लिखा है, वही अर्थ लोगी। मुझे अब संसार के मामूली साधारण मनुष्यों की पंगत में आने दो। शायद उसके बाद मुझमें उत्साह पैदा हो और जीवन में रस आये। आज जो रस दिखता है उसमें बनावटीपन का भाग ज्यादा है। जबतक एकांत जीवन में मनुष्य को रस या उत्साह नहीं मालूम होता है तबतक बाहरी उत्साह से क्या लाभ हो सकता है? मेरी बीमारी तो अब मानसिक है। वह तो किसी चतुर व अनुभवी डाक्टर की संगति से ही निकल सकेगी। तुम मुझे मेरी बीमारी दूर करने के हेतु लंबी मुद्दत के लिए कोई उदार सेवाभावी, मेरे प्रति प्रेम रखने वाले चरित्रवान सेवक के साथ किसी उपयुक्त डाक्टर के पास जाने के लिए प्रसन्नतापूर्वक छुट्टी दे सकोगी तो उसमें हम दोनों का बड़ा कल्याण होगा। संभव है, आगे जाकर फिर संतोष के दिन आवें। प्रयत्न करना हमारा कर्त्तव्य है, फल ईश्वर के हाथ है। मैंने अभी हिम्मत बिल्कुल तो नहीं हारी है। ईश्वर हमें सद्‌बुद्धि दे।

जमनालाल का वंदेमातरम

•

जानकीदेवी की ओर से

(जवाब दिया, २९-१-३८ को)

लो भई, चिट्ठियों से बात करने में भी कुछ विशेषता होगी! भगवान भक्तों को कसौटी पर कसता ही है। पर अभी कुछ बिगड़ा नहीं है। भगवान जब समय-समय पर हाथ पकड़कर रक्षा करता आया है, तो अंत भी वह जरूर सुधारेगा ही।

मैं तो आपको योगभ्रष्ट योगी ही मानती आई हूं। आपके ही पीछे दुनिया का सारा वैभव देखा और उसके सिवाय और किसी स्वर्ग की इच्छा नहीं की। मोक्ष की तो इच्छा करती ही नहीं।

आपके पैरों के जल का आचमन जबसे मैंने शुरू किया है तब से एक ही इच्छा रही है। चरणोदक हमेशा शीशी में भरकर साथ रखती हूं, कि जहां भी रहूं, वह साथ रहे और मरूं तो मेरे मुंह में डाला जाय। अब तो निश्चय ही कर लिया है कि यदि चरणोदक अंतकाल में मिलेगा तभी गंगाजल-तुलसी वगैरा प्रेम से लूंगी। इच्छा तो यही है कि मेरे मरते समय आप अपने हाथ से अपना चरणोदक दें। पीछे चाहे गंगाजल, तुलसीदल मिले न मिले। तब चैतन्यदेव से परे पहुंचने की ताकत आ जायगी।

'अंध, बधिर, क्रोधी, अति दीना'—यह बात अभी तो हिंदू धर्म से निकलना कठिन है। और आपके पश्चात्ताप का तो कोई कारण है नहीं। आपसे किसीका बुरा तो चाहा ही नहीं गया। पर एक बात जरूर है। थोथी चर्चा ही वातावरण में ज्यादा रही। मैं सबको सुखी कर दूं, यही भावना दुखदायी बन गई है।

मैं आपको नर मानूं कि नारायण! यही मेरी समझ में नहीं आ रहा है। मेरी कमजोरियां आपके तेज में बाधक हो रही हैं। यह प्रत्यक्ष देख रही हूं। इसमें मेरा कोई पाप आड़े आ रहा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है क्या ?

'हिम्मते मर्दां तो मददे खुदा' की तरह जो एकदम हिम्मत कर लूं तो सारा वातावरण तो तेजमय बना हुआ है ही, सोने में सुगंध हो जाय। पर मेरा मन तो इतना नर्वस हो गया है कि आपको आकर वापस जाते देखते ही सारे शरीर में सनसनी होने लगती है। कहीं काबू के बाहर न हो जाऊं ! उपाय मेरे पास नहीं रहा है। आत्मा एक है, मिट्टी में क्या मोह है। और आत्मा ही परमात्मा है, यह सच है। पर क्या करूं ?

आपको तो मैं क्षमा क्या दूं ? मैं खुद कई बार आपसे मांगना चाहती हूं। पत्र के पढ़ने पर तो कुछ रहता ही नहीं। केवल आपकी इच्छा पूरी करूं, यही इच्छा है। और भगवान जरूर वह दिन दिखायगा कि आपको पूर्ण शांति मेरे ही जरिये मिलेगी। मैं प्रयत्न करूंगी। आप मुझपर खुश रहा करो। आपके दिल में तो मैं ही रहती हूं और आशा है कि आगे भी रहूंगी।

अब मन में है वह बात भी लिख दूं। वैसे तो आप जानते ही हैं, पर मुंह से कह दोगे कि अमुक बात तू ठीक कहती थी, लेकिन मैंने उसपर ध्यान नहीं दिया, उस दिन मुझे आनंद मिलेगा। प्रमाण में हम सब घर के एक से ही हैं, पर आपको तो मैं ही पार उतारूंगी ना। फिर आशा, प्रेम व क्रोध जाय कहां ? पर मैंने अपना विश्वास ही खो दिया, उसको कैसे प्राप्त करूं ? 'मन न मिले जासे मिलणो किस्यो, पर लगी है प्रीत वांसे परदो किस्यो।' सो आपके पत्र की बात 'टेम्परेरी' मानती हूं, नहीं तो खतरनाक है।

दो बातें मुझे लिखनी हैं—

१. यह सही है कि मुझे क्या करना चाहिए, यह मैं जानती हूं। पर इसका यह तो मतलब नहीं होना चाहिए कि मैं मन की बात भी किसीसे कह-सुन न सकूं।

२. आप जो कुछ कहते हैं, उसका आपकी इच्छानुसार पालन नहीं होता है, सो मैं मानती हूं। लेकिन पालन क्यों नहीं होता, इसपर आप विचार नहीं करते। यही सारी उलझन की जड़ है, जो मुझे न मरने देती है, न जीने। क्रोध में रोकर अपना दुःख आपको सुनाऊं तो आपकी बीमारी का डर रहता है, और न सुनाऊं तो कबतक सहूं—आखिर कोई सीमा तो होनी चाहिए न ?

माता तो जैसे बच्चे का दोष भूले वैसे ही पति का। अनुचित वाक्य, अपमान, निंदा, तिरस्कार भी मेरे लिए तो चंदन है। कृष्ण-लीला भगवान ने भले ही दिखाई, पर मन की शांति मिलने की आशा पूरी करना भी तो आवश्यक है। समझाने से ही मन समझे कैसे ? जबकि पास में साधन भी हों। थोड़े से ही तो यह मन बिचारा खुश होनेवाला है। आप जानते हैं, मेरे मन की ताकत कितनी है। सो दुखी न करके मुझे संतोष से समझा दीजिये, भूलचूक क्षमा कीजिये।

जानकी के प्रणाम

इस पत्र का जवाब जमनालालजी ने २९-१२-३८ को इसी पत्र के नीचे लिख दिया था :

तुम्हारा लिखना बहुत अंशों में ठीक है। मैंने अब व्यवहार में तुम्हें संतोष पहुंचाने का प्रयत्न अधिक प्रमाण में करने का निश्चय किया है।—ज०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जमनालालजी के उपयुक्त जवाब पर जानकीदेवी का यह नोट है—

दो बातें पूरी कीं। प्रश्न यह है कि अंदर तो सच्चा प्यार है ही, परंतु प्रकट में भी प्यार मिलेगा, तभी शांति मिल सकेगी। फिर कुछ भी कहेंगे तो दुःख नहीं होगा। दुःख तो तभी होता है जब और कोई कहने आता है, और वह सब सुनना पड़ता है। तो यह सब साफ होने पर ही आगे का रास्ता साफ होगा न ? दबाने से तो नहीं होगा।

जानकीदेवी

•

सीकर, १०-७-३९

पूज्यश्री,

संतवाणी पूरी कर दी है। कविता भेज रही हूं,

रानीजी ने भेज बुलाया करी खूब मनुहार,
आदर देकर वातां पूछी किया प्रेम व्यवहार।
रानी घणी सयानी जी।
मति बिगड़ी काणे अफसर की किया जो आपको कैद,
मनचाहा एकांत आपको पाकर था आनंद।
दोनों की मनमानी जी।
उजड़ी बगिया दूर पड़ी थी सबने दी थी त्याग,
बसे आप तो तांता लागा जागे उसके भाग।
बीती बात पुरानी जी।
मास तीन जब होने आये, जगा पुराना शाप,
हुआ दर्द घुटने में भारी, दिया बड़ा संताप।
दुःख से भरी कहानी जी।
सेंक हुआ बिजली का चालू, चिंता थी दिन-रात,
खरी कसौटी के सम्मुख थी, सहनशक्ति की बात।
आप हार नहीं मानी जी।
जला पांव का मांस सेंक में, बातों में था ध्यान,
गंध उड़ी घबराया डाक्टर, सूखे उसके प्राण।
शक्ति आपकी जानी जी।
योग-भ्रष्ट भोगी योगी ने लिया मनुज अवतार,
बंध छुड़ाने और मिटाने, मातृभूमि का भार।
प्रजा बड़ी हरखानी जी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

धन्य भाग हैं धन्य साधना, साधो अपना योग !
वापू का प्रण पूरा होगा जय वोलेंगे सब लोग।
सुनो जानकी वानीजी।

मांजी तो मुझे देखकर बहुत राजी हुईं। उनको मैं एक अनार रोज खिला देती हूं, क्योंकि मवाद और लोहू में अनाज कम खाना ही अच्छा है। दही ठीक रहता है। थोड़ा दही और मिसरी दवा की तरह लेती थीं। इनको ज्यादा की आदत नहीं है। अपने-आप ही अच्छी हो रही हैं। मुझे भी वहुत अच्छा लग रहा है। आप जरा भी फिकर मत करना। मांजी की वातों से मेरा भी मन वहला रहता है। उनका मुझपर प्रेम भी है। उनका मन होगा तो अपने साथ ले आऊंगी। और आपके पास भेज दूंगी। वातें तो खास क्या करनी हैं ? वे-ही-वे वातें वार-वार वोल जाती हैं, पर आपके पास रहने से आपको और उनको दोनों को अच्छा लगेगा।[1]

जानकी

•

(जून, १९४१)

पूज्यश्री,

आपकी लीला अक्सर समझ में नहीं आती। घर का हर आदमी आपके जैसा बन जाय, यह तो हो नहीं सकता। आप मुझे अपने से भी ऊंचा देखना चाहते हैं और इसी आशा से क्रोध भी आपको हो जाता है। यह क्रोध तो प्रेम का ही रूप है। मैं तो आपको योग-भ्रष्ट योगी ही

१. जयपुर-सत्याग्रह के दौरान में जब जमनालालजी कर्णावतों के वाग में नजरवंद थे तब जानकीदेवीजी ने ऊपर का पत्र उन्हें लिखा था। यह अधूरा ही मिला है। इस पत्र के साथ एक पत्र विट्ठल के नाम का भी था, जो इस नजरवंदी के दरम्यान बड़े भक्ति-भाव से जमनालालजी की सेवा कर रहा था। जानकीदेवीजी को उससे वड़ा संतोष मिला था। विट्ठल आज भी जमनालालजी की दूकान में काम कर रहा है। विट्ठल को लिखा पत्र इस प्रकार है—

विट्ठल,

तुम्हारा रहना-करना देखकर मेरे मन में शांति हो गई है। अनार इसलिए भेजा है कि उसका रस लेने से खून में ठंडक होती है और ताकत वढ़ती है। सो काकाजी लें तो पूछकर देते रहना। हम यहां सरवती गेहूं खाते हैं, उसका दाना छोटा होता है, पर रोटी कोरी भी मीठी लगती है। उसका नमूना और आटा भी भेजेंगे। खास टीवड़ी का वाजरा मंगाया है, सो रोटी या खिचड़ी वनाकर देखना। मुंगोड़ी नई वनाकर भेजी है। उसमें जरा हींग और अदरख डालने से ठीक रहता है। मीठा नीम अपने झाड़ का ही है। वह छौंक में भी दे सकते हो और साथ में सावुत भी डाल सकते हो। खाते समय उसे निकाल दिया जा सकता है। उसमें सुगंध भी है और विटामिन तो हैं ही।

काकाजी टव में नहावें तव पेट पर कपड़ा फिराते हुए टव का पानी खल-खल करता हुआ जितना हिलता रहे उतना अच्छा। इसका ख्याल रखना। मैं तो टव में बैठती हूं तो उससे मेरी आंख की नजर भी ठीक होने लगी है, और उसके तो वहुत फायदे हैं ही।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समझती आई हूं और इसी धारणा को लेकर डरते हुए जीवन निवाहती आई हूं। आपकी लीला ऊपर से कठोर पर भीतर से कोमल—यह मैं क्या जानूं ! मेरे दिल में यह लोभ तो स्वाभाविक था कि आप दीर्घजीवी बनें और कहीं मैं आपको खो न बैठूं। आप जैसे बड़े आदमी से संतान-प्राप्ति हो गई, मेरे लिए इतना काफी है। आपके मुंह से वैराग्यभरे शब्द तो निकलते ही रहते हैं। मुझे गर्व था कि मेरे पति न तो मुझ-जैसे चेहरे के हैं, न बूढ़े, न दुजबर हैं। मैं सबसे भाग्य-वान हूं। परंतु मेरा वह गर्व नष्ट हुआ। दुखी दुनिया का, और पुरुषों की स्वार्थवृत्ति का पूरा अनुभव मुझे हो गया।

जरा मेरी जिंदगी के बारे में तो सोचिये कि :

१. १३ साल अबोध अवस्था में बीते, तब जीवन का रस तो कुछ जानती ही नहीं थी;

२. पांच साल, गर्भवती अवस्था के, जिसमें पुरुष को छूना पाप समझा;

३. सत्रह साल जोश में गये;

४. तीन साल जेल के;

५. शेष आठ साल में से मुसाफिरी के निकालिये। कितने दिन साथ रहा ? लेकिन विश्वास दृढ़ था, शरीर भी आपसे चंगा था, संयम से समय बीता। सतियां हुईं, क्योंकि उन्होंने सहन किया; किंतु 'सता' तो आजतक एक भी नहीं सुना। गर्व किसी का रहता नहीं। अपने को तो मैंने भी नीच माना। वह नीचता छोड़कर सुबुद्धि इस जन्म में नहीं पा सकूंगी; पर आपने तो आशावाद की हद कर दी। लेकिन भगवान गर्व दूर करना चाहते हों तो !

आप समझते हैं, सब-कुछ सुख-सुविधाएं उपलब्ध हैं; पर क्या यह भी जानते हैं कि मेरी नींद व मेरा दिल तो जैसे उड़ ही गये हैं। कुछ खो गया-सा लगता है। मैं तो दूसरा स्नान-घर आदि भी पसंद नहीं करती। आपके स्नानघर में ही नहाना अच्छा लगता है। मन की ऐसी स्थिति में, मेरी सुने बिना ही, आप मुझे इस प्रकार दबाओ कि आपकी बात मुझे कबूल ही करना चाहिए, और कबूल न करूं तो मुझे डर कि कहीं आपके सिर की नसें न फट जायें। उतरती अवस्था में पुरुष की डांट से हृदय फट जाता है। लड़के-बच्चों का तो फिर भी सहन कर लेते हैं। किंतु पुरुष का मुश्किल से सहन होता है। फिर, और बातों में चाहे कितना गुस्सा हो खास बातों का तो संतोषदायक उत्तर मिलना चाहिए। फिर अन्य बातों के बारे में मनुष्य लापरवाह बन सकता है। भीतर और ही कुछ चाहता हो तो मनुष्य का हर बात में चिड़चिड़ा होना स्वाभाविक है और इससे आपको और गुस्सा आता है। मैं आपकी आशाओं को कैसे पूरी कर सकूं ? आप जरूर मेरी आशाओं को पूरी कर सकते हैं। यह मत भूलिए कि मेरी शांति में आपकी शांति भी समाई हुई है।

अपने आदमी से भी हारकर इस तरह कागजों से बात करनी पड़े, यह भी क्या जीवन है ! मैं कुछ बातें और रखती हूं। पढ़ते-पढ़ते गुस्सा आवे तो पढ़ना वहीं बंद कर दें :

१. आप किसी के पीछे बिक जाओ, यह कोई कैसे सहन करेगा ?

२. तीन बातें आपके मन में मेरे बारे में पंद्रह आने झूठी जम गई हैं; वे आज तो नहीं बताऊंगी; पर कालांतर के बाद तो सब ठीक मान ही लेंगे। इसी आशा पर ही तो जीवित हूं। और यह आप भी अच्छी तरह जानते हैं। वे तीन बातें कौन-सी हैं, अभी न पूछना ही ठीक होगा।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

३. कमल ने कहा था, आगे चलकर सोलह आने दुःख पहुंचता दीखे, और आज दो आने में मामला सुलझता हो तो डरना नहीं, उसे मंजूर कर लेना चाहिए।

यह सब लिखने से मेरा मगज तो हल्का हुआ; पर आप पर क्या असर होगा ? यह पत्र फाड़ डालूं या दिखाऊं ?[1]

कइयों में से एक पागल

•

पवनार,

(जवाब दिया, २८-१०-४१ को)

पूज्यश्री,

समस्याओं के समाधान खोजती रहती हूं। लेकिन ये तीन शिकायतें मिटा नहीं पा रही हूं। ज्यों-ज्यों समय बीतता है, ये ज्यादा दुःख देनेवाली बनती जा रही हैं। आप ही इसका समाधान कर सकते हैं। इसलिए इनका खुलासा किया है। इन विचारों के लिए क्षमा चाहती हूं।

पहली शिकायत काशी के संबंध की है—आपने मेरे भरोसे एक स्त्री को छोड़ा, पर आपको पछताना ही पड़ा। आपका यह लिखना ठीक भी है। मुझे भी हमेशा यह लगता रहा है कि मेरे पास काशी और राधा (काशी की लड़की) थोड़े-थोड़े से के लिए तंगी भोगती हैं। मेरे मन में संकीर्णता भले ही हो, पर फिर भी ऊपर से तो कहती ही रहती हूं और मन में यह समझती भी रहती हूं कि दूसरों को देने और खिलाने से तो काशी के घर कुछ पहुंचे या राधा को खाना मिले तो ठीक। काशी के विचारों में तो स्थितप्रज्ञता है। पर राधा को एक रोज आपने चौके में मदद करते देख लिया, सो मजाक में ही आप बोले कि तू मुफ्त में काम क्यों करती है ? और आपने उसे साड़ी दिलवा दी। उसी दिन से उस छोकरी के मुंह से मेरे प्रति उपेक्षा प्रकट होने लगी।

मेरे मन में भी दर्द तो है ही। और जो कुछ बचता है, वह औरों की अपेक्षा काशी को मिले तो अच्छा ही लगता है। पर अब मेरे मन में फरक आ रहा है। यह अगर काशी को

१. गांधीजी का मार्गदर्शन पाकर जब जमनालालजी आत्मसाक्षात्कार के पथ पर आरूढ़ हुए तो उन्होंने अपने परिवार और स्वजन-मित्रों को भी इस साधना में लगाने का प्रयास किया। इस महान् यात्रा में जानकी-देवी छाया की तरह उनका साथ देने का प्रयत्न करती रहीं, किंतु स्वभाव एवं क्षेत्र में भिन्न दो सम-यात्रियों में दृष्टिभेद होता ही है। जमनालालजी और जानकीदेवी के जीवन-प्रवाह में भी यही दृष्टि-भेद था। प्रारंभ में वह उतना प्रखर नहीं था, जितना बाद में प्रकट होने लगा। समस्याएं उठती थीं और फिर सुलझती जाती थीं, क्योंकि दोनों परस्पर स्पष्टतर होते गये, यहां तक कि अपनी वैयक्तिक समस्याएं भी दोनों सार्वजनिक जीवन की कसौटी पर कसने लगे थे। जानकीदेवी के कई पत्र इन समस्याओं और उससे संघर्ष का उल्लेख करते हैं। इन वर्षों में लिखे गए जानकीदेवी के कुछ खास पत्रों में से उपर्युक्त पत्र एक है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मालूम पड़ेगा तो वह दुःखी ही होगी।

ज्यादा सोचूं तो थोड़ा-सा यह भी लगता है कि दूसरी शिकायत है मदू के संबंध की। मदू का तो आप सब जानते हो। आपका प्रेम मुझे न मिलने से मैं उसे जितना चाहिए, उतना प्रेम नहीं दे सकती।

तीसरी शिकायत रामगोपाल की पत्नी के संबंध की है। इसको मैं व राधाकिशन जितना जानते हैं उतना और कोई नहीं। मैं अच्छी से अच्छी बात कहूं वह भी काटी जाय तो मेरी अकल ही काटी जाय, ऐसा मुझे लगता है। उसकी मांग तो ५०) रुपये है। उतनी मैं पूरी करना चाहती हूं। दूकान से रुपये न दे सकें तो मेरा देना ठीक है। पर आप जो कहोगे सो कबूल है।

चौथी शिकायत स्वयं शैतान जानकी की है। बापू के पास गये पीछे कल छाती में धड़कन और सिर में हिस्टीरिया के असर ने सताया; पर मूर्खता मेरी है और मैं लाचार हूं। मेरा मोह सब जगह से निकलकर अब आपके प्रति रह गया है। पर कल्याण तो मोह में नहीं है। मेरी समझ से मैं आपकी इच्छा पूरी करने में सदा लगी रही। पर बीच में भगवान ने परीक्षा ली तो क्या किया जाय ?

अब भी मदद करने की मन में रहती है। आपसे दूर रहने में दोनों का भला है, ऐसा भी लगता है, पर क्या बताऊं !

अगर आप कोई प्रायश्चित्त करना-कराना चाहें तो हम लोग तय करें। फिर अमल में लाने की ताकत तो आपमें है ही।

अंत में एक बात यह कि नौकरों के सामने स्वाभाविक रूप से अनजाने आपसे डांटना-फटकारना हो जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि वे लापरवाह हो जाते हैं और उनकी नज़र में मेरे प्रति अपमान का-सा भाव आ जाता है।

इसके लिए मुझे ऐसा लगता है कि आपका खाना, भले कोई भी तैयार कर दे, पर खिलाऊं मैं। यह परीक्षा भी कड़ी ही है।

इन चारों बातों में राधाकिशन या किशोरलालभाई जो निकाल दे दें वह मंजूर करने की कोशिश करने के लिए मैं तैयार हूं ?

बलिहारी उस धर्म की बिन स्वारथ बिन मान,
एक दूसरे के लिए नर-नारी दें प्रान।

जानकी

जानकीदेवी की इन शिकायतों का जवाब जमनालालजी ने उसी कागज पर इस प्रकार लिख दिया—

श्री किशोरलालभाई, जाजूजी, हरिभाऊजी या राधाकिसन मिलकर या अकेले, किसी के भी समाधान से तुम्हें संतोष हो, उससे समाधान करा सकती हो। वह जो फैसला करेंगे उसका खयाल मैं भी रखूंगा।

—ज०

इतना लिखने के बाद जमनालालजी ने जानकीदेवी की प्रत्येक शिकायत का नीचे लिखा सिलसिलेवार जवाब दिया:—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

२७-१०-४१

१. काशी के बारे में मेरी भावना व विचार मैं तुम्हें अभी तक नहीं समझा सका, इसका मुझे भी दुःख है। अगर मेरे विचार तुम समझना चाहतीं व समझ लेतीं तो तुम्हें भी दुःख नहीं होता व मुझे भी समाधान मिल जाता। काशी से तुम खूब प्रेम करती हो। तुम्हारे स्वभाव को देखते हुए खूब प्रेम से तुमने उसे निभाया है, यह मैं मानता हूं। परंतु मेरी वृत्ति व विचार से हम लोगों को व अगर मैं घर में रहता हूं व मुखिया हूं तो मुझे, इस बार काशी चाहे जिसकी गलती से ओम् के साथ गई, उसका प्रायश्चित्त करना जरूरी मालूम देता है। काशी की लड़की को अगर सुधारना भी है तो तुम्हारे तरीके से वह नहीं सुधर सकती है। यह बात मैंने तुम्हें भी कही है।

२. मदू के बारे में तुमने जो यह लिखा कि मेरा प्रेम तुम्हें न मिलने से तुम उससे प्रेम नहीं कर पाती, सो मेरा प्रेम तुमपर है या नहीं, इस बारे में मैं क्या कहूं ! हां, मोह अगर है तो मैं उसे हटाना चाहता हूं—पूरी कोशिश करके।

३. चि० रामगोपाल की पत्नी को मेरी समझ से १०-१५ रुपये की मदद की जरूरत है। दूकान से ज्यादा दिलाने की कोशिश करने से दूसरे आदमियों पर बुरा असर पड़ता है। तुम अपने पास से जरूरत के माफिक १०-१५ रुपये महीने की मदद, जबतक उसका लड़का कमाने लायक न हो जाय, तबतक करना चाहो तो जरूर कर सकती हो।

४. शैतान जानकी का मतलब मेरी समझ में नहीं आया।

नौकर के सामने डांट-फटकारने की इच्छा तो रहती नहीं। खासकर तो खान-पान के मामले में तथा नौकरों के मामले में हम लोगों का बहुत गहरा मतभेद बहुत वर्ष से चल रहा है। मेरी इच्छा रहती है कि तुम्हारी वृत्ति में फरक पड़ जाय तो सुख से गंगा बहने लगे। मेरे मोह के कारण इसमें मेरी ज्यादा कोशिश रहती है। यह मैं जानता भी हूं कि उसका परिणाम ठीक न आकर विपरीत ही आता है। परंतु मैं भी अपनी आदत से लाचार हो गया हूं। संभाल रखते हुए भी तुम्हें कहने की भूल हो ही जाती है। पर मान-अपमान की तुम्हारी कल्पना व मेरी कल्पना में बहुत फर्क है।

जैसा कि बालक व मित्र लोग करते हैं, मैं भी मानता हूं कि हम लोग मोह को तो कम करें व प्रेम को बढ़ाते रहे। यह कार्य तो रात-दिन नजदीक रहकर संभव नहीं है। इसलिए दूर रहकर प्रसन्नतापूर्वक समझकर व्यवहार रखें तो आशा है, दोनों सुखी रह सकते हैं। बालकों व नौकरों पर भी अच्छा असर हो सकता है।

मुझे तो अब तुम्हें सुधारने का प्रयत्न करने का मोह छोड़कर खुद अपनेको ही सुधारना चाहिए। अपनी कमजोरियां निकालते रहना चाहिए। दूर रहकर शांत, शुद्ध व प्रेममय वातावरण में ही यह संभव है। मैं तो समझता हूं कि तुम्हें भी खुद अपने ही लिए प्रयत्न करते रहने में जो सुख व समाधान मिल सकेगा, वह और तरह से नहीं। तुम्हें जिस प्रकार शांति व समाधान मिल सके, उसका मार्ग पू० बापू की सलाह से तुम्हें निश्चित कर लेना चाहिए। —ज०

●

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जानकीदेवी की ओर से

वजाजवाड़ी, वर्धा,
ता० २२-१-५४

प्यारे वेटे कमल,

वंबई तो डाक्टरी नगरी है। वहां रोगों से कोई कहां तक बचे। वैसे अव तेरे शुभ दिनों की शुरुआत हो रही है, होनी चाहिए। मैं आशा करती हूं कि अव तेरा स्वास्थ्य छोटे-मोटे उपायों से भी सुधर जायेगा। वैसे शुक्लजी हैं। वे तेरे पिताजी से बड़े हैं, मगर अभी तक स्वास्थ्य उत्तम है, शरीर का रंग ऐसा लाल है कि धरती रच जाय। ये पान जरूर खाते हैं, मगर आदमी चालीस के वाद लापरवाही छोड़ देता है, संभल कर रहने लगता है। जवानी के जोश में व्यक्ति लापरवाह वना रहता है। मैं तो रूप की कमी के कारण धन आदि के गर्वों से वच गई। रोग तो सभी को सताते हैं। वापू को भी उनका सामना करना पड़ा, किंतु वाद में वे कितने सचेत हो गये थे। होश में आने के बाद सभी पछताते हैं कि पहले समझ जाते तो वीमारी से वच जाते। दांतों की तकलीफ के लिए तुम ऐसा करो कि तम्बाकू के पत्ते कढ़ाई में जलाओ। जव पत्ते जरा सजीव रह जायं तो उसे कढ़ाई में कटोरी से पीस कर डब्बी में भर लो। शुरू बहुत थोड़ी मात्रा से करना। पहले जी मचलाता है। तुमने देखा होगा कि तम्बाकू खाने वालों के दांत साधारणतया अच्छे रहते हैं। थोड़ी मात्रा में पान-तम्बाकू से शायद कीटाणु मर जाते होंगे। पान पोंछकर सूखा मसाला, जो राम के पास है, डालकर ले सकते हो। चूना और पान का रस खून को शुद्ध करता है। धेले की चीज भी लाभ कर जाती है, यह सभी जानते हैं।

तू वचपन में लंगोटी लगाये नंगे पांव ही घूमता था, लकड़ी के पाटे पर सोता था। लोग इसे देखकर दुख मनाते थे, लेकिन मैं तो खुश होती थी। आज तू आराम से रहता है, लोग इससे खुश होते हैं, पर मुझे तो दया, दर्द, अफसोस आदि के विचार ही सताते हैं। कारण ज्यादा आराम रोग की जड़ है। तू इस तरह उलझन में फंस रहा है। तुझे कोई ऐसी बीमारी नहीं है। शक्कर की वीमारी से तो आधी दुनिया भरी है। तीन-तीन बार चाय पीने वालों को भी राम निभाते हैं, तो तेरी भी वीमारी निकल जायेगी। तेरे साथ तो व्यसन का कोई सवाल ही नहीं है। उरलीकांचन जाते ही हिम्मत आ जायेगी, दवा छूट जायेगी।

—मां के आशीर्वाद

•

प्यारे वेटे कमल,

कल का पत्र तो अच्छा लगा, पर लिखे हुए अक्षरों से लगता था कि अभी कमजोरी वनी हुई है, तू जल्दी ही चंगा हो जायगा। तू वारह मास और वड़ा हो गया और तेरे साथ-साथ पांचों वहन-भाई भी। तू वचपन में सदा नीरोगी और सादा रहा। जयपुर जाने का विचार किया है सो ठीक है। खाने में हाथ के पिसे आटे का प्रयोग करे तो अच्छा। घूमने जाता है, यह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तो रामबाण इलाज है। शिवाजी कहते थे, विनोबाजी घूमने से ही जीते हैं। तेरे जन्म के पहले तेरे पिताजी माल-टाल खाते थे, पर सेठाई में बैठे रहने के कारण हमेशा खांसी चलती थी, कभी-कभी तो दमे से रात-भर बैठे रहते थे। स्वभाव तेरे ही माफिक था, पूछने में डर लगता था। कष्ट में बोलने से कष्ट बढ़ जाता है, इसलिए वे चुप रहते थे। डाक्टर पूछते थे कि क्या वंश में किसी और को दमा था ? बच्छराजजी से तो परंपरा में रोग आने का कोई कारण न था, क्योंकि यह संबंध खून का नहीं था। फिर जब बापूजी का साथ मिला तो उनके साथ घूमने लगे और उसके बाद उन्हें पाचन की शिकायत नहीं रही—तुम लोगों ने भी पाचन के बारे में उन्हें कभी शिकायत करते नहीं सुना होगा। पहले अगर उनसे कोई कसरत करने को कहता तो सोचते थे कि इस शरीर से कसरत कैसे होगी। जल्दी उठकर पांच बजे घूमने जाओ तो यह बड़ा अच्छा व्यायाम है। सीतारामजी सेकसरिया कहा करते हैं कि इससे शरीर पर ऐसा काबू आ जाता है कि कब्ज आदि की कोई शिकायत नहीं रहती, भूख भी उत्तम लगती है। पेट अच्छा होना स्वास्थ्य की कुंजी है।

सावित्री···, भूल गयी थी। बेटा, बहू तो स्थितप्रज्ञ हैं ही। अपने-आप ऐसी बातें किसे याद रहती हैं ? भगवान के चांदी के जेवर थे, चोरी होने पर उनकी जो लिस्ट बनी थी वे उसमें दर्ज होंगे। जेवरात की सूची एक बही में डालूराम सेता ने लिख कर रखी है। एक जन्म कुण्डली की पुस्तक भी मिली है। राम के जन्म के बाद की कोई कुंडली उसमें नहीं है, पहले की सब कुंडलियां उसमें हैं। कागज सड़ गया है, तीस पृष्ठ की पुस्तक है। बच्छराजजी, कनीरामजी, जमनालालजी, जानकीबाई, कमलाबाई और लक्ष्मीकांत—यह तेरा जन्म का नाम है—की कुंडलियां हैं। मदुबाई, उमाबाई की कुंडलियां हैं, सो शिवाजी को दिखा देंगे। राम की कुंडली राम के पास है, वह काहे को भेजेगा।

मैं तो सास के प्यार और व्यवहार से वंचित रही। तुझे याद भी नहीं होगा, पर मैंने किशोरलालभाई से कहा था कि रामायण के बालकांड और अयोध्याकांड बांच लूंगी, लेकिन हमेशा की तरह यूं ही कह दिया था। जो कहा था सो किया नहीं; विनोबा के पास बहुत कुछ पढ़ लिया, अब क्या पढ़ूं। अभी तेरी बीमारी में राम ने कहा कि तुझे वर्धा में बीमार नहीं पड़ना चाहिए।···तू रात-दिन मीटिंगों में लगा रहता है, जाने के दिन भी मीटिंग रखी थी। ये सब हमारे गुण तुझमें आये हैं। राम कहता था कि बार-बार बीमार पड़ने से तो मर जाना अच्छा। मैंने भी कभी ऐसा कहा है कि लोग देश के लिए मरते हैं, मेरा कमल भी जेल में देह छोड़ दे तो इससे क्या होता है, पर यह शब्द सोचते, सुनते लिखते कलेजा कांप जाता है। पहले शब्दों के अर्थ पर ध्यान कम जाता था; बच्छराजजी दिन भर कठोर वचन बोलते रहते थे, तेरे काकाजी इस कारण बेचैन हो जाते थे; स्वयं सदा अच्छे शब्द बोलते थे, पर मेरे कानों को मर-जा आदि शब्दों की आदत हो गई।

—मां का आशीर्वाद

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रांची : ६-६-१९५३

चि० मदू,

कार्ड मिला। गया में तो खूब परीक्षा हुई। लड़कियां भी क्या काम कर सकती हैं! यहां विनोवा की भांति एक विद्वान व्यक्ति मिला, उत्साही भी है। गर्मी तो वर्धा जैसी ही है, लेकिन लगता है, दो-चार रोज में वर्षा आ जायेगी। विनोवा के पास जाना-आना नहीं होता। डेढ़ सौ मील मोटर में जाने की जरूरत भी नहीं है। कोई काम भी क्या है? गया में दो रोज उनके साथ रही। यहां के लोग आठ-दस रोज रखना चाहते हैं। पच्चीस को उनका रांची आने का प्रोग्राम है। वे कहते हैं कि दस हजार एकड़ रोज भूमि मिले तो रांची वाले जितने दिन रखना चाहें मुझे वहां रख लें। आशा है कि वे लोग इतनी अपेक्षा पूरी कर सकेंगे। मैं रामकुमारजी के वगीचे के घर में सोने जाती हूं। वह यहां से एक मील है। दिन में एक बार रामकुमारजी के यहां भोजन करती हूं, रात में फल-दूध ले लेती हूँ। सुवह मैं नहाकर ९ बजे दही लेकर निकलती हूं। रात को साग-सब्जी व आम लेकर सो जाती हूं। चिंतामणि अपना भोजन खुद बनाता है।

गया से वर्धा जानेवाला कोई भी आदमी नहीं मिला। तीन मास का सूत चौवन आंटी मैंने भेज दिया है। यहां खाने-पीने की वड़ी तकलीफ रही। जव यहां से निकलने का समय आ गया है तव कुछ इंतजाम जम गया है। पानी के लिए कोई ठीक प्रवंध नहीं था, खुद सुराही रखी तो लोग पानी पी जाते थे। भगवान ने किसी तरह समय निकाल दिया। यहां तेरे काकाजी को जानने वाले बहुत लोग हैं। दिनभर रामकुमारजी के यहां रहती हूं। वहां, छोटे-वड़े कई वच्चे हैं। मन लगा रहता है। उनके यहां भोजन हाथ से बनाया जाता है, सास-बहू होशियार हैं। कलकत्ता यहां से पास है। इसलिए या तो वहां मीटिंग होगी या इंदौर में। इंदौर में मीटिंग हुई तो कस्तूरवाग्राम में, जहां नई कालोनी बन रही है, एक घर लेकर अलग रह लेंगे।···

मेरा रजू दुबला क्यों है? डाक्टर को मत दिखाना। ओम् के पास नीम की गिलोय का सत् है, उससे गर्मी शांत हो जायेगी।

मां के आशीर्वाद

•

बजाजवाड़ी,

चि० राम,

भगवान की असीम कृपा से सब जने वच्छराजजी, दादाजी की गादी पर दीपावली मनावें, फिर दूसरे दिन लक्ष्मीनारायण मंदिर का अन्नकूट का प्रसाद लेवें। शाम की गाड़ी से सब कुशल-पूर्वक वापस जा सकें। मेरा तो यही जीवित श्राद्ध है। सब की अनुकूलता है। मौसम अच्छा है। बालकोवाजी परंमधाम में हैं ही। बच्चों का डर था, पर वे मान गये हैं। वंबई में तो विमला ने ५-७ दिन की ही बात कही थी। कल बोली, टिकट कटा लें। पीछे मुश्किल होगी। मेरे मन में तो स्वार्थ ही यह है कि किसी तरह दीपावली पर वह ज्यादा दिन रहे तो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शरीर को लाभ है। मेरी हाजिरी में सब देख ले, मैं कैसे रहती हूं, क्या चाहती हूं। बड़ों की भूमि में बड़ों का क्या-क्या है ? दूर से विमला क्या जाने···!

अब तो तू मेरे मन की बात समझ गया। सो विमला को यहीं दीपावली पर रहने को लिखो, ऐसी मेरी इच्छा है। आज तक तो मौका ही नहीं मिला। आगे भगवान जाने, पर तू वहां रहेगा तो विमला को मैं कैसे रखूं ? बच्चे रहें चाहे जायं। स्कूल की खास बात होती है, तब तो लाचारी है, वरना क्या बात है ? तू थका-थका रहता है, इससे तुझ पर करुणा होती है। पर बड़े की परीक्षा में अपनी भी परीक्षा है न, भाई। तब फिर मेरा भी बंबई आने का मन कैसे होगा, सोच ले।

मां के आशीर्वाद

•

बजाजवाड़ी, वर्धा
१-१-५६

चि० राम,

१. विनोबाजी ने कहा है कि पुस्तक पूरी होते ही भेज देना। १५ मिनट देखने से सारा दृश्य सामने आ जाता है। प्रस्तावना हम ही लिखेंगे। और तुरंत लिख देंगे, ऐसा प्रेम से उत्साह दिखाया है। मार्तण्ड का पत्र आया, करीब १५ दिन में पुस्तक पूरी होते ही विनोबा के पास भेज देंगे।

२. जेल की १०० बहनों वाला फोटो पुस्तक में देना है, सो तुम्हारे पास फोटो हो तो भेज दो, नहीं तो भरत के साथ कांच निकालकर भेज सकते हैं। रजत, भरत, रुचिरा ६-७ ता० को जायेंगे। मदालसा का विचार है कि यहां उसकी तबीयत को लाभ होगा, ऐसा लगता है। भरत को समझाया तो है कि ओम के पास रह जाय। जितने दिन रहना होगा, वर्धा ही अच्छा है। बंगले पर ही है। अपने घर का सामान ठीक-ठाक कर रही है। यहां एक सिविल सर्जन[1] आया है। वैद्य, होम्योपैथ और सर्जन होते हुए उसको पैसे से घृणा है। घंटों गरीब-अमीर रोगी को समय देता है। नमक व अचार के साथ दो दफे यहां रोटी खा गये। उन्हें मेरी टांग दिखाने को बुलाया था, तब मुश्किल से १५ रु० लिये। अंग्रेजी दवा का मैंने मना किया। उसने तुरंत आयुर्वेदिक बताई। तीनों बच्चों को होम्योपैथिक। भरत, रजत के नाक में हड्डी मदालसा के जैसी दिखती है। होम्योपैथी से ठीक हो जायगी, ऐसी उनकी श्रद्धा है। बायोकेमिक १२ शीशी घर में रखो तो डॉक्टर से बच सकते हैं। उसने पुस्तक का नाम भी मदालसा को बताया है। गूलर के पेड़ का दूध रूई में लगाकर एक पैसे जितना दोनों तरफ गले पर रात को चिपकाने से लाभ होता है। ७० दिन में उस पेड़ को अंजीर के जैसे फल लगते हैं। इन तीनों बच्चों को

1. हरनारायण दुबे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लाकर दिखाना है। बंगले पर बड़ा-सा वह झाड़ है न। अपने बच्चों को भी इसको दिखाना चाहिए। शक्कर की बीमारी का भी पूछना है। गांव के सब लोग सिविल सर्जन से खुश हैं। मेरे पांव को १० दिन विजली लगाने को कहा है। मदालसा के लिए तीन दिन से सोचकर कहेंगे। कल फाइल लेकर आये थे। पंगत में आकर जीम गये—टंडनजी, मिश्रजी, गोविन्ददासजी के साथ। वर्धा में ऐसे डॉक्टर की जरूरत थी। महोदय को विजली से सेंकने को कह दिया है।

मां के आशीर्वाद

•

मैसूर, विनोबा की पार्टी में
ता० २०-८-५७

चि० राम,

मैं श्रीमन्‌जी के साथ प्लेन से ता० १८ को आई। ता० २ को ढेवरभाई, श्रीमन्‌जी, राजेन्द्रबाबू के तो सेवाग्राम में ठहरने की बात है। प्लेन से नागपुर होकर ता० ३० तक वर्धा पहुंचूंगी। श्रीमन्‌जी कहते हैं, और मेरा मन तो रहता ही है। दीवाली की छुट्टियों में कमला, उमा, वीणा को लेकर रामेश्वरजी ने वर्धा आने को कहा है। कमला, उमा को लेकर ता० १ को आ जाओ। उमा को राजेन्द्रबाबू की आरती कराने का मौका शायद ही मिले, क्योंकि वह सेवाग्राम में दिन में ही रहेंगे। रात का प्रोग्राम नहीं है, ऐसा सुना है। ओम तो ता० ३ को कालेज के लिए चली जावे। छुट्टियों में फिर आ जावे। कमला का तो, रामेश्वरजी कहते हैं कि वर्धा में ही स्वास्थ्य सुधरेगा। सो डेढ़ महीना मिल जावेगा। आरती और आजादी में छुट्टी आवें या तुम्हारे वहां रह लें। बच्चों की छुट्टियों में विमला रांची जायगी, ऐसा सुना है। यों तो वर्धा आना सबों का अच्छा है। कमल को भी दीवाली पर आने को कहा था। सभी वर्धा की दीवाली मनावें। मौसम अच्छा है। हरड़ों की बहार है। श्रीमन्‌जी ने कहा, माताजी के आने से जल्दी जायेंगे। ढेवरभाई वगैरा तो बंगले में ही ठहरेंगे। आज श्राद्धों की ग्यारस है। विनोबा का साथ मिला। नागपुर वाले काकाजी बीमार थे, सो उन्हें भी देख लूं, जल्दी पहुंचूं। एक-दो रोज यहां मिल जाय। आराम भी है। खर्च भी अब करना चाहिए। आठ दिन वर्धा में रहकर इन्दौर में कस्तूरबा की मीटिंग में ८-१० रोज रहकर दीपावली पर वापस वर्धा। ककड़ी का मौसम है, सो सब वर्धा आ जाना खाने को। बंगले पर गेस्ट हाउस मिलाकर चाहे जितने लोग रहें, दुकान से अधिक आराम रहेगा। सावित्री आवे तो सुमन वगैरा को पूरा आराम मिलेगा। कभी तो सारे लोग साथ रहें। मदू आ जाए। बुआ आ सकती है।

मां का सबों को आशीर्वाद

•

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कलकत्ता, ता० ८-६-१९६३

चि० विमला,

मैं कल कलकत्ता सीतारामजी के घर आ गई। बाबा ता० १३ को आवेंगे। मेरा कलकत्ता ही रहने का मन है। बाबा ७ दिन तक सात जगह पड़ाव रखने वाले हैं। बाकी कलकत्ता को समय उदारता से दे सकते हैं। सो एक मास तुम्हारा कुछ कार्य हो तो आसपास रह सकते हैं। पुस्तकें ६ मिल गईं। बाबा को पुस्तक दी है। थोड़ी देखी। मैं बोली, राम ने लिखा है पूरी देखना, तो बोले, निशान कर दो खास पत्नों पर। मैंने कहा, निशान आपको करना है, सभी खास हैं। हां १५-२० मिनिट में पढ़ सकते हैं।

गंगासागर वैसे तो जुहू का किनारा-सा ही है। कपिल देवजी की मूर्ति है। पर यात्नियों के लिए यात्ना भारी है। गंगा व सागर के संगम का माहात्म्य है। बाबा के साथ खूब नहाये।

—मां के आशीर्वाद

•

बजाजवाड़ी
१९५२

चि० सुमनारानी,

आज तुम्हारी मेथी की साग बनाकर खाई। अबकी छुट्टियों में भी तुम यहीं आना। राहुल का पता क्या है? तुम कितना वजन ले गईं? अब वहां भी राहुल मक्खन खा सकता है क्या? छोटे का तो कूदने में ही वजन भाग जाता है। आंवले का चूरा शीशी में भर लेना। टुकड़े चाहिए तो कमला बुआजी को भेजे हैं। छोटे बच्चों को समझाना, सिगरेट नाम की रंगीन शक्कर की लकड़ी चूसने से गला खराब होता है। सो दुकानदार को अगर समझाया जाय तो सब बच्चों का भला होगा। मीठी लकड़ी मुलेठी लेवें तो गला और खांसी भी ठीक होगी।

एक मजेदार बात सुनाऊं। रिषभदासजी के साथ आते हुए मैंने उनसे कहा, आप दुकान पर जाओ। मैं पहुंच जाऊंगी। आधे रास्ते में मुसलमानी मोहल्ले में पहुंच गई। खाना खाकर ११॥ बजे निकली। एक घंटा गली-रास्तों में घूम-फिरकर बार-बार वहीं आ जाऊं। कुछ निशान दीखे तो उधर जाऊं, पर नये घर के एक लड़के से चुपके से पूछा, "ज्ञान मंदिर किधर है" तो बोला, बजाजवाड़ी चले जाओ। अब शरमाकर चली, पर किधर जाऊं? थक गई। डर तो क्या था! 'ज्ञान मंदिर' का शिखर वगैरा कुछ निशान दीखे तो आगे बढ़ूं। एक टांगा खाली खड़ा था। बैठूं, पर घर पास ही होगा तो? तांगा चला तो हिम्मत से बैठी रही। दूर निकला घर। पर मैं दूं चार आने, वह मांगे आठ आने। आखिर संक्रांति का दिन है, यह सोचकर आठ आना दे दिया।

दादीजी

•

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

"सौ साल जीवें"

वर्धमान वृत्ति से हृदय का विकास करते हुए

विनोबा

आज मुझे यहां दो काम करने हैं। दोनों काम आसान हैं। एक है—माताजी के जीवन के ८० साल आज पूरे होते हैं, उनके लिए शुभकामना करना। उनका आरोग्य अच्छा है। ८० साल की उम्र में भी वे बच्चों के समान बालवृत्ति रखती हैं। मैं आशा करता हूं कि हम सब लोगों की शुभकामना से वह अवश्य मरते तक जी लेंगी।

लेकिन हम लोगों में, खास करके वैदिक परंपरा में, आशीर्वाद दिया जाता है—"जीवेत शरदः शतम्" (सौ साल जियें।) १०० साल जीने की बात वैदिक संस्कृति में आती है। 'ईशावास्य उपनिषद' में यही बात आती है, १०० साल जीने की, लेकिन वेदों ने जो आशीर्वाद दिया १०० साल का, उसके साथ एक शब्द जोड़ दिया—"धन्येविषयो वर्धमानाः।" बढ़ते हुए संसार में जीव-वृत्तियां विकसित होती जा रही हैं। चिन्तन-शक्ति उत्तरोत्तर बढ़ रही है। ऐसी हालत रखते हुए १०० साल जीना। वृत्ति क्षीण होती जा रही है, चिन्तन-शक्ति रही नहीं, ऐसी क्षीणता में जीना नहीं। यह जो 'वर्धमान' शब्द है, बहुत महत्त्व का है। यह शब्द उठा लिया जैनों ने। जैनों ने महावीर को 'वर्धमान' नाम दे दिया। वर्धमान अर्थात नित्य बढ़नेवाला। कल का आज नहीं और आज का कल नहीं। रोज इसका विकास होता ही रहा है। मनोविकार, चित्तविकार, बुद्धिविकार, अवरोध हो रहा है, ऐसी है वर्धमान स्थिति, महावीर की स्थिति।

मैं आशा करूंगा कि वर्धमान वृत्ति से उत्तरोत्तर हृदय का विकास करते हुए माताजी १०० साल जीवें। (आपको भी जीना पड़ेगा, ऐसा माताजी ने बीच में ही कहा)। ठीक है। 'सहनाववतु, सह नौ भुनक्तु।' यहां फुटबाल का खेल चला है। हमने गेंद उनके पास भेज दी और उन्होंने हमारे पास भेज दी। तो उसको स्वीकार करते हैं।

दूसरी बात। उनका कुछ गुणगान आप लोग सुनना चाहेंगे। लेकिन इसको स्तवन कहते हैं, स्तुति। वह परमात्मा की करना उत्तम रहता है। मानव की स्तुति उसके सामने करना यानी उसको जहर पिलाना है। कवि ने कहा है, 'विषष्ठवना त्वनेहरः', एक जहर है। इसको भगवान शंकर ही हजम कर सकते हैं। जहर को हजम करने की शक्ति मानव में नहीं है। इस वास्ते मानव के सामने उनकी स्तुति करना उचित नहीं है। इसलिए स्तुति खतम। और निंदा करनी हो, तो आप लोगों की उपस्थिति में इनकी निंदा नहीं कर सकता। कोई दोष इनके दीख पड़ते हों तो प्रेमपूर्वक इनको एकान्त में समझाना होगा। तो आपकी हाजिरी में उनकी निंदा नहीं हो सकती है और उनकी हाजिरी में उनकी स्तुति नहीं हो सकती। आप दोनों ही यहां हाजिर हैं, इसलिए न निंदा, न स्तुति। फिर क्या रहेगा ? मौनं समाप्ति।

श्रीमती जानकीदेवी बजाज के जन्म-दिवस पर ब्रह्म विद्या मंदिर, पवनार में ७ जनवरी १९७३ को दिया गया प्रवचन।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

'मेरे साथ आप सब सौ वर्ष जीवो'

जानकीदेवी बजाज

मुझे जीने का बहुत शौक है और मैं चाहती हूं कि सबको १०० वर्ष आजकल मिल सकें।...

सबका खान-पान और रहन-सहन ठीक रहे। बाबा बोले हैं कि १०० वर्ष जी सकते हैं। तो बाबा और मैं १०० वर्ष जीने का नक्की करते हैं। हमारे साथ आप सब १०० वर्ष जीवो। दुनिया में १०० वर्ष की उम्र को पकड़कर खान-पान सब शुद्ध रखें।

अब स्त्री-शक्ति और गाय। याने गाय और माय। गाय को बचाना है और स्त्री-शक्ति को जगाना है। गाय से बैल, बैल से खेती, खेत से प्राणिमात्र का जीवन। इसीलिए बापू ने खेती और गाय, दो बताई थीं। खादी में शुद्धता की बात समझाई थी। खादी शुद्ध, पवित्र। शरीर में पसीना सोखती है और शुद्ध हवा देती है। शरीर का पोषण खादी में है। गाय से सबका जीवन है।...गाय को बचाना है तो आज से तैयार हूं। कलकत्ता में लोग सब इस काम के लिए तैयार हैं। बाबा ने कहा, गोहत्या बंद करनी है। गांधीजी ने कहा था कि राज मिलाना आसान है, लेकिन गोहत्या बंद करना कठिन है। बाबा ने कहा, कलकत्ता को जवान-जवान गायें जाती हैं, पहले उनको बचाना चाहिए। लोग कहते हैं कि गाय कायदा बनाने से बचेंगी। नहीं, कायदा तो टूटता जाता है। पर हां, बाबा ने कहा, गाय मारना बंद होगा, और कायदा बनेगा तो वह कायदा टिकेगा।...इस तरह दुनिया (जनता) ही कोशिश करे और सरकार मदद दे तो काम हो सकता है।

स्त्री-शक्ति जगानी है तो स्त्रियों को ही आगे आना होगा। समाज में पुरुष सबल कहलाते हैं और माताएं निर्बल, अबला। अरे, अबला कैसे है ? तुमको पैदा करती है। नौ महीने पेट में रखती है। बाद में बच्चा कैसे पैदा होता है, वह पीर तो मां ही जानती है। पुरुष इस दुख को कैसे समझ सकते हैं। वह बच्चा पैदा करे, खर्च चलावे, भूखी रहे, पर कोई सुनवाई नहीं। यही बहनें अपनी माताओं-बहनों को जगावेंगी तभी स्त्री-शक्ति जागेगी। जिस दिन स्त्रियां खुद खड़ी होंगी, उस समय उठ सकेंगी।

इस तरह गाय और माय इन दोनों की जितनी उन्नति होगी, उतनी ही देश की उन्नति होगी।

७ जनवरी, १९७३ को पवनार में विनोबाजी के आशीर्वाद के उत्तर में दिया गया भाषण।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

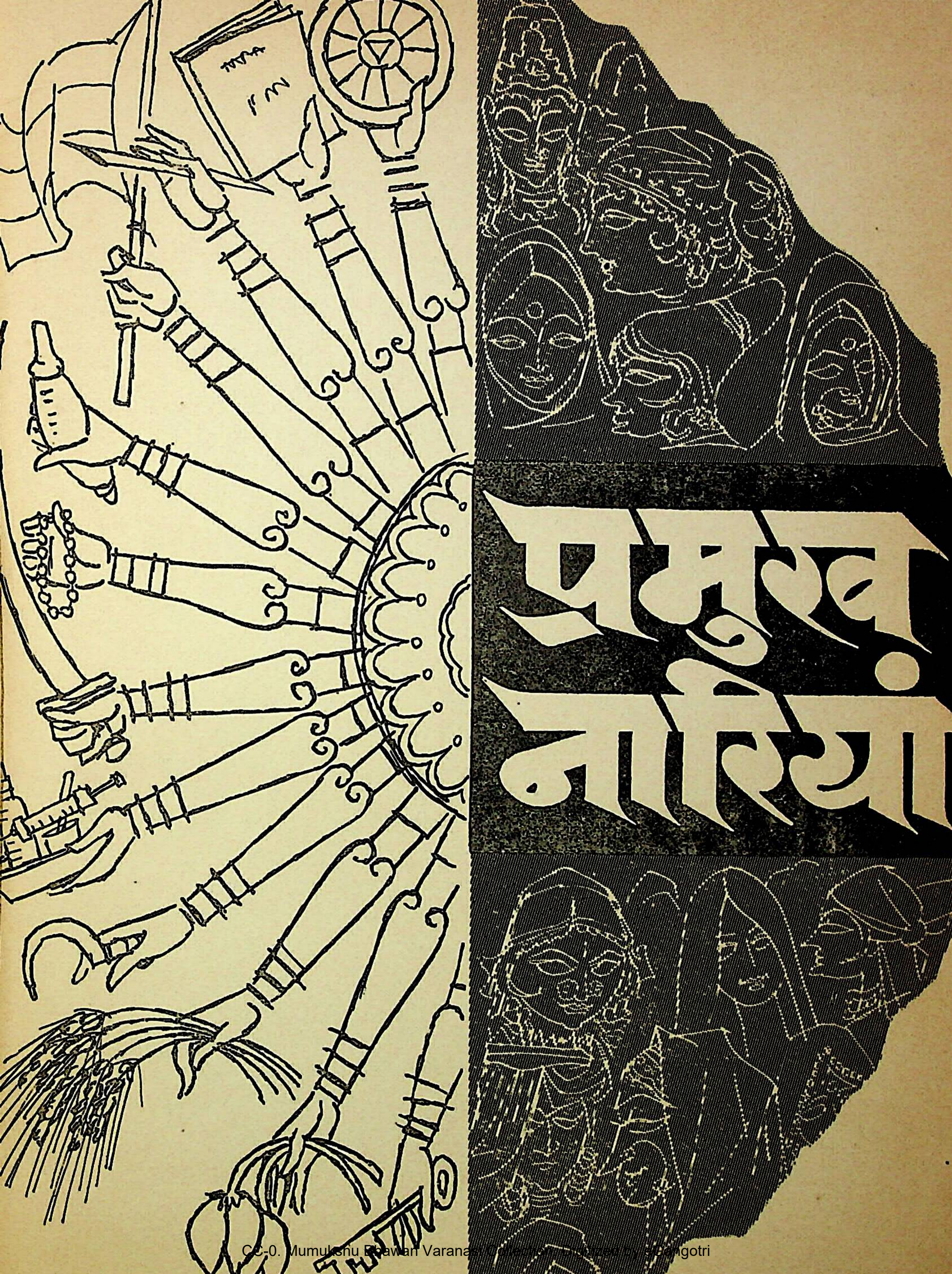

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नारी जीवन की सार्थकता

श्री मां आनंदमयी

प्रश्न : नारी-जीवन का सहज स्वरूप क्या है, मां ?

मां : नारी तो आत्मसत्ता, आत्मा ही है।
सहज स्वरूप तो नित्य है ही।
और मनकल्पित भावनामूलक सहज स्वरूप का जो प्रश्न पूछा है, वह तो मनोराज्य के अंतर्गत है।

प्रश्न : इस सहज स्वरूप में स्थित होने के लिए नारी-जीवन में अवलम्बनीय क्या है ? अर्थात् जीवन को किस प्रकार नियमित करें, किस मार्ग पर किस सहारे से चला जाय ?

मां : देखो, इस शरीर की एक बात है—श्रेयः ग्रहण, प्रेयः त्याग। एक तो सत्संग, श्रवणादि और प्रार्थना हो, "हे भगवान, तुम्हारा ही यह शरीर है। इस मन-प्राण से केवल तुम्हारी ही सेवा बने।" अपनेको हरेक कार्य में भगवान के हाथ का यन्त्र—भगवान के लिए भगवान जो करायें वही हम करें—यह मन में रखने की कोशिश और सभी कार्यक्रम में, अपने में भी जो कुछ है, समग्र शरीर से जो-जो क्रिया बने, शरीर भी, भगवान के चरणों में अर्पित हो; मनुष्य की तो सारी क्रिया और विचार में ही भगवान में समर्पण-बुद्धि होनी चाहिए।
भगवान की शरण में जो हैं, उन्हें नियमित सहारा भी है। भगवान ही सारे कार्यक्रम-रूप में प्रकाश होकर, अपना कार्य अपने में आप ही पूर्ण करते हैं।

प्रश्न : नारी-जीवन की सार्थकता किसमें है, मां ?

मां : नारी-जीवन की सार्थकता, भगवान की शरणागति—क्रिया के व्रत में है। भगवान परममाता, परमपिता, सखा,'स्वामी, बन्धु है न ? अपने प्रिय को मातृत्व-जागरण का मार्ग भी देते हैं। उसी मातृत्व में व्रती रहना। भगवद्बुद्धि से सबकी सेवा करना। उसी सेवा-क्रिया में जो पितृमातृ—स्थानीय, सच्ची भक्ति-श्रद्धा भाव लेकर भगवान्, तुम्हीं इस रूप में सेवा ग्रहण करो, और सन्तान-स्थानीयगण की स्नेह, आदर, प्रेम से सेवा करे। भगवान इसी रूप में सेवा ग्रहण करते हैं। मन में यही भाव सर्वक्षण सुरक्षित बना रहे, केवल चेष्टा।
सब सेवा ही पूर्णांगी हो, यह लक्ष्य बने।

प्रश्न : नारी का आंतरिक समर्पणभाव किस तरह समृद्ध हो सकता है और यह समृद्धि समर्पण के लक्ष्य तक पहुंचाने में किस प्रकार सहायक हो सकती है ?

मां : गुरुनिर्देशक्रिया में व्रती रहने में ही क्रम-समृद्धि है। अपना आंतरिक सारा लक्ष्य पूर्ण होने की आशा की जा सकती है।
गुरुनिर्देशक्रिया ठीक-ठीक बने तो अपने-आप शक्ति उत्पन्न होती है और शिष्य-संतान का नवजीवन गठन होता है। उसी गठित जीवन में लक्ष्य-पूर्त्ति की जो शक्ति, क्रिया

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जाग्रत होती है, वह यात्री को यात्रा पूर्ण करने के लिए हर समय सहायक होती है।

प्रश्न : मां, वर्तमान समाज-व्यवस्था में जिस प्रकार विपरीत गति दिखाई पड़ती है, नारी-जीवन में अपने लक्ष्य पर दृष्टि रखते हुए चलने की प्रचेष्टा में इस विपरीत वातावरण को सुधारने में नारी किस प्रकार सहायक हो सकती है ?

मां : चलने का जो तरीका है, यदि सत्यनिष्ठा सत्शुभक्रिया में चालित हो, प्रतिकूल, अप्रतिकूल, विपरीत तरीका जो कुछ आये, अपना सत्य लक्ष्य स्थिर रहने से, सत्प्रभाव से शोधन की आशा हो सकती है।

गुरुकृपा, प्रार्थना सदा ही होनी चाहिए। इष्ट ही केवल—अनिष्ट जहां नहीं है—भगवान तो निर्गुण, निराकार, सगुण, साकार में भी अप्रकट, प्रकट है। वही रूप गुण में, जहां-जहां जो रूप। स्वयं जो-जो क्रिया-रूप में प्रकाश अप्रकाश है, इस तरीके में भी नित्य नये-नये रूप में, मन से देखते हो न ?

एक होती है सरल गति, और एक होती है क्लेशदायक गति। जो सेवा से अक्लेश, साम्य, समता, स्थिर धीर गंभीर शांतस्वरूप प्रकाश हो, उसी क्रिया में व्रती रहना। भगवान ही जब अपनी क्रिया में शांतिदायक प्रकाश हो, तभी लक्ष्यपूर्ति हो सकती है।

प्रश्न : नारी-जीवन में उपर्युक्त प्रगति करते हुए विश्वशांति का प्रकाश कैसे हो सकता है मां ?

मां : भगवान् नित्य शांतिस्वरूप है। वह स्पर्श के लिए लक्ष्य होना। अशांति क्रियारूप बन न पाये। सत्कार्य में व्रती रहे। केवल भगवत्स्मरण अनुकूल क्रिया सेवादि प्रयोजन। कारण जीवजगत, जगत माने गति, जीव माने बद्ध—इसी क्रिया में सत्य कथन सच्चिन्तन, सद्व्यवहार, सत्यपालन आदि सर्वक्षण रति-मति रहे, सत्य-अनुसन्धानी का, उसीके अनुकूल कार्य सत्संगठन-प्रयोजन हो।

विश्वरूप तो स्वयं भगवान हैं। विश्वशांति जो चाहते, वहां तो मां परमचरम गतिक्रिया में जबतक व्रतीरूप गतिस्थिति अतीत अनतीत प्रकाश न हो तो, देखो, विश्वातीत में जो अवर्णनीय है, विश्वराज्य में वही है। अभी समझो, जब अपनेको अपने में ही पकड़ा न दें, तबतक मां विश्वशान्तिरूप कहां ?

अच्छा, अभी तुम्हारी बात है मां, जीव-जगत में तो सामयिक शांति, सामयिक अशांति ! दुनिया है न। जो दो लेकर ही, द्वन्द्व। द्वन्द्व माने अंधकार में। दो से जो क्षरित होता दुःख भी। क्षणिक सुख, क्षणिक दुःख, तो दो लेके जहां—दुनिया में—है ही। मनमाना राज्य में जहां।

हां, मनोराज्य के अंतर्गत शांति-शांति के लिए मां, नाना सेवा में व्रती है न ? भगवान ही केवल सेवा ले रहे हैं, नाना भावरूप में—यह भावना मन में दृढ़ रूप से रक्षित रखे। सेवा करनेवाले की भी सदा ही भगवान के पास अपना लक्ष्यपूर्ण होने के लिए कृपा-प्रार्थना करणीय ही है।

निष्काम सेवा अगर क्रमगति से ठीक बने, आगे चलकर जो स्थिति वह हो, तो सत्य-स्वरूप स्वयं भगवान, सेव्य सेवक कौन है—अपनेको पकड़ा देते हैं।

अपना बाजा मदालसा मां ने जैसा बजाया, वैसा सुना।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

'भारतीय नारी माता है'

सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

जब यह कहा जाता है कि नर और नारी पुरुष और प्रकृति की भांति हैं, तो इसका अभिप्राय यह होता है कि वे एक-दूसरे के पूरक हैं। मानव-जाति में नर-नारी का लिंग-भेद होने के कारण श्रम को विभाजन करना आवश्यक हो गया है। कुछ कार्य ऐसे हैं, जिन्हें पुरुष नहीं कर सकते। इस प्रकार का विशेष कार्य का कौशल स्त्रियों को उनके नारीत्व से वंचित नहीं करता और न इससे नर और नारी के स्वाभाविक संबंध ही विगड़ने पाते हैं। पुरुष स्रष्टा है, नारी प्रेमिका। नारी के विशेष गुण हैं दया और कोमलता, शांति और प्रेम, समर्पण और वलिदान। पाशविकता, हिंसा, क्रोध और विद्वेष उसके स्वाभाविक गुण नहीं हैं। पुरुष का प्रभुत्व स्वाभाविक नहीं है। ऐसे अनेक युग और समाज के रूप रहे हैं, जिनमें पुरुष का प्रभुत्व उतना सुनिश्चित नहीं था, जितना हम अज्ञानवश मान लेते हैं। चारुता के परिणाम स्त्रियों की पुरुषोचित गुणों की अपेक्षा कहीं अधिक अच्छी तरह रक्षा कर सकते हैं। स्त्री और पुरुष में अन्तर आवश्यक हैं और उनका प्रयोजन पारस्परिक शिक्षण है। नारी मूलतः पुरुष की शिक्षक है, तब भी जबकि वह बच्चा होता है और उस समय भी जबकि वह बयस्क हो जाता है। 'ऐतरेय ब्राह्मण' में कहा गया है, "क्योंकि पिता फिर अपनी पत्नी से उत्पन्न होता है (जायते पुनः), इसीलिए वह 'जाया' कहलाती है। वह उसकी दूसरी माता है।" 'गीतगोविन्द' उस श्लोक से प्रारंभ होता है, जिसमें राधा से कृष्ण को घर ले जाने का अनुरोध किया गया है, उसके स्वभाव की पूर्णता को आगे बढ़ाने के लिए, क्योंकि वह भीरु बालक है।

जब आकाश बादलों से काला पड़ जाता है, भविष्य का मार्ग घने वन में से होता है, जब हम अंधकार में बिल्कुल अकेले होते हैं, प्रकाश की एक भी किरण नहीं दीख पड़ती और जब सब ओर कठिनाइयां-ही-कठिनाइयां होती हैं, तब हम अपने-आपको किसी प्रेममयी नारी के हाथ में छोड़ देते हैं।

नारी शिशु को 'दुहितृ' नाम दिया गया है। इस शब्द से ध्वनित होता है कि स्त्री का मुख्य काम गाय दुहना है। बुनना, सिलाई-कढ़ाई भी बहुत महत्त्वपूर्ण समझी जाती थी। ब्राह्मण कन्याओं को वेदों की शिक्षा दी जाती थी और क्षत्रिय वर्ग की कन्याओं को धनुष-बाण का प्रयोग सिखाया जाता था। भारत की मूर्तियों में कुशल अश्वारोही स्त्रियों की सेना का चित्रण है। पतंजलि ने माला चलानेवाली महिलाओं (शक्तिकी :) का उल्लेख किया है। मैगस्थनीज ने चंद्रगुप्त की अंगरक्षक अमेज़न महिलाओं का वर्णन किया है। कौटिल्य ने महिला धनुर्धरों की चर्चा की है। (स्त्री गणैः धन्विभिः)। घरों में और भारत के वन-विश्वविद्यालयों (आश्रमों) में लड़कों और लड़कियों को साथ-साथ शिक्षा दी जाती थी। बाल्मीकि के आश्रम में आत्रेयी राम के पुत्र लव और कुश के साथ पढ़ा करती थी। संगीत, नृत्य और चित्रकला आदि ललित-कलाओं की शिक्षा लड़कियों को विशेष रूप से दी जाती थी।...

हाल के दिनों में भी स्त्रियों ने यह सिद्ध कर दिखाया है कि वे उन कामों को कुशलता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

से कर सकती हैं, जो सामान्यता पुरुषों को सौंपे जाते हैं।

फिर भी आज तक यही दृष्टिकोण जड़ जमाये हुए है कि बौद्धिक योग्यता की दृष्टि से स्त्रियां पुरुषों से घटिया होती हैं। अपेक्षाकृत दुर्बल और सुकुमारी हैं और इसलिए उन्हें रक्षा की आवश्यकता है।

जबतक घर मानव-जीवन का केन्द्र है तबतक स्त्री सबसे महत्त्वपूर्ण सदस्य बनी रहेगी। परन्तु घर का स्थान शनैः-शनैः होटल ले रहा है, किसान की कुटिया का स्थान होटल के कमरों के फ्लेट लेते जा रहे हैं। हम एक आवारा जीवन बिता रहे हैं, परन्तु हिन्दू आदर्श यह है कि परिवार को अटूट बनाये रक्खा जाय। मनुष्य की जड़ अपने देश में ही जमी होती है। भारतीय नारी माता है।...

शास्त्रों में कहा गया है कि पत्नी पति की अर्द्धांगिनी और जीवन के उद्देश्यों की साधना में उसकी सहचारिणी है।...

प्रत्येक पीढ़ी में भारत में ऐसी करोड़ों स्त्रियां होती रही हैं, जिन्हें यद्यपि कोई यश नहीं मिला, फिर भी जिनके दैनिक अस्तित्व ने मानव-जाति को सभ्य बनाने में सहायता दी हैं और जिनके हृदय का जोश, आत्म-बलिदानी उत्साह, आडम्बरहीन निष्ठा तथा कठिनतम परीक्षा की घड़ी में कष्ट-सहन की क्षमता, हमारी नारी-जाति के गौरव की वस्तुओं में से है। स्त्रियां माता के रूप में वर्तमान व्यवस्था के अत्याचार और अन्याय के प्रति और भी अधिक सचेत होती हैं, आत्मा में एक गहरा और दूरगामी परिवर्तन ला सकती हैं और उसे एक नई जीवन-शैली का रूप दे सकती हैं। जिस दिन ऐसा होगा, उसी दिन 'नवीन-मानव' का जन्म होगा।[1]

१. 'हिन्दू-समाज में नारी' लेख का अंश, ज्ञानवती दरबार द्वारा अनूदित।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रसिद्ध भारतीय नारियां : प्राचीन

अ

अक्षमाला : पुनर्जन्म को प्राप्त वशिष्ठ की पत्नीअरुंधती (म. उ. ११७. ११ कुं.)

अंगजा : ब्रह्मा की कन्या। (मत्स्य. ३. १२)

अच्छोदा : अच्छोद सरोवर का निर्माण करनेवाले अग्निष्वात पितरों के वंश में उत्पन्न। यही कालांतर में सत्यवती के नाम से प्रसिद्ध हुई। (ब्रह्मांड. ३. १०. ५४. ७४; म. आ. ६४. ९४ कु.)

अजामुखी : लंका के अशोक वन में सीता की देखरेख के लिए रखी गई बकरी जैसे मुखवाली एक राक्षसी। (वा. रा. सु. २४)

अजिह्विका : अशोक वन में सीता के पास रखी गई बिना जीभवाली एक राक्षसी। तात्पर्य कदाचित् सदा चुपचाप आज्ञापालन करनेवाली परिचारिका से है। (म. १. २८०)

अंजना : पूर्वजन्म में यह पुंजकस्थली नामक अप्सरा थी। शाप के प्रभाव से कुंजर नामक वानर की कन्या बनकर जन्मी। केसरी नामक वानर की पत्नी। (शिव. शत. २०)

कहीं इसे गौतम ऋषि की कन्या भी कहा गया है। (भवि. प्रति. ४. १३) इसने मतंग ऋषि के कहने पर पति के साथ वेंकटाचल पर्वत के पुष्करणी तीर्थ में स्नान करके वाराह और वेंकटेश को प्रणाम किया; आकाशगंगा के तट पर वायु की आराधना की। एक हजार वर्ष के तप से वायु के द्वारा उसके मारुति नामक पुत्र प्राप्त हुआ। (स्कंद २. ४०) अंजनी भी इसीका नामांतर है। इसे इच्छा-रूप धारण करने की शक्ति प्राप्त थी। (वा. रा. कि. ६६)

अदिति : मित्रवरुण और अर्यमा की माता (ऋ. ८. ४. ७९; ८. २५. ३; १०. ३. ८३)। पौराणिक कथाओं के अनुसार अदिति प्राचेतस दक्ष प्रजापति की कन्या और कश्यपपत्नी है। पर वेदों में यह विष्णु की पत्नी कही गई है। देवगण, अदिति, आप तथा पृथ्वी की संतान हैं। अदिति को द्यौ और पृथ्वी से एक रूप माना गया है। अनेक स्थानों पर इसे भिन्न लेखा गया है। गाय को भी अदिति नाम दिया है। ऋग्वेद में पृथ्वी के चंद्र की तुलना अदिति के दुग्ध से की गई है। अदिति द्वादश आदित्यों की माता है; इसलिए तेज-प्राप्ति के लिए उसकी प्रार्थना की जाती है।

विष्णु की माता। तैत्तरीय संहिता में इसके आठ बड़े ही बलवान पुत्रों का उल्लेख है। इनको अष्टवसु कहा है। महाभारत के अनुशासन पर्व में इसे विष्णु की माता कहा है और कहा है कि विष्णु के पहले इसके ग्यारह अन्य पुत्र हो चुके थे। नरकासुर द्वारा अदिति के कुंडलों को चुरा ले जाने की कथा प्रसिद्ध है। कृष्ण नरकासुर का वध करके इन कुंडलों को वापस लाये थे। (म. उ. ४८)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अदृश्यंती : मैत्रावरुणि वसिष्ठ-पुत्र शक्ति की पत्नी। पराशर ऋषि की माता। महाभारत अनुशासन पर्व में चित्रमुख नामक वैश्य की कन्या, इसे तपबल से ब्राह्मणत्व प्राप्त हो गया था।

अनंती : शतरूपा का नामांतर।

अनपाया : कश्यप व मुनि की कन्या; आर्द्रका की बहिन।

अनला : रोहिणी की दो कन्याओं में से एक; शुकी की माता। वाल्मीकि रामायण के अनुसार विश्वावसु नामक राक्षस की पत्नी।

अनसूया : ब्रह्मा के मानस-पुत्र अत्रि ऋषि की पत्नी। गरुड़ पुराण के अनुसार दक्ष-कन्या। कर्दम और देवहुती की पुत्री। सुप्रसिद्ध पति-व्रता। ३०० वर्ष तप करके शंकर को प्रसन्न किया। दत्तात्रेय, दुर्वासा और चंद्र तीन पुत्र। चित्रकूट की गंगा, मंदाकिनी इसीने प्रवाहित की। राम के वनगमन के समय अत्रि के आश्रम में उनका आतिथ्य किया।

अनुमति : अंगिरा ऋषि और श्रद्धा की चार कन्याओं में से कनिष्ठ। आदित्यों में से धातृ आदित्य की पत्नी।

अनुम्लोचा : एक अप्सरा—भाद्रपद के आदित्य के साथ रहती है। (भा. १२. ११)

अनुराधा : दक्ष व असिन्की कन्याओं में से एक। सोमपत्नी।

अनूचाना : कश्यप और प्राधा से उत्पन्न अप्सराओं में से एक। (म. आ. १३२)

अनौपम्पा : वाणासुर की पत्नी।

अपर्णा : महादेव की पत्नी, हिमालय की कन्या। पूर्वपति महादेव की प्राप्ति की इच्छा में केवल पत्तों को आहार बनाया। उद्देश्य प्राप्ति न होने पर पत्तों का आहार भी वंद किया; इसीलिए अपर्णा कहलाई। तपस्या के वाद यही उमा कहलाई। (ह. वं. १.१८)

अपहारिणी : ब्रह्मधाना नामक राक्षस की कन्या। अम्बुक, केलि, क्षम, धृति, ब्रह्मपेत, यज्ञहा, यज्ञावेत श्वात व सर्प इसके भाई और अपहारिणी, क्षमा, महाजिह्वा व रक्तकर्णी वहनें थीं।

अपाला : अत्रि की कन्या। ब्रह्मज्ञानी; किंतु कुष्ठ रोग के कारण इसे पति ने छोड़ दिया था। मायके में रहकर इन्द्र को प्रसन्न करने के लिए तप किया और इन्द्र ने प्रसन्न होकर इसे रोग-मुक्त किया (ऋ. ८. ९१)

अभिमती : अदिति के अष्टवसु कहलानेवाले आठ पुत्रों में से द्रोणवसु की पत्नी।

अमला : वैवस्वत मन्वन्तर में अत्रि ऋषि की प्रसिद्ध ब्रह्मनिष्ठ कन्या।

अमावास्या : पुरुरवा के वंश में दो अमावसु हुए। एक पुरुरवा के पुत्रों में से था। दूसरे अमावसु के वंश में कुशा से उत्पन्न पुरुष कान्यकुब्ज ब्राह्मणों का मूल पुरुष माना गया है। ब्रह्म-पुराण, विष्णुपुराण, हरिवंश पुराण आदि कई स्थानों में उल्लेख और वंशावली मिलती है। पूर्वजन्म में अच्छोद की कन्या अमावसु अमावास्या कहलाती थी। वही कालांतर में मत्स्या, काली, सत्यवती आदि हुई। (मत्स्य. १४)

अमोघा : शन्तनु ऋषि की पत्नी। लोहित नामक तेजस्वी तीर्थाधिपति की निर्माण-कर्त्री।

अंवा : काशिराज की कन्याओं में सवसे वड़ी। भीष्म ने उसे स्वयंवर में जीतकर उसका विवाह विचित्रवीर्य से करवाना चाहा था। (म. आ. १०२; म. उ. १८६)

अंवालिका : काशिराज की तीन कन्याओं में कनिष्ठ। विचित्रवीर्य की भार्या। व्यास से उत्पन्न पुत्र, पाण्डु की माता।

अंविका : काशिराज की मंझली कन्या।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विचित्रवीर्य की पत्नी। व्यास से उत्पन्न पुत्र, धृतराष्ट्र की माता।

अंभिणी : इसने सूर्य से ब्रह्मविद्या सीखी थी।

अरजा : उशनस शुक्र की कन्या। दंडकारण्य में भार्गव ऋषि के आश्रम में रहकर गौरवास्पद बनी (वा. रा. अर. ६९)

अरिष्टा : प्राचेतस दक्ष प्रजापति व असिन्की की कन्या। कश्यप की पत्नी। यह प्राधा नाम से भी विख्यात है। (म. आ. ६६)

अरुणा : कश्यप और प्राधा की कन्या।

अरुंधती : (२९) कर्दम प्रजापति और देवहुती की कन्या। वशिष्ठ की पत्नी (भा. ३. २४) वायुपुराण, ब्रह्मांडपुराण आदि के अनुसार कश्यप की लड़की जिसने गौरीव्रत करके पतिरूप में वशिष्ठ को प्राप्त किया था। एक कथा के अनुसार मेधातिथि मुनि की कन्या जिसे ब्रह्मा की प्रार्थना मानकर सावित्री ने उत्तम शिक्षण दिया और बाद में उसका विवाह वशिष्ठ से संपन्न किया। (कालि. २३) कहते हैं, भगवान शंकर से इसने लगातार बारह वर्ष तक विभिन्न विषयों पर इतनी अच्छी तरह चर्चा की कि इतने काल के निकल जाने का पता ही नहीं चला। (म. श. ४८)

अरूपा : कश्यप प्राधा की पुत्री।

आर्द्रका : कश्यप और मुनि की कन्या जो शापवश मछली हो गई थी। मत्स्य नामक राजा इसका पुत्र और मत्स्यगंधा इसकी कन्या थी। (म. आ. ६४)

अर्चिष्मती : बृहस्पति की दूसरी पत्नी शुभा से उत्पन्न सात कन्याओं में से एक।

अलक्ष्मी : कालकूट के बाद समुद्र से निकली शक्ति; इसका मुख कृष्ण, आंखें लाल और केश पीले थे। यह वृद्धा थी। उद्दालक ऋषि की पत्नी। उद्दालक मद्यपायी ऋषि थे। वह इसे छोड़कर चले गये। तब इसे विष्णु ने पीपल के वृक्ष के मूल में रहने को कहा। तब इस अलक्ष्मी की पूजा लक्ष्मी को प्राप्त करनेवाली बन गई। (पद्म. उ. ११६)

अलंबुषा : कश्यप व प्राधा की कन्याओं में से एक।

अलंबुसा, अवलंबुसा : एक देवी; बाद में कृतवर्मा राजा के घर जन्मी। वहां मृगवती कहलाई। जमदग्नि ऋषि का आशीर्वाद पाकर पूर्व-स्थिति को प्राप्त हुई। (स्कंद, ३. १. ५)

अशना : बलि की पत्नी (भा. ६. १८) बाणासुर आदि सौ बलवान पुत्रों की माता। (भा. १०. ६३)

अशोक सुंदरी : कल्पवृक्ष की कृपा से प्राप्त पार्वती की अत्यंत सुंदर मानस पुत्री। इसका विवाह सोमवंश के राजा नहुष से हुआ था। (पद्म. भू. १०२.११७)

अश्विनी : सोम की विवाहित दक्ष प्रजापति की सत्ताईस स्त्रियों में से एक। सत्ताईस नक्षत्र इन्हींके नामों पर हैं। (म. आ. ६७. १६ कुं.)

असिन्की : प्राचेतस दक्ष की पत्नी। पंचजनप्रजापति की कन्या होने से पांचजनी कहलाई।

असिता : कश्यप व मुनि की एक कन्या।

असिपर्णिनी : कश्यप और मुनि की कन्या।

असुरा : कश्यप व प्राधा की कन्या—एक अप्सरा।

अस्ति : जरासंध की दो कन्याओं गें बड़ी। प्राप्ति इसकी छोटी बहन। दोनों का विवाह कंस से हुआ था। कंस-वध के बाद दोनों ही मायके में रहने लगी थीं। (भा. १०. ५०; म. स. १४. ३२ कुं.)

अहल्या : पूरा नाम अहल्या मैत्रेयी (श. ब्रा.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

३. ३. ४. १८, जै. ब्रा. २०७९; ष. ब्रा. १०१) पिता का नाम मुद्‌गल। (भा. ९. २१) वध्यश्व की मेनका से उत्पन्न कन्या। (ह. वं. ३२) ब्रह्म की मानस-पुत्री (ब्रह्म ८७) अहल्या का अर्थ होता है किसी भी प्रकार के दोष से हीन ब्रह्मा की सर्वथा निर्दोष कन्या। यह गौतम की पत्नी हुई। इंद्र ने इससे छल किया। गौतम ने जब इसे जाना तो क्रोध में आकर इसे शिला रूप दे दिया। बाद में स्वयं गौतम ने अपनी त्रुटि समझकर कोटितीर्थ में इसकी मुक्ति के लिए तप किया। (वा. रा. बा. ४८) (आ. रा. सार. १०३ स्कंद १. २. ५२ गणेश १०३)

आ

आंगिरसी : आठ वसुओं में से प्रभास की पत्नी। बृहस्पति की बहिन (भा. ६. ६. १५)

आंगी : अपराचीन-पुत्र अरिह की पत्नी। पुत्र का नाम महाभौम (म. आ. ६३) अरिह को अमिताभ देवों में से एक कहा गया है।

आकूति : स्वायंभुव मनु और शतरूपा की तीन कन्याओं में से एक। रुचि ऋषि की पत्नी। यज्ञ और दक्षिणा की माता (भा. १. ३. १२; विष्णु ३. १. ३६)

आत्रेयी : अत्रि ऋषि की कन्या। अग्निसुत्र अंगिरा की पत्नी। दत्त, दुर्वासा और सोम नामक भाइयों की बहिन। इसके पुत्र आंगिरस कहलाते हैं। पति का व्यवहार अकारण क्रूर था। सास से शिकायत करने पर उसने सलाह दी कि अंगिरस अग्निपुत्र होने के कारण अतिशय तेजस्वी है। उसे जबल रूप से स्नात करके शांत कर। तब आत्रेयी ने पुष्करणी नदी बनकर पति को शांत किया और फिर गंगा की सहायक नदी बन गई। (ब्रह्म. १४४)

आम्भृणी : वाच् आम्भृणी। एक सूक्त दृष्ट्री (ऋ० १०. १२५. ५. ७)

आप् : वरुण की पत्नी। अग्नि से इसे पृथ्वी व आकाश ऐसी दो संतान प्राप्त हुईं। (तै. स. ५. ५४)

आयति : मेरु कन्या, नियति की बहन व धातृऋषि की पत्नी।

आरुणि : मनुकन्या; च्यवन ऋषि की दो पत्नियों में से एक।

आर्द्रा : सोम की सत्ताईस पत्नियों में से एक। ऊर्व ऋषि की माता। सत्ताईस नक्षत्रों में से भी एक। (म. आ. ६७)

आलंवी : कश्यप और खशा की कन्या।

आश्माकी : प्राचीन्वत की पत्नी। यादव कन्या। शर्याति की माता (म. आ. ६३. १२ कुं)

आश्लेषा : सोम की सत्ताईस स्त्रियों में से एक। एक नक्षत्र।

आसुरी : देवताजित् की स्त्री। देवद्युम्न की माता।

आहुकी : पुनर्वसु राजा की कन्या व आहुक की बहिन।

इ

इंद्रा : गिरेरवसर्पण के बाद मनु द्वारा संतति के लिए किये गए यज्ञ के फलस्वरूप उत्पन्न कन्या। इसीने गार्हपत्य दक्षिणाग्नि और आहवनीय अग्नियों की स्थापना की (श. ब्रा. १. ६. ३. ७. ११; तै. ब्रा. १. १. ४)

इंदुमती : सिंहलद्वीप के चंद्रसेन राजा की कन्या मंदोदरी। इसने 'पुरुष कपटी होते हैं,' ऐसा कहकर राजा सुधन्वा से विवाह की माता द्वारा की गई योजना को अस्वीकार कर दिया था। (दे. भा. ५. १७.१८)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सोमवंशीय आयु राजा की स्त्री (पद्म. भू. १०४)

इंद्रसेना : नल और दमयंती की कन्या। (म. व. ५७) पांचालवंशीय, ब्रहिष्ठ राजा मुद्गल की पत्नी। (ऋ. १०. १०२. २)

इंद्रस्नुषा : की ऋचादृष्ट्री।(ऋ. १०. २८. १)

इंद्राणी : ऋग्वेद में इसकी अनेक रचनाएं हैं। (ऋ.१०. ८६. २; १०. १५९) पुत्र की कामना से गौरीव्रत करते ही इसे जयंत नाम का पुत्र हुआ। (भवि. ब्राह्म. २२) अन्य नाम शचि पौलोमी सूर्य से इसका संवाद प्रसिद्ध है। (म. अनु. १४. ५.६ कुं.)

इलविला : तृणविंदु अलंवुषा की कन्या (ब्रह्माणू ३. ८. ३९.४२)

इला : वैवस्वत् मनु की कन्या। (म. आ. ६३. ६९. ह. वं. १. १०; ब्रह्म ७. मत्स्य ११ भा. ९.१) बुध की पत्नी। पुरुरवा की माता। वायु की कन्या, उत्तानपाद ध्रुव की दूसरी स्त्री, इसका उत्कल नाम का पुत्र था। वसुदेवकी स्त्रियों में से एक।

प्राचेतस दक्ष प्रजापति व आसिन्की की कन्या। समस्त वृक्षादि इसीकी प्रजा हैं। (६. ६) भागवत के सिवा इसका नाम सर्वत्र 'इरा' मिलता है।

उ

उग्रदंष्ट्री : (स्वा. प्रिय) मेरु की कन्या व आग्नीध्रपुत्र हरिवर्ष की पत्नी।

उग्रंपश्या : एक अप्सरा (तै. आ. २. ४)

उग्रसेना : अक्रूर की पत्नियों में से एक। अक्रूर पर कंस, बलराम और कृष्ण समान रूप से विश्वास रखते थे।

उग्रा : सिंधु नामक दैत्य की माता। (गणेश २. १२४)

उत्कचा, उत्कचोत्कृष्टा व उत्कटा : कश्यप और खशा की कन्या।

उत्कला : ऋषभदेव के वंशज सम्राट् नामक राजा की स्त्री; मरीचि की माता।

उत्तमा : मगधदेश के राजा। देवदास की पत्नी। यमुना में स्नान करके मुक्ति पाई। (पद्म उ. २१९)

उत्तरा : सोम की २७ स्त्रियों में से एक। एक नक्षत्र।

विराट् राजा की कन्या। अभिमन्यु की पत्नी। परीक्षित की माता।

उन्नति : दक्ष और प्रसूति की कन्या। धर्म की पत्नी। (भा. ३. १२. ५४)

उपचित्रा : (सो. वृष्णि) वसुदेव की मदिरा से उत्पन्न कन्या।

उपदानवी : मायासुर की तीन कन्याओं में सबसे बड़ी। हिरण्याक्ष की पत्नी।

उपदेवा : कृष्ण के पिता वसुदेव की पत्नी। इसके कल्प इत्यादि दस पुत्र थे।

उमा : हिमालय और मैना की कन्या। भगवान् रुद्र की पत्नी (पद्म सृ ९) उपनिषदों में विद्या को उमा हैमवती कहा है। (जै० उ. क्रां ४. २०. १२)

उम्लोचा : एक अप्सरा (म. आ. १३२ कुं)

उर्मिला : सीरध्वज जनक की कन्या। सीता की बहिन। लक्ष्मण की पत्नी।

उर्वरा : एक अप्सरा (म. अनु. ५० कुं.)

उर्वशी : ऋग्वेदकाल से प्रसिद्ध अप्सरा। ऋग्वेद के दसवें मंडल का उर्वशी-पुरुरवा-संवाद प्रसिद्ध है। अर्जुन के जन्म के समय हुए आनन्दोत्सव में भाग लेनेवाली ग्यारह अप्सराओं से एक (म. आं सूत्र) यह सदा कुबेर की सभा में (म. स. १८) रहती थी। यह ब्रह्मवादिनी भी थी।(ब्रह्मा उ. २.३३)

उलूकी : कश्यप और ताम्रा की कन्या। (म. आ. ६६)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उलूपी : ऐरावत नामक नागकुल के कौरव नामक नाग की कन्या। ऐरावत के पुत्र की पत्नी। (म. आ. २१४ भी। ९० के) बालविधवा। अनंतर अर्जुन से गांधर्व विधि से विवाह। जब पांडवों ने महाप्रस्थान किया तब उलूपी उनके साथ गई थी; बाद में इसने गंगा में कूदकर देहत्याग किया। (म. महा. १.)

उषा : बलि दैत्य के पुत्र बाणासुर की कन्या। इसका विवाह अनिरुद्ध से हुआ था (पद्म. उ. २५०; भ्रा १०६२-६३ शिव रु. यु. ५१.५९)

ऊ

ऊर्जस्वती : प्रियव्रत व बर्हिष्मती की कन्या। शुक्र की पत्नी (भा. ५.१.२४)

ऊर्जा : दक्ष की कन्या। स्वायंभुव मन्वंतर के वसिष्ठ की पत्नी। इसके ७ पुत्र चित्रकेतु, सुरोचि, विरणामित्र, उल्वण, वसुमृत, यान और द्युमान थे (भा. ४. १. ३८) कहीं-कहीं अन्य बिलकुल ही भिन्न आठ पुंडरिका, रक्षस (राभ) गर्त, ऊर्ध्ववाहु, सवन, पवन, सुतपस और शंकु नामक पुत्रों का उल्लेख मिलता है। (ब्रह्मांड २. १२. ३९.४३)

ऊर्णा : स्वायंभुव मन्वंतर में मरीचिप्रजापति की स्त्री। २. चित्ररथ राजा की पत्नी, सम्राट् नामक राजा की माता (भा. ५. १५. १४)

ऊर्वशी : देखिए, उर्वशी।

ऋ

ऋक्षा : अजमीढ़ की स्त्री। कुरु के पिता संवरण की माता। (म. आ. ६३. ६३) संवरण ने वसिष्ठ की सहायता से पांचाल राजा से बदला लिया और फिर वसिष्ठ ने 'तपती' से इसका विवाह करा दिया। (म. आ. १७१-७४)

ऋची : आप्नवान की पत्नी (ब्रह्मांड. ३. १. ७४)

ऋद्धि : वैश्रवण (कुवेर) की पत्नी। कुवेर का रूप राक्षसों जैसा और बल असुरों जैसा कहा गया है। (ब्रह्मांड. ३. ८. ४०-४४)

ऋषिकुल्या : ऋषभ देववंशीय भूम की दो स्त्रियों में से एक। उद्‌गीथ इसका पुत्र था।

ए

एकपर्णा : हिमवान व मैना से हुई तीन कन्याओं में से दूसरी। अपर्णा और पर्णा अन्य बहनें। असितमुनि की पत्नी, देवल की माता। (ब्रह्मांड. ३. ८. २९-३३; १०, १-२१; ह. वं. १. १८)

एकपातला : कदाचित् एकपर्णा का नामांतर; इसके शंख और लिखित दो अयोनिज पुत्र कहे गये हैं।

एकपादा : सीता के संरक्षण के लिए रखी गई राक्षसियों में से एक (म. व. २८०)

एकलोचना : सीता के संरक्षण में रखी गई राक्षसियों में से एक (म. व. २८०)

एकांगी : एक ग्वालिन जिसे गौव्रत रखने के फलस्वरूप ऐश्वर्य मिला। (स्कंद २. ४. ९)

एकादशी : विष्णु की देवमाया से निर्मित शक्ति, तालजंघ के पुत्र मुर दैत्य को मारा। तब विष्णु ने इसे सर्वपापनाशिनी एकादशी का नाम दिया।

एकानंगा : यशोदा की कन्या; कृष्ण की बहिन।

एकानेका : अंगिरस की कन्या, दूसरा नाम कुहू (म. न. २२१)

एकावली : एकवीर नामक राजा की स्त्री। रम्य राजा तथा रुक्मेरखा की कन्या।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ऐ

ऐक्ष्वाकी : (सो) भूमन्यपुत्र सुहोत्र की स्त्री। इसे सुहोत्र से अजमीढ़, सुमीढ़ और पुरुमीढ़ नामक पुत्र हुए (म. आ. ९४)

ओ

ओघवती : प्रतीक की कन्या। सुदर्शन की पत्नी। (भा. ९. २)

२. (सू. नृग) ओघवत राजा की कन्या, ओघरथ की बहन (म. अनु. २)

क

कंसवती : उग्रसेन की कन्या। कंस की बहन। वसुदेव के भाई देवश्रव्य की पत्नी। सुवीर और इषुमान की माता। (भा. ९-२४)

कंसा : उग्रसेन की कन्या। वसुदेव के भाई देवभाग की पत्नी। (भा. ९-२४) चित्रकेतु, बृहद्ब और उद्धव की माता।

कंसारी : याज्ञवल्क्य की बहन। बृहस्पति के शाप से इसे अपने भाई से पिप्पलाद पुत्र हुआ। (स्कंद ५. ३. ४२)

पिप्पलाद ने सोम से समस्त विद्या प्राप्त की थी।

ककुभ : धर्म मुनि की अरुंधती नामक पत्नी का दूसरा नाम। यह दक्षकन्या थी। (भा. ३. ६)

कंका : उग्रसेन की कन्या। कंस की भगिनी। वसुदेव के भाई आनक की स्त्री।

कंकी : विष्णु-मतानुसार उग्रसेन की कन्या।

कंजाजना : राम के पुत्र लव की स्त्री।

कंडू : कलिंग की कन्या और अक्रोधन की पत्नी। देवातिथि की माता। (म. आं. ६३)

कणीशा : कश्यप और क्रोधा की कन्या। प्रजापति पुलह की पत्नी।

कपिला : दक्ष और असिक्नी की पुत्री। कश्यप की पत्नी।

२. पंचशिख ऋषि की माता (नारद १. ४५)

कवंधी : पंचशिख मुनि की माता। (देखिए, कपिला २)

कमला : वल्लभभीम की पत्नी। (गणेश १. १९; ४०)

कयाधू : तारक के जम्भासुर नामक सेनापति की कन्या। हिरण्यकशिपु की पत्नी। प्रह्लाद की माता। इसे नारद ने उपदेश दिया था, जिसे गर्भस्थित बालक प्रह्लाद ने याद रखा (भा. ६. १८.; ७. ७)

करेणुमती : पाण्डुपुत्र नकुल की पत्नी। शिशुपाल की कन्या।

कर्कटी : हिमालय के उत्तर में रहनेवाली एक राक्षसी। इसे जन-संहार का वर प्राप्त था। इसने बाद में हिंसा छोड़कर हिमालयवास किया। तब इसका नाम कंदरावती पड़ा। (यो. वा. ३. ६८. ८४)

कर्णिका : एक अप्सरा। २. वसुदेव के भाई कंक की पत्नी। ऋतुधामन और जय की माता।

कलहा : सौराष्ट्र के शिशु नामक ब्राह्मण की पत्नी।

कला : कर्दम प्रजापति व देवहूति की ९ कन्याओं में पहिली। मारीच मुनि की पत्नी। (भा. ३. ४. १)

कल्याणिनी : धर नामक वसु की स्त्री।

कवषा : एक मुनिपत्नी, तुर मुनि की माता।

कव्हा : (सो-कुकुर) वायुमत से उग्रसेन की कन्या है।

काकी : कश्यप और ताम्रा की कन्याओं में से एक।

कांचनमालिनी : एक अप्सरा। प्रयाग में माघस्नान करके मुक्त हुई। (पद्म उ. १२७)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कात्यायनी : याज्ञवल्क्य की दो स्त्रियों में से एक (ब्र.उ. २. ४; ३. ४; ५. १)

कान्तिमती : भरतपुत्र पुष्कल की पत्नी। (पद्म पा. १२)

कामकंटका : घटोत्कच की पत्नी। इसने प्रण किया था कि जो व्यक्ति मुझे बुद्धि और बल में जीतेगा, उससे विवाह करूंगी। घटोत्कच ने इसे जीता। (स्कंद० १. २. ५९. ६०)

कामा : देवी। इसने कामकंटका को अपराजेय बना दिया था; किंतु घटोत्कच ने इसको जीत लिया।

कामायनी : श्रद्धा का नाम। सूक्त दृष्टी (ऋ. १०. १५१)

२. कर्दम प्रजापति और देवहूति की कन्या।

३. अंगिरा ऋषि की पत्नी, दक्ष प्रजापति और प्रसूति की कन्या।

४. धर्म प्रजापति की पत्नी। शुभ की माता।

६. सूर्य की पुत्री।

७. वैवस्वत मनु की पत्नी।

काम्मा : कर्दम प्रजापति की कन्या (म. आ. १३२)

कामोदा : क्षीर समुद्र से उत्पन्न कामोदा, रमा, वरा और वारुणि नामक कन्याओं में से एक। इसके हँसने से जो आंसू गिरते थे वे कमल हो जाते थे। यही तुलसी है।

कार्तिमती : शुक की कन्या व अणुह की पत्नी।

कालका : वैश्वानर दानव की कन्या। कश्यप प्रजापति की स्त्री (भा० ६६) एक मत के अनुसार मारीच नामक असुर की पत्नी। पर यह गलत है, क्योंकि कश्यप का एक नाम मारीच भी है। इसके कालकेय अथवा कालकंज नामक असंख्य पुत्र हुए।

काला : देवों की स्तुति से प्रसन्न होकर पार्वती ने शुंभ निशुंभ को मारने की जो शक्ति पैदा की थी इसीका नाम काला था। इसने धूम्रलोचन, चंडमुंड, रक्तबीज, व शुंभ और निशुंभ का वध किया। (दे. भा. ५.२२, ३१) इसी को काली, कालिका और कौशिकी भी कहा गया है। कश्यप की पत्नी। (देखिए, काष्ठा)

कालिंदी : श्रीकृष्ण की पत्नी। पूर्वजन्म में सूर्य-कन्या थी। यमुना-तट पर श्रीकृष्ण की प्राप्ति के लिए तप करने पर श्रीकृष्ण ने इसका पाणिग्रहण किया। (१०. ६. १)

काली : मत्स्य के पेट से उत्पन्न उपरिचर वसु राजा की कन्या। मत्स्यगंधा, योजनगंधा इसीके नामान्तर। यही बाद में सत्यवती कहलाई।

२. (देखिए दुर्गा)

३. भीम की पत्नी। सर्वगत की माता। (९. २२. ३१) काशी, कात्य, काशेयी इसके नामान्तर।

काश्यपी : (देखिए शिखंडिनी)

काश्या : भीम की पत्नी काली का दूसरा नाम।

काष्ठा : प्राचेतस दक्ष प्रजापति असिन्की की कन्या। कश्यप की पुत्री।

कीर्तिमती : शुक्राचार्य और पीवरी की कन्या। नीप अथवा अणुह राजा की स्त्री। पुत्र का नाम ब्रह्मदा। नामांतर कृत्वी।

कुटुम्बिनी : गणपति के भक्त कामंद वैश्य की पत्नी (गणेश १. ७. १२)

कुंडला : मदालसा की सखी। विंध्यवान की पुत्री। पुष्करमाली की पत्नी। उसका पति शुंभ के हाथों मारा गया था।

कुंती : यदुकुलोत्पन्न राजा शूर की कन्या और वसुदेव की बहन। (म. आ. ६८, २९ कुं) नामान्तर पृथा।

इसका जन्म कुंतिभोजक नामक नगर में हुआ। कुंतिभोज राजा की दत्तक पुत्री।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कुंतिभोज ने इसे अतिथि-सत्कार का काम सौंपा था। यह काम इसने सदा बड़ी कुशलता से किया। इसने अपने सत्कार-चातुर्य से दुर्वासा मुनि को प्रसन्न किया और दुर्वासा ने इसे एक मंत्र दिया, जिसके प्रभाव से यह किसी भी देवता को बुलाने में समर्थ बनी। कौतूहलवश उसने कुमारी रहते हुए ही सूर्य को बुला लिया और तब कर्ण हुआ। स्वयंवर में इसने पाण्डु को वरा। (म. आ. १११. ११२)

कुब्जा : दुर्दैव से बाल्यावस्था में ही विधवा हो गई। पर पुण्यकर्मों के कारण यह साठ वर्ष तक जीवित रही। नियम से प्रति वर्ष माघस्नान करती थी। इसे वैकुंठ लोक मिला। बाद में सुंदोपसुंद का वध करने के लिए तिलोत्तमा के रूप में अवतरित हुई। (पद्म उ. १२६)

२. कंस की दासी; शरीर में तीन स्थानों पर वक्र थी। कृष्ण की कृपा से यह विकृति ठीक हुई।

३. कैकेयी की दासी मंथरा का दूसरा नाम।

कुमारी : एक अप्सरा। पुरुरवा ने केशी नामक दैत्य को मारकर इसे उसके बंधन से मुक्त किया था।

२. जयंत की पत्नी (भवि. प्रति. ३.२३) (देखिए चित्रलेखा)

कुमुद्वती : राम के पुत्र कुश की पत्नी। अतिथि की माता (आ. रा. विवाह ४)

कुंभीनसी : बलि दैत्य की कन्या। बाणासुर की बहन। (मत्स्य. १८६)

२. सुमाली और केतुमती की कन्या। रावण की मां कैकसी की बहन।

३. माल्यवान की कन्या अनला की विश्वावसु से उत्पन्न कन्या। लवणासुर की माता।

४. पुष्पोत्कटा और विश्रवा ऋषि की कन्या।

५. चित्ररथ नामक गंधर्व की पत्नी।

६. अंगारपर्ण गंधर्व की पत्नी।

कुदला : हंसध्वज की कन्या और सुधन्वा की बहन।

कुसुमामोदिनी : पार्वती की मां की सखी (पद्म सृ. ४४)

पार्वती के मंदराचल पर तप करते समय इसके प्रताप से वहां किसीका भी प्रवेश असंभाव्य बन गया था। (पद्म सृ. ४४)

कुहू : अंगिरा और श्रद्धा की चार कन्याओं में से मंझली।

२. धात नामक आदित्य की पत्नी।

३. मायासुर की तीन कन्याओं में से एक।

कृत्तिका : प्राचेतस दक्ष की सोम को दी हुई २७ कन्याओं में से एक। एक नक्षत्र भी।

२. अग्निनाम वसु की पत्नी। स्कंद की माता (भा. ६. ६; मत्स्य ५. २७.)

कृत्वी : कृष्णद्वैपायन-पुत्र शुक की कन्या। कीर्तिमती इसीका दूसरा नाम। अजमीढ़ कुलोत्पन्न नीप अथवा अणुह राजा की स्त्री।

कृपी : (सौ. अज.) विष्णु, वायु और मत्स्य पुराणों के अनुसार यह सत्यधृति की कन्या थी। इसका पालन-पोषण शांतनु ने किया। द्रोणाचार्य की पत्नी। अश्वत्थामा की माता। (म. आ. १४०; विष्णु ४.२०, अग्नि २७७)

केतुमती : सुमाली राक्षस की पत्नी। रावण की मातामही।

केशिनी : कश्यप व प्राधा की कन्याओं में से एक (म. आ. ६६. २० कुं)

३. सगर की दो स्त्रियों में से एक। शैब्या और भानुमति नामांतर। (म. व. १०५. १० कुं) असमंजस की माता।

३. (सो. पु.) सुहोत्र के पुत्र आजमीढ़ की तीन स्त्रियों में से एक। (म. १०१. २० कुं)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

४. विश्रवा मुनि की पत्नी। रावण, कुंभकर्ण और विभीषण की माता। कैकसी नामान्तर (भा. ४. १. ३७. ७. १. ४३)

५. दमयन्ती ने चार बार इस दूती की चतुराई के बल पर नल का पता लगाया था।

६. अप्रतिम लावण्यमती एक राजकन्या जिसने स्वयंवर में सुधन्वा और प्रह्लाद-पुत्र विरोजन में कौन श्रेष्ठ है, यह प्रह्लाद से ही पूछा। प्रह्लाद ने सुधन्वा को अधिक वरीय कहा। किंतु सुधन्वा ने उदारता बरती और तब कैशिनी ने उसे वरा।

कैकसी : सुमाली राक्षस की कन्या। विश्रवा मुनि की पत्नी। रावण, कुंभकर्ण, शूर्पणखां और विभीषण की माता। (वा. रा. उ. ९; स्कंद ३.१. ४७)

कैकेयी : कैकय देश के अश्वपति राजा की कन्या व दशरथ की सबसे छोटी पत्नी, भरत की माता। युद्धक्षेत्र में एक वार राजा के प्राण बचाने पर राजा ने प्रसन्न होकर तीन वर दिये। (ब्रह्म १२३)। राम के राज्याभिषेक के समय इन्हींमें से उसने मंथरा की सलाह पर दो वर मांगे कि राम को वनवास और भरत को राजगद्दी दी जाय। भरत को जब पूरी घटना मालूम हुई तब वह मां पर अत्यन्त क्रुद्ध हुए। इसने भी सच्चे हृदय से पश्चात्ताप किया। भरत ने राम को वापिस घर लाने की जो योजना बनाई थी, उसे सफल बनाने की दृष्टि से यह भी कौशल्या और सुमित्रा के साथ गई थी। (वा. रा. ८३०५)

कोटरा : बाणासुर की मां (भा. १०. ६३. २०)

कौशिकी। जमदग्नि की माता सत्यवती। नदी में रूपान्तरित होने पर यह नाम पड़ा। (वा. रा. बा. २४. म. आ. २३५)

कौसला : कृष्णपत्नी सत्या का दूसरा नाम।

कौसल्या : कौसल देश के भानुमान राजा की कन्या और दशरथ की पटरानी। (वा. रा. अयो. ३१. २२. २३) रामचंद्र की माता। राम के राज्याभिषेक का समाचार इसे राम द्वारा ही मिला। कैकेयी को बताने स्वयं दशरथ गए थे। (वा. रा. अयो. ७३. १०) कैकेयी और उसके परिवार द्वारा वार-वार इसका अपमान होता था। (वा. रा. २०. ३९)। यह स्वभाव से मधुर थी। तुलना में कम मिलने पर भी प्रसन्न रहती थी। राम को स्वभाव के शील, शांति, स्थिरता आदि गुण माता से मिले थे।

२. काशिराज की कन्या अम्बिका का नामान्तर।

३. कृष्ण के पिता वसुदेव की एक पत्नी का नाम।

क्रिया : स्वायंभुव मन्वन्तर में दक्ष प्रजापति की कन्या। धर्ममुनि की पत्नी। (म. आ. ६७. १४. क.) योग इसका पुत्र है। साठ हजार वालखिल्य ऋषियों की माता।

३. कर्दम मुनि की नौ कन्याओं में से एक। ऋतु की पत्नी।

४. द्वादशादित्यों में से अंशुमान आदित्य की पत्नी।

क्रोधा : यह दक्ष प्रजापति की कन्या और कश्यप की स्त्री थी। इसका एक नाम क्रोधवशा भी था। इस नाम के कारण इसके पुत्र क्रोधवश कहलाए। (म. आ. ६६ कुं)

क्रौंची : कश्यप और ताम्रा की कन्या।

क्ष

क्षमा : दक्षकन्या व पुलह की पत्नी; वास्तुशास्त्र ब्रह्मधान की कन्या।

क्षेमा : एक अप्सरा। कश्यप और मुनि की कन्या।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ख

खसा : प्रचेतस दक्षप्रजापति व असिन्की की कन्या। कश्यप प्रजापति की पत्नी।

ख्याति : कर्दम और देवहुती की कन्या। भृगु की पत्नी।

ग

गंगा : एक स्वर्गस्थ देवता जन्हु अथवा भगीरथ के कारण जाह्नवी, भागीरथी आदि नामों से भी प्रसिद्ध है। अपने आठवें पुत्र भीष्म के साथ यह अंत में स्वर्ग गई। शांतनु को पिंडदान देने में गंगा ने भीष्म की सहायता की थी। (म. अनु. ८४) परशुराम से युद्ध करते समय भीष्म के रथ का सारथी गिर गया; तव इसने घोड़ों को वश में करके भीष्म का रक्षण किया। (म. उ. १८२) गंगा ने प्राचीमाधव नामक विष्णु से पूछा—मुझमें पापी स्नान करते हैं, उनके पाप मुझमें छूट जाते हैं। इन पापों से मेरी मुक्ति कैसे होगी। इसपर विष्णु ने इसे पूर्ववाहिनी सरस्वती में रोज स्नान करने की सलाह दी। यह स्नान इसके लिए असाध्य होने के कारण यह त्रिस्पृशा का उपवास करती थी। जिस तिथि को एकादशी, द्वादशी और त्रयोदशी एक साथ स्पर्श करें उसे त्रिस्पृशा कहते हैं। इसी उपवास से उसकी पापमुक्ति हुई। (पद्म उ. ३४)

गजमुक्ता अथवा गजमुक्तिका : गजसेन की कन्या, युधिष्ठिर के अंशभूत वलखानि की स्त्री। इसे गजमुक्ता ने स्वयंवर में चुना था। सामंतपुत्र रक्तबीज या मुंड से युद्ध में मारे जाने पर गजमुक्ता सती हुई। (भवि. प्रति. ४.२५)

गन्धर्व सेना : कैलास के स्वयंप्रभा नगर के धनवाहन नामक गन्धर्व की लड़की। सोमवार का व्रत रखने से कुष्ठमुक्त हुई। (स्कंद ७. १. २४-२५)

गन्धवती : सत्यवती का नामान्तर (म. आ. ६४ कुं)

गभस्तिनी : लोपामुद्रा की बहिन व दध्यच मुनि की पत्नी (ब्रह्म ११०-७) इसे नातिथेयी भी कहते हैं। (ब्रह्म. ११०-६१)

गयन्ती : नक्त के पुत्र गय की पत्नी (भा. ५. १५)

गांदिनी : काशिराज की कन्या। अनेक वर्ष गर्भ में रही। गोदान कराने पर जन्म हुआ। यदुवंश में विवाहित अक्रूर इत्यादि इसीके पुत्र थे। (वायु २.३४, ह. व.३४)

गांधारी, : गांधार देशाधिपति सवल राजा की कन्या (म. आ. ६३. ५८ कुं) इसे रुद्र से १०० पुत्रों की प्राप्ति का वर मिला था। धृतराष्ट्र की पत्नी। (म. आ. ११६. १० कुं) पति के अंधत्व के कारण अपनी आंखों पर सदा पट्टी बांधकर रखी। (म. आ. ११२ कुं)। इसके दुर्योधन इत्यादि सौ कौरव और एक दुःशला ऐसी एक सौ एक संतान हुईं।

महाभारत के बाद पुत्र-शोक से संतप्त गांधारी को व्यास ने सांत्वना दी और गांधारी ने द्रौपदी और कुन्ती को। (म. स्त्री. १५-१७) युद्ध के बाद यह पति-सहित पांडवों के साथ रहने लगी। भीम का व्यवहार इसके लिए उद्दण्ड था। इससे त्रस्त होकर यह विदुर और अपने पति के साथ वन में जाकर रहने लगी। वहीं इसने देहत्याग किया। (भा. १. १३. २७; ६, २२, २६; म. आफ १७-३९ कुं०)

गायत्री : पहले चाक्षुष मन्वन्तर में ब्रह्मदेव ने यज्ञ किया। उसमें शंकर, विष्णु इत्यादि देव तथा भृगु इत्यादि मुनि आये। यज्ञदेवों

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ने ब्रह्मदेव की स्वरा नामक पत्नी को बुलाया। वह किसी काम में लगी थी, उसके न आने पर देवताओं ने गायत्री को बुलाया। काम निपट जाने पर स्वरा जब वहां आई, तो अपने स्थान पर गायत्री को बैठा देख उसने सबको जड हो जाने का श्राप दिया। गायत्री ने भी स्वरा को वही शाप दिया। इसपर देवताओं ने जड का अर्थ बदलकर जल कर दिया और प्रत्येक नदी देवता होगी, ऐसा निश्चय किया। (पद्म सृ. १७) गायत्री मंत्र और गायत्री छंद की प्रशंसा ब्राह्मण, उपनिषद व महाभारत में है। (शा. छां. उ. ३. १२. १)

सूर्यमंत्र होने के कारण इसे सावित्री भी कहते हैं।

गार्गी वाचन्कवी : वचन्क मुनि की कन्या होने के कारण इसे गार्गी वाचन्कवी कहते हैं। यह ब्रह्मनिष्ठ थी और इसीलिए परमहंस कोटि की थी। देवराति जनक की सभा में याज्ञवल्क्य से इसका विवाद हुआ था। ऋग्वेद के वह्मयज्ञांग दर्पण में इसका उल्लेख है। (बृ. उ. ३. ६. १. ८. १; आश्व. मृ. ३. ४. ४; ज्ञां. गृ. ४. १०; अथर्व परि. ४३. ४. २३)

गिरिका : कोलाहल पर्वत और शक्तिमती नदी के संयोग से इसकी उत्पत्ति हुई। शक्तिमती नदी ने यह कन्या उपरिचरवसुराजा को दी। यह वृहद्रथ आदि छः पुत्रों तथा मत्स्यगन्धिनी नामक कन्या की मां थी। (म. आ. ६४)

गिरिजा : भगवान शंकर की पत्नी; तारकासुर के वध के लिए शंकर ने गिरिजा से विवाह किया। (भति. प्रति ४. १४; देखिए, दुर्गा)

गुणकेशी : इन्द्र के सारथि मातलि व उसकी स्त्री सुधर्मा की कन्या। इसने चिकूर नाग के पुत्र सुमुख से विवाह की इच्छा प्रकट की। पिता ने गरुड़ के भय को सोचकर इन्द्र से अमृत प्राप्त करके सुमुख को पिलाया और विष्णु ने भी गरुड़ से कहकर उनका वैर-भाव समाप्त करा दिया। तव सुमुख से इसका विवाह हुआ। (म. उ. ९७-१०५)

गुणवती : सिंहलद्वीप के चंद्रसेन राजा की पत्नी।

२. निम्न के पुत्र सत्राजित की कन्या, जो आगे सत्यभामा हुई। (पद्म, उ. ८८)

गृध्रिका : कश्यप और ताम्रा की कन्या।

२. अरुण की पत्नी। सम्पाति व जटायु की माता। (ब्रह्माण्ड ३. ७. ४४६)

गो : मानस की कन्या।

२. ब्रह्मदत्त राजी की पत्नी व देव ऋषि की कन्या।

३. सरस्वती शमीक ऋषि की पत्नी।

गोधा मंत्रदृष्टा (ऋ. १०. १३४. ६-७)

गोपाली : गार्ग्य की पत्नी। कालयवन की माता। कालयवन को उसके पिता ने यादवों का नाश करने के लिए शंकर की तपस्या करके पाया था। (ह. वं. २. ५२; विष्णु. ५. २३)

गौतमी : अश्वत्थामा की माता (भा. १७. ४७)

२. एक ब्राह्मण-स्त्री जिसने अपने पुत्र को मार डालनेवाले सर्प को भूतदया के कारण छोड़ दिया था।

गौरी : मत्स्य पुराण के अनुसार अन्तिना की कन्या। प्रतिरथ और सुवाहु की वहिन। मान्धाता की माता।

२. (देखिए, दुर्गा)

ग्राव : (दक्ष प्रजापति की कन्या। कश्यप प्रजापति की पत्नी। कश्यप प्रजापति की अन्य-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पत्नियां—अदिति, अरिष्टा, इरा, कद्रू, कपिला, कालका, काला।

घ

घृताची : कश्यप की स्त्री प्राधा से हुई अप्सराओं में से एक। (म. आ. १८०. कुं) यह प्रति माघ मास में सूर्य के साथ घूमती है। (भा. १२-११-३६) व्यास से शुक्र की माता (म. आ. ५. ६. कुं.)

घोषा : कक्षीवान की कन्या (क. १०. ३६-४०) कुष्ठ रोग होने के कारण अविवाहित अवस्था में पिता के यहां रहना पड़ रहा था। अश्विनीकुमारों की कृपा से रोगमुक्त हुई। (अ. १०. ३६. ३. ४. ५.) शत्रु को पराजित करने के लिए इसकी प्रार्थना की जाती है। (ऋ. १०. ४०. ५)

च

चंचला : एक वैश्या। विष्णु के मंदिर में इसने सहज ही अंगुली को चूने में भिगोकर दीवार पर छाप लगा दी, इसी कारण मुक्त होकर वैकुंठ गई। (पद्म ब्र. ६)

चंडिका : देखिए दुर्गा।

चंडी : उद्दालक की पत्नी (जै. अ. १६) बाद में कौसल्या होकर जन्मी (पद्म. उ. १०६-७)

चंडोदरी : अशोक वन की एक राक्षस स्त्री। (वा. रा. सु ४)

चंद्रकला : सुबाहु की स्त्री, (पद्म क्रि. ५)

चंद्रकांत : पूर्वजन्म में वेश्या, बाद में अपने पुण्य के प्रताप से बाण-कन्या उषा के रूप में जन्मी। तब अनिरुद्ध से विवाह हुआ। (भवि. प्रति. ३. २२)

चंद्ररूपा : रामंतरकल्प में प्रजापति नामक राजा की भार्या। इसने त्रिरात्र तुलसी-व्रत किया था। (पद्म उ. २५)

चंद्रा : वृषपर्व दानव की कन्या। शर्मिष्ठा की भगिनी।

चंद्रावती : (ऐति) अनंगपाल राजा की कन्या। पुत्र जयचंद की माता। (भवि. प्रति ३.६)

चंद्रावली : कृष्ण की प्रिय पत्नी। (पद्म पा. ७०)

चंद्रिका : सुप्रभ गन्धर्व की कन्या (पद्म. उ. १२८)

चम्पकमालिनी : कौतलक देश के राजा की कन्या। चंद्रहास की पत्नी।

२. कुश की नौ कन्याओं में से एक।

चंपा : राक्षसी चन्द्रसेना का नामान्तर।

चर्षणी : वरुण नामक नवम् आदित्य की कन्या। भृगु की माता। (भा. ६. १८. ४)

चारुनेत्रा : एक अप्सरा (म. स. १०. ११ कुं.)

चारुमती : रुक्मणी और कृष्ण की कन्या। प्रद्युम्न आदि की वहिन। कृतवर्मा के पुत्र वालि की पत्नी। (म. उ. १५८.; भा. १०. ५४; ह. वं० २. ६०.; विष्णु ५. २६; पद्म. ३. २४७. २४६)

चारुहासिनी : कोडिन्यपुर के रुक्मांगद के पिता भीम की पत्नी (गणेश १. १६. ७.)

चित्रगंधा : गोकुल की एक गोपी। इसका जन्म जावालि द्वारा श्रीकृष्ण की उपासना करने पर प्रचण्ड नामक गोप के घर हुआ। (पद्म.पा. ७२)

चित्ररेखा : कृष्ण की प्रिय गोपी। (पद्म. पा. ७७)

२. बाणासुर के कुभांड नामक प्रधान की पुत्री, चित्रकला में प्रवीणा; उषा की सखी। यह अपने योग सामर्थ्य से अनिरुद्ध को सुप्तावस्था में उषा के कक्ष में उठा लाई थी। (भा. म. ६२. १४)

चित्रलेखा : केशी दैत्य के कारावास में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बन्दिनी अप्सरा, जिसे पुरुरवा ने केशी को मारकर मुक्त किया।

वाल्मीक राजा की कन्या। (भवि. प्रति ३०२३)

चित्रवती : वसु की पत्नी।

चित्रसेना : एक अप्सरा, जो कश्यप के प्राधा से हुई थी।

चित्रा (सो. वसु) : वायुपुराण के मत से वसुदेव और मदिरा की कन्या।

२. सेन की एक पत्नी नक्षत्र भी।

३. कुशल वास्तुकर्त्री; चित्रगुप्त की पत्नी। (भवि. प्रति. ४. १८)

चित्राकुमारी (सो. वसु) : वायुपुराण के मत से पोरवी से उत्पन्न वसुदेव की पुत्री।

चित्रागंदा : चित्रवाहन राजा की कन्या व अर्जुन की भार्या। वभ्रुवाहन की माता। यह पाण्डवों के राजसूय यज्ञ में हस्तिनापुर गई थी (म. आपव ८६. ६. कुं.) पाण्डवों के महाप्रस्थान के समय पिता के घर चली आई थी।

चित्रिणी : कामसेन राजा की कन्या। सूर्य की तपस्या के फलस्वरूप मायावती के काव्य-विद्या और कामिनीप्रिय ब्राह्मण मित्र शर्मा से इसका विवाह हुआ था। (भवि. प्रति. ४. ७.)

चूड़ाला : शिखीध्वज राजा की भार्या। यह आत्मनिष्ठ थी। राज्य छोड़कर जंगल में गए पति को आत्मज्ञान का मार्ग दिखाकर फिर से राजकाज में लगाया। (यो. वा. :७-१११)

चैला : ज्यामघ राजा की भार्या। शिवि राजा की कन्या। शैव्या भी कहलाती है।

छ

छाया : त्वष्ट्रा की कन्या, सूर्य की पत्नी संज्ञा को सूर्य का तेज सहन नहीं होता था। इसीलिए उसने अपनी प्रतिच्छाया की तरह यह स्त्री उत्पन्न की और इसे अपने पति और बच्चों की सेवा में रखा। (ह. वं० १. ९.)

ज

जटिला : गौतम के वंश में उत्पन्न, सप्तर्षियों की पत्नी। (म. अ. २११. १४. कुं)

जतुधाना : सुरसा और कश्यप के पुत्र यातुधान की माता।

जवाला : सत्यकाम जवालि की माता। (छं०; ३. ४. ४-९)

जयंती : यज्ञ नामक इन्द्र की कन्या; ऋषभदेव की पत्नी; भरत आदि सौ पुत्रों की माता (भा. ५. ४. ८)

जया : कृशाश्वप्रजापति की कन्या। पार्वती की दासी (स्कंद. १. ३. २. १८)

एक मत के अनुसार पार्वती की सखी (वामन ४.)

जरत्कारू : पितरों की मुक्ति के लिए जरत्कारू ऋषि ने अपने ही नाम की इस कन्या से विवाह किया। यह वासुकी की वहिन थी। गर्भवती होने पर जरत्कारू ऋषि ने इसे त्याग दिया था।

जरद् गौरी : आस्तिक की माता। नामान्तर जरत्कारु।

जरा : जरासंघ की उपमाता (म. को. १८१) यह जरासंध और वलराम-युद्ध के समय उनके शस्त्रों की चपेट में पड़कर हत हुई।

जलंधरा : काशिराज की कन्या। भीमसेन की पत्नी। शर्वत्रात की माता। (म. आ. ६३ ७६ कुं)

जलापा : ब्रह्मवादिनी। यह मानवी थी (ब्रह्मांड २-३३, १७)

जानपदी : जालपदी अथवा जातुपदी का

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नामान्तर। कृप और कृपा की माता। (म. आ. १४० कुं.)

जांववती : ऋक्षराज जांववत की कन्या, श्रीकृष्ण की अष्टनायिकाओं में से एक। (म. स. ५७. २३ कुं.) इसने अग्नि-प्रवेश करके देहत्याग किया था।

जालमती : म्लेच्छ राजा बादल की कन्या व यशोनंदी नामक राजा की स्त्री। प्रसिद्ध नागपूजक वाह्निक की माता। (भवि. प्रति ४. २३)

जालवती : देवकन्या; कृप और कृपा की माता। (म. आ. १४०-६ कुं)

जितवती : उशीनर की कन्या; द्यौ नामक वसु की पत्नी।

जीवती : परशु नामक वैश्य की स्त्री। तरुणावस्था में ही विधवा और फिर वैश्या हो गई थी। अपने तोते को रामनाम रटवाती थी। इसलिए वैकुंठ मिला। (पद्म कि. १५)

जुहू : बृहस्पति की स्त्री (ऋ. १०. १०९)

ज्योत्स्ना : सोम की कन्या व वरुणपुत्र. पुष्कर की पत्नी। (म. उ. ९८. १३ कुं.)

ज्वलना : तक्षक की कन्या व सोमवंश के औचेयु की पत्नी। (म. आ. ६३. २५ कुं)

ज्वलन्ती : तक्षका की कन्या व ताक्षा की पत्नी। अत्यंनार की माता। (म. आ. ६३ २५ कुं.)

ज्वाला : नीलध्वज की पत्नी। नीलध्वज ने अर्जुन का घोड़ा लौटा दिया था। इसे यह बात पसंद नहीं आई। इसने नीलध्वज को अर्जुन से लड़ने के लिए बहुत उकसाया, पर नीलध्वज नहीं माना। वह अन्त में गंगा को उकसाकर अर्जुन को शाप दिलाकर ही शांत हुई। (ज. उ. ब्रा. ४. १६१)

त

तपती : सावित्री की बहिन; विवस्वान सूर्य और छाया की कन्या। संवरण ने इससे विवाह का प्रस्ताव किया। तपती ने पिता की अनुकूलता आवश्यक मानी। संवरण ने सूर्य के प्रसन्न होने पर इससे विवाह किया। (म. आ. ६३. ४१ कुं. भा. ९. २२. ४; ६. ६. २१)

ताटका : सुकेतु नाम के यक्ष का कन्या, इसमें इच्छानुसार रूप बदलने की शक्ति थी। इसके शरीर में हजार हाथियों का बल था। जंभपुत्र सुद की पत्नी। मारीच व सुबाहु की माता। यज्ञों का विध्वंस करने के कारण विश्वामित्र के आदेश से राम ने इसका वध किया। (वा. रा. बा. २५-२६)

ताड़का ताटका का नामान्तर।

तामरसा : अभिमुनि की पत्नी (ब्रह्मांड ३८. ७४. ८७)

ताम्रा : प्राचेतस दक्ष प्रजापति व असिन्की की कन्या। कश्यप की पत्नियों में से एक। अरुणा, काकी, क्रोची, गृधिका धृतराष्ट्री, भासी, शुकी, शुची, श्येनी, सुग्रीवा तथा गाय और भैंस इसकी सन्तान कही गई हैं।

२. वसुदेव की पत्नियों में से एक; सहदेव की माता।

तारा : बृहस्पति की दो पत्नियों में से दूसरी। इसे सोम भगाकर ले गए थे। ऋग्वेद में इस कथा का अस्पष्टता से उल्लेख है। (ऋग्वेद १०. १०९) सोम से इसे पुत्र रूप में लड़का बुध की प्राप्ति हुई। (ऋ. १०. १०९) सुषेण की कन्या, बालि की पत्नी। अंगद की माता (वा. रा. कि. २२, १३) सूर्यवंशी राजा हरिश्चन्द्र की पत्नी। (देखिए,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तारामती)

तारामती : शैव्य देश के राजा की कन्या; अयोध्यापति हरिश्चन्द्र की पत्नी है। (मार्क ७-९) रोहिताश्व की माता। (देभा. ७. १४. ७. २५-२७)

तारावती : भोगावती के सूर्यवंशी राजा कुकुत्स्थ की कन्या। पुषन् के पात्र और पोक्ष्य के पुत्र चन्द्रशेखर की पत्नी। भैरव की माता। (कालि. ५०-५२)

तार्क्षी : कंधर व पक्षिक रूपधारी मदनिका की कन्या। पूर्वजन्म में वसु नामक अप्सरा। दुर्वासा के शाप से पक्षिणी हुई। (मार्क. ३. ३१-४४)

तितिक्षा : स्वायंभुव मन्वन्तर के दक्ष प्रजापति की कन्या। धर्म की पत्नी। क्षेम की माता।

तिलोत्तमा : कश्यप और अरिष्टा की कन्या। पूर्वजन्म में कुब्जा। सुंदोपसुंद इसके कारण परस्पर लड़कर मरे। (म. आ. २११-१२; पद्म ३-१२६)

तुलसी : वृंद के शरीर के पसीने से उत्पन्न (पद्म ३. १५) शंखचूड़ नामक असुर की पतिव्रता पत्नी, जिसके शाप से विष्णु शालिग्राम वने। (व्रह्म वें २. २१) एक बार गणपति ने इसे क्रुद्ध होकर वृक्षरूप होने का शाप दिया। समुद्र-मंथन के अमृत के कुछ बूंद धरती पर गिरे। इन्हींमें से तुलसी का वृक्ष रूप निकला। वाद में व्रह्मा ने इसे विष्णु को ब्याह दिया। (पद्म सृ. ६१ स्कंद २. ४. ८)

तुषिता : स्वारोचिष मन्वन्तर के वेदशिरस् मुनि की पत्नी। विशु की माता। (भा. २. १. ५१)

तुष्टि : स्वायंभुव मन्वन्तर में दक्ष ने धर्म को जो दस कन्याएं दीं, उनमें त्रयी-सविता और प्रश्नि की कन्या। (भा. ६. १८)

त्रिजटा : लंका की राक्षसी। रावण द्वारा सीता-संरक्षण के लिए रखी राक्षसी।

त्र्यक्षी : अशोकवन में सीता-संरक्षण के लिए रखी गई राक्षसियों में से एक।

त्वाष्ट्रा : त्वष्ट्रा की कन्या, आदित्य की पत्नी। अश्विनीकुमार नामक दो पुत्रों की माता। (म. आ. ६७. ३५ कुं)

दंष्ट्रा : कश्यप और क्रोध की कन्या। पुलह की पत्नी।

दक्षिणा : रुचि और अकूति की कन्या। यज्ञ की पत्नी। तुषित नाम के बारह पुत्रों की माता। यज्ञ दक्षिणा का भाई ही है, किंतु वह विष्णु का अवतार और दक्षिणा लक्ष्मी का अवतार। इसलिए इनका विवाह हुआ। (भा. ४-१; व्रह्मवै २·४२)

दमयंती : विदर्भ देशपति भीमराज के संतान नहीं थी। इसीलिए दमन ऋषि की कृपा से इन्हें ३ पुत्र व पुत्री दमयंती हुई। भाइयों के नाम दम, दांत और दमन थे। दमयंती अपूर्व सुंदरी थी।

इसने एक स्वर्ण हंस से नल राजा के गुणों का वर्णन सुना। उसी हंस के द्वारा अपना प्रेम निवेदन उसने नल राजा तक पहुंचवाया। उसने स्वयंवर में आये देवताओं को न चुनकर नल राजा के गले में माला डाली। नल को द्यूत में राज्य हार जाने के कारण दमयंती-समेत एक वस्त्र से वन में जाना पड़ा। वन में भी इनपर अनेक संकट आये। उन संकटों से ऊबकर नल इसे एक दिन सोता छोड़कर चल दिये। यह वहां से किसी तरह अपने पिता के यहां आ गई। नल राजा ऋतुपर्ण के यहां वाहुक नाम रखकर सारथी हो गये। नल को पुनः वुलाने के लिए दूसरे स्वयंवर की युक्ति निकाली गई। इस दूसरे स्वयं-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वर में नल राजा ऋतुपर्ण के सारथी होने के कारण आये और इनका पुनर्मिलन हो गया। (भा. व. ५४.७८)

दर्वा : चक्रवर्ती महामना उशीनर की पत्नी। सुव्रत की माता। (वायु—२·३७, १७.२४; विष्णु ४.१८; मत्स्य ४८)

दशमी : ब्रह्मदेव की मानस कन्या।

दशार्णा : गांधारराज सुवल की कन्या व धृतराष्ट्र की पत्नी।

दाक्षायणी : सती का नामांतर।

दान्ता : एक अप्सरा (म. अ. ३.५०.४८)

दिति : प्राचेतस दक्ष प्रजापति और आसिकी की कन्या। कश्यप की पत्नी। ऋग्वेद में तीन स्थानों पर अदिति के साथ उल्लेख है। अथर्ववेद में इसके पुत्र दैत्य गिनाये गए हैं। इससे लगता है, यह अदिति की विरोधी शक्ति है। (ऋ. ५.६२.८; ४. २. ११; ७. १५.१२)

दिव्या : पुलोम की कन्या व भृगु की पत्नी। इसीसे भृगु (देवता) हुए। (ब्रह्मांड २·३८)

दिव्यादेवी : लक्षद्वीप के राजा दिवोदास की कन्या। रूपदेश का चित्रसेन राजा इसके साथ विवाह के समय ही मृत्यु को प्राप्त हुआ। फिर विद्वान ब्राह्मणों के कहने पर इसने रूपसेन राजा से विवाह किया, पर उसकी भी मृत्यु हो गई। इस प्रकार इसने इक्कीस बार विवाह किया, पर हर बार पति की मृत्यु हो गई। तब राजा ने मंत्रियों की सलाह से स्वयंवर किया। उसमें आये राजा आपस में ही लड़कर मर गए। यह जब दिव्यादेवी को मालूम हुआ तो उसे बहुत बुरा लगा और वह जंगल में चली गई। (पद्म भू. ८५) वहां उज्वल नामक तोते ने इसे अशून्यशयन व्रत करने को कहा—४ वर्ष यह व्रत करने पर विष्णु ने इसे दर्शन दिये और अपने साथ विष्णुलोक ले गए (पद्म भू. ८८) पूर्वजन्म में यह चित्रा नाम से सुवीर नामक वैश्य की पत्नी थी। (देखिए, चित्रा)

दीर्घजिन्हा : अशोकवन की एक राक्षसी।

दीर्घिका : वीरशर्मन की कन्या। अत्यधिक ऊंची थी। ऊंची लड़की से विवाह करनेवाले की मृत्यु ६ महीने में होती है, ऐसा शास्त्रीय अपवाद होने के कारण इसका विवाह नहीं होता था। बाद में यह तप करते-करते बूढ़ी हो गई। तब एक वृद्ध कुष्ठ रोगी इसके पास आया व उसकी इच्छा से इसने उस वृद्ध रोगी से विवाह कर लिया। शांडिली इसका ही नामांतर होना चाहिए। (स्कंद. ६.१३५) मांडव्य ऋषि के शाप को इसने सूर्योदय रोककर व्यर्थ कर दिया था। (म. भा. १०७-१०८)

दुःशला : धृतराष्ट्र की कन्या, इसके दुर्योधनादिक सौ भाई थे। सिंधुराज जयद्रथ की पत्नी। (भा. ९-२२) सुरथ की माता।

दुर्गा : विश्वव्यापक आदि माया। यह सात्विक राजसी और तामसी कृतियों से युक्त है। इसीलिए इसे त्रिगुणात्मिका भी कहा जाता है। इसके रूप से प्रभाव इत्यादि को व्यक्त करते हुए इसके गौरी, पार्वती, उमा, काली, चंडी, चंडिका, भुवनेश्वरी, महमाया, मुक्तकेशी, रौद्रा, भद्रा, शाकंभरी, भास्करा, चामुंडा इत्यादि अनेक नाम हैं। देवताओं को संकट से मुक्त करने के लिए अनेक बार अनेक रूप में अवतार लिये।
(दे. भ. ७-७; का. पु. ६४)

दुर्मुखी : अशोकवन में सीता-संरक्षण के लिए रखी गई राक्षसियों में से एक।

दुर्वाक्षी : वसुदेव के भाई वृक की पत्नी।

दूषणा : ऋषभदेव के वंश के भौवन राजा की

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पत्नी। देवताओं के शिल्पी त्वष्ठा की माता।

दृषद्वती : ह्यंश्व राजा की पत्नी।

२. विश्वामित्र की पत्नी (ब्रह्म १०.६७ : ह. वं. १-२७)

३. काशी के राजा प्रथम दिवोदास की पत्नी। प्रतर्दन की माता (ब्रह्म. ११.४०.४८)

देवकी : देवक की कन्या तथा वसुदेव की पत्नी। इसके विवाह के समय आकाशवाणी हुई थी कि इसके आठवें लड़के के हाथों कंस की मृत्यु होगी। इसीलिए कंस ने इसे कारागृह में वसुदेव के साथ डाल दिया। कृष्ण-जन्म के समय इसने पुत्र को यशोदा के पास भेजकर उसकी रक्षा कर ली। (पद्म ब्र. १३)

बलराम और कृष्ण दो को छोड़कर इसके छः बच्चे कंस ने मार दिये थे। कृष्ण के द्वारा कंस का वध हो जाने पर कृष्ण ने अपने मृत भाइयों को जीवित कर दिया। (भा. ९. २४ : १०.३ : ४४) पूर्वजन्म में यह सुतपस् की पत्नी, पृश्नि थी (भा. १०.३) २. शैब्या की कन्या, युधिष्ठिर की पत्नियों में से एक। यौधेय की माता। (म. आ. ६३. ७५ कुं.)

देवकुल्या : मारीचि ऋषि के पुत्र की कन्या। पूर्वजन्म में कृष्ण के पादप्रक्षालन के कारण स्वर्धुनी बनी। (भा. ४.१४) २. भागवत के मत से पूर्णिमा की कन्या।

देवयानी : शुक्र की कन्या (म. आ. ९५) इसकी मां इन्द्र की कन्या जयंती थी। (मत्स्य ४७) बृहस्पतिपुत्र कच जीवनी विद्या ग्रहण करने शुक्राचार्य के पास आये। कच से इसकी विवाह करने की इच्छा थी, पर कच ने गुरुपुत्री होने के कारण इसकी इच्छा अस्वीकृत की और इसने उसे शाप दिया कि प्राप्त विद्या तुझे फलद्रूप नहीं होगी। कच ने भी शाप दिया कि कोई ऋषि-पुत्र तेरे साथ विवाह नहीं करेगा। बाद में इसका विवाह नहुषपुत्र ययाति नामक राजा से हुआ। ययाति से इसे दो पुत्र यदु व तुर्वसु हुए। (म. आ. ७५.७६.८२)

देववती : प्राणी नामक गंधर्व की कन्या। सुकेश राक्षस की पत्नी। सुमाली और माल्यवान की माता। (वा. रा. ३-५)

देववीति : मेरु की नौ कन्याओं में से एक। आग्नीधपुत्र केतुमाल की पत्नी।

देववर्गिनी : भारद्वाज मुनि की कन्या व विश्रवामुनि की स्त्री। वैश्रवणमुनि की माता।

देवसेना : दक्ष प्रजापति की कन्या, केशी दैत्य इसका अपहरण करके ले जाना चाहता था, तब इन्द्र ने इसे छुड़वाया। बाद में इसका विवाह कार्तिकेय से हुआ। (म. व. २२६. १ : २२९.५२ कुं.)

देवहूति : स्वायंभुव मनु की कन्या और कर्दम प्रजापति की पत्नी। (भा. ३. १२. ५४) इसके नौ कन्या और कपिल नामक एक पुत्र था। कपिल ने इसे सांख्यशास्त्र का उपदेश किया था। (भा. ३. २४; ९. ३३)

देवी : एक अप्सरा।

२. प्रह्लाद पुत्र विरोचन की पत्नी (भा. ६.१८.१६)

३. वरुण की पत्नी, बल और सुरा की माता। (म. आ. ६७.५२ कुं)

दैत्यसेना : दक्ष प्रजापति की कन्या। केशी दैत्य की पत्नी। (भ. व. २२६.१ कुं)

दोषा : (स्वा० उत्तान) पुष्पार्ण राजा की पत्नी। इसके प्रदोष, निशीथ और व्युष्ट तीन पुत्र थे।

दोर्मुखी : त्वष्टा की पत्नी यशोधरा का पैतृक नाम। वैरोचिनी और रचना नामान्तर। विश्वकर्मा की माता।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

धावापृथिवी : ऋग्वेद में बार-बार इन्हें माता-पिता कहा है। द्यौ पिता तथा पृथ्वी माता। ये इंद्रादि देवताओं और सर्वप्रजाओं के माता-पिता हैं।

द्रविड़ा : वायुमत के अनुसार तृणविन्दु की कन्या। पुलस्त्य की पत्नी इलविला की माता।

द्रुति : (स्वा. प्रिय) नक्त की पत्नी; गय की माता। (भा. ५.१५.६)

द्रौपदी : सोमवंश के द्रुपद राजा की कन्या—इसमें लक्ष्मी का अंश था। यह अयोनिजा थी। यज्ञ से इसकी उत्पत्ति हुई थी। (म. आ. ६८. १८५) पंचपतित्व की कथा प्रसिद्ध है। (ब्रह्म वै. २.१४)

इसके स्वयंवर में मत्स्यवेध कर अर्जुन ने इसे विवाह लिया। यह पाण्डवों की पत्नी की तरह जानी जाती है।

जुए में सब संपत्ति हार जाने पर दुःशासन द्वारा इसके चीरहरण के समय श्रीकृष्ण ने इसकी लाज बचाई (म. स. ९०. ५३) इसके बाद सारी संपत्ति हारने के कारण पाण्डवों को वनगमन करना पड़ा। द्रौपदी भी इसके साथ गई, वहां दुर्वासा के शिष्यों के साथ आगमन पर अतिथि-सत्कार के संकट से भी कृष्ण ने इसे उबारा। (म. व. २६४ कुं.) पाण्डवों के अज्ञातवास का समय इसने सैरंध्री के रूप में काटा (म. वि. १६ कुं.)

अज्ञातवास काटकर आने पर दुर्योधन से राज्य का हिस्सा न मिलने पर भी युधिष्ठिर का मन युद्ध करने का नहीं था। द्रौपदी अपने अपमान को अभी तक भूल नहीं पाई थी। उसने पाण्डवों को युद्ध के लिए उकसाया व कृष्ण को भी ताना मारकर इस हेतु बुलाया (म. उ. ८२)

युद्ध में विजय के पश्चात् निष्कंटक राज्य-सुख भोगकर बाद में महाप्रस्थान में जाते हुए यह रास्ते में गिर गई, क्योंकि यह अर्जुन को अधिक प्रेम करती थी। (म. म. रा. २) पर कृष्ण के स्मरण से इसे स्वर्ग लाभ हुआ।

धनिष्ठा : सोम की सत्ताईस पत्नियों में से एक। प्राचेतस दक्ष की कन्या। एक नक्षत्र।

धन्या : उत्तानपाद के पुत्र ध्रुव की कन्या।

धमिल्ला : अनुशाल्व राजा की स्त्री (जे. अ. ६१)

धरिणी : अग्निष्वातादि पितरों की मानस-कन्या। वयुना की बहन।

धर्मंद्रवा : ब्रह्मदेव की सात पत्नियों में से एक। यही गंगा है। इसे ब्रह्मदेव ने अपने कमंडलु में रख छोड़ा था। अपने वामनावतार से देवताओं को निर्भय करने पर ब्रह्म ने इसे विष्णु के चरणों पर डाला। यह जाकर हेमकूट पर्वत पर गिरी तब शंकर ने अपनी जटाओं में सुरक्षित कर लिया भगीरथ के आग्रह पर ऐरावत ने अपने दांतों से हेमकूट में तीन छेद किए। उन मार्गों से प्रवाहित होने के कारण इसे त्रिस्रोता भी कहते हैं। (पद्म सृ. ६२)

धर्मव्रता : धर्म की धर्मवती से हुई कन्या—ब्रह्मपुत्र मारीचि की पत्नी। (अग्नि ११४) पति ने शंकालु होकर शिला हो जाने का शाप दिया; यह शिला होकर गया में विष्णु की मूर्ति बनी। नामांतर देव व्रता। (अग्नि ११४)

धान्यमालिनी : रावण-पत्नी। अतिकाय की माता (वा. रा. सु. २२)

धारिणी : स्वधा की कन्या। अविवाहित रही। ब्रह्मनिष्ठ। (भा. ४. १. ६४)

धिषणा : कृशाश्व मुनि की पत्नी।

धुंधुली : आत्मदेव की पत्नी। धुंधकारी की माता (पद्म ३. ९६)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

धूमिनी : अजमीढ़ राजा की पत्नी। ऋक्ष की माता (म. आ. १०१.२० कुं)

धमोर्णा : यम की पत्नी (म. अनु. २७१.११ कुं)

२. मार्कण्डेय की पत्नी (म. अनु. २४८.४ कुं)

धूम्रा : धर्म नामक वसु की पत्नी। (भ. आ. ६७.१६. कुं)

धृतदेवा : देवक राजा की कन्या। वसुदेव की पत्नी। विपृष्ट की माता। (भा. ९.२४)

धृतराष्ट्री : ताम्रा की पुत्री, गरुड की पत्नी। हंसा की माता। (म. आ. ६७.५८ कुं)

धृति : धर्म ऋषि की स्त्री।

२. मनु नामक रुद्र की पत्नी। महाधृति का नामान्तर

धेनुमती : देवद्युम्न राजा की स्त्री। परमेष्ठी की माता। (भा. ५.१५.३)

ध्वजवती : हरिमेध ऋषि की कन्या (मा. उ. ११०)

नड्वला : वीरण प्रजापति की कन्या। चक्षुर्मनु की पत्नी। (भा. ४.१३.१६)

नन्दा : धर्म प्रजापति के पुत्र हर्ष की स्त्री (म. आ. ६७.३३ कुं)

२. कपोत नाग की कन्या (मार्क. ६८)

नभस्वती : विजिताश्व राजा की पत्नी। हविर्धान की माता (भा. ४.२४.५)

नर्मदा : सोमप नामक पितरों की मानस कन्या। २. एक गंधर्वी (वा. रा. अर.५) ३. मांधाता की पुत्र-वधू। पुरुकुत्स की पत्नी। ४. नदी। इक्ष्वाकुकुलोद्भव। दुर्योधन वरण करने की इच्छा से मनुष्य रूप ग्रहण कर उसको वरा। (म. अनु. २.१८ कुं.)

नागवीथी : धर्म ऋषि की कन्या

नागनजिती : (देखिए ५ सत्या)।

नायु : दक्ष व असिक्नी की कन्या। कश्यप की पत्नी।

नारदी : नारद ने एक बार वृन्दारण्य के कौसुम सरोवर में स्नान किया, इससे उसका पुरुषत्व नष्ट हो गया और वह स्त्री बन गया। इस अवस्था में उसे नारदी कहा गया।

नारायणी अथवा नालायनी : मुद्गल ऋषि की स्त्री। इसे इंद्रसेना भी कहते हैं।

२. दुर्गा का नामान्तर। (मार्क. ८८)

नारी : मेरुकन्या। आग्नीध्रपुत्र कुरु की पत्नी।

निवृत्ति : सुबल की कन्या, गांधारी की बहन व धृतराष्ट्र की भार्या—(म. आ. ११९. २३ कुं)

निक्षुभी : एक अप्सरा। मृत्युलोक में जन्म लेकर मिहिरगोत्र के सुजिह्व नामक धर्मपुत्र की कन्या। (भवि. ब्रह्म १३९.१४०)

नियति : मरु की कन्या व स्वायंभुव मन्वंतर के विधात्य की पत्नी। (भा. ८.१२)

नियुत्सा : राजा प्रस्ताव की पत्नी। विभु की माता।

निर्ऋता : कश्यप व खशा की कन्या।

निपावरी : मंत्रदृष्टी। नामान्तर सिकता। (ऋ. ९.८६ : ११.२० : ३१.४०)

नीला : कपिल व केशिनी की कन्या। (ब्रह्मांड ३.७.४७.४९)

नलिनी : अजामीढ़ की एक पत्नी।

नीली : अजामीढ़ की पत्नी। २. दुष्यन्त की पत्नी। ३ परमेष्टिन् की पत्नी। (म. आ. १०१.२० कुं)

पंचचूड़ा : एक अप्सरा। इसका नारद के साथ स्त्री-स्वभाव पर विवाद हुआ था। (म. अनु. ३८)

पंचजनी : ऋषभदेव के पुत्र भरत की पत्नी। सुमति, राष्ट्रभृत, सुदर्शन, आवरण और धूम्रकेतु की माता। (भा. ५.७ : १.३)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पतंगी : प्राचेतस दक्ष प्रजापति व असिन्की की कन्या। तार्क्ष्य कश्यप की पत्नी।

पथ्या : मनु की कन्या—अथर्वन अंगिरस की पत्नी। धृष्णि की माता। (ब्रह्मांड ३.१. १०५)

पद्मगंधा : पूर्वजन्म में एक क्रौंची। इसकी हड्डियां गंगा में गिर गईं थीं। दूसरे जन्म में इन्द्र की विशेष दासी।

पद्मजा : बौद्धसिंह की कन्या। जयंत की पत्नी थी। (भवि. प्रति ३.२९)

पद्मावती : विदर्भ नृप सत्यकेतु की कन्या। माथुर देश के मथुरा नगर के उग्रसेन राजा की पत्नी। कंस की माता।

पद्मिनी : विंदुगढ़ के राजा शारदानंद की कन्या।

परिमला : इंद्रप्रस्थ के प्रद्योत राजा की कन्या। कच्छप राजा के पुत्र कमलापति की पत्नी। (भवि. प्रति. ३२९)

पर्पिनी : एक अप्सरा (ब्रह्मांड ३.७.१८.२८)

पांचजनी : आसिन्की का नामान्तर।

पाचाली : द्रुपदकन्या का नामांतर (भा. १. ७. ३८).

पांरशवी : देवराजा की कन्या। विदुर की पत्नी।

पार्वती : हिमालय व मेना की कन्या—नारद के कहने से हिमालय ने इसे शंकर के साथ व्याहा था। (स्कंद १.३; ३.१२) अशोक सुंदरी इसकी मानस-कन्या थी।

पिंगला : अवंतिनगर की एक वेश्या। २. मिथिला की वेश्या, जिसे बाद में विराग हुआ (भा. २१. ८). भीष्म ने युधिष्ठिर को इसकी कथा सुनाई थी। (म. शा. १७३. ५९. ६४. कुं.) ३. राम के शाप से कुब्जा और सीता के दुःशाप से कृष्ण ने इसका उद्धार किया।

पितृवंती : इसने सूर्योपासना की। फलस्वरूप इसे सात पुत्र हुए। (भवि. प्रति. ४.७)

पीवरी : अग्निष्वात पितरों की कन्या व व्यासपुत्र शुक की पत्नी। (ब्रह्मांड ३.१०. ८०.८१)

पुंजिकस्थला : एक अप्सरा (म. आ. ३२.४६) पुनर्जन्म में अंजना. (वा. रा. कि. ६६),

पुंजिकस्थली : वैशाखा में सूर्य के साथ रहनेवाली अप्सरा। (भा. १२.११.३४)।

पुंडरिका : कश्यप व मुनि की कन्या, एक अप्सरा।

पुरुकुत्सानी : पुरुकुत्स की पत्नी त्रसदस्यु की माता। (ऋ. ४. ४२. ९).

पुलोमजा : पुलोम दैत्य की कन्या। यह शिवव्रतप्रभाव से शची हुई। (स्कंद ४.२.८०)

पुलोमा : ब्रह्ममानस पुत्रों में से वारुणि भृगु की पत्नी। (विष्णुधर्म १.३२ : गणेश ५. २९) पौलोमी नामान्तर। (म. आ. ५. ६; विष्णु. ७. ३२)

पुष्करमालिनी : विदर्भ देश के सत्य ऋषि की पत्नी। शापभय के कारण पति की इच्छानुसार व्यवहार करती थी। यह पशुयज्ञ को मान्य नहीं करती थी। (म. शां. २७२)

पुष्करिणी : व्युष्ट राजा की पत्नी। सर्वतेजस् की माता।

पुष्पदंती : चित्रसेन गंधर्व की नातिन। माल्यवान के कारण इंद्र की कोपभाजन बनी। (पद्म. ३. ४९)

पुष्पवती : कृष्णांश की पत्नी। मकरंद की बहन (भवि. प्रति ३. २१)

पुष्पोत्कटा : सुमाली और केतुमती की कन्या (भा. र. उ. ५.४०)

विश्रव्य की पत्नी और रावण तथा कुंभकर्ण की माता। (म. व. २७६. ७. १.)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पुष्पोदरी : बनरस नगर के राजा तालन की कन्या। (भवि. प्रति ३७)

पूतक्रता : पूतक्रतु की पत्नी। (ऋ. ८.५६.४)

पूतना : कंस की बहन। कंस ने इसे कृष्ण का विनाश करने के लिए गोकुल में नंद के घर भिजवाया। पर योजना में इसीके प्राण गए। (म. स. ५२ कुं; भा. १०. ६; पद्म. ब्र. १३)

पूर्णरसा : कृष्ण की प्राणसखी। (पद्म. पा. ७४)

पूर्वाचिति : अप्सरा। अग्नीध्र की पत्नी। नौ पुत्रों को जन्म देने के बाद यह पुनः मानस-पिता ब्रह्मदेव के पास चली गई थी। (भा. ५. २. ३. २०.)

पूर्वा : सोम की सत्ताईस स्त्रियों में से एक।

पूर्वाभाद्रपदा : सोम की सत्ताईस स्त्रियों में से एक।

पृश्नि : सविता नामक आदित्य की पत्नी।

पौरवी। युधिष्ठिर की पत्नी। (भा. ९.२२. ३०)

पौरुकुत्सा : गाधि की माता। (रेणुका ७) पौरा नाम से भी जानी जाती है।

पौलोमी : उदशादित्यों में से शक्र नामक आदित्य की स्त्री। (भा. ६.१८.७)

पौढरी : पुरु की पत्नी (म. आ. ८८.४ कुं)

प्रघसा : अशोकवन में सीता संरक्षणार्थ राक्षसी।

प्रजागरा : एक अप्सरा।

प्रतिरूपा : अग्नीध्रपुत्र, किंपुरुषा की पत्नी। मेरु की कन्या। (भा. ५. २. २३)

प्रतीच्या : पुलस्त्य की पत्नी (म. उ. १७७. १६ कुं)

प्रद्वेषी : दीर्घतमा ऋषि की पत्नी—दीर्घतमा अंधे थे; इसीलिए यह पुनर्विवाह करना चाहती थी। त्याग तो दिया, पर विवाह दूसरा नहीं किया। (म. आ. ११३.३२ कुं.)

प्रभाता : प्रत्यूष व प्रभास की मां, (म. आ. ६७२ कुं) कहीं-कहीं पत्नी भी कही गई है।

प्रभावती : स्वयंप्रभा का नामांतर २. यौवनाश्व राजा की पत्नी। ३. हंसध्वज राजा के पुत्र सुधन्वा की पत्नी। ४. देवशर्मा की पत्नी की बड़ी बहिन; अंग के राजा चित्ररथ की पत्नी (म. अनु. ७७. ८. कुं.) ५. बल की पत्नी। ६. वज्रनाथ की कन्या; प्रद्युम्न ने इससे विवाह किया था।

प्रभदा : अंगदेश के माया वर्मा की पत्नी। इसे एक वर्ष में ही दस लड़के हुए। (भवि. प्रति. ३. ११)

प्रमद्वरा : मेनका को विश्वावसु गंधर्व से हुई कन्या। रुरु की पत्नी।

प्रमर्दनी : एक अप्सरा का नाम (अ. वे. ४.३७.३)

प्रमाथिनी : एक अप्सरा (म. आ. १३२. ४५ कुं)

प्रमिला : स्त्री राज्य की स्वामिनी—पांडवों के अश्वमेध के घोड़े को इसने पकड़ लिया था। युद्ध में अर्जुन इसे हरा नहीं पाया। बाद में अर्जुन ने इससे सख्यभाव स्थापित किया और इससे विवाह किया। (जै. अ. २१.२२)

प्रमोदा : विसेन की कन्या विक्रम की पत्नी। (भवि. प्रति. ४.३)

प्रमोदिनी : सुसंगित नामक गंधर्व की कन्या (पद्म. उ. १२८)

प्रम्लोचा : अप्सरा। कण्ठु ऋषि की तपस्या को भंग करने इन्द्र ने इसे भेजा था। (भा. ४. ३०. १३)

प्रशर्मा : एक अप्सरा (म. अनु. ५०.४८. कुं.)

प्रसूति : स्वायंभुव मनु की तीन कन्याओं में से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एक; दक्ष प्रजापति की पत्नी। (भा. ३. १२. ५४; ४. १. १)

प्रातिथेयी : देखिए, वडवा और गभस्तिनी।

प्राधा : प्राचेतस दक्ष प्रजापति व असिन्की की कन्या; कश्यप की भार्या।

प्रियंवदा : राधिका की सखी (पद्म. वा. ७४)

प्रियवर्चा : कुवेर की एक अप्सरा। इसका अर्जुन ने उद्धार किया। (स्कंद १.२१)

प्रीति : दक्ष की कन्या और पुलस्त्य की पत्नी।

प्रोवा : प्राचेतस दक्ष प्रजापति व असिन्की की कन्या; कश्यप की भार्या।

बृहन्नला : देखिए, अर्जुन।

ब्रह्मधना : रक्षस की पत्नी; अंबुक, केलि, छाय, धृति इत्यादि नौ पुत्र थे। (ब्रह्मांड ३. ७. ९८)

ब्रह्मवादिनी : प्रभास नामक वसु की पत्नी।

ब्रह्महत्या : शंकर ने उत्पन्न करके इसे भैरव के साथ रहने का आदेश दिया था। (शिव. शत. ८) जान पड़ता है, यह केवल रूपक है।

ब्राह्मी : गोपालक देश के दलवाहन राजा की कन्या। इसकी बहन देवकी वत्सराज की पत्नी थी। (भवि. प्रति. ३.९)

ब

बकी : पूतना राक्षसी।

बर्हिष्मती : स्वायंभुव मनु के ज्येष्ठ पुत्र प्रियव्रत की पत्नी। स्वायंभुव मन्वंतर के प्रजापति की कन्या। (भा. ५. १. २४)

बला : अत्रि-मुनि की पत्नी।

बहुला : विदुर नामक ब्राह्मण की पत्नी थी। पति वेश्यागामी था। उसकी मृत्यु के बाद गोकर्ण स्थान पर पुराण श्रवण करके उसे पापमुक्त किया। (स्कंद ३. ३. २२)

बालापि : कण्व ऋषि की कन्या (पद्म. उ. १५२)

बाहुका : परीक्षित की पत्नी।

बाह्यका : सात्वत-पुत्र भजमान की स्त्री।

बिन्दुमती : मरीचि राजा की पत्नी—बिन्दुमत की माता।

बृहती : देवसावर्णि मन्वंतर के विष्णु की माता; देवहोत्र की पत्नी। (भा. ८. १३. ३२)

बृहत्सेना : दमयंती की विश्वासपात्र परिचारिका। (म. व. ६०)

बृहद्वासा : सोमपुत्री; भानु नामक अग्नि की भार्या (म. व. २२३.९ कुं.)

भ

भद्रवती : पहले परीक्षत की भार्या। जन्मेजय की माता। (म. आ. ६३. ८६ कुं.)

भद्रा : मेरु की कन्या, प्रियव्रत के पौत्र भद्राश्व की पत्नी। (भा. ५. २. २३)। २. आत्र की पत्नी, ३. कुवेर की पत्नी, ४. सोम की पुत्री, वरुण ने एक बार अपहरण किया, ५. वसुदेव की एक पत्नी, ६. धृष्टकेतु की कन्या।

भद्रावती : वृषकेतु की पत्नी, भद्रा का नामांतर। इसका विवाह कृष्ण से हुआ था।

भया : हेति नामक राक्षस की पत्नी; विद्युत्केश की माता।

भरणी : प्राचेतस दक्ष की कन्या। सोम की एक पत्नी।

भरती : भरत नामक अग्नि की कन्या।

भानुमती : सगर की पत्नी, असमंजस की माता।

भासा : महाभौम और सुयज्ञा के पुत्र अयुतानायी की पत्नी। अक्रोधन की माता। (म. आ. ६३. १९ कुं.)

भीमकी : रुक्मणी का नामांतर।

भुवना : बृहस्पति की बहन व विश्वकर्मन की माता। अष्टवसुओं में से प्रभास की स्त्री।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(ब्रह्मांड ३३. २१. २९)

भूता : कश्यप और क्रोधा की कन्या; पुलह की पत्नी।

भूमिनी : अजामीढ़ की स्त्री।

भोजा : वीरव्रत राजा की कन्या। २. आर्यक नाम की कन्या। ३. ज्यामघ द्वारा अपहरित कन्या। ४. सौवीरकन्या; सात्यकी की पत्नी।

भ्रामरी : एक राक्षसी (गणेश २.२१)

म

मघा : दक्ष प्रजापति द्वारा सोम को दी गई सत्ताईस कन्याओं में से एक।

मंगला : एक देवी, इसने त्रिपुर-वध के समय शंकर को वर दिया था।

मंजुघोष्म : शुक की स्त्री। (भवि. प्रति ३. २९)

मणिवरा : रजनाभ की स्त्री।

मत्स्यगंधा : एक मत्स्यकन्या, कृष्णद्वैपायन व्यास की माता, सत्यवती नाम से भी इसका उल्लेख मिलता है।

मदनमंजरी : नीलध्वजपुत्र प्रवीर की पत्नी।

मदनसुंदरी : कृष्ण की प्रिय गोपी।

मदनावती : कश्मीर देश के कैकय राजा की कन्या।

मदानिका : मेनका की कन्या; विद्रूप राक्षस की पत्नी; कंधर व विद्रूप का वध करके इसे पत्नी बनाया।

मदयन्ती : कल्माषपाद की पत्नी; अश्मक की माता।

मदालसा : ऋतुध्वज राजा की पत्नी; अलर्क राजा की माता—यह अत्यंत ब्रह्मनिष्ठ थी।

मदिरा : समुद्रमंथन से निकली; नामांतर सुरा।

मदिरेक्षणा : अंगदेश के राजा मायावर्मा की प्रमदा से उत्पन्न कन्या; कितव नामक दैत्य से इसका विवाह हुआ था। यह रूपक जान पड़ता है।

मद्रा : अत्रि की दस पत्नियों में से एक।

मधुमती : गुणाधीप राजा, हरिशर्मा के पुरोहित की कन्या। इसके पिता ने एक, भाई ने एक, और स्वयं एक इसने तीन वर ढूंढ़े। विवाह के समय ही इसकी मृत्यु सर्पदंश से हो गई। तब एक पति इसकी हड्डियां ले गया, दूसरा राख। तीसरे ने लक्ष्मणपुरी के रामशर्मा से संजीवनी मंत्र लाकर इसे पुनः जीवित किया। जीवन देनेवाला पिता माना गया। अस्थि रखनेवाला भाई और तीसरा, जिसे स्वयं इसने चुना था पति।

मनस्विनी : चंदु की माता (मा. आ. ६७)

मनोभवा : कश्यप और मुनि की कन्या।

मनोरमा : कश्यप और प्राधा की कन्या।

मनोहरा : एक देवांगना (म. आ. ६७.२२)

मंथरा : विरोधन दैत्य की कन्या, सारी सृष्टि के विनाश की इसकी योजना को, इन्द्र ने इसका वध करके असफल किया। (बा. रा. बा. २५) २. कैकेयी की दासी। (बा. रा. अयो. ७.६.)

मंदाकिनी : पुलत्स्यपुत्र विश्रवा की दो स्त्रियों में से एक का नाम। इसे शंकर की कृपा से कुबेर नामक पुत्र हुआ।

मंदोदरी : रावण की स्त्री—मयासुर और रंभा अथवा मयासुर व हेमा से उत्पन्न हुई कन्या। (स्कंद ५. ३. ३५.)

ममता : उचथ्य की स्त्री व दीर्घतमस् की माता।

मरुत्वती : प्राचेतस दक्ष की कन्या व धर्म ऋषि की पत्नी। मरुन्वत् और जयंत की माता। (भा. ६. ६. ४. ८; पद्म. रु. ४०)

मर्यादा : अपराचीन की पत्नी। अपराचन की

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

माता।

मलदा : अत्रि की स्त्री (ब्रह्मांड ३. ८. ७४. ८७)

महाकाली : महादेव की शक्ति। (दे. भा. ९. ९)

महादेवा : वायुमत से देवक की कन्या।

महानंदा : अत्यंत शिवभक्त एक वेश्या। (शिव शत २६)

महाभागा : कश्यप व खशा की पत्नी।

महामती : अंगिरस की सात स्त्रियों में से एक।

महिष्मती : वृहस्पति व शुभा की कन्या।

मही : धृतव्रत नामक ब्राह्मण की पत्नी। वैधव्य प्राप्त होने के बाद निराश्रित होने पर वेश्या-वृत्ति करने लगी। अंत में गंगास्नान से इसका उद्धार हुआ। (ब्रह्म. ९२)

मांडवी : कुशध्वज की कन्या, भरत की पत्नी। (वा.रा.वा. ७३)

मातंगी : कश्यप व क्रोधा की नौ कन्याओं में से एक। मातंग की माता। (म. आ. ६७. ६१. ६६ कुं.)

मातृका : अर्यमा नामक आदित्य की स्त्री (भा. ६६. ४२)

माद्री : मद्र देश के शल्य राजा की बहन। पिता का नाम ऋतायन। (म.स. ३५.१४) पाण्डु राजा के लिए भीष्म ने इसे मांग लिया था। (म.आ. ११३)

माधवी : नहुष कुलोत्पन्न ययाति राजा की कन्या (म. उ. ११५)

मानवी : यह दृड़ा (श.ब्रा. १.८.१.२६) और पर्शु की पत्नी (ऋ. १०.८६.२३) का पैतृक नाम।

मान्यवती : भीम की कन्या व करंधमपुत्र अतिक्षितायी की स्त्री। उसने स्वयंवर में से इसे भगाकर विवाह किया था। (मार्क. ११९.१७.)

माया : अधर्म और मृषा कन्या। (भा. ४.८.२) ब्रह्मदेव को सृष्टि-निर्माण में गायत्री, सत्यवती, ज्ञानविद्या, लक्ष्मी, उमा, वर्णिका, धर्मद्रवा—सप्तरूपों में मदद दी।

मायावती : मदन की स्त्री रति। मदन-दहन के बाद का नाम। प्रद्युम्न की पत्नी। (भा. १०.५५.१६)

मरिषा : प्रचेत्य की पत्नी। पुत्र प्राचेतस दक्ष। इसे वृक्षकन्या मानकर वार्क्षी नाम भी दिया गया है।

मार्गण-प्रिया : कश्यप व प्राधा की कन्या।

मार्जारास्या : केसरी वानर की पत्नी। (आ. रा. सार. १३)

मालती : शत्रुधातिन राजा की पत्नी। २. अश्वपति की पत्नी (देखिए सावित्री)

मालावती : कुशध्वज की स्त्री व वेदवती की माता।

मालिनी : इस ब्राह्मणी को कुतिया के जन्म में वैशाख शुद्ध द्वादशी के दिन इसी व्रत के पुण्य से इसे मुक्ति मिली और यह उर्वशी हो गई। (स्कंद. २.७.२४) २. विभीषण की माता का नाम. ३. अज्ञातवास में द्रौपदी का नाम। ४. पुष्कर और प्रम्लोचा की कन्या।

मित्रबिंदा : अवंतीदेशीय जयसेन व वसुदेव की भगिनी। राजाधिदेवी की कन्या। विंद व अनुविंद की वहन। (भा. १०.५८)

मिश्रकेशी : कश्यप और प्राधा की कन्या।

मुदावती : विदूरथ की लड़की, कुजृंभा इसे भगाकर ले गया था। (मार्क. ११३)

मुद्गला : एक ब्रह्मवादिनी।

मुद्गलाजी : पहले मुद्गल की पत्नी। इंद्रसेना नालायनीका नामान्तार। (म. व. ११४. २४ कुं.)

मुहूर्ता : प्राचेतस दक्ष की कन्या व धर्म ऋषि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

की स्त्री। मुहूर्त नामक देव इसका पुत्र था। (भा० ६.६.४६)

मृगमंदा : कश्यप व क्रोधा की कन्या। पुलह की भार्या, पशु आदि प्राणी इसकी संतानें हैं।

मृषा : अधर्म की पत्नी। दंभ और माया की माता। (भा. ४.८.२)

मेधा : दक्ष की कन्या, धर्म की स्त्री। स्मृति की माता।

मेधाविनी : कुलिंद राजा की स्त्री व चंद्रहास की माता।

मेनका : प्राधा की अप्सरा कन्याओं में से एक। उर्णायु गंधर्व की स्त्री। इंद्र ने विश्वामित्र के तपोभंग के लिए इसे भेजा था। विश्वामित्र से इसे शंकुलता नामक कन्या हुई।

मेरुदेवी : मेरु की कन्या व आग्नीध्र पुत्र नाभि राजा की पत्नी (भा. १.३.१३.५.२)

मैत्री : स्वायंभुव मन्वंतर के अनुसार धर्म ऋषि को दी हुई तेरह कन्याओं में से एक। प्रसाद की माता।

मैत्रेयी : याज्ञवल्क्य की दो पत्नियों में से एक ब्रह्मवादिनी। (बृ. उ. ११.४.५.१)

मोहना : सुग्रीव की पत्नी (पद्म. पा. ६७)

मोहनी : एक वेश्या (पद्म उ. २२०) २. समुद्र-मंथन से निकले १४ रत्नों में से एक। (भा. १.३.८.)

मोवी कामकंटका : मुरु दैत्य की कन्या-कामदेवी से इसे अजेयता का वरदान मिला था—कृष्ण द्वारा मुरु वध किए जाने पर यह कृष्ण से तीन दिन तक युद्ध करती रही, अंत में यह युद्ध कामदेवी ने रुकवाया। घटोत्कच की पत्नी। (स्कंद १.२.५९.६०)

य

यमी वैवस्वती : सूक्त द्रष्ट्री। (पृ. १०.१०.) नामान्तर यमुना

यशोदा : हविष्मत पितरों की कन्या (ह.वं. १.१८) २. नंद की पत्नी। कृष्ण की पालन-कर्त्री माता। (भा. १०.२.९) विश्वमहत् की स्त्री (ब्रह्मांड ३.१०.९०)

यशोधरा : विरोचन की कन्या होने के कारण इसे वैरोचनी यशोधरा भी कहा जाता है। त्वष्टा की पत्नी। विश्वरूप और विश्वकर्मा की पत्नी। रचना का नामान्तर। (ब्रह्मांड. ३.१.८६.८७.)

यामिन : प्राचेतस दक्ष प्रजापति व असिन्की की कन्या। ताक्ष्र्य कश्यप की भार्या, शलभ की माता (भा. ६.६.२१)

यायी : दक्ष की कन्या व धर्म की स्त्री।

योगवती : मेना की तृतीय कन्या, व जैगीषयं की पत्नी।

र

रक्षा : ऋक्षा की बहन, प्रजापति की स्त्री—जामवंत की माता।

रक्षिता : एक अप्सरा (म. आ. ६६.५० कुं) कश्यप और प्राधा की सन्तान।

रंगवेणी : सारंग गोप की कन्या।

रचना : एक दैत्य कन्या व त्वष्ट्र प्रजापति की पत्नी।

रता : एक देवस्त्री। इसके लड़के का नाम अहम्। (म. आ. ६७.२० कुं)

रति : कामदेव की स्त्री (म. अ. ६७.३३ कुं) इसकी उत्पत्ति प्रजापति के स्वेद से हुई। (कालि. ३)

रतिकला : कृष्ण की एक प्राण सखी।

रतिविदग्धा : हस्तिनापुर की एक वेश्या। ब्राह्मणों को अन्नदान किया था, इसीलिए वैकुंठधाम मिला।

रतिसर्वस्वा : कृष्ण की प्राणसखी।

रत्नकूटा : अत्रि की स्त्री (ब्रह्मांड ३.७४.८७)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रत्ना : अक्रूर की स्त्रियों में से एक।

रत्नावलि : रत्नेश्वर के सामने नृत्य किया था, इसीलिए पाताल के रत्नचूडा से इसका विवाह हुआ।

रथन्तरी : इलिल की पत्नी। दुष्यंत आदि ५ पुत्र थे। (म. आ. ६३.२६ कुं)

रथराजी : वसुदेव की स्त्रियों में से एक।

रंभा : कश्यप व प्राधा की कन्या। इसे इन्द्र ने विश्वामित्र का तप भंग करने भेजा था; पर वह उसमें सफल नहीं हुई। (म. अनु. ६. ११ कुं)

रम्या : मेरु की ६ कन्याओं में से पांचवी, यह रम्यक की स्त्री थी। रसमंथरा, रसवल्लरी, रसालया—कृष्ण की प्राणसखियां (पद्म पा. ७४)

राका : भागवत मत से श्रद्धा से उत्पन्न अंगीरस की कन्या।

रागा : वृहस्पति और शुभा की हुई ७ कन्याओं में से एक।

राजाधिदेवी : सोमवंशीय शूर राजा को मारिषा से हुई ५ कन्याओं में से सबसे छोटी। यह अपंत्य राजा जमसेन को दी गई थी। (भा. ६.२४.३१; १०.५८.३१)

राज्ञी : रैवत मनु की कन्या व विवस्वान आदित्य की तीन स्त्रियों में से एक। रात्रि भारद्वाजी : सूक्तदृष्ट्री (ऋ. १०.१२७)

राधा : जब विष्णु ने कृष्ण का अवतार मृत्युलोक में लिया तब राधा को इनके कहने पर पृथ्वी पर आना पड़ा। वृषभानु राजा जब यज्ञस्तव भूमि शुद्ध कर रहे थे तब यह उन्हें वहां पड़ी मिली। राजा ने इसका अपनी कन्या के समान पालन किया (पद्म ब्र. ७) राधा सृष्ट्युपकारक पांच शक्तियों में से एक है। (दे. भा. ६.१ नारद २.८१)
२. (सो. अनु.) अधिरथ सूत की स्त्री (म. आ. ६७) राधिका नामान्तर। राष्ट्रपाला अथवा राष्ट्रपालिका—विष्णु और मत्स्य के मत से उग्रसेन की कन्या थी। वायुपुराण में इसे राष्ट्रपाला कहा गया है। (भा. ६.२४.२५, ४२)

रिषा : कश्यप व क्रोध की कन्या। धर्म की स्त्री।

रुक्मवती : भीष्मक पुत्र रुक्मी की कन्या (भा. १०.६१.२३)

रुक्मणी : विदर्भाधिपति भीष्मक अथवा हिरण्यरोमन राजा को लक्ष्मी के अंश से हुई कन्या। (म. उ. ५८; ह. व. २.५६) नारद से कृष्ण-वर्णन सुनने पर इसे कृष्ण से प्रीत हुई। कृष्ण की भी इच्छा इससे विवाह की थी। रुक्मणी का बड़ा भाई रुक्मी जरासंध के पक्ष का था, इसीलिए उसे यह विवाह पसंद नहीं था। वह इसका विवाह शिशुपाल से करना चाहता था। अंततोगत्वा कृष्ण और रुक्मी में युद्ध हुआ। विजयी होने के बाद रुक्मणी को द्वारिका लाकर कृष्ण ने धूमधाम से विवाह किया (म. उ. ५८. भा. १०. ५४.८३ ह. वं. ६०)

रूमा : पनस नाम के वानर की कन्या; सुग्रीव की पत्नी (ब्रह्मांड ३.७.२२१)

रूशती : यह अश्वी ने श्याव को दी थी। (ऋ. १. ११७. ८)

रूपवती : त्रेतायुग की एक वेश्या, इसकी और इसके प्रेमी देवदास की मुक्ति वैशाख-स्नान से हुई। (पद्म. पा. ६७)

रेणुका : जमदग्नि की पत्नी—इक्ष्वाकुवंशीय रेणु की कन्या थी। (भा. ६.१५.१२)

रोमशा : कक्षीवत का आश्रयदाता, भाव्य या भावयव्य की पत्नी (ऋ. १.१२६)

रोहिणी : प्राचेतस दक्ष की ६० कन्याओं में से एक। सोम की सत्ताईस स्त्रियों में से एक।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ल

लक्षणा : दुष्यंत की पहली पत्नी (म. आ. ८८.१८ कुं.) इसे लाक्षी भी कहा है।

लक्ष्मणा : कश्यप व मुनि की कन्या, एक अप्सरा।

लक्ष्मी : दक्ष प्रजापति की कन्या व धर्म प्रजापति की स्त्री। (म. आ. ६७.१४ कुं.)
२. सागर से उत्पन्न विष्णु की पत्नी। (पद्म. सृ. ४)

लज्जा : दक्ष प्रजापति की कन्या; धर्म की पत्नी।

लपिता : मंदपाल की दूसरी स्त्री (म. आ. २५५.१७ कुं.)

लंबा : प्राचेतस दक्ष की कन्या व धर्म की पत्नी। विद्योत की माता। (भा. ६. ६. ४.)

ललाटाक्षी : सीता के संरक्षण में रखी गई लंका की राक्षसी।

ललिता : सती का नामांतर (पद्म. सृ. २६)
२. कृष्ण की एक पत्नी। (पद्म. पा. ७४)

लवंगा : एक गोपी।

लावण्यवती : पुष्पवाहन राजा की स्त्री (पद्म. सृ. २०)

लीला : पद्मराजा की स्त्री थी। पति के मृत होने पर सरस्वती की कृपा से उसे पुनः प्राप्त किया।

लीलावती : ध्रुवसंधि राजा की एक स्त्री। पुत्र शत्रुजित

लोपामुद्रा : मंत्रदृष्ट्री (ऋ. १.१७९.१.२) विदर्भ राजा की कन्या, इसे सत्यवती भी कहते हैं। (ग. व. ९४.२९ कुं.) इसका विवाह अगस्त्य मुनि से हुआ था।

लीला : मधु नामक राक्षस की माता। (वा. रा. उ. ६१)

व

वंशा : कश्यप व प्राधा की कन्या।

वज्रज्वाला : कुंभकर्ण की स्त्री (वा. रा. उ. १२.२४)

वड़वा : सूर्य की स्त्री संज्ञा; अश्विनीकुमारों की माता। (भा. ६.६.४०)

वड़वा प्रातिभेयी : ब्रह्मचर्य व्रत से रहनेवाली एक ब्राह्मणी कन्या। (आश्व. गृ. ३.३)

वध्रिमती : एक स्त्री का नाम—इसके पति को पुरुषत्व की प्राप्ति अश्वी की कृपा से हुई थी। (ऋ. १.११६.१३.११७.२४)

वपुष्टमा : सुवर्णवर्म्य की कन्या व जनमेजय की स्त्री।

वपु : एक अप्सरा (मार्क. १.४९.५६; २.४१)

वपुष्मती : सिंधुराज की कन्या—मरुत की पत्नी (मार्क. १२८)

वरंवरा : कश्यप व मुनि की कन्या—एक अप्सरा।

वरस्त्री : बृहस्पति की बहन व प्रभासवसु की स्त्री (म. आ. ६७.२६ कुं.)

वरांगना : उग्रसेन कन्या।

वरांगी : वज्रांग की पत्नी (मत्स्य १४५)

वर्गा : एक अप्सरा शाप के प्रभाव से मगर हो गई थी।

वलया : मगध देश के देवदास ब्राह्मण की कन्या (पद्म. उ. २१६)

वसिष्ठा : प्राचेतस दक्ष प्रजापति व असिन्की की कन्या। कश्यप की भार्या।

वसुक्रपत्नी : मंत्रदृष्ट्री (ऋ. १०.२८.१)

वसुदा : मालि राक्षस की स्त्री।

वसोर्धारा : अग्निवसु की पत्नी।

वाका : माल्यवान की कन्या। विश्रव्या की पत्नी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वाच् : अम्भृणी : सूक्तदृष्ट्री (ऋ. १०.१२५)
वाचक्नवी : वचक्नु कन्या गार्गी का पैतृक नाम।
वात्सि : सर्पी का पैतृक नाम।
वामदेवी : ऋचि ऋषि की भार्या (म. आ. ६३.२४ कुं.)
वाराहि : सप्त मातृकाओं में से एक।
वारुणी : स्वायंभुव मन्वंतर के वरुण की स्त्री।
वासना : अर्क नामक वसु की कन्या।
विकटा : अशोकवन में सीता-संरक्षण के लिए रंखी गई राक्षसियों में से एक।
विकटावती : यह पश्चिम द्वीप में रहकर अष्ट प्रधानों की सहायता से यहां का राज्य करती थी। पति पुलोमार्चि (भवि. प्रति. ४.२२)
विकुंठा : रैवत व चाक्षुष मन्वन्तर के वैकुंठ नामक अवतार की माता व शुभ्र की स्त्री।
विजया : शल्यराजा की कन्या व सहदेव की भार्या। पुत्र सुहोत्र (म. आ. ६३.७६ कुं. भा. ६.२२.३१)
विताना : मौत्य मन्वंतर के बृहद्भानु की माता।
विदुला : सौवीर देश के राजा की पत्नी; विदुला के पुत्र का नाम संजय था। (म. उ. १३३.१३६)
विद्या : एक बार विद्या ब्राह्मण के पास गई व उससे कहा कि मैं तेरा मूलधन हूं—मुझे नष्ट करनेवाले विद्यार्थी को कभी मत सौंपो।
(वैदिक मंत्र, सायणाचार्य ऋग्वेद प्रस्तावना)
विद्युता : एक अप्सरा। (म. अनु. ५०. ४८ कुं.)
विद्युत्पर्णा : कश्यप व प्राधा की कन्या।
विद्युत्प्रभा : एक अप्सरा।
विनता : प्राचेतस दक्ष प्रजापति व असिन्की की कन्या—अरिष्टनेमी कश्यप की भार्या।
विन्ध्यावली : बलि दैत्य की पत्नी।
विपाठा : दुर्गम की पत्नी। (मार्क. ७२. ४६. १)
विभावरी : ब्रह्मदेव की कन्या—यही बाद में पार्वती हुई।
विमनुष्या : कश्यप व मुनि की कन्या।
विरजा : शुकपुत्र ऋक्ष की स्त्री व ब्रह्म की कन्या।
२. सुस्वधा नामक पितरों की कन्या
३. एक राक्षसी
४. कृष्ण की राधा के समान ही प्रिय स्त्री
विरोचना : त्वष्ट्र की स्त्री व प्रह्लाद की लड़की—विराज राजा की माता (मा. ५. १५.१५)
विशाखा : सोम की स्त्रियों में से एक।
विशाला : वरुण की कन्या।
विश्पला : खेल की पत्नी का नाम।
विश्ववारा आत्रेयी : एक सूक्त दृष्ट्री (ऋ. ५.२८)
विश्वा : प्राचेतस दक्ष प्रजापति व असिन्की की दो कन्याओं में से एक धर्म को, दूसरी कश्यप को दी गई थी।
विश्वाची : प्रस्था की अप्सरा कन्या (म. स. १०. १२)
विषया : धृष्टबुद्धि प्रधान की कन्या
विषूची : विरज राजा की स्त्री (भा. ५.१५. १५)
वीरा : वीर्यचंद्र की कन्या—अविच्छित की माता (मार्क. ११६. २)
वीरिणी : वीरण प्रजापति की कन्या व प्रधितस दक्ष की स्त्री थी।
वृकदेव या वृकदेवी : विष्णुमतानुसार देवक-कन्या है। यह वसुदेव की स्त्री
वृकोदरी : पूतना की बहन।
वृचया : वक्षीवत् की पत्नी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वृतस्थला : एक अप्सरा।

वृत्ति : मनु नामक रुद्र की पत्नी। (भा. ३. १२. १३)

वृद्धसेना : सुमति राजा की स्त्री व देवजित की माता (भा. ५.१२.१५)

वृद्धा : आष्टिषेणपुत्र ऋतध्वज से सुश्यामा की कन्या।

वृंदा : कालनेमि व स्वर्णा की कन्या (पद्म.उ. ४. शिवरुद्र)

वेदवती : कुशध्वज जनक को मालावती से हुई कन्या।

वैदर्भी : विदर्भ राजा की कन्या का नाम।

वैदेही : जनमेजय पुत्र शतानक की स्त्री।

२. विदेह की कन्या; सीता का नामान्तर।

वैशालिनी : विशाला की कन्या—इसने सर्पों को अभय दिया था। (मार्क ११९. १२६) मरुत की माता।

श

शकुंतला : इसे नाडयिनी अप्सरा कहा गया है। श. ब्रा. १३.५.४.१३)

यह मेनका और विश्वामित्र की कन्या थी। इसका लालन-पालन शकुंत पक्षी ने किया फिर कण्व ऋषि ने। दुष्यंत से इसका गंधर्व विवाह हुआ था। भरत की माता।

शची : पुलोमा की कन्या, पुत्र जयंत। (ब्रह्माण्ड ३. ६. २६)

सूर्य से संवाद हुआ था। (म. अनु. १४. ५. ६ कुं)

शततारका : सोमा की सत्ताईस स्त्रियों में से एक।

शतरूपा : स्वायंभुव मनु की स्त्री। ब्रह्मदेव की कन्या। सरस्वती भी कहा है। (भा. ३. १२.५२)

शतशीर्षा : वासुकी नाग की पत्नी।

शतह्रदा : जव-पत्नी-व विराध-माता।

शवरी : एक भीलनी। पंपा सरोवर के पश्चिम में रहनेवाले मतंग मुनि और उनके शिष्यों की परिचारिका। राम-लक्ष्मण का उत्तम आतिथ्य किया।

शरयु : वीर नामक अग्नि की पत्नी।

शंभ्वटा : सुवल राजा की कन्या। गांधारी की बहन व धृतराष्ट्र की पत्नी (म. आ. १९९. २४ कुं)

शर्मिष्ठा : ही वृषपर्वा नामक दैत्य के राजा की कन्या। ययाति की प्रिय स्त्री।

शर्वरी : दोष वसु की पत्नी।

शलभा : आन की पत्नी। (ब्रह्मांड ३.८. ७४. ८७)

शशिकला : काशीराज सुवाहु की कन्या व सूर्यवंशीय सुदर्शन की पत्नी।

शशीयसी : तरंत की पत्नी (ऋ. ५.६१.६)

शश्वती : आंगिरसी—मंत्रद्रष्टी (ऋ. ८. १.३४)

शाकंभरी : (देखिए, दुर्गा)

शाकिनी : दूर्व ब्राह्मण की स्त्री।

शांडिली : शांडिल्य ऋषि की कन्या—इसी को स्वयंप्रभा कहते हैं। (म.भी. ८. ९. कुं०) प्रसिद्ध तपस्विनी हुई।

शांता : यह मत्स्य व भारत के मत से दशरथ कन्या वायु व रामायण के मत से (वा. रा. वा. ११) यह रोमपाद कन्या है। रोमपाद दशरथ का भी नामांतर है।

शांति : दक्ष प्रजापति की कन्या व धर्म की पत्नी।

२. यह देवहुति से हुई कर्दमकन्या व अथर्व की पत्नी।

शान्तिदेवी : देवक कन्या व वसुदेव की पत्नी।

शारदा : महेश्वर व्रत महात्म्य में इसकी कथा आती है। (स्कंद. ३. ३. १८. १९)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शारद्वती : द्रोणाचार्य की भार्या कृपी का नामांतर।

शार्दूली : कश्यप व क्रोधा की कन्या।

शालावती : विश्वामित्र की स्त्री।

शिखंडिनी : विजिताश्व राजा की स्त्री।

शिखंडनी। अप्सरा काश्यपी। ये दोनों सूक्त दृष्टियां हैं।

शिवा : अंगिरस की पत्नी। (म. व. २२७. १ कुं)

शीततोया : वरुण की पत्नी।

शुकी : कश्यप व ताम्रा की कन्या।

शुचिका : कश्यप व मुनि की कन्या।

शुभा : बृहस्पति की दो स्त्रियों में से एक।

शुभांगी : कुरु राजा की स्त्री, पुत्र विदूरथ (म. आ. ६३. ४२ कुं)

शूद्रा : अत्रि की पत्नी (ब्रह्मांड ३. ८. ७४. ८७)

शूर्पणखा या शूर्पणखी : विश्वस् और कैकसी की कन्या। रावण, कुम्भकर्ण, विभीषण की बहन। माता का नाम राका मानकर खर को इसका सगा भाई माना गया है। (म. १. २. ७६. ८ कुं) कालकैयाधिपति से इसका विवाह हुआ था। दण्डकारण्य में आए राम पर आसक्त हुई थी। राम ने लक्ष्मण के पास भेजा। लक्ष्मण ने भी विवाह से इन्कार कर दिया। यह खीझकर सीता पर हमला करने दौड़ी। तब लक्ष्मण ने इसके नाक-कान-काट कर इसे विद्रूप कर दिया। (वा. रा. अर. १७. १९)

शैव्या : द्युमसेन की स्त्री और सत्यव्रत की माता। (म. व.२९९. २. कुं)
२. सुनंदा का नामान्तर ३. सगर पत्नी। ४. मित्रविंदा का नामान्तर।

श्यामवाला : यह द्वापर युग के भद्रश्रवा की लड़की थी। यह सौराष्ट्र की थी। लक्ष्मीव्रत का महात्म्य बताने के लिए इसकी कथा कही जाती है। (पद्म. ब्र. ११)

श्यामा : मेरु की कन्या व हिरण्य की पत्नी।

श्येनी : कश्यप व ताम्रा की कन्या, ससाण की माता, गरुड़ की स्त्री थी। (ब्रह्मांड ३. ३. ४४९) वाल्मीकि रामायण में अरुण की स्त्री। तथा जटायु व संपाति की माता। (वा. रा. अर. १४. ३३)

श्रद्धा : स्वायंभुव मन्वतर में कर्दम प्रजापति व देवहुति की कन्या। अंगिरा ऋषि की पत्नी। २. शुभ की माता। ३. सूर्य की कन्या। ४. वैवस्व. मनु की पत्नी।

श्रद्धा कामायनी : सूक्तदृष्टी (ऋ. १०.१५१)

श्रद्धादेवी : वसुदेव की स्त्रियों में से एक।

श्री : भृगु व ख्याति की कन्या; भृगु ने विष्णु को दी थी। इसकी उत्पत्ति क्षीरसागर से हुई, ऐसा कहा जाता है। (म. आ. १८.. ४९ कुं)

श्रीदेवा : (पी) देवक-कन्या। वसुदेव की पत्नी।

श्रीमती : अंबरीष राजा की कन्या (देखिए दमयंती)

श्रीमाता : इसने मातंगी का रूप लेकर कर्नाटक राक्षस को मारा—यह कर्नाटक राक्षस ब्राह्मण के रूप में ऋषि स्त्रियों को भगाकर ले जाता था। (स्कंद. ३. २. १७. १८)

श्रुतकीर्ति : कुशध्वज जनक की कन्या व दशरथ पुत्र शत्रुघ्न की स्त्री (वा. रा. बा. ७३)

श्रुतदेवा : (वी) शूर राजा की कन्या व वसुदेव की बहन।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रसिद्ध भारतीय नारियां : मध्यकालीन

अ

अक्कादेवी : १०२१ में कल्याणी के चालुक्य राजघराने के जयसिंह द्वितीय की बड़ी बहिन, किसुकाड की शासिका। बीजापुर, आधुनिक अरसिबिड़ी राजधानी; कदंब-वंश में विवाहित। पति का नाम नहीं दिया गया है।

अनंतदेवी : गुप्त वंश के कुमारगुप्त की पत्नी। स्कंदगुप्त और पुरगुप्त की माता।

अनारकली : दूसरा नाम नादिरा बेगम। यह जहांगीर के कार्यकाल में थी। इसकी कब्र लाहौर में है। 'अर्ली ट्रेव्हल्स इन इंडिया' नामक ग्रंथ में इसे अकबर पत्नी और दानियल की माता बताया है। राजपुत्र सलीम से इसके नाजायज संबंधों की खबर लगने पर बादशाह ने इसे जिंदा दीवार में चुनवा दिया। जब सलीम गद्दी पर बैठा, तो उसने इसकी कब्र को सुंदर बनवा दिया।

अनुला : महानग राजा की पत्नी। बौद्ध धर्म की अनुयायिनी तथा संघामित्रा की भाभी। संघमित्रा द्वारा बार-बार इसे आचार्या की तरह संबोधित करने का उल्लेख मिलता है। (ग्यारे. कोश)

अनूबाई घोरपड़े : बालाजी विश्वनाथ पेशवा की सबसे छोटी लड़की। ६ वर्ष की आयु में ही सतारा के इचलकरंजी घराने के व्यंकटराव नारायणराव घोरपड़े से विवाह हो गया था। तरुणावस्था में ही क्षय रोग से पति का देहांत हो गया। इसके बाद ३८ वर्ष तक मुसीबतें झेलते हुए इसने हिम्मत से राज्य संचालन किया। सन् १७८३ में तुलापुर में इसका देहांत हुआ।

अन्नपूर्णाबाई : गंगाधर यशवंत चंद्रचूड़ की पत्नी। राजकाज में दिलचस्पी लेती थी, विवेकी थी। कठिन-से-कठिन परिस्थिति में में भी धैर्य नहीं छोड़ती थी और कोई-न-कोई हल निकाल लेती थी। (म. हि. म. ४. पृ. ८) चंद्रचूड़ दफ्तर में भी उल्लेख है।

अप्पादेवी : रघुवंशी प्रतिहार राजा, रामभद्र की पत्नी। राजा भोज की माता।

अमृतदेवी : आबू के परमारों में से धुंधुक की पत्नी।

अलमेलम्मा : श्रीरंगपट्टण के आरविदुं घराने के तिरुमल राजा की एक पत्नी—जब तिरुमल राजत्याग करके तालक्कड़ गया तब यह भी उसके साथ गई।

अहिल्याबाई होल्कर : जन्मकाल विवादास्पद। औरंगाबाद की बीड़ तहसील के चौंढ़े गांव के परेल की कन्या। १७३३-३४ में मल्हारराव होल्कर के दस वर्षीय पुत्र खंडेराव से विवाह हुआ। उस समय इसकी आयु लगभग ८ वर्ष थी।

व्यसनी पति खंडेराव १७५४ में शत्रु की गोली से मारा गया। ३ जून, १७६६ में में ससुर मल्हारराव के बाद राज्य की सारी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जिम्मेदारी अहिल्याबाई पर आ गई। २१ वर्ष का इसका लड़का मालेराव गद्दी पर बैठा, पर १० महीने होते-न-होते उसे पागलपन के दौरे आने लगे। किसी ब्राह्मण को धोखा देने के अपराध में इसने अपने लड़के को मृत्युदंड दिया। वह दंतकथा इसकी न्यायप्रियता और निष्ठुरता के उदाहरण की तरह प्रचलित है। यह धर्मशील, विदुषी, नीतिनिपुणा थी। इसके द्वारा तैयार की हुई स्त्रियों की एक सेना का उल्लेख मिलता है। यह मराठा राजाओं और पेशवाओं को समय-समय पर सैन्य सहायता देती रही।

अंबाबाई : मराठी कवियित्री। कुछ ही पद मिलते हैं। (सं. सू)

अंबाविला : विजयनगर के तुलुव घराने के नरसिंह राव उर्फ नरसी की पत्नी। अच्युत राय और रंगराय की माता।

अंबिकादेवी : पश्चिम चालुक्यों में से सत्याश्रय द्वितीय की पत्नी।

अंबिकाबाई दाभाड़े : शितोडे देशमुख की पुत्री। १७५२ में यशवंतराव दाभाड़े से विवाहित; प्रसिद्ध उमाबाई की बहू। सास-बहू की ठीक नहीं बनती थी। लड़का त्र्यंबक-राव। शादी के कुछ दिनों बाद यशवंतराव का देहांत हो गया। (म. रि. म. वि. पृ. ३००. २१)

अंबिकाबाई भोंसले : रुस्तमराय जादव की कन्या व छत्रपति साहू की पत्नी। साहू के कैद में रहते हुए औरंगजेब ने यह शादी १६१९ में बहुत धूमधाम से करवाई थी।

अंबाबाई महाडिक : सईबाई से शिवाजी की पुत्री। हरजीराजे महाडिक से इसका विवाह हुआ था। शिवाजी ने हरजीराव को जिंजी प्रांत की जागीरदारी दी थी। (शिवाजी निबंधावली. पृ. २२५)

अंमंगदेवी : राजेन्द्र चोल प्रथम की लड़की तथा पूर्वराज प्रथम की पत्नी। राजेन्द्र द्वितीय या कुलोत्तंग चोल प्रथम की माता।

आ

आक्काबाई : कर्‌हाड़ के रुद्राजी पंत देशपांडे की कन्या; रामदासस्वामी की शिष्या। बाल विधवा। गुरु की मृत्यु के ४० वर्षों बाद शक सं. १६४३ में मृत्यु को प्राप्त हुई। (मंडल षष्ट सम्मेलन वृत्त पृ. १८९)

आनंदीबाई निंबालकर : सुप्रसिद्ध महादाजी शिंदे की बहन। निजाम के सरदार रावरंभी महाराज निंबालकर की पत्नी। १७८५ में मृत्यु। (म. रि. उ. २. पृ. २२३. २४)

आनंदीबाई पेशवा : राघोबा दादा उर्फ रघु-नाथ राव पेशवा से १७५५ में विवाह। मराठों के इतिहास में कर्मठ स्त्री की तरह प्रसिद्ध। राघोबा राजकाज में इसकी सलाह मानता था। राघोबा की मृत्यु के बाद पुत्र बाजीराव के पेशवा बनने तक कभी नजर-कैद तो कभी कैद रहा। मृत्यु १७९४।

आनंदीबाई भोंसले : शाहू द्वितीय की चौथी पत्नी; १७८६ में विवाह। 'शिर्के' की पुत्री पति की मृत्यु के बाद अपने पुत्र प्रतापसिंह के नाबालिग रहने तक इसने कुशलता से राजकाज चलाया। १८२२ में मृत्यु हुई।

आनंदीबाई होल्कर : यशवंतराव होल्कर की पत्नी। (म. रि. उ. ३ पृ. १८६)

आपग्गा : तमिल कवि अव्वैयर की बहन। अविवाहित रही तथा नीतिपात्तल नाम का ग्रंथ लिखा। (क. च.)

आबदार बेगम : अकबर की एक रानी।

आयशा : अबूबाकर की कन्या थी। मोहम्मद पैगंबर की अत्यंत लाड़ली पत्नी थी।

आल्हण देवी : हूण कन्या। कलचुरी के राजा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कर्ण की पत्नी। २. मेवाड़ के वीरसिंह की कन्या। गयकर्ण की पत्नी। भेलघाट के शिव-मंदिर में उल्लेख। पुत्र नरसिंह देव और जयसिंह देव चेदि देश के राजा।

इ

इच्छनी कुमारी : आबू के परमार वंश के जैत राजा की लड़की। भीमदेव ने इससे विवाह के लिए युद्ध किया था। (मु. रि. भा. १ ला. पृ. ६०. १६७)

इरावती : मगध के शुंगवंशीय पुष्यमित्र के पुत्र अग्निमित्र की पत्नी। यह कालिदास के 'मालविकाग्निमित्र' नाटक का नायक है।

इंद्रकुमारी : अजीतसिंह की लड़की। फर्रुख की पत्नी। विवाह में धर्म-परिवर्तन हुआ, पर विधवा होने के बाद पुनः धर्म परिवर्तित करके हिन्दू हो गई।

ई

ईशानदेवी : अशोक पुत्र 'जलौका' की पत्नी। शैव पंथ को माननेवाली; अनेक शिवालयों का निर्माण किया था। (स्मित. पृ. २०१)

ईश्वरा : पंजाब के सिंधपुर (सिंहपुर) के यादववंश के भास्कर वर्मन की लड़की। जालंधर के चंद्रगुप्त स. ई. ७०० में विवाहित।

ईसरादेवी : रघुवंशी प्रतिहार नाग भट्ट की पत्नी। रामभद्र की माता।

ईष्ठीशैवल्लभी : चोल राजा कुलोतुंग की द्वितीय पत्नी।

उ

उदयमती : अनहिलवाड़ के सोलंकी राजा प्रथम भीमदेव की पत्नी थी। १०४५ में 'रानी की बावड़ी' बनवाई।

उपकोशा : वररुचि नामक कवि की पत्नी। यह भी सुप्रसिद्ध कवियित्री थी।

उदयपुरी बेगम : औरंगजेब की एक पत्नी। कदाचित् उदयपुर के सीसोदिया घराने से सम्बद्ध। कामबख्श की माता। १७०७ में मत्यु।

उमादेवी : कूपक वंश की कन्या। यदुवंश के राजा जयसिंह की पत्नी। पति के साथ केरल राज्य की देख-रेख करती थी।

उमाबाई : रामदास के प्रथम शिष्य उद्धव गोसाईं की माता।

उमाबाई दाभाड़े : खंडेराव दाभाड़े की पत्नी। युद्ध-नीति में अत्यंत कुशल थी। १७५३ में मृत्यु (वाटसन. हिस्ट्री ऑफ गुजरात)

उमाबाई भोंसले : फलटन के निंबालकर मालोजी नाइक द्वितीय की लड़की व मालोजी भोंसले की पत्नी। शहाजी और शरीफजी की माता।

उमाबाई होल्कर : मल्हारराव होल्कर की पत्नी। १८१५ में अमीर खां के द्वारा मारी गई। (म. रि. उ. वि. ३पृ. ४३८)

ऊ

ऊधमबाई : मुहम्मदशाह से विवाह हुआ था। १७४८ में इसका पुत्र अहमदशाह गद्दी पर बैठा।

क

कनकाई : तुकाराम महाराज की माता, बोल्होबा की पत्नी।

कनकावती : बनवासी के कदम्ब वंश के मयूर वर्मा की लड़की। दक्षिण तुलुव के प्रतिनिधि चंद्रसेन के पुत्र लोकादित्य की पत्नी

कनखलिपा : (योगिनी) चौरासी सिद्धों में इस स्त्री को सढ़सठवीं माना गया है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कण्हपा की शिष्या 'सनातनवर्गत्रय सुखागम' ग्रंथ की रचना की।

कमलादेवी कदंव : पेरमादि कदंव की पुत्री। कामभूप की पत्नी।

कमलाबाई पालकर : शिवाजी की लड़की। मां का नाम सकवारबाई। जानोजी पालकर की पत्नी। (शिवाजी निबंधावली १पृ. २२५)

कर्णावती : उदयपुर के महाराणा सांगा की पत्नी। १६२३ में जब बहादुरशाह ने चित्तौड़गढ़ पर कब्जा किया तो इसने हुमायूं को राखी भेजकर सहायता मांगी।

कर्माबाई : जगन्नाथपुरी की निवासिनी। साधु-संतों का सत्कार और धार्मिक चर्या विशेषता थी। (भक्ति. वि. अ. ३५)

कंचला : वासव के गंग की पत्नी। २. गोविंद रस गंग की पुत्री। (१०५०)

कंति : पहली कन्नड़ कवियित्री। इससे पहले किसी कन्नड़ कवियित्री का उल्लेख नहीं मिलता। 'नागचंद्रा' नामक काव्य-संवाद इसकी सुप्रसिद्ध रचना है; समय ११००-११०६ के लगभग।

कामाख्या : एक योगिनी। जादू, टोना, हठयोग में सिद्ध। दुष्ट वृत्ति की थी। दूसरे योगियों को साधना से विरक्त करने में इसे आनंद आता था। योगी चक्रपाणि को अपने पथ से विरक्त करने के प्रयास में इसे मुंह की खानी पड़ी। इस घटना से इसका हृदय परिवर्तन हुआ। इसके बाद इसने अपनी योगविद्या का केवल कल्याणकारी उपयोग किया।

कारुवाकी : अशोक मौर्य की एक पत्नी। तीवर की माता। अशोक के एक शिलालेख में इनकी दानशीलता का उल्लेख है।

कालीकुमारी : बुंदेल राजा चंपतराय की पत्नी। पति की मृत्यु का समाचार पाते ही इसने स्वयं अपना सिर काट लिया था। (मु. रि. भा. २. पृ. २७०)

काशीबाई पेठे : त्र्यंबक अमृतेश्वर पेठे की पत्नी। इसकी मृत्यु दिनांक २७.९.१८१२ में हुई (म. रि. उ.३. पृ. ५५७)

काशीबाई पेशवे : बड़े बाजीराव की पत्नी। जोशी वंश के महादाजी पंत की लड़की थी। मृत्यु २७. ११. १७५८ में हुई।

काशीबाई प्रतिनिधि : भवानराव प्रतिनिधि की पत्नी। अत्यंत साहसी और पराक्रमी थी। इसका काल १७९८ के आसपास माना गया।

काशीबाई भोंसले । शिवाजी महाराज की सातवीं पत्नी। तथा जाधवराव की कन्या। विवाह १६५७ में हुआ था।

कांचनदेवी : सिद्धराज जयसिंह की पुत्री। अजमेर के अर्णवराज उर्फ आना चौहान की पत्नी। पुत्र सोमेश्वर।

किरणमयी : हिंदी कवियित्री। बीकानेर के राजा राजसिंह के भाई पृथ्वीसिंह की पत्नी।

कुमारदेवी : लिच्छवि वंश की राजकन्या। गुप्त घराने के चंद्रगुप्त प्रथम की रानी।

कृष्णंमा : विजयनगर के रामराय के भाई वेकट आद्री की पत्नी। रंगप्पा और राम की माता।

कृष्णाकुमारी : मेवाड़ के राणा भीमसिंह की लड़की। अपूर्व सुंदरी थी; इसके कारण जोधपुर के मानसिंह और जयपुर के जगतसिंह का युद्ध हुआ। जहर से मृत्यु सन् १८१० जुलाई २१ को हुई।

कृष्णाबाई : (दरियाबाई निंबालकर) परदेसी राजपूत घासीराम की बड़ी बहन। राम राजा का पालन-पोषण किया। रामराजा को १७५० में सतारा की गद्दी पर बैठाया गया।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कृष्णम्मा : विजयनगर के आरविदुं घराने के वेंकट द्वितीय की पत्नी। यह निःसंतान रही।

केशरी : महादजी शिंदे और नाना फड़नवीस इनसे सलाह-मशविरा करते थे। (स. १७६६ म. रि. उ. वि. ३ पृष्ठ ३४. ४५.)

केसराबाई होल्कर : मल्हारराव की मां। अपने सरदारों के साथ राज्य के कामकाज में हाथ बंटाती थी। (म. रि. उ. वि. ३. पृ. ४४३)

रानी कोणदेवी : प्रख्यात आदित्यसेन गुप्त की पत्नी। (६५५-६६०)

कोसला देवी : मगध के बिंबसार की पत्नी। इसके पिता का नाम महाकोशल था। कुणिक की माता—जैनधर्मावलम्बी थी।

कोंडम्मा : विजयनगर के रामराय की तीसरी पत्नी तथा पोचिराज वंश के निम्मा की लड़की।

कोंडांबिका : विजयनगर के आरविदुं के वेंकटपति द्वितीय की तीसरी पत्नी।

ख

खना : एक बंगाली कवियित्री थी। भाषा के रूप के आधार पर इसका काल ९ वीं शताब्दी आंका गया है।

ग

गजराबाई : गोविंदराव गायकवाड़ की दाश्ता। पराक्रमी कान्होजी गायकवाड़ की माता। कान्होजी को अंग्रेजों ने कर्नाटक में कैद कर दिया था।

गजराबाई वांडे : बड़े शाहू की लड़की थी। शाहू ने रघूजी वांडे के पुत्र मल्हारराव से इसका विवाह किया। परगना नंदुरवार और सुल्तानपुर की जागीर इसे पैतृक संपत्ति के रूप में दी गई थी। (सनद की ता. १२. ८.१७४६)

गंगाबाई पेशवे : साठेवंश की लड़की थी। नारायणराव पेशवा की पत्नी। मृत्यु १०.७. १७७७ में हुई।

गंगाबाई शिंदे : महादजी शिंदे की पत्नी थी। यह पड़वेकर जाधव वंश की थी।

गिरिअम्मा : कानड़ी ब्राह्मण कवियित्री थी। चंद्रहास कथा, सीता कल्याण, उद्दालक कथा, पुस्तक रूप में तथा अन्य कई कविताएं मिलती हैं। इसका काल १७५० के लगभग माना गया है।

गिरिजाबाई : पैठण के एकनाथ की पत्नी थी।

गुणवंताबाई भोंसले : इंगले की कन्या थी तथा शिवाजी महाराज की आठवीं पत्नी थी। इसका विवाह १५ अप्रैल, १६५७ में हुआ था।

गोणाई : नामदेव की माता।

गोपा : शुद्धोदन के पुत्र बुद्ध की पत्नी थी। दण्डपाणि शाक्य की लड़की थी।

गोपिकाबाई पेशवे : भिकाजी रास्ते की कन्या। भिकाजी साहूकार था। एक बार शाहू इसके यहां मेहमान बनकर कुछ दिनों रहे। उन्हें यह लड़की अच्छी लगी और नानासाहब से इसका विवाह तय कर दिया। १७३० में विवाह हुआ। गंगापुर नामक स्थान में ३ अगस्त, १७८८ को इसकी मृत्यु हुई।

गौतमबाई : मल्हारराव होल्कर की पत्नी थी। पति के सामने सितम्बर २९, सन् १७६१ में ६६ वर्ष की आयु में देहांत।

गौतमी : इसका उल्लेख नासिक के शिलालेख में आया है। गौतम बुद्ध की मौसी, माया देवी की बहन थी। मायादेवी की मृत्यु के बाद सिद्धार्थ का लालन-पालन इसीने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

किया।

घ

घुसीता : वंगाल के वज्र घराने की तथा खारवेल की पत्नी थी।

च

चट्टलादेवी : गोवा के कदंब वंश के पहले विजयादित्य की पत्नी थी। इसका लड़का जयकिशन था।

चन्नदेवी : (चन्नमादेवी) विजयनगर के अरविदं वंश की तिरुमल की दूसरी पत्नी थी। तिरुमल के राज्याभिषेक के समय यह थी।

चन्नप्या : संगमवंश के चेन्नप्या का नामांतर।

चन्नम्मा : धारवाड़ के पास कित्तूर नामक स्थान की एक शूर स्त्री थी। शिवाजी को कुछ दिनों अपने यहां कैदी की तरह रखा था। कित्तूर की रुद्रम, और वेड़वड़ की मल्लम्म नामक स्त्रियां भी कर्नाटक प्रदेश की शूरवती स्त्रियां थीं। इनकी वीरता के 'पोवाड़े' आज भी उस प्रदेश में प्रचलित हैं।

चंदना : यह महावीर की पहली श्रमणा (शिष्या) थी। महावीर की कैवल्य प्राप्ति के बाद यह उनकी शिष्या हुई।

चंद्रलेखा : कम्हाड़ के शिलाहार राजा की लड़की। स्वयंवर में विक्रम उत्तर चालुक्य को चुना (विल्हण के अनुसार)

चंपादे : एक हिंदी कवियित्री। वीकानेर के राजा रार्जसिंह के भाई पृथ्वीराज की यह पत्नी थी। यह जैसलमेर के राजाराव लहर की लड़की थीं।

चामलादेवी कदंब : द्वितीय तैल कदंव की स्त्री। इसका पुत्र तैलम।

चारूमती : सम्राट अशोक की लड़की। पिता के साथ नेपाल यात्रा पर गई थी। वहीं संन्यासिनी बनकर मठ में रहने लगी। उसने नेपाल में देवपटना नामक नगर अपने पति की स्मृति में वसाया। पति का नाम देवपाल क्षत्रिय था।

चांदवीवी : यह वीजापुर की अली आदिलशाह की पत्नी थी व अहमदनगर के हुसैन निजामशाह की कन्या थी। यह अपने पति के राजकाज में सहायता करती थी। कुशाग्र सुशील होने के अतिरिक्त युद्धकला में भी निपुण थी। फारसी अरवी के साथ इसे कानड़ी और मराठी का भी पर्याप्त ज्ञान था। इसका काल १५४७-१५९९ माना गया है।

चिन्नदेवी : विजयनगर के पहले कृष्णराय की यह पत्नी थी।

चिमावाई भोंसले : मुधोजी भोंसले की पत्नी।

चेलुवाम्वे : अठारहवीं शताब्दी की कानड़ी कवियित्री। ग्रंथ—परनन्दी कल्याण, व्यंकटा चलमाहात्म्य लालिपद, चलमेंलुमंगेलालिपद, तुलाकावेरीमहात्म्य टीका। मैसूर के महाराजा दो कृष्णराज की पटरानी थी।

चेलन्ना : विंवसार राजा की पत्नी व चैतक की लड़की।

ज

जनादेवी : नामदेव की दासी। नामदेव के साथ अभंग करती थी। यह एक शूद्र की लड़की थी। इसने स. १३५० में समाधि ग्रहण की। उपलब्ध ग्रंथ—हरिश्चंद्राख्यान, प्रह्लाद चरित्र, कृष्ण-जन्म, बाल-क्रीड़ा।

जहांनारा : यह शाहजहां तथा मुमताज महल की बड़ी लड़की थी। यह आजन्म अविवाहित रही। उसकी कब्र लाहौर के एक साधु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

की कब्र के पास है। इसका काल (स. १६१४-८१) आंका गया है, विशेष जानकारी (म. रि. भा. २. पृ. २१८)

जाकल देवी : यह कबक राष्ट्रकूट की लड़की तथा द्वितीय तैल चालुक्य की पत्नी थी।

जातुकर्णी : भवभूति की मां।

जानी बेगम : दाराशुकोह की लड़की तथा औरंगजेब की पुत्रवधू थी। संभाजी की सेना ने एकाएक अन्तःपुर पर हमला बोल दिया था तब इसने बड़ी बहादुरी से सामना किया। इसके साथ अनिरुद्धसिंह भी था। (मार्च स. १६८३)

जिऊबाई : नाना फड़नवीस की पत्नी।

जिजाबाई (१५९५-१६७४) लखुजी जाधव की लड़की तथा छत्रपति शिवाजी की मां। शिवाजी इसके दूसरे पुत्र थे। पहला लड़का संभाजी। संभाजी के विवाह के बाद सन् १६३० में शिवाजी का जन्म हुआ था। इसी वर्ष इसके पति शाहजी ने तुलाबाई नामक स्त्री से विवाह किया। इस विवाह के बाद से इसकी अपने पति से अनबन रहने लगी। शाहजी की मृत्यु होने पर इसकी सती होने की तीव्र इच्छा थी, पर शिवाजी ने ऐसा नहीं होने दिया। प्रजा का ध्यान शिवाजी से भी ज्यादा रखा करती थी। १६७४ में पांचाड़ गांव में इसकी मृत्यु हुई।

जोधाबाई : अकबर की एक राजपूत पत्नी। जोधपुर के मालदेव की लड़की थी। अकबर की मृत्यु के बाद इसने विष खाकर अपने प्राणों का अन्त किया। शाहजहां इसीका पुत्र था। इसका विवाह सन् १८१९ में हुआ था।

जोम्मा : प्रथम बुक्कराय संगम की पत्नी थी। (सन् १७८५-१८५२)

जेबुन्निसा : औरंगजेब की बड़ी पुत्री। विदुषी थी—दीवान-ए-मकफी नामक ग्रंथ लिखा था। शंभु छत्रपति से इसका प्रेम संबंध था। (सन् १६३८-१७०२)

ठ

ठकाबाई गूजर : द्वितीय रघूजी भोंसले की बहन थी। नागपुर में नवलोजी गूजर के साथ इसकी शादी हुई थी। (ना. प्रा. ३. पृ. ३९५)

त

तलवलदेवी : आहवादित्य वीरगुप्त की लड़की थी।

ताई तैलिन : एक तेली की पत्नी थी। प्रतिनिधि घराने की परशुराम श्रीनिवास की रखैल थी।

ताईबाई कोल्हटकर : भास्करराम कोल्हटकर की पत्नी थी। (ना. मा. प्रा. ३. पृ. ९६)

ताजमहल : अबुलहसन कुतुबशाह की पत्नी।

तानी बीबी : प्रथम इब्राहिम आदिलशाह की लड़की व आली बरीद की पत्नी।

तारादेवी : यह टोड़ के सुरताण सोलंकी की कन्या थी। जयमल्ल के छोटे भाई पृथ्वीराज से इसका विवाह हुआ था। यह सती हुई थी। (जन्म स. १६७५-मृत्यु १७६१)।

ताराबाई भोंसले : छत्रपति राजाराम की पत्नी। पिता का नाम हमीरराव मोहिते था।

तिप्पम्मा : विजयनगर के तुलुब वंश के नरसिंहराय की पत्नी थी तथा वीर नरसिंह की मां थी।

तिम्मांबा : यह रंगराज की पत्नी थी। विजयनगर के सदाशिवराय तुलुव की मां थी।

तिरुमल्लादेवी : विजयनगर के कृष्णदेवराय की पत्नी।

तिरुमल्लांबिका : यह श्रीरंग की पत्नी थी तथा विजयनगर के रामराय की मां थी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रामराय के तिरुमल्ल और व्यंकटाद्रि नामक भाई थे। वाद में रामराय गद्दी पर बैठा।

तिष्यरक्षिता : मौर्यवंश के सम्राट् अशोक की पत्नी।

तीर गोंड वेंकम्पा : एक ब्राह्मण कवियित्री वेंकटायल महात्म्य और राजयोगसार नामक दो ग्रंथ उपलब्ध होते हैं।

तुकावाई भोंसले : शहाजी राजा की दूसरी पत्नी थी तथा मोहिते वंश की कन्या थी। एकोजी की माता। इसका भाई संभाजी मोहिते था। मोहिते वंश से शिवाजी का विरोध था। (वार्षिक इति. शके १८३६ क्र. ७)।

तुलसीवाई : यशवंतराय होल्कर की रखैल थी। इसने होल्करशाही की देखरेख १० वर्ष तक की। इसके बाद ता. २०.१२.१८१७ को इसकी हत्या हो गई।

तोतारंबी : अप्पय दीखित की अब्राह्मण पत्नी तथा रंगराजा चार्य की लड़की थी। रंग-राजाध्वरी की माता।

त्यागवल्ली : कुलोत्तुंग चोल की तीसरी पत्नी।

द

दत्तदेवी : गुप्तवंश के समुद्रगुप्त की पत्नी। इसका पुत्र चन्द्रगुप्त द्वितीय था।

दयावाई : (स. १७६०) हिन्दी कवियित्री। चरणदास की शिष्या सहजोईवाई की गुरु-वहन। 'दरियावोध' नामक ग्रंथ उपलब्ध।

दर्यावाई निवांलकर : शिवाजी द्वितीय की लड़की तथा रामराज की वहन। राजकाज में शाहू की सलाहकार थी। (पे. द. ८.३६)

दर्यावाई भोंसले : नागपुर के जानोजी भोंसले की पत्नी थी। इसके कारण भोंसलों में गृह-युद्ध हुआ।

दुर्गावाई नाईक वारामतीकर : राघोवादादा पेशवा की कन्या पांडुरंग नाईक वारामतीकर की पत्नी थी। विवाह स. १७७३ में हुआ।

दुर्गावाई भोंसले : शरीफजी भोंसले की पत्नी थी। विजयराव विश्वासराव नाम के जुन्नार के मराठे सरदार की यह लड़की थी।

दुर्गावती (रानी) : (स. १५६४) महोवा के चन्देल राजपूत वंश के राजा सालवाहन की लड़की थी। गढ़मांडला के दलपत राजा से विवाह हुआ था। जल्दी ही विधवा हो गई। नावालिग लड़के को गद्दी पर विठाकर स्वयं राजकाज संभालती रही। अकवर ने आसफखां के संचालन में इसपर आक्रमण किया। हाथी पर वैठकर युद्ध में वरावरी में भाग लिया। हारने की उम्मीद होने पर खंजर मारकर आत्महत्या कर ली। (मु. रि. भा. २ रा. पृ. ६७)

देवलदेवी : (स. १३१८-२२) खिजरखां की पत्नी।

देहनागादेवी : रघुवंशी प्रतिहार भोज की माता।

ध

धारिणी : मालविकंस को आश्रय देनेवाली एक रानी थी।

ध्रुवदेवी : गुप्तवंश के दूसरे चन्द्रगुप्त की पत्नी थी। इसके लड़के कुमारगुप्त व गोविंद गुप्त।

न

नरसिंगमा : विजयनगर के तिरुमल्ल आरविदं की पत्नी।

नागलंविका : लिंगायत धर्म संस्थापक वसव की दूसरी वहन, चन्न वसव की मां।

नागला : विजयनगर के नरसिंहराय तुलुव की दूसरी पत्नी।

नागी : नामदेव की दासी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नाची : इलेश्वरोपाध्याय नामक तेलगु पंडित की दूसरी लड़की। बाल-विधवा थी। इसने संस्कृत भाषा में 'नाची' नामक एक आत्म-कथात्मक नाटक लिखा।

नीलम्मा : बसव की पत्नी थी। लिंगायत धर्म के प्रचार में सक्रिय भाग लिया।

नोहलादेवी : केयूर वर्ष कलचुरि की पत्नी। नोहलेश्वरनामक मंदिर का निर्माण करवाया। उस मंदिर में बौद्ध भिक्षुओं के अलावा अन्य मत के साधु संत भी रहते थे, ऐसा वहां के शिलालेख से संकेत मिलता है।

प

पद्मावती : १. बुद्ध की माता, २. गीत गोविंद रचयिता जयदेव की पत्नी ३. लिंगायत धर्म संस्थापक बसव की पत्नी।

पद्मिनी : (स. १३०३) जायसी के पद्मावत नामक ग्रन्थ की नायिका, जो ऐतिहासिक पद्मिनी के जीवन पर आधारित था। ग्रन्थ के अनुसार सिंहलद्वीप के गंधर्वसेन की लड़की थी। रत्नसिंह से इसका विवाह हुआ। अला-उद्दीन के साथ युद्ध करते हुए रत्नसिंह वीर-गति को प्राप्त हुआ, पद्मिनी सती हो गई।

पन्नादाई : महाराणा सांगा के पुत्र उदयसिंह को अपने पुत्र की वलि देकर बनवीर से वचाया—वनवीर,पृथ्वीराज की रखैल का पुत्र था और विक्रमादित्य को मारकर अनीति से राजा वन बैठा था। इसीलिए गद्दी के असली हकदार उदयसिंह की जान का दुश्मन था।

परिमल देवी : सिंध के दाहिर राजा की कन्या। उन दो बहनों में से दूसरी जिन्हें सिंध विजय के वाद मुहम्मद ने खलीफा वलीद के पास तोहफे की तरह भिजवाया। 'सूर्यदेवी' में इस रोमांचकारी कथा का वर्णन है। (लगभग स. ७१३)

परीचेहरा : सोनगढ़ के राजा की कन्या थी। यह अतीव सुंदरी थी। इसीलिए इसका नाम परीचेहरा था। वादिर के अलाउद्दीन के लिए दिलावरखां इसे लाया था। अलाउद्दीन ने इसे यह नाम दिया (मु. रि. १.२२६)

पंपा : विजयनगर के दूसरे हरिहर संगम की पत्नी।

पार्वतीवाई शिंदे : नरसिंह घाटगे की पुत्री थी तथा महादजी शिंदे की पत्नी थी।

पार्वतीबाई पेशवे : सदाशिवराव भाऊ पेशवे की पत्नी। मृत्यु सन् १७८३ में हुई।

पुतलावाई : शिवाजी महाराज की चौथी पत्नी। यह मूलतः पालकर वंश की कन्या थी। विवाह सन् १६५३ में रायगढ़ में हुआ।

पुरीबाई : उमरेठ नामक गांव की एक स्त्री। इस गुजराती कवियित्री का 'सीतास्वरूप वर्णन' नामक काव्य ग्रंथ अत्यंत लोकप्रिय हुआ।

पृथावाई : अजमेर के दूसरे पृथ्वीराज की लड़की थी। मेवाड़ के सामंतसिंह से इसका विवाह हुआ था। सामंतसिंह को 'समतसी' कहते थे।

पेदोवमाम्बा : विजयनगर के दूसरे वेंकटपति की पत्नी थी। पिता का नाम जिलेल्ला रंग-राजा था।

प्रभावती गुप्ता : गुप्तवंश के दूसरे चंद्रगुप्त की लड़की। वाकाटक वंश के इसरे रुद्रसेन से इसका विवाह सन् ३९५ में हुआ था। दिवा-कर सेन और दामोदर सेन की माता। इन्हीं दोनों पुत्रों में से किसी एक को प्रवर सेन के नाम से गद्दी पर बिठाया। राजकाज यही देखती थी।

प्रसाधना देवी : प्रतिहार रघुवंश के विनायक पाल की पत्नी थी। महेन्द्रपाल द्वितीय की माता थी।

प्राणमंजरी : यह प्रेमनिधि की तीसरी पत्नी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

थी।

प्रेमाबाई : (१६५८ के लगभग) कवियित्री। इसके मराठी पद व अभंग लोकप्रिय हुए। इसका जीवन-चरित्र 'भक्त लीलामृत' में वर्णित है। यह कृष्ण-भक्त थी।

फ

फातिमा सुलतान उर्फ बादशाह साहेबा : यह दूसरे इब्राहिम आदिमशाह की लड़की थी। शाह हबीबुल्ला बिन शाह से १८ वर्ष की आयु में स. १६०५ में इसका विवाह हुआ था।

ब

बनुबाई गूजर : यह दूसरे रघूजी भोंसले की कन्या थी। नाना गूजर के साथ इसका विवाह हुआ था। इसके लड़के बाजीबा को भोंसले की स्त्री दुर्गाबाई ने गोद लेकर तृतीय रघूजी कहकर २६.६.१८१८ में गद्दी पर बैठाया।

बयाबाई भोंसले : यह पहले रघूजी की आजी अर्थात् बापूजी भोंसले की पत्नी थी। बिंबाजी, संताजी व राणोजी नामक पुत्रों की माता।

बयाबाई रामदासी : (सन् १७०० के लगभग) रामदासस्वामी की शिष्या। हिंदी व मराठी की कवियित्री थी।

बहिणाबाई : इसका मायका पश्चिम के वेरूल के देवगांव में था। आउदेव कुलकर्णी की कन्या थी। शिवापुर के एक ज्योतिषी की दूसरी पत्नी। तुकोबा का अभंग जयराम गोसाई के मुख से सुनकर तुकोबा की भक्त हुई। तुकोबा के प्रति यह आसक्ति इसके पति को नापसंद थी। पर इसने तो अपना मार्ग तय कर लिया था। देहू नामक स्थान पर इसने तुकोबा के दर्शन किए। इसका लड़का बिठोबा था। इसने अभंग रूप में अपने बारह पूर्वजन्मों की कथा लिखी है। १३ वां जन्म बहिणाबाई के रूप में हुआ। 'ज्ञान-प्रकाश' नामक श्री उमखा द्वारा संपादित पुस्तक में इसके अभंग हैं। सन् १७०० में समाधि ली। (म. क. च. ६. पा. ६८. १६२)

बांकाबाई : यह दूसरे रघूजी भोंसले की चौथी पत्नी थी। रघूजी भोंसले के बाद उनका लड़का परसोजी गद्दी पर बैठा—वह नीम पगला था। इसीलिए राज्य चलाने के लिए अप्पासाहेब से इसका युद्ध सीताबर्डी में १२१७ में हुआ।

बाचलादेवी : पांड्य राजकन्या थी तथा दूसरे (तैलु) कदंब की पत्नी थी।

बादशाह बीबी : यह दूसरे अली आदिलशाह की लड़की थी।

बायजी बाई शिंदे : (सन् १७८४-१८६३) सर्जेराव घाटग की लड़की थी तथा दौलतराव शिंदे की पत्नी थी। अतीव सुन्दर होने के कारण इसे सौंदर्यलतिका भी कहते थे।

बाला बाई शितोले : प्रसिद्ध महादजी शिंदे की लड़की थी। विवाह सन् १७७६ में नरसिंहराव शितोले से हुआ।

बालीबाई उर्फ दीपाबाई : यह शिवाजी की कन्या थी। बिसाजी राव नामक सरदार से इसका विवाह हुआ था। (शिवाजी निबंधावली १ पृ. २२५)

बेगम सुमरू : (मृत्यु सन् १८३६) वाल्टर रैनहार्ट नामक यूरोपियन सैन्य अधिकारी की पत्नी थी, जो एक मुसलमान उमराव की कन्या थी। बाद में इसने क्रिश्चियन धर्म स्वीकारा।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भ

भवानीबाई महाडीक : (सन् १६७९-१७२८) संभाजी की लड़की थी। शिवाजी की नातिन थी। हरजीराजे महाडीक के पुत्र शंकरजी राजे से विवाह हुआ था।

भवानीबाई शिंदे : यह सिधोजी घाटगे की कन्या थी व महादजी शिंदे की पत्नी थी।

भागावती (सन् १६०० के लगभग) : मुहम्मदकुली कुतुबशाह की पत्नी थी। इसीके नामपर भागानगर बसाया,जो अब हैदराबाद के नाम से जाना जाता है।

भागीरथीबाई. शिंदे (मृत्यु सन् १७९९) : यह कर्डेकर की कन्या व महादजी की पत्नी थी।

भागीरथीबाई होल्कर : हरिराव होल्कर की पत्नी।

भाग्यवती : पश्चिम के चातुम्यवंश के दशवर्मा की पत्नी थी।

भामिनी : कानीफनाभ की मां व सुरथ राजा की पत्नी।

भिऊबाई बारामतीकर (मृत्यु सन् १७४७) : यह बालाजी विश्वनाथ की लड़की थी। इसका विवाह आबूजी नाईक बारामतीकर से सन् १७१२ में हुआ। पूना के शनिवार पेठ में अमृतेश्वर का मंदिर इसीने बनवाया।

भीमाबाई बुले : यशवंतराव होल्कर की लड़की थी।

भूयिका देवी : यह रघुवंशी प्रतिहार देवराज की पत्नी थी। इसका लड़का वत्सराज था।

म

मथुराबाई आंगरे : (सन् १७३० के लगभग) कान्होजी आंगरे की पत्नी थी व बालाजी महाडिक की कन्या थी। यह विदुषी तथा कर्तव्यपरायण थी। इसके द्वारा लिखे वर्णन पढ़ने योग्य हैं। (रा. खं. ३. ३०. ५६. ८५)

ममता : तुलसीदास की मां।

मयणल्लदेवी : अनहिलवाड़ के पहले कर्ण राजा की पत्नी थी। विधवा होने पर अपने पुत्र सिद्धराज की नाबालिग अवस्था में राज्य की देखरेख इसीने की।

मर्युम : बीजापुर के युसुफ आदिलशाह की लड़की तथा पहले बुरहान निजामशाह की पत्नी थी।

मल्लादेवी संगम : विजयनगर के संगम वंश के दूसरे हरिहर की पत्नी। देवगिरी के रामदेवराव के वंश की थी। इसे मल्लांबिका भी कहते हैं।

मसीती : युसुफ आदिलशाह की लड़की व अहमद बाहमनी की पत्नी।

मस्तानी : (मृत्यु सन् १७४०) बाजीराव पेशवा की रखैल थी, नृत्य और संगीत में कुशल, विलासी स्त्री थी। बाजीराव को शराब पीने की आदत इसीने डाली। इसकी कब्र पावल नामक स्थान में है।

महादेवी : यह कुमार गुप्त द्वितीय की पत्नी थी।

महादेवी अक्का : कानड़ी कवियित्री थी। इसके उपलब्ध ग्रंथ योगांग त्रिविध वचन और सृष्टि वचन हैं। 'महादेवी अक्का पुराण' नामक ग्रंथ लिंगायत धर्म में प्रचलित है, जो इसीपर लिखा गया है।

महादेवी मलयवती : इसका उल्लेख वात्सायन के कामसूत्र में मिलता है। इसने कुंतला शातकर्णी का कैंची से खून किया था। यह कुंतलाशातकर्ण पत्नी नहीं थी, बल्कि गणिका थी, ऐसा अनुमान है।

महाप्रजावती : गौतम बुद्ध की सौतेली मां थी। गौतम बुद्ध ने इसे दीक्षा दी थी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

महालक्ष्मी : भर्तृभट्ट गुहिलोत की पत्नी थी। हथुंडी के राठोर वंश की कन्या थी।

महासेनगुप्त देवी : मालवा के गुप्त घराने के जीवित गुप्त की लड़की थी तथा आदित्य-वर्द्धन की पत्नी थी।

महीदेवी : रघुवंशी प्रतिहार के विनायक पाल की मां।

माणिक्यदेवी : यह गोवा के कदंब घराने के त्रिभुवनमल्ल की पत्नी थी। शिवचित्त देव द्वितीय की माता थी।

भानवाई : अंवर के राजा भगवानदास की लड़की थी। जहांगीर से उसका विवाह हुआ था। १६.५.१६०४ को विष खाकर आतम-हत्या की थी।

माया देवी : शुद्धोदन की पत्नी और गौतम बुद्ध की मां।

मालविका : विदर्भराजा की लड़की व अग्निमित्र की पत्नी।

मीनाक्षी : (सन् १७३१-१७३६) यह मदुराई के अंतिम राजा की रानी थी।

मीनाक्षी पांड्य : (सन् १२०० के लगभग) यह 'प्रथम' सुंदर पांड्य की पत्नी थी।

मीराबाई : (मृत्यु सन् १५४६) सुप्रसिद्ध हिंदी कवियित्री—राजा रत्नसिंह की लड़की थी। उदयपुर के राजा भोजराज गुहिलोत से इसका विवाह हुआ था। विवाह के कुछ समय बाद वह विधवा हो गई। कर्नल टोड ने उसे महाराणा कुंभा की पत्नी बताया है, पर यह गलत है। यह कृष्ण-भक्त थी। इसके भाई विक्रमादित्य को,जो उस समय गद्दी पर था, इसकी भगतभक्ति से चिढ़ थी। उसीने मीराबाई को भक्ति से विरक्त करने के लिए नाना प्रकार के कष्ट दिए। 'गीत गोविंद' पर लिखी टीका तथा 'राग गोविंद' इसके प्रसिद्ध ग्रंथ हैं।

मुक्तावाई : (जन्म १२७९ समाधि स. १२९७) सुप्रसिद्ध मराठी कवियित्री, ज्ञानेश्वर की बहन थी। इसके गुरु निवृत्तदेव तथा शिष्य चांगदेव थे। रचनाएं 'निवृत्ति-प्रसादे मुक्तावाई' नामक ग्रंथ में मिलती हैं; ग्रंथ अप्रकाशित है।

मुम्मदंवा : रुद्रम्मा काकनीय की लड़की व महादेव की पत्नी। रुद्र की माता।

मृगावती : कासंवी के शतानिक की पत्नी।

मेखलया (योगिनी) : ८४ सिद्धों में से ६६वीं थी।

मेलांवा : यह चौथे विजयदित्य चालुक्य की पत्नी थी।

मेड़ला देवी : छठवें विक्रमादित्य की लड़की थी। गोवा के दूसरे जय कदंव से इसका विवाह हुआ था।

मेनावाई आंगरे : मेसाजी आंगरे की लड़की व दौलतराव शिंदे की मां।

मैनाबाई पवार : धार के आनंदराव पवार की पत्नी। वड़ौदा के गायकवाड घराने की थी। तरुणावस्था में विधवा हुई। श्रीनारायण गणेश शरसाड़कर ने 'मैना चरित्र' नामक ग्रंथ में इसके चरित्र का वर्णन किया है। इसी प्रकार मुंशी देवीप्रसाद ने ना. प्र. सभा के त्रैमासिक में भी इसका वर्णन किया है। (४.५९.७३)

मैनाबाई भोंसले : यह व्यंकोजी उर्फ मन्या-वावू भोंसले की कन्या व आपासाहेव भोंसले की पत्नी थी। इसकी मृत्यु सन् १८१६ में हुई।

मैनावाई होल्कर : (सन् १८१५) यशवंतराव होल्कर की पत्नी थी।

मैनावती : कांचनपुर के त्रैलोक्यचंद्र राजा की पत्नी थी। जालंधरनाथ की शिष्या हुई। यह विचारवान और ज्ञानी स्त्री थी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मोप्पमा : काकतीय प्रोवी राजा की पत्नी। (हनुमत्कुंडा के प्राचीन सहस्त्रस्तंभ मंदिर के शिलालेख के आधार पर)

मोहनांगी : कृष्णदेव रायल्लू की कन्या थी। यह विदुषी थी। इसने 'मारीचि परिणय' नामक नाटक की रचना की थी।

य

यमुनाबाई शिंदे : (मृत्यु सन् १८१४) यह रामसिंह राउल देवडाईकर की बहन व महादजी शिंदे की पत्नी थी।

याकंबे : यह बेट त्रिभुवन की पत्नी थी। इसका लड़का परगंद बेट था।

येसुबाई डफड़े (मृत्यु सन् १७५७) : यह जती के बाबाजी की पत्नी थी। पोते यशवंतराव को गद्दी पर बिठाने के बाद इसका देहांत हो गया।

येसुबाई भोंसले (जन्म सन् १६५७ मृत्यु १७२० के बाद) : संभाजी की पत्नी थी। यह पिलाजी शिर्के की लड़की थी। इसका दूसरा नाम जिउबाई था। विवाह के समय इसकी उम्र १० वर्ष थी। (रा. खं. ३ पृ. १५४)

यौवनश्री : यह बिहार के तीसरे विग्रह पाल की पत्नी थी, कर्ण कल्चुरी की लड़की। इसका काल १०५० के लगभग माना गया है।

र

रखुमाबाई : निवृत्तिज्ञानदेव की मां।

रखुमाबाई पेशवे : लिबंकराव पेठे की कन्या व चिमाजी आप्पा पेशवे की पत्नी।

रघवाम्वा : विजयनगर के दूसरे वेंकटपति देवराय आरविदु की पत्नी।

रजिया गुलाम (स. १२३६-३९) : दिल्ली के गुलामवंश के शासक शमशुद्दीन अल्तमश की लड़की थी। पिता की मर्जी से दिल्ली की गद्दी पर बैठी।

रणदेवी : परवल राष्ट्रकूट की लड़की व धर्मपाल की पत्नी।

रमाऊ : साबाजी भोंसले की पत्नी। मृत्यु सन् १७५७ में हुई।

रमाबाई : सन् १४१७ के आसपास मेवाड़ के कुंभराणा की लड़की व सोरठ के मंडलिक यादव की पत्नी।

रंगम्मा : तिरुमल्ल आरविंदु की पत्नी।

राजसुंदरी : राजेन्द्र चोल की कन्या व राजराज गंग की पत्नी।

राजकुंवर उर्फ नानीबाई : यह शिवाजी की कन्या थी। इसकी मां का नाम सगुणाबाई था। गपोजी राजे शिर्के मलेकर को दी गई थी। (शि. नि. १ पृ. २२५)

राजसबाई भोंसले (सन् १७१४) : राजाराम की पत्नी—इसका पुत्र संभाजी गद्दी पर बैठा, दूसरा पुत्र शिवाजी पागल-सा था। उसे और ताराबाई को इसने जेल में रखा।

राज्यदेवी : बाणभट्ट की माता।

राणूबाई जाधव : शिवाजी की कन्या। इसकी मां का नाम सईबाई था। इसका विवाह जाधव वंश में हुआ था। (शि. नि. पृ. २२४)

राणूबाई ठोसर : श्री समर्थ रामदास की माता।

राधाबाई पेशवे : बालाजी विश्वनाथ की पत्नी थी। सन् १७५१ में नानासाहब पेशवा ने इसे रुपयों से तौला था। इसकी मृत्यु सन् १७५३ में हुई।

राधाबाई भावे : रामदुर्ग के नारायणराव की पत्नी थी। सन् १८२७ में पति की मृत्यु के बाद अंग्रेजों के आग्रह पर हरिहर नरगुंदकर नामक लड़के को गोद लिया।

राधाबाई माने : म्हसवड़कर नागोजी माने की पत्नी थी। इसके भाई की संताजी ने हत्या की, इसीलिए इसने संताजी से युद्ध किया, जिसमें वह मारा गया। (सन् १६९७)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

राधाबाई शिंदे : यह पद्मसिंह राहुल की बहिन व महादजी शिंदे की पत्नी थी।

रुक्मणि : एकनाथ स्वामी की मां।

रूपमती : मालव के बाजबहादुर की रानी थी। अपूर्व सुंदरी थी। काव्य तथा संगीत का गहन अध्ययन था। इसका विवाह सन् १५५७ में हुआ था। यह कवियित्री भी थी। मालवा में आज भी इसके लोकगीत प्रचलित हैं।

रेणुकाबाई : जत संस्थान के कान्होजीराव की पहली पत्नी थी। कान्होजी की मृत्यु के बाद सन् १८१० से राज्य इसीने चलाया। इसकी मृत्यु स. १८२२ में हुई।

रोशनारा : शाहजहां की लड़की थी तथा औरंगजेब के पक्ष में थी। यह अविवाहित थी। (काल सन् १६१७-१६७१)

ल

लज्जा : हैहयकुलु की राजकन्या, बंगाल के विग्रहपाल की पत्नी थी।

लक्षम्मा : रामराय अरविंद की चौथी पत्नी। श्री रंगराय की माता।

लक्ष्मीदेवी : गोवा के कदंब घराने की दूसरे विजयादित्य की पत्नी। जयकिशन तृतीय की माता।

लक्ष्मीबाई झांसीवाली (जन्म स. १८३५, मृत्यु जून सन् १८५८) : यह मोरोपंत तांबे की लड़की थी तथा झांसी के राजा गंगाधरराव नेवालकर की पत्नी थी। विधवा होने के बाद १८५७ के गदर में भाग लिया था। झांसी का किला दस दिन की लड़ाई के बाद इसके हाथ से चला गया। वहां से पुरुष वेश में कालपी आकर पेशवों के साथ होकर ग्वालियर का किला पुनः अपने कब्जे में किया, उसीकी रक्षा में वीरगति को प्राप्त हुई।

लादिनी बेगम : नूरजहां के पहले पति की लड़की थी।

लालकुंवर (सन् १७१२) : एक नर्तकी। इसे एक बार जहांदरशाह दिल्ली के राजा ने अपना संपूर्ण राज्य अर्पण कर दिया था।

लाल्हणदेवी : विग्रह प्रतिहार की पत्नी थी। मलय वर्मा की माता थी। इसके पिता का नाम केल्हणदेव था।

लाहिनी : आबू के परमार धुंधक की कन्या। चपपुत्र विग्रहराज की पत्नी थी। विधवा होने के बाद अपने भाई पूर्णपाल के साथ रहने लगी थी। वसिष्ठपुर सूर्यमंदिर और सरस्वतीवापी का जीर्णोद्धार किया। (एपि. इंडि. भा. ९ पृ. १२.१५)

लीलादेवी : भोज की पत्नी।

लोकमहादेवी : पश्चिम चालुक्य के दूसरे विक्रमादित्य की पत्नी।

लोकमहादेवी मधुरान्तकी : त्यागवल्ली का नामान्तर।

व

वत्सदेवी : परगुप्त की पत्नी।

वय्यम्मा : यह तंजोर के त्रिम्मप्पा की पत्नी थी और सेव्वाप्पा की मां थी।

वसिष्ठी : यह गौतमी पुत्र शातकर्ण की पत्नी थी। इसने अपनी रियासत का एक गांव बौद्ध भिक्षुओं को दिया था।

वासवदत्ता : उज्जयिनी के चंद्र प्रद्योत की कन्या व उदयन की पत्नी।

विरूबाई : शाहू महाराज की एक दासी। मृत्यु संवत १७१६ में हुई।

वेणुबाई : समर्थ रामदास की एक शिष्या थी। 'निवृत्ति राम' नामक ग्रंथ की रचना मराठी भाषा में की।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श

शंखा : पहले अमोघवर्ण राष्ट्रकूट की कन्या व तृतीय नंदीवर्मन पल्लव की पत्नी।

शिवा : वैशाली के चेतक लिच्छिवी की कन्या। यह उज्जैयिनी के चंद्र प्रद्योत की पत्नी थी।

श्रृंगारम्मा : कानड़ी कवियित्री श्री वैष्णव संप्रदाय की थी। 'पद्मिनी कल्याण' नामक ग्रंथ प्रसिद्ध हुआ।

श्यामलादेवी : यह मालव के परमार उदयादित्य की कन्या थी। मेवाड़ के गुहिलवंश के विजयसिंह को दी गई।

स

सईबाई : मुधोजी निबांलकर द्वितीय की कन्या तथा शहाजी भोंसले के लड़के शिवाजी से इसका विवाह १७ अप्रैल, १६४० में हुआ था। संभाजी की माता थी। मृत्यु ५ सितंबर, १६५६ को हुई।

सखूबाई : शिवाजी की लड़की थी। यह सईबाई की कन्या थी। फलटण के महादजी नाईक निबांलकर से विवाह हुआ था।

सगुणाबाई घोरपड़े : पिराजी की पत्नी थी, राणोजी की माता थी।

सगुणबाई निंबालकर : नरसिंहराव धारराव निंबालकर की माता थी। (म. रि. म. वि. १ पृ. १८०)

सगुणाबाई पेशवे : जनार्दन बाजीराव पेशवे की पत्नी व रामजी अनंत भिड़े की कन्या।

सगुणाबाई भोंसले : शिरके वंश की कन्या तथा शिवाजी की पत्नी थी। राजकुंवर बाई की माता थी। विवाह सन् १६५० में हुआ।

सतीबाई उर्फ बयाबाई शाहपुरकर : स. १६४५ पति बाजीपत अथवा शाहपुरकर थे। यह अंबाजी मुल्हार की कन्या थी।

सहजयोगिनी चिंता : चौरासी सिद्धों में से थी। 'व्यक्तभावानुगततत्वसिद्धि' नामक ग्रंथ लिखा।

सहजोबाई : (सन् १७८१) चरणदास की शिष्या, हिंदी की सुप्रसिद्ध कवियित्री।

संघमित्रा : सम्राट् अशोक की कन्या। लंका-द्वीप धर्माचार के लिए गई थी। इसका एक स्तूप, स्तूपाराम में मिलता है।

सावित्रीबाई भोंसले : यह रुस्तमराव जाधव की कन्या थी तथा शाहू की पत्नी थी। मृत्यु सन् १७३१ के आसपास हुई।

ह

हजरत महल (बेगम) : वाजिद अलीशाह की एक बेगम। १८५६ में अवध को जब कंपनी सरकार ने अपने राज्य में शामिल किया तो नवाब कलकत्ता भेज दिया गया। हजरत महल ने कलकत्ता जाना स्वीकार नहीं किया और लखनऊ में बनी रही। नवाब की मां ने इस अन्याय के विरोध में इंग्लैंड तक जाने की जहमत उठाई, मगर कोई सुनवाई नहीं हुई।

१० मई, १८५७ में मेरठ में सिपाहियों ने विद्रोह किया। अवध के घाव तो ताजे थे ही — ३० मई, १८५७ में लखनऊ में भी विद्रोह भड़क उठा। जून के मध्य तक अवध के अनेक कसबों और शहरों से ब्रिटिश राज उठ गया—लखनऊ की रेजीडेंसी जरूर अंग्रेजों ने नहीं छोड़ी। हजरत महल का लोगों पर खासा प्रभाव था और वह अपनी सूझ-बूझ का उपयोग विद्रोह को दृढ़ करने में कर रही थी। उसने एक बहुत ही कुशल शासिका की तरह हिंदू और मुसलमान सारी प्रजा को राहत पहुंचाई और सिपाहियों की वीरता को सराहा। किंतु सितंबर १८५७ में खबर आई कि दिल्ली में विद्रोही हार रहे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हैं और आउटरम तथा हैवलाक कानपुर से नयी कुमुक लेकर लखनऊ आ रहे हैं। हजरत महल ने साहस के साथ नयी आई हुई अंग्रेजी फौज का मुकाविला किया, किंतु आउटरम ने आरामवाग में विद्रोहियों पर फतह पा ली। २३ सितंबर की इस विजय के वाद वह २५ सितंबर को घिरी हुई रेसीडेंसी को वचाने भी जा पहुंचा। कानपुर में अंग्रेजों की फतह से भी वेगम के लोगों पर असर हुआ, लेकिन वेगम ने उनका उत्साह वढ़ाने के लिए दरवार बुलाया और उन्हें विजय का विश्वास दिलाया। मन-ही-मन उसने तय कर लिया था अगर अंग्रेज फतहयाव हुए तो जहर खाकर अपना अंत कर लेगी।

नवंवर में सर कॉलिन कैम्पवेल लखनऊ पहुंचा। वेगम ने जवरदस्त लड़ाई की लेकिन उसकी ताकत रोज-रोज कम होती जा रही थी और सिपाही भी भयभीत होने लगे थे। कैम्पवेल के प्रयत्नों से रेजीडेंसी में घिरे हुए अंग्रेज आरामवाग में दूसरी फौजों से जा मिले, तभी कानपुर के विद्रोही वहां आ पहुंचे और कैम्पवेल को पीछे लौटना पड़ा। इससे भारतीय जवानों का वल लौट आया। वेगम ने बनारस और इलाहावाद पर भी कब्जा करने का हुक्म दिया। उसने आजमगढ़ और जौनपुर पर भी कूंच की तैयारी की। २५ फरवरी को वह खुद हाथी पर सवार होकर मैदान में पहुंची और आरामबाग पर हमला बोल दिया।

२ मार्च, १८५८ को अंग्रेजों ने लखनऊ पर शक्ति इकट्ठा करके हमला किया। स रकॉलिन कैम्पवेल और नेपाल के जंगबहादुर कमान में थे। एक के वाद एक ठिकाने उनके कब्जे में आने लगे। सिर्फ लखनऊ की खास कचहरी में ८६० सिपाही मार गये।

हजरत महल इस सबके बीच मजबूती से सेना का संचालन करती रही। १८ मार्च, १८५८ को लखनऊ के सारे मजवूत मोर्चे अंग्रेजों के हाथ में चले गये, मगर वेगम १९ मार्च तक मूसावाग पर कब्जा किये रही। वाद में वेगम ने मौलवी अहमदुल्लाशाह को शाहजहांपुर पर हमला करने में मदद दी। १९ अक्टूवर, १८५८ को उसने एक लंवे खत में हमले की योजना लिखकर समझाई।

मगर शक्ति घटती गई और वेगम हजरत महल नेपाल निकल गई। उसका वेटा विरजिस कादिर साथ रहा। नेपाल सरकार ने वेगम को पहले तो शरण नहीं दी, मगर जव वेगम ने अंग्रेजों के सामने आत्मसमर्पण करने से इंकार कर दिया तो अंग्रेजों ने उसके सामने संमानपूर्ण शर्तें पेश कीं। वेगम ने इन शर्तों को भी स्वीकार नहीं किया और उनकी दी पेंशन लेने से भी इंकार कर दिया। वह अपने अंतिम दिनों तक यथासंभव स्वाभिमान की रक्षा करते हुए नेपाल में ही रही और १८७९ में अपने उद्देश्य के लिए कष्ट सहते हुए उसने देहत्याग किया।

हदीया : बीजापुर के इब्राहिम आदिलशाह की कन्या, मुर्तिज़ा निजाम की पत्नी।

हरियदेवी : मेवाड़ के अल्लट राजा की पत्नी थी। एक हूण राजा की कन्या थी। हर्षपुर नामक गांव सन् ९७७ में वसाया (इंडि. अहि. भा. ३९ पृ. १९१)

हर्षमती : तंत्रशास्त्रज्ञ प्रेमविधि की सास। हर्षदेव की पत्नी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रसिद्ध भारतीय नारियां : अर्वाचीन

अ

अनसूयाबाई काले : १९२० में भगिनी मंडल की स्थापना करके उसके माध्यम से सार्वजनिक काम किये। बाद में अखिल भारतीय महिला परिषद की सदस्या। १९२८ में मध्यप्रदेश असेंबली की सदस्या और डिपुटी-स्पीकर। १९३० में गांधीजी की गिरफ्तारी पर इस पद से इस्तीफा। १९३० में सविनय अवज्ञा में भाग। जेलयात्रा। १९३७ में फिर म० प्र० में डिपुटी-स्पीकर। दूसरे महायुद्ध के समय कांग्रेस के सिद्धांत के अनुसार फिर इस पद से इस्तीफा। 'भारत छोड़ो' आन्दो- में सक्रिय भाग। उनके प्रयत्नों से आष्टी-चिमूर के २५ तरुणों की फांसी की सज़ा रद्द हुई। स्वतंत्रता के बाद केंद्रीय विधान सभा की सदस्या। १९५८ में निधन।

अनसूया महापात्र : १९२२। नई तालीम केन्द्र में निरन्तर दस वर्ष तक काम किया। १९५८ से अम्बर प्रशिक्षण लेकर पदयात्रा द्वारा गांवों में खादी-प्रचार। तीन वर्ष बालवाड़ी का संचालन। सन् १९६६ से स्त्री-सेवा विशेष कार्यक्षेत्र।

अन्नपूर्णा दास : सेवाग्राम में बुनियादी तालीम ली। प्रशिक्षण भी दिया। कस्तूरबा ट्रस्ट की सदस्या। संप्रति शांति-सेना विद्यालय की संचालिका।

अन्नपूर्णा महान्ती : १९१५। स्वतंत्रता आन्दोलन में भाग। १९४७ से सार्वजनिक सेवा में रत।

अन्नपूर्णा महाराणा : १९१७। ३०, ३२, ४२ और ४४ के आन्दोलनों में जेलयात्राएं। गांधीजी की उत्कल-पदयात्रा के समय उनके साथ रहीं। १९४७ से खादी, बुनियादी तालीम, हरिजन सेवा और कस्तूरबा ट्रस्ट के कार्यकलापों में योगदान के सिवा गांधी-विनोबा साहित्य का उड़िया में अनुवाद कार्य। संप्रति ग्रामदान-आन्दोलन की अपने क्षेत्र में प्रमुख कार्यकर्त्री।

अनुप्रिया बरुआ : १९४२ में सुधालता दत्त के सहयोग से असम में दमन से संत्रस्त क्षेत्रों में व्यापक दौरा करके जनता को आश्वस्त किया। रेडक्रॉस की गतिविधियां चलाईं। सरकार ने इस संगठन को तोड़ डाला। दो वर्षों तक निरंतर पुलिस के अत्याचार सहे। उसके मार्गदर्शन में आन्दोलन रत। कनक लता बरुआ को २० सितंबर, १९४२ को छाती में गोली मारकर पुलिस ने मार डाला।

अमरकुमारी : गुरदासपुर के वकील मोहनलाल की पत्नी। १९२१ में गांधीजी के आह्वान पर सार्वजनिक क्षेत्र में पदार्पण। १९२२ में लायलपुर गई और वहां के डिपुटी कमिश्नर के शब्दों में "सारे जिले में आग लगा दी।" १९३० में जलंधर जिले में काम किया। राजद्रोह के अपराध में गिरफ्तार। १९३२

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

में अपनी अन्य सहयोगिनियों आदर्शकुमारी, यशोदाकुमारी और कृष्णकुमारी के साथ गिरफ्तार और जेल की सजा। लाहौर के वकीलों के प्रयत्नों के बावजूद जमानत पर छूटने से इन्कार। बाद में प्रांत के बाहर सीमांत प्रदेश तक गतिविधियां बढ़ाकर फिर बन्नू में गिरफ्तार। १९४० में व्यक्तिगत सत्याग्रह। १९४२ सितंबर में फिर गिरफ्तार। जेल में दुर्व्यवहार के विरोध में प्रदर्शन और सत्याग्रह। ९ अक्टूबर, १९४२ को जेल में ही ध्वजारोहण। १९४४ में स्वास्थ्य के बिलकुल चौपट हो जाने पर रिहाई।

अरुणा आसिफ अली : बंगाल के कुलीन गांगुली परिवार में जन्म। लाहौर और नैनीताल में शिक्षण। शिक्षण के बाद गोखले मैमोरियल स्कूल कलकत्ता में नारी-शिक्षा का काम करते हुए इलाहाबाद के वकील और फारसी के विद्वान राष्ट्रप्रेमी श्री आसिफ अली से भेंट। १९२४ में आसिफ अली से विवाह। नमक सत्याग्रह के जमाने से ही स्वतंत्रता संग्राम में शामिल। गांधी-इरविन-पैक्ट के बाद सारे राजनीतिक कैदी छोड़ दिए गए, किन्तु अरुणा को तब भी नहीं छोड़ा। उनके साथ की अन्य महिलाओं ने भी जेल से रिहाई स्वीकार नहीं की। गांधीजी के कहने पर महिलाएं जेल से बाहर आने पर राजी हुईं। बाद में इस बात को लेकर जन-आंदोलन हुआ और अरुणा लाहौर जेल से रिहा हुईं। फिर १९३२ में गिरफ्तार और जुर्माना। दिल्ली डिस्ट्रिक्ट जेल में उन्हें कष्ट दिये गये और अम्बाला जेल में भेजकर गुनहखाने में रखा गया। जेल से छूटकर दो वर्ष शांत रहीं। फिर ८ अगस्त, १९४२ के 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव के समय पति के साथ अ० भा० कांग्रेस की बैठक में। १९४२ में अरुणाजी ने जबर्दस्त काम किया। २६ सितम्बर, १९४२ को उनकी सारी संपत्ति जब्त कर ली गई। वह इस समय भूमिगत थीं। उनका मकान और मोटरगाड़ी आदि सारा सामान नीलाम कर दिया गया। अरुणा बराबर भूमिगत रहकर आंदोलन चलाती रहीं। बाद में राममनोहर लोहिया के साथ 'इन-कलाब' मासिक के संपादन में हाथ बंटाया। उन्हें गिरफ्तार कराने पर पांच हजार का इनाम भी रखा गया था। स्वास्थ्य के बिगड़ने का समाचार सुनकर गांधीजी ने उन्हें समर्पण के लिए राजी करना चाहा, किन्तु वह राजी नहीं हुई और २६ जनवरी, १९४६ को वारंट रद्द होने पर ही सामने आई। फरवरी १९४६ में अरुणा ने एक नई आजाद हिंद फौज के संगठन का नारा दिया। स्वतंत्रता मिलने तक वह अपने ढंग से काम करती रहीं। यूसुफ मेहर अली ने उनके बारे में लिखा था "१८५७ की रणदेवी झांसी की रानी थी, १९४२ की अरुणा आसिफ अली।"

१९५८ में अरुणा दिल्ली नगर निगम की अध्यक्षा हुईं और एक अरसे तक इस पद पर बनी रहीं।

अरुणाबहन शंकरप्रसाद देसाई : ३० बहनों की टोली लेकर बढ़वाण में विकास विद्यालय का कार्य प्रारम्भ किया, २४ वर्षों से उसी संस्था की मन्त्री हैं, संस्था के कार्यहेतु सिंगा-पुर, पीनांग, मलाया, हांगकांग, सैगोन, रंगून आदि का प्रवास किया। ६२ से ६७ तक गुजरात विधानसभा की सदस्या रहीं, आजकल बाल-अदालत की मानद न्यायाधीश, कामगार कल्याण बोर्ड की सदस्या भी हैं।

अंबालिकाराय चौधरी : १९२५। बंगाल में कस्तूरबा ट्रस्ट के संगठन में प्रमुख भाग। आठ वर्ष तक ट्रस्ट का संचालन। संप्रति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अभय-आश्रम के माध्यम से स्त्री-शिक्षा और बालकों की शिक्षा में संलग्न।

अमल प्रभा दास : १९११। उच्च शिक्षा के बाद सेवाग्राम और मगनवाड़ी में प्रशिक्षण। व्यक्तिगत सत्याग्रह में जेलयात्रा। सन् १९४५ से कस्तूरबा ट्रस्ट, असम की प्रतिनिधि। बुनियादी तालीम की सलाहकार समिति की सदस्या, समाज कल्याण सलाहकार बोर्ड की अध्यक्षा और संचालिका रहीं। असम सर्व सेवा संघ के माध्यम से भूदान पदयात्राओं में भाग। तंत्र-मुक्ति-अभियान के अंतर्गत सभी पदों से त्यागपत्र देकर पूर्णरूपेण सर्वोदय के लिए समर्पित।

अमृतकौर, राजकुमारी : १८८९। राजा सर हरनामसिंह कपूरथला की पुत्री। विदेशों में उच्च शिक्षा। अखिल भारतीय महिला परिषद् की निर्मात्री। सोलह वर्षों तक गांधी जी की निजी सचिव। अखिल भारतीय चरखा संघ और हिंदुस्तानी तालीमी संघ की सदस्या। केन्द्रीय सरकार में स्वास्थ्य मंत्राणी।

आ

आभा कनु गांधी : १९२८। बचपन से बापू के संपर्क में। नोआखाली शांतियात्रा में निरंतर बापू के साथ। बापू के निर्वाण के क्षण में भी उनकी 'लाठी'। देशभर में चरखा-प्रचार के बाद अब सौराष्ट्र में खादी तथा अन्य सेवा-कार्य।

आशादेवी आर्यनायकम् : १९०२-७०। ई. डब्ल्यू. आर्यनायकम् की पत्नी। हिन्दुस्तानी तालीमी संघ, सेवाग्राम की प्रारम्भ से अंत तक संचालिका रहीं। अनेक प्रान्तीय सरकारों और केन्द्रीय सरकार को शिक्षा-संबंधी कार्यों में सहयोग देती रहीं। भारत सरकार ने आपको पद्म-विभूषण की उपाधि से अलंकृत करना चाहा था। किन्तु इन्होंने सेवा के बदले कुछ न लेने के सिद्धान्त के आधार पर उपाधि लेना अस्वीकृत कर दिया।

इ

इरावती बाई कर्वे : १९०५ में ब्रह्मदेश में जन्म। १९२८ में एम. ए.। १९३० में बर्लिन से पी.एच. डी.। नृतत्व शास्त्र, प्राणि शास्त्र, संस्कृत और दर्शन शास्त्र इनके विशिष्ट विषय हैं। पति डा. दिनकर घोंडो कर्वे। १९३१ में नाथीबाई दामोदर ठाकरसी भारतीय महिला पीठ की रजिस्ट्रार। १९३९ में डेकन कॉलेज रिसर्च इन्स्टीट्यूट में समाजशास्त्र की रीडर।

इंदिरा गांधी : १९१७। ६ दिसम्बर, १९२१ में पिता जवाहरलालजी पर जब मुकदमा चला तब पितामह की गोद में अदालत में हाजिर रहकर मानो देशसेवा का दीक्षा संस्कार लिया। छः वर्ष की उम्र में इलाहाबाद के सेसीलिया हाई स्कूल में भर्ती। छोटी ही उम्र में अंग्रेजी के शेक्सपियर, डिकेन्स आदि की कथाएं पढ़ लीं। कुछ चरित्रों और पात्रों का जीवन पर विशेष प्रभाव—जोन ऑफ आर्क उनमें और भी विशिष्ट चरित्र था। १९२६ में माता-पिता के साथ यूरोप और फिर रूस की यात्रा। १९३० में रावी के तट पर पिता के मुख से स्वाधीनता की घोषणा तल्लीन भाव से सुनी। जेलयात्रा न कर सकने की विवशता का दुःख। बच्चों का सेवादल बनाया और रामायण की कथा के आधार पर उसका नाम 'वानर-सेना' रखा। सारे देश में इसी प्रकार की वानर सेनाएं बनीं और उन्होंने झंडा बनाना, पोस्टर चिपकाना—जैसे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तमाम छोटे-छोटे तथापि महत्त्वपूर्ण काम करने के साथ-साथ जुबानी सूचनाएं पहुंचाने का काम किया। दसवीं वर्षगांठ के बाद जवाहरलालजी ने 'पिता के पत्र पुत्री के नाम' लिखकर बेटी को जो पाठशालाओं में नहीं मिल सकता था, वैसे मानव सभ्यता के इतिहास से अवगत कराया। इसके बाद १९३० में इसी विचार से क्रमशः 'विश्व इतिहास की झलक' लिखी गई। इसमें अन्य बातों के साथ जवाहरलालजी ने इंदिरा को स्मरण दिलाया कि तुम्हारे जन्म का वर्ष १९१७ संसार की एक बड़ी क्रांति का वर्ष है। गांधीजी के सुझाव पर पूना के 'पीपुल्स ऑव स्कूल' में शिक्षण। तीन साल के बाद १९३४ में शांतिनिकेतन में भर्ती, मगर साल-भर के भीतर ही मां के इलाज के सिलसिले में जर्मनी के बेडनवीलर सेनीटोरियम में पिता के जेल में रहने के कारण जाना आवश्यक हो गया। बेडनवीलर में फीरोज गांधी से परिचय। २८ फरवरी १९३६ में माता कमला नेहरू का स्विट्जरलैण्ड में देहान्त। इंदिरा वहीं बेक्स के जिस स्कूल में भर्ती हो गई थी पढ़ती रही। वहां से इंग्लैंड में ब्रिस्टल के बैठमिंटन स्कूल में। फिर समरविले कॉलेज आक्सफोर्ड में, वहां इंडिया लीग के तत्कालीन संचालक कृष्ण मेनन से संपर्क। स्पेन और चीन-सहायता-समितियों में काम। १९४२ में फीरोज गांधी से विवाह। अल्पअवधि के बाद 'भारत छोड़ो आन्दोलन' में गिरफ्तार होकर नैनी जेल में। १३ मई, १९४३ को स्वास्थ्य के कारण रिहा। २० अगस्त, १९४४ को पहले बच्चे राजीव का जन्म। १९४६ तक इलाहाबाद रहीं, फिर फीरोज गांधी 'नेशनल हेराल्ड' के प्रबंध संपादक होकर लखनऊ गये। इंदिरा भी लखनऊ चली गईं। जवाहरलालजी के अस्थायी सरकार में प्रधानमंत्री होने पर इंदिरा लखनऊ से दिल्ली आती जाती रहीं। दिसम्बर, १९४७ में दूसरे बच्चे संजय का जन्म। सितम्बर, १९४७ में अस्वस्थ रहते हुए भी शरणार्थी-शिविरों में तनतोड़ काम। १९४९ में पिता के साथ अमरीका-यात्रा। १९५० में वापस आकर पिता के काम में लगभग निजीसचिव की तरह रात-दिन व्यस्त। कांग्रेस की कई उपसमितियों की सदस्यता के साथ समाज-कल्याण का काम। १९५३-५४ में इंग्लैण्ड, चीन, इंदोनीसिया की राजनीतिक यात्रा में फिर पिता के साथ। १९५३ में खुद अकेले रूस की यात्रा की थी। १९५४ की चीन-यात्रा के कारण दो साम्यवादी देशों की तुलना का अवसर मिला। देश में चलनेवाली हर नई परियोजना को पिता के साथ रहकर हृदयंगम किया। १९५२ के आम चुनाव अभियान में सक्रिय होकर काम किया। इंदिराजी के पिता के साथ रहने और राजनीतिक क्षेत्र में एकदम व्यस्त हो जाने से फीरोज गांधी अन्यमनस्क। उन्होंने भी रायबरेली से लोकसभा का चुनाव लड़ा और लखनऊ से दिल्ली आ गये। १९५७ के आम चुनाव में फिर संसद सदस्य। २ सितम्बर, १९६० को फीरोज गांधी की दिल के दौरे से मृत्यु। इंदिरा बचपन से देशसेवा में रत, १९५५ से कांग्रेस की कार्यसमिति में। इस घटना के बाद क्षण-क्षण देश का हो गया। १९५९ में कांग्रेस की अध्यक्षा। १९६१ में फिर पंडितजी के साथ अमरीका-यात्रा। १९६२ में जैकेलीन कैनेडी भारत आईं—और श्रीमती कैनेडी की भारत-यात्रा समाप्त होते ही इंदिरा अमरीका की भाषण-यात्रा पर गईं। १९६२ के अक्टूबर में चीन ने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लद्दाख पर हमला करके करीब चौदह हजार वर्गमील क्षेत्र पर कब्जा कर लिया। जवाहरलालजी को इस घटना ने हिला दिया। उस समय देश-भर में स्थानीय सुरक्षा समितियां बनाई गईं। इंदिरा ने इनमें बड़ा काम किया, खासकर तेजपुर, जहालपुर के नागरिकों और नेफा तथा लद्दाख के ऊंचाई पर पड़े जवानों के लिए। १९६४ में कांग्रेस के भुवनेश्वर अधिवेशन के अवसर पर जवाहरलालजी को फालिज का दौरा। २७ मई, १९६४ को पंडितजी का निधन। शास्त्रीजी प्रधान मंत्री। इंदिराजी के बहुत मना करने पर भी मंत्रिमंडल में लिया। राज्य सभा की सदस्या नामजद। सूचना प्रसारण मंत्रालय में अद्वितीय लगन से काम। रूस की यात्रा। रूस के नये नेताओं से नये सम्बन्ध। नेहरू-स्मारक-प्रदर्शनी के उद्घाटन समारोह की अध्यक्षता के लिए न्यूयार्क।

सितम्बर १९६५ में पाकिस्तानी हमला। शास्त्रीजी के कुशल और निर्भीक नेतृत्व में भारत की विजय। रूस की मध्यस्थता से ताशकंद में भारत-पाक-समझौता। वहीं प्रधानमंत्री शास्त्री की मृत्यु। ९ जून, १९६४ से ११ जनवरी, १९६६ तक के अल्पकाल में ही शास्त्रीजी ने देश की प्रतिष्ठा को लौटा दिया था। यों देश में बड़े-बड़े मतभेद और संकट चल रहे थे। इंदिरा १९ जनवरी, १९-६६ को प्रधान मंत्री चुनी गईं। २६ जनवरी, १९६६ को भारत के प्रधान मंत्री की शपथ का ग्रहण। पचास करोड़ की आबादी वाले राष्ट्र की शासन-सत्ता महिला को सौंपी गई। यह प्रगति के सबसे बड़े दावेदार देशों तक में आश्चर्य का विषय बना।

२७ मार्च, १९६६ से अमरीका के राष्ट्रपति जॉनसन के निमंत्रण पर वहां की राजकीय यात्रा। वर्जीनिया के विलियम्सबर्ग से ह्वाइट हाउस के लान पर भव्य स्वागत। इस यात्रा का भारत और अमरीका के संबंधों पर बड़ा अच्छा प्रभाव हुआ। लौटते हुए लंदन, पेरिस, मास्को।

उत्तर प्रदेश में उस समय अकाल और दक्षिण के केरल में दंगे। भाषावार प्रांतों के झगड़ों को निबटाया। पंजाबी सूबा। नागा और मिजो उपद्रव। कांग्रेस में आपसी मतभेद। रुपये का छत्तीस प्रतिशत अवमूल्यन। इसीके बाद अवर्षण, अनियंत्रित मुद्रास्फीति, हड़तालें, उग्र प्रदर्शन। तब १९६७ के आम चुनाव।

इंदिराजी के ओजस्वी चुनाव-अभियान से कांग्रेस सबसे बड़ी पार्टी के रूप में विधान-सभाओं में पहुंची। मद्रास और केरल में उसका बहुमत नहीं था। अन्य कुछ राज्य जैसे बंगाल, बिहार, पंजाब, उत्तर प्रदेश और उड़ीसा में भी वह सरकारें नहीं बना सकी। लोकसभा में भी कांग्रेस का बहुमत ७० प्रतिशत से ५५ प्रतिशत रह गया। किंतु इंदिरा एक प्रबल भारतीय नेता के रूप में प्रतिष्ठित। १२ मार्च, १९६७ को वह सर्व-सम्मति से प्रधान मंत्री चुनी गई।

फिर दल-बदल का खेल चला। वर्षा ठीक हुई। अन्न के मामले में देश को आत्मनिर्भर बनाने के प्रयत्न सफल होने लगे। इंदिरा ने देश के भीतर की हालत सुधारी। विदेशों में श्रीलंका और पूर्वी यूरोप के देशों की सद्भावना यात्राएं कीं। १९६८ में स्थिति स्थिर नहीं हुई। बंगाल, बिहार, उत्तर प्रदेश और पंजाब में राष्ट्रपति शासन लागू हुआ। उत्तर पूर्वी क्षेत्रों की समस्या के लिए मेघालय बनाने का विचार बना। दक्षिण-पूर्वी एशिया, लातीनी अमरीका, कैरोनियन द्वीप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समूह, अमरीका, इंग्लैण्ड, पश्चिम जर्मनी की सद्‌भावना यात्राएं। १९६९ में २८ देशों के राष्ट्रपतियों और प्रधान मंत्रियों के सम्मेलन में लंदन। फरवरी के मध्यावधि चुनाव में बंगाल में कांग्रेस अल्पमत में आई। पंजाब, बंगाल, बिहार में सरकार नहीं बना सकी। मई में राष्ट्रपति जाकिर हुसैन का स्वर्गवास। नये राष्ट्रपति के चुनाव को लेकर इंदिरा और कांग्रेस के कुछ वरिष्ठ नेताओं में मत-भेद। इंदिरा ने उपप्रधान मंत्री मुरारजी देसाई से उनका विभाग ले लिया। मुरारजी ने इस्तीफा दे दिया। उसे मंजूर करके इंदिरा ने १४ प्रमुख बैंकों का राष्ट्रीयकरण कर दिया। कांग्रेस के अध्यक्ष आदि ने तत्कालीन उपराष्ट्रपति व्य. वा. गिरि के स्थान पर राष्ट्रपति के लिए नीलम संजीव रेड्डी का नाम उम्मीदवार की तरह घोषित किया। इस पर कांग्रेस में फूट पड़ गई। इंदिरा ने व्य. वा. का समर्थन किया और उनकी जीत हुई।

कांग्रेस नई और पुरानी ऐसे दो हिस्सों में विभक्त हो गई। दोनों के अलग-अलग अधिवेशन हुए। नई कांग्रेस के अध्यक्ष जगजीवन-राम बने। १९७० में राजाओं के प्रिवीपर्स और विशेषाधिकार समाप्त हुए। १९७०-७१ का इंदिराजी का बजट प्रगतिशील और जनसामान्य की आकांक्षाओं को ध्यान में रखकर प्रस्तुत हुआ। सन् १९७१ तक परती जमीन बांटने का प्रस्ताव पारित हुआ। हरयाणा और पंजाब के मसले हल किये गये। तूफान, बाढ़ और अकाल-पीड़ित इलाकों के तूफानी दौरे करके विभीषिका को समझकर राहत पहुंचाई गई। मेघालय बना। केरल के मध्यावधि चुनाव में कांग्रेस को बहुमत मिला।

फिर १९७१ में मध्यावधि चुनाव हुए। नई कांग्रेस की अभूतपूर्व विजय हुई। राज-नीतिक वातावरण स्थिर हुआ। मगर पाकिस्तान परेशान करने में लगा रहा। उधर पूर्वी बंगाल के चुनावों में अवामी लीग की विजय ने पाकिस्तान के राष्ट्रपति याह्या खां का संतुलन बिगाड़ दिया। अवामी लीग के मुजीबुर्रहमान को गिरफ्तार करके फांसी की सजा सुना दी गई। पूर्व बंगाल में दमनचक्र शुरू हो गया। शरणार्थी लाखों की तादाद में भारत में आने लगे।

इंदिरा ने अद्‌भुत धैर्य और सूझबूझ से काम लिया और पूर्व बंगाल की जनता जब आततायियों के खिलाफ खड़ी हो गई, तो पाकिस्तान भारत से लड़ बैठा। पाकिस्तान की भयानक हार हुई। पूर्वी बंगाल पाकिस्तान से अलग होकर 'बांगला देश' का जन्म हुआ। इस विजय ने भारत को विश्व में एक नया गौरव दिया।

२६ जनवरी, १९७२ को इंदिरा देश के सर्वोच्च अलंकरण 'भारत-रत्न' से विभूषित। उसके बाद मद्रास और उत्तर प्रदेश को छोड़कर प्रांतों के मध्यावधि चुनाव हुए। सारे देश के कुल २५२९ स्थानों में १९२६ सत्ता कांग्रेस को मिले।

समस्याएं बड़े देश की बड़ी हैं। इंदिरा उन्हें जीवट से हल करने में जुटी रहती हैं।

इन्दुमती चीमनलाल शेठ : गुजरात विद्यापीठ की स्नातिका, अडालज में स्त्री अध्यापन मंदिर की संचालिका, प्रसिद्ध सी० एन० विद्या विहार की स्थापिका व संचालिका, ज्योतिसंघ, विकासगृह, कस्तूरबा स्मारक ट्रस्ट व महिला समुन्नति संघ आदि संस्थाओं में सक्रिय योग, द्विभाषी बंबई राज्य में उप-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शिक्षा-मंत्री व गुजरात राज्य में शिक्षामंत्री भी रहीं, भारत सरकार द्वारा, 'पद्मश्री' की उपाधि से विभूषित की जा चुकी हैं।

उ

उदयप्रभाबहन महेता : १९४१। नशाबंदी तथा स्वदेशी आंदोलन से सार्वजनिक जीवन में प्रवेश, सन् ३०, ३२ व ४२ के आंदोलनों में भाग लिया, सन् ३४ से ज्योति संघ की प्रवृत्तियों में, आजकल 'अंध कन्या प्रकाश गृह' व 'स्त्री केलवणी मंडल' की कार्य-कारिणी समिति की सदस्या हैं तथा ज्योति संघ व अखिल भारतीय महिला परिषद् की अध्यक्षा हैं।

उमा नेहरू : १८८४ में आगरा में जन्म। पिता पंडित निरंजननाथ हुक्कू। हुवली में शिक्षा। १९०१ में शामलाल नेहरू से विवाह। अनेक बार जेलयात्राएं। लोकसभा की सदस्या और अनेक शिक्षा संस्थाओं से संवद्ध रहीं।

उषा मेहता : १९२० में सतारा में जन्म। विलसन कॉलिज बंबई वि० वि० से १९३९ में स्नातिका। १९४१ में पढ़ाते हुए कानून की परीक्षा पास की। तभी 'भारत छोड़ो' आंदोलन आ गया। उषा कांग्रेस सोशलिस्ट दल से प्रभावित थी। उसने गुप्त-रेडियो संचालन करके देश में आंदोलन की खबरें और जोश आदि देना शुरू किया। पिता जज थे। उषा ने उनकी नौकरी की भी चिंता नहीं की। यह प्रसारण 'स्वतंत्रता की आवाज़' (वायस ऑफ फ्रीडम) के नाम से होता था। बाबूभाई खाखर नामक तरुण इसका सह-योगी था। डॉ० लोहिया ने इन्हें सहायता पहुंचाई। १४ अगस्त, १९४२ से इसका प्रसारण शुरू हो गया। 'यह कांग्रेस-रेडियो ४२.८४ मीटर पर भारत के किसी स्थान से बोल रहा है।' प्रायः स्थान वदलना ज़रूरी होता था। इसमें अनेक कठिनाइयों के साथ तकनीकी कठिनाइयां होती थीं। चिटगांव में बम का हमला, चिमूर-आष्टी के अत्याचार, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय दृष्टि से कांग्रेस के दृष्टिकोण का प्रसार, विश्व की जनता से सद्भावना की अपील आदि प्रसारण के विषय होते थे। १२ नवंबर, १९४२ को रेडियो, उषा मेहता बाबूभाई और अन्य कुछ सहयोगी पकड़ लिए गए। छः महीने तक पुलिस अत्याचार करती रही किंतु उषा और उनके साथियों ने उसे किस प्रकार की सूचनाएं नहीं दीं। मुकदमा चला और चार साल की सजा हुई। १९४६ में रिहाई के बाद उषा ने शिक्षण लेकर 'महात्मा गांधी के सामाजिक और राजनीतिक विचार' नामक श्रेष्ठ पुस्तक लिखी और उस पुस्तक पर उसे डॉक्टरेट मिली। संप्रति बंबई वि. वि. में राजनीति विभाग में प्राचार्या।

उर्मिला देवी : देशबंधु चित्तरंजन दास की बहन। १९३१ में नारी सत्याग्रह समिति का मोहिनी देवी ज्योतर्मयी गांगुली हेमप्रभा दास गुप्त, अशोकलता दास, सुमतिदास और विमला प्रतिभादेवी के साथ संचालन। सरकार के आदेशों की अवज्ञा करके जुलूस निकाले और जेलयात्रा की, अछूतोद्धार और खादी-प्रचार में काम किया। नारी सत्याग्रह समिति, निखिल जातीय नारी संघ और राष्ट्रीय महिला संघों के अवैध घोषित होने पर इन आदेशों का विरोध किया और जेल-यात्रा की।

एनी बीसेन्ट : जन्म १८४७। पिता विलियम वेज वुड अंग्रेज और मां एमिली आइरिश थीं। इंग्लैंड, जर्मनी और फ्रांस में शिक्षा प्राप्त की। १८६६ में रेवेरेण्ड फ्रेंक बेसेंट से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विवाह। धीरे-धीरे तर्क की कसौटी पर ईसाई धर्म इनकी दृष्टि में आकर्षण-विहीन हो गया। एक लड़का और एक लड़की पति ने अदालत से अपने पास रखकर तलाक ले लिया। १८७३ से १८९३ तक इंग्लैंड के प्रसिद्ध नास्तिक चार्ल्स ब्रेडला के साथ काम किया। १८८५ में ससाजवादी विचारधारा से प्रभावित हुईं। तभी मेडम ब्लावट्स्की की 'सीक्रेट डाक्ट्रिन' नामक किताब पढ़ ली और थियासोफिस्ट बन गयीं। १८९३ में भारत आयीं। १९०७ में ७ वर्ष के लिए थियासोफिस्ट समाज की अध्यक्षा बनीं। इन सात वर्षों में समाज ने आश्चर्यजनक उन्नति की। बनारस में सेन्ट्रल हिन्दू कॉलेज की स्थापना की। गीता, उपनिषद्, रामायण, महाभारत आदि को शिक्षाक्रम में स्थान दिया। १९१५ में हिंदू कॉलेज पं. मदन-मोहन मालवीय को हिंदू वि. वि. के प्रथम घटक के रूप में सौंपा। हिंदू वि. वि. ने डी-लिट की उपाधि से विभूषित किया। १९१६ में होमरूल लीग की स्थापना की। इसी वर्ष लखनऊ के कांग्रेस अधिवेशन में हिंदू मुसलमान नेताओं ने संयुक्त रूप से स्वायत्त शासन की मांग की। १९१७ में कांग्रेस की अध्यक्षा निर्वाचित। २० सितम्बर, १९३३ में अडयार चलीं गयीं। वहीं आपका निधन हुआ और हिंदू प्रथा के अनुसार शव का संस्कार किया गया।

क

कमलादेवी चट्टोपाध्याय : जन्म १९०३ मंगलौर। बाल विधवा हो जाने के बाद क्वीन मेरी कॉलेज में शिक्षा। श्रीमती सरोजिनी नायडू के भाई हरीन्द्रनाथ चट्टो-पाध्याय से पुनर्विवाह। १९२२ में सार्व-जनिक जीवन में प्रवेश। १९२६ में लेजिस-लेटिव असम्बेली का चुनाव लड़ा। इस प्रकार चुनाव लड़नेवाली यह पहली महिला थीं। १९२९ में कांग्रेस वीमन्स लीग फॉर पीस में प्राग् गयीं। उसी वर्ष अहमदाबाद में युवा परिषद् की अध्यक्षा। १९३० में सविनय अवज्ञा में भाग और जेलयात्रा। १९३१ में रिहा होने के बाद हिंदुस्तानी सेवादल का विस्तार करने के लिए सारे देश की यात्रा। १९३१ में विद्यार्थी परिषद् लाहौर की अध्यक्षा। १९३१ में फिर जेल यात्रा। १९३४ में कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी में शामिल। १९३५ में आल इण्डिया कांफ्रेंस मेरठ की अध्यक्षता की। जयश्री रायजी, हंसा मेहता, पेरीन केप्टन, सोफिया सोमजी और दादाभाई नौरोजी की पौत्री खुरशीद-बहन के साथ बंबई में होनेवाली रचनात्मक प्रवृत्तियों में भाग लिगा। १९३९-४४ के बीच अनेक बार जेलयात्रा। भारत की समस्या से अमरीका की जनता को अवगत कराने के लिए वहां की यात्रा की की।

स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद राजनीति के बजाय सहकारी आंदोलन को अपना क्षेत्र बनाया। थियेटर सेन्टर ऑफ इंडिया की स्थापना की। १९५५ में पद्मभूषण की उपाधि से अलंकृत। सम्प्रति अ. भा. गृह उद्योग आयोग की अध्यक्षा।

कमला नेहरू : प्रारंभ से ही आंदोलनों में भाग लिया। नमक सत्याग्रह के समय श्यामकुमारी नेहरू और कृष्णा नेहरू के साथ किसानों, छात्रों और स्त्रियों को संगठित किया। 'कर न देना' आंदोलन में प्रमुख भाग लिया। उ. प्र. की राजनीतिक महिला सभा की अध्यक्षा की तरह नवंबर १९३१ में खादी प्रचार की हिमायत की। १९३१ में कांग्रेस

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कार्य-समिति की कार्यकारी अध्यक्षा नियुक्त हुईं, किंतु गिरफ्तार कर ली गईं। उनके स्वास्थ्य ने कभी उनका साथ नहीं दिया। चिकित्सा के लिए उन्हें विदेश जाना पड़ा। २८ फरवरी, १९३६ को स्विट्ज़रलैंड में उनका निधन हो गया।

कमलाताई हास्पेट : १८९६। नागपुर के प्रसिद्ध मोहिनी परिवार में जन्म। १२वें वर्ष में विवाह। १५वें वर्ष में वैधव्य। बड़े धैर्य और अध्यवसाय के साथ आत्मनिर्भर होने के विचार से शिशु-संगोपन का कार्य सीखा और एक सरकारी अस्पताल में काम भी मिला। वह युग अंग्रेजों और अर्द्ध-गोरों का था। एक हिंदू प्रसूता को कमोड देने के 'अपराध' में मैट्रन ने बहुत डांटा और कहा कि ये लोग तो हर हालत में चलकर जा सकते हैं। कमलाताई ने तत्काल नौकरी छोड़कर अपनी कुछ सखियों के साथ घर में ही चार खाटें डालकर प्रसूति-गृह प्रारंभ कर दिया। १९२१ में प्रारंभ किए गए इस सूतिकागृह की धीरे-धीरे ख्याति फैली और महाराष्ट्र तथा मध्यप्रदेश में जहां-तहां उसकी शाखाएं खुलीं। १९५६ में इसे मातृसेवा संघ का रूप मिला। सरकार ने कमलाताई की सेवा के लिए उन्हें 'पद्मश्री' से अलंकृत किया।

कमला श्रीनिवासन् : १९२४। विद्यार्थी काल में सामाजिक कार्यक्रमों में भाग, ४ वर्ष तक केरल कस्तूरबा ट्रस्ट की संचालिका और संगठक रहीं, फिर एक वर्ष कस्तूरबाग्राम (इंदौर) की संचालिका का काम संभाला, सेवाग्राम से बुनियादी तालिम और मगनवाड़ी वर्धा से खादी ग्रामोद्योग में प्रशिक्षित, करीब २३ वर्षों तक केरल और तमिलनाडु की समग्र ग्राम सेवा योजनाओं में कार्य करते हुए हरिजन उत्थान, महिला एवं बाल कल्याण के कार्यक्रमों में विशेष रुचि लेती रहीं, आजकल सर्वोदय आश्रम द्वारा संचालित स्कूल में प्रधान अध्यापिका हैं।

कल्पना दत्त : १९३२ में क्रांतिकारी गतिविधियों के कारण बंद होकर रवीन्द्रनाथ ठाकुर, महात्मा गांधी और चार्ल्स एंड्रयूज़ के प्रयत्नों से १९३७ में रिहा। गांधीजी मिदनापुर जेल में जाकर मिले भी। 'चिटगांव-शास्त्रागार-लुंठन केस' की अपनी गतिविधियों पर एक पुस्तक भी लिखी है। दूसरे महायुद्ध के समय इसपर फिर अनेक प्रतिबंध लगा दिये गये थे।

कस्तूरबा गांधी : १८६९। पोरबंदर के गोकुलदास नाकनजी की पुत्री। सात वर्ष की उम्र में मोहनदास कर्मचंद गांधी से विवाह निश्चित। १८८२ में विवाह। दोनों समवयस्क। पहली संतान पंद्रह वर्ष की अवस्था में। १८९३ में पति दक्षिण अफ्रीका गये और जब वहां से लौटे तो देश की सेवा की भावना से भरे हुए। तबसे जीवन के अंत तक कस्तूरबा ने पति के व्रत को अपना बना लिया और उनके हर कार्य में हिस्सा लेकर उन्हें अपनी चिंता से मुक्त रखा। संतान हरिलाल, मणिलाल, रामदास, देवदास। २२ फरवरी, १९४४ में आगाखां महल में कैद की अवस्था में देहान्त। गांधीजी ने कहा, "मैं कल्पना नहीं कर सकता कि जीवन बा के बिना कैसे चलेगा।" उनकी स्मृति में 'कस्तूरबा ट्रस्ट' तब से निरंतर स्त्री-सेवा में रत है।

कान्ताबहन चतुर्भुज : १९३०। अफ्रीका में मिल रही नौकरी का आकर्षण छोड़कर सन् ५७ भूदान-आंदोलन में प्रवेश, सन् ६० में हुए डाकुओं के आत्म-समर्पण के दौरान विनोबा के साथ रहीं, आजकल गुजरात सर्वोदय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मंडल की अध्यक्ष हैं, 'भूमिपुत्र' तथा सर्वोदय साहित्य के प्रसार-प्रचार में विशेष योग देती हैं।

कांता धीरजलाल खांडवाला : १९०३। सन् २६ में बी. ए. करने के बाद मेडिकल रिलीफ लीग कमेटी व बांबे स्टूडेंट्स ब्रदरहुड कमेटी की सदस्या बनीं, सन् ३० में सविनय अवज्ञा आंदोलन में योगदान, सन् ३१ से वनिता विश्राम नामक शैक्षणिक व सामाजिक संस्था की मानद मंत्री हैं, विधवाओं के अधिकारों की वकालत करती रहीं, पिछले ५० वर्षों से कांग्रेस की सक्रिय सदस्या हैं।

काशीबहन गांधी : गांधीजी के भतीजे छगनलाल गांधी की पत्नी।

कुमुदनी मित्तर : क्रिस्टो मित्तर की पुत्री। शिक्षित ब्राह्मण महिलाओं को संगठित करके क्रांति-नेताओं को शरण देने में सहायक। महिलाओं का यह संगठन क्रांतिकारी साहित्य वितरण में भी मदद करता था। प्रसिद्ध क्रांतिकारी बंगला पत्रिका 'सुप्रभात' के प्रसार और प्रचार में इनका बड़ा हाथ रहा। इनका कार्यकलाप १९०७ से १९१२ तक चलता रहा।

कुलसुम जे. सायानी : १९००। सन् २७ से स्त्री-उत्थान के कार्यक्रमों में योग, सन् ४५ में बुनियादी तालीम का प्रशिक्षण व प्रयोग, राष्ट्रीय आंदोलन में जेलयात्रा, उन्हीं दिनों 'रहबर' नामक पत्रिका का संपादन व प्रकाशन, सन् ५६ में चीन-यात्रा, सन् ५७ में यूनेस्को के तत्वावधान में हुए प्रौढ़ शिक्षा सम्मेलन में भारत का प्रतिनिधित्व किया, सन् ५९ में समाज-सेवा के लिए पद्मश्री से अलंकृत, सन् ६९ में नेहरू साक्षरता पुरस्कार मिला, सन् ५८ में नेशनल कमेटी आन विमेन्स एजूकेशन की सदस्या, आजकल गांधी स्मारक निधि, बंबई की सदस्या हैं, अनेक राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं से सम्बद्ध हैं।

केसरबाई : सुप्रसिद्ध गायिका। अल्लादिया खां घराने की गायन-पद्धति में प्रमुख उल्लेख किया जाता है। अल्लादिया खां से सीखने के बाद इन्होंने रामकृष्ण बुवावजे, भास्कर बुवा बखले और अब्दुल करीम आदि संगीतविदों से तालीम ली। ख्याल गायकी में इन्होंने बड़ी प्रवीणता सम्पादित की है। विलंबित तान मुरकी खटका सभी बातों में इन्हें लाघव प्राप्त है।

कौशल्या गर्ग : १९२२। महिलाश्रम वर्धा से शिक्षा प्राप्त, नोआखली में गांधीजी के साथ काम, महिला शिक्षा सदन, हटूंडी में शिक्षिका, आजकल समाज कल्याण विभाग द्वारा संचालित महिला जन जागृति केन्द्र की संचालिका हैं तथा इस केन्द्र के माध्यम से आदिवासियों के बीच काम कर रही हैं।

कौशल्याबहन जे. नाणावटी : १९२३। भारत सेवक समाज, मातृ-बाल कल्याण, अ. भा. महिला परिषद्, आकाशवाणी जागृत श्रोता मंडल, राजकोट व तदुपरांत वाघरी संघ अहमदाबाद आदि में, 'भारत सेवा' पत्र की सह-संपादिका, समाज कल्याण व परिवार नियोजन पर रेडियो वार्ता आदि के द्वारा समाज सेवा के क्षेत्र में विभिन्न पदों पर रहकर योगदान, भारत सेवक समाज की आजीवन सदस्या, आजकल भा. से. स. की संगठन मंत्री हैं, सर्वोदय विचार के प्रति आस्था है।

कृष्णाकुमारी निकुंज : १९२१। सन् ४९ में वर्धा से ग्राम सेविका का तथा बुनियादी शिक्षा का प्रशिक्षण लिया, सन् ५४ में सर्वोदय बाल निकुंज नामक संस्था की स्थापना की, आज उसीके माध्यम से शिक्षण-कार्य में रत हैं,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

'गांधी युग की महिलाएं' प्रकाशित पुस्तकों में एक है।

कृष्णा हठीसिंग : पंडित मोतीलाल नेहरू की पुत्री, जवाहरलालजी की बहिन। राजा हठीसिंग से विवाहित। नेहरू-परिवार के अन्य सदस्यों की भांति देशप्रेम और परिश्रम-निष्ठ। इनके विषय में एक पुस्तक की भूमिका में इनके पति श्री हठीसिंग ने किसी मित्र को उद्धृत करते हुए लिखा है, समूचे-नेहरू परिवार में वह अकेली थी जो पद और सत्ता से दूर रही। उनकी 'विद नो रिग्रेट्स' और 'वी नेहरूज' पुस्तकें प्रसिद्ध हैं। अंतिम पुस्तक 'इंदू से प्रधान मंत्री तक' उनके निधन के बाद सस्ता साहित्य मंडल से प्रकाशित हुई। निधन १९६८।

ख

खुरशेदबहन : दादाभाई नौरोजी की पौत्री। स्वयं सेविकादल १९३० की प्रसिद्ध संगठन-कर्त्री। १९४० में अहिंसा की शक्ति का प्रचार करने पश्चिमोत्तर सीमाप्रांत गई। उसने वहां पठानों, पीरों, मलिकों और खानों के बीच अपहरण के विरोध में विचार जगाये और हिंदू समाज को निर्भय बनाने में मदद की। १९४० के अंत में वह 'वालोयंगी' कबीला-क्षेत्र में जाना चाहती थी। सरकार ने जब अनुमति नहीं दी तो, उसने सत्याग्रह करके सीमा पार की। ४ दिसम्बर, १९४० को गिरफ्तार, एक हजार का जुर्माना या तीन महीने की सजा। उसने सजा चुनी। अवधि समाप्त होने पर सीमांत से लाकर उसे बंबई में सुरक्षा कैदी बना दिया गया। १९४१ में उसे बंबई प्रांत में आने-जाने की इजाजत मिल गई। खुरशेद ने इस आज्ञा का उल्लंघन करके वर्धा जाना चाहा। गिरफ्तार करके यरवदा जेल में रखी गई। फिर उसने 'भारत छोड़ो' आंदोलन में भाग लिया और पुलिस के अत्याचारों का सूक्ष्म और विस्तृत अध्ययन किया।

ग

गंगाबेन बालाभाई झवेरी : १८९६। स्वामी विवेकानंद व गांधीजी की प्रेरणा से समाज-सेवा क्षेत्र में पदार्पण, सन् ३० में नमक सत्याग्रह के समय पू. कस्तूरबा के साथ पदयात्रा में शामिल, जेलयात्राएं, आजकल ज्योति संघ में हैं, गुजरात राज्य द्वारा पचास वर्ष से अधिक समय की सतत सामाजिक सेवा के उपलक्ष में ताम्र पत्र से सम्मानित की गई हैं।

गौहर जान : १८७०-१९३०। नजीरखां और प्यारा साहब की शिष्या। ख्याल होरी आदि गाने का आपका अभ्यास था, जो अंत तक बना रहा। ठुमरी गायक की तरह विशेष रूप से प्रसिद्ध। स्वर, भाव और शब्दों के रसानुकूल उच्चारण। आवाज की मधुरिमा और खानगी इनकी विशिष्टता थी। तरुणाई में दरभंगा दरबार की गायिका, बाद में कलकत्ते रहीं और फिर मैसूर दरबार में आश्रय मिला।

च

चंद्रावती लखनपाल : १९०४। पंडित जयनारायण शुक्ल की पुत्री। इलाहाबाद और बनारस में शिक्षा। १९३० के आंदोलन में सक्रिय भाग। १९३२ में एक वर्ष की सजा १९६९ में राज्य सभा की सदस्या।

द

दुर्गाबाई देशमुख : इनका जन्म राजमुन्द्री में १९१० में हुआ था। ८ वर्ष की अवस्था में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विवाह। बाल विधवा। १९२१ से राजनीतिक क्षेत्र में पदार्पण। हिंदी का अच्छा ज्ञान था। काकीनाडा कांग्रेस अधिवेशन में इसका बड़ा उपयोग हुआ। इस भाषा को जाननेवाले छः सौ स्वयंसेवकों का कुशलता से संचालन किया। १९३०-३४ में नमक सत्याग्रह में भाग। श्रीप्रकाश के बाद दूसरी संघर्ष डिक्टेटर नियुक्त हुई। हिंदुस्तान सेवा दल के संगठन के अपराध में भी जेल-यात्रा। जेल में अंग्रेजी भाषा का अभ्यास किया। राजनीति शास्त्र में आंध्र विश्वविद्यालय से एम. ए. किया और फिर वकालत भी पास की। १९४२ से १९४६ तक वकालत करके सत्याग्रहियों की मदद की। हत्या के मुकदमे की पहली महिला वकील। कांस्टिट्यूट असेंबली की सदस्या नियुक्त। बाद में योजना आयोग की सदस्या। चीन की यात्रा की। १९५३ में तत्कालीन केन्द्रीय मंत्री चिंतामणि देशमुख से विवाह किया।

ध

धनलक्ष्मी टी० के० : १९१५। कस्तूरबा ग्राम इंदौर से आरोग्य सेविका का प्रशिक्षण लेकर सन् ५५ तक उसी संस्था में सेवा, फिर इंदौर के पास पालिया गांव में ११ वर्ष तक आरोग्य सेविका, पिछले पांच वर्षों से जम्मू-कश्मीर के सीमावर्ती गांवों में आरोग्य सेवा का काम कर रही हैं।

न

निर्मला देशपाण्डे : १९२९। राजनीति में एम० ए० कर मॉरिस कालेज नागपुर में प्राध्यापक रहीं, सन् ५२ से ५९ तक विनोबा के साथ देशव्यापी पदयात्राएं, सन् ५९ से ६० में सर्व सेवा संघ की सहमंत्री, सन् ६१ से ६८ तक अखिल भारतीय शान्ति सेना विद्यालय का संचालन, इंदौर में नगर सर्वोदय कार्य, सन् ६९ से ७१ तक बिहार में ग्रामदान-ग्राम-स्वराज्य के सघन कार्य के बाद सन् ७१ अक्तूबर से सहरसा मोर्चे पर पुष्टि कार्य में संलग्न हैं, ब्रह्म विद्यामंदिर की परिव्राजक सदस्या तथा सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति की सदस्या हैं; 'चिंगलिंग' (उपन्यास) 'सीमान्त' (उपन्यास), 'विनोबा के साथ', 'क्रान्ति की राह पर', 'भग्नमूर्ति (एकांकी)' आदि मौलिक रचनाओं के अतिरिक्त भूदान गंगा (८ खण्ड), स्त्री शक्ति, मोहब्बत का पैगाम, त्रिवेणी आदि पुस्तकों तथा मैत्री मासिक पत्रि का संपादन।

निर्मला मजूमदार : १९३२। सन् ४७ में कस्तूरबा ट्रस्ट में प्रशिक्षण-कार्य किया, ग्राम-सेविका रहीं, शान्ति सेना का काम किया, कुछ वर्ष तक गांधी स्मारक निधि के माध्यम से ग्रामसेवा, जमालपुर महिला ग्राम सेवा केन्द्र की प्रभारी, सन् ६१ में गांधी स्मारक निधि से मुक्त होकर सर्वोदय आश्रम कुरसेला में अवैतनिक सेवा कर रही हैं।

निर्मला रामदास गांधी : १९१०। प्रारम्भिक शिक्षा साबरमती आश्रम में, सन् ३० में नमक सत्याग्रह में जेल-यात्रा, खादी-प्रचार, स्त्री-जागरण, अब सेवाग्राम आश्रम की व्यवस्थापिका व कस्तूरबा ट्रस्ट की ट्रस्टी हैं।

निवेदिता भगिनी : २८ नवबंर १८५७। डंगेनैन को टायरोन आयलैंड में। पिता रेवे. एस. आर. नोबल। शिक्षा लेकर विंबलडन में कन्याओं को लिए पाठशाला खोली। १८९५ में स्वामी विवेकानंद से संपर्क। १८९८ में भारत आ गई। लंदन के बजाय निवास कलकत्ता व भारत मातृभूमि हो गई।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्वामीजी के साथ उत्तर-पश्चिम के सारे अंचलों की यात्रा। यह भविष्य के लिए प्रशिक्षण हुआ। कलकत्ता में एक कन्याशाला चलाने का प्रयत्न किया। सफलता नहीं मिली। फिर १९०२ में कलकत्ता के बोस पारा बाग बाजार में शाला खोली तथा सरला देवी से भेंट। श्रीअरविंद के मार्गदर्शन में क्रांतिकारी हलचलों में भी भाग लिया। स्वामीजी का १९०२ में देहावसान हो गया। रामकृष्ण मिशन से संबंध विच्छेद। १९०५ में लार्ड कर्जन के दीक्षान्त भाषण का विरोध किया। रवीन्द्रनाथ ठाकुर, हरीन्द्रनाथ दत्त आदि के साथ स्वदेशी और बंग भंग विरोध में सक्रिय। १९०६ में बंगाल के अकाल में जबर्दस्त राहत-कार्य। उस जमाने में भगिनी निवेदिता ने चरखा अपनाने की सलाह दी थी। प्रचलित शिक्षा की कड़े शब्दों में निंदा की। राष्ट्रीय कला, शिल्प, साहित्य, संस्कृति और इतिहास के पुनरुत्थान के लिए सतत लेखन किया। १९०७ में 'युगांतर' के संपादक, स्वामी विवेकानन्द के भाई भूपेन्द्र-नाथ की अदालत में जाकर जमानत ली। कठिन परिश्रम से उनका स्वास्थ्य गिर गया और १९११ में उनका देहावसान हो गया। रासबिहारी घोष ने उनकी मृत्यु के समय कहा, "आज हमारे कंकालों में जो चेतना दिखाई दे रही है, सो भगिनी निवेदिता के कारण।"

प

(पण्डिता) रमाबाई डोंगरे : जन्म १८५८। मैसूर के एक ब्राह्मण वंश में जन्म। १२ वर्ष की उम्र में इन्हें संस्कृत के हजारों श्लोक याद थे। इसके सिवा कन्नड़, मराठी, बंगला और हिन्दी भाषा का उत्तम ज्ञान था। पिता की मृत्यु के बाद १८७८ में यह कलकत्ता गयीं बाल-विवाह और विधवाओं के होनेवाले दुःख से सम्बन्धित इनके व्याख्यानों ने खल-बली मचा दी। धारा-प्रवाह संस्कृत और आधारों से पुष्ट इनके भाषणों को सुनकर प्रशंसकों ने इन्हें सरस्वती की पदवी दी।

इसके बाद इन्होंने सिलचर के शूद्र समाज के विपिनबिहारी वकील से विवाह किया। मनोरमा नामक कन्या के होने पर जल्दी ही विपिन बिहारी स्वर्गवासी हो गये। रमाबाई पूना आयीं और वहां रानडे तथा भाण्डारकर से मिलकर स्त्री-शिक्षण का काम आरम्भ किया। आर्य महिला समाज की स्थापना की। हंटर एजुकेशन कमीशन के सामने स्त्री शिक्षण के पक्ष में उत्कृष्ट तर्क प्रस्तुत किये और सारे देश का ध्यान इनकी ओर गया।

१८८३ में इंग्लैण्ड गयीं। वहां सेंट मेरी रोम में रहते हुए ईसाई धर्म स्वीकार किया। सेल्टन हेम लेडीज कॉलेज में दो वर्ष संस्कृत पढ़ाई। वहां किंडर गार्टन पद्धति का अभ्यास किया और मराठी में उसपर एक पुस्तक माला भी लिखी। यहीं रहते हुए १८८७ में 'हाई कास्ट हिंदू-वुमन' नामक पुस्तक लिखी।

भारत में विधवाओं के शिक्षण के लिए अपनी अमरीका-यात्रा के दौरान इन्हें बहुत समर्थन मिला और उसका आर्थिक उत्तर-दायित्व उठाने का वचन भी मिला। इस प्रकार रमाबाई ऐसोसियेशन की नींव भी पड़ी। भारत लौटकर ११ मार्च १८८९ में शारदा सदन नामक संस्था की स्थापना की। विदेशों से आर्थिक मदद मिलने के कारण लोगों ने इसे बहुत समर्थन नहीं दिया। १८९७ में गुजरात के अकाल के समय गांव-गांव घूम-कर सैकड़ों स्त्रियों और लड़कियों के प्राण बचाये। उनके लिए अनेक उद्योग शुरू किए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फिर अमरीका जाकर आर्थिक मदद प्राप्त की और कृपा सदन नामक अनाथालय प्रारम्भ किया। इसी बीच कन्या मनोरमा अमरीका से पढ़कर लौट आई थी। शारदा सदन का संचालन उसके हाथों में सौंप दिया। किन्तु मनोरमा की जल्दी ही मृत्यु हो गयी। रमावाई को पुत्री की मृत्यु से बड़ा सदमा पहुंचा और वह भी कुछ ही समय बाद अप्रैल १९२२ में परलोकगामी हुईं। वह अपने अंतिम दिनों में बाइबिल का संस्कृत भाषान्तर कर रहीं थीं, वह अधूरा ही रह गया।

पार्वती देवी : जन्म १८८८। पंजाब के धनपति-लाला करमचन्द की पुत्री। कन्या महा-विद्यालय जलंधर में शिक्षा प्राप्त की। पिता ने जाति का बन्धन तोड़कर इनका विवाह डा० मिल्खीराम भाटिया से किया। इनके घर में दो हरिजन लड़के घरेलू नौकर की तरह काम करते थे। यह उस जमाने में एक अनहोनी घटना थी। विवाह के दो वर्ष बाद विधवा हो गयीं। तव इन्होंने संस्कृत का अध्ययन किया और शिक्षिका हो गयीं। जलियांवालाबाग के अवसर पर वह अमृतसर में थीं। मेरठ में दिये गए भाषण के कारण उन्हें गिरफ्तार करके सजा दी गयी। उनकी गिरफ्तारी पर १६ दिसम्बर, १९२२ को महिलाओं ने जवरदस्त जुलूस निकाला। उन्हें २ साल की सजा दी गयी। इसके पहले किसी महिला को इतनी लम्बी सजा नहीं दी गयी थी।

पुतलीबाई : राजकोट के दीवान कर्मचन्द गांधी की पत्नी। कर्मचंद गांधी की तीन पत्नियों का पहले निधन हो चुका था। रलिया बेन और मोहनदास की माता। मोहनदास बाद में महात्मा गांधी के नाम से विख्यात हुए। पुत्र को धार्मिक संस्कार देने में माता का सर्वाधिक योग। पति की मृत्यु के बाद माता के प्रयत्नों से ही मोहनदास को उच्च शिक्षा के लिए जाने की अनुमति और सुविधा मिली। १८९१ में मोहनदास के विदेश से लौटने के थोड़े ही दिन पहले माता का निधन।

पुष्पावहन कानजीभाई देसाई : १९२६। सन् ४५ में डाक्टरी पास कर सेवाग्राम में, सन् ४८ में कस्तूरबा ट्रस्ट के ग्रामसेवा विद्या-लय (अहमदाबाद) का संचालन, बालवाड़ी केन्द्रों, में आजकल ग्रामसेवा मंडल टाकली की मंत्री हैं।

पुष्पा गुजराल : जन्म १९०० में संगलाई (झेलम) जो अब पाकिस्तान में है। गांव में शिक्षा। झेलम के वकील श्री ए. एस. गुज-राल से विवाह। १९४२ के आंदोलन में जवर्दस्त हिस्सा। १९१९ से १९३० तक भी राजनीति में भाग लेती रहीं। राजनीतिक बंदियों के परिवारों की मदद के लिए धन संग्रह। १९४० में पहली बार सारा परिवार पति पुत्र पुत्रियों समेत जेल में। मकान की जब्ती। १९४२ में फिर पूरा परिवार गिरफ्तार। संप्रति पंजाब प्रांतीय कांग्रेस कमिटी के महिला विभाग की संयोजिका। अनेक सामाजिक समितियों से संबद्ध। १९६० में पंजाब प्रांतीय समाजिक कल्याण सलाहकार समिति की सदस्या।

प्रतिलता वाडेदार : प्रसिद्ध क्रांतिकारिणी कल्पना दत्त की सहपाठिनी। पाठशाला में पढ़ते हुए इन दोनों ने शाला में ली जाने-वाली राजभक्ति की शपथ की जगह देश-भक्ति की शपथ ली थी। प्रतिलता ने ढाका वि. वि. में पढ़ते हुए लाठी और तलवार चलाना सीखा। कल्पना दत्त ने कलकत्ता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वि. वि. में पढ़ते हुए शस्त्र-संचालन सीखा। १९३१-३२ में ये दोनों मिलकर काम करने लगीं। २४ सितम्बर, १९३२ को प्रतिलता वाडेकर ने पटाडतली रेलवे आफीसर्स क्लब पर किये गये आक्रमण का नेतृत्व किया। एक यूरोपियन महिला हमले में मारी गयी। उसने क्लब के अन्य सदस्यों को भी मारना चाहा। उसने पोटेशियम साइनाड खाकर घटना-स्थल पर प्राण त्याग दिये। कल्पना दत्त प्रायः पुरुषवेश में रहती थी, इसलिए बच जाती थी। १३ अप्रैल, १९३० को हुए चटगांव शस्त्रागार की लूट के सिलसिले में उसे गिरफ्तार किया गया और आजीवन काले पानी की सजा हुई (देखिए कल्पना दत्त)

प्रेमा कंटक : १९०६। सन् २५ में युवक आंदोलन के माध्यम सेसेवा-कार्य, सन् २९ में साबरमती सत्याग्रह आश्रम में,सन् ३४ में महाराष्ट्र में आकर श्री शंकररावदेव के साथ सासवड में आश्रम की स्थापना, सन् ४२ के आंदोलन में जेलयात्राएं, कांग्रेस की सक्रिय सदस्या रहीं, सन् ४४ से ५५ तक 'महाराष्ट्र कांग्रेस स्त्री संघटना' की प्रमुख, सन् ४६ से ५४ तक कस्तूरबा स्मारक ट्रस्ट की महाराष्ट्र शाखा की प्रतिनिधि, सन् ५५ में हिमाचल गयीं, १२ वर्ष तक साधना के बाद कुछ समय सेवाग्राम में रहीं, सन् ६९ से पुनः सासवड (पूना) आश्रम में हैं।

ब

बाई अम्मान : (अब्दी बानो बेगम) मोहम्मद अली शौकत अली की मां। परंपरागत परदा-प्रथा का बहिष्कार। सारे देश में हिन्दू मुस्लिम एकता व खादी का प्रचार किया। देश में पंचायत राज्य चाहती थीं। खिलाफत और स्वराज्य के लिए वह रावलपिण्डी, गुजरानवाला, कसूर, शिमला, बम्बई, अहमदाबाद, पटना, भागलपुर, दरभंगा आदि अनेक स्थानों में गयीं और लोगों को देश-भक्ति की प्रेरणा दी। सरकार ने इन्हें गिरफ्तार करने की हिम्मत नहीं की। मार्च १९२२ में अपनी गिरफ्तारी पर महात्मा गांधी ने विशेष संदेशवाहक भेजकर यह कहलवाया कि वह हमारे काम की सफलता के लिए खुदा से दुआ करें

बिन्दवासिनी अवस्थी : १९१०। राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग, आजादी के बाद सर्वोदय में आयीं, अशोभनीय पोस्टरों के विरुद्ध अभियानों में भाग लिया, शान्ति-सेना व नगर की अन्य रचनात्मक प्रवृत्तियों में सहयोग देती हैं।

बीबी अमतुस्सलाम : १९०६। सन् २२ में बुर्का पहने हुए खादी की फेरी लगाना शुरू किया। बड़े भाई, जो वकालत छोड़कर आजादी की लड़ाई में शामिल हो चुके थे, पुस्तक संग्रह में से गांधीजी की आत्मकथा पढ़कर साबरमती जाना तय कर लिया। पर्याप्त प्रयासों के बाद आश्रम में सदस्य के नाते नहीं एक मेहमान के नाते आने की इजाजत मिली। सन् ३१ से गांधीजी की मृत्यु तक उनके साथ रहीं, वहीं कताई-बुनाई का प्रशिक्षण प्राप्त किया, फिर कार्य-क्षेत्र हिंदू-मुसलिम एकता को चुना, सन् ४० में गांधीजी ने सिंध की साम्प्रदायिक आग को बुझाने के लिए सिंध भेजा, सन् ४७ में गांधीजी के साथ नोआखली मिशन में रहीं, वहीं पर २१ दिन का उपवास किया, शरणार्थी शिविरों में राहत-कार्य, राजपुरा में शरणार्थी-पुनर्वास के लिए बनायी गई संस्था का नाम 'कस्तूरबा सेवा मंदिर' रखा, सन् ६० में अलीगढ़ में तनावपूर्ण स्थिति में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भी शांति-स्थापना में सहयोग, सन् ६२ में चीनी आक्रमण के बाद राजपुरा का सारा कार्य साथियों को सौंपकर नेफा तेजपुर में सेवा-कार्य किया, गांधीजी द्वारा लिखे गये पत्रों का एक संग्रह 'बापू के पत्र-बीबी अमतुस्सलाम के नाम' प्रकाशित हो चुका है।

भ

भीकाजी रुस्तम कामा : १९०६ में स्वातन्त्र्य वीर सावरकर से लन्दन में भेंट। उनके विचारों से आकृष्ट होकर विदेशों में भारत की स्वतन्त्रता के पक्ष में प्रबल प्रचार किया। भाई परमानन्द, लाला लाजपतराय, सरदार अजीतसिंह के साथ काम किया। इंग्लैंड में दादाभाई नौरोजी के पार्लमेंट के चुनाव में सफल सहयोग दिया। प्रसिद्ध क्रांतिकारी श्यामजीकृष्ण वर्मा के साथ अन्तर्राष्ट्रीय सोशलिस्ट कांग्रेस जर्मनी में पहली बार वन्देमातरम लिखकर भारतीय झण्डा फहराया। १९३६ में इस महान क्रांतिकारी महिला का निधन हुआ।

म

मनुबहन गांधी : गांधीजी की पौत्री। हरिलाल गांधी की पुत्री। अंत तक बापू की सेवा में रही। नोआखली-यात्रा में अत्यंत निर्भीकता का परिचय दिया।

मणिबेन कारा : १९०५। लंदन से समाज सेवा के लिए विशेष प्रशिक्षण लेकर स्वदेश लौटीं, बम्बई की गंदी बस्तियों में सेवा मंदिर की स्थापना कर मुख्यतः हरिजन सेवा शुरू की, सन् ३० में मजदूर-आन्दोलन में अनेक जेलयात्राएं, मजदूर संगठनों का निर्माण, पिछड़े वर्ग की सेवा के लिए भारत सरकार द्वारा पद्मश्री से अलंकृत, आजकल हिंद मजदूर सभा की सदस्या हैं, गांधी-विचार में निष्ठा रखती हैं।

मणिबहन पटेल : सरदार वल्लभभाई पटेल की पुत्री, १९०४ में जन्म। प्रारंभिक शिक्षण बम्बई में, बाद में गुजरात विद्यापीठ की स्नातिका। बारडोली के सत्याग्रह से लेकर सभी आंदोलनों में भाग लिया। अविवाहित रहकर पिता के सचिव की तरह उनके सभी कार्यकलापों को सुचारु चलाते रहने में दक्षता से रत रहीं।

(श्रीमती) महबूब नसरुल्ला : बंबई की वर्त्तमान शेरिफ। उस्मानिया विश्वविद्यालय से अंग्रेजी साहित्य में एम. ए.। कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय से जियो-पालिटिक्स में एम. ए.। महाराष्ट्र प्रांतीय महिला परिषद् की भूतपूर्व अध्यक्षा। बंबई-शेरिफ-संघ की अध्यक्षा। अ. भा. महिला संघ की केन्द्रीय समिति और प्रशासन समिति की सदस्या। केन्द्रीय सूचना और प्रसारण मंत्रालय के फिल्मसेंसर बोर्ड की सदस्या। एस. एन. डी. टी. विश्वविद्यालय की सीनेट की सदस्या। महाराष्ट्र राहत और सहायता पुनर्वास समिति की उपाध्यक्षा। महिला कॉलेज उस्मानिया विश्वविद्यालय की भूतपूर्व प्राचार्या। महाराष्ट्र नर्सिंग कौंसिल की अध्यक्षा।

महादेवी वर्मा : हिन्दी के छायावादी काव्य की अन्यतम कवयित्री। जन्म १९०६ में फर्रुखाबाद, उत्तर प्रदेश में प्रयाग महिला विद्यापीठ इलाहाबाद की प्राधानाचार्या। प्रमुख रचनाएं नीहारिका, रश्मि, नीरजा, संध्यागीत, यामा, दीपशिखा आदि। काव्य ग्रन्थों के अतिरिक्त, अतीत के चलचित्र स्मृति की रेखाएं, क्षणदा तथा पथ के साथी आदि संस्मरण और रेखा-चित्रों के संकलन।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

साहित्यकार संसद, प्रयाग की संस्थापिका।

महारानी तपस्विनी : बेलूर के जमींदार नारायण राव की पुत्री। झांसी की रानी लक्ष्मीबाई की वंशज। कहा जाता है कि इन्होंने १८५७ के विद्रोह में भाग लिया था और त्रिचनापल्ली में कैद की गईं थीं। संस्कृत का अध्ययन और योगाभ्यास किया। बाद में नेपाल गईं, लौटकर बंगाल में महाकाली संस्कृत पाठशाला आरंभ की। इन्होंने स्त्री-शिक्षा में भी रुचि ली। १९०१ में बाल गंगाधर तिलक ने कलकत्ता में इनसे भेंट ली थी। तिलक ने इनकी मदद से नेपाल में खपरे बनाने के कारखाने के बहाने शस्त्र बनाने का कारखाना चलाने का प्रयत्न किया था, किन्तु ब्रिटिश सरकार को इसका पता चल गया। कलकत्ता में १९०७ में निधन हुआ।

मार्गरेट कजिन्स : १९१५ में भारत आईं और श्रीमती एनी बीसेंट के साथ काम करने लगीं। इनका जन्म ७ नवंबर, १८७८ को आयरलैंड में हुआ था। मुख्य क्षेत्र शिक्षा, किन्तु होमरूल आंदोलन में भी भाग लेती रहीं। १९१७ में स्त्रियों के मताधिकार के लिए सरोजिनी नायडू के साथ काम किया। अनेक वर्षों तक 'स्त्रीधर्म' मासिक का संपादक। १९२७ में अखिल भारतीय महिला परिषद की स्थापना। १९३० के आंदोलन में गांधीजी ने स्त्रियों को आंदोलन में भाग लेने से रोका, तब इन्होंने इसका विरोध किया। १९३२ में अमरीका जाकर महात्मा गांधी और सरोजिनी नायडू की गिरफ्तारी के विरुद्ध सभाएं करके जनमत बनाया। १९३२ के अक्टूबर में भारत लौट आईं। उस समय नारी अध्यादेश के विरोध में सभाएं कीं। दिसंबर १९३२ में सजा। जेल में वह 'गॉड सेव दि किंग' गाये जाने के अवसर पर श्रीमती बीसेन्ट कृत 'गॉड सेव अवर मदरलैंड' गाती थीं। गांधीजी से प्रभावित होकर उन्होंने कोटागिरि की भंगी बस्तियों में काम किया। १९४३ तक वह इस काम में लगी रहीं। फिर शरीर टूट गया और वह काम-धाम के लायक नहीं रहीं।

मार्जोरी साइक्स : १९०५। सन् २६ में कैम्ब्रिज में अंग्रेजी साहित्य का अध्ययन, सन् २७ से कैम्ब्रिज टीचर्स डिप्लोमा प्राप्त, सन् ३८ से ४७ तक शान्तिनिकेतन में, अध्यापन व साहित्य सृजन, सन् ४८ में सेवाग्राम आईं तथा बुनियादी शिक्षा के काम को आगे बढ़ाने में योगदान दिया, सन् ५९ तक शान्ति सेना तथा बुनियादी शिक्षा के प्रशिक्षण-कार्यक्रम को चलाया, आजकल कोटागिरि के अमैंदी अहम् में हैं। युवकों के प्रशिक्षण का काम संभाल रही हैं। बुनियादी शिक्षा पर अनेक पुस्तकों के अतिरिक्त दीनबन्धु एन्ड्रूज की जीवनी भी लिखी है।

मालतीदेवी चौधरी : शान्तिनिकेतन में अध्ययन, सन् ३०, ३२ व ४२ के आंदोलनों में जेलयात्राएं, उत्कल नवजीवन मंडल के माध्यम से आदिवासी सेवा, शासन विधान सभा की सदस्या रहीं, बुनियादी तालीम के लिए बनी संस्था व उसके छात्रावास का मार्गदर्शन कर रही हैं।

मालूताई दत्तोबा दास्ताने : १९२४। महिलाश्रम वर्धा में शिक्षा, सन् ४९ से ५४ तक गोपुरी में बालवाड़ी संचालन, दस वर्ष तक समाज कल्याण बोर्ड की वर्धा शाखा की सदस्या रहीं, अब मगन संग्रहालय में काम करती हैं।

मीठबेन पिटिट : सन् १९ से सार्वजनिक जीवन में, वैभव छोड़कर बारडोली आश्रम

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

में, दांडी भाषा में जेलयात्रा, शराब की व विदेशी वस्त्रों की दुकानों पर धरना, कस्तूरबा का साथ, पिकेटिंग के लिए लगभग एक हजार स्वयंसेविकाओं को प्रशिक्षित किया, बारडोली सत्याग्रह में हिजरती किसानों की स्वास्थ्य-सेवा, ३२ के संग्राम के बाद मरोली नवसारी में कस्तूरबा सेवाश्रम की स्थापना की, ७५ वर्ष की आयु में भी सेवारत हैं, भारत सरकार द्वारा 'पद्मश्री' से सम्मानित हैं।

मीनाक्षी सुन्दरम्, एस. : १९०९। स्वदेशी आन्दोलन में जेलयात्राएं, कांग्रेस में जिला स्तर के पदों पर, हरिजनों के मन्दिर प्रवेश में सक्रिय, खादी व नशाबन्दी, व ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के कार्यक्रमों में हैं, पत्रकार व किसान हैं।

मीराबहन : (मेडेलिन स्लेड) १९२५ में इंग्लैण्ड से भारत गांधीजी के पास आईं। गांधीजी ने इन्हें भारतीय नाम मीरा दिया। इंग्लैण्ड में रहते हुए उन्होंने संगीत, साहित्य और खेलों का उत्तम अभ्यास किया था। उन्होंने लिखा है कि अगर मैं चाहती तो अपने देश की लड़कियों की तरह पार्टियों में जाती, नाचती और गाती। किन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया। उन्होंने गांधी के बारे में सुना था और वह उनके पास रहकर जीवन का वास्तविक अर्थ जानने को व्याकुल हो उठीं। गांधी के विषय में उन्होंने रोमां रोलां की एक किताब में पढ़ा था और गांधीजी को लिखा था कि मैं आश्रम आना चाहती हूं। गांधीजी ने उत्तर में लिखा कि साबरमती आश्रम का जीवन बहुत कठिन है, तुम इसे बर्दाश्त नहीं कर सकोगी। तुम यहां मत आना। किंतु उन्होंने गांधीजी के पग की परवाह नहीं की और नवम्बर १९२५ को भारत के लिए रवाना हो गईं। जब वह भारत पहुंची तो उनकी उम्र ३५ वर्ष की थी। गांधीजी ने पांव छूती हुई उस लड़की को छाती से लगाकर कहा—तुम मेरी बेटी बनकर रहोगी। शायद वह सबसे ऐसा कहते थे, किंतु मिस स्लेड ने इसे अक्षरशः मन में उतार लिया। गांधीजी ने उसे कस्तूरबा को सौंप दिया और वह भारतीय महिलाओं की तरह झाड़ना बुहारना, भोजन बनाना आदि में लग गई। मिस स्लेड अर्थात मीरा गांधीजी के साथ छाया की तरह रहीं। गांधीजी से एक क्षण का वियोग भी इन्हें कठिनाई से सहन होता था। वह अपना सारा भूतकाल पीछे छोड़ आई थीं और गांधी में पूरी तरह लीन हो गईं थीं। बरसों तक दरिद्रनारायण के माध्यम से उन्होंने गांधी और गांधी के देश की सेवा की। गांधीजी के बाद भी वह भारत में बहुत दिनों तक रहीं, किन्तु उन्होंने देखा कि भारत का सत्तारूढ़ दल गांधी-पथ से निरन्तर दूर होता जा रहा है, तो वह दुखी होकर लौट गईं। किंतु भारत से निरन्तर सम्पर्क बनाये हुए हैं।

मुकुंदा मालवीय : पंडित मदनमोहन मालवीय की पुत्रबधू, इलाहाबाद के घंटाघर पर झंडा चढ़ाने के अपराध में १९३२ में एक साल का कठोर कारावास। इसके पहले और बाद में सार्वजनिक जीवन में सदा और सक्रिय प्रभावपूर्ण काम करती रहीं। कीर्तिपराड़ा मुख।

मुत्थु लक्ष्मी : जन्म १८८६। मद्रास वि. वि. की पहली मेडिकल ग्रेजुयेट। १९१७ से भारतीय महिला परिषद की सदस्या। मद्रास नगरनिगम की पहली महिला सदस्य। शिशु कल्याण व शिक्षा समस्याओं में दिलचस्पी ली। १९२८ में भारतीय शिक्षा समस्याओं के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लिए गठित हर्टोग समिति पर ली गईं। वह उस समय इंग्लैण्ड में थीं। वहां से लौटते हुए अन्तर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन के पेरिस अधिवेशन में भारत का नेतृत्व। १९३० में सविनय अवज्ञा आंदोलन में भाग। गांधीजी की गिरफ्तारी पर विरोध स्वरूप लेजिटलेटिव कौंसिल से इस्तीफा। १९३३ में अन्तर्राष्ट्रीय महिला परिषद् के लिए शिकागो गईं। स्त्रियों के मतदान संबंधी अधिकार के विषय में इंग्लैण्ड गईं। मद्रास के कैंसर अस्पताल की स्थापना में पहल की। १९५६ में पद्मभूषण की उपाधि से अलंकृत।

मैत्रेयी देवी : १९१४। सन् ६३ में पूर्व पाकिस्तान व कलकत्ता में हुए साम्प्रदायिक दंगों के दौरान शांति स्थापित करने का प्रयास किया, कलकत्ता में बढ़ती जा रही हिंसक मनोवृत्ति के विरुद्ध एक परिषद का गठन किया, शताब्दी वर्ष में बनी राष्ट्रीय एकता उप-समिति की सदस्या, पहले के पूर्व पाकिस्तानी बंगलाभाषियों से संपर्क कर एक अच्छे संबंध की आधार-भूमि तैयार करने के उद्देश्य से सन् ६४ से 'नव जातक' नामक एक त्रैमासिक बंगलापत्र का संपादन कर रही हैं, बंगला देश के संकट में शरणार्थी शिविरों में राहत-कार्य, सन् ७२ में कलकत्ता के पास एक गांव को अपनाकर उसका समग्र विकास करने में रत हैं। साहित्य, दर्शन व रवीन्द्रनाथ ठाकुर पर विभिन्न पुस्तकें लिखी हैं। एक लेखिका के नाते अनेक बार विदेश भ्रमण कर चुकी हैं।

मंजुलाबहन जयन्तिलाल दवे : १९२५। महिला मंडल में मंत्री की हैसियत से समाज-सेवा में प्रवेश, अनाथ महिला व बच्चों की मदद हेतु स्त्री विकास गृह की स्थापना व संचालन, ४८ से ५२ तक जामनगर नगरपालिका की सभापति, डी. डी. बोर्ड की सदस्या, सोशल वेलफ़ेयर बोर्ड, जामनगर की चेयरमैन, बंबई व गुजरात राज्यों की विधान सभा में सदस्या, गु. प्र. कांग्रेस कमेटी की उपाध्यक्षा, गुजरात युनि. व सौराष्ट्र युनि. सेनेट की सदस्या, जुवेनाईल कोर्ट जामनगर की मानद मजिस्ट्रेट, फैमिली प्लैनिंग व प्रोहिबिशन काउन्सिल की सदस्या, सर्वोदय प्रवृत्तियों में भी योग देती हैं।

मृदुलाबेन अम्बालाल साराभाई : १९११। सन् १८ में बापू से संपर्क, सत्याग्रह आंदोलन में अनेक बार कारावास, शांति सैनिक के नाते कौमी दंगाग्रस्त क्षेत्रों में बापू के साथ नोआखली में, विभाजन के बाद विस्थापित परिवार व अपहृत महिलाओं को बसाने का कार्य, सन् २०-३० तक वानरसेना व युवक संघ की प्रवृत्तियों में सक्रिय, सन् ३० से ३८ तक ज्योति संघ में विकासगृह का कार्य, जम्मू-कश्मीर की समस्या में सक्रिय, कस्तूरबा ट्रस्ट व सर्व सेवा संघ से सम्बद्ध, आजकल इनसानी बिरादरी संगठन का काम देख रही हैं।

र

रमाबाई रानडे : जन्म १८६२। ११ वर्ष की उम्र में विवाह। पति स्वनामधन्य न्यायमूर्ति महादेव गोविंद रानडे। १८८२ में इनकी पण्डिता रमाबाई से भेंट हुई और ये आर्य महिला समाज में सक्रिय रूप से काम करने लगीं। १८८४ में इन्होंने बंबई के गवर्नर सर जेम्स फर्ग्युसन की उपस्थिति में अपना पहला भाषण दिया और उसमें पूना में कन्या विद्यालय खोलने की मांग पेश की। सभा में भाषण देने के कारण परिवार की बड़ी बूढ़ियों से बहुत दिनों तक त्रस्त रहना

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पड़ा। तब उन्होंने अपने घर में ही निरक्षर स्त्रियों और विधवाओं को पढ़ाना शुरू कर दिया। इन्हीं छात्राओं की सहायता से दुर्भिक्ष प्लेगादि के अवसर पर समाज में राहत-कार्य किया। बाद में पूना सेवा सदन की स्थापना हुई और सारे बंबई प्रान्त में उसकी शाखाएं फैल गईं। ससून अस्पताल पूना की मदद से उन्होंने सेवासदन की महिलाओं को बीमारों की परिचर्या का पाठ्यक्रम भी पूरा करवाया। लड़कियों के अनिवार्य प्राथमिक शिक्षण के लिए आंदोलन किया। स्त्रियों के मताधिकार के लिए सर एच. लारेन्स का समर्थन प्राप्त किया। मराठी में आत्मकथा लिखी, जिसकी गणना उच्च कोटि के साहित्य में होती है।

रमादेवी चौधरी : १८९९। सन् २१ से सार्वजनिक जीवन में, सन् २४ में अखिल भारतीय चर्खा संघ की सदस्या, बाद में उसकी ट्रस्टी भी, हिंदुस्तानी तालीम संघ की सदस्या, कस्तूरबा स्मारक ट्रस्ट की प्रतिनिधि। सन् ३०, ३२ व ४२ के आंदोलनों में जेलयात्राएं, सन् ५१ से सर्वोदय में, उत्कल सहायता समिति की अध्यक्षा व प्रदेश हरिजन सेवक संघ की मंत्री, बुनियादी तालीम का भी काम किया, उत्कल के सर्वोदय कार्य की बड़ी प्रेरक शक्ति हैं।

राजलक्ष्मी, वी. : १९२०। सन् ४५ में ग्रामीण स्वास्थ्य सेवा में प्रशिक्षण लेकर सन् ५२ तक कस्तूरबा ट्रस्ट की प्रतिनिधि रहीं, सन् ५९ में कस्तूरबा ट्रस्ट (केन्द्रीय), कस्तूरबा ग्राम की मंत्री बनीं, सन् ६८ में प्रदेश में काम बढ़ाने के लिए केन्द्रीय कार्यालय छोड़कर प्रदेश शाखा में वापस आईं, आजकल भी वहीं सेवारत हैं।

राधादेवी गोयनका : जन्म १९०४। उमराव सिंह डालमिया की पुत्री। किशनलालजी गोयनका की पत्नी। १९४० में कलकत्ता के अ. भा. परदा-निवारण सम्मेलन की अध्यक्षा। १९४२ में जेलयात्रा। १९४६ में म. प्र. विधान सभा की सदस्या। १९४६ में ही अ. भा. महिला परिषद् की स्वागताध्यक्षा। भारतीय सेवा सदन नामक संस्था की संचालिका। 'मानवता' नामक पत्रिका की संपादिका और 'नारी-समस्या' नामक पुस्तक की लेखिका।

रानी लेडी हरनाम सिंह : कपूरथला के राजवंश के सर हरनामसिंह की पत्नी। राजकुमारी अमृतकौर की माता। समाज-सुधार, शिक्षण और पर्दाप्रथा को हटाने का प्रयत्न करतीं रहीं। जलंधर में शिशु संगोपन केन्द्र खोला। शिमला में एक महिला सभा की स्थापना की।

रुक्मिणी अरंडेल : पिता नीलकंठ शास्त्री संस्कृत और भारतीयदर्शन के उद्भट विद्वान और इंजीनियर थे। रुक्मिणी का जन्म १९०४ में हुआ था। भाई थियासोफिकल सोसायटी के एन. श्रीराम और बड़ी बहन डॉ. शिवकाय हैं। होम रूल आंदोलन के समय बंबई सरकार ने डॉ. शिवकाय को मेडिकल कॉलेज से निष्कासित कर दिया था। शास्त्री-परिवार अत्यंत सुसंस्कृत और उदाराशय परिवार है। डॉ. जार्ज सिडने अरंडेल से परिवार की घनिष्ठता थी। सन् १९२० में रुक्मिणी शास्त्री, रुक्मिणी अरंडेल हुईं। थियासफी के डॉ. लेडबिटर से भी परिचय था—यह परिचय घनिष्ठ होने लगा। ज्ञान के मूल तत्त्व और सेवा की भावना इनके संपर्क से पनपी और दृढ़ हुई। १९२० में श्रीमती एनीबीसेंट से भी प्रत्यक्ष परिचय प्रारंभ हुआ। १९२५ में डॉ. अरंडेल

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के साथ यूरोप-यात्रा। वहां की समाज-रचना और कला आदि का सूक्ष्म अध्ययन किया। मन में भारतीय सादगी व उच्च विचार सरिणी का आदर तो था ही। यह महत्त्वाकांक्षा भी थी कि भारत की ललित कलाओं का विकास हो। वापस आकर फिर १९३१-३२ में यूरोप और अमरीका आदि देशों की यात्रा की। वहां 'आर्यों की जीवन-पद्धति' और 'ललित कलाओं का व्यक्तिगत, राष्ट्रीय और जागतिक विकास में स्थान' विषयों पर इनके अत्यंत प्रौढ़ और मनोमुग्धकारी व्याख्यान हुए। १९२६-२८ में डॉ. अरंडेला आस्ट्रेलिया की थियासोफिकल सोसायटी के महासचिव थे—तब उनका प्रसिद्ध बेले-नर्तकी पैवलोवा से परिचय हुआ था। रुक्मिणी ने उनसे उस प्रकार के नृत्य का शास्त्रीय शिक्षण प्राप्त किया। १९३५ से भरतनाट्य का अभ्यास करके उसमें अभूतपूर्व विशेषज्ञता प्राप्त की। मीनाक्षी सुंदरम् पिल्ले तथा ब्रह्म श्री पापनाम् शिवन् ने बड़े मनोयोग से इन्हें शिक्षा दी। १९३५ में ही अडयार में थियासोफिकल सोसायटी के हीरक जयंती अवसर पर रुक्मिणी ने अपनी कला का पहला प्रदर्शन किया। नृत्य कला दैवीगुणों के विकास का साधन है और इसे इसी दृष्टि से अपनाया जाना चाहिए, इस विचार को रुक्मिणी ने अपनी जीवन-साधना से रूढ़ किया है। वह चिदंबरम् के नटराज देवालय में अपनी कला का अभ्यास करती रहीं और उसे नटराज के चरणों में ही अर्पित किया। उन्होंने कला-शिक्षण के लिए अड्यार में एक संस्था भी प्रारंभ की। इसका नाम 'कला क्षेत्र' रखा। यहां नृत्यकला के अतिरिक्त चित्रकला, वयनकला आदि भी सिखाये जाते हैं। मैडम मांटेसरी के मार्गदर्शन में यहां बाल-शिक्षा का भी उत्तम प्रबंध और प्रयोग आरंभ हुआ जो अभी तक विकास करता जा रहा है।

रुक्मिणी लक्ष्मपति : १८९२। मद्रास विश्वविद्यालय की स्नातिका। नमक-सत्याग्रहियों में पहली गिरफ्तारी का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। तबसे तमिलनाडु प्रांतीय कांग्रेस समिति की अध्यक्षा थीं। १९४६-४७ में मद्रास की स्वास्थ्य मंत्राणी नियुक्त हुईं।

रेणुका राय : १९२०-२१ से सार्वजनिक क्षेत्र में। बाद में लंदन स्कूल ऑफ इकॉनामिक्स में शिक्षा प्राप्त की। स्वदेश लौटने पर बंगाल में महिलाओं के सुधार के हेतु काम किया। शिशु संगोपन केन्द्र खुलवाये, सन् १९२५ में बंगाल सरकार के तत्कालीन चीफ सेक्रेटरी एस. एन. राय से विवाह। १९३१ से अ. भा. महिला परिषद् से संबद्ध। उसकी मंत्री भी रहीं। १९४१ से ५० तक केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार समिति की सदस्या। शांतिनिकेतन के सीनेट की सर्वप्रथम महिला सदस्या। १९४३ में बंगाल प्रांतीय विधान सभा की सदस्या। १९४४ में बंगाल अकाल के समय राहत-कार्य। नौआखाली के दंगों के बाद गांधीजी के आदेशानुसार राहत केन्द्रों का संचालन, सन् १९४७ में संविधान निर्मात्री परिषद् की सदस्या। बाद में पश्चिमी बंगाल के पुनर्वास विभाग की मंत्री। १९५२-५३ में अ. भा. महिला परिषद की अध्यक्षा। कुशल लेखिका, प्रभावशाली वक्ता।

ल

लक्ष्मीदेवी त्रिखा : १९०४। सन् २५ से आजादी की लड़ाई में भाग, विदेशी बहिष्कार में पिकेटिंग की, गिरफ्तार हुईं,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सन् ४२ के आंदोलन में जेलयात्राएं, सन् ३६ से शाहदरा आश्रम (लाहौर) में रचनात्मक कार्यों में भाग, खादी ग्रामोद्योग, नशाबन्दी, महिला जागृति, पर्दा-प्रथा-निवारण का काम किया। पंजाब, हरयाणा, हिमाचल प्रदेश के अनेक भागों में सर्वोदय प्रचार, बंटवारे के बाद ६ माह तक पाकिस्तान में जाकर दुखी परिवारों को वापस लाने का साहसपूर्ण कार्य किया।

लाडो रानी जुत्शी : लाहौर के प्रसिद्ध वकील पंडित लाडली प्रसाद जुत्शी की कन्या। १९१९ से राजनीतिक क्षेत्र में। संघर्ष समिति की ८वीं डिक्टेटर। आंदोलन का सफलतापूर्वक संचालन किया। विदेशी कपड़ों की दुकानों, शराबखानों, अदालतों और विधान सभा के सदस्यों के घरों पर सत्याग्रही महिलाओं के साथ धरना दिया। मोरीगेट लाहौर पर भाषण देते हुए १९ जुलाई, १९२० को लोगों को देश पर सब कुछ निछावर कर देने के लिए प्रेरित किया। १९३० के अपने अत्यंत उग्र भाषण के कारण उन्हें सजा दी गई। बालगंगाधर तिलक की पुण्यतिथि के भाषण पर उनपर २० हजार रुपये का मुचलका देने को कहा गया। न देने पर एक वर्ष की सजा दी गई। १९३१ में छूटीं और १९३२ में फिर १८ महीने की सजा दी गई। लाडो रानी जुत्शी ने अपनी कन्याओं में भी देशप्रेम की लौ लगा दी थी। जनककुमारी जुत्शी और स्वदेशकुमारी जुत्शी ने लाहौर महिला कालेज में हड़ताल करवाई थी। उनकी तीसरी कन्या मनमोहिनी जुत्शी, विवाह के बाद मनमोहिनी सहगल ने विद्यार्थियों के बीच प्रबल आंदोलन किया था। मनमोहिनी ने अनेक बार जेलयात्रा की। वह १९४५ में अ. भा. महिला परिषद की मंत्री बनीं।

लीलावती मुंशी : उपाध्यक्ष भारतीय विद्या-भवन, बंबई, दिल्ली और कानपुर। १९२६ में कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी से विवाह, हरिजन सेवक संघ, बंबई की अध्यक्षा, १९४३ से ५२ तक। १९५०-५१ में बंबई प्रांत महिला परिषद् की अध्यक्षा। अखिल भारतीय केन्द्रीय महिला अन्न परिषद् की १९५४-५६ में अध्यक्षा। गुजराती साहित्य संसद, पी.ई. एन., राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, राष्ट्रीय शिक्षण समिति, भारत सेवाश्रम संघ कलकत्ता, आदि अनेक संस्थाओं की सदस्य और अध्यक्षा। बंबई विधान सभा की सदस्या भी रहीं।

लक्ष्मीबहन गांधी : च. रामगोपालाचार्य की पुत्री, गांधीजी के पुत्र देवदास गांधी की पत्नी। संप्रति 'हिंदुस्तान टाइम्स' की मैनेजिंग डायरेक्टर।

लक्ष्मी एस. स्वामीनाथन कैप्टन : बैरिस्टर एस. स्वामीनाथन और मद्रास कांग्रेस की प्रसिद्ध महिला कार्यकर्त्री अम्मुस्वामीनाथन की पुत्री। द्वितीय महायुद्ध के समय सिंगापुर में अस्पताल खोलकर सेवा करते समय नेताजी सुभाषचंद्र बोस द्वारा स्थापित भारतीय स्वातंत्र्य संघ की सक्रिय सदस्या बनीं। बाद में नेताजी के संपर्क में और २२ अक्तूबर १९४३ को स्त्रियों की फौज तैयार की। इस टुकड़ी का नाम झांसी की रानी रखा गया। प्रारंभ में केवल १७५ वीरांगनाएं थीं, फिर इनकी संख्या दो हजार तक बढ़ी। सेवा, सुश्रुषा के अतिरिक्त भारत और ब्रह्मदेश की सीमापर इम्फाल की प्रसिद्ध लड़ाई में इस टुकड़ी ने बड़ी बहादुरी दिखाई और ब्रिटिश फौज पर विजय प्राप्त की। मौलमेन में आजाद हिंद फौज की पराजय के समय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कैप्टन लक्ष्मी की फौज ने जोरदार सामना करके सुभाषबाबू के सुरक्षित निकल जाने के बाद ही आत्मसमर्पण किया। सन् १९४६ में मुक्त कर दी गयीं।

लीलावती धीरजलाल बैंकर : १८९५। स्वदेशी आंदोलन में भाग, गांधी तथा कस्तूरबा स्मारक निधि के लिए धन संग्रह, मानद न्यायाधीश रहीं, बाल कल्याण समिति की सदस्या, महाराष्ट्र विधान सभा की सदस्या, भारत सेवक समाज बंबई की अध्यक्षा के अतिरिक्त अनेक संस्थाओं से जुड़ी रहीं।

लीलावती वेंकटेश मागडी : १९२०। प्रारंभिक शिक्षा शांतिनिकेतन में, राष्ट्रीय आंदोलन में भाग, जुविनाइल कोर्ट की आनरेरी मजिस्ट्रेट रहीं, १९५८ में मैसूर राज्य के कुटीर उद्योग की उपमंत्री निर्वाचित हुईं, तत्पश्चात् धारवाड़ जिला खादी ग्रामोद्योग संघ की अध्यक्षा रहीं, सन् ६९ से हुबली की महिला विद्यापीठ की अध्यक्षा हैं।

लैंटिना ठक्कर : १९३३। शरणिया आश्रम में ग्रामसेविका का प्रशिक्षण, सन् ५५ तक नगालैंड में ग्रामसेविका रहीं, अब कस्तूरबा ग्राम सेवा केन्द्र चुचुइमलांग में बालवाड़ी केन्द्र चलाती हैं, गांधी आश्रम की प्रवृत्तियों में भी सहयोग देती हैं।

व

वायलैट अल्वा : जन्म २४ अप्रैल, १९०८। सेंट जेवियर और शासकीय लॉ कालेज बंबई से एम. ए. तथा वकालत पास की। भारत छोड़ो आंदोलन में १९४३ में जेलयात्रा। १९४७-५२ बंबई विधान सभा की सदस्या। ए. आई. एन. ई. सी. १९६२ में पहली महिला सदस्या। १९६३ से १९६८ तक संसद में कांग्रेस दल की कार्यकारिणी की सदस्य। १९६४ में भारतीय महिला सांस्कृतिक प्रतिनिधि मंडल का सचिव की हैसियत से सोवियत रूस गईं। यू. एन. सेमिनार ओहियो में भारत की विधि-प्रतिनिधि। १९६२ में न्यूजीलैंड की मानवाधिकार यू. एन. सेमिनार में भाग लिया। बाद में उपगृह मंत्री, भारत सरकार।

वासन्ती देवी : देशबंधु चित्तरंजनदास की पत्नी। १९२२ में जुलूस निकालने और विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार करने तथा शराब की दुकानों पर धरना देने के लिए गिरफ्तार हुईं। १९२२ में बंगाल प्रांतीय कांग्रेस अधिवेशन चटगांव की अध्यक्षा।

विजयालक्ष्मी पण्डित : जन्म १८ अगस्त, १९००। पं० मोतीलाल नेहरू की पुत्री, पं० जवाहरलाल नेहरू की बहन, देश विदेश में शिक्षा। १९२१ में रणजीत सीताराम पण्डित से विवाह। सन् १९३० में सार्वजनिक जीवन में प्रवेश। इसी वर्ष सविनय अवज्ञा आंदोलन में भाग। सन् १९३५ में इलाहाबाद म्युनिसपल बोर्ड की शिक्षा समिति की अध्यक्षा। १९३७ में उत्तर प्रदेश धारा सभा की सदस्या तथा स्वायत्त शासन एवं स्वास्थ्य मन्त्राणी। १९४० में अखिल भा. महिला परिषद् की अध्यक्षा। १९४२ में भारत छोड़ो आंदोलन में गिरफ्तार, १९४४ में रिहा। उसी वर्ष वीमेन्स इंटरनेशनल लीग फॉर पीस एण्ड फ्रीडम की उपाध्यक्षा चुनी गईं। संयुक्त राज्य अमेरिका का भ्रमण किया। १९४५ में स. रा. स. की कांफ्रेंस के समक्ष सानफ्रांसिसको में प्रतिनिधियों के समक्ष प्रभावशाली भाषण। १९४६ में सं. रा. सं. की जनरल असेम्बली

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

में द. अफ़्रिका के प्रवासी भारतीयों का मसला पेश करने भारतीय प्रतिनिधि दल की नेत्री नियुक्त की गईं। उसी वर्ष निर्विरोध उत्तर प्रदेश विधान सभा की सदस्या निर्वाचित। पुनः मंत्री पद पर अधिष्ठित। १९४७ से १९४९ तक अमेरिका और मेक्सिको के लिए भारतीय राजदूत। १९५०-५१ में आप ही के प्रयत्नों के फलस्वरूप अमेरिका में इंडियन फूड एड बिल पास हुआ। १९५१ में राजदूत पद से इस्तीफा। भारतीय गणराज्य के प्रथम आम चुनाव में निर्वाचित संसद सदस्या।

विद्यादेवी गुप्त : १९२४। हिन्दुस्तानी तालीम संघ सेवाग्राम में शिक्षा प्राप्त की, कस्तूरबा गांधी राष्ट्रीय स्मारक ट्रस्ट आंध्र में ५ वर्ष तक सेवाएं, ५ वर्ष तक भूदान आंदोलन में, श्रीजयप्रकाशजी के आश्रम से संबद्ध रहीं, महिला चर्खा संघ पटना, दिल्ली सर्वोदय मंडल और आंध्र एजूकेशन सोसायटी में भी सहयोग देती रहीं। संप्रति कस्तूरबा स्मारक निधि की आंध्रप्रदेश की प्रान्तीय प्रतिनिधि हैं।

विद्या माता : प्रसिद्ध देशभक्त सरदार किशनसिंह की पत्नी और सरदार भगतसिंह की माता। धार्मिक और सत्यनिष्ठ। अभी-पंजाब सरकार ने विद्या माता को पंजाब माता घोषित किया है।

वीरम्मावहन : सन् २४ में एक हरिजन परिवार में जन्म, हरिजन-यात्रा के दौरान गांधीजी से भेंट, १९३७ से ४२ तक बा और बापू के साथ सेवाग्राम में रहीं, सन् ५४ से भूदान-ग्रामदान आंदोलन में हैं। अब ग्राम स्वराज्य अभियान में सेवारत हैं।

वैदेही पंडा : १९३१। सन् ४६ में कस्तूरबा ट्रस्ट की प्रथम टोली में प्रशिक्षण, बालवाड़ी शाति सेना और ग्राम आरोग्य सेविका का काम किया, भूदान पदयात्राओं में भाग, गत २४ वर्षों से कस्तूरबा ट्रस्ट उत्कल शाखा में रहीं, ग्रामाधारित एक केन्द्र को चलाने का प्रयोग, बंगलादेश शरणार्थी शिविरों में राहत-कार्य, आजकल चंबल घाटी में शांति कार्य तथा बागी व बागी-पीड़ित परिवारों के पुनर्वास में संलग्न हैं।

श

शरयू रघुनाथ धोत्रे : १९१०। स्व० श्री अण्णासाहब दास्ताने की द्वितीय पुत्री, पढ़ाई छोड़कर सन् २० में नशाबंदी के लिए पिकेटिंग और विदेशी वस्त्र की होली, सन् २१ में खादी फेरी, 'तिलक स्वराज्य फंड' संग्रह, सन् २६ में वर्धा के सत्याग्रह आश्रम में, सन् ३२ तक कांग्रेस का काम, सन् ३२, ४० व ४२ में जेलयात्रा, व्यक्तिगत सत्याग्रह में प्रथम महिला सत्याग्रही, सन् ५३ में बिहार में भूदान-यात्रा, सन् ५१ से ५३ वर्धा लोकल बोर्ड के आरोग्य विभाग में, सन् ५४ से ५८ तक दिल्ली में 'बालसहयोग' नामक संस्था का निर्माण किया और उसकी मंत्री रहीं, सन् ५८ में जयपुर कांग्रेस में 'बच्चों का घर प्रदर्शिनी का आयोजन किया, सन् ५८ से ६१ तक वर्धा में सर्वोदय-पात्र का गठन, वाराणसी के शांतिसेना विद्यालय, की प्रथम संचालिका रहीं, आजकल गांधी सेवा संघ (वर्धा) से संबद्ध है।

शारदा मां : जन्म २२ दिसम्बर १८५३। पिता रामचन्द्र मुखोपाध्याय। १८५८ में रामकृष्ण परम हंस से विवाह। १८७२ में जब परमहंसदेव आध्यामिक साधना में निरत थे तब वह वहां पहुंची और पति ने उन्हें जगन्माता के स्थान पर बिठाकर विधिपूर्वक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

षोडशोउपचार पूजन किया। तब से शारदा मां ३ बजे रात्रि को गंगास्नान करके आध्यात्मिक साधना के बाद बड़ी रात तक गृहकार्य तथा परमहंसदेव के शिष्य वर्ग की सेवा में लगी रहती थीं। श्री रामकृष्ण परम हंस की महासमाधि के बाद २० जुलाई, १९२० तक आप असंख्य भक्तों को आध्यात्मिक दीक्षा और उपदेश देतीं रहीं।

शांताबाई, एस. : १९०३। राष्ट्रीय आंदोलन के समय ग्रामसेविका, सन् ४५ में महिला छात्रावास की शुरुआत की, सन् ५० तक उसका संचालक करती रहीं, हरिजन कल्याण विभाग एवं कस्तूरबा छात्रावास से महिलाओं का निदेशन कई वर्षों तक किया, साथ ही अनाथ लोगों की सहायता में भी संलग्न रहीं, क्षेत्र में एक हरिजन छात्रावास व एक अनाथालय की स्थापना की।

शांताबाई रानीवाला : ३ फरवरी, १९०३। बालविवाह के बाद अल्प अवधि के बाद ही पति का निधन। जमनालालजी बजाज की प्रेरणा से महिला-शिक्षा-मंडल की गतिविधियों में भाग लेने लगीं। वर्धा में प्रसिद्ध संस्था महिलाश्रम की स्थापना की और वर्षों तक उसका संचालन किया। खादी-प्रचार, अछूतोद्धार, गोसेवा आदि सभी रचनात्मक कार्यक्रमों और बापू के चलाये आंदोलनों में भाग लिया।

श्री मां आनंदमयी : जन्म ३ अप्रैल, १८९६ कोमिला, जिले (अब बंगला देश) के खेवड़ा नामक ग्राम में। आध्यात्मिक जगत की महान विभूति। आपभगवत भावके साथ प्राणिमात्र में भगवत स्वरूप की अनुभूति करके संपूर्ण जगत के साथ आत्मीयता रखती हैं। कई आश्रमों की स्थापना की है।

स

सत्यवती : स्वामी श्रद्धानंद की पौत्री। क्रांतिकारिणी। २३ वर्ष की अवस्था में १९३० में आंदोलन में प्राणपण से कूदीं। जुलूस, विदेशी वस्त्रों और शराब की दुकानों पर धरना, सभाएं करतीं। दिल्ली में पचास प्रतिशत सम्पन्न महिलाओं ने इनकी प्रेरणा से खादी पहनना शुरू किया। १२ मई, १९३० के जुलूस में अमीलाल की गोली से मृत्यु होने पर उनके भाषण से सत्ता कांप उठी और जेल भेजी गईं। १९३२ में फिर पकड़ी गईं और जेल गईं। जेल में उन्हें प्लूरिसी और फिर क्षय हो गया। किंतु उन्होंने अपना आंदोलन जारी रखा। १९३७ में पुलिस ने उनपर लाठियों की बौछार की। जेल से बाहर आने पर १९३८ में उन्हें पंजाब छोड़ने का आदेश दिया गया। उन्होंने अवज्ञा की और फिर सजा भोगी। १९४१-४२ में फिर सुरक्षा बंदी। १९४५ में मृत्यु के दो दिन पहले सरकार ने उन्हें रिहा किया।

सरलादेवी (कुमारी हेलीमन) : १९०० में इंग्लैंड में जन्म, सन् ३२ में युद्ध की विभीषिका से खिन्न होकर भारत आ गयीं, गांधीजी के सम्पर्क में आने के बाद सेवाग्राम में नयी तालीम का काम किया, उत्तराखंड को कार्यक्षेत्र बनाकर सन् ४२ के आंदोलन में वहीं जन-जागृति का काम, भारत छोड़ो आंदोलन में 'अलमोड़ा की सबसे खतरनाक आन्दोलनकारी' करार दी गयीं, जेलयात्राएं, सन् ४६ में कस्तूरबा महिला उत्थान मंडल द्वारा स्थापित लक्ष्मी आश्रम, कौसानी में सेविका व शिक्षिका, सन् ६५ से ग्रामदान स्वराज्य के काम में लगी हैं, उत्तराखंड के नशाबन्दी आन्दोलनों में सक्रिय भाग लिया है, विहार के गांवों में भी ग्रामदान के निमित्त

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

महिला जागरण के काम में विशेष योग, उत्तराखंड खादी ग्रामोद्योग सलाहकार मंडल की अध्यक्षा, हिमालय सेवा संघ की उपाध्यक्षा हैं, आजकल चंबलघाटी के आत्मसमर्पणकारी बागियों के बीच जेल में संस्कार कार्यक्रम चला रही हैं, हिन्दी में 'अबला नहीं, सबला' 'मैं कहां ?' आदि अनेक पुस्तकें लिखी हैं।

सरलादेवी चौधरी : रवीन्द्रनाथ ठाकुर की भतीजी। १८७२ में जन्म। विख्यात मासिक पत्रिका भारती की सम्पादिका। १९०५ में लाहौर के विख्यात वकील और नेता रामभजदत्त से विवाह। उत्कृष्ट कवियित्री। वन्देमातरम गीत को 'सप्तकोटि' की जगह 'त्रणणत् कोटि' शब्द रखकर प्रान्तीय स्वरूप से हटाकर राष्ट्रीय स्वरूप प्रदान किया। परिवर्तित स्वरूप को कांग्रेस के बनारस अधिवेशन में गाया। सन् १९१९ में गांधीजी के सम्पर्क में आयीं। असहयोग आंदोलन में भाग लिया। अखिल भा. कां. कमेटी की मंत्राणी नियुक्त हुईं। १९२५ में कलकत्ते की आल इण्डिया सोशल कांग्रेस की अध्यक्षा और १९२६ में कलकत्ते की भारतीय पत्रकार संघ की अध्यक्षा चुनी गयीं। बंगाल प्रांत में दशहरे के दिनों में वीरअष्टमी मनाने का स्फूर्तिदायक समारोह इन्हींका शुरू किया हुआ है।

सरोजिनी नायडू : जन्म १३ फरवरी, १८७९। पिता अघोरनाथ चटर्जी। १२ वर्ष की आयु में मद्रास यूनिवर्सिटी से मेट्रिकुलेशन की परीक्षा पास की। १६ वर्ष की आयु में उच्च शिक्षा प्राप्त करने १८९५ में इंग्लैण्ड गयीं। स्वदेश लौटकर डा. गोविन्द राजुलू नायडू से अन्तर्जातीय और अन्तर्प्रान्तीय विवाह। कवि डब्ल्यू. वी. यीट्स ने इनकी अंग्रेजी कविताओं की प्रशंसा की है। विश्वविख्यात वक्ताओं में गिनती। स्वातन्त्र्य संघर्ष में अनेक बार जेलयात्रा, लगातार कई वर्षों तक कांग्रेस कार्यसमिति की सदस्या। १९२५ में कांग्रेस के कानपुर अधिवेशन की अध्यक्षा। १९३२ में पं. मदनमोहन मालवीय के जेल में होने के कारण दिल्ली अधिवेशन की अध्यक्षा। गोलमेज सम्मेलन में भी आमन्त्रित। भारत सरकार के अफ्रीका भेजे गये शिष्टमंडल की सदस्या। देश के स्वतन्त्र होने के बाद उत्तर प्रदेश की गवर्नर। १ मार्च, १९४९ में लखनऊ में दिल का दौरा पड़ने से मृत्यु।

सुचेता कृपलानी : जन्म १९०८। पिता डॉ. एस. एन. मजूमदार, जो पंजाब में बस गये थे। लाहौर में शिक्षण। दिल्ली से एम. ए. होकर बनारस में प्रोफेसर। वहीं १९३४ में राजनीति में सक्रिय हुईं। आचार्य कृपलानी अ. भा. कां. के मंत्री थे। उनसे विवाह के बाद राजनीतिक गतिविधियां ही जीवन में प्रधान बन गईं। प्रोफेसरी छोड़कर १९४० में व्यक्तिगत सत्याग्रह। १९४२ में जब छूटीं तो 'भारत छोड़ो' आन्दोलन में सभी प्रमुख नेता जेलों में बंद थे। इन्होंने भूमिगत होकर काम किया। १९४३ में कांग्रेस ने अपना महिला-विभाग प्रारंभ किया। सुचेता उसकी कार्यकारी-मंत्राणी नियुक्त। स्वयं सेविका-दल का संगठन। १९४४ में गिरफ्तार। १९४५ में रिहा होने के बाद समाज-कल्याण और राहत-कार्य। १९४६ में पूर्व बंगाल के दंगों से त्रस्त क्षेत्रों में स्त्रियों और बच्चों की सेवा-संरक्षण। गांधीजी के साथ पूर्व बंगाल में रहीं। १९४७ में पंजाब के दंगों में काम किया। उसी वर्ष कांग्रेस कार्यसमिति की सदस्या चुनी गईं। फिर उत्तर प्रदेश विधान सभा की सदस्या, संसद की सदस्या और उ. प्र. की मुख्यमंत्री रहीं। संप्रति लोक कल्याण-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समिति की उपाध्यक्षा, केन्द्रीय गांधी स्मारक निधि के न्यास-मंडल की सदस्या।

सुनीति : उमाचरण चौधरी की पुत्री। १४ दिसम्बर, १९३१ को कुमिल्ला के मजिस्ट्रेट की गोली मारकर हत्या की। उसे तथा उसकी सहयोगिनी समिति को आजन्म कारावास दिया गया।

सुभद्राकुमारी चौहान : जन्म १९०४। विवाह जबलपुर के विद्वान पत्रकार एडवोकेट लक्ष्मणसिंह चौहान के साथ १९१९ को हुआ। युवावस्था से ही राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लिया। राष्ट्रीय भावना से उच्छ्वासित कविताएं लिखीं। जेलयात्राएं कीं। कविता-संग्रह 'मुकुल' और कहानी-संग्रह 'बिखरे मोती' हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा पुरस्कृत हुए। झांसी की रानी नाम की आपकी कविता बहुत लोकप्रिय और प्रसिद्ध है। १९४७ में वसन्तपंचमी के दिन म. प्र. के सिवनी नामक स्थान से आते हुए मुर्गी के बच्चों को बचाने के प्रयत्न में मोटर झाड़ों से टकरायी और सुभद्राजी का प्राणान्त हो गया।

सुमति मुरारजी : जन्म १३ मार्च, १९०९। अनेक समाजसेवी संस्थाओं से संबद्ध। अखिल भारतीय हस्तकला बोर्ड बम्बई की सदस्या। नाथद्वारा टेम्पल बोर्ड की उपाध्यक्षा। सिंधिया स्टीम नेवीगेशन कं. लि. बम्बई की एक्जीक्यूटिव डाइरेक्टर।

सुशीला गांधी : गांधीजी के दूसरे पुत्र मणिलाल गांधी की पत्नी। गांधीजी के अफ्रीका से लौट आने के बाद भी दम्पति वहीं बने रहे और गांधीजी के अखबार 'इंडियन ओपिनियन' को निकालते रहे।

सुशीला नैयर (डॉक्टर) : १९०४। सेवाग्राम में बा और बापू की स्वास्थ्य-निरीक्षिका व शिष्या होने के कारण राष्ट्रीय आंदोलन में सक्रिय भाग व जेलयात्राएं, फिर कुछ समय केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री के रूप में भारत सरकार की सेवा, सन् ४२ से ५२ तक मेडिकल बोर्ड की सलाहकार समिति तथा कस्तूरबा ट्रस्ट की सदस्या रहीं, सन् ५७ में कस्तूरबा ट्रस्ट तथा कुष्ठ निवारण बोर्ड की अध्यक्षा हुईं, सम्प्रति अनेक रचनात्मक संस्थाओं से सम्बद्ध हैं और नशाबंदी आंदोलन में कुछ वर्षों से विशेष सक्रिय हैं।

सोनामणि होता : १९०१। सन् ३० में साबरमती आश्रम में, नमक सत्याग्रह व पिकेटिंग, जेलयात्रा, सन् ३४ से ४२ तक डेलांग में रचनात्मक कार्य, सन् ४२ से ४४ तक जेल में, सन् ४५ में महिला तालीम शिविरों का संचालन, आदिवासी महिलाओं के बीच शिक्षण, सन् ५२ से भूदान में, आजकल साहित्य-प्रचार कर रही हैं।

स्वर्णकुमारी देवी : जन्म १८५७। रवीन्द्रनाथ ठाकुर की बहन। ११ वर्ष की आयु में विवाह। पति के प्रोत्साहित करने पर परदा छोड़ दिया। एक बंगला मासिक पत्रिका का सम्पादन किया। और इस प्रकार पहली भारतीय महिला संपादक बनीं। १८८६ में महिला परिषद् की स्थापना की। उसी वर्ष बंगाल की थियासोफिकल सोसायटी की अध्यक्षा हुईं। सन् १९०० में कलकत्ता कांग्रेस में बंगाल के प्रतिनिधि की हैसियत से शामिल हुईं। किसी महिला के लिए यह पहला ही अवसर था। सरलादेवी (चौधरानी) इनकी योग्य सुपुत्री सिद्ध हुईं।

ह

हंसा मेहता : विख्यात समाज-सेविका। जन्म ३ जुलाई, १८९७ सूरत गुजरात

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

में। महाराष्ट्र सयाजीराव विश्वविद्यालय, वड़ौदा की भूतपूर्व उपकुलपति। भारत सरकार की ओर से अनेक प्रतिनिधि-मंडलों का नेतृत्व। इलाहाबाद विश्वविद्यालय से डी. लिट्. तथा सयाजीराव विश्वविद्यालय से एल. एल. डी. की मानद उपाधियां प्राप्त। १९५९ में भारत सरकार द्वारा 'पद्मविभूषण' उपाधि से विभूषित।

हरदेवी : लाहौर के वैरिस्टर रोशनलाल की पत्नी। समाज-सेविका। हिन्दी पत्रिका 'भारत भगिनी' की सम्पादिका। क्रांतिकारियों के मुकद्दमे में धन इकट्ठा करके सहायता देती रहीं।

हेमलताबहन हेगिष्टे : १९१७। राष्ट्रीय आंदोलन में भाग, क्षेत्र में राष्ट्रीय भावना का विकास करने में उल्लेखनीय योगदान, 'ज्योति संघ' की प्रवृत्ति से सेवा प्रारंभ की, त्यक्ता व निराधार महिलाओं को आत्म-निर्भर बनाने में सहयोग, कस्तूरबा गांधी राष्ट्रीय स्मारक ट्रस्ट गुजरात की प्रतिनिधि, आजकल कस्तूरबा राष्ट्रीय स्मारक ट्रस्ट की मंत्री हैं।

हीरालक्ष्मी केशवलाल शेठ : १९१३। कर्वे विश्वविद्यालय से स्नातिका, राजकोट सत्याग्रह में भाग, जेलयात्रा, १९४५ से श्रीकान्ता स्त्री विकासगृह की मानद मंत्री, विदेशी वस्त्रों की होली, शराब की दूकानों पर धरना, खादी-कार्य के माध्यम से समाजसेवा, राजकोट केलवणी मंडल, पुतलीबा उद्योग मंदिर, शिशु मंडल जूनागढ़, स्टेट सोशल वेल्फेयर एडवायजरी बोर्ड की सदस्या के रूप में तथा बाल अदालत की आनरेरी मजिस्ट्रेट के रूप में भी कार्य कर रही हैं।

मुमुक्षु भवन वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय
आगत क्रमांक 1926
दिनांक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्राचीन खंड के संदर्भ-ग्रंथ और संकेत

ग्रंथ	संकेत
अग्नि पुराण	अग्नि
अध्यात्म रामायण	अध्या. रा.
अद्भुत रामायण	अ. रा.
अथर्ववेद	अ. वे.
आदि पुराण	आदि.
आनंद रामायण	आ. रा.
आर्षेय ब्राह्मण	आ. ब्रा.
ईशोपनिषद्	ई. उ.
ऋग्वेद	ऋ.
कालिका पुराण	कालि.
कूर्म पुराण	कूर्म
गणेश पुराण	गणेश
गरुड पुराण	गरुड
गोपथ ब्राह्मण	गो. ब्रा.
गौतम गृह्यसूत्र	गो. गृ.
गौतम धर्म सूत्र	गौ. ध.
जैमिनीय उपनिषद ब्राह्मण	जै. उ. ब्रा.
जैमिनीय ब्राह्मण	जै. ब्रा.
तैत्तरीय उपनिषद	तै. उ.
तैत्तरीय ब्राह्मण	तै. ब्रा.
तैत्तरीय-संहिता	तै. सं.
देवी भागवत	दे. भा.
नारद पुराण	नारद
पद्म पुराण	पद्म.
सृष्टि खंड	सृ.
भूमिखंड	भू.
स्वर्गखंड	स्व.
ब्रह्मखंड	ब्र.
पातालखंड	पा.
उत्तरखंड	उ.
क्रियायोग	क्रि.
प्रश्न उपनिषद्	प्र. उ.
वृहदारण्यक उपनिषद्	वृ. उ.
ब्रह्म पुराण	ब्रह्म
ब्रह्मवैवर्त पुराण	ब्रह्म वै.
भविष्य पुराण	भविष्य
[पर्वों को प्रथम शब्दों से संसूचित किया है।]	
भागवत	भा.
भारत सावित्री	भा. सा.
महाभारत	म.
[आदि पर्व, सभा पर्व, वन पर्व, विराट पर्व, उद्योग पर्व, भाष्य पर्व, द्रोण पर्व, कर्ण पर्व, शल्य पर्व, सौप्तिक पर्व, स्त्री पर्व, शांति पर्व, अनुशासन पर्व, अश्वमेधिक पर्व, मौसल पर्व, महाप्रस्थान पर्व, स्वर्गारोहणपर्व, प्रथम एक या दो वर्णों से सूचित किए गए हैं।]	
मत्स्य पुराण	मत्स्य.
मार्कण्डेय पुराण	मार्क.
याज्ञवल्क्य स्मृति	याज्ञ.
वायु पुराण	वायु.
वराह पुराण	वराह.
वामन पुराण	वामन.
वाल्मीकि रामायण	वा. रा.
[कांड प्रारंभिक वर्णों से सूचित]	
विष्णु पुराण	विष्णु.
शतपथ ब्राह्मण	श. ब्रा.
शिवपुराण	शिव.
रुद्र संहिता	रुद्र.
[सृष्टि, सत्ता, पार्वती, कुमार और युद्ध पर्वों को प्रथम वर्ण से सूचित किया गया है।]	
शतरुद्र संहिता	शत.
कोटिरुद्र संहिता	कोटि.
उमा संहिता	उमा.
कैलाश संहिता	कै.
वायवीय संहिता	वा.
स्कंद पुराण	स्कंद.
[इसके खंडों को १-२-३ आदि अंकों से सूचित किया है।]	
स्मृति चंदिया	स्मृति. च.

मध्यकालीन खंड के संदर्भ-ग्रंथ और संकेत

महाराष्ट्र कवि चरित्र	म. क.
मराठी रियासत मध्य विभाग	म. रि. म.
भारत इतिहास संशोधक मंडल	
—अहवाल	भ. अ.
—इतिवृत्त	भं. इ. वृ.
राजपूताना का इतिहास	रा. इ.
राजतरंगिणी	रा. त.

इनके अतिरिक्त इतिहास संग्रह ऐतिहासिक टिप्पणियां इंडियन हिस्टारिकल क्वार्टली, साउथ इंडियन इन्सिक्रिपशन्स, ऐतिहासिक पत्र व्यवहार, ऐतिहासिक स्फुटलेख, स्मिथ की अर्ली हिस्ट्री आफ इंडिया, पेशवाओं की दैनिन्दिनी आदि ग्रंथों से सहायता ली गई है। विद्यानिधि श्री सिद्धेश्वर शास्त्री चित्राव के प्राचीन और मध्ययुगीन चरित्रकोष इन परिचयों का प्रधान संदर्भ ग्रंथ हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मुमुक्षु भवन वेद वेदाङ्ग विद्यालय
ग्रन्थालय
आगत क्रमांक...१८१६...
दिनांक...

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri